॥ श्रीः ॥

॥ श्रीमद्वेदान्तदेशिकाय नमः ॥

॥ श्रीमते रामानुजाय नमः ॥

॥ श्रीमते निगमान्तमहादेशिकाय नमः ॥

॥ श्रीमते वरवरमुनये नमः ॥

॥ श्रीवानाचलमहामुनये नमः ॥

॥ श्रीविष्णुचित्तादिसमस्तगुरुभ्यो नमः ॥

॥ श्रीमद्गोदादेव्यै नमः ॥

॥ श्रीमते लक्ष्मीनाथाय नमः ॥

॥ श्रीमते नारायणाय नमः ॥

॥ श्रीवासुदेवाय नमः ॥

॥ श्रीमते नित्यं यादवप्रकाशाय नमः ॥

॥ श्रीमद्गोष्ठीपूर्णाय नमः ॥

॥ श्रीमते शैलपूर्णाय नमः ॥

॥ श्रीगोविन्दभट्टारकाय नमः ॥

॥ श्रीमते विष्वक्सेनाय नमः ॥

॥ श्रीशठकोप

कीमत घणीज जुज छे. आ पुस्तक सुपररोयल ग्लेझड वारपेजी कागळ उपर छपायेल छे तेना पाना १००० उपर छे ने तेनुं कद वावु साहेबे छपावेल उत्तराध्ययन सुत्र जेवडुं थवा जाय छे तथा दशवैकालिक सूत्र करतां त्रण गणुं छे जेथी दशवैकालिक सुत्रनी कीमतथी आ सुत्रनी कीमत त्रण गणी एटले रु. ६–०–० राखी छे, जे महेनतना तथा पुस्तकना कदना प्रमाणमां वधारे नथी. वळी आ सूत्रना छत्रीस अध्ययननो मूळपाठ जुदो छपाव्यो छे तेनी दरेक प्रतनी कीमत रु. १–४–० राखी छे. दशवैकालिक सूत्रनी प्रस्तावनामां वताव्या मुजव आ सूत्रना वेचाणमांथी जे नफो मलशे ते रकम ज्ञानखाते आवाज उपर वनावेल आगमो छपाववाना काममांज वापरवामां आवशे ने आ खातानो हीसाव पण जुदो राखेल छे. आ हकीकत उपरथी जणाशे के आ सूत्रो छपावनारनो उदेश शुद्ध मूळपाठवाळा सूत्रो छपावी फक्त ज्ञाननो फेलावो करवानो छे ने वेपार करी पेट भरवाने अर्थे आ काम आरंभेल नथी ए वात वधा जैन भाइओ लक्षमां लेशे अने आवी ज्ञाननो फेलावो करनार योजनाने पुस्तक खरीदकरी प्रथम मदद आपवी जरुरनीछे एम जागशे. आ पुस्तक छपाववामां हस्त दोष के दृष्टि दोषथी कांइ भुलचुक रही होयते पंडितजनो सुधारी वांचवा तस्दी लेशे अने अमनोपात अमने लखी जणावशे एवी विनंति करवामां आवे छे.

डाक्टर जीवराज वेलाभाइ दोशी
L. M. & S.
नवेदरवाजे
अमदावाद

अध्ययन	अध्ययननुं नाम	विषय	श्लोक	पृष्ठ
२५	जयाज्जं	जयघोष विजयघोष	४५	२६९
२६	सामायारी	साधुसमाचारी	५३	२७०
२७	खलुङ्किज्जं	गर्गाधुरि शिष्य	१७	२९८
२८	मोक्खमग्गई	मोक्षमार्ग	३१	३०२
२९	सम्मत्तपरक्कमे	फळा फळीना ७३ बोल	७३	३२४
३०	तवमग्गं	तपनो अधिकार	३७	३५७
३१	चरणविही	चारित्रनो अधिकार	२१	३६८
३२	पमायठाणं	प्रमादना स्थानक	१११	३७९
३३	कम्मप्पयडी	आठकर्मनी प्रकृति	२५	४१०
३४	लेसज्झयणं	६ लेश्या	६१	४१९
३५	अणगारमग्गयणं	साधुनागुण	२१	४३४
३६	जीवाजीवविभत्ती	जीव अजीवना भेद	२६७	४३९

अध्ययन	अध्ययनों के नाम	विषय	श्लोक	पृष्ठ
१२	हरिएसिज्जं	हरिकेशीमुनि	४७	१०६
१३	चित्तसम्भूइज्जं	चित्तसम्भूत(निदानकृत)दोनों	३५	११५
१४	उसुयारिज्जं	इषुकारराजा (निदानकृत्वा)	५३	१२८
१५	सभिक्खू	साधुगुण	१६	१४०
१६	बम्भचेर समाहिठाणा	ब्रह्मचर्य	१०+१७	१४७
१७	पावसमणिज्जं	पापश्रमण	२१	१६०
१८	सञ्जइज्जं	संयतीराजर्षि	५४	१६५
१९	मियापुत्तीयं	मृगापुत्र	९८	१८१
२०	महानियण्ठिज्जं	अनाथी महानिर्ग्रंथ	६०	२०३
२१	समुद्दपालीयं	समुद्रपाल कुमार	२४	२१८
२२	रहनेमिज्जं	रहनेमि	४९	२२५
२३	केसिगोयमिज्जं	केशीगौतम	८९	२३५
२४	समईओ	आठ प्रवचनमाता	२७	२५३

आ सूत्र छपाववाना काममां सुमारे पांचेक वरसनो लांबो विलंब थयो छे तेनुं कारण छापखानामां टाइपना मोटा जथानी सुधारेली तथा जरमनी मुकु सुधारवा मोकलवामां सुमारे एक मास उपरांत थतो विलंब ए बे मुख्य कारणो हता पण आ सालमां छेवट आ मोटुं सूत्र पुरु थतां अमने अत्यानंद थयो छे.

विशेष नवीन हकीकत तरीके लखवानी रजा लउछुं के डाक्टर हरमन जेकोबी साहेबनी देखरेख नीचे तेमना रसीया, इटली, जरमनी वीगेरे देशोमां वस्ता घणा शिष्यो के जेओ संस्कृत तथा मागधी भाषाना पारंगामी छे ने जेओ एकज जातना घणा सूत्रो एकठा करी शुद्ध मूळपाठ जुदा जुदा भाषांतर सहित पोताने हाथे मागधी भाषामां लखी शके छे ते साहेबो पासे बधा जैन आगमोना मूळपाठ भारे खरचे तैयार करवानी योजना करीछे ने काम शरु थइ गुरुपुंजे ने भगवती, ठाणांग, जंबूद्वीपप्रज्ञप्ती, विपाक वीगेरे एक पछी एक आगमना मूळपाठ सुधारवानुं काम चालु थयुं छे ने जेम जेम एक पछी एक आगम सुधारी तेना मूळपाठ मळता जशे अने जेम जेम वखत मळशे तेम बधा आगमोना मूळपाठना मुकु जरमनी मोकली सुधारानी दर्शकाक्षिक तथा उतरायण सूत्रनी माफक मूळ-अर्थ-भावार्थ साथे छपाववामां आवे एवी योजना नक्की करी छे पण ते काम पांचक वर्षनो पुस्तक खरीद करवानो टेको मळशे तोज फळीभुत थशे माटे बधा कारखाना जैन भाइओने आगा शुद्ध मूळपाठ वाळा सूत्रो छपाय ते जोइ तपासी खरीदकरी आ काममां मदद रुप थवा विनंति करवामां आवे छे.

आ सुत्र लहीया पासे लखावतां सुमारे रु. ४० चाळीस जेटलो खरच पडेछे ने फलफतावा वायु साहेबे छपावेल सुत्रना रु. १२ पडेछे ने साथे सरखावता तथा आ पुस्तकना बद उपर नजर करता तेनी रारेल्ड

प्रस्तावना

अमारा वाहाला अने विवेको तथा मुज्ञ जैन बंधुओना हस्तकमळमां आ अत्युत्तम अने उपयोगी पुस्तक मुकतां अमने अत्यंत आनंद प्राप्त थाय छे. आ सूत्र अद्यापि सुधी जेवुं जोइए तेवुं छपाइ वहार नही पडवाथी ते विषे अमोए वनतो प्रयास करी अमारी अल्पमतिथी सुधारो वधारो करी वांचक वर्गने वांचवा सुगम पडे तेम छपावी प्रसिद्ध करेल छे.

जरमनीना मख्यात डाक्टर हरमन जेकोवी साहेव जेमणे आ सूत्रनो इंग्रेजीमां तरजुमो करावी छपाव्यो छे तेओ साहेवना हाथे लखाएल छत्रीसे अध्ययनना मूळ पाठ उपरथी आ सूत्रनो मूळपाठ लीधो छे एटलुंज नही पण ते मूळपाठ अत्रे छपावी जेकोवी साहेव पासे छेवटना प्रुफ जरमनी मोकली तेओ साहेव पासे तपासरावी तथा सुधरावीने आ सूत्रमां ते मूळपाठ दाखल करेल छे जेथी ते मूळपाठ केटलो शुद्ध होवो जोइए तेनो ख्याल वांचक वर्गने आव्या विना रहेशे नही.

अमारा तरफथी श्री दशवैकालिक सूत्र छपाववामां आवेल छे, जे सुत्र घणुंज लोकप्रिय थइ पडेलुं छे अने जेनी वे आवृतितो खपी जवाथी त्रीजी आवृति छपाववानुं काम शरु थयुंछे ते सुत्रनी माफक वाळवोधी भाषामां आ उत्तराध्ययन सूत्रनो अर्थ, मूळ अने भावार्थ छपाव्यो छे, जेथी काठीयावाड, मारवाड, पंजाव तथा वीजा वधा देशोना जैन भाइओने वांचवा सुगम पडे. उपला दशवैकालिक सूत्र करतां पण आ ग्रंथ वधारे रासिक ने लोक प्रिय वांचक वर्गने थइ पडशे एम अमने लागे छे.

उत्तराध्ययन सूत्र.

धर्मविजय जैन ग्रन्थालय।
बीकानेर।

प्रथमं अध्ययनम्।

अर्थः—उत्तराध्ययनो ए अर्थ -उत्तरप्रधान छे अध्ययनो जेहने विषे ते माटे उत्तराध्ययन कहिए ॥ सं० संजोग ते बाह्य अभ्यंतर संयोगथि । बाह्य ते माता पिता प्रमुख ॥ अभ्यंतर ते मिथ्यात विषयादि संयोगथि ॥ वि० विशेषे ॥ प्र० प्रकर्षे ॥ मु० मुकाणा छे ॥ अ० नथी आगार जेहने ते अणगार ॥ नि० निश्चय निश्चाए प्रवर्तवालो एवार छे जेहने ते भिक्षु कहिए एवा साधुनो ॥ वि० विनयने ॥ पा० प्रगट ॥ क० करिश्य ॥ आ० अनुक्रमे कहीश ॥ मु० सांभल ॥ मे० मुजने कहेता थका ॥ १ ॥

मूलः—संजोगविप्पमुक्कस्स अणगारस्स भिक्खुणो।
विणयं पाउकरिस्सामि आणुपुव्विं सुणेह मे १.

छाया—संयोगविप्रमुक्तस्य अनगारस्य भिक्षोः। विनयं प्रादुष्करिष्यामि आनुपूर्व्या शृणुत मे १.

अ० अथशिनेंद्रायनम'—जे देवता मनुष्य ने तिर्यंचना वंदनीयने केवलज्ञान दर्शन सहितने अजर अमर अरहंतने तथा सकल कार्यनी सिद्धि करी चौदराज लोकमां निरंजन निराकारपणे वीतरागता एवा सिद्ध भगवंतने, षष्ठी पंचाशो करि छ दिग

छत्रीस गुणधारक एवा श्रीजापदे आचार्यने तेमज आगमोना पाठक पचवीस गुणधारक एवा पोथा पदे उपाध्यायने, वली सत्यावीस गुणधारक-अने लोकमां लोकने वंदनीक एवा सर्व यतिने वंदन करीयुं. ए पंचपरमेष्ठी सकल विघ्नो नाश करी सर्व प्रकारे कुशळता करनाराळा छे.

जे निर्मळ गुणरुप पाणीनो क्षीरसमुद्र अने नम्रभवजनुनो शत्रु विघ्नवल्ली रुप वनदहनें विदारणहार केवळज्ञानना धरनार भव्यजननें बोध करि आनंदना करावणहार अने त्रैलोक्यना पुजनीक एवा चौविसना निर्धार महावीर प्रभुने मन वचन कायाए वंदन करि श्री उत्तराध्ययन सुत्रनो भावार्थ कहुंछुं.

उत्तर एटले प्रधान—जेमां अध्ययनो छे तेथी उत्तराध्ययन कहीए. उत्तराध्ययन शास्त्रनां छत्रीस अध्ययन छे तेमां प्रथम विनय अध्ययन कहेवानुं कारण के जैनधर्म विनयमुळ छे. अने विनयथीज मोक्ष प्राप्त थाय छे. जेम वृक्षनुं मुळ होय तो कंद स्कंध शाखा प्रतिशाखा पत्र पुष्प फळादीक प्राप्त थाय, तेम विनयथी ज्ञान, ज्ञानथी दर्शन, दर्शनथी चारित्र ने चारित्रथी मोक्ष ने मोक्षथी अव्याबाध सुख विगेरे विनयथी फळ प्राप्त थाय छे माटे प्रथम विनय अध्ययननो विस्तार कहे छे.

गाथा १ भावार्थ—श्री सुधर्मा स्वामि जंबू स्वामिने कहेता हवा तेमज जंबू स्वामीने श्रद्धीने बीजा शिष्योने कहेता हवा. अहो शिष्यो ? खेत १ (उघाडी जमीन) वधु २ (ढांकेली जमीन घर प्रमुख) हिरण्य ३ (रुपुं) सुवर्ण ४ धन ५ (रोकड झवेरवंधी नाणुं) धान्य ६ (२४ प्रकारनुं अनाज) दुपद ७ (बे पगवाळां मनुष्य तथा पक्षीयो) चौपद. ८ (चार पगवाळां पशुओ) कुवीयघात ९ (ते घरवखरी) ए नव प्रकारना संचीताचीत बाह्य परिग्रह अने १ मिथ्यात्व २ क्रोध ३ मान ४ माया ५ लोभ ६ हांस्य ७ रती ८ अरती ९ भय १० शोग ११ दुगंछा १२ स्त्रीवेद १३ पुरुषवेद १४ नपुंसकवेद ए चौद प्रकारनो अभ्यंतर परीग्रह एवा बे प्रकारना परीग्रहथी अने विविध प्रकारे ज्ञानादीक भावनाए परिग्रह रहेवे करी जेओ मुकाएला छे अने जेओना वृक्षने विषे आगार नथी तथा घर रहीत छे वली जेओ मनुष्यनो वृषिए भिक्षा करी पोताना शरिरनें धारण करे छे एवा साधुओनो हुं विनय प्रगट करिश ? ते तमें अनुक्रमे सांभळो ? १

अर्थः—आ० आज्ञानें ॥ नि० तहितनो करणहार ॥ गु० गुरुनि दृष्टीने समिपे रहेवानो करणहार ॥ इं० शरीरनि चेष्टाए करि पामीए ते इंगित ॥ आ० शरीरनी संभावथी मुद्राए करिजाणीए मननो अभिप्राय एहवा प्राणधरी ॥

करी साहित होय एम गितार्थनो जाण शिष्य होय ॥ से० ते शिष्य ॥ वि० विनित ॥ वि० एम ॥ उ० कहिए ॥ २ ॥

मूलः—आणानिद्देसकरे गुरूणमुववायकारए ।
इङ्गियागारसंपन्ने से विणीए त्ति वुच्चई ९.

गाथा २ भावार्थ—हवे विनित केंवो होय? ते शिष्य गुरुनी आज्ञानो प्रमाण करणहार, गुरुनी दृष्टी ने वचनने विषे रहे सार अंगकीकी अनुहारीकनी (अनुहिनी) चेष्टाए करी गुरुना मनना अभिप्रायने जाणने करी सहीत होय ते शिष्य विनित कहीए, २

अर्थः—आ० आज्ञानो ॥ अ० अतहितनो ॥ ग० करणहार ॥ गु० गुरुनी दृष्टिनो ॥ अ० अनुसरीने रहेनारो ॥ का० करणहार ॥ प० प्रत्यनिकपेरि सारिपो ॥ अं० सत्यनो अजाण ॥ अ० अविनित ॥ वि० एम उ० कहीए ॥ २ ॥

मूलः—आणानिद्देसगरे गुरूणमणुववायकारए ।
पडिणीए असंबुद्धे अविणीए त्ति वुच्चई ३.

गाथा ३ भावार्थ—विधिकरनी तथा गुरुनी आज्ञाने अप्रमाणनो करणहार, गुरुनी दृष्टी थकी दुर रहेनार, गुरुना कार्य नही करनार गुरुने शत्रु सरिखो अने सत्यनो अजाण पण छतमे करी अविनित कहीए. ३

अर्थः—ज० जिम ॥ सु० कुतरो ॥ पू० पोछा ॥ क० कोनने ॥ नि० काढे ॥ स० सर्वथानिकथी जिहां नेहांजाय तिहां पेसवानदे ॥ ए० ए दृष्टांते ॥ दु० अविनित ॥ प० प्रत्यनिक ॥ मु० मूख छे यरि जेहने देखिते मूखरि

मूलः—जहा सुणी पूइकणी निक्कसिज्जइ सव्वसो ।
एवं दुस्सीलपडिणीए मुहरी निक्कसिज्जई ४.

गाथा ४ भावार्थ—जेम दुर्गंधवाली कोठा कानवी कुत्रीने सर्व स्थानकथी काढे तेम दुष्ट आचारनो धणी गुरुने शत्रु सरिखो असंबंधभाषी एवा अविनितने भला गच्छ मांथी काढे [शिष्य पुछ्यो हवो हे गुरु ! हवा कुत्रीनुं दृष्टांत कहेवानुं शुं ? हवे गुरु कहेता हवा हे शिष्य ! घणो स्नान लेपादी कुत्री करीए ने कुत्रीनी पुनरपि कुत्रीनी भलत गुणी हीण होवाथी निंदनीक अने तेमां कान कोलाथी कीडा पडवाथी ने दुर्गंध पण सरवाथी कोइ जाय नहिं अनिष्ट वचन लाकडी ईंट पाषाणादीकना प्रहारनी साथे कोइ स्थळे तेने प्रवेश नही थवा देवाथी अत्यंत निंदनीकने कुत्री तुल्यपणे तेवीज रीते अविनीत दुष्टाचारनो धणी कठोर वचनना प्रहारथी अत्यंत पुरुषोने निंदनीक ने दुःखी थाय.] ४

अर्थ—क० कणनां ॥ कु० कणसडनें ॥ च० चांडिनें ॥ ण० लाकडे ॥ मि० मिष्टने ॥ भु० खाद भो-गवें ॥ सू० सुयर ॥ ए० एणी परे ॥ सी० विनितपणाने ॥ च० छांडिने ॥ ण० लाकडे ॥ दु० अविनितने विषे ॥ र० रति पामे राचे ॥ मि० मृग पशु समान अविनित ॥ ५ ॥

मूलः—कणकुण्डगं चइत्ताणं विट्ठं भुञ्जइ सूयरो ।
एवं सीलं चइत्ताणं दुस्सीले रमई मिए ५.

गाथा ५ भावार्थ—जेम सुयर तांदुल (चाखळ) प्रमुख कणना कुंडाने तजीने विष्टाने भोगवे तेम अविनितपणा सुयर विनयादीक भला आचारना कणना कुंडाने तजीने अविनितपणारूप विष्टामें विषे रमी (खुशी) थाये. अथवा जेम मृग दश

ष पण पापनुं दुष्ख न देवे तेम अविनित शासा ओटीवाकलानो दुष्ख देवे ना अविनितशासा करने ष परंतु तेथी अविनित मुख शासक शासानी शासवणो. ५

अर्थः—गु० सांभटीने ॥ मा० दृष्टांतने ॥ सा० दृष्टांतनो ॥ गु० त्रिजो सूत्रनो ॥ न० त्रिजो शब्दनिक अनु-बंधनो ॥ व० पत्नी ॥ वि० विनयने विषे ॥ ठ० स्थिरे ॥ अ० पोताना आत्माने ॥ इ० बांधवो थको ॥ दि० दिवसे ॥ स० पोताना आत्माने ॥ ६ ॥

मूलः—सुणिया भावं साणस्स सूयरस्स नरस्स य।
विणए ठवेज्ज अप्पाणमिच्छन्तो हियमप्पणो ६.

छाया ६ मावार्थ—श्वानुं सुवानुं ने त्रीजुं अविनित मनुष्यनुं ए त्रण प्रकार जाणीने पोताना आत्माने हीत थवो विनयने विषे स्थापे. ६

अर्थः—त० ते माटे ॥ वि० विनयने ॥ ए० गवेषे करे ॥ शी० भलो स्वभाव तथा आचार ॥ प० पामे जे विनय क्रिया थकी ते कहयो होय ॥ गु० गुरु आचार्यने ॥ पु० पुत्र ते वल्लभ सारंभो होय ॥ नि० मोक्षनो अर्थि तेहि नित शिष्यने ॥ न० वेगलो न फोडे न करे वेगलो ॥ क० कोइ शुभ भला पदार्थ थकी ॥ ७ ॥

मूलः—तम्हा विणयमेसिज्जा सीलं पडिलभेज्ज जो।
बुद्धपुत्त निओगट्ठी न निक्कसिज्जइ कण्हुई ७.

छाया ७ मावार्थ—तेथी आचार्यने पुत्रनी माफक प्रीयकारी मोक्षना अर्थि जिन्हे गुरुनो विनय करवो ते ते

मूलः—जहा सुणी पूइकण्णी निक्कसिज्जइ सव्वसो ।
एवं दुस्सीलपडिणीए मुहरी निक्कसिज्जई ४.

गाथा ४ भावार्थ—जेम दुर्गंधवाळी कोहवा कानवाळी कुत्रीनें सर्व स्थानकथी काढे तेम भुंडा आचारनो धणी गुरुने शत्रु सरिखो असंबंधभाषी एवा अविनितने भला गच्छ थकी काढे [शिष्य पुछतो हवो हे गुरु ! इहां कुत्रीनुं उदाहरण कहेवानुं शुं ? हवे गुरु कहेता हवा हे शिष्य ! घणो श्वास लेवाथी दुःखी कहीए ते कुत्रीनी पुन्याइ कुत्राथी अनंत गुणी हीण होवाथी निंदनीक अने तेमां कान कोहवाथी कीडा पडवाथी ने दुर्गंध पण दूरवाथी जीहां जाय तिहां अनिष्ट वचन लाकडी ईंट पाषाणादीकना प्रहारनी साथे कोइ स्थळे तेने प्रवेश नही थवा देवाथी अत्यंत निंदनीकने दुःखी गणाय? तेवीज रीते अविनीत दुष्टाचारनो धणी कठोर वचनना प्रहारथी अत्यंत पुन्यहीण निंदनीक ने दुःखी थाय.] ४

अर्थ—क० कणनां ॥ कु० कणसडानें ॥ च० वांडिने ॥ ण० अलंकारे ॥ वि० विष्टाने ॥ भु० खाय भोगवें ॥ सू० सुवर ॥ ए० एणी परे ॥ सी० विनितपणाने ॥ च० छांडिने ॥ ण० अलंकारे ॥ दु० अविनयने विषे ॥ र० रति पामे राचे ॥ मि० मृग पशु समान अविनित ॥ ५ ॥

मूलः—कणकुण्डगं चइत्ताणं विट्ठं भुञ्जइ सूयरो ।
एवं सीलं चइत्ताणं दुस्सीले रमई मिए ५.

गाथा ५ भावार्थ—जेम सुवर तांदुल (चाखळ) प्रमुख कणना कुंडाने तजीने विष्टाने भोगवे तेम अविनितरूप सुवर विनयादीक भला आचाररूप कणना कुंडाने तजीने अविनितपणारूप विष्टानें विषे रती (सुखी) माने, वळी जेम मृग त्रण

अर्थः—तु० संमलिने ॥ मा० दृष्टांतने ॥ सा० कुतरानो ॥ सू० बिलो सूयरनो ॥ न० बिलो अविनित मनु-
पनो ॥ य० थको ॥ वि० विनयने विषे ॥ ठ० थाये ॥ अ० पोताना आत्माने ॥ ६० बांधनो थको ॥ वि० विनये ॥
अ० पोताना आत्माने ॥ ६ ॥

मूलः—सुणिया भावं साणस्स सूयरस्स नरस्स य।
विणए ठवेज्ज अप्पाणमिच्छन्तो हियमप्पणो ८.

गाथा ६ भावार्थ—इहांथी गुरुए ने त्रीजुं अविनित मनुष्यनुं ए दृष्टांत संभलीने पोताना आत्माने दीक्षा पंछनो थको विनयने विषे स्थापे. ६

अर्थः—त० ते माटे ॥ वि० विनयने ॥ ए० स्थापे करे ॥ सी० भलो स्वभाव तथा आचार ॥ प० पाले जे विनय क्रिया थकी ते बेहतो होय ॥ गु० गुरु आचार्यने ॥ पु० पुत्र ते सदृश सरिखो होय ॥ नि० मोक्षनो अर्थी तेवि नित शिष्यने ॥ न० बेगलो न फोडे न करे बेगलो ॥ फ० कोइ शुभ भला पदार्थ थकी ॥ ७ ॥

मूलः—तम्हा विणयमेसिज्जा सीलं पडिलभेज्ज उ।
बुद्धपुत्त निओगट्ठी न निक्कसिज्जइ कण्हुई ९.

गाथा ७ भावार्थ—तेथी आचार्यने पुत्रनी माफक प्रीयकारी मोक्षना अर्थि शिष्ये गुरुनो विनय करवो के जेथी सम्यक

मूलः—जहा सुणी पूइकण्णी निक्कसिज्जइ सव्वसो ।
एवं दुस्सीलपडिणीए मुहरी निक्कसिज्जई ४.

गाथा ४ भावार्थ—जेम रुधीर झरती कोठा काननी कुत्रीनें सर्व स्थानकथी काढे तेम मुंढा आचारनो धणी गुरुने शत्रु सरिखो असंबंधभाषी एवा अविनितने भला गच्छ थकी काढे [शिष्य पुछतो हवो हे गुरु ! इहां कुत्रीनुं उदाहरण कहेवानुं शुं ? हवे गुरु कहेता हवा हे शिष्य ! घणो श्वास लेवाथी कुत्री कहीए ते कुत्रीनी पुन्याइ कुत्राथी अनंत गुणी हीण होवाथी निंदनीक अने तेमां कान कोवाथी कीडा पडवाथी ने रुधीर परु झरवाथी जीहां जाय तिहां अनिष्ट वचन लाकडी इंट पाषाणादीकना प्रहारनी साथे कोइ स्थळे तेने प्रवेश नही थवा देवाथी अत्यंत निंदनीकने दुःखी गणाय? तेवीज रीते अविनीत दुष्टाचारनो धणी कठोर वचनना प्रहारथी अत्यंत पुन्यहीण निंदनीक ने दुःखी थाय.] ४

अर्थ—क० कणनां ॥ कु० कणसडानें ॥ च० वांडिने ॥ ण० अलंकारे ॥ वि० विष्टाने ॥ भु० खाय भोगवें ॥ सू० सुवर ॥ ए० एणी परे ॥ सी० विनितपणाने ॥ च० छांडिने ॥ ण० अलंकारे ॥ दु० अविनयने विषे ॥ र० रति पामे राचे ॥ मि० मृग पशु समान अविनित ॥ ५ ॥

मूलः—कणकुण्डगं चइत्ताणं विट्ठं भुञ्जइ सूयरो ।
एवं सीलं चइत्ताणं दुस्सीले रमई मिए ५.

गाथा ५ भावार्थ—जेम सुवर तांदुल (चाखळ) प्रमुख कणना कुंडाने तजीने विष्टाने भोगवे तेम अविनितरूप सुवर विनयादीक भला आचाररूप कणना कुंडाने तजीने अविनितपणारूप विष्टानें विषे रती (खुशी) माने. वळी जेम मृग त्रण

(छाया) नो सुख देने वाला नपुंसक सुख न देने वाला स्त्रीसहित साधु कीडीवाचणामां सुख देने वाला अविनितस्त्रीसाथे चलने न देने तेवी अविनित मूर्ख स्त्रीसाथे साधुनी समजवो. ५

अर्थः—सु० सांभळीने ॥ भा० दृष्टांते ॥ सा० कुलवानो ॥ सू० निजो सूयरनो ॥ न० त्रीनो अविनित मनुष्यनो ॥ प० साथी ॥ वि० विनयने विषे ॥ ट० दोषे ॥ अ० पोताना आत्माने ॥ ३० बांधतो थको ॥ हि० हितने ॥ अ० पोताना आत्माने ॥ ६ ॥

मूलः—सुणिया भावं साणस्स सूयरस्स नरस्स य।
विणए ठवेज्ज अप्पाणमिच्छन्तो हियमप्पणो ६.

छाया ६ आवार्थः—कुत्रीनुं सुयरनुं ने त्रीनुं अविनित मनुष्यनुं ए त्रण प्रकारे सांभळीने पोताना आत्माने हीत इच्छतो थको विनयने विषे स्थापे. ६

अर्थः—त० ते माटे ॥ वि० विनयने ॥ ए० गवेषे करे ॥ सी० भलो स्वभाव तथा आचार ॥ प० पोते के विनय जिस थकी से बेहतो होय ॥ गु० गुरु आचार्यने ॥ पु० पुत्र से बहुज सारेलो होय ॥ नि० मोक्षनो अर्थी तेवि नित शिष्यने ॥ न० बेसाडे न काढे न करे बेसाडे ॥ क० कोइ गुप्त भला पदार्थ थकी ॥ ७ ॥

मूलः—तम्हा विणयमेसिज्जा सीलं पडिलभेज्ज उ।

आचार पामे ते विनयवंतने अने सम्यक् आचारवंतने कोइ गच्छादीक शुभ स्थानकथी वेगळो न करे (मलष्ट के सर्व रथळे आदर पामे). ७

अर्थः—नि० निरंतर सदाए॥ सं० उपशांत॥ सि० होइ॥ अ० अमुखरि॥ गु० आचार्यने॥ अ० समीपे॥ स० सदाइ रहेतो थको॥ अं० सुत्र सिद्धांतना अर्थ॥ जु० ते अर्थ केहेवा मेळववाने जुगति॥ सि० सिखे॥ नि० निर्थकशास्त्रने॥ उ०वळि॥ व० वर्जे॥ ८॥

मूलः—निसन्ते सियाऽमुहरी बुद्धाणं अन्तिए सया।
अट्ठजुत्ताणि सिक्खिज्जा निरट्ठाणि उ वज्जए ८.

गाथा ८ भावार्थ—निरंतर उपशमवंत अभ्यंतर कषाय पातळी थाइप्रशांत आकार थाचाळपणा रहीत सदाय आचार्यनी समीपे जाणवा छोडवाने आदरवा योग्य वस्तुना जाणपणाए करी सहीत पूर्ण विनित शिष्य होय ते सिद्धांतने सिखीने स्त्री-वादीकनी कथा तथा ज्योतिष वैदक निर्थक शास्त्र वर्जे. ८

अर्थः—अ० सिखामण देता थका॥ न० न करे॥ कु० कोप॥ खं० क्षमाने॥ से० सेवे आचरे॥ पं० पंडित विनित॥ खु० द्रवे वाळ तथा भावे बाळ॥ स० संघाते॥ सं० संसर्ग परिचय॥ हा० कोइ संघाते हास्यने॥ की० कोइ संघाते क्रीडा रमतने॥ च० वळी॥ व० वर्जे॥ ९॥

मूलः—अणुसासिन्न न कुप्पिज्जा खन्तिं सेविज्ज पण्डिए।
खुड्डेहिं सह संसग्गिं हासं कीडं च वज्जए ९.

॥

गाथा ९ भावार्थ—गुरुवर्ये वीनवतां गुरु कठोर वचने दीलागण दिए तो पण पोते कोप नहीं करतां क्षमाने रोरे ने वाचक अमे पणाना (आचार्यनी इच्छा) नो विनय मे हांरपर्यंत करें ९

अर्थः—मा० एसमूपय ॥ पं० चंडाल ते क्रोधादिकने वसे ॥ अ० आत्मिये जूजू थोवयू ॥ का० करे ॥ ब० पला आठ पेपाल ॥ मा० रमे ॥ प० पूरणे ॥ आ० थोडे ॥ का० सूत्रने काजे ॥ का० कायक्लेशे मणीने ॥ त० निवार पडी ॥ वा० ध्यानने पाये ॥ ए० राग द्वेष रहित एकले ॥ १० ॥

मूलः—मा य चण्डालियं कासी बहुयं मा य आलवे।
कालेण य अहिज्जित्ता तओ झाइज्ज एगगो १०.

गाथा १० भावार्थ—गुरु कहेता छता अहो शिष्यों जेम चंडाल निर्लज्जपणे मृतादीक क्रिया करे ते सेज तुं न करीश ! अने क्रोधादिकने वशे जूदुं तथा कठणपणे घणो शिष्यो आपण न करीश ! अने वधु आलापज्ञ पण घणम न बोलीश ! कारण के बहु आलापी पणा होंये आप छे. वली प्रथम लेखो पोताती समये सिद्धांत भणी सेवार पडी ध्यानपणु मनुष्यज रहित पण ध्यानमें एकलो अने आखी रागद्वेष रहित थको ध्यानने ध्यावे. १०

अर्थः—मा० मदरक्षित् ॥ पं० क्रोधादिकने वसे ॥ अ० जूदो ॥ का० थोडिने ॥ ब० बहुने गुरुवादिकने ॥ मा० किधो ॥ वि० घणो ॥ का० कीधा ने कीधू ॥ चि० इष ॥ आ० कहे ॥ आ० आलकीधाने ॥ ने० नवि पीजे ॥ ति० एम ॥ प० बलिकहे ॥ ११ ॥

मूलः—आइच्च चण्मालियं कहु न निण्हविज्ज कयाइ वि

आचार पामे ते विनयवंतने अने सम्यक् आचारवंतने कोइ गच्छादीक शुभ स्थानकथी वेगळो न करे (मतलब के सर्व रथळे आदर पामे). ७

अर्थः—नि० निरंतर सदाए ॥ सं० उपशांत ॥ सि० होइ ॥ अ० अमुसारे ॥ गु० आचार्यने ॥ ध० समीपे ॥ स० सदाइ रहेतो थको ॥ अं० सुत्र सिद्धांतना अर्थ ॥ जु० ते अर्थ केहेवा मेळवाने जाणाते ॥ लि० लिखे ॥ नि० निर्थकशास्त्रने ॥ उ०वलि ॥ व० वर्जे ॥ ८ ॥

मूलः—निसन्ते सियाऽमुद्दरी बुद्धाणं अन्तिए सया।
अट्ठजुत्ताणि सिक्खिज्जा निरट्ठाणि उ वज्जए ८.

गाथा ८ भावार्थ—निरंतर उपशमवंत अभ्यंतर कषाय पातळी वाद्यप्रशांत आकार वाचाळपणा रहीत सदाय आचार्यनी समीपे जाणवा छोडवाने आदरवा योग्य वस्तुना जाणपणाए करी सहीत एवो विनित शिष्य होय ते सिद्धांतने लिखीने स्त्री-वादीकनी कथा तथा ज्योतिष वैदक निर्थक शास्त्र वर्जे. ८

अर्थः—अ० सिखामण देता थका ॥ न० न करे ॥ कु० कोप ॥ खं० क्षमाने ॥ से० सेवे आचरे ॥ पं० पंडित विनित ॥ खु० द्रवे वाळ तथा भावे वाळ ॥ स० संघाते ॥ सं० संसर्ग परिचय ॥ हा० कोइ संघाते हास्यने ॥ की० कोइ संघाते क्रीडा रमतने ॥ च० वळी ॥ व० वर्जे ॥ ९ ॥

मूलः—अणुसासिउ न कुप्पिज्जा खन्तिं सेविज्ज पण्डिए।
खुड्डेहिं सह संसग्गिं हासं कीडं च वज्जए ९.

मूलः—आयारिएहिं वाहित्तो तुसिणीउ न कयाइ वि
पसायपेही नियागट्ठी उवचिट्ठे गुरुं सया ९०.

मूलः—आसवन्ते खवन्ते वा न निसीएज्ज कयाइ वि
चइऊणमासणं धीरो जउं जनं पमिस्सुणे ९१.

मूलः—आसणगउं न पुच्छेज्जा नेव सेज्जागउं कया।
आगम्मुक्कुडुउ सन्तो पुच्छिज्जा पञ्जलीउडो २२.

गाथा २२ भावार्थ—शिष्य बहु सुधी होय तो पण पोताना आसने तथा संथारे (पथारीए) बेठो थको गुरुने प्रश्नादीक नही पुछतां गुरुनी समीपे आवी बे हाथ जोडी नमस्कार करी सुग्रार्थादीक पुछे. २२

अर्थः—ए० एणिपेर ॥ वि० विनय ॥ जु० जूगत शिष्यने ॥ सु० सूत्रपाठ ॥ अ० अर्थ ॥ च० वली ॥ त० सूत्रने अर्थ ॥ पु० पुछता ॥ सी० सीष्यने ॥ वा० गुरु कहे ॥ ज० जिम ॥ सु० सांभलो होय तेम ॥ २२ ॥

मूलः—एवं विणयजुत्तस्स सुयं अत्थं च तदुभयं।
पुच्छमाणस्स सीसस्स वागरिज्ज जहासुयं २३.

गाथा २३ भावार्थ—एवा विनययंत शिष्ये सुत्र अर्थने सुग्रार्थ गुरुने पुछ्या थका गुरुए तेम गुरु समीपे सांभलेलु होय तेम एवा विनययंत शिष्यने सुग्रार्थ कहे. २३

अर्थः—मु० मृषाने ॥ प० वर्जे ॥ भि० साधु ॥ न० न य० वळि॥ ओ० निश्चेकारणीभाषाने ॥ प० बोले ॥ भा० भाषाना ॥ दो० दोषने ॥ प० तजे ॥ मा० मायाने ॥ च० क्रोधादिकने ॥ व० वर्जे ॥ स० सदाय ॥२४॥

मूलः—मुसं परिहरे भिक्खू न य ओहारिणिं वए।
भासादोसं परिहरे मायं च वज्जए सया २४.

गाथा २४ भावार्थ—साधु भाषाना दोष जाणीने निश्चयकारी तथा मृषा भाषाने सदाय वर्जे भने कपट क्रोधने तजे.२४

अर्थः—न० न बोले ॥ पु० बोलाये ... ॥ सा० सावद्यभाषान ॥ न० न बोले ॥ नि० ...
बीना ॥ न० न बोले ॥ म० मर्म वचन ॥ अ० पोताने अर्थे ॥ था० अथवा ॥ प० परने अरथे ॥ उ० बेऊने अर्थे ॥
अ० विना प्रजोने थोडुं पण ॥ था० अपवान बोले ॥ २९ ॥

मूलः—न लवेज्ज पुट्ठो सावज्जं न निरट्ठं न मम्मयं ।
अप्पणट्ठा परट्ठा वा उभयस्सऽन्तरेण वा ॥ २५.

गाथा २५ भावार्थ—साधुने बोलाव्यो पण सावद्य (पापकारी) भाषा न बोले अने पोताने परने प्रयोजन विना नही बोलवो मर्म वचनने वर्जे. २५

अर्थः—स० छोडार प्रमुखने साद्यने निषे ॥ आ० गुनाचरने विषे ॥ रा० बे परनि संधिने विषे ॥ ग० पछी ॥ म० राजपंथ मोटा पंथने विषे ॥ ए० एकलोसाधु ॥ ए० एकली स्त्रि ॥ स० संघाते ॥ ने० उभो न रहे ॥ न० नबोले ॥ २६ ॥

मूलः—समरेसु अगारेसु सन्धीसु य महापहे ।
एगो एगत्थिए सद्धिं नेव चिट्ठे न संलवे ॥ २६.

गाथा २६ भावार्थ—छुडार प्रमुखनी साद्या तथा गुनो घर तथा बे परनी संधोए (अंतरे) तथा मोटा राज पंथने विषे एकलो साधु एकली स्त्री साथे उभो न रहे तेमज बोले पण नही. २६

अर्थः—ने० देखुजने ॥ गु० गुरु सिखामण दिये छे ॥ रा० कोगळ वचने करि ॥ फ० कठिन वचने करि ॥
था० अथवा ॥ म० माहरा ॥ ए० एमने अर्थे ॥ नि० एहवं ॥ पे० युक्तिएकरि ॥ ए० ...

तं० तेने प० सांभळे ॥ २७ ॥

मूलः—जम्मे वुच्चा ऽणुसासन्ति सीएण फरुसेण वा ।
मम लाहो त्ति पेहाए पयओ तं पडिस्सुणे २७.

गाथा २७ भावार्थ—कोमळ वचने करी तथा कठोर वचने करी जे गुरु मुजने शिक्षामण आपे छे ते मारा लाभने अर्थे कहे छे एवी बुद्धिए करी गुरुनी शिक्षामण अतिशे सावधानपणे सांभळीने प्रमाण करे. २७

अर्थः—अ० गुरुनिसिपते ॥ उ० भला कर्तव्यनो उपाय छे ॥ दु० पाप कर्तव्यनो ॥ य० वाळे चो० टाळ-णहार ॥ हि० तं० ते सिपामण हितकारि करि ॥ म० माने ॥ प० प्रज्ञावंत ॥ वे० द्वेष होय ॥ अ० असाधुने ॥२८॥

मूलः—अणुसासणमोवायं दुक्कडस्स य चोयणं ।
हियं तं मण्णई पण्णो वेसं होइ असाहुणो २८.

गाथा २८ भावार्थ—कांइक दुःखं आपवां पछी कोमळ तथा कठीन भावाए करी गुरु शिक्षामण दीए तो प्रज्ञावंत साधु हितकारी माने अने अविनितने असाधुन शिक्षामण देतां द्वेष थाय. २८

अर्थः—हि० सिपने हितकारि माने ॥ वि० विशेषे ॥ ग० गयोछे ॥ भ० भय जेह थकी बु० तत्वनो जाण सिष्य ॥ फ० कठिण पण ॥ अ० गुरुने सिपामण ॥ वे० द्वेषकारणी ॥ तं० ते सिपामण ॥ हो० होइ ॥ मू० मूढ अविनितने सिपामण केहवी छे ॥ ख० क्षमा अने ॥ सो० मननि निर्मळता ए वेहु पदार्थनि ॥ फ० करनारि छे वळी ॥ प० प्रज्ञादिकनो पदथान छे ॥ २९ ॥

मूलः—हियं विगयभया बुद्धा ... प्प अणुसासणं ।
वेसं तं होइ मूढाणं खन्तिसोहिकरं पयं ॥ २९.

गाथा २९ भावार्थ—हेमा अमे लोक अमे करी निर्भयकारी मे ज्ञानादिक गुणनु स्थानक एवी दीक्षा पण मुनिनी क्षितिप्रतिष्ठानपुरनो जाण अने सात भयथी रहीत एवो साधु वीनवारी माने, अमे अविवेकिमा मुनिओने शिक्षामा वैराग्यकारी होय २९

अर्थः—आ० पाटि प्रमुख आसनने विषे ॥ उ० बेसे बेहो आसने ॥ अ० गुरुने ऊंचे आसने नहि बेठो ॥ नि० बेसे ॥ अ० हाथ पग प्रमुख अणदेखावतो थको ॥ १० ॥

मूलः—आसणे उवचिट्ठेज्जा अणुच्चे अकुए थिरे ।
अप्पुट्ठाई निरुट्ठाई निसीएज्जऽप्पकुक्कुए ॥ ३०.

गाथा ३० भावार्थ—गुरुथी नीचे कपडाप्रमाण पाट पाट नही एवा निकट आसनने विषे हाथ प्रमुख अणदेखा-वतो थको बेसे अने प्रयोजन वर्त्यं थके उठे बेसे, प्रयोजन विना उठे बेसे नही. ३०

अर्थः—का० गोचरियादिक काटने विषे काल वेलाए ॥ नि० निकले उठे ॥ नि० निरवद्य स्थान ॥ का० का-
रनिवेठाए ॥ य० यही ॥ प० पाछो पडे ॥ अ० अक्षादने ॥ च० जेवणी॥ वि० धरिने ॥ का० निष्कारणे ॥
का० ते विना अनूए नना फाडने ॥ स० समाचरे ॥ ३१ ॥

मूलः—कालेण निक्खमे भिक्खू कालेण य पडिक्कमे ।

अकालं च विवज्जेत्ता काले कालं समायरे ३१.

गाथा ३१ भावार्थ—हवे विनित शिष्यने एषणासमिति कहे छे. साधु काळ वेळा (ज्यां सुधी लोकोना घरमां धुम्र निकळतो होय, याचक लोको भीक्षार्थे फरता होय, पाणीवारीओ पाणी भरती होय त्यां सुधी) ए भिक्षाने अर्थे जाय. अने काळ वेळापज गोचरीथी पाछो वळे, अने अकाळ (पूर्वोक्तथी विप्रीत) ने वर्जीने क्रियाने अवसरे, जे अनुष्ठान जे वेळाए करवुं छे ते समाचरे. ३१

अर्थः—प० जिमवानि पांति बेठि होइ तिहां ॥ न० उभो न रहे ॥ भि० साधु ॥ द० ग्रहस्थे दिधा आहारने विषे ॥ ए० एषणा सुद्ध आहारने ॥ च० लिएसेवे ॥ प० साधुने विष ॥ ए० गवेषिने ॥ मि० मर्यादाए ॥ का० आहार करवाने काले ॥ स० जमे ॥ ३२ ॥

मूलः—परिवाडीए न चिट्ठेज्जा भिक्खू दत्तेसणं चरे।
पडिरूवेण एसित्ता मियं कालेण भक्खए ३२.

गाथा ३२ भावार्थ—ज्यां जमवा पंक्ती बेठी होय त्यां सुधी उभो न रहे अने निर्दोष आहार लेवानी एषणा शुद्धिए ग्रहस्थे जे आहार दीधो होय ते साधुने विषे भिक्षागवेषीने सिद्धांतोक्त मात्रा (मर्यादा) ए आहार करवाने काळे जमे.३२

अर्थः—ना० अति वेगलो उभो न रहे ॥ अ० अति दुंकडो पण उभो न रहे ॥ न० अ० उभो न रहे अने राभिक्षाचरादिकने ॥ च० दृष्टि गोचरे ॥ ए० राग द्वेष रहित ॥ चि० उभो रहे ॥ भ० आहारादिकने अर्थे ॥ ल० उलघीने ॥ तं० ते भिक्षाचरादिकने ॥ न० अ० आघो प्रवेश न करे ॥ ३३ ॥

मूलः—नाइदूरमणासन्ने नऽन्नेसिं चक्खुफासओ।

एगो चिट्ठेज्ज भत्तट्ठा लङ्घित्ता तं नउक्कमे ३३.

गाथा ३३ भावार्थ—भीक्षार (भिक्षाथी) उभो होय तीहां अती दुर तथा अति दुरको उभो न रहे, भिक्षावाली तथा ग्रहणकी यही ओलंघे उभो न रहे, अथ पाणी ग्रहणने अर्थे भिक्षाचरने ओलंघीने प्रवेश नही करतां राग द्वेष रहीत पहले उभो रहे. ३३

अर्थ—ना० दातारथी अति उंचे थानके ॥ प० निचे ॥ नी० निचे थानके उभो रहिने ॥ पा० भणवा ॥ ना० दातारने अति दुरको ॥ ना० अति वेगलो उभो रहिने भिक्षालीए ते केहवी लीए ॥ फा० फासुक अचित्त ॥ प० पारके काजे कीधो होय ॥ पि० आहार लेहने ॥ प० ग्रहीए ॥ सं० संजति साधु ॥ ३४ ॥

मूलः—नाइउच्चे व नीए वा नासन्ने नाइदूरओ ।
फासुयं परकडं पिण्डं पडिगाहेज्ज संजए ३४.

गाथा ३४ भावार्थ—दातारथी उंचो रहीने निचो उभो रहीने, अती दुरको उभो रहीने, अती दुर उभो रहीने भिक्षा नही लेतां पाने अर्थे निपजावेलो होय एवो जीवरहीत अर्थात आहार संयति ग्रहण करे. ३४

अर्थः—अ० नहि ॥ पा० बेंद्रीयादिक जीव ॥ अ० नहि ॥ बी० बीजमि ॥ प० उपन्दिडयो होय ॥ ती० घीकु फेर ढांकयो होय ॥ एहवा थानकने विषे ॥ स० पोताना मत सरिखो गत छे जे साधुने ते साधु कहेल ॥ सं० संजति साधु ॥ मु० निषे ॥ ज० जयणाए ॥ अ० आहारने अणगमतो थको ॥ ३५ ॥

मूलः—अप्पपाणप्पबीयंमि पडिच्छन्नंमि संवुडे ।
समयं संजए भुञ्जे जयं अपरिसाडियं

गाथा ३५ भावार्थ—उपर तथा नेटु पासे मांदादीक करि ढांकतुं होय अने बेइंद्रियादीक जीव तथा बीजरहीत हाथे एवा स्थानकने विषे आपणा आचार सरिखा आचारवंत बीजा साधु होय तेनी साथे अण नाखतो थको यतनाए संयति जमे.३५

अर्थः—सु भलो कीधो ए भोजन ॥ त्ति० इम न कहे ॥ सुक० रुडो कीधो ध्यानादिक एम कहे ॥ सु० रुडोपण्यो घृतादिके घेवर प्रमुख त्ति०इम न कहे ॥ सुपक० भलो पाक ब्रह्मचर्यपणो एम कहे ॥ सु० रुडो छेद्यो ए पत्र शाकादिक॥त्ति० इम न कहे ॥ सु० भलो छेद्यो सिनेह एम कहे ॥ सु० भलोहथों कृपणनो धन ॥ सुह० भलो हथों अलगो किधो आरंभथी आत्माने ॥ म० भले मूओ विसादिकने विषे ॥ म० भलो मूओ पंडित मरणे ॥ सु० भलानिपज्या मोदिकादिक ॥ सु० भलो निपजाव्यो संवर जोग ॥ सु० भलीमनोज्ञकन्या त्ति० न कहे इत्यादिक प्रकारना ॥ सु० भलो मनोज्ञ छे साधुनो वेष । इम बोलतो थको ॥ सा० सावद्यभाषाने ॥ व० वर्जे मु० साधु ॥ ए बे अर्थ ॥३६॥

मूलः—सुक्कडि त्ति सुपक्कि त्ति सुच्छिन्ने सुहडे मडे ।
सुणिट्ठिए सुलट्ठे त्ति सावज्जं वज्जए मुणी ३६

गाथा ३६ भावार्थ—ए अन्नादीक भलुं कीधुं, ए घेवरादीक भलां पकाव्यां, ए शाक पत्रादीक भलुं छेद्युं, भलुं ए कृपणनुं धन हर्युं, ए चाडीयो भलो मुवो, ए मोदकादीक स्वादीष्ट भला निपज्या, ए कन्या भली तुंदराकार छे, एवी सावद्य भाषा साधु वर्जे. एहज जो निरवद्य भाषा बोलवी होय तो जे प्रमाणे साधु बोले ते कहे छे भलुं कीधुं एणें धर्म-ध्यानादीक; भलुं पाळ्युं एणे ब्रह्मचर्यपणुं, तथा वचन विज्ञानादीक भलुं छे, भलो छेद्यो स्नेह पासादीक, आत्माने भलो हथों मिथ्यात्वादीकथी, भलो मुवो पंडीत मर्णे, भलो निपजाव्यो साध्वादीक आचाररुपसंवर; भलो मनोज्ञ साधुनो वेश, भली साधुनी समाचारी एणें आराधी, इत्यादीक निरवद्य वचन बोले. ३६

अर्थः—र० रति पामे गुरु ॥ प० विनित शिष्यने ॥ सा० सिषामण देतां थका ॥ ह० घोडाने जिम चेला-

कर्म ॥ म० मद्दजातिना ॥प० जिम वा० अश्वसार रतिने पामे ॥ वा० अविनितने गु० शिक्षापण देता थका गुरु ॥ स० अप एसे वेद पामे ॥ म० गलिया घोडाने व० जिम वेदरावतां वा० अश्वसार खेद पामे ॥ १७ ॥

मूलः—रमए पण्डिए सासं हयं भद्दं व वाहए।
बालं सम्मइ सासन्तो गलियस्सं व वाहए ३७.

भाषा १७ भावार्थ—अद्रजातिना घोडाने जेम श्वार जेणवतां रती पामे तेम विनित शिष्यने गुरु शिक्षापण देता रती पामे. अने गलीया घोडाने वेदरावतां खेद पामे तेम अविनितने शिक्षापण देतां गुरु श्रम पामे. १७

अर्थः—स० टाकर मोर ॥ मे० मुजने ॥ च० चणेठा देखे ॥ मे० मुजने ॥ अ० माल देखे ॥ व० वध करे छे ॥ मे० मुजने ॥ क० कहवाग करीजो ॥ अ० शिक्षागर देता थका ॥ पा० पापदृष्टि अविनित ॥ वि० इम करि ॥ अ० माने ॥ १८ ॥

मूल—खड्डया मे चवेडा मे अक्कोसा य वहा य मे।
कल्लाणमणुसासन्तो पावदिट्ठि त्ति मन्नई ३८.

भाषा १८ भावार्थ—गुरु शिक्षागर दिए ते थके अविनित केहवं जाणे ते कहे छे. ए गुरु मुजने जेम कोटवाळ बंधी वाणे माटे तेम मारे छे, टाकर तथा चणेठा मारे छे, गाळ दीए छे, वेरादीकेहरी वध (मारे) करे छे. ए गुरु कोटवाळ सरीखा एम दुष्टबुद्धि छे एम गुरुए हितकरी शिक्षागर देता अविनित शिष्य माने ३८

अर्थः—खु० दुष्टबुद्धिए ॥ मे० मुजने ॥ ख० खडीमारे ॥ चा० चपेटामारे गुरु मुजने हितकारि शिक्ष देई ॥ वि० इम ॥ म० ते विनित शिष्य होय ते ॥ क० शिक्षकने कहवाकारी ॥ म० माने ॥ पा० अविनित होय

ते ॥ उ० पुनः ॥ अ० पोताना आत्माने ॥ सा० शिक्षामण देता थका ॥ दा० दासपणाने ॥ ति० एम करिने ॥ म० माने ॥ ३९ ॥

मूल—पुत्तो मे भाय नाइ त्ति साहू कल्लाण मन्नइ ।
पावदिट्ठि उ अप्पाणं सासं दासि त्ति मन्नई ३९.

गाथा ३९ भावार्थ—पुत्रनी पेरे भाइनी पेरे ज्ञातीजनी पेरे ए गुरु मुजने हितकारी शिक्षामण दीए छे एम विनित शिष्य माने सने पाप दृष्टीवंत अविनित शिष्य ते गुरु हितकारी शिक्षामण देता दासनी परे मुजने तर्जना करे छे एम करी माने. ३९

अर्थः—न० न कोपवे ॥ आ० आचार्यने ॥ अ० आत्माने पि० पण ॥ न० न कोपावे ॥ गु० गुरुने ॥ उ० घातनो करणहार ॥ न० न होइ ॥ न० न होइ ॥ तो० गुरुना छिद्रनो ॥ ग० गवेषणहार ॥ ४० ॥

मूल—न कोवए आयरियं अप्पाणं पि न कोवए ।
बुद्धोवघाई न सिया न सिया तोत्तगवेसए ४०.

गाथा ४० भावार्थ—विनित शिष्य आचार्यने गुरुने पोताना आत्माने न कोपवे गुरुनो घातनो करणहार न होय तेम ज गुरुना छिद्र नवेषे (शोधे) नही. ४०

अर्थः—अ० आचार्यने ॥ कु० कोप्या ॥ न० जाणीने ॥ प० प्रतिकारी वचने करि ॥ प० प्रसन्न करे । वि० कोप अग्नीने उपसमावे ॥ पं० बे हाथ जोडिने ॥ व० बोले ॥ न० नहि करुं ॥ पु० वली एह अविनयने ॥ ति० एम ॥ य० पदपुरणे ॥ ४१ ॥

मूल—आयरियं कुवियं नच्चा पत्तिएण पसायए।
विज्झवेज्ज पञ्जलिउडो वएज्ज न पुणो त्ति य ४१.

अन्वय सहित संस्कृत—विनय शिक्षण आचार्यने कोपवा उत्पन्न थयेला जाणीने प्रतीति उपजे तेवां वचनो वडे कोपनी उपशान्तता प्रसन्नता करे हाथ जोडीने एम कहे के हे भगवन्! ए मारो अपराध क्षमो! हवेथी अपराध नहीं करूं!!! ४१

अर्थ:—आ० इत्यादि विनय धर्म करी उपलक्षे ॥ च० वली ॥ व० मृदु व्यवहार ॥ कु० तजवो जाण ॥ आ० ते उपरान्त वचने करी ॥ प्र० प्रसन्न ॥ तं० ते मृदु व्यवहार ॥ आ० आचरतो थको ॥ व० व्यवहार मृदु परिणामे ॥ ग० शिखवे ॥ ग० अ० न पामे ॥ ४१ ॥

मूल—धम्मज्जियं च ववहारं बुद्धेहायरियंसया।
तमायरन्तो ववहारं गरहं नाभिगच्छई ४२.

अन्वय सहित संस्कृत—धर्मार्जित एवा विद्या वडे वर्द्धमान बुद्धि वडे तथा ते आचरवाथी प्रतिलेखनादिक व्यवहार उपयोगनो पूर्ण ज्ञाता थयो थको ते व्यवहार ने आचरतो थको मनमां ज्ञान मेले गर्हा आचार्यनो अविनयवाळो निंदाने न पामे. ४२

अर्थ:—ध० धर्मार्जित ज्ञाने ॥ च० पवन वैद्यने ज्ञाने अभिमाने ॥ जा० जाणीने ॥ आ० आचारने ॥ बु० इत्यादि बहुमान ज्ञाने ॥ त० ते अभिमाने ॥ व० आ० वचने करीने ॥ क० व्यवहार करी ॥ उ० शिखवे ॥ ४२ ॥

मूल—मणोगयं वक्कगयं जाणित्तायरियस्स उ।

तं परिगिज्झ वायाए कम्मुणा उववायए ४३

गाथा ४३ भावार्थ—सुशिष्य आचार्यना मनोगतने विषे जे कार्य रहेलुं होय ते अभीप्रायने वाक्यथी जाणीने ते कार्य हुं करिश्' एम वदीने कायथी तत्काळ ते कार्य संपूर्ण निपजावे. ४३

शब्दार्थः—वि० विनित शिष्य ॥ अ० अणप्रेरयो जो चिंतित कार्य करे ॥ नि० सदाय ॥ खि० शिघ्र ॥ ह० होय ॥ गु० गुरुए रुडिपरे सिपरते थके ॥ ज० जेम गुरुए जे कार्य कहुं ते तेमज करे ॥ सु० पछे गुरु एम कहे जे ए कार्य ॥ रुडो कीधो ॥ कि० चिंतित उपजता कार्यने ॥ कु० करे ॥ स० सदाय एहवा विनय गुण ॥ ४४ ॥

मूल—विन्ने ऽचोइए निच्चं खिप्पं हवइ सुचोइए।
जहोवइट्ठं सुकयं किच्चाइं कुव्वई सया ४४

गाथा ४४ भावार्थ—रही पेर गुरुनी शिक्षामणवडे जेम गुरुए कार्य करेलुं होय तेम विलंब रहीत कार्यकरवाने वास्ते सदाय अणजंपीं थको विनित शिष्य प्रवर्ते ते एवुं के जे कार्य कर्यो पछी गुरु पण प्रशंसा करे. ४४

शब्दार्थः न० जाणीने ॥ ने० विनय वंत होय ॥ मे० बुद्धिवंत ॥ लो० लोकने विषे ॥ कि० कीर्ति ॥ से० ते विनितनी ॥ जा० होय ॥ ह० ते विनित होय ॥ कि० रुडा अनुष्ठाननो ॥ स० आधार भूत ॥ भू० प्राणीने ॥ ज० प्रथवी ॥ ज० जेम आधारभूत तेम ॥ ४५ ॥

मूल—नच्चा नमइ मेहावी लोए कित्ती से जायए।
हवई किच्चाणं सरणं भूयाणं जगई जहा ४५

गाथा ४५ भावार्थ—बुद्धिवंत एवा विनयना गुण जाणीने विनयवंत होय तेवा विनितनी लोकने विषे कीर्ति थाय अने रुडा अनुष्ठानो करवाने विषे पृथ्वीनी पेर प्राणीओने ते आधारभूत [illegible]

अर्थ—पु० गुरु ज० जीवितव्यने प० प्रसन्न थाय सं० पुण तत्त्वना जाण छे पु०पूर्व सं०सेवा करी परिचय करी मूलया छे एहवा गुरु प० प्रसन्न थया थका आ० पमाडे। नि० निपुण धर्मो भ० मोक्षादि सुख पामवानो अर्थ हेतु छे जेहने मिले एहवो ते पु० पूजने दिए ॥ ४६ ॥

मूलः—पुज्जा जस्स पसीयन्ति संबुद्धा पुवसंथुया ।
पसन्ना लाभइस्सन्ति विउलं अट्ठियं सुयं ४६.

गाथा ४६ भावार्थः—ज्ञानथी जाण्यो छेवो पहेलां स्तवना ज्ञाण एवा गुरुने विधिवत विस्तरे विनय करीने सेव्या छे ते गुरु विधिवत विस्तरे प्रथम थयाथी जेहनी विषयोमें मोक्ष पामवानो हेतु एवुं श्रुत ज्ञान दिए. ४६

अर्थ—स०तेविनित शिष्य पु०पूजनिक छे स०सास्त्र जेहना एहवो होय थकी केहतो होय सु०अविहे वि० टाल्यो छे ७०मदेह जेणे। म० गुप्ता मनतिरुनि जेम होय चि० तेम प्रवर्ते थकि क० सुद्ध साधूनो कर्त्तव्य तेहिज सं० संपदा एवी छे जेहने। त० तप ज० दश विध समाधि जेणे करि। सं० संयमे आत्म जेणे। म० मोटि तपउपधि रुप शंतिथी छे जेहने तिणे एहवो विनेय। प० पांच महाव्रतने। पा० पालिने ॥ ४७ ॥

मूल—स पुज्जसत्थे सुविणीयसंसए मणोरुई चिट्ठइ कम्मसंपया ।
तवोसमायारिसमाहिसंवुडे महज्जुई पंच वयाइं पालिया ४७.

गाथा ४७ भावार्थ.—ते विधिवत विस्तर ज्ञानदीक ज्ञानवंत थयो तेहे संयम ज्ञानीमे गुरुना मनगमी जेम रुची होय तेम प्रवर्ते, वली एम विध ज्ञानाचारादिक विषयादि वली महीत थये जेणे आतम संयमा के एवा मोटा तपथी रमुनीए करी शोभित थयो पंच महाव्रत पालिने विविध विस्तर विहरे आम ते (इति श्री गाथामां कहे छे.) ४७

अर्थ—स० तेविनित साधू दे० ज्योतिषी वैमानिक देव । मं० गंधर्वादिक व्यंतरे म० चक्रवर्त्यादि मनुष तेणे पू० पूज्यो छे च० छांडिने दे० सरिर म० मातानू रुधिर प० वापनो वीर्य ते छे । पु० पूर्व कारण जेहनो एटले तेहिजथी उपनो छे एहवा देहने छांडिने सि० सिद्ध वा० पद पूर्णे । ह० होयसा० सास्वतो । दे० अथवा देवता होय अ० थोडा रह्या छे र० कर्म जेहने एहवो होय । म० महारिधिनो धणी होय । ४८ । सि० एम । बे० हुं कहुंछुं

॥ इति विनय समाहिनामा प्रथमं अध्ययनं सम्मत्तं ॥

मूल—स देवगन्धव्वमणुस्सपूइए चइत्तु देहं मलपङ्कपुव्वयं ।
सिद्धे वा हवइ सासए देवे वा अप्परए महड्ढिए ४८. त्ति बेमि

विणयसुयमज्झयणं सम्मत्तं.

गाथा ४८ भावार्थः—भुवनपती, वाणव्यंतर, ज्योतिषीने वैमानीक ए चार जातीना देवताए तथा चक्रवर्त्यादीक मनुष्ये पुजेलो एवो विनयवंत साधु मातानुं रुधीर ने पीतानुं विर्य तेहथी उत्पन्न थएला शरीरने छोडीने सास्वतो सिद्ध थाय अथवा जेहने थोडां कर्म रहेला होय ते मोटी रुद्धिनो धणी देवता थाय एम सुधर्मा स्वामी पोताना जंबूस्वामी नामना शिष्यने कहेता हुया के हे जंबू! जेम में श्री महावीर देव स्वामीनी समीपे सांभळ्युं हतुं तेम तुज प्रत्ये कहुं छुं. ४८

इति श्री प्रथम विनय अध्ययननो भावार्थ संपूर्ण.

॥ परीसहज्झायणं ॥
द्वितीयं अध्ययनम्

विनयवंत होय ते परीसहने पमे ते माटे बीजुं परीसह अध्ययन प्रारंभ कीए छीए

अर्थ—सु० सोभस्सो मे०गे। आ० हे आउसतेन शिष्य ते० तेणे भ० भगवंते प०एम। अ० कयुं इ० ए मिन शासन ने विषे स० निश्चेबा० बावीस परीसह स० सपरषीए। भ० ज्ञानवंते म० महावीरे का० कासवगोत्रिए प० प्रकर्षे जाणी कयुं जे० जे कोइ भि० साधू सो० गुरुनी सभिपे सांभळीने। न० जाणीने भि०परिचित करीने अभ्यास करीने। अ० ते परीसहने जितिने भि० गोचरिने विषे। प० प्रवर्तता थका पु० परीसहे करयोथका नो०संजमने विषे हणाय नहि नासे नहि ॥ १ ॥

हवे शिष्य गुरु प्रत्ये पूछे छे क० कोण स० निश्चे ते० तेबावीस प० परीसह। स० सपरषीए भ० ज्ञानवंते म० महावीरे का० काश्यपगोत्रिए प० प्रकर्षे वे० जाणि कयुं जे० जे कोइ भि० साधू गु० गुरुनि सभिपे सांभळिने न० जाणीने भि० परिचित करीने अभ्यास करीने। अ० ते परीसहने जितिने भि० गोचरिने विषे। प० प्रवर्तता थका पु० परीसहे करयो थको। नो० संजमने विषे हणाय नहि नासे नहि ॥ २ ॥

हवे गुरु कहेछे। इ० एणिपरे स० निश्चे ते०ते। बा० बावीस प० परीसह। स०श्रमण सपरषीए भ० भगवंत म० महावीर का० काश्यपगोत्रिए प० प्रकर्षे वे० जाणी कयुं। जे० जे कोइ भि० साधू गु० गुरुनी सभिपे सांभळिने।

अर्थ—स० तेविनित साधू दे० ज्योतिषी वैमानिक देव । गं० गंधर्वादिक व्यंतरे मं० चक्रवर्त्यादि मनुष्य तेणे पू० पूज्यो छे च० छांडिने दे० सरिर म० मातानू रुधिर प० वापनो वीर्य ते छे । पु० पूर्वे कारण जेहनो एटले तेहिनथी उपनो छे एहवा देहने छांडिने सि० सिद्ध वा० पद पूर्णे । ह० होयसा० सास्वतो । दे० अथवा देवता होय अ० थोडा रह्या छे र० कर्म जेहने एहवो होय । म० महारिधिनो धणी होय । ४८ । ति० एम । वे० हुं कहुंछुं

॥ इति विनय समाहिनामा प्रथमं अध्ययनं सम्मत्तं ॥

मूल—स देवगन्धव्वमणुस्सपूइए चइत्तु देहं मलपङ्कपुव्वयं ।
सिद्धे वा हवइ सासए देवे वा अप्परए महड्ढिए ४८. त्ति बेमि

विणयसुयमज्झयणं सम्मत्तं.

गाथा ४८ भावार्थः—भुवनपती, वांणव्यंतर, जोतिषीने वैमानीक ए चार जातीना देवताए तथा चक्रवर्त्यादीक मनुष्ये पुजेलो एवो विनयवंत साधु मातानुं रुधीर ने पीतानुं विर्य तेहथी उत्पन्न थएला शरीरने छोडीने सास्वतो सिद्ध थाय अथवा जेहने थोडां कर्म रहेलां होय ते मोटी रुद्धिनो धणी देवता थाय एम सुधर्मा स्वामी पोताना जंबूस्वामी नामना शिष्यने कहेता हवा के हे जंबू! जेम में श्री महावीर देव स्वामीनी सभाये सांभल्युं हतुं तेम तुज प्रत्ये कहुं छुं. ४८

इति श्री प्रथम विनय अध्ययननो भावार्थ संपूर्ण.

॥ परीसहज्झायणं ॥
द्वितीयं अध्ययनम्

निग्रन्थपणुं होय ते परीसहने पमे ते माटे बीजुं परीसह अध्ययन प्रारंभीए छीए

अर्थ—सु० सोमस्सो मे०मे। आ० हे आउसंतं शिष्य ते० तेणे भ० भगवंते ए०एम । अ० अक्खं इ० ए जिन शासन मे विषे स० निश्चेज्ञा० करीम परीसह स० सप्तदश । भ० ज्ञानवंते म० महावीरे का० काश्यपगोत्रिए प० प्ररूपे जाणी अक्खं मे० जे कोइ भि० साधू गो० गुरुनी समिपे सांभळीने । न० जाणीने जि०परिचित करीने अभ्यास करीने । अ० ते परीसहने जिणिने भि० गोचरिने विषे । प० प्रवर्त्ततो थको पु० परीसहे फरसेथकोनो०संजमने विषे हणाय नहि नासे नहि ॥ १ ॥

हवे शिष्य गुरु प्रत्ये पूछे छे क० कोण स० निश्चे ते० तेवावीस प० परीसह । स० सप्तदश भ० ज्ञानवंते म० महावीरे का० काश्यपगोत्रिए प० प्ररूपे मे० जाणी अक्खं मे० जे कोइ भि० साधू गु० गुरुनी समिपे सांभळिने न० जाणीने भि० परिचित करीने अभ्यास करीने । अ० ते परीसहने जिणिने भि० गोचरिने विषे । प० प्रवर्त्ततो थको पु० परीसहे फरसेथको । नो० संजमने विषे हणाय नहि नासे नहि ॥ २ ॥

हवे गुरु कहेछे । इ० एमज़ो स० निश्चे ते०ते । आ० बावीस प० परीसह । स०अमग सप्तदश भ० भगवंत म० महावीर का० काश्यपगोत्रिए प० प्ररूपे मे० जाणी अक्खं । जे० जे कोइ भि० साधू स० गुरुनी समिपे सांभळिने ।

अर्थ—स० तेविनित साधू दे० ज्योतिषी वैमानिक देव । गं० गंधर्वादिक व्यंतर म० चक्रवर्त्यादि मनुष्य तेणे पू० पूज्यो छे च० छांडिने दे० सरिर म० मातानू रुधिर प० वापनो वीर्य ते छे । पु० पूर्व कारण जेहनो एटले तेहिनथी उपनो छे एहवा देहने छांडिने सि० सिद्ध वा० पद पूर्णे । ह० होयसा० सास्वतो । दे० अथवा देवता होय अ० थोडा रया छे र० कर्म जेहने एहवो होय । म० महारिध्निो धणी होय । ४८ । त्ति० एम । वे० हुं कहुंछुं

॥ इति विनय समाहिनामा प्रथमं अध्ययनं सम्मत्तं ॥

मूल—स देवगन्धव्वमणुस्सपूइए चइत्तु देहं मलपङ्कपुव्वयं ।
सिद्धे वा हवइ सासए देवे वा अप्परए महड्ढिए ४८. त्ति बेमि

विणयसुयमज्झयणं सम्मत्तं.

गाथा ४८ भाषार्थः—सुरनपती, वांणव्यंतर, जोतिषीने वैमानीक ए चार जातीना देवताए तथा चक्रवर्त्यादीक मनुष्ये पुजेलो एवो विनयवंत साधु मातानुं रुधीर ने पीतानुं विर्य तेहथी उत्पन्न मएला शरीरने छोडीने सास्वतो सिद्ध थाय अथवा जेहने थोडां कर्म रहेला होय ते मोटी रुद्धिनो धणी देवता थाय एम सुधर्मा स्वामी पोताना जंबूस्वामी नामना शिष्यने कहेता हवा के हे जंबू ! जेम में श्री महावीर देव स्वामीनी समीपे सांभल्युं हतुं तेम तुज प्रत्ये कहुं छुं. ४८

इति श्री प्रथम विनय अध्ययननो भावार्थ संपूर्ण.

॥ परीसहज्झयणं ॥

द्वितीयं अध्ययनम्

जिनपर्यंत होय ते परीसहने वसे ते माटे बीजुं परीसह अध्ययन प्रारंभीए छीए

अर्थ—सु० सांभल्यो मे०मे। आ० हे आउसंत शिष्य ते० तेणे भ० भगवंते ए०एम। अ० कहुं इ० ए जिन शासने विषे स० निश्चेकर० बावीस परीसह स० तपस्वीए। भ० ज्ञानवंते म० महावीरे का० काश्यप गोत्रिए प० प्रकर्षे जाणी कहुं जे० जे कोइ भि० साधू सो० गुरुनी समीपे सांभळीने। न० जाणीने वि०परिचित करीने अभ्यास करीने। अ० ते परीसहने जितिने भि० गोचरीने विषे। प० प्रवर्ततो थको पु० परीसहे फरसायो थको। नो० संजमने विषे हणाय नहि नासे नहि ॥ १ ॥

हवे शिष्य गुरु प्रत्ये पूछे छे क० कोण स० निश्चे ते० तेबावीस प० परीसह। स० तपस्वीए भ० ज्ञानवंते म० महावीरे का० काश्यपगोत्रिए प० प्रकर्षे वे० जाणि कहुं जे० जे कोइ भि० साधू मु० गुरुनि समिपे सांभळिने न० जाणीने वि० परिचित करीने अभ्यास करीने। अ० ते परीसहने जितिने भि० गोचरीने विषे। प० प्रवर्ततो थको पु० परीसहे फरसायो थको। नो० संजमने विषे हणाय नहि नासे नहि ॥ २ ॥

हवे गुरु कहेछे। इ० एणप्रे स० निश्चे ते०ते। बा० बावीस प० परीसह। स०श्रमण तपस्वीए भ० भगवंत म० महावीर का० काश्यपगोत्रिए प० प्रकर्षे वे० जाणी कहुं। जे० जे कोइ भि० साधू मु० गुरुनि समिपे सांभळिने।

न० जाणिने जि० परिचित करीने अभ्यास करिने अ० ते परीसहने जितिने भि० गोचरीने विषे प० प्रवर्ततो थको पु० परीसहे फरस्यो थको नो० संजमने विषे हणाय नहि नासे नहि ॥ ३ ॥

तं० ते बावीस परिसा जेम छे तेम कहे छे ॥ दि० भूख प० सर्वथा प्रकारे स० सहेवी ते दिगंछा परीसह कहिए ॥ १ ॥ पि० तृषानो प० सर्वथा प्रकारे सहेवो ॥ २ ॥ सी० शीतनो प० परीसह ॥ ३ ॥ उ० तापनो परीसह ॥ ४ ॥ दं० दंसमसगनो प० परीसह ॥ ५ ॥ अ० जूना फाटा वस्त्रनो प० परीसह ॥ ६ ॥ अ० संजमने विषे अरति अधिर पणो उपजे तेहनो प० परीसह ॥ ७ ॥ इ० स्त्रिनो परीसहखमे ॥ ८ ॥ च० ग्रामादिकने विषे चालवानो परीसह ॥९॥ नि० एकठामे एक आसणे बेसी रहेवो तेहनो परीसह ॥ १० ॥ से० उपाश्रय थानकनो प० परीसह ॥ ११ ॥ अ० अशुभ वचन आगलो बोले ते परीसह ॥१२॥ व० वधनो परीसहपमे॥ १३ ॥ जा० जाचवानो प० परीसहपमे ॥१४॥ अ० अण लाभ्यानो प० परीसह ॥ १५ ॥ रो० रोगनो प० परीसह ॥ १६ ॥ त० तृणाना फरसनो परीसह ॥ १७ ॥ ज० मेलनो परीसह ॥ १८ ॥ स० सत्कारनो सनमाननो प० परीसहपमे ॥ १९ ॥ प० प्रज्ञानो उतकर्षनो प० परीसह ॥ २० ॥ अ० अजाण पणानो प० परीसह ॥ २१ ॥ दं० समकितथी डोले ते दंसण प० परीसह ॥ २२ ॥

मूलः—सुयं मे आउसं तेणं भगवया एवमक्खायं । इह खलु बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिवयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । (कयरे खलु ते

जल्लपरीसहे १७ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १८ पन्नापरीसहे १९
अन्नाणपरीसहे २० अदंसणपरीसहे २१ पढमसमयजिणपरीसहे २२
चक्खिंदियपरीसहे १ सोइंदियपरीसहे २ घाणिंदियपरीसहे ३
जिब्भिंदियपरीसहे ४ फासिंदियपरीसहे ५ कोहकसायपरीसहे ६
माणकसायपरीसहे ७ मायाकसायपरीसहे ८ लोभकसायपरीसहे ९
पेज्जदोसपरीसहे १० दंसणमोहणीयपरीसहे ११ चरित्तमोहणीयपरीसहे १२
इरियापरीसहे १३ नसीहियापरीसहे १४ सेज्जापरीसहे १५
अक्कोसपरीसहे १६ वहपरीसहे १७ जायणापरीसहे १८
अलाभपरीसहे १९ रोगपरीसहे २० तणफासपरीसहे २१
जल्लपरीसहे २२ सक्कारपुरक्कारपरीसहे २३ पन्नापरीसहे २४
अन्नाणपरीसहे २५ अदंसणपरीसहे २६ ॥ ३ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा ॥ इमे खलु ते बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ ४ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ ५ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ ६ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ ७ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ ८ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ ९ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ १० ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ ११ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ १२ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ १३ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ १४ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ १५ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ १६ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ १७ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ १८ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ १९ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ २० ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ २१ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ २२ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ २३ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ २४ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ २५ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ २६ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ २७ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ २८ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ २९ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ ३० ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ ३१ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ ३२ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ ३३ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ ३४ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ ३५ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ ३६ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ ३७ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे ९ निसीहियापरीसहे १० सेज्जापरीसहे ११ अक्कोसपरीसहे १२ वहपरीसहे १३ जायणापरीसहे १४ अलाभपरीसहे १५ रोगपरीसहे १६ तणफासपरीसहे १७ जल्लपरीसहे १८ सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९ पन्नापरीसहे २० अन्नाणपरीसहे २१ अदंसणपरीसहे २२ ॥ ३८ ॥ तत्थ खलु इमे बावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्तो पुट्ठो नो विहण्णेज्जा । दे जहा । दिगिंछापरीसहे १ पिवासापरीसहे २ सीयपरीसहे ३ उसिणपरीसहे ४ दंसमसयपरीसहे ५ अचेलपरीसहे ६ अरइपरीसहे ७ इत्थीपरीसहे ८ चरियापरीसहे

कहेल छे, तेने जे कोइ साधु गुरु समीपे सांभळी जाणे, परीषय करी ते परीसहने जीती, गोचरीने विषे प्रवर्तंतो थको परीसहथी फरस्यो थको संयमथी नासे नहीं. ॥ १ ॥

भावार्थः—हवे शिष्य पुछे छे, कोण ते निश्चय बावीस परीसह के जे काश्यप गोत्रना धणी श्रमण भगवंत महावीर देवे जैन सासनने विषे साक्षात केवळ ज्ञाने करी स्वयमेव जाणीने परपेल छे के जे कोइ साधु गुरु समीपे सांभळी जाणी, परीचय करी, ते परीसहने जीती, गोचरीने विषे प्रवर्तंतो परीसहथी फरस्यो थको संयमथी हणाय (नासे) नहीं. ॥ २ ॥

भावार्थः—हवे गुरु कहेता हवा, एह लिखे बावीस परीसह के जे काश्यप गोत्रना धणी श्रमण भगवंत श्री महावीर देवे जैन सासनने विषे साक्षात् केवळ ज्ञाने करी स्वयंमेव जानीने परपेल ? के जे कोइ साधु गुरु समीपे सांभळी, जाणी, परीचय करी, ते परीसहने जीती, गोचरीने विषे प्रवर्तंतो, परीसहथी फरस्यो थको, संयमथी हणाय (नासे) नहीं. ॥ २ ॥

भावार्थः—हवे ते बावीस परीसहना नाम कहे छे १ पक्वान्नपर भोजन नहीं मळवाथी थयी क्षुधा सहन करवी ते क्षुधा परीसह २ खाधा पछी तृषा लागे अने अचेत पाणी जेवुं जोइए तेवुं न मळे ते तृषानो परीसह ३ मीयाळामां टाढ सहन करवी पडे, ते परीसह ४ उनाळानी रूतुमां ताप सहन करवो पडे ते परीसह ५ चोमासामां दंश मच्छरादिना डंक सहन करवा ते परीसह ६ वस्त्र फाटी गएलां तुनाथी निर्वाह करवो पडे ते परीसह ७ जोइतुं वस्तु नहीं मळवाथी दीलगीरी न थवा देवी ते परीसह ८ स्त्री संबंधी काम विकार प्रगट न थवा देवा ते परीसह ९ एक गामथी बीजे गाम पगे चाली जवुं ते परीसह १० मकाननी अंदर आरो दिवस एकज स्थानके बेसी रहेवुं ते परीसह ११ (स्थानक दृटले मकान) जेवं जोइए तेवुं न मळेते परीसह १२ गामादिक फरसां कोइ अनार्य कोप करी मार्ग ईखरा

दे ते सहन करवा ते परीसह ११ शय्यादिक करता साधुने मारे ते मार परीसह १४ पगरके पेर शूलादु ते परीसह, १५ मारयां छतां पण आवे तेथी संतोष राखवो ते परीसह, १६ शरीरने विषे रोगथी पीडा सहन करवी ते परीसह १७ रांकी छतां घासनी पथारी उपर सुइ रहेवुं ते परीसह १८ शरीरने विषे मलमूत्रादिक दुर्गंछा न करवी ते परीसह १९ कोइ मारता आवो पछाडो घूम न करे ते परीसह २० थोडी बुद्धि पोतानी छे तेथी कोइ मारता पुछे अने एकदम जवाब न देवाय एवी बाबतथी न मुंझावुं ते परीसह २१ घणा दीवस तप संयमादिक कर्यां छे तो पण ज्ञान प्राप्त न थयुं तेथी पण मुंझावुं नहि ते परीसह २२ देवलोक अथवा नर्कादिकने केम अथवा (आ वचन) निश्चेकर गाढा हशे के केम छेवटे तेथी शंका करे तेम न करवा देवुं ते परीसह.

अर्थ—प० एकावीस परीसहना । प० प्रकारे वि० जूदी जूदी विचारणा । का०काश्यपगोत्रिमहावीरे । प०पन्ना,त० ते विचारणाने मे० मुज प्रते । उ० कहिस्य आ० अनुक्रमे सु० सांभली मे० मूलने कहेता थका ॥ १ ॥

मूल—परीसहाणं पविभत्ती कासवेणं पवेइया ।
तं मे उदाहरिस्सामि आणुपुव्विं सुणेह मे १.

गाथा १ भावार्थ—सुधर्मास्वामी कहेता हवा हे जंबू ! कासव गोत्री श्री महावीर स्वामीए जुदा जुदा बावीस परीसह प्रपंच ज ते विचारीने हुं तुजने कहीश, ते हुं अनुक्रमे सांभळ ! ॥ १ ॥

अर्थ—दि० भूखतृषातुरे दे० शरीरने विषे । त० तपस्वी भि० साधू था० संजमने विषे बलवंत ॥ न० न छेदे फलादिकने पोते न० न छेदावे पर अनेरापासे । न० पचे नहि अनादिकने पोते न० पचावे नहि पर पासे ॥ २ ॥

मूल—१ दिगिंछापरिगए देहे तवस्सी भिक्खू थामवं ।
न छिन्दे न छिन्दावए न पए न पयावए २.

अन्नाणपरीसहे २१ सम्मत्तपरीसहे २२ (दंसणपरीसहें)

भावार्थः—विनयवंत होय ते परीसह सहन करे तेथी बीजुं परीसह अध्ययन कहे छे. ॥ १ ॥ सुधर्मास्वामी कहेता हवा, हे चीरंजीवी जंबू ! जे काश्यप गोत्रना धणी श्रमण भगवंत तपस्वी महावीर देवे जैन शासनने विषे बावीस परीसह कहेल छे, तेने जे कोइ साधु गुरु समीपे सांभळी जाणे, परीचय करी ते परीसहने जीती, गोचरीने विषे प्रवर्तनो थको परीसहथी फरस्यो थको संयमथी नासे नही. ॥ १ ॥

भावार्थः—हवे शिष्य पुछे छे, कोण ते निश्चय बावीस परीसह के जे काश्यप गोत्रना धणी श्रमण तपस्वी भगवंत श्री महावीर देवे जैन शासनने विषे साक्षात केवळ ज्ञाने करी स्वयमेव जाणीने परवेल छे के जे कोइ साधु गुरु समीपे सांभळी जाणी, परीचय करी, ते परीसहने जीती, गोचरीने विषे प्रवर्तंतो परीसहथी फरस्यो थको संयमथी हणाय (नासे) नहीं. ॥ २ ॥

भावार्थः—हवे गुरु कहेता हवा, एह निश्चे बावीस परीसह के जे काश्यप गोत्रना धणी श्रमण तपस्वी भगवंत श्री महावीर देवे जैन शासनने विषे साक्षात् केवळ ज्ञाने करी स्वयंमेव जाणीने परवेल ? के जे कोइ साधु गुरु समीपे सांभळी, जाणी, परीचय करी, ते परीसहने जीती, गोचरीने विषे प्रवर्तनो, परीसहथी फरस्यो थको, संयमथी हणाय (नासे) नहीं. ॥ ३ ॥

भावार्थः—हवे ते बावीस परीसहना नाम कहे छे १ वस्त्ररहित भोजन नहीं मळवाथी धणी पीडा सहन करवी ते क्षुधा परीसह २ क्षुधा पछी तृषा लागे अने अचेत पाणी जेवुं जोइए तेवुं न मळे ते तृषानो परीसह ३ ग्रीष्मकालमां ताप सहन करवी पडे, ते परीसह ४ ऊनाळानी ऋतुमां ताप सहन करवो पडे ते परीसह ५ चोमासामां डंश, मच्छरादिना डंक सहन करवा ते परीसह ६ वस्त्र फाटी गएलां जुनांथी निर्वाह करवो पडे ते परीसह ७ जोइतुं वस्तु नहीं मळवाथी दीलगीरी न थवा देवी ते परीसह ८ स्त्री संबंधी काम विकार प्रगट न थवा देवा ते परीसह ९ एक गामथी बीजे गाम पगे चाली जवुं ते परीसह १० मकाननी अंदर आखो दिवस एकज स्थानके बेसी रहेवुं ते परीसह ११ (स्थानक एटले मकाम) जेवुं जोइए तेवुं न मळेते परीसह १२ गामादिक फरसां कोइ अनार्य कष्ट करी गाळ देवा

दे ते सहन करवा ते परीसह ११ गोसादिक करता साधुने आवे ते ज्ञान समयो ते परीसह. १२ पारके घेर मागवुं ते परीसह. १५ मागयो छतां ज आपे तेथी संतोष राखवो ते परीसह, १६ शरीरने विषे रोगथी पीडा सहन करवी ते परीसह १७ रोगी छतां पातनी पथारी वश मुद्द रहेवुं ते परीसह १८ शरीरने विषे थतो पसीनादिक दुगंछा न करवी ते परीसह १९ कोइ माणस आवी पथारो फेम न कहे ते परीसह २० थोडी बुद्धि पोतानी छे तेथी कोइ माणस पुछे अने एकदम जवाब न देवाय एवी जाणवथी ज पुंछावबुं ते परीसह २१ घणा दीवस थया संयमादिक कर्या छे तो पण ज्ञान प्राप्त न थयुं तेथी पण पुंछावबुं नहि ते परीसह २२ देवलोक अथवा मर्कदेहे के केम अथवा (आ वचन) निश्चेकर साचा हशे के केम छेवटे तेनी जाणित करे तेम न थवा देवुं ते परीसह.

अर्थ—प० एवावीस परीसहना । प० प्रकारें वि० जूदी जूदी विचारणा । का०काश्यपगोत्रिमहावीरे । प०पवेद्या सं० ते विचारणाने भे० तुज प्रते । उ० कहिये आ० अनुक्रमे सु० सांभली मे० मूलने कहेता थका ॥ १ ॥

मूल—परीसहाणं पविभत्ती कासवेणं पवेइया ।
तं भे उदाहरिस्सामि आणुपुव्विं सुणेह मे १.

गाथा १ भावार्थ—सुधर्मस्वामी कहेता हवा हे जंबू! काश्यप गोत्री श्री महावीर स्वामीए जुदा जुदा बावीस परीसह पवेद्या छे ते विचारीने हुं तुजने कहीश, ते तु अनुक्रमे सांभळ! ॥ १ ॥

अर्थ—दि० भूपवापीडते दे० शरीरने विषे । त० तपस्वी भि० साधू था० संजमने विषे थकवंत ॥ न० न छेदे फाडादिकने पोते न० न छेदावे पर बनेरापासे । न० पचे नहि अनादिकने पोते न० पचावे नहि पर पासे ॥ २ ॥

मूल—१ दिगिञ्छापरिगए देहे तवस्सी भिक्खू थामवं ।
न छिन्दे न छिन्दावए न पए न पयावए २.

गाथा २ भावार्थः—सर्व परीसह मांही क्षुद्धानो परीसह क्षमतां दोहिलो छे तेथी प्रथम क्षुद्धानो परीसह कहे छे. संयमने विषे बलवंत एवा तपस्वी साधुनें, क्षुद्धानो परीसह व्यापे थके, पोते फलादीकने छेदे नही, बीजा पासे छेदावे नही, पोते अन्नादिक रंधे (रांधे) नही. अनेरा पासे रंधावे नही. ॥ २ ॥

अर्थ—का० कागनिजंघा ॥ प० तेहनो मध्य भाग जेहवो होय पातलो । सं० ते सरिषा सरिरनो अंग छे जेहना पातला ॥ अथवा का०कागजंघा वनस्पतिनी गांठ सं० ते सरिषा अंगदिचण प्रमूख जेहनां कि० सरिर दूबलो । ध० नसाजाले करि सं० व्याप्त छे ॥ मा० मर्यादानो नाण अ० आहार पा० पाणीनो । अ० नथी दिन म० मन जेहनो एहवो थको च० पर्यते ॥ १ ॥.

मूल—कालीपव्वङ्गसंकासे किसे धमणिसंतते।
मायन्ने असणपाणस्स अदीणमणसो चरे ३.

गाथा ३ भावार्थः—क्षुद्धाना परीसहथी कागनी जंघाना मध्य भागनी मारफक जे साधुनुं पातलुं ने निर्बल शरीर थइ गएल होय, अने फक्त नशा जाले करी वींटेल होय, एवुं शरीर थया छतां पण, आहार पाणीनी मर्यादानो जाण एवो साधु चित्त दीन (कायर) नहीं करतां संयम मार्गने विषे चालें. ॥ ३ ॥

अर्थ—हवे तृषानो परीसह कहे छे.त० तेवार पछे पु० फरसो पिडयो ॥ पि० तृषार । दो० अणाचारनिदूसंतानो करणहार ल० सजमनिलाज धरतो सं० संजती । सी० सचित पाणी तादाने न० सेवे नहि । वि० अचित्त पाणीने प० एष्णा प्रत्ये च० प्रवर्ते ॥ ४ ॥

मूल—२ तउ पुट्ठो पिवासाए दोगुञ्छालज्जसंजए।

सोउदगं न सेविज्जा वियडस्सेसणं चरे ४.

गाथा ४ भावार्थ—हवे बीजो परिषह कहे छे संयमनी रक्षाए करी सहित अने अनाचारनो वर्जनहार एवो साधु मूलना परिसह जीत्यो थको, सचेत पाणी नहीं भोगवतो, अचेत पाणीनी एषणा (शोधन) ने विषे प्रवर्ते. ॥ ३ ॥

अर्थ—ति० तेहणो छे लेवानो आचारवन जिहां एहवा प०पंथने विषे आ० आकुल व्याकुल गाढले शरीर जेहनो मुनि० अतिशे तृषावंत प०अतिशे मु०मुझाणो छे मु० मुख जेहनो। दी० दिनपणा रहित पणे ॥ तै० ते मूलना ति० सहे प० परीसहने ॥ ४ ॥

मूल—छिन्नावाएसु पन्थेसु आउरे सुपिवासिए।
परिसुक्खमुहे दीणे तं तितिक्खे परीसहं ५.

गाथा ५ भावार्थ—मारगमां अथवा पंथने विषे कोइ मनुष्य आवतो नथी, अने जेनुं मुख अत्यंत शोषाई जवाथी तृषाए करी अत्यंत आकुल व्याकुल थइरह्यो होय, तेवण साधु सचेत पाणी नहीं भोगवतो, दीन (कायर) पणा रहीत थको प्रधानो परीसह सहे. ॥ ५ ॥

अर्थ—हवे शीतनो परिसह। च०गामादिकने विषे प्रवर्तता साधूने.ति० आदिकनां आरंभी निवर्त्यो ते मु० मुनो शरीर छे जेहनो एहवा साधूने सी० शीत लाड फु० फरसेथाये प० एकता प्रकारे ॥ ना० सदाय दिनानि वेत्ता अनि क्षीम उष्णोपधीने। मु० साधू लाहना भय माटे सदोष थानके न ग० जाय सो० सोभतीने ति० तिननिशिनासय ॥ ६ ॥

मूल—३ चरन्तं विरयं लूहं सीयं फुसइ एगया।
नाइवेलं मुणी गच्छे सोच्चाणं जिनसासणं ६.

गाथा ६ भावार्थः—हवे त्रीजो दाहनो परीसह कहे छे. जेओ अग्निना आरंभथी निवर्त्या ते अग्नि (सरस) भोजन तथा तैल प्रमुख अभ्यंगनादिकना त्यागथी जेओनुं शरीर लुखुं (कसरहीत) थइ गएल होय एवा तपश्री मुनीने ग्रामानुं ग्राम पीचरतां, एकदा माहाशीत काळना समयमां प्रतिमादीवहेतां कायोत्सर्गमां रहेवाने शीतताप शरीरने विषे स्पर्शे, ते पारे एम विचारे ते जीव अने शरीर भीन्न छे (जुदा छे) एम जीनेंद्रनी शीखामण सांभळीने सज्झायादीकनी वेळा ओलंघी दाहना भयथी दोष सहीत स्थानकने विषे मुनी न जाय. ॥ ६ ॥

अर्थ—न० अ० नथि मे, माहरे ताहना नि० निवारण घरादिक। छ० वस्त्रादिक न० नथी। अहंतु० ते माटे अ० अग्नि से० सेवुं। इ० एम भि० साधू न० न चिंतवे संजती मूनिराज ॥ ७ ॥

मूलः—न मे निवारं अत्थि वत्तिाणं न विज्जई।
अहं तु अग्गिं सेवामि इइ भिक्खू न चिन्तए ७.

गाथा ७ भावार्थः—माहरे ताह निवारणने वास्ते वस्त्र तथा घरादीक नथी तेथी हुं अग्निने सेवुं एम साधु न चींतवे.।७॥

अर्थ—हवे तापनो परीसह कहे छे उ० उन्हि भूम्यादिकने प० अतिशो०या०तापे करि प० अभ्यंतर बाह्यपथि उपनोदाघ तेणे करि त० पिडयो। वि० ग्रीष्मकालनां वा० सरदकालनां प० तापेतावडे करिने पिडयो। सा० साता नो० नवांछे जे किंश्रेरे शितलथासे ॥ ८ ॥

मूलः—उ उसिणंपरियावेणं परिदाहेण तज्जिए।
घिंसु वा परियावेणं सायं नो परिदेवए ८.

गाथा ८ भावार्थः—हवे चोथो तापनो परीसह कहे छे. ग्रीष्म रतु (जेठ असाढ) ने सरद रतु (आसो कार्तिक)

ને વિષે, અનુપાખ્યાનકના અર્થને જાણે નહીં, બાકીની પરસેવી ને જેવે નહી અને અત્યંત મૂઢપણા વાળે જીવતો મરો, અને મનાર્થ કુશી પણ જીવતના ગણે પણ મુખી કુખે નહીં. ॥ ૬ ॥

અર્થ॰ ૬૦ ઉદ્ધત વાળે નહિ । ૦૦ અત્યંત વિદ્વાનો ને૦ મર્યાદાવાળા સાધુ । ત્રિ૦ બાકીનો ત્રી૦ ત્રિષે બાકીને । ના૦ સાંભળીને જાણીને ન જીવે ત૦ બાકીના પાપી વિદ્વાનોને નહિ ન૦ નથી ૭૦ પોતાના આત્માને ॥ ૦, ॥

मूलः—उच्चावित्तो गेहाणी सिणाणं नो सि पत्थए ।
गायं नो परिसिंचेज्जा न वीएज्जा य अप्पयं ७.

ભાષા ૧ બાકીનો—અર્થ ૬૦ વાળે નહી જીવતો મરો અર્થવાળા સાધુ, બાકીની આપેલા નહી ઇચ્છવો, પાણીથી શરીરને સીંચે નહી, અને વિંજણાદિકે કરી પોતાને વિષે વાયુ નાખે નહી, ॥ ૭ ॥

અર્થ॰ -પુ૦ પુરાણો વિદ્વો ત૦ નથી દે૦ દેવ ગતકારિકે । ના૦ પરાણો તે અજ્ઞાનકરના નારિનો ॥ ૬, પણ બાકીના સાધુ નહેતા । ત૦ જોતા મૂકી ના । ના૦ કાળી ત્રિષ ને૦ સંસારનો ત્રી૦ નાશકરને વિષે પુ૦ પુર કાળીને બા૦ કુળે વિષે ત૦ બાકીના કાપુરુષો ॥ ૨૦ ॥

मूलः—पुट्ठो य दंसमसएहिं समरेव महामुणी ।
नागो संगामसीसे वा सूरो अभिहणे परं ७.

ભાષા ૧૦ બાકીનો—કુને વધ અત્યંતનો પરીસહ કરે છે. જેવા શૂરો હાથી સંગ્રામનો મસ્તકને વિષે બાકીના સબૂને હણીને જીતે, તેમ બોલ અત્યંતાદિકના પરીસહાદિકે જીતવો નહીં, પરંતુ તે અજ્ઞાનકરના નારિનો જેવો સાધુ રહેતાબાને રહે ॥ ૧૦ ॥

અર્થ॰— બાકીના પાપી પણાંદ દંસમશકાદિકે ત૦ ચોર નહિ જીવતાં ન જાવે ॥ ત૦ તેને નથી પણ ત૦ ન કરે

द्वेष उ० उदास भावे रहे शरिर उपरि मोहनागे । न० हणे नहि पा० प्राणी जीवने । भु० पाता थकां ॥ म० मांस लो०. लोहिने ॥ ११ ॥

मूलः—न संतसे न वारेज्जा मणं पि न पओसए।
उवेह न हणे पाणे भुञ्जन्ते मंससोणियं ११.

गाथा ११ भावार्थः—उदासीनपणाना भावे रहीत पोतानां शरीर उपर मोह नहीं आणतां, रुधीर ने मांस खाता थकां डांस मच्छरादिकने चटको मारतां वारे नही, तेम त्रास नही पमाडतां मने करीने पण मुनी तेना उपर द्वेष न करे. ॥११॥

अर्थः—हवे छठो अचेल परीसह कहे छे । प० अतिहि जूने व० वस्त्रे करिहो० होइसहूं ति० इम अ० वस्त्र रहित खेद मानेा अ० अथवा स० वस्त्र सहित हो० होइसुफाटा देपि नवा आपसे हर्ष मानेे । इ० ए बेहु माहि एकेयानुं भि० साधू न० न चिंतवे ॥ १२ ॥

मूलः—६ परिजुण्णेहि वत्थेहिं होक्खामि त्ति अचेलए।
अदुवा सचेलए होक्खं इइ भिक्खू न चिन्तए १२.

गाथा १२ भावार्थः—हवे अचेलनो परीसह कहे छे. अति जुनां पात्रे करी हुं वस्त्र रहीत थइश, (ते वारे शुं करीश) एम खेदनुं पामवुं, अथवा ए मारां जीर्ण तथा फाटेलां वस्त्र जोइ कोइ दातार नवां वस्त्र आपशे, एम हर्षनुं पामवुं, ए बने प्रकारनुं चींतवन साधु न करे. ॥ १२ ॥

अर्थः— हवे ए० एकदा प्रस्तावे साधु । अ० जूना वस्त्र तथा वस्त्र रहित पणे हो० होय । स० आ० वली नवा वस्त्र सहित पणे ए० एकदा प्रस्तावे होय । ए० ए साधुनो ध० धर्म हि० हितकारि न० जाणीने । ना० ज्ञानवंतनो० वेदन पामे ॥ १३ ॥

मूलः—एगयाऽचेलए होइ सचेले आवि एगया।
एयं धम्मं हियं नच्चा नाणी नो परिदेवए १३.

गाथा १३ भावार्थः—कोइ वखत जीव कर्मोनी अवस्थाए वस्त्र रहित होय, अने कोइ वखत सचीत्त अचीत्ती अवस्थाए वस्त्रसहित पण होय, तेथी वस्त्र सहित, रहित, ए बेहु प्रकारनो धर्म हीतकारी जाणी ज्ञानवंत मुनी शीतकालादिकने विषे हुं शु करीश? एम खेद न पामे. ॥ १३ ॥

अर्थः—हवे सातमो अरतिनो परीसह कहे छे। गा० ग्रामानुग्राम प्रत्ये वि० विचरता साधुने। अ० अणगारने अ० परिग्रह रहितने अ० संजमने विषे अरति अ० उपजे प्रवेश करे। त० ते अरतिना ति० सहे प० परीसहने ॥ १४ ॥

मूलः—उ गामाणुगामं रीयन्तं अणगारं अकिंचणं।
अरई अणुप्पवेसेज्जा तं तितिक्खे परीसहं १४.

गाथा १४ भावार्थः—हवे अरतिनो परीषह कहे छे. परिग्रहथी रहीत एवा मुनीने ग्रामानुग्राम विचरता संजमने विषे अरति उपजे ते अरति परीसहने सहे. ॥ १४ ॥

अर्थः—अ० अरतिने वि० परहि कि० करीने वि० आश्रयवि निवर्त्यो ते आ० आत्मानि रक्षानो करणहार। ध० धर्मने विषे। आ० समस्त पणे रति पामे अथवा धम्मारामे० धर्म रूप आरामने विषे रहे कहेवाने विषे। नि० गयो छे आरंभ जेथी एहवा धर्म आरामने विषे। उ० उपशांत थको मु० साधु च० प्रत्ये ॥ १५ ॥

मूलः—अरइं पिट्ठओ किच्चा विरए आयरक्खिए।

धम्मारामे निरारम्भे उवसन्ते मुणी चरे १५.

गाथा १५ भावार्थः—जेनो आत्मा आश्रवथी निवर्त्यो ने जेनाथी आरंभ गयो छे अने छकायनु रक्षण करनार एवो साधु आत्मिने दुर करीने धर्म रुपीआ आराम (बाग) ने विषे उपशांत थको प्रवर्ते. ॥ १५ ॥

अर्थः—हवे आठमो स्त्रीनो परीसह कहे छे स०कर्म बंधनो संजोग तथा आसक्त थावानो हेतु । ए०ए स्त्री म० मनुष्यनि जा० जे लोकने विषे इ० स्त्रीओ । ज० जे साधुने ए० ए स्त्रीओ प० परिज्ञाए एहवी जाणी प्रवर्त्ते छे पच्चखाण करि पछी प्रवर्ते छे सु० गुरुकीयुं आचर्यु त० तेणे साधुए सा० चारित्र ॥ १६ ॥

मूलः—ए सङ्गो एस मणुस्साणं जाओ लोगम्मि इत्थिओ ।
जस्स एया परिन्नाया सुकडं तस्स सामण्णं १६.

गाथा १६ भावार्थः—हवे स्त्रीनो परीसह कहे छे. मनुष्य लोकादिकने विषे जे स्त्रीयो थाय छे, ते सर्व प्रकारे कर्मबंधनो संयोग तथा आश्रव (लुच्य) थवानो हेतु जाणीने पच्चखाण करवे करी छांडे, ते साधुए सुंदु चारित्र आचर्युं. ॥ १६ ॥

अर्थः—ए०ए पूर्वोक्त स्त्रीना स्वरूपने जा० ग्रहिने मे० बुधिवंत । पं० संसार गांहिसुंची रहिवाने कादव सरिषी इ० स्त्रीओ । नो० ता० ते संयाते प्रवर्तिने नो० वि० संजम जीवतव्यने हणे नहि । च० आचरे धर्मानुष्ठानने अ० आत्मानो ग० गवेषण हार तारणहार ॥ १७ ॥

मूलः—एयमादाय मेहावी पङ्कभूयाओ इत्थिओ ।
नो ताहिं विणिहन्निज्जा चरेज्ज अत्तगवेसए १७.

गाथा १७ भावार्थः—मुक्ति गामी पुरुषने कादवनी परे खुंची रहेवानुं कारण ए स्त्री छे एम स्त्रीना स्वरूपने सुनिश्चित

आत्मने चारित्रना आत्मानं संयमयोगं भावयन् होय ते साधु [illegible] होय (अथवा) ते आचार. ॥ १० ॥

अर्थः—हवे चारित्रनो नवमो परीसह कहे छे ॥ ए० एकलोम रागद्वेष रहित च० विचरे ला० निर्दोष आहारे करिने । ला० निर्वाहनो करणहार ॥ अ० जीतिने प० परीसहने । गा० गामने विषे वा० अथवा न० नगरने विषे वा० अथवा । नि० निगम ॥ नि० यात्रीवान' धाम निगमने विषे वा० अथवा रा० राजधानीने विषे ॥ १८ ॥

मूलः—ए एग एग चरे लाढे अभिभूय परीसहे ।
गामे वा नगरे वावि निगमे वा रायहाणिए १८.

गाथा १८ भावार्थः—हवे आलवाने परिसह कहेछे, निर्दोष आहारे करी शरीरनो निरवाहनो करणहार एवो साधु परीसहने जीतीने, एकको राग द्वेष रहीत गाम, नगर, निगम (यात्रीयाना धाम होय ते) ने राजधानी ने विषे विचरे ॥ १८ ॥

अर्थः—अ० गृहस्थादिकनि नेसरा रहित । च० विचरे भि० साधु । ने० न करे प० परिग्रहने । अ० आसक्तपणा रहित थको । गि० गृह संबंधे ॥ अ० घर रहित प० सर्वथा प्रकारे विचरे संयमने विषे ॥ १९ ॥

मूलः—असमाणो चरे भिक्खू नेव कुज्जा परिग्गहं ।
असंसत्तो गिहत्थेहिं अणिकेओ परिव्वए १९.

गाथा १९ भावार्थः—गृहस्थादिकना निवास रहित तथा एव परिग्रहनो आत्यन्त (सुरथ) नहीं थतां गृहस्थ संसर्गे परिचय अलगपणे, घर रहित, साधु, मन करणी विहार करतो संयमने विषे विचरे. ॥ १९ ॥

अर्थः—हवे १० मो निसीहिया परीसह कहे छे ॥ सु० समसांनने विषे सु० या० अथवा सुना परने विषे । रु० व० अथवा रुपना मूलने विषे ए० रागद्वेष रहित अ० कुचेष्टा रहित नि० वेसे स्वाध्यायादिकने विषे अर्थे । न० त्रासवे नहि य० वलि पदपूरणे । प० परजीवने ॥२०॥

मूलः—१० सुसाणे सुन्नगारे वा रुक्खमूले व एगओ
अकुक्कुओ निसीएज्जा न य वित्तासए परं १०.

गाथा २० भावार्थः—हवे निसीहिया परीसह कहीये. स्मशान, सुनांपर, अथवा शून्य मुलने विषे पर जीवने त्रास नहीं पमाडतां कुचेष्टाने राग द्वेष रहित पणे स्वाध्यायादिकने विषे वेसे. ॥ २० ॥

अर्थः—त० तिहा से० ते सर्प । अ० वेट थका । उ० उपसर्ग उपजे अ० तेहने धीरे सहे ॥ न० संक्षोभ भी० बीहतो थको ॥ न० नजाय । उ० तिहाथी उठिने । अ० अनेरा आ० अकल्पनिक आसन प्रत्ये ॥ २१ ॥

मूलः—तत्थ से अच्चमाणस्स उवसग्गाऽभिधारए ।
सङ्काणीओ न गच्छेज्जा उट्ठित्ता अन्नमासणं २१.

गाथा २१ भावार्थः—तिहां स्मशानादिकने विषे रहेता साधुने उपसर्ग उपजे तो ए मुजने शुं करशे एम शंकी निश्चळ चित्त करी रहे, पण ते उपसर्गथी डरी तिहाथी उठी अनेरे अकल्पनीक स्थानके न जाय. ॥ २१ ॥

अर्थः— हवे इग्यारमो सेज्या परीसह कहे छे । उ० उंचा प्रधान तड़ताप निवारक एहवा । अ० निचा ताड़ ताप वाय एहवा । से० एहवे सेज्या थानके करी ॥ त० तपस्वी भि० साधु । था० संजमने विषे वलवंत । ना० ऽ० स्वाध्यायादिकनि मर्यादाने न० वि० उलंघे नहि पा० पापहेतु प्रमादे करि० मर्यादाने उलंघे ॥ २२ ॥

मूलः—२१ उच्चावयाहिं सेज्जाहिं तवस्सी भिक्खू थामवं
नातिवेलं विहन्नेज्जा पावदिट्ठी विहन्नइ २१.

गाथा २१ भावार्थः—हवे सेज्जा परीसह कहीये. जाड तथा निवासी सके एवा स्थानमे जाड तथा निवासी न सके तेवा निवा सेज्जा स्थानकने विषे, शीतादीक सहेवाने समर्थ, इर्षे निवासादीके करी रहित, संयम मे विषे बळवंत एवा तपस्वी साधु स्थान्यादीकनी मर्यादा ओळंघे नही, अने जे साधु पाप दृष्टीने प्रमादी होय ते स्थान्यादिकनी मर्यादा ओळंघे छे. ॥ २१ ॥

अर्थः—प० शीतादिक रहित ॥ ब० उच्चप्रपने छ० पामिने । क० शोभनिक अ० अथवा । पा० अशोभनिक कि० किंवा दे० मुनने । ए० एक राते सुखदुख क० करशे ॥ ए० एम विचारी त० तिहां विषय सेवा पामवाने विषे । अहि० सुखदुख सहियासे ॥ २१ ॥

मूलः—पइरिक्कं वसयं लध्धुं कल्लाणं अदुव पावयं ।
किमेगरायं करिस्सन्ति एवं तत्थऽहियासए २२.

गाथा २२ भावार्थः—शोभनीक अथवा अशोभनीक शीतादीक रहीत स्थानक पामीने, एक रात्रीए अमे सुख दुःख शुं करशे, एम जाणीने विषेश (एरके बराबर नही मूकी स्थानकने विषे सुख दुःखने समभावे खेमवे. ॥ २२ ॥

अर्थः—हवे वादसो अक्रोस परीसह कहे छे अ०, अक्रोसे वचने करी प० गृहस्थादिक भि० साधुने ॥ न० ते० ते गृहस्थादिक प्रते । प० न करे कोप । स० सरिखो हो० थाए वा० वाउमूर्ख । त० ते माटे भि० साधु न० न करे कोप ॥ २४ ॥

मूलः—२३ अक्कोसेज्जा परे भिक्खुं न तेसिं पडिसंजले।
सरिसो होइ बालाणं तम्हा भिक्खू न संजले २४.

गाथा २४ भावार्थः—इये अक्रोशनो परीसह कहेछे. कोइ अनार्य दुष्ट वचने करी साधुने आक्रोशे (मारे) तो तेना उपर क्रोध न करे जो तेना उपर क्रोध करे तो साधु अने बाळ (अज्ञानी) ए बंने सरीखा थाय. ॥ २४ ॥

अर्थः—से० सांभळीने प० अलंकारे। फ० कठोर भा० भाषाने। दा० आकरो रुद्र। गां० इंद्रियना समोहने कं० कांटा सरिखा। तु० अण बोल्यो थको कठोर भाषाने उ० लेखा मांहि न गणे। नता० ते बोलणहार प्रते म० द्वेष फ० न करे ॥ २५ ॥

मूलः—सोच्चाणं फरुसा भासा दारुणा गामकण्टगा।
तुसिणीओ उवेहेज्जा न ताओ मणसीकरे २५.

गाथा २५ भावार्थः—इंद्रीयना समुहने कांटा सरीखी आकरी कठोर भाषाने सांभळी ने कठोर भाषाने लेखामां गणे नहीं, अने बोलनार उपर द्वेष नही करतां मौन्य पणुं (बोलवुं नहीं) पणुं धारण करे. ॥ २५ ॥

अर्थः—हवे तेरमो वधनो परीसह कहे छे ह० हण्यो थको न० कोप न करे भि० साधु। म० मने पि० पण न० द्वेष न करे। ति० क्षमानं प० उत्कृष्टो। न० जाणीने। भि० साधुनो ध० धर्मने वि० विशेषे चिं० चिंतवे ॥ २६ ॥

मूलः—२३हओ न संजले भिक्खू मणं पि न पओसए।
तितिक्खं परमं नच्चा भिक्खू धम्मं विचिन्तए २६.

गाथा २५ भावार्थः—(इवे अचेलो परीसह कहे छे) साधुने कोइ इवे तो मने फरी एम तेवा प्रकार का ... न करे, अने रुडहो साधुनो धर्म अत्यंते पीछाने. ॥ २५ ॥

अर्थः—स० तहेवी सं० संजती दे० देखीने एहवा साधुने ह० हवे फो० कोइक अनार्य । न० नथी जी० जेनो जा० निश्चय । ति० एम ॥ ए० एम एणी परे चि० विचारे से० साधु ॥ २७ ॥

मूलः—समणं संजयं दन्तं हणेज्जा कोइ कत्थई ।
नत्थि जीवस्स नासो त्ति एवं चिन्तेज्ज संजए २७.

गाथा २७ भावार्थः—इंद्रीयोने दमन करनार एवा तथा संयमीने मारे मनादिकने विषे कोइक अनार्य हणे, तेवारे एम जाणे के आत्म द्रव्यनो नाश नथी एम साधु विचारे. ॥ २७ ॥

अर्थः—हवे चउदमो आचयानो परीसह कहे छे दु० दीक्षितो स० निश्चे भो० आमंत्रण । अ० अणगारने भि० साधुने सं० सर्व कल्पनिक वस्तु । ले० ते साधुने जा० जाण्युं हो० छेज न० नथी कि० कांइ अ० अणजाणतुं ॥२८॥

मूलः—एक्कओ खलु जो निच्चं अणगारस्स भिक्खुणो ।
सव्वं से जाइयं होइ नत्थि किंचि अजाइयं २८.

गाथा २८ भावार्थः—(इवे आचयाने परीसह कहे छे)हे शिष्य! अहरात्री वेषधारीज कोइ एवा तेनो प्रकार वर्त्तो शिखाव, तेनो सर्व इंद्रीय वश्युं ते शिष्य होवाथी एम पण कोइ अजयाणी न होय ॥२८॥

अर्थः भो० शिष्यनो नि० नि० चोक्कस करता साधुने । अ० एक भो० मुंडे तेणे अकल्प प्रकार रीते से०

श्रेयगवेा मुजने अ० गृहस्थावास ति० ए करणी भणी । इ० इम साधु न० न चिंतवे ॥ २९ ॥

मूलः—गोयरग्गपविट्ठस्स पाणी नो सुप्पसारए ।
सेओ अगारवासु त्ति इइ भिक्खू न चिन्तए २९.

गाथा २९ भावार्थ—गौचरीने विषे प्रवेश करतां साधु छजाए करी सुखे हाथ लांबो न करीशके, ते थकी (भिक्षाभूमीथी) श्रेय मुजने ग्रहस्थावासपणुं एम साधु न चिंतवे. ॥ २९ ॥

अर्थः—हवे पनरमो अछाभ परीसह कहे छे ॥ प० गृहस्थना घरने विषे घा० आहारने । ए० गवेषे भो० भोजन प० निपने छते उ० उघे पि० आहार वा० अथवा अ० अणउघे छते । ना० तपोवे नहि जीवने हर्ष विखवाद न करे पं० पंडित ॥ ३० ॥

मूलः—१५परेसु घासमेसेज्जा भोयणे परिणिट्ठिए ।
लद्धे पिण्डे अलद्धे वा नाणुतप्पेज्ज पण्डिए ३०.

गाथा ३० भावार्थ—(हवे अछाभ परीसह कहे छे) ग्रहस्थना घरने विषे आहारने गवेषे (शोधे) ते थारे भोजन निपने छते, आहार मळे अथवा न मळे तो पंडीत साधु हर्ष विखवाद तजी पोताना जीवने तपावे नहीं. ॥ ३० ॥

अर्थः—अ० आज ए० कदाचित अ० हुं न० नथी पाम्यो । अ० संभावनाए । ला० आहारनो लाभ सु० आगामि काले सि० होय जो० जेसाधु । ए० एणीपरे प० आलोचि दिन मन रहित । अ० अछाभ परीसह ति० ते साधुने न० न पिढे ॥ ३१ ॥

मूलः—अज्जेवाहं न लब्भामि अवि लाभो सुए सिया ।

जो एवं पडिसंचिक्खे अलाऊ तन तज्जा

गाथा ३१ आचार्य—कदाचित् आहारमां लाभ हुं आज नथी पाम्यो तो आगळ काम थशे, एम आलोची साधु दीन
(थाय) मन रहित होय नहिने अलाभ परीसह न वेदे. ॥ ३१ ॥

अर्थः—हवे सोळमो रोगनो परीसह कहे छे ॥ न० जाणीने उ० उपन्यो दु० रोगादिक वे० वेदनाए करि दु० दुवे
विहणो थको । अ० दिनपणा रहित था० थाये आत्माने प० प्रशस्त ज्ञान विषे ॥ पु० रोग फरस्यो थको त० तिहां
प्रज्ञाने विषे आत्माने थाये छते । अ० अहियासे एम ॥ ३२ ॥

मूलः—१६नच्चा उप्पइयं दुक्खं वेयणाए दुहट्टिए ।
अदीणो थावए पन्नं पुट्ठो तत्थ ऽहियासए ३२.

गाथा ३२ आचार्य—हवे रोगनो परीसह कहे छे. रोगादीक उपनो जाणीने, आत्मा प्रज्ञावडे करीकरी वेदनाये
पीडयो थको, पोतानी प्रज्ञा (बुद्धी) थी अदीन (अदुर्मन) पणावे आत्माने स्थापी रोगनो परीसह सहेवो. ॥ ३२ ॥

अर्थः—तेणि० पडिगणो कराववो न० अनुमोदे नहि तो करे करावे किहांथी । सं० समाधि सहित रहे अ० चारित्र
आत्मानि संयमक ॥ ए० एणी विधे मु० जे मणी त० ते साधुने सा० चारित्र पाळतां सोहेलो अ० जे पडिगणु वेदु न०
न करे पोते ॥ न० परगृहस्थ पासे न करावे ॥ ३३ ॥

मूलः—तेगिच्छं नाभिनन्देज्जा संचिक्खऽत्तगवेसए ।
एवं खु तस्स सामण्णं जं न कुज्जा न कारवे ३३.

गाथा ॥ ३३ ॥ भावार्थः—बाहरे असाता वेदनी कर्म छे तेथी आ रोग उत्पन्न थयेल छे, एम जाणी रोग टाळवाने अर्थे पोते वैदुं करे नहीं, अनेरा द्वारा पासे वैदुं करावे नहीं, तेम वैदुं करतां ने भलुं पण न जाणे, अने चारित्र आत्मानेविषे समाधीने विषे प्रवर्ते (आ वैदुं नहीं करावावारुप आचार जीन कल्पी तथा अभिग्रहधारी आश्री छे.) ॥ ३३ ॥

अर्थः—हवे सतरमो त्रणा फरसनो परीसह कहे छे ॥ अ० अल्प वस्त्रना धणीने तथा नग्न साधुने । द्व० दुष वर्तिने । सं० संजतिने त० तपस्वीने त० तृणाने विषे सुता साधुने ॥ द्व० होयगा० शरिरनी नि० विराधना पिडा ॥३४॥

मूलः—१७अचेलगस्स लूहस्स संजयस्स तवस्सिणो ।
तणेसु सयमाणस्स हुज्जा गायविराहणा ३४.

गाथा ॥३४॥ भावार्थः—(हवे त्रणा फरसनो परीसह कहे छे) लुख वर्ति, संयमवंतने तपश्री एवा अल्प वस्त्र धारी तथा वस्त्र रहीत साधुने त्रणाने विषे सुतां वेगतां शरिरने विषे पीडा होय. ॥ ३४ ॥

अर्थः—अ० तावडाने नि० पडये करी । अ० घणी ह० होय वे० पीडया ॥ ए० एणीपरे न० जाणीने न० न भोगवे तं० वस्त्रने मर्यादाथी अधिक तथा अकल्पनिक त० तृणे करि त० पडिया थका साधुने ॥ ३५ ॥

मूलः—आयवस्स निवाएण अउला हवइ वेयणा ।
एवं नच्चा न सेवन्ति तन्तुजं तणतज्जिया ३५.

गाथाः—॥३५॥ भावार्थ—तडकाने पडवे करी त्रणाना स्पर्शथी वेदना प्रगट थएल जाणी ते वेदनाए पीडयो थको वस्त्र न भोगवे. (आ आचार जीन कल्पी आश्री समजवो.) ॥ ३५ ॥

अर्थः—(हवे अढारमो जल मेलनो परीसह कहेछे) कि लिं०वाळो मेले करि गा० सरिरे तोहि पण मे० मर्यादायेत

मूलः—१उक्किलिअगाए मेहावी पक्केण व रएण वा ।
घिंसु वा परितावेण सायं नो परिदेवए ३६.

गाथा ॥३६॥ भावार्थः—हवे मेलनो परीसह कहे छे. शरीरमां मेलने करी, शरीरने मेले करी, अथवा परसेवाए लाग-वाथी, मेले करी शरीर स्वात थवाए होय, अने ग्रीष्म ऋतुना तथा शरद ऋतुना ताप करी पीडातो थको मर्यादावंत सा। पार्थीव करी ग्लान करवादए सुखपणा ने इच्छे ॥ ३६ ॥

अर्थः—वे० वेदनाएहे । नि० कर्म नीर्जरा वे० थाउमो थको ॥ आ० आर्य धर्म चारित्र धर्मने अ० प्रधान जाणीने । आ० सिद्धां तमे । सा० शरिरनो । भे० विनाश होय एटले आमंत्रिय मुनि ।इ०एम अ० मेलने का० कायए धा० राखे॥३७॥

मूलः—वेएज्ज निज्जरापेही आरियं धम्मणुत्तरं ।
जाव सरीरभेओ त्ति जल्लं कायेण धारए ३७.

गाथा ३० भावार्थः—उत्तम चारित्र धर्म ग्रहण करीने जाणी, कर्म क्षय करवाने इच्छतो थको, ज्यां सुधी शरीरनो विनाश होय त्यां सुधी कायाने विषे मेल धारण करी परीसह खमे. ॥ ३० ॥

अर्थः - हवे औगणीसमो सत्कार पुरस्कारनो परीसह कहे छे । अ० नमस्कारनु करवु अ० उठीने उभु थवु । सा० सत्कारिक कु० करे नि० आमंत्रण आहारादिकनो जे० जे कोइ रमति अथवा परमाने । ता० ते अमिश वस्त्रादिकने

प० अंगीकार करे छे। न० ते० ने अंगीकारना करणहारने। न० पी० प्रसंशे नहि जे धन्य ए मानसनमान पामे छे मु० साधु होय ते प्रसंशे नहि साधु केहवो होय ॥ ३८ ॥

मूलः—१ए॰अन्निवायणमव्वुहणं सामी कुज्ज निमन्तणं।
जे ताइं पडिसेवन्ति न तेसिं पीहए मुणी ३८.

गाथा ३८ भावार्थ.—(हवे सरकार पुरस्कार परीसह कहे छे) कोइ अन्यमतीने तथा पोताना गच्छनाने राजा प्रमुख, नमस्कार करे उठी उभा थाय, आहारादीकनी निमंत्रणा करता, अभीवंदनादिए अंगीकार करता, एवी सरकार सन्मानदर मोटी रधी जोइने ए परभावंथी प्रमुख धन्य छे एम साधु प्रसंशा करे नही. ॥ ३८ ॥

अर्थः—अ० पातला कषाय छे जेहने। अ० अल्प छे इच्छावांछा जेहनो अ० अज्ञात कुले आहारना। ए० गवेषणहार। अ० लोलपीपणा रहित। र० रसादिकने विषे। न० अ० गृध न होय एहवा साधु होय ते। ना० तेपे नहि सत्कारादिक दिधेअणदिधे छते प० प्रज्ञावंत ॥ ३९ ॥

मूलः—अणुकसाई अप्पिच्छे अन्नाएसी अलोलुए।
रसेसु नाणुगिज्झेज्जा नाणुतप्पेज्ज पन्नवं ३ए.

गाथा ३९ भावार्थः—जे साधुने कषाय तथा लोभ थोडो होय, वस्त्रादिकनी वांछा अल्प होय, अज्ञातकुले (पोतानी ज्ञातीनोज देवो एम नही एवी रीते) आहारनो गवेषण (शोधन) हार होय, मधुरादिक पांच रसना सरस आहारने विषे लुब्धपणारहित होय, एवो प्रज्ञावंत साधु सत्कारादीक देवाथी तथा नही देवाथी तपे नही. ॥ ३९ ॥

अर्थः—हवे बीसमो प्रज्ञा परीसह कहे छे ॥ से० हवे साधु एम जाणे नू० निश्चे म० मे पु० पूर्व भवने विषे । क० शुभ कर्तव्य विनयादि । ना० ज्ञान पामीए एहनुं फ० फल छे जेहनुं क० कीधा एहवा कर्तव्य जे० जेणे शुभ कर्तव्ये करी । अं० हुं नर मनुष्य अ० ज्ञानने सनमूख थको जाणी छे ॥ पु० प्रश्नादिक पूछ्यो थको के० कोइ प्रश्ने पूछनार क० कोइ स्थानकने विषे एम जाणी प्रज्ञानो गर्व न करे ॥३०॥

मूलः—२० से नूणं मए पुव्वं कम्माऽणाणफला कडा ।
जेणाहं नाभिजाणामि पुट्ठो केणइ कण्हुई ॥ ४० ॥

गाथा ४० भावार्थः—(हवे प्रज्ञा परीसह कहे छे) ज्ञानथी प्रसंशा तथा विनयादीक एवा ज्ञान पामवानां शुभ कृत्य निश्चे में पूर्व जन्मान्तरे करेल हशे तेथी करी हुं नर मनुष्यपणे करी, कोइक स्थानक विषे कोइ मनुष्यादीके पूछ्यां थकां जीवादिक पदार्थ जाणुं छुं, एम प्रज्ञावंत साधु जाणे ॥ ४० ॥

अर्थः—वली एम जाणी गर्व न करे ते कहे छे ॥ अ० हवे जो गर्व करीशतो । प० पछे आगले भवे उ० उदय आवशे क० कर्म जेहनां अ० अज्ञान छे जेहनां फल क० कीधा एहवा पोताना । ए० एणीपरे अ० स्वच्छ करे अ० आत्माने । न० जाणीने क० कर्म कर्तव्यनां फल ॥ ४१ ॥

मूलः—अह पच्छा उदिज्जन्ति कम्माऽणाणफला कडा ।
एवमस्सासि अप्पाणं नच्चा कम्मविवागयं ॥ ४१ ॥

गाथा ४१ भावार्थः—हवे जो प्रज्ञा पामीने गर्व करीश तो, पोतानां कृत्यनुं अज्ञान रूप फल एवां कर्म

आगले जन्मांतरे उदय आवशे एम शुभाशुभ कर्मनां फल जाणीने प्रज्ञावंत साधु पोताना आत्माने स्वस्थ करी प्रज्ञा (ज्ञान) नो गर्व न करे ॥ ४१ ॥

अर्थः—हवे एकवीसमो अज्ञान परीसह कहे छे ॥ नि० निर्थक छते । वि० निवर्त्यो हुं मे० मैथून थकी मु० रुडीपरे सं० इंद्रिने संवरवे करी जो० जो हुं स० प्रत्यक्ष फट प्रगट जीवादिक पदार्थने ना० न जाणुं ध० वस्तुनो स्वभाव । क० मोक्षनो हेतु । पा० नरकनो हेतु ॥ ४२ ॥

मूलः—२१ निरट्ठगम्मि विरओ मेहुणाओ सुसंवुडो ।
जो सक्खं नाभिजाणामि धम्मं कल्लाणपावगं ॥ ४२ ॥

गाथा ४२ भावार्थः—हवे अज्ञाननो परीसह कहे छे. धर्म वस्तुनो स्वभाव, मोक्षनो तथा नरकनो हेतु, प्रत्यक्ष जीवादीक पदार्थ हुं नथी जाणतो तेथी रुडी पेरे इंद्रीयोने संवरवेकरी मैथुनथकी हुं निर्थक निवर्त्यो, कारण के कांइ ज्ञानादीक सीधी मुजने प्रगट न थइ एम साधु न चींतवे ॥ ४२ ॥

अर्थः—त० तप अणसण करी उ० तप विशेष ध्यानने आ० अंगीकार करीने प० भिक्षूनी पडिमाने । प० पडिवर्जता आदरतां मूजने । ए० एजीपरे वि० विचरता मे० मूजने छ० छद्मस्तपणे । नि० निवर्त्यो न० नहि ॥ ४३ ॥

मूलः—तवोवहाणमादाय पडिमं पडिवज्जओ ।
एवं पि विहरओ मे छउमं न निवट्टइ ॥ ४३ ॥

गाथा ४३ भावार्थः—एवी अष्टमगादीक नय नथा [illegible] भगतां करतुं ते उपधान तप, भद्र [illegible] महाभद्र एवी विगुनी प्रतीमादीक भंगीकार करी विचरतां पण मुजने छद्मस्थ ज्ञानावर्णगादीक कर्म निवर्ते नहि अने केवलज्ञान न थयुं (एम साधु न चिंतवे) ॥ ४३ ॥

अर्थ—हवे बावीसमो दंसण परीसह कहे छे। न० नथी नू० निश्चे। प० परलोक स्वर्गादीक। इ० वस्त्रादिक रुधि पा० अथवा नि० पर' पूरवे त० तपसीने अ० अथवा वं० वंदीयें मि० हुं। नि० एणे प्रकारे। इ० एम भि० साधु न० न चिं० चिंतवे ॥ ४४ ॥

मूलः—२२ नत्थि नूणं परलोए इड्ढी वावि तवस्सिणो ।
अदुवा वंदिओ मि त्ति इइ भिक्खू न चिन्तए ॥ ४४ ॥

गाथा ४४ भावार्थः—(हवे बावीस मो दर्शन परीसह कहे छे) मन्त के निश्चनादीक करवे करी व्यर्थ मारा आत्माने भांगयकी होतयों ? कारण के तपस्वीने स्वर्गादिक परलोक नथी न वा आमोसहीआदीक लब्धिनी ऋद्धि पण नथी एवं साधु न चिंतवे ॥ ४४ ॥

अर्थः—अ० हुवा पूर्वे भि० नि० तीर्थंकर अनंता। अ० वरतमान वर्ते छे जि० जिन तीर्थंकर। अ० अथवा ऽ० पण भ० आगमे काले हुस्ये तीर्थंकर सु० सुपार्श्वादने ते० सर्व तीर्थंकर। ए० एणीपरे-आ० बोल्या इ० एम भि० साधु न० न चिं० चिंतवे ॥ ४५ ॥

मूलः—अभू जिणा अत्थि जिणा अदुवावि भविस्सई ।

मुसं ते एवमाहंसु इइ भिक्खू न चिन्तए ॥ ४५ ॥

गाथा ४५ भावार्थः—पुर्वे अनंता जीनतीर्थंकर थया, वर्तमानकाले जीनतीर्थंकर वर्ते छे अथवा आगामीकाले जीनतीर्थंकर थशे ए त्रण कालना सर्व जीनतीर्थंकरे स्वर्गादीक परलोक छे एम कहेलुं छे ते मृषावाद (जुठुं) बोल्या छे एम साधु न चिंतवे ॥ ४५ ॥

अर्थः—ए० पुर्वे कह्या प० परीसह स० बावीस सघला ॥ का० काश्यप गोत्रि महावीरे प० कह्या परुप्या । जे०जेथी धैर्यवंत भि०साधु न० न चि०हणे संजमने । पु०फरस्यो पीडयो के०बावीस परीसह मांहिला कोणे क० कोइ थानकने विषे । त्ति० एम बे० कहुंछुं ॥ ४६ ॥ इति बावीस परीसह अध्ययन द्वितीयं समत्तं ॥ ४६ ॥

मूलः—एए परीसहे सव्वे कासवेण पवेइया ।
जे भिक्खू न विहन्नेज्जा पुट्ठो केणइ कन्हुई ॥ ४६ ॥ त्ति बेमि

गाथा ४६ भावार्थः—पुर्वे कहेला ए सर्व बावीस परीसह काश्यपगोत्री श्रीमहावीरदेवस्वामीए कहेला छे, ए बावीस परीसह मांहीलो कोइपण परीसहे पीड्योथको जे धैर्यवंत साधु होय ते संयमने हणे नही, एम मुधर्मास्वामी पोताना जंबूस्वामी नामना शिष्यने कहेता हवा के हे जंबू ? जेम में श्रीमहावीरदेवस्वामीनी समीपें सांभळ्युं हतुं तेम में तुज प्रत्ये कहुं ॥ ४६ ॥

॥ २ ॥]

अर्थः—च० च्यार प० उत्कृष्टां अ० मुगति पामवानां कारण छे । दु० पामवां दोहिला इ० एह सं-सारनी मांहे जं० जीवने ॥ मा० मनुष्यपणो १ सु० सिद्धांतनो सांभळवो २ स० शुद्ध मार्गनो सदहणो ३ । सं० संयमने विषे व० वली वी० वल फोरवनो ४ ॥ १ ॥

मूलः—चत्तारि परमङ्गाणि दुल्लहाणीह जन्तुणो ।
माणुसत्तं सुई सद्धा संजमम्मि य वीरियं ॥ १ ॥

गाथा १ भावार्थः—१ मनुष्यनो जन्म, २ धर्मशास्त्रनुं सांभळवुं, ३ शुद्ध मार्गनी श्रद्धा, ४ अने संयमने विषे बलफोरवनुं फोरवुं ए चार मुक्ति पामवानां उत्कृष्टां कारण ए संसारमांही आ जीवने पामवां दोहीलां छे॥१॥

अर्थः—तथा० पाम्यो ण० वचनालंकारे सं० संसारने विषे । ना० नाना प्रकारना गो० गोत्रने विषे अवतरे आ० नाना प्रकारनी जातिने विषे अवतरे । क० कर्म ना० नाना प्रकारनां क० करीने । पु० जूदा जूदा भवे करी वि० संपूर्ण लोक उपजवी प० जीव सर्वे ॥ २ ॥

मूलः—समावन्ना ण संसारे नाणागोत्तासु जाइसु ।
कम्मा नानाविहा कट्टु पुढो विस्संभिया पया ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः—इहे मनुष्यजन्म जाती दुर्लभ छे ते कहे छे, ए संसारने विषे नाना (विशेष) प्रकारनां भवे करी नाना प्रकारना गोत्र अने जातिने विषे जुदे जुदे भवे करी सर्व जीव संपूर्ण लोक उपजवे

फली भर्यो छे. ॥ २ ॥

अर्थः—ए० एकदा प्रस्तावने विषे जीव दे० देवलोकने विषे उपजे नर० नरकने विषे वि० पण ए० एकदा प्रस्तावे उपजे जीव। ए० एकदा प्रस्तावे आ० असुरकुमार संबंधि का० काय प्रत्ये उपजे। अ० जेहवा कर्म करे तेहवं कर्मे करी जीव। तेहवी गतिए ग० जाय ॥ ३ ॥

मूलः—एगया देवलोएसु नरएसु वि एगया।
एगया आसुरं कायं अहाकम्मेहिं गच्छई ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः—एकदा ए जीव शुभकर्मथी सुधर्मादीक देवलोकने विषे उपजे, एकदा ए जीव अशुभकर्मथी नर्कने विषे उपजे, एकदा असुरकुमार भवनपतीने विषे उपजे एम जेवां कर्म करे तेहवां कर्मे करी तेवीगतिने विषे जाय. ॥ ३ ॥

अर्थः—ए० एकदा प्रस्तावे ख० क्षत्रि जाति हो० होय त० तेवार पछी चं० चंडाल होय बो० जूइ मा वापनी जातिथी उपनो होय। त० तेवार पछी की० कीडो प० पतंग य० वली। त० तेवार पछी कुं० कुंथुओ पि० पिपि होय ॥ ४ ॥

मूलः—एगया खत्तिओ होइ तओ चण्डालबोक्कसो।
तओ कीडपयङ्गो य तओ कुन्थुपिवालिया ॥ ४ ॥

तओ कीडपयङ्गो य तओ कुन्थुपिवालिया ॥ ४ ॥ एकदा चंडाल पण थाय, मातापीतानी जाती जुदी एवा

बहुल दुःखने विषे उदये नेयन किडो पतंगीयो कुंथवो ने कीडी पण थाय. ॥ ४ ॥

अर्थः—एवं० एणीपरे भा० परिभ्रमण करे जो० जीवा जोनीने विषे ॥ पा० जीव क० कर्म कि० मेले कर्मने व्याप्त ॥ न० नीस्वो नहि सं०संसारने विषे ॥ स०जेम सर्व अर्थने य०विषे स्व०शक्ति प्रपती न पामे तेम॥५॥

मूलः—एवमावट्टजोणीसु पाणिणो कम्मकिब्बिसा ।
न निविज्जन्ति संसारे सव्वट्ठेसु व खत्तिया ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः—एणीपरे कर्मना मेल्ले करीने जीव जीवायोनीने विषे परीभ्रमण करता संसारने विषे पण निर्वेद नहि, जेम क्षत्री राजा ऋद्धि तेनो संतोष न पामे तेम ए जीव संसारमांही फरतो संतोष न पामे॥५॥

अर्थः—क०कर्मने सं०संयोगे उदये करी जीव स०मूर्ख होय। दु०दुःखीयो थाय व० घणी वेदना पामे म० मनुष्यनी जोनी विना। जो० अनेरी नरकादिक जोनीने विषे। वि० विशेषे इ० इणाय ते पीडा पामे छे पा० जीव ॥ ६ ॥

मूलः—कम्मसङ्गेहिं सम्मूढा दुक्खिया बहुवेयणा ।
अमाणुसासु जोणीसु विनिहम्मन्ति पाणिणो ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः—क[illegible] संयोगे करी जीव मूर्ख अने दुःखी थाय, घणी वेदना पामे मनुष्यनी योनी विना सर्व तिर्यंचनी योनीने विषे ए जीव विशेषे करीने पीडा पामे छे. ॥ ६ ॥

अर्थः—क० अशुभ कर्मने यु० अर्थे विशेषणने अर्थे प० महत्वा उपगयेज ज्ञानवे करी। भा० अनेक

भव परिभ्रमण करी अनुक्रमे प० शिवगतिने ओ० एम निये । जी० जीव सो० विशुध कर्मने शुभकर्मने भ०
पामवा थका । आ० अंगीकार करे पामे । म० मनुष्यपणो ॥ ७ ॥

मूलः—कम्मागं तु पहागाए आणुपुव्वी कयाइ ओ।
जीवा सोहिमणुप्पत्ता आययन्ति मणुस्सयं ॥ ७ ॥

गाथा ७ भावार्थः—ए संसारमांही अनुक्रमे करता मनुष्यगती पामवाने विघ्नकारी एवा अशुभ कर्म क्षय
थवाथी ने शुभकर्मना उदयथी कोएकवार जीव मनुष्य जन्म पामे. ॥ ७ ॥

अर्थः—मा० मनुष्य संबंधि वि० शरीरने ल० पामिने पण पुनः । सु० सांभळवो ध० धर्मनो । दु०
पणो दुर्लभ । जं० जे धर्मने सो० सांभळीने प० अंगीकार करीने । त० वार प्रकारे तपने खं० क्षमाने
अ० इंद्रीने ॥ ८ ॥

मूलः—माणुसं विग्गहं लद्धुं सुइ धम्मस्स दुल्लहा ।
जं सोच्चा पडिवज्जन्ति तवं खन्तिमहिंसयं ॥ ८ ॥

गाथा ८ भावार्थः—मनुष्यनुं शरीर पामीने जे बारप्रकारे तप क्षमा अहिंसा सांभळीने अंगीकार करवा
[illegible] धर्मनुं सांभळवुं दुष्कर ॥ ८ ॥

[illegible] सांभळवुं ल० पामीने म० शुद्ध मदहणा । प० अतिशे दु० दोहिली ।

मूलः—आहम्म सवणं लध्धुं सद्धा परमदुल्लहा ।
सोच्चा नेआउयं मग्गं बहवे परिभस्सई ॥ ९ ॥

गाथा ९ भावार्थः—कदाचित् एवुं सांभळवुं पाम्यो तो शुद्ध श्रद्धा अतिदुष्कर कारणके न्याय मार्ग मोक्ष मार्गने सांभळीने जमाली प्रमुख घणा जीव धर्मथी भ्रष्ट थाय. ॥ ९ ॥

अर्थः—मु० मनुष्यपणो धर्मनुं सांभळवुं च० वली ल० पामीने स० शुद्ध सरहणा पामीने । प० वली वी० संजमने विषे पण वीर्यनो फोरवनो पु० वली० दु० दुर्लभ ।च० घणाजन रो० रोकवता नि० थका। नो० नहि य० ए पं० धर्मने । प० अंगीकार करे ॥ १० ॥

मूलः—सुइं च लध्धुं सद्धं च वीरियं पुण दुल्लहं ।
बहवे रोयमाणा वि नो य णं पडिवज्जई ॥ १० ॥

गाथा १० भावार्थः—मनुष्यनो जन्म, धर्मनुं सांभळवुं, शुद्ध श्रद्धा पामीने पण संयमने विषे पण वीर्य पराक्रम पुरुषाकारनुं फोरवुं दुष्कर कारण के घणा जीव धर्मने रुचवता थका पण धर्मने अंगीकार करे नहि ॥१०॥

अर्थः—मा० मनुष्यपणाने विषे आ० आव्यो थको । जो० जे जीव ध० धर्मने सो० सांभळीने स० सरहे । त० तपस्वी वी० संजमने विषे उद्यमने ल० पामीने सं० आश्रवनो रुंधणहार साधु नि० टाळे र० कर्मरजने ॥ ११ ॥

मूलः—माणुमत्तंमि आयाओ जो धम्मं सोच्च सद्दहे ।

रूपन्न कोटि सहस्र वरस एटले एक पूर्व होय एहवा असंख्याता पूर्वगाइं एहवी साग ठाणांग बीजुं उद्देसे
तथा अनुयोगद्वारे वा० वरसना मांहि व० असंख्याता वरस ॥ १५ ॥

मूलः—अप्पिया देवकामाणं कामरूविविउव्विणो।
उड्ढं कप्पेसु चिट्ठन्ति पुव्वा वाससया बहू ॥ १५ ॥

गाथा १५ भावार्थः—पाऊला पुन्ये करी देवता संबंधी काम भोग पाम्या छे ते थोता ? इच्छा मुजब
वैक्रिय नवां नवां रूप करी मुख भोगवता थका उंचा देवलोकथी पण उपर नव ग्रैवेयक अनुत्तर विमानादीकने
विषे असंख्याता वर्ष सुधीनुं आयुष्य भोगवे ॥ १५ ॥

अर्थः—त० ते देवलोकने विषे। ठि० रहीने ज० जे ठा० स्थानक ते विमानने विषे। ज० देवता आ०
आउपाने ख० क्षये छते चु० चवीने। उ० उपजे मा० मनुष्यनी जो० जोनी प्रते से० ते पुण्यवंत जीव द०
दश अंग छे जेहने एहवो अ० होय ॥ १६॥

मूलः—तत्थ ठिच्चा जहाठाणं जक्खा आउक्खए चुया।
उवन्ति माणुसं जोणिं से दसङ्गे अभिजायए ॥ १६ ॥

गाथा १६ भावार्थः—तिहां देवलोकना स्थानकने विषे रहीने देवतानुं आयुष्यपुर्ण करीने शेषपुन्य रहेलुं

मूलः—सित्तं वत्थु हिरण्णं च पसवो दासपोरुसं ।
चत्तारि कामखन्धाणि तत्थ से उववज्जई ॥ १७ ॥

गाथा १७ भावार्थः—१ उपाटी भूमिका (खेत्रादीक) २ ढांकी भूमिका. (घरमगुरा) ३ सुवर्णादीधन ४ चतुष्पादीक दास दासी प्रमुख ए चार कामभोगना स्कंध (पटले ए चार बोल) पहेले एक बोल समजवो अने आ १७ मी गाथानो पूर्वार्ध १८ मी गाथार थये ॥ १७ ॥

अर्थः—पि० सिक्तांत होइ २ ना० न्यानितंत होइ ३ उ० उंचागोत्रना धणी होइ ४। व० भलाशरिरना वर्णांत होइ। ५ ब० रोग रहित शरिर होइ ६ म० महा मलार्वत होइ। ७। अ० विनित होइ ८ ज० जस० वंत होइ ९। व० बलांत होइ १० ॥ १८ ॥

मूलः—भित्तं नायं होइ उच्चगोए य वण्णवं ।
अप्पायङ्के महापन्ने अभिजाए जसो बले ॥ १८ ॥

गाथा १८ भावार्थः—२ घरी पण भिक्तांत होय ३ ज्ञानी ज्ञानितंत होय ४ उंच गोत्रनो धणी होय ५ शरिरनो वर्ण वर्ण होय ६ गंभरीत होय ७ महाबज्ञा (बुद्धि)वंत होय ८ विनयवंत होय ९ यशांत होय १० बलवंत होय ए दश बोलनी सामग्री जिहां होय तिहां ते पुन्यवंत जीव उपजे. ॥ १८ ॥

अर्थः—गोत्रादिने ना० मनुष्य संबंधी भो० भोग । अ० अनोपम भोगने अ० पूर्व आउखो पाये अथवा

पूरो आउपो भोगवे । पु० पुर्व भवने विषे वि० निदांन रहित निर्मल स० सत शोभनीक धर्म पाल्यो छे जेणे
एहवो जे जीव के० निष्कैवल कलंक रहित वी०जिनधर्मनि माहि रूप बीज बीजने पु० पामीने ॥ १९ ॥

मूलः—भोचा माणुस्सए भोए अप्पडिरूवे अहाउयं ।
पुविं विसुद्धसद्धम्मे केवलं बोहि बुज्झिया ॥ १९ ॥

गाथा १९ भावार्थः—पुर्णआयुष्य पामे पथवा पुर्णआयुष्य सुधी अनुपम मनुष्य संबंधी कामभोग भोग-
वीने नियाणा (सुक्रत्यनुं वळ मागी लेवुं ते) दीकरहीत निर्मळ धर्मचारित्र पाळ्युं हतुं ते केवळीए भाष्यो धर्म
सम्यक्त सहित ग्रही प्रतिबुझी (समजी) चारित्र अंगिकार करे. ॥ १९ ॥

अर्थः—च० पुर्वोक्त चार अंगने दु० पांमवा दोहिला । म० जाणीने सं० संजमने प० अंगिकार करे, करीने
। त० तपेकरि धु० टालेक० कर्मनी प्रकृतिओने । सि० सिद्ध ह० होइ सा० सास्वतो चि० इमवे० कहुछुं ॥२०॥

॥ इति चाउरङ्गिज्जं नामे अध्ययनं तृतीयं समत्तं ॥ ३ ॥

मूलः—चउरङ्गं दुलहं मत्ता संजमं पडिवज्जिया ।
तवसा धुतकम्मंसे सिद्धे हवइ सासए ॥ २० ॥ त्ति बेमि

गाथा २० भावार्थः—पुर्वोक्त चार अंगने पामवां दोहीलां जाणीने संयम अने तप अंगीकार करिने क-
र्मना अंशने टाळीने शाश्वतो सिद्ध थाय. एम सुधर्मा स्वामी पोताना जंबूस्वामी नामना शिष्यने कहेता हवा
के हे जंबू ? जेम मे श्री महावीरदेव समिपें सांभळ्युं हतुं तेम मे तुजमने कर्युं. ॥ २० ॥

(इतिश्री चतुरंगी नामना त्रीजा अध्ययननो भावार्थ संपूर्ण. ३)

अर्थः—अ० मूठोसंसार नहि जी० आउषो ते माटे मा० मकरिश प० प्रमाद । जरो० जरावंत मुरुषने दु० निश्चेन० नथी ता० प्राण सरण कोइ । ए० एमवि० जाणी । ज० हेनप० प्रमादि कू० प्रश्ने० ष्णुं० विचारणा वि० विशेषे हिं० हिंस्याना करण हार अ० आजेनोंद्रे गि० कोदनो सरण दृढसे ॥ १ ॥

मूलः—असंसयं जीविय मा पमायए जरोवणीयस्स हु नत्थि ताणं ।
एवं वियाणाहि जणे पमत्ते कण्णु विहिंसा अजया गिहिन्ति ॥ १ ॥

गाथा १ भावार्थः—हवे पोथा अध्ययननो भावार्थ कहे छे. (मुख्या कामनी पेरे) आयुष्य तुटयुं गढं संसाय नही ऐम जाणी हे जीव ! प्रमाद न कर ! कारण के ज्यारे जीवने जरा (वृद्धावस्था) आवशे त्यारे उठी बेठी शकाशे नही तेवारे ए जीवने कोइ सरण नथी एम जाणीने अहोनोरो ! प्रमाद छांडो ??? केमके हिंसानो करनार इंद्रीयोने पोताना वशमां नही राखनार ए केनुं शरण ग्रहशे ??? ॥ १ ॥

अर्थः—जे० जे कोइ पा० पाप कर्मे करि ध० धनने म० मनुष्य सा० मेलवेले । अ० अमूलनिपरे ग० घरनेरापेले प० छांडिने ते० ते पा० संसार रुप पासने विषे दि० दयाधर्म न० मनुष्यवे० वैरे वं० वंधायाय का न० नरकने विषे उ० उपजे० ॥ २ ॥

मूलः—जे पावकम्मेहि धणं मणूसा समाययन्ती अमइं गहाय ।
पहाय ते पासपयट्ठिए नरे वेराणुबद्धा नरयं उवेन्ति ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः—ए संसारने विषे पुत्रकलत्रादीकना पामने विषे वंधायायका जे कोइ मनुष्य

पापकर्मा करी धन मेळवीने तेने अमूतनी पेरेग्रहण करि राखे छे ते धनादीकने छांडाने घणां पाप करी घणा
जीवनी साथे वैर उपरांजीने ए जीव नर्कने विषे उपजे (पण ते वखते ते धन तेने सरण न थाय) ॥ २ ॥

अर्थः—तं० चोर ज० जिम स० स्वाजनामूपने विषे पड्यो थको ग० गृहो थको । स० पोताना क० कर्मे
करि कि० पीडाइ पा० पापनोकारणहार । ए० एणीपरे प० जीन पे० परलोकने विषे । इ० ए च० चली
लो० लोकने विषे । क० कीधा क० कर्मनो । मु० मूकावयो । न अ० नथी तथा न० भोगव्या विना मूकावयो नथी॥३॥

मूलः—तेणे जहा सन्धिमुहे गहीए सकम्मुणा किच्चइ पावकारी ।
एवं पया पेच्च इहं च लोए कडाण कम्माण न मुक्ख अत्थि॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः—पापकर्मनो करनार पोतानां कर्म करिने खाजने मुखे जेम चोर पकडागो थको
पीडाय तेम ए जीव इहलोक तथा परलोकने विषे पोतानां करेलां कर्म भोगव्या सिवाय मुकाय नहीं. ॥ ३ ॥

अर्थः—सं० संसारने आ० पामीने प० परने अ० अर्थे । सा० साधारण ज० जे क० करे क० कर्मने । क०
त० ते कर्मना उ० भोगववानां का० कालने विषे ते० व० ते बंधव । व० बंधवपणो न० न उ० पाळे ॥ ४ ॥

मूलः—संसारमावन्न परस्स अट्ठा साहारणं जं च करेइ कम्मं ।
कम्मस्स ते तस्स उ वेयकाले न बन्धवा बन्धवयं उवेन्ति ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थः—ए संसारने विषे जीवपणे अर्थे साधारण (जेमां घणानो भाग होय ते एटले पापे
करीने सर्व कुटुंब खाय ते) कर्म करेछे पण ते कर्म ज्यारे उदय आवे त्यारे बंधव बंधवपणुं पाळे नहीं.

(अर्थात् बंधनादिक भव्या जहने उभा रहे) अने ए जीव पोतानी कमाणी एकलो भोगवे. ॥ ४ ॥

अर्थः—वि० पनेरि ना० शरण न० न ल० पामे प० हे ममादि इ० एह लो० लोकने विषे अ० अथवा प० परलोकने विषे । दी० समकीत रूप दिवो प्र० उल्हाणे छते अ० अज्ञान मोहरूप अनंतो अंधकार होइ । ने० न्याय मार्गने द० देखीने अ० अणदिठा सरिखो होइ ॥ ५ ॥

मूलः—विहेण ताणं न लभे पगत्तो इमम्मि लोए अदुवा परत्था ।
दीवे पणट्ठे व अणन्तमोहे नेयाउयं दट्ठुमदट्ठमेव ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः—ममादी जीव एम जाणे के ज्यारे कर्मउदय आवशे त्यारे लक्ष्मी दहने राखीश ? पण हे ममादी जीव ! इहलोक तथा परलोकने विषे पने करीने जीवने शरण न होय ? जेम कोइ पुरुष हाथमांही दीवो लइने रसडुंपीका खेवाने अर्थे गुफामांही पेठो पडी दीवो अस्त थइ जवाथी मार्ग न दीठे तेम जीवे ज्ञानदीपक दीधे थकी मुक्तिमार्ग दीठो छे पण दर्शनावर्णि रूप अनंतमोहनी कर्मने वशे करीने दीठो पण अणदीठो होय (इहां उदाहरण जेम कोइ धातुवादी हाथमां दीवो लइने धातु शोधवाने वास्ते बीलमां पेठो ते वारे ममाशाहीकरी दीवो ओलवाइ जवाथी रस्तो नही जडतां भमवा लाग्यो, ते बीलमां एक मचंड विषधरे (सर्पे) डंस देवाथी विशेष परी मृत्यु पाम्यो,तेम जीव सम्यक्त्व पामी महामोहनाश्रवथी फरि मिथ्यात्वमां जाय.)॥५॥

अर्थः—मु० हे भव्यो तिहांसुधा ए० जा० जिम प० मार्ग पडी जाणतो थको संयम जीवतव्ये जीवे न० जी० विनाश न करे । पं० पंडित आ० सिद्ध मनोरथ । पो० रूद्र मु० काढ अ० बाह्य शरीर स० सारिखे करे

इम जाणीने । भा० भारंडपंषिनी व० परे च० चाले अ० प्रमाद रहित ॥ ६ ॥

मूलः—सुत्तेसु यावी पडिबुद्धजीवी न वीससे पण्डिए आसुपन्ने ।
घोरा मुहुत्ता अबलं सरीरं भारुण्डपक्खी व चरऽप्पमत्ते ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः—(अविवेकी मुर्ख लोक द्रव्य अने भाव निद्राए सुता छता अने पंडीत साधु द्रव्य निद्राए सुतो) पण भावथी जागतो थको संयम जीवतव्य करीने जीवे, वली शिघ्र ए शरिरने बळरहीत करतो एवो भयंकर काळ मुहुर्त (वेघडी) मात्रमां मृत्युने आपनार जाणिने तिक्ष्ण बुद्धिनो धणी प्रज्ञावंत साधु विश्वास नही करतां भारंडपंखीनी पेरे प्रमादरहीत थको विचरे. ॥ ६ ॥

अर्थः—च० चाले प० मूलगुण उत्तर गुणने विषे प० अतिहे स० संकातो थको । न० जे कांइ संसारनां स्वरुपने पा० पास सरिषा । इ० ए संसारने विषे म० मनतो थको ला० लाभनो । स० अवसरने विषे जी० संजम जीवितव्यने विषे यू० वधारिने । प० पछे मरणना अवसरने प० जाणीने म० कर्म तथा शरिरने अ० टाले ॥७॥

मूलः—चरे पयाइं परिसङ्कमाणो ज किंचि पासं इह मन्नमाणो ।
लाभन्तरे जीविय बूहइत्ता पच्छा परिन्नाय मलावधंसी ॥ ७ ॥

गाथा ७ भावार्थः—पापथी शंकातो थको संयम नही विराधतां मुळ गुण उत्तर गुणने विषे चाले, अने [illegible] मानतो जीशं लगी शरिरथकी तपजपनो लाभ होय तिहां सुधी शरिर राखी संयम

जीवतव्यने वधारिने पछी मरणनो अवसर जाणीन आपणी बुद्धिए करी सर्व पनरसी अणसण लइ शरिर तथा पाप कर्मरुप रजने टाळे. ॥ ७ ॥

अर्थः—छं० पोताना छांदाने नि० निरोधने करिने उ० पामे मो० मोक्षने आ० अश्व ज० जिम सि० सिपव्या थको व० पारखनो घा० धरणहार होइ पु० पणा पूर्व थकी घा० वर्ष थकी च० वीतरागने छंदे चाले प्र० अमप्त थको त० ते माटे मु० ते मुणी खि० शीघ्र उ० पामे गो० मोक्षने ॥ ८ ॥

मूलः—छन्दंनिरोहेण उवेइ मोक्खं आसे जहा सिरिक्यवम्मधारी ।
पुव्वाइं वासाइं चरऽप्पमत्तो तम्हा मुणी खिप्पमुवेइ मोक्खं ॥ ८ ॥

गाथा ८ भावार्थः—जेम सोदागरे अश्व (घोडा)ने सीखव्यो छतो पारखनो (बरबखरनो) धरणहार थाय, अने अश्वारुढ मन होय तेम चाले तो शत्रुने जीती आवे तेम साधु पोतानो छांदो (इच्छा) रुंधे (एटले पोतानी कांइ चतुराइ नही करतां) जेम वितरागे कहेलुं छे तेम गुरुनी आज्ञा प्रमाणे करे तो घणां पुर्व तथा घणां वर्ष थकी अप्रमत्त थको प्रवर्ति शीघ्र (उतावळो) मोक्षमां जाय. ॥ ८ ॥

अर्थः—सा० ते पुरुष पु० पहिलो धर्म न करे ते ए० एणे प्रकारे न० ल० करवो न पामे प० पछे । ए० ए उ० उपमा सा० निश्चे वा० वादिने वि० विषवाद पामे । सि० सय थये छते आ० आउषो का० मरणने उ० समिपे पोहता छते । स० शरिरनां भे० विनाशने अवसर ॥ ९ ॥

मूलः—स पुव्वमेवं न लभेज्ज पच्छा एसो ऽवमा सासयवाइयाणं ।

विसीदई सिढिले आउयंमि कालोवणीए सरीरस्स भेए ॥

गाथा ९ भावार्थः—कोइ जीव एम जाणे के हवणां हुं खाउं पीउं पछी मर्गकाळे धर्म करीश ? (ज, मत निरुपक्रम आयुष्य वाळाने शोधे पण वीजाने न शोधे) एम धारि न जे पुरुष पेहेल्यां धर्म न करे ते पुरुष पछी धर्म करवा न पामे कारण के आयुष्य क्षय थवायी शरीरना विनाशने अवसरे परभवे मणिए पोहोच्यो थको अहो ?में प्रथम प्रमादादीकथी धर्म कर्यो नही, अने पछी थयो नही तो हवे महिनो शी गति थशे ? एम झुरणा करे. ॥ ९ ॥

अर्थः—खि० सीघ्र न० धर्म करि नस० शके वि० लांउवाना अवसरने प० पामीने । न० तेमाटे स० सम्यक प्रकारे सावधान थइने प० छांडे का० काम भोगने स० सम्यक प्रकारे जाणीने लो० लोकना स्वरूपने । स० समता भावे रापे म० मोटा रुषिस्वर । अ० दुरगति पडता पोताना आत्माने र० रापेच० प्रयत्नें अ० अप्रमादि थको ॥ १० ॥

मूलः—खिप्पं न सक्केइ विवेगमेउं तम्हा समुट्ठाय पहाय कामे ।
समिच्च लोगं समयामहेसी अप्पाणरक्खी चर अप्पमत्तो ॥ १० ॥

गाथा १० भावार्थः—प्राणी परभवे समे त्याग रुप धर्म करि न शके तेथी कामभोगने छांडीने धर्मने विषे उद्यम करे लोकनुं स्वरूप देखीने समता रसे करि शीलतो ते साधु पोताना आत्माने दुर्गती पडतां रा- खवाथी आत्मानो रक्षक छे ते सावधान थइ अप्रमादी थको जीवरक्षण करतो विचरे. ॥ १० ॥

अर्थः—ब० वारंवार मो० मोहना गुणकारि एहवा शब्दादिक ज० जिणहार एहवा साधूने॥ग० अनेकप्रकारना स० साधूने । ष० संजमने विषे प्रवर्तनाने । फा० शब्दादिक फरस फु० फरस अ० आफरस ज० सुहाव्या जेम हाई लिष ते० ते शब्दादिक उपरे मि० साधू म० मने करी । न० प० द्वेष न करे॥११॥

मूलः—मुहुं मुहुं मोहगुणे जयन्तं अणेगरूवा समणं चरन्तं ।
फासा फुसन्ती असमञ्जसं च न तेसि भिक्खू मणसा पउस्से॥ ११॥

गाथा ११ भावार्थः—मोहना गुणने वधारणहार अनेक प्रकारना शब्दादीकने वारंवार साधु जीते एवा साधूने संयमने विषे प्रवर्तताने आकरा तथा मुंहाला शब्दादीक स्पर्शे तो ते शब्दादीक उपर मने करिने पण साधु द्वेष न करे. ॥ ११ ॥

अर्थः—मं० मंद पामे फा० फरस शब्दादिक । व० थका जीवने लो० लोभ उपजावे । त० तथा प्रकारना काम भोगने विषे । म० मन न० नकरे । रु० उपजतो थको राखे मो० मोहने वि० टालेमा० मानने । मा० मायाने न० न सेवे । प० छांडे लो० लोभने ॥ १२ ॥

मूलः—मन्दा य फासा बहुलोहणिज्जा तहप्पगारेसु मणं न कुज्जा ।
रक्खिज्ज कोहं विणएज्ज माणं मायं न सेवेज्ज पहेज्ज लोहं॥ १२ ॥

गाथा १२ भावार्थः—शब्दादीक तथा स्त्रीयोना स्पर्श थका मंद (मूर्ख) पुरुषोने लोभ उपजावे ते तो तथा प्रकारना कामभोगने विषे साधु मन न करे अने क्रोधमानने टाली कपट नही सेवतो लोभने छांडे. ॥ १२ ॥

अर्थः—जे० जे कोइ तत्वज्ञान विना सं० संस्कृत भाषाना बोलणहारा । तु० समकितादिक गु
परना कीधा शास्त्र तेहनां परुपनार ते० ते मिथ्यादृष्टि । पि० रागद्वेषे पोहताथका प० परवसे पड्याछे
ए० ए पुर्वेकथाते । अ० अधर्मनाहेतु । चि० एणे कारण माटे एहवा मिथ्यात्वना । दु० त्यजनां थका कं०
पांछेगु० ज्ञानादिक गुणने जा० जावजीव सुधि स० एतले शरिर भेद थाइ तिहां सुधी । ति० एम वे०
कहुंछु सुधर्मास्वामी जंबू प्रत्येकहिताहूवा ॥ १३ ॥

मूल-जे ऽसंखया तुच्छा परप्पवाई ते पिज्जदोसगुणया परब्भा ।
एते अहम्मे ति दुगुच्छमाणो कंखे गुणे जाव सरीरभेओ १३ ॥ त्ति बेमि ॥

इति असंखयं नामं चतुर्थं अध्ययनम् समत्तं ॥४॥

गाथा १३ भावार्थः—जे कोइ तलना अजाण अने संस्कृत भाषाना बोलगहार अने समकीतादीक गुणे
करी ठाला स्वतिर्थ थकी अनेरानां किधां शास्त्रना परूपगहार एवा ते मिथ्यादृष्टी रागद्वेषने वसे पोहोंचा
थका परवस पड्याछे ए पुर्वोक्त कथा ते अधर्मना हेतु एवा मिथ्यात्वादीकने तजी ज्ञानादीक गुणने जाव
जीव सुधी साधु इच्छे (अवीन्) कोइ संस्कृत भाषाना बोलनार छे पण समकीतादी गुणे करी रहीत अने
राना करेला शास्त्रना परुपनार एवा मिथ्यात्व दृष्टी छे ते राग द्वेषने वसरूप परवस पड्या छे एवा अधर्म
ना हेतु मिथ्यात्वादिकने तजीने साधु ज्ञानादिक गुणने जावजीव सुधी इच्छे, कारणके संस्कृतादिक भाषा
नी पण समकीतादिक गुण जीवने तारे छे माटे ते गुणने धारण करवा एम सुधर्मा स्वामी

पोताना जंबू नामना शिष्यने कहेता हवा के हे जंबू ! जेम मे थी महावीरदेव स्वामीनी सर्पाते सांभल्युं तेनुं तेम मे तुंज प्रत्ये कर्युं. ॥ १३ ॥ इतिश्री उत्तराध्ययन सूत्रना चोथा अध्ययननो भावार्थ संपूर्ण. ॥ ४ ॥

अर्थः—अ० संसार रूप समुद्रने विषे । म० मोटा भयरूप भैरव नवाड छे जेहने विषे एहवा संसाररूप समुद्रने विषे । ए० एकेक महा पुरुष नि० वर्षा । दु० तरता दोहिलो छे संसार समुद्र । त० तिहां देवादि-कनिरूपणमाहे । ए० एकेक निर्वेकरादिक म० मोटे, प्रधाना वर्षे । इ० ए प० उपदेशवे उ० कहिता हुवा ॥१॥

मूलः—अण्णवंसि महोहंसि एगे तिण्णे दुरुत्तरं ।
तत्थ एगे महापन्ने इमं पण्हमुदाहरे ॥१॥

हवे पांचमा अध्ययननो भावार्थ कहे छे. गाथा १ भावार्थः—भयरूपी मोटो जेनो ओघप्रवाह छे ने जे तरतां दोहिलो एवो संसाररूप समुद्र एकेक निर्वेकरादीक महापुरुषो वर्षा ? एवा महा प्रज्ञावंत एकेक निर्वेकरादीक स्वामी देवाधीकनी पर्षदामांही ए आगल कहीशुं ते उपदेश कहेता हवा. ॥ १ ॥

अर्थः—स० ते अ० ए दु० देव० स्थानक । अ० कया मा० भावनाने छेदे अ० अभिलाषा रहित मरण तेम कामभरण च० समुच्चय ए० पदपूरणे । स० बीजो अभिलाषा सहित मरण ते सकाम न० निमंत्रित ॥२॥

मूलः—सन्तिमे य दुवे ठाणा अक्खाया मारणन्तिया ।
अकाममरणं चेव सकाममरणं तहा ॥२॥

गाथा २ भावार्थः—एकनी अभिलाषा रहीत ते अकाम मर्ण अने बीजुं एकनी अभिलाषा सहित ते सकाम

मर्ण एवा बे प्रकारनां मर्णनां स्थानक आयुष्यने अंते कह्यां छे. ॥ २ ॥

अर्थः—बा० अज्ञानिने अ० अकाम मरण तु० निश्चे म० मरण अ० अनेकवार मरवुं भ० होई प० पं-
डितने स० सकाममर० मरण तु० पदपूर्णे । उ० उत्कृष्टे पदे स० एकवार केवली आश्रीभ० होई ॥ ३ ॥

मूलः—बालाणं तु अकामं तु मरणं असइं भवे ।
पण्डियाणं सकामं तु उक्कोसेण सइं भवे ॥३॥

गाथा ३ भावार्थः—अज्ञानीने अकाम अनेकवार मरवुं होय अने पंडीतने सकाम मर्गे उत्कृष्टुं केव-
ली आश्री एकवार मरवुं होय. ॥ ३ ॥

अर्थः—त० ते बे मरण मांहि इ० ए प० पहेलुं था० थानक अकाममरण। म० महावीर तिर्थंकर देवे दे. परुप्युं ।
का० कामभोगने विषे गृद्धहोइ ज० जिमया० अज्ञानि । मि० अतिहे क्रू० करुर कर्मनेकु० करे ॥ ४ ॥

मूलः—तत्थिअं पढमं थाणं महावीरेण देसियं ।
कामगिद्धे जहा बाले भिसं कूराइं कुव्वई ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थः—अकाम अने सकाम ए बे मर्णमांही प्रथम अकाम मर्ण श्री महावीरदेव तिर्थंकरे परुपेलुं
छे ते एवी रीते के जे कोइ अज्ञानी मुर्ख कामभोगने विषे लुब्ध थयो थको अतिहिंशादीक क्रुरकर्म करे. ॥ ४ ॥

अर्थः—जे० जे अज्ञानि गि० गृद्धहोइ का० कांमभोगने विषे॥ ए० एकेकरुद्रप्रणामि कृ० पासने अर्थे द्रव्य
पास ते मृगादि झालवाने पास, भावपास ते मिथ्यात सहित आश्रव एहवा बे पासने अर्थे ग० मर्वत

न०नथी मे०मे दि०दिठो प०परलोक । च० दृष्टि दि०दिठी इ०ए प्रत्यक्ष र०कामभोग भोगव्याधि उपनिजे रति

मूलः—जे गिद्धे कामभोगेसु एगे कूडाय गच्छइ ।
न मे दिट्ठे परे लोए चक्खूदिट्ठा इमा रई ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः—जे कोइ स्त्रीयादीकना काम भोगने विषे लुब्ध थयेलो छे, तेरीज प्रमादी थइ नरकना पामवे विषे प्रवर्ति किहां नरकादी स्थानक छे एम कुडी (जुठी) भाषा बोले अने कोइ कहेछे, काम न करीए ते वारे कहेछे, मे परलोक दीठा नथी, अने ए स्त्रीयादिक कामभोगनी रती(सुखी)प्रत्यक्ष देखाय छे.

अर्थः—इ० हायने विषे । भा० भाख्या इ० ए का० कामभोग का० जे कामभोग कालांतरेपणी गहिन । भ० भागमीए का० कालांतरे पामीए नेतो साम्प्रत छे । को० कोण जा० जाणे प० परलोकने कि० छे वा० अथवा न० नथी वा० समूलए मु० वली ॥ ६ ॥

मूलः—हत्थागया इमे कामा कालिया जे अणागया ।
को जाणइ परे लोए अत्थि वा नत्थि वा पुणो ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः—ए काम भोग छांडीने धर्म करो के जेथी आगळ सुख पामीए एम जे कहोछो ते. आ काय हायमां आवेला छे, ते काम भोग हुं भोगवुं, केमके बीजा जन्मांतरे कामभोग मळशे ए संशय छे, तेथी कोण जाणे परलोक छे अथवा नथी. ॥ ६ ॥

अर्थः—न० एटला लोक स० संशये हो० हुं पण थाउ । इ० एहवो वा० भणनि प० बीजाइपणो

का० कामभोगने अतिह रा० रागे करि । के० कलभ२ सं० सम्यक प्रकारे प० अंगीकार करे छे॥ ७ ॥

मूलः—जणेण सद्धिं होक्खामि इइ बाले पगब्भई ।
कामभोगाणुराएणं केमं संपडिवज्जई ॥ ७ ॥

गाथा ७ भावार्थः—अज्ञानी मुर्ख काम भोगने विषे लुब्ध थयो थको एटला लोकनी गती थशे तेवी मारी पण गती थशे एम कही ब्रीटाइपणुं करी अत्यंत काम भोगना रागे करी इहलोक त्या परलोकनी व्याधी रुप फलेशपणुं अंगीकार करे. ॥ ७ ॥

अर्थः—त० तिवारे पछेसे० ते अज्ञानि मनुष्य दं० मनदंडादिक स० प्रवर्ते । त० त्रसने विषे था० पांच एकेंद्रि थावरने विषे । अ० पोताने अर्थे अ० अथवा परने अर्थे । भू० जीवनां समोहने वि० विसेषे हिं० हणे ८

मूलः—तओ से दण्डं समारभई तेसिसु थावरेसु य ।
अट्ठाए य अणट्ठाए भूयगामं विहिंसई ॥ ८॥

गाथा ८ भावार्थः—एवुं ब्रीठाइ पणुं अंगीकार कर्या पछी ते अज्ञानी मनुष्य मन वचन कायाना त्रण दंडने विषे प्रवर्ति पोताने अर्थे त्या अनर्थे त्रस अने स्थावर जीवना समुह (वृंद) ने विषेसे हणे. ॥ ८ ॥

अर्थः—हिं० हिंस्पानो करणहार १ । बा० बाल अज्ञानि २ । मु० मृगावादनो बोलणहार ३ ॥ मा० मायावियो पि० चाडिओ स० धूतारो ॥ भु० भोगवतो थको मु० मदिरा पं० मांसने । से० श्रेय छे ए० ए मदिरा मांसनो भोगववोति० एम । म० माने ॥ ९ ॥

मूलः—हिंसे बाले मुसावाई माइल्ले पिसुणे सढे ।
भुञ्जमाणे सुरं मंसं सेयमेयं ति मन्नई ॥ ९ ॥

गाथा ९ भावार्थः—ते अज्ञानी सुर्ख दीक्षा करे, जुदुं बोले, कपटाइ करी नाडीयापणुं चुगारापणुं करी नीचा करे अने मंदीरा मांस खातो थको श्रेय पणुं माने ॥ ९ ॥

अर्थः—का० कायाए करि व० वचने करि । म० मडांग होइ । वि० धनने विषे गि० गृगय० गली इ० स्त्रिने विषे। दु० पे प्रकारे रागद्वेष तथा मिथ्यात अवरति म० कर्मनुं सं० संचय करे । गि० अलसियो व० जिम म० पे प्रकारे माटिनो संचय करे पाप अने शरिरे परडे ॥ १० ॥

मूलः—कायसा वयसा मत्तो वित्ते गिद्धे य इत्थिसु ।
दुहओ मलं संचिणइ सिसुणागो व मट्टियं ॥ १० ॥

गाथा १० भावार्थः—जेम अलशिया माटी खाय अने शरीरे पण माटी खरडे पछी तडके मुकायाथी मरण पामे तेम अज्ञानी हुं रुपवान स्या बळवान एम कायाना, अने हुं सुन्दर कंठीलुं एम वचननाने, हुं धारण शक्तिवान छुं एम मनना एवा त्रण प्रकारना मदांधे करी धन स्त्री शरीने विषे लुब्ध थयो थको राग द्वेषने मिथ्यात अव्रते करी कर्म रुप मेलनी वृद्धी करे. ॥ १० ॥

अर्थः—त० तिवार पछी पु० पीड्यो आ० रोगे करिने गि० गिलाण थको प० अतिखेद पामे प० अंतीरे त्रास पामतो प० परलोक जावापि पूर्वले मरणथकी क० कर्मनां अ० देणहार ज० आत्माना पूर्वले

मोटा मंदिरादिक कराव्या छे ते मूकी जाउं हुं एहवो त्रास पामे ॥ ११ ॥

मूलः—तओ पुट्ठो आयङ्केणं गिलाणो परितप्पई ।
पभीओ परलोगस्स कम्माणुप्पेहि अप्पणो ॥ १२ ॥

गाथा ११ भावार्थः—ते वारे पछी रोगे करी पीडयो थको अतीशे खेद पामे, अने मरण समे मोटा मंदीरादीक करावेल छे ते मूकीने अहो ? में बहुज दुष्ट कृत्य कर्या ते में शुंहुं कर्युं छे तो हवे परलोक जवा थी मारी शी गती थशे एम त्रास पामे. ॥ ११ ॥

अर्थः—हवे सुधर्मा स्वामी कहे छे सु० सांभल्यामे० मे भगवंतनी समिपे । न० नरगने विषे उपजवानां ठा० थानक । अ० धर्मना अणकरणहार पुरुष च० वली जा० जे उपजवानि ग० गाठिगति वा० अज्ञानी असीलिया केहवाछे । कू० क्रूरकर्मनां करणहार केहवी गति पामे ॥ प० अतिहेपमता दोहिली ज० ।जिमछे वे० वेदना तिहा उपजे ॥ १२ ॥

मूलः—सुया मे नरए ठाणा असीलाणं च जा गई ।
बालाणं कूरकम्माणं पगाढा जत्थ वेयणा ॥१२॥

गाथा १२ भावार्थः—सुधर्मास्वामी कहेता हवा के अहो जंबू ? में भगवंत समीपे नरकमां ऊपजवाना स्थानक सांभल्या छे ? के जीहां अतीशे रूदमतां दोहीली एवी सीतोश्णादीक भयंकर दुःख छे तेहवी दुर्गतीने विषे, अज्ञानी धर्म नही करनार अने शीयलादीक आचाररहीतने क्रुर धर्मना करणहार एवा पुरुषो तिहां उपजे॥१२॥

अर्थः—अ० तिर्यंचगतिकने विषे अ० उपजवो आ० यावत् ज० जिघवे० मे अ० ए यावत्पने अ० सांभरवुं छे । आ० यथाकृत्य कर्म करिने यावत्पीडा ॥ अ० आलोयणो सो० ते प० पछी प० पश्चात्ताप करे ॥ १३ ॥

मूलः—तत्थोववाइयं ठाणं जहा मे इमणुस्सुयं ।
आहाकम्मेहिं गच्छन्तो सो पच्छा परितप्पई ॥१३॥

गाथा १३ भावार्थः—जेम ए नर्कादीकने विषे उपजवानुं स्थानक सांभरवुं छे तीहां जोसाने कर्म करी तेवी दुर्गतीये उपजतो पछी अतीत्ते पश्चाताप करे ॥ १३ ॥

अर्थः—अ० जेम आ० यावत् जा० जाणतो थको रयने चलावतो । अ० शुभमार्गने अ० मोटा राजपंथने वि० छांडिने वि० विषम० मार्गने आ० पामतो थको ॥ अ० दाटिवी धूरि अ० मागी छते सो० सोचना करे ॥ १४ ॥

मूलः—जहा सागडिओ जाणं समं हिच्चा महापहं ।
विसमं मग्गमोइण्णो अक्खे भग्गम्मि सोयइ ॥१४॥

गाथा १४ भावार्थः—जेम गाडीवान सन्मार्ग जाणतो थको राज मार्गने छांडीने विषम मार्गे जवाथी गाडानी धूरी (धौसरी) भांग्ये छते शोचना करे ? ॥ १४ ॥

अर्थः—ए० एणे पेहलने दृष्टांते प० पर्वतप मोटा पंथने वि० छांडिने । अ० अधर्म रूपिया कुमार्गने प० अंगीकार करिने । या० अद्धानि अ० परणने मु० मुये प० पछीनो थको । अ० धूरि अ० मागे छते प० जिमसो० पेहसोचेनीम ॥ १५ ॥

मूलः—एवं धम्मं विउक्कम्मं अहम्मं पडिवज्जिया।
बाले मच्चुमुहं पत्ते अक्खे भग्गे व सोयइ ॥ १५ ॥

गाथा १५ भावार्थः—ते धर्मरूप मोटा पंथने छांडीने अधर्म रूप विषम मार्ग अंगीकार करीने, धुरी भांगवाथी जेम गाडीवान झुरे तेम अज्ञानी मरण वखते झुरापो करे ॥ १५ ॥

अर्थः—त० तिवार पछेसे० ते बाल म० मरणने अ० छेहडे। बा० अज्ञानि सं० त्रास पामे। भ० मरणना भयथकी अ० अकाम मरणे म० मरइ। धू० धूर्त जूवारिते क० एकीदाइं जि० जितो थको जुआरि सोचेतिम ॥१६॥

मूलः—तओ से मरणन्तंमि बाले सन्तस्सई भया।
अकाममरणं मरई धुत्ते व कलिणा जिए ॥१६॥

गाथा १६ भावार्थः—जेम धुर्त जुवारी एक दावे जीत्यो झुरापो करे, तेम मरणना भयथी अकाम मरणे मरतां तेवार पछी बाल मरणने छेहे अज्ञानी मरता त्रास पामे के हा ! हुं मूवा पछी मारी शुं गती थशे इत्यादीक ॥ १६ ॥

अर्थः—ए० ए पूर्वेकथो अ० अकाम मरण। बा० बाल अज्ञानने कहुं तु० पदपूरणे प० कहुं। ए० ए कहाथी आगल स० सकाम मरण। पं० छेडेतने सु० सांभलि बे० मूजने कहिता मत ॥ १७ ॥

मूलः—एयं अकाममरणं बालाणं तु पवेइयं।

एत्तो सकाममरणं पण्डियाणं सुणेह मे ॥१७॥

गाथा १७ भावार्थः—ए पूर्वोक्त अज्ञानीने अकाम मरण कह्युं ? एथी आगळ पंडीतने सकाम मरण होय ते मुनने कहेतां मने सांभळो ? ॥ १७ ॥

अर्थः—प० पंडित मरणे ऽ० पणि न० पुन्यवंतमाणीनो पुन्य शब्द पण टांच धर्म जाणवो । ज० जिण मे० मे अ० ए मरणने अ० सांभल्यो छे जिण कहेवुं ॥ मरण केहवुं छे वि० विविध प्रकारनो चित्तनो प्रसन्नपणो छे जेहने अ० नथी यात जीवनो जेहने विषे । एहवुं केहने होइ । सं० संजतिनं होइ । गु० आत्मा वश छे जेहने तेहने ॥ १८ ॥

मूलः—मरणं पि सपुण्णाणं जहा मेऽयमणुस्सुयं ।
विप्पसन्नमणाघायं संजयाण धुमीमओ ॥१८॥

गाथा १८ भावार्थः—पंडीत मरण पुन्यवंत माणीने होय ते मरण ने में सांभल्युं छे ने हुं तुंज मने करीश ? ने मरणने विषे विविध प्रकारे चित्तनुं प्रसन्न पणुं भले जेमां जीवनी यात नथी एवुं मरण जेहने आत्मा वश होय एवा संयती (साधु) ने होय. ॥ १८ ॥

अर्थः—न० नहि इ० ए पंडित मरण स० सरखाइ वि० परमतिना द्रव्य लिंगने विषे । न० नहि इ० ए पंडित मरण स० सरखाय० गृहस्थने विषे केहने होइ ते कहे छे । ना० नाना प्रकारना सी० शील छे जेहने एवा अ० गृहस्थ आदिने होइ । वि० काश्यप गृत छे जेहने एवा वि० साधुने होय ते ने पंडित मरण होइ ॥१९॥

मूलः—न इमं सव्वेसु भिक्खूसु न इमं सव्वेसऽगारिसु ।
नाणासीला अगारत्था विसमसीलाय भिक्खुणो ॥१९॥

गाथा १९ भावार्थः—ए पंडित मर्ण सर्व साधुने न होय, तेमज ए पंडीत मर्ण सर्व ग्रहस्थने पण न होय, तो केहने होय ! तोके नाना (विविध) प्रकारना भला व्रतना धरणहार होय तेवा ग्रहस्थ (श्रावक)ने पंडित मरण होय तथा जेवो महा पुरुषोनी कठण वृत्ती आचार छे एहवा साधुने पंडीत मर्ण होय. ॥ १९ ॥

अर्थः—सं० छे ए० एकेक भि० द्रव्य भिक्षुथी। गा० गृहस्थ व्रतना धरणहार सं० संजमे करी उ० प्रधान। गा० गृहस्थ स० सयलाथकी । सा० ते साधु सं० संजम पंचमहाव्रते करि उ० प्रधान ॥ २० ॥

मूलः—सन्ति एगेहिंभिक्खूहिं गारत्था संजमुत्तरा ।
गारत्थेहिं य सव्वेहिं साहवो संजमुत्तरा ॥२०॥

गाथा २० भावार्थः—निन्हव (जिनेश्वरना वचनना उत्थापक) चारित्रथी भ्रष्ट थयेला एहवा तथा सन्यासी योगी बौध इत्यादिक अन्यतिर्थि थकी एकेक ग्रहस्थ देश विरति रूप श्रावक धर्म करी प्रधान (ऊत्तम) छे, अने ए ग्रहस्थ करतां सतरे भेदे संयमना पालनहार मुनिराज उत्तम छे. ॥ २० ॥

अर्थः—चीं० भगवा वस्त्र अ० अंगचर्य न० नग्नपणुं ज० जटाधारिपणुं सं० वस्त्र एकठा सांधी कीधी कंथा तेहनो परयू मु० मस्तक मूंडपणो एया० एतलावाना वि० पणि न० नहिता० त्राणसरण दुर्गती जाता जीवने । दु० जिननि आज्ञाविनां जाणे । प० प्रवज्यानें ग० पाम्यो पण त्राणसरण नहि ॥ २१ ॥

मूलः—वीराजिणं नगिणिणं जडीसंघाडिमुण्डणं ।
एयाणि वि न तायन्ति दुस्सीलं पडियागयं ॥२१॥

गाथा २१ भावार्थः—जे अन्यलिंगि केहेवा छे ते करे छे, भगवां वस्त्र भोरे छे, अथवा मृगचर्म भोंडे छे, अथवा नग्न रहे, जटा राखे, कंथा (हजार पीगरा दीसेन होय तेवुं वस्त्र) राखे, माथुं मुंडावे एवा द्रव्य लिंगी शुद्ध मार्गनी के शुद्ध आचारनी खबर विना अनाचारे प्रवर्ते छे, अने मात्र वेषनेज मोक्षनुं कारण माने छे तो ते अनाचारोना कारणथी दुरगती तदना भगवा वस्त्रादिक राखे नही भवांतर दुरगती जाय. ॥२१॥

अर्थः—पि० दुष्टत्वे आप्यो पींड आहार उ० लेवी ए० अर्थ दीपावाने अर्थे दू० माटा आचारनो धणी । न० ते नरकथकी न० नथूकाई । पि० आज्ञारहित साधू वा० अथवा लि० गुरुनी दुष्टत्व । वा० समुच्चये गु० दुष्टव्रतनो धरणहार क० जाए दि० देवलोकें ॥ २२ ॥

मूल—पिण्डोल एव दुस्सीले नरगाओ न मुच्चई ।
भिक्खाए वा गिहत्थे वा सुव्वए कम्मई दिवं ॥ २२ ॥

गाथा २२ भावार्थः—अने जे भीखु भीक्षा मागीने आनीरुचा चाखवे अने अणाचार तथा पापकर्मने वरजे नहीं तो एवा दुष्ट आचारनो धणी नर्कथी न छुटाय अने जे भीक्षाए करि जीवे एवा साधु अथवा गृ-हस्थ जो सुचीर्ण व्रतनो धरणहार होय ते देवलोकमां जाय. ॥ २२ ॥

अर्थः—प्र० गृहस्थे सा० समस्तव्रत रूप सामाइकनां अं० अंगने निसंकलपणो निरतिचारपणो

गने स० श्रधावंतयको का० कायाइ करि। फा० फरसे सेवे पो० पोषधने सेवे ते पोसय केहयो छे द्र० वेहु मुदी वदि प० पक्षनां। ए० एक रात्रिना पोषधनि न० न करे हा० हाणी रात्रि संहित दिननो पोसो ॥२३॥

मूलः—अगारिसामाइयङ्गाणि सड्ढी काएण फासए।
पोसहं दुहओ पक्खं एगरायं न हावए ॥ २३ ॥

गाथा २३ भावार्थः—हवे श्रावक केवा छे व्रत पाळीने देवलोके जाय तेकहे छे. जे दृढस्थो सामायक करे छे ते सामायक त्रण प्रकारनी छे, ए त्रण प्रकार कहे छे. १ समकीत ए सामायक २ श्रुत ए सामायक ३ देशवरति ए सामायक ॥ हवे ए त्रणना चोवीश अंग कहे छे, एटले प्रथम समकीत सामायकना आठ अंग छे. १ देवगुरु धर्ममां शंका न राखे एटले अरीहंत देवे आ प्रमाणे कर्युं छे ते हशे के नहीं इत्यादिक शंका न राखवी. २ अन्य एटले जैनधर्मथी बीजो धर्म बहु सारो छे. ३ धर्म करणी करी मनमां एम न राखे के आ करयुं तेनुं फळ मलशे के नहीं ते वितिगिछा. ४ मिथ्यात्वीनो खोटो धर्मनो महीमां देखीने जेमके मिथ्या-तिना गुरुने हाथी उपर बेसी घरे घरे पधरामणी थती देखी विचारे के आपडा धर्ममां आवुं कांइ नथी ए वहुं खोटुं छे एवुं समकिति जीव न विचारे. ५ जे कोइ धर्मी जीव होय तेना गुण कही संभळावे. ६ धर्म-थकी पडताने थिर करे, एटले मदद करे. ७ पोताना साधरमीने हितनो कारक होय. ८ जैनमार्गना ऊजोवन

सकल सामायकना आठ अंग जाणवा० हवे श्रुत सामायकनां आठ अंग कहे छे. ॥१॥ अर्थ ॥८॥ व्यंजनार्थ ॥६॥ व्यंजन ॥७॥ निरुवाण

॥ आठ सूत्र सामायिकना अंग जाणवा. हवे देशावरति सामायिकना आठ अंग कहे छे. पांच मुहूर्तनि पण मुहिए आठ चारित्रना अंग जाणवा, ए अंग प्रकारनुं सामायिकने तेना चौविश अंगने अभावंत श्रावक-का पाए करी शुद्ध रीते पाळे, अने अंधारा अजवाळा पक्षने विषे पोषध करे, तेमां एक रात्रिनी पण हानी न करे.॥२३॥

अर्थः—इ० एमे प्रकारे गि० ग्रहस्थ लिङ्ग करि स० सहित होइ। गि० गृहवासेऽपि वि० पणि सु० मुद्रानि करिए मु० मुक्त छ० छती ने प० चर्ममय प० दीपण मनुष्यने सांथि छे जेहने एहवा उदारिक। सरिर शरीर। ग० जाइ ज० देवलोके जश देवगइ करि सामान्य लोक ने जशलोक ॥ २४ ॥

मूलः—एवं सिक्खासमावन्ने गिहिवासे वि सुव्वए।
दविपवाओ मुच्चई गच्छे जक्खसलोगयं ॥ २४ ॥

गाथा २४ भावार्थः—जे गृहस्थ पण प्रकारना शीक्षावते करी सहीत होय ने गृहवासे वसतां छतां पण तेने मुद्रानि कहीये, अने ते चर्ममय (चामडे वींटेलुं) दीपण मनुष्यना सांधावालुं एवुं औदारिक (विणसवाना स्वभाववालुं) शरीर मूकीने देवलोकने विषे देवता थाय. ॥ २४ ॥

अर्थः—अ० इंए जे० जे मं० आथवनो करणहार भि० भावू। दो० बे गतिमांहि अ० अनेरि गति सिज्झेइ। ग० गर्व दु० दुरती प० गति गिथगति वा० अथवा। दे० देवता वा० समुचय अ० संभावनाइं म० मरणिक होइ॥२५॥

मूलः—अह जे संवुडे भिक्खू दोण्हं अन्नयरे सिया।
सव्वदुक्खपहीणे वा देवे वावि महिड्ढिए ॥ २५ ॥

गाथा २५ भावार्थः—हवे जे आश्रवना रुंधगहार एवा साधुने वे गतिमांही एक गति होय, कांतो सर्व दुःखथी रहीत एवी सिद्धगतिए जाय, अने जो शेषकर्म पाकी रहेल होय तो महर्धिक देवता थाय. ॥ २५ ॥

अर्थः—उ० सर्वथकी प्रधान वि० गयो छे मो० मिथ्यातमोहनी कर्म जेथी । जु० ज्योतिवंत ऽ० सूर्यमी देवलोकथी मांडि अनुत्तर विमान सुधी अनुक्रमे ॥ सं० व्याप्त संकीर्ण ज० देवे करि ए पांच विशेषणे करि विराजमान छे । आ० आवासविमांन एहवा विमानने विषे देवता होइ ज० जसवंत देव ॥ २६ ॥

मूलः—उत्तराइं विमोहाइं जुइमन्ताऽणुपुव्वसो ।
समाइण्णाइं जक्खेहिं आवासाइं जसंसिणो ॥ २६ ॥

गाथा २६ भावार्थः—जे पंडीत मर्णयाळो देवता थाय ते देवताओ केहवा छे सुधर्म देवलोकथी मांडी अनुक्रमे अनुत्तरविमानसुधी देवोए करी संपुर्ण भरेला छे ते देवताओ एक एकथी तेजने तेजे करी अधिक छे, वली अनुत्तरवासी जे देवो छे, तेने मिथ्यात मोहनी कर्म नथी अने जेना आवासो सर्व देवलोकथी जोतीवंत छे अने महायशना धणी ते देवताओ छे. ॥ २६ ॥

अर्थः—दि० दीर्घ आउपावंत १ । इ० रुद्धिवंत होइ । स० अतिदिपता का० काम मनवंछित रू० विक्रय रुपना करणहार अ० तत्काले उ० उपना होइ । सं० ते सरिषा सदाइ दिसे । जु० घणा अ० सूर्यनी कांतिथी अधिक प्प० कांति छे जेहनी एहवा देवताथाइ ॥ २७ ॥

मूलः-दीहाउया इड्ढिमन्ता समिद्धा कामरूविणो ।
अहुणोववन्नसंकासा भुज्जो अच्चिमालिप्पभा ॥ २७ ॥

गाथा २७ भावार्थः—ए तो ते देवता केवा होय ते कहे छे, दीर्घ लांबुं आयुष्यने वर्णवीर्यत होय, मनवंछीत वैक्रिय रुपना करणहार अने अतिदीपता तत्कालना उपन्या होय तेवा सदाय देखाय, सूर्यनी कांती थकी पण जेनी अधीककांती छे एवा देवता पंडीत वर्णवाळा थाय. ॥ २७ ॥

अर्थः—गा० ते पूर्वोक्त ठा० थानक विमान मले ग० जाय । सि० सिर्णीने सेवीने सं० संजमने त० तपने । भि० साधू पा० अथवा गि० गृहस्थ वा० पक्षपूरणे जे० जे कोइ सं० उपसम करे प० अतिशे शीतली भूत होइ एवा देवता थाइ ॥ २८ ॥

मूलः-ताणि ठाणाणि गच्छन्ति सिक्खित्ता संजमं तवं ।
भिक्खाए वा गिहित्थे वा जे सन्ति परिनिव्वुडा ॥ २८ ॥

गाथा २८ भावार्थः—ए पुर्वोक्त देवलोकादिक स्थानकने विषे संजम तपने सेवी उपशम भाव करी शीतळी भुत थएला एवा साधु अथवा गृहस्थ ते देवता थाय. ॥ २८ ॥

अर्थः—जे० धर्मगतनी गति ए सो० सांभलीने ते केहवा छे स० पूजाए करि सहित । सं० संजति यु० इंद्रि अने आत्मादत्त छे जेहने एवा संजतिनी सुंदर गतिने सांभलीने । न० न सं० पामे अस म० मरणने छेहडे । सी० सीलवंत चारित्रवंत । प० पंडित समकित दृष्टि होइ ते ॥ २९ ॥

गाथा २५ भावार्थः—हवे जे आश्रवना रुंधणहार एवा साधुने ये गतिमांही एक गति होय, कांतो सर्व दुःखथी रहीत एवी सिद्धगतिए जाय, अने जो शेषकर्म बाकी रहेल होय तो महर्धिक देवता थाय. ॥ २५ ॥

अर्थः—उ० सर्वथकी नवान वि० गयो छे मो० मिथ्यातमोहनी कर्म जेथी । जु० ज्योतिवंत ऽ० सूर्य-मां देवलोकथी मांडि अनुत्तर विमान सुधी अनूक्रमे ॥ सं० व्याप्त संकीर्ण ज० देवे करि ए पांच विशेषणे करि विराजमान छे । आ० आवासविमांन एहवा विमानने विषे देवता होइ ज० जसवंत देव ॥ २६ ॥

मूलः—उत्तराइं विमोहाइं जुइमन्नाऽणुपुव्वसो ।
समाइण्णाइं जक्खेहिं आवासाइं जसंसिणो ॥ २६ ॥

गाथा २६ भावार्थः—जे पंडीत मर्णवाळो देवता थाय ते देवताओ केवा छे सुधर्म देवलोकथी मांडी अ-नुक्रमे अनुत्तरविमानसुधी देवोए करी संपुर्ण भरेला छे ते देवताओ एक एकथी तेजने तेजे करी अधीक छे, वली अनुत्तरवासी जे देवो छे, तेने मिथ्यात्व मोहनी कर्म नथी अने तेना आवासो सर्व देवलोकथी जोतीवंत छे अने महायशना धणी ते देवताओ छे. ॥ २६ ॥

अर्थः—दि० दीर्घ आउषावंत १ । इ० रुद्धिवंत होइ । स० अतिदिपना का० काय मनवंछित रू० विक्रय रुपना करणहार अ० तत्काले उ० उपना होइ । सं० ते सरिषा सदाइ दिसे । जु० घणा अ० सूर्यनी कांतिथी अधिक प्र० कांति छे जेहनी एहवा देवताथाइ ॥ २७ ॥

अने तेनो अंत नथी, भवस्थिति, कायस्थिति, आयुष्य स्थिति आदिसहीत छे ने आयुष्य पूर्ण थाय ते वारे अंतसहित पण छे, ए प्रथम भेद कह्यो ॥ ११३ ॥

अर्थः-ति० त्रण अ० अहोरात्रिनी कही। उ० उत्कृष्टि ति० कही भगवंते। आ० आउषानी स्थिति ते० तेउकायनी अ० अंतर मुहुर्त ज० जघन्य स्थिति जाणवी ॥ ११४ ॥

मूलः-तिण्णेव अहोरत्ता उक्कोसेण वियाहिया ।
आउट्ठिई तेऊणं अन्तोमुहुत्तं जहन्निया ॥ ११४ ॥

गाथा ११४ भावार्थः-तेउकायना जीवनो स्थिति जघन्य अंतरमुहुर्तनी अने उत्कृष्टि त्रण अहो (दिवस) रात्रीनी ए बीजो भेद कह्यो ॥ ११४ ॥

अर्थः-भ० असंख्याता काल उ० उत्कृष्टि स्थिति जाणवी ॥ अ० अंतर मुहुर्त ज० जघन्य स्थिति जाणवी । का० कायस्थिति ते० तेउकायना जीवनी ॥ तं० ते अग्नी का०काय तु०पछी अ० अणमुकतो थको ॥११५॥

मूलः-असंखकालमुक्कोसं अन्तोमुहुत्तं जहन्नगं ।
कायट्ठिई तेऊणं तं कायं तु अमुञ्चओ ॥ ११५ ॥

गाथा ११५ भावार्थः-तेउकायना जीवनो कायस्थिति जघन्य अंतरमुहुर्त ने उत्कृष्टी असंख्याता काळनी, तेउकायना जीव तेउकायनी काया न मुकतो एटला काळसुधी तिहांज रहे, ए त्रीजो भेद कह्यो॥११५॥

अर्थः-अ० असंखकाळनी उ० उत्कृष्टी स्थितिकही । अ० अंतर मुहुर्त ज० जघन्य स्थिति ॥ वि०

अर्थः—हवे तेइंद्रि द्रव्यथी कहे छे ते० तेइंद्रि उ० वळी जे० जे जी० जीव ॥ दु० बे प्रकारे ते० ते प० कह्या भगवते । प० पर्याप्ता अ० अपर्याप्ता ए० एम ए० एकेकना दु० बे प्रकार पु० वळी जाणवा ॥ १३७ ॥

मूलः—तेइन्दिया उ जे जीवा दुविहा ते पकित्तिया ।
पज्जत्तमपज्जत्ता एवमेए दुहा पुणो ॥ १३७ ॥

गाथा १३७ भावार्थः—हवे तेइंद्रि द्रव्यथकी कहे छे, तेइंद्रि जीव बे प्रकारे कह्या, ते अपर्याप्ता ने पर्याप्ता, गुरु कहेता हवा हे शिष्य ! हू तुजने कहीश ते तुं सांभळ ? ? ? ॥ १३७ ॥

अर्थः—कु० कुंथुआ पि० कीडि उ० उद्देसा ए तेइंद्रिनी जाति । उ० उक्कलु उ० उद्देहि त० तेमज । त० तणाहार क० अन काष्ठहार ए तेइंद्रिनी जाति य० वळी मा० ए तेइंद्रि प० ए पण तेइंद्रि ॥ १३८ ॥

मूलः—कुन्थुपिवीलिउद्दं सा उक्कलुद्देहिया तहा ।
तणहारकट्ठहारग य मालूगपत्तहारगा ॥ १३८ ॥

गाथा १३८ भावार्थः—कुंथुवा, कीडी, उद्देशा नामे, उक्कलीया नामे तेमज उद्देही, तृणाहारी, काष्ठाहारी मालुगा नाम, पत्राहारी ॥ १३८ ॥

अर्थः—क० कपास ए तेइंद्रिनी जाति । अ० अडिमि जाय० ए पण तेइंद्रि दु० दुरू त० तेवार पछी स० ए ये तेइंद्रिनी जाति ॥ सदावर्ग० तेइंद्रि य० वळी गु० ए पण तेइंद्रि य० वळी । बोध० जाणवा । ई० ए तेइंद्रि ॥१३९॥

मूलः—कप्पासट्ठिमि जायन्ति दुगा तउसमिञ्जगा ।

छांडेथके स० पोतानी का० काया। ते० ते तेउकायना जीवने अ० तेउकायपणे उपजवानुं एटलुं आंतरुछे ॥ ११६ ॥

मूलः—अणन्तकालमुक्कोसं अन्तोमुहुत्तं जहन्नगं ।
विजढंमि सए काए तेऊजीवाण अन्तरं ॥ ११६ ॥

गाथा ११६ भावार्थः—पोतानी तेउकायनी काया छांडेयके तेउकायना जीवने फरी तेउकाय पामवानुं आंतरुं पडे तो जघन्य अंतरमुहुर्तनुं ने उत्कृष्टुं अनंता काळनुं, ए चोथो भेद कह्यो ॥ ११६ ॥

अर्थः—हवे भावथी कहेछे ए० ए अग्नीना भेद व०वर्णथकी चे० पुरणे गं० गंधथकी। र० रसथकी फा० फरसथकी। सं० सस्थानना दे० भेदथकी वा० पण। वि० भेदना स० सहस्र होय ॥ ११७ ॥

मूलः—एएसिं वण्णओ चेव गन्धओ रसफासओ ।
संठाणदेसओ वावि विहाणाइं सहस्ससो ॥ ११७ ॥

गाथा ११७ भावार्थः—हवे भावथी कहेछे, ए अग्नीना वर्णथकी, गंधथकी, रसथकी, स्पर्शथकी, संस्थान थकी, हजारो भेद थाय छे ॥ ११७ ॥

अर्थः—हवे वायुकाय द्रव्यथी कहेछे। दु० बे प्रकारे वा० वायुकायना जी० जीव उ० वली। सु० सुक्ष्म अने वा० बादर त०तेमज। प० पर्याप्ता अ० अने अपर्याप्ता। ए० एम ए० एकेकनां दु० बे प्रकार पु० वली जाणवा ॥११८॥

मूलः—दुविहा वाउजीवा उ सुहुमा बायरा तहा ।
पज्जत्तमपज्जत्ता एवमेए दुहा पुणो ॥ ११८ ॥

सदावरी य गुम्मी य वोधवा इन्दगाइया ॥ १३९ ॥

गाथा १३९ भावार्थः–कपास नामे, अठीमिंजा नामे ने दुकनामे, सणीजगा नामे, सदावरीय नामे, गुमीय नामे, इंडगाय नामे ॥ १३० ॥

अर्थः–इ० समोला आ० आदे देइने । अणे० घणे प्रकारे ए० ए आ० आदि देइने । हवे पेत्रथी कहेछे लो०लोकने ए० एक । दे०विभागे तेन्ते स०सघलाए ज० नथी स०सर्व लोकने विषे वि०कया भगवंते ॥१४०॥

मूलः–इन्दगोवगमाईया णेगहा एवमायओ ।
लोगेगदेसे ते सवे न सवत्थ वियाहिया ॥ १४० ॥

गाथा १४० भावार्थः–समोला नामे इत्यादि घणा प्रकारना तेइंद्री जीव छे, हवे क्षेत्रथी कहे छे, ते सर्व तेइंद्री जीव लोकना एक देशनेविषे छे, पण सर्व लोकने विषे नथी कह्या ॥ १४० ॥

अर्थः–हवे कालथी कहे छे । सं० तेइंद्री जीव प० छता आश्री अ० अनादि कालना छे । अ० आगले पण छेहडो नथी वि० य० वळी ॥ ठि० स्थिति प० आश्री सा० आदि सहितछे स० आउपो पुरो थाय तेवारे अंत सहित वि० य० पण छे ॥ १४१ ॥

मूलः–संतइं पप्प नाईया अपज्जवसिया वि य ।
ठिइं पडुच्च साईया सपज्जवसिया वि य ॥ १४१ ॥

गाथा १४१ भावार्थः–हवे कालथी चार प्रकारे कहेछे, तेइंद्रि जीव छता आश्री अनादिकालनाछे ने तेहनो छेडो

गाथा ११८ भावार्थः–हवे वायुकाय द्रव्यथी कहे छे, वायुकायना जीव ए प्रकार, ते सूक्ष्म ने बादर तेमज तेना पण बे भेद, अपर्याप्ता ने पर्याप्ता ॥ ११८ ॥

अर्थः–बा० बादर जे० जे वायुकायनां जीव उ० बली प० पर्याप्ता पं० पांच प्रकारे ते० ते प० आखी कया ॥ उ० रहिरहिने वाय प० वंटोलीयो आवे छे ते । प० मनोदयीने हेते जे मनवाय छे ते मनवाय गु० गुंजारसब्दकरे ते गुंजवाय । सु० थोडो थोडो वायते शुद्धवाय य० बली ॥ ११९ ॥

मूलः–वायग जे उ पज्जत्ता पंचहा ते पकित्तिया ।
उक्कलिया मण्डलिया घणगुञ्जा सुद्धवाया य ॥११९॥

गाथा ११९ भावार्थः–बादर वायुकाय पर्याप्ता जीव ते पांच प्रकारे कया ते १ ऊकलीयो वायु ते रही रहीने वाय, २ मंडलीयो वायु ते वंटोलीयो आवे छे ते, ३ मनोदयीने हेते जे मनवायु छे ते मनवायु, ४ गुंजारव शब्द करे ते गुंजावायु, ५ थोडो थोडो वाय ते शुद्ध वायु ॥ ११९ ॥

अर्थः–सं०तृणादिकवींजेठामे लेइनाखे ते संवर्तक वा०वायुछे वा०बली ॥ अने० घणे प्रकारे ए०ए भा० आदि देईने। ए० एकज प्रकारेछे सूक्ष्म वायु घणा प्रकारना नथी। सु० सूक्ष्म वायुना जीव त०ते वि० कया भगवंते ॥१२०॥

मूलः–संवट्टगवाते वा णेगहा एवमायओ ।
एगविहमणाणत्ता सुहुमा तत्थ वियाहिया ॥ १२० ॥

गाथा १२० भावार्थः–ए तृणादिक बींजे ठामे लेई नाखे ते संवर्तक वायु इत्यादिक घणा प्रकारना

पण नथी अने भव स्थिति, काय स्थिति ने आयुष्य स्थिति आश्री अंत सहित पणछे, ए प्रथम भेद कह्यो ॥१४१॥

अर्थः-ए० ओगण पंचास अ० अहो रात्रिनी उ० उत्कृष्टी स्थिति वि० कही भगवंते । ते० तेइंद्री जीवनी आ० आउषानी ठि० स्थिति । अ० अंतमुहुर्त्त ज० जघन्य स्थिति ॥ १४२ ॥

मूलः-एगूणवन्नहोरत्ता उकोसेण वियाहिया ।
तेइन्दियआउठिई अन्तोमुहुत्तं जहन्निया ॥ १४२ ॥

गाथा १४२ भावार्थः-तेइंद्री जीवना आयुष्यनी स्थिति जघन्य अंतरमुहुर्तनी ने उत्कृष्टी ४९ दिवसनी तिर्थंकरे कही छे, ए बीजो भेद कह्यो ॥ १४२ ॥

अर्थः-सं० संख्यातो काल उ० उत्कृष्टी स्थिति अ० अंतर मुहुर्त ज० जघन्य स्थिति ॥ ते० तेइंद्रिनी का० कायानी स्थिति । तं० ते का० काया तु० वली अ० अग मुहूर्तोथकी ॥ १४३ ॥

मूलः-संखिज्जकालमुकोसं अन्तोमुहुत्तं जहन्नगं ।
तेइन्दियकायठिई तं कायं तु अमुञ्चओ ॥ १४३ ॥

गाथा १४३ भावार्थः-तेइंद्री जीवनी कायस्थिति जघन्य अंतरमुहुर्तनी ने उत्कृष्टि संख्याता काळनी, तेइंद्री कायना जीव तेइंद्री काया न मुंके तो एटला काळ सुधी निरांत रहे, ए त्रीजो भेद कह्यो ॥ १४३ ॥

अर्थः-अ० अनंता कालनुं उ० उत्कृष्टुं आंतरु पडे ॥ अ० अंतर मुहुर्त ज० जघन्य आंतरु पडे ते० तेइंद्रिना जी० जीवने । अं० आंतरुं पडे तेइंद्री पामवानुं चे० वली वि० कयुं भगवंते ॥ १४४ ॥

वादर वायु कया छे ने सुक्ष्म वायुना जीवनो तो एकज प्रकार छे पण घणा प्रकार तिर्थंकरे कहेल नथी ॥ १२० ॥

अर्थः–सु० सुक्ष्म वायुना जीव । स० सर्वलोकमांहि व्यापी रया छे । लो० लोकने दे० एक विभागे
॥ ४७२ ॥ य० वळी वा० वादर वायुकायना जीव छे ॥ इ० ए विचार कया पछी का० कालनो । वि० विभाग तु० वळी ॥ ३६
ते० ते वायुकायनो चु० हुं कहिस च० चार प्रकारे ॥ १२१ ॥

मूलः–सुहुमा सव्वलोगम्मि लोगदेसे य बायरा ।
इत्तो कालविभागं तु तेसिं वुच्छं चउव्विहं ॥ १२१ ॥

गाथा १२१ भावार्थः–हवे क्षेत्रथी कहे छे, सुक्ष्म वायुकायना जीव सर्व लोकमांही व्यापी रया छे अने लोकना एक देशने विषे वादर वायुकायना जीव रया छे, ए क्षेत्रथी विचार कया पछी गुरु कहेता हवा हे शिष्य! वायुकायना जीवनो कालथकी चार प्रकारे विचार कहीशुं ॥ १२१ ॥

अर्थः–सं० छता प० आश्री अ० वायुकायना जीव अनादि कालना छे । अ० वायुकायना जीवनुं अंतपण नथी सदाहोय वि० य० वळी ठि० भवस्थितिकायस्थिति आउयानी स्थिति प० आश्री । सा० आदि सहित छे स० आउयुं पुर्णथाय तेवारे अंतसहित वि० य० पण छे ॥ १२२ ॥

मूलः–संतइं पप्प नाइया अपज्जवसिया वि य ।
ठिइं पडुच्च साईया सपज्जवसिया वि य ॥ १२२ ॥

गाथा १२२ भावार्थः–हवे कालथी विचार करे छे, छता आश्री वायुकायना जीव अनादिकालना ॥ ४७२ ॥

मूलः–अंणन्तकालमुक्कोसं अन्तोमुहुत्तं जहन्नगं ।
तेइन्दियजीवाणं अन्तरं च वियाहियं ॥ १४४ ॥

गाथा १४४ भावार्थः–पोतानी तेइंद्री कायनी काया छांडीयके तेइंद्रीकायना जीवने फरी तेइंद्रीकाय पामवानुं आंतरुं पडे तो जघन्य अंतरमुहुर्तनुं अने ऊत्कृष्टुं अनंताकाळनुं, ए चोथो भेद कह्यो ॥ १४४ ॥

अर्थः–हवे भावथी कहेछे । ए० ए तेइंद्रिना जीवना भेद । व० वर्णथकी चे० पुरुषे । गं० गंधथकी र० रसथकी फा० फरसथकी ॥ सं० संस्थानना दे० भेदथकी वा० पण वि० भेदना स० सहस्र ॥ १४५ ॥

मूलः–एएसिं वण्णओ चेव गन्धओ रसफासओ ।
संठाणदेसओ वावि विहाणाइं सहस्ससो ॥ १४५ ॥

गाथा १४५ भावार्थः–हवे भावथी कहे छे, तेइंद्री जीवना वर्णथी, गंधथी, रसथी, स्पर्शथी, संस्थानथी हजारो भेद थाय छे ॥ १४५ ॥

अर्थः–हवे चउरिंद्रि द्रव्यथी कहेछे । च० चउरिंद्रि उ० वळी जे० जे जी० जीव । दु० बेप्रकारे ते० ते प० कह्या भगवंते ॥ प० पर्याप्ता अने अ० अपर्याप्ता ए० एम ए० एकेकना दु० बे प्रकार पु०वळी जाणवा ॥ १४६ ॥

मूलः–चउरिन्दिया उ जे जीवा दुविहा ते पकित्तिया ।
पज्जत्तमपज्जत्ता एवमेए दुहा पुणो ॥ १४६ ॥

गाथा १४६ भावार्थः–हवे चौरेंद्री द्रव्यथी कहे छे, चौरेंद्री (काया, जीभ, नासिका, आंख फोस ते)

छे ने तेनो अंत पण नथी पहेले समय रहेले अने भवस्थिति, कायस्थिति, आयुष्यस्थिति आदि सहित छे अने आयुष्य पुरुं थाय ने आगी अंतनाहि पण छे, ए त्रण भेद कह्या ॥ १२२ ॥

अर्थः-नि०त्रण स० सहस्र ॥ वा० वरस ॥ उ० उत्कृष्टी भ० होय ॥ आ० आउखानी स्थिति वा० वायुकायनी अं० अंतरमुहुर्त ज० जघन्य स्थिति जाणवी १२३ ॥

मूलः-तिण्णेव सहस्साइं वायाणुक्कोसिया भवे ।
आउट्ठिई वाऊणं अन्तोमुहुत्तं जहन्निया ॥ १२३ ॥

गाथा १२३ भावार्थः-वायुकायना जीवनी स्थिति जघन्य अंतरमुहुर्तनी अने उत्कृष्टि ३००० हजार वर्षनी जाणवी, ए बीजो भेद कह्यो ॥१२३॥

अर्थः-अ० असंख्याता काळनी उ० उत्कृष्टि स्थिति ॥ अ० अंतर मुहुर्त ज० जघन्य स्थिति । का०काय ठि० स्थिति वा० वायुकायनी ॥ तं० ते का० वायुकायनी काया तु० वळी अ० अमुक्तोपको ॥ १२४ ॥

मूलः-असंखकालमुक्कोसं अन्तोमुहुत्तं जहन्नगं ।
कायट्ठिई वाऊणं तं कायं तु अमुञ्चओ ॥ १२४ ॥

गाथा १२४ भावार्थः-वायुकायना जीवनी कायस्थिति जघन्य अंतरमुहुर्तनी ने उत्कृष्टि असंख्याताकाळनी, वायुकायना जीव वायुकायनी काया न मूके तो एटला काळ सुधी निरंतर रहे, ए बीजो भेद कह्यो ॥१२४॥

अर्थः-भ० असंखकालं उ० उत्कृष्टुं आंतरु पडे ॥ अ० अंतर मुहुर्त ज० जघन्य स्थिति ॥ वि०

ओ० एक स० पोतानी । का० काया । वा० वायुकायना जी० जीवने । अ० वायुकायपणे उपजवानुं एटलुं आंतरु पडे ॥ १२५ ॥

मूलः–अणन्तकालमुक्कोसं अन्तोमुहुत्तं जहन्नगं ।
विजढंमि सए काए वाऊजीवाण अन्तरं ॥ १२५ ॥

गाथा १२५ भावार्थः–पोतानी वायुकायनी काया छांडेथके, वायुकायना जीवने फरी वायुकाय पामवानुं आंतरुं पडे तो जघन्य अंतरमुहुर्तनुं अने उत्कृष्टु अनंताकाळनुं, ए चोथो भेद कह्यो ॥ १२५ ॥

अर्थः–ए० ए वायुकायना भेद व० वर्ण थकी चे० पूरणे । गं० गंध थकी र० रस थकी । फा० फरसथकी । सं० संस्थानना दे० भेदथकी वा० पण । वि० भेदना स० सहस्र होय ॥ १२६ ॥

मूलः–एएसिं वण्णओ चेव गन्धओ रसफासओ ।
संठाणदेसओ वावि विहाणाइं सहस्समो ॥ १२६ ॥

गाथा १२६ भावार्थः–हवे भावथी कहे छे, ए वायुकायना वर्णथकी, गंधथकी, रसथकी, स्पर्शथकी, संस्थानथकी हजारो भेद छे, ए तेउकाय ने वायुकायने वसना भेदमां गजब छे, ते ए बे चाले छे ने आखो छे, बाकी तो स्थावरज छे ॥ १२६ ॥

अर्थः–ओ० मोटा त० त्रस जीव बे इंद्रियवाळीज जे० जे उ० कहीं ॥ च० चार प्रकारे ते० ते प० कह्या भगवंते । बे० बेइंदि ॥ ते० तेइंदि ॥ च० चौरिंदि । पं० पंचेंदि पे० पूरणे ॥ १२७ ॥

मूलः–ओराला तसा जे उ चउहा ते पकित्तिया ।

चउरिंद्रिनी जाणवी आ० ए आदि देइने ॥ १४९ ॥

मूलः—अचेहिले माहए अच्छिरोडए विचित्ते चित्तपत्तए ।
उहिंजलिया जलकारी य नीया तन्तवगाइया ॥ १४९ ॥

गाथा १४९ भावार्थः—अच्छीलनामे, मागधनामे, रोडनामे, विचित्रनामे, ऊइजनीया नामे, जळकारी नामे, नियानामे, तवकानामे ॥ १४९ ॥

अर्थः—इ० एणे प्रकारे च० चउरिंद्रि ए० ए पुवें कह्या ते ॥ अणे० घणे प्रकारे ए० ए ते आ० आदि देइने ॥ हवे क्षेत्रथी कहे छे लो० लोकना ए० एक देस विभागने विषे । ते० ते स० सघलाए चोरिंद्रि न० नथी स० सर्व लोकने विषे वि० कह्या भगवंते ॥ १५० ॥

मूलः—इय चउरिन्दिया एए णेगहा एवमायओ ।
लोगेगदेसे ते सवे न सवत्थ वियाहिया ॥ १५० ॥

गाथा १५० भावार्थः—इत्यादिक घणा प्रकारना चौरेंद्री जीव तिर्थंकरे कह्या छे, हवे क्षेत्रथी कहे छे, ते सर्व चौरेंद्री जीव लोकना एक देशनेविषे रह्या छे, पण सर्व लोकनेविषे तिर्थंकरे कह्या नथी ॥ १५० ॥

अर्थः—हवे चउरिंद्रि कालथी कहे छे सं० चउरिंद्रि जीव छता प० आश्री अ० अनादि कालना छे ॥ अ० आगमी काले छेदटो वि० य० पण नथी ॥ ठि० स्थिति प० आश्री सा० आदि सहित छे स० आउपो पुरो थाय तेवारे अंत सहित वि० य० पण छे ॥ १५१ ॥

मूलः–आराला तसा जे उ चउद्दा ते पकित्तिया ।
वेइन्दिय–तेइन्दिय–चउरो–पञ्चिन्दिया चेव ॥ १२७ ॥

गाथा १२७ भावार्थः–बीजा बेइंद्रियादिक त्रस जीव चार प्रकारे कह्या छे ते, १ बेइंद्री, २ तेइंद्री, ३ चौरिंद्री, ४ पंचेंद्री. ए चार भेद जाणवा ॥ १२७ ॥

अर्थः–वे० बेइंद्रि उ० वली जे० जे जी० जीव दु० बे प्रकारे बे भेदे ने० ते प० कह्या भगवंते ॥ प० पर्याप्ता । अ० अपर्याप्ता ए० एम ए० एकेकना दु० बे प्रकार पु० वली जाणवा ॥ १२८ ॥

मूलः–वेइन्दिया उ जे जीवा दुविहा ते पकित्तिया ।
पज्जत्तमपज्जत्ता एवमेए दुहा पुणो ॥ १२८ ॥

गाथा १२८ भावार्थः–हवे बेइंद्री द्रव्यथी कहे छे, बेइंद्री (कागा ने जीभ होय ते) जीव बे प्रकारे कह्या ते, अपर्याप्ता ने पर्याप्ता, गुरु कहेता हवा हे शिष्य ? ते बेइंद्रीना भेद हुं कहीश? ते तुं सांभळ !॥१२८॥

अर्थः–कि० कृमीया विष्टामांहि उपजे ते सो० सोमंगलनामा बेइंद्रि चे० पुरजे । अ० अलसीया मा० जे पगा कांटा एकठा करीने भुगली सरिखु पर निपाइ ते माहे. रहे तेह । मा० वांसना सरिखा मुख छे जेहनातेत्रासीमुहा य० वली सि० छीप सं० संख स० नान्हा संखला अथवा छीपली जाणे । त० तेमज ॥१२९॥

मूलः–किमिणो सोमङ्गला चेव अलसा माइवाहया ।
वासीमुहा य सिप्पीया सङ्खा सङ्खणगा तहा ॥ १२९ ॥

गाथा १२९ भावार्थः–विद्यामांहि उपजे ते करसीया, सोमंगळ नामे एहवे भलसीया, एक वना कांटा एकठा करीने धुंगळी सरीखुं घर वनावीने ते मांही रहे ते. जेहवुं वांसळी सरिखुं मुख छे ते वांसीमुहा कहीए, छीप, शंख, तेमज नाना शंखला अथवा नानी छीप ॥ १२९ ॥

अर्थः–पल्लो० पलुक्ष वे इंद्रीजाति । अ० ए पण वेइंद्रिनी जाति चे० पुरुषे । त० तेमज व० वली व० होय ॥ ज० जलो जा० वेइंद्रीनी जाति चे० पुरुषे । चं० चंदणीया व० वली त० तेमज व० वली ॥ १३० ॥

मूलः–पल्लोया णुल्लया चेव तहेव य वराउगा ।
जलूगा जालगा चेव चन्दणा य तहेव य ॥ १३० ॥

गाथा १३० भावार्थः–काष्ट कीटी नामे भुणनी जाती (काष्टने खात ते), कोडा.जलो, वृक्ष स्कंधमांय तेमज चांदणीया नामे ॥ १३० ॥

अर्थः–इ० एणे प्रकारे वे० वेइंद्रि ए० ए पुर्वे कह्या ते अ० बीजे प्रकारे ए० ए कह्या ते आ० आदि देइने ॥ हवे पेत्रथी कहेछे लो०लोकने ए०एक दे०विभागेछे ते० ते स० सर्व त०त्रणी स० संख्या वेइंद्रि वि० कह्या ॥ १३१ ॥

मूलः–इइ वेइन्दिया एए णेगहा एवमायओ ।
लोगेगदेसे ते सव्वे न सव्वत्थ वियाहिया ॥ १३१ ॥

गाथा १३१ भावार्थः–ए पूर्वोक्त घणा प्रकारना वेइंद्री जीवछे ए द्रव्यथी कह्या, हवे क्षेत्रथी कहेछे, ते सर्व वेइंद्री जीव लोकना एक देश (विभाग) ने विषे कह्या छे पण सर्व लोकने विषे वेइंद्री जीव नथी कह्या ॥ १३१ ॥

गाथा १५३ भावार्थः—चौरिंद्री जीवनी कायस्थिति जघन्य अंतरमुहूर्तनी ने उत्कृष्टी संख्याता काळनी, अल्प०

चौरिंद्रीकायना जीव चौरिंद्रीकाय न मूके तो एटला काळ सुधी निरांतर रहे. ए त्रीजो भेद कह्यो ॥ १५३ ॥

अर्थः—अ० अनेनाकाळ उ० उत्कृष्टो आंतरु पडे । अ० अंतर मुहूर्त ज० जघन्य आंतरु पडे । च० ॥ ३३ ॥

चउरिंद्रि जी० जीवने अं० आंतरु पडे चउरिंद्रिपणुं पामवानुं च० ए उत्कृष्टु प्रमाण वि० कर्युं भगवंते ॥१५४॥

मूलः—अणन्तकालमुक्कोसं अन्तोमुहुत्तं जहन्नगं ।
चउरिन्दियजीवाणं अन्तरं च वियाहियं ॥ १५४ ॥

गाथा १५४ भावार्थः—पोताने चौरिंद्रीकायनी काया छोडये थके चौरिंद्रीकायना जीवने फरी चौरिंद्री-

काय पामवानुं आंतरु पडे तो जघन्य अंतरमुहूर्तनुं अने उत्कृष्टुं अनेनाकाळनुं. ए चोथो भेद कह्यो छे ॥१५४॥

अर्थः—हवे भावर्थी कहे छे ए० ए चउरिंद्रि जीवना भेद व० वर्णथकी चे० पुरगे । गं० गंधथकी

र० रसथकी फा० फरस थकी सं० संस्थानना दे० भेदथकी बां० पण । वि० भेदना स० सहस्त्रछे ॥१५५॥

मूलः—एएसिं वण्णओ चेव गन्धओ रसफासओ ।
संठाणदेसओ वावि विहाणाइं सहस्ससो ॥ १५५ ॥

गाथा १५५ भावार्थः—हवे भावथी कहे छे, ए चौरिंद्री जीवना वर्णथी, गंधथी, रसथी, स्पर्शथी सं- ॥४७०॥

स्थानथी इत्यादी भेद थाय छे ॥ १५५ ॥

अर्थः-रत्ने काळथी कहेछे। सं० वेदि छतां ॥ प० आथी अ० अनादि कालनांछे। अ० आगल छेदडो नथी। वि० य० पण ति० स्थिति प० आथी सा० आदि सहित। स० आउपुं पूरुवाय तेवारे अंत सहित वि० य० पणछे ॥१३२॥

मूलः-संतइं पप्प नाईया अपज्जवसिया वि य।
ठिइं पडुच्च साईया सपज्जवसिया वि य ॥ १३२ ॥

गाथा १३२ भावार्थः-रत्ने काळथी चार प्रकारे कहेछे, वेंद्री जीव तना आथी अनादिकालनांछे, छेडो पण नथी अने भवस्थिति, कायस्थिति, भाणुष्यस्थिति आथी आदी सहीतछे तेपन अंतसहित पणछे, ए प्रथम भेदकह्यो॥१३ ॥

अर्थः-बा० बरस बा० बार बरसनी आउषानी स्थिति चे० बटी ॥ उ० उत्कृष्टी वि० कही भगवंते। बे० बे इंद्रिना आ० आउषानी ठि० स्थिति। ज० अंतर मुहूर्त ज० जघन्य स्थिति ॥ १३३ ॥

मूलः-बासाइं बारसा चेव उक्कोसेण वियाहिया।
बेइन्दियआउट्ठिई अन्तोमुहुत्तं जहन्निया ॥ १३३ ॥

गाथा १३३ भावार्थः-बेंद्री जीवना आयुष्यनी स्थिति जघन्य अंतरमुहुर्तनी अने उत्कृष्टी १२ वर्षनी, ए बीजो भेद कह्यो ॥ १३३ ॥

अर्थः-सं० संख्याता का० काळनी उ० उत्कृष्टी ॥ अ० अंतर मुहूर्त ज० जघन्य स्थिति बे० बेंद्रि जीवने का० बेंद्रिनी काया ठि० स्थिति। न० ने पे इंद्रिनी का० काया तु० पछी अ० अणुहुत्तोयरको ॥१३४॥

मूलः-संखिज्जकालमुक्कोसं अन्तोमुहुत्तं जहन्नगं।

ने० नारकी १ ॥ ति० तिर्यंच २ य० पण म० मनुष्य ३ ॥ दे० देवता ४ य० वली आ० कह्या भगवंते ॥१५६॥

मूलः—पंचिन्दिया उ जे जीवा चउविहा ते वियाहिया ।
नेरइय तिरिक्खा य मणुया देवा य आहिया ॥१५६॥

गाथा १५६ भावार्थः—जे पचेंद्री (ते काया, जीभ, नासीका, आंख, कान होय ते) जीव ते चार प्रकारे कह्या १ नारकी, २ तिर्यंच, ३ मनुष्य, ४ देवता ॥ १५६ ॥

अर्थः—ने० नारकी स० सात प्रकारे कहेछे ॥ पु० रत्न प्रभादिक पृथवी स० सातने विषे भ० होय। र० रत्नप्रभा १ ॥ स० शक्करप्रभा २ । वा० वालुप्रभा ३ य० वली ॥ आ० फरी भगवंते ॥ १५७ ॥

मूलः—नेरइया सत्तविहा पुढवीसू सत्तसू भवे ।
रयणाभ सक्कराभा वालुयाभा य आहिया ॥ १५७ ॥

गाथा १५७ भावार्थः—हवे नारकी द्रव्यथी कहे छे, रत्नप्रभादीक सात पृथ्वीने विषे सात प्रकारे नारकी छे तेहना नाम कहे छे ? रत्नप्रभा, २ शक्करप्रभा, ३ वालुप्रभा ॥ १५७ ॥

अर्थः—पं० पकप्रभा ४ । धू० धुमप्रभा ५ । त० तमा पृथवी ६ त० तमतमा नामे पृथवी ७ । त० तेमज । इ० एणे प्रकारे ने० नारकी प० ए स० सात प्रकारे प० कह्या भगवंते ॥ १५८ ॥

मूलः—पङ्कभा धूमाभा तमा तमतमा तहा ।
इइ नेरइया एए सत्तहा परिकित्तिया ॥ १५८ ॥

वेइन्दियकायठिई तं कायं तु अमुञ्चओ ॥ १३४ ॥

गाथा १३४ भावार्थः–बेइंद्री जीवनो कायस्थिति जघन्य अंतर्मुहुर्तनी अने ऊत्कृष्टी संख्याता काळनी, बेइंद्री कायना जीव बेइंद्रीनी काया न मुके तो एटला काळ सुधी तिहांज रहे, ए त्रीजो भेद कह्यो ॥१३४॥

अर्थः–अ० अनंता का० कालनुं उ० उत्कृष्टुं आंतरु पडे अ० अंतर मुहुर्त ज० जघन्य स्थिति । बे० बे इंद्रि जी० जीवने । अ० बे इंद्रिपणुं पामवानुं एटलुं आंतरु पडे च० वळी वि० कहुं वीतरागे ॥ १३५ ॥

मूलः–अणन्तकालमुक्कोसं अन्तोमुहुत्तं जहन्नगं ।

वेइन्दियजीवाणं अन्तरं च वियाहियं ॥ १३५ ॥

गाथा १३५ भावार्थः–पोतानी बेइंद्री कायनी काया छांडयेथके बेइंद्री कायना जीवने फरी बेइंद्री काय पामवानुं आंतरुं पडे तो जघन्य अंतरमुहुर्तनुं अने ऊत्कृष्टुं अनंताकाळनुं, ए चोथो भेद कह्यो ॥ १३५ ॥

अर्थः–हवे भावथी कहे छे । ए० ए बेइंद्री जीवना भेद व० वर्ण थकी चे० पुरगे । गं० गंधथकी र० रसथकी । फा० फरस थकी । सं० संस्थानना दे० भेदथकी वा०वळी ॥ वि० भेदना स० सहस्र होय ॥१३६॥

मूलः–एएसिं वण्णओ चेव गन्धओ रसफासओ ।

संठाणदेसओ वावि विहाणाइं सहस्ससो ॥ १३६ ॥

गाथा १३६ भावार्थः–हवे भावथी कहे छे, ए बेइंद्री जीवना वर्णथकी, गंधथकी, रसथकी, स्पर्शथ-

॥ ४

गाथा १५८ भावार्थः–४ पंकप्रभा, ५ धुम्रप्रभा, ६ तमप्रभा, ७ तमतमाप्रभा, ए सात प्रकारनी नारकीकही ॥१५८॥

अर्थः–हवे नारकी पेत्रथी कहे छे लो० लोकने ए० एक दे०देसे विभागे । ते० ते स०सर्व नारकी वि० कया ए० ए कया पछी का० कालनो वि० विभाग ते० नारकीनो वि० कहीशुं ॥ च० च्यार वि० प्रकारे ॥१५९॥

मूलः–लोगस्स एगदेसम्मि ते सवे वियाहिया ।
एत्तो कालविभागं चउविहा ते वियाहिया ॥ १५९ ॥

गाथा १५९ भावार्थः–हवे नारकी क्षेत्रथी कहेछे, ते सर्व नारकी लोकना एक देशने विषे रह्याछे, पण सर्व लोकने विषे नथी कया, हवे गुरु कहेता हवा हे शिष्य ? ते नारकीना काळनो विचार चार प्रकारे हुं कहीश ॥१५९॥

अर्थः–सं० नारकी छता प० आश्री अ० अनादि कालना छे ॥ अ० नारकीना जीवनुं अंत नथी सदाय हशे वि० य० वळी । ठि० भव स्थिति काय स्थिति आउपानी स्थिति । प० आश्री सा० आदि सहित छे ॥ स० आउपो पुरु थाय तेवारे अंत सहित वि० य० वळी पण छे ॥ १६० ॥

मूलः–संतइं पप्प नाईया अपज्जवसिया वि य ।
ठिइं पडुच्च साईया सपज्जवसिया वि य ॥ १६० ॥

गाथा १६० भावार्थः–हवे नारकी काळथी कहेछे, छतां आश्री नारकी अनादी काळनाछे, नारकीना जीवनो अंत पण नथी एटले सदाय हशे अने भवस्थिति, कायस्थिति ने आयुष्य स्थिति आश्री आदी सहीत छे ने आयुष्य पूर्ण थाय तेवारे अंत सहीत पण छे, ए प्रथम भेद कह्यो ॥ १६० ॥

मूलः—तओ काले अभिप्पेए सड्ढी तालिसमन्तिए ।
विणएज्ज लोमहरिसं भेयं देहस्स कंखए ॥ ३१ ॥

गाथा ३१ भावार्थः—ए अंग पर्व माहेलुं एक गिनार्थ गुरुनी समीपे जेवो हर्ष दीक्षा अवसरे त्या संलेखणा अवसरे हतो तेवोज हर्ष मरण समीपे धारण करी अहो मारुं मृत्यु थशे एवुं रोम कंपीतपणुं निवर्तावी अंग योग हीना नहीं करतां मुधुरा तजी शरीरना विनाशने इच्छे ॥ ३१ ॥

अर्थः—अ० इवे का० मरणकाल सं० आवे छते । आ० समस्त प्रकारे घा० घातय न इच्छतो थको । म० कारमण शरीरने । स० सकाय मरणे म० मरे । ति० त्रिन मरण मांहे अंगित मरण १ पादोपगमन २ भक्तपच्चक्खाणमरण ३ । अ० अनेरुंए कोइ मरणे मु० साधू इ० इम वे० हुं कहुं छुं ॥३२॥

मूलः—अहकालम्मि संपत्ते आघायाय समुस्सयं ।
सकाममरणं मरइ तिण्हमन्नयरं मुणि ॥ ३२ ॥ त्ति बेमि

इति अकाम सकाम पणिज्जं नामा पंचमं अध्ययनं समत्तं ॥ ५ ॥

गाथा ३२ भावार्थः—इवे पर्व काळे आवतायो औदारिक तथा कार्मण शरीरने इच्छतो थको त्रिविधे करी चार आहारनुं पच्चक्खान करे ते भक्त पच्चक्खान पर्व (एनी अंदर हवा फरवाने वास्ते अमुक कंद-

मूलः—तेसिं सोच्चा सपुज्जाणं संजयाण वुसीमओ ।
न संतसन्ति मरणन्ते सीलवन्तो बहुस्सुया ॥ २९ ॥

गाथा २९ भावार्थः—पुज्य एटले आचार्यादिक तेहनी समीपे एवा धर्मिनी भली गति सांभलीने जेहना आत्माने इंद्रीयो वश छे ने चारीत्रने समकितवंत बहु श्रुत पंडीत होय तेवा संयति मरणने अंते त्रास न पामे (एटले मरणथी बिहे पण नही.) ॥ २९ ॥

अर्थः—तु० तोलिने पारखो करिने वि० विशिष्टभला पंडित मरणने आ० अंगीकार करिने । द० ध० दस विधियाते धर्ममांहि । स० क्षेमारूप धर्मे करि ॥ वि० विसेषे प्र० प्रसन्न मे० बुधिवंत मर्यादावंत अ० आत्माने त० तथा भू० भूत मोह उपसमावे करि ॥ ३० ॥

मूलः—तुलिया विसेसमादाय दयाधम्मस्स खन्तिए ।
विप्पसीएज्ज मेहावी तहाभूएण अप्पणा ॥ ३० ॥

गाथा ३० भावार्थ—बाळ मर्णथी पंडीत मर्ण भलुं जाणीने पंडीत मरणने ग्रहीने दयावंतने दश विधि यति धर्ममां क्षमारूप धर्मे करी मोहने उपशमावी कषायरूप कर्दम (कादव) टाली प्रशांतपणुं अंगीकार करी मर्यादाने बुद्धिवंत मरण आवे थके व्याकुल चित्त पणे करी रहित वर्त्ते ॥ ३० ॥

अर्थः—त० तिवार पछीका० मरणकालने विषे अ० मननां योगनेहिण अणकर्ता छता एटले मनना योगहिणा न करे । स० श्रद्धावंत ता० तेहवो जेहवो मवर्जा लेवाने समे हस्त हतो तेहवो साकल सहे संयमक

अर्थः-सा० सागरोपम ए० एक तु० वळी । उ० उत्कृष्ट स्थिति वि० कही भगवंते । प० पहेली नरकने विषे ज० जघन्य स्थिति ॥ द० दस वा० वरस स० एटले दस सहस्रनी छे ॥ १६१ ॥

मूलः—सागरोवममेगं तु उक्कोसेण वियाहिया ।
पढमाए जहन्नेणं दसवाससहस्सिया ॥ १६१ ॥

गाथा १६१ भावार्थः-पहेली नरकनेविषे आयुष्यस्थिति जघन्य १०हजार वर्षनी अने उत्कृष्टी एकसागरोपमनी॥१६१॥

अर्थः-वि० प्रथ सा० सागरोपमनुं आ० आउषुं ॥ उ० उत्कृष्टुं वि० कयुं भगवंते । दो० बीजी न रके ज० जघन्य । ए० एक तु० वळी सा० सागरोपमनुं ॥ १६२ ॥

मूलः—तिण्णेव सागराऊ उक्कोसेण वियाहिया ।
दोच्चाए जहन्नेणं एगं तु सागरोवमं ॥ १६२ ॥

गाथा १६२ भावार्थः-बीजी नरके स्थिति जघन्य एक सागरोपमनी ने उत्कृष्टी त्रण सागरोपमनी ॥१६२॥

अर्थः-स० सात सा० सागरोपमनुं आ० आउषुं । उ० उत्कृष्टुं वि० कयुं भगवंते स० त्रीजी नरकने विष ज० जघन्य । वि० प्रथ सा० सागरोपमनुं आउषुं ॥ १६३ ॥

मूलः—सत्तेव सागराऊ उक्कोसेण वियाहिया ।
तइयाए जहन्नेणं तिन्नेव सागरोवमा ॥ १६३ ॥

गाथा १६३ भावार्थः-त्रीजी नरके आयुष्य स्थिति जघन्य त्रण सागरोपमनी ने उत्कृष्टी सातसागरोपमनी ॥१६३॥

अर्थः-द० दस सा० सागरोपमनुं आ० आउषुं उ० उत्कृष्टुं वि० कलुं भगवंते च० चोथी नरके ज० जघन्य स० सात सा० सागरोपमनुं ॥ १६४ ॥

मूलः-दससागरोवमाऊ उक्कोसेण वियाहिया ।
चउत्थीए जहन्नेणं सत्तेव सागरोवमा ॥ १६४ ॥

गाथा १६४ भावार्थः-चोथी नरके आयुष्य स्थिति जघन्य सात सागरोपमनी ने उत्कृष्टी १० सागरोपमनी ॥१६४॥

अर्थः-स० सतर सा० सागरोपमनुं आ० आउषुं । उ० उत्कृष्टुं वि० कलुं भगवंते ॥ पं० पांचमी नरके ज० जघन्यं द० दस चे० वळी सा० सागरोपमनुं आउषुं ॥ १६५ ॥

मूलः-सत्तरससागराऊ उक्कोसेण वियाहिया ।
पञ्चमाए जहन्नेणं दस चेव सागरोवमा ॥ १६५ ॥

गाथा १६५ भावार्थः-पांचमी नरके आयुष्य स्थिति जघन्य १० सागरोपमनी, उत्कृष्टी १७ सागरोपमनी ॥१६५॥

अर्थः-बा० बावीस सा० सागरोपमनुं आ० आउषुं ॥ उ० उत्कृष्टुं वि० कलुं वीतरागे छ० छठीनरके ज० जघन्य स० सतर सा० सागरोपमनुं आउषुं ॥ १६६ ॥

मूलः-बावीससागराऊ उक्कोसेण वियाहिया ।
छट्ठीए जहन्नेणं सत्तरस सागरोवमा ॥ १६६ ॥

गाथा १६६ भावार्थः-छठी नरके आयुष्य स्थिति जघन्य १७ सागरोपमनी

[illegible] , [illegible] ने [illegible] विचार चार प्रकारे कहीश ॥१८८॥

अर्थः-हवे चेचर थाथी कहे छे सं० ते पंखीना आयुनो विचार चार प्रकारे कहीश ॥१८८॥ [illegible] १० प० पण नथी । ति० स्थिति प० आथी सा० आदि सहित छे । स० आउयुं पुरु थाय तेवारे अंत सहित वि० प० पण छे ॥ १८९ ॥

मूलः-अंतइं पप्प नाईया अवज्जवसिया वि य ।
ठिइं पडुच्च साईया सपज्जवसिया वि य ॥ १८९ ॥

गाथा १८९ भावार्थः-हवे चेचर आथी कहेछे, खचरा आथी ए पंखी अनादी काळना छे, तेनो अंत पण नथी अंते भवस्थिति, कायस्थिति, आयुष्यस्थिति आथी आदी सहीत छे अने आयुष्य पुर्ण थाय, तेवारे अंत सहीत पण छे, ए प्रथम भेद कह्यो ॥ १८९ ॥

अर्थः-प० पल्योपम भा० भाग अ० असंख्यातमे इ० ए भ० होय ॥ आ० आउषानी ठि० स्थिति ख० एकनी अ० अंतरमुहुर्त ज० जघन्य स्थिति ॥ १९० ॥

मूलः-पलिओवमस्स भागो असंखेज्जइमो भवे ।
आउठिई खहयरगं अन्तोमुहुत्तं जहन्निया ॥ १९० ॥

गाथा १९० [illegible] चेचर पंखीनी उत्कृष्टनी स्थिति जघन्य अंतर मुहुर्तनी अने उत्कृष्टी पल्योपमनी [illegible] ॥ १९० ॥

अर्थः–ते० तेत्रीस सा० सागरोपमनुं आ० आउषुं ॥ उ० उत्कृष्टुं वि० कयुं भगवंते स० सातमी नरके न० जघन्य । बा० बावीस सा० सागरोपमनुं ॥ १६७ ॥

मूलः–तेत्तीससागराऊ उक्कोसेण वियाहिया ।
. सत्तमाए जहन्नेणं बावीसं सागरोवमा ॥ १६७ ॥

गाथा १६७ भावार्थः–७ मी नरके आयुष्य स्थिति जघन्य २२ सागरोपमनी ने उत्कृष्टी ३३ सागरोपमनी, ए बीजो भेद कह्यो ॥ १६७ ॥

अर्थः–जा० जेटला चे० पूरणे य० वली आ० आउषानो ठि० स्थिति । ने० नारकीनी वि० कही । सा० तेहज ने० ते नारकीने का० काय ठि० स्थितिहोय ज० जघन्य भने उ० उत्कृष्टि काय स्थिति भ० होय ॥ १६८ ॥

मूलः–जा चेव य आउठिई नेरइयाणं वियाहिया ।
सा तेसिं कायठिई जहन्नुक्कोसिया भवे ॥ १६८ ॥

गाथा १६८ भावार्थः–नारकीनी जघन्य उत्कृष्टी आयुष्य स्थिति कही छे तेटली नारकीनी जघन्य उत्कृष्टी काय स्थिति होय, ए त्रीजो भेद कह्यो ॥ १६८ ॥

अर्थः–अ० अनंत का० कालनुं उ० उत्कृष्टुं अंतरपदे । अं० अंतरमुहुर्त । ज० जघन्य । वि० छांडेपछे नारकी त० तेमानी का० काया । ने० नारकीने नारकोपणुं पांमवानो ॥ अ० आंतरं एहनुं पदे ॥ १६९ ॥

मूलः–अणन्तकालमुक्कोसं अन्तोमुहुत्तं जहन्नगं ।

विजढंमि मए काए नेरइयाणं अन्तरं ॥ १६९ ॥

गाथा १६९ भावार्थः-पोतानी नारकीनी काया छांडयेथके फरी नारकीनी काया पामवानुं आंतरुं पडेतो जघन्य अंतर मुहुर्तनुं ने उत्कृष्टुं अनंता काळनुं, ए चोथो भेद कयो ॥ १६९ ॥

अर्थः-ए० ए नारकीना भेद व० वर्णथकी चे० पुरणे । ग० गंधथकी र० रसथकी फा० फरसथकी ॥ १७ ॥ ना दे० भेदथकी वा० पण वि० भेदना स० सहस्र छे ॥ १७० ॥

मूलः-एएसिं वण्णओ चेव गन्धओ रसफासओ ।

संठाणदेसओ वावि विहाणाइं सहस्ससो ॥ १७० ॥

गाथा १७०भावार्थः-ए नारकीना वर्णथकी, गंधथकी, रसथकी, स्पर्शथकी, संस्थानथकी हजारो भेद थायछे॥१७०॥

अर्थः-हवे तिर्यंच पचेंद्रि द्रव्यथी कहे छे । प० पचेंद्रि ति० तिर्यंच । दु० बे प्रकारे ते० ते वि० कया ० समुछिम ति० तिर्यंच अने ग० गर्भज तिर्यंच त० तेमज ॥ १७१ ॥

मूलः-पञ्चिन्दियतिरिक्खाओ दुविहा ते वियाहिया ।

समुच्छिमतिरिक्खाओ गब्भवक्कन्तिया तहा ॥ १७१ ॥

गाथा १७१ भावार्थः-हवे तिर्यंच पचेंद्री द्रव्यथी कहे छे, तिर्यंच पचेंद्रीना जीव बे प्रकारे कया छे, ते समुछिम पचेंद्री ने गर्भज पचेंद्री ॥ १७१ ॥

अर्थः-द्० बे प्रकारे ते० ते भ० होय ति० पण प्रकारे त० जलचर आदिक भ० भूचर खेचरादिक त० तेमज ॥ ४८२ ॥

ल० थली म० वली खे० जाणवा । ते० ते पचेंद्रिना भे० भेद सु० सांभळो मे० मुनने कहेतायछा ॥ १७२ ॥

मूलः-दुविहा ते भवे तिविहा जलयरा थलयरा तहा ।

मू० –गन्धओ वण्णओ चेव रसओ फासओ ।
संठाणादेसओ वावि विहाणाइं सहस्ससो ॥ १९३ ॥

॥ ३६ ॥

सं० छाया :– गन्धतो वर्णतश्चैव रसतः स्पर्शतः ।
संस्थानादेशतो वापि विधानानि सहस्रशः ॥ १९३ ॥

अव० –हवे स्थचर भावथी कहे छे, ग० गंधथी, वर्णथी, गंधथी, स्पर्शथी, संस्थानथी

मू० –मणुया दुविहभेया उ ते मे कित्तयओ सुण ।
संमुच्छिमा य मणुया गब्भवक्कंतिया तहा ॥ १९४ ॥

सं० छाया :– मनुजा द्विविधभेदास्तु ते मे कीर्तयतः शृणु ।
संमूर्छिमाश्च मनुजा गर्भव्युत्क्रान्तिकास्तथा ॥ १९४ ॥

अव०–ग० गर्भज मनुष्य छे जे० जे उ० वली ति० त्रण प्रकारे तं० ते वि० कया ॥ अ० करसणादिक जिहां करवु नथी ते अकर्म भूमीना मनुष्य ॥ क० करसणादिक जिहां करवुं छे ते कर्मभूमीना मनुष्य य० वली अ० उपरे अंतर दीपना मनुष्य त० तेमज ॥ १९५ ॥

मूल०–गब्भवक्कंतिया जे उ तिविहा ते वियाहिया ।

॥ ४८८ ॥

से० पेरी ष० बडी बो० जाणवा । ते० ते पचेंद्रिना भे० भेद सु० सांभळो मे० मुनने कहेनाराछा ॥ १७२ ॥

मूलः—दुविहा ते भवे तिविहा जलयरा थलयरा तहा ।
सहयरा य बोधव्वा तेसिं भेदे सुणेह मे ॥ १७२ ॥

गाथा १७२ भावार्थः—पुर्वोक्त पे प्रकारे त्रिविध पचेंद्री जीव कह्या, तेहमा जल प्रकारे ते १ जलचर (पाणीमांही चाले ते), स्थळचर (ते स्थळ उपर चाले ते), खेचर (आकाशे चाले ते), एम कहेनाराछा ए त्रिण्य ? ए पचेंद्रीना भेद हूं तुमने कहीश, ते तुं सांभळ ! ? ॥ १७२ ॥

अर्थः—ग० गाळवानी जाणी य० बडी फ० काढवानी जाणी, य० बडी गा० गाळजनाभाजनवगर- नीर ते भेलादिकना पण वीछाद रह पाणीमांहे य० बडी ॥ म० मनरमञ्ज त० लेवत्त सुं० सुपुमार य० बडी नळचर जीव बो० जाणवा ॥ पं० पांच प्रकारे ज० जलचर जीव भा० कह्या ॥ १७३ ॥

मूलः—मच्छा य कच्छभा य गाहा य मगरा तहा ।
सुंसुमारा य बोधव्वा पंचहा जलयराहिया ॥ १७३ ॥

गाथा १७३ भावार्थः—हवे जळचर त्रिविध पचेंद्री द्रव्यने कहे छे, जळचरना पांचभेद ते १ मांछला- नी जाती, २ कांचबा नी जाती, ३ गाहा ते पाणी मांही पाडादिकने त्रिषे वीछाद रहे ते, ४ मगर मच्छ, ५ सु सुमार, ए जळचरना पांचभेद जाणवा ॥ १७३ ॥

अर्थः—हवे त्रिविध पचेंद्रि जळचर लेवपी करे छे। लो० लोकना ए० एक दे० विभागे ते० ते । स०

चार प्रकारे छे० ते जलचर जीवनो वि० छुं कहीश ॥ १७४ ॥

मूलः—लोएगदेसे ते सवे न सवत्थ वियाहिया।
एत्तो कालविभागं चउविहा ते वियाहिया ॥१७४॥

गाथा १७४ भावार्थः—हवे जलचर तिर्यंच पचेंद्री क्षेत्रथी कहे छे, जलचर जीव लोकना एक देशने विषे छे, पण सर्व लोकने विषे नथी कह्या, गुरु कहेता हवा हे शिष्य ! ते जलचर जीवना कालनो विचार चार प्रकारे छुं तुजने कहीश, ते छुं सांभळ ? ? ? ॥ १७४ ॥

अर्थः—हवे तिर्यंच पचेंद्रि जलचर कालथी कहे छे। सं० जलचर जीव छता प० आश्री। अ० अनादि कालना छे। अ० आगल छेडो वि० य० पण नथी। ठि० स्थिति प० आश्री सा० आदिसहित स० आउपो पुरोभाग भाग तेत्रीसे अंत सहित वि० य० पण छे ॥ १७५ ॥

मूलः—संतइं पप्प नाईया अपज्जवसिया वि य।
ठिइं पडुच्च साईया सपज्जवसिया वि य ॥ १७५ ॥

गाथा १७५ भावार्थः—हवे कालथी कहे छे, जलचर जीव छता आश्री अनादी कालना छे, तेनो अंत पण नथी तेमज स्थितिना काल स्थिति ने आयुष्य स्थिति आश्री आदी सहित छे, तेनो अंत [illegible]

...हरिवर्ष ५ रम्यकवर्ष, ६ हैरण्यवत, ७ ऐरवतवर्ष, ८ देवकुरु, ९ उत्तरकुरु,
... ए गर्भज मनुष्यनी अनुक्रमे संख्या १०१ नी कही ॥ १९६ ॥
... गर्भजनरना । भे० भेद हो० होय । वि० कहीए । हवे
... उत्पत्तिस्थानने विषे ते० ते मनुष्य स० सघलाए समुछिम

॥ ३६ ॥

मूल—संमुच्छिमा पंचेव भेओ होइ वियाहिओ ।
लोगस्स एगदेसंमि ते सव्वे वि वियाहिया ॥ १९७ ॥

... (माता पिताना संयोग विना उत्पन थाय ते) मनुष्य, गर्भज मनुष्य
... मनुष्य तेहना ए ...भेद छे, हवे समुछिम मनुष्य जाणवा, हवे मनुष्य
... तेहना एक देशने विषे छे, पण सर्व लोकने विषे नथी कह्या ॥ १९७ ॥
... ए छे ते स० ते मनुष्य छता प० आश्री अ० अनादि कालना छे अ० आ-
... ए० ए० छे वि० विधि प० आश्री सा० आदि सहित छे ॥ स० आउखुं पुरुषाय तेवारे
... छे ॥ १९८ ॥

मूल—दोहं थोवं नाईअं अज्जवसिया वि य ।
तिहं पि पूरं नाईअं सव्वज्जवसिया वि य ॥ १९८ ॥

॥ ४८५ ॥

जीवनी ॥ भ० अंतर मुहूर्त ज० जघन्य स्थिति जाणवो ॥ १७६ ॥

मूलः—एगाओ पुव्वकोडीओ उक्कोसेण वियाहिया ।
आउट्ठिई जलयराणं अन्तोमुहुत्तं जहन्नियं ॥ १७६ ॥

गाथा १७६ भावार्थः—ते जलचर पंचेंद्री जीवनी आयुष्य स्थिति जघन्य अंतर मुहूर्तनी ने उत्कृष्टी एक पूर्व क्रोडीनी (चोराशी लाख वर्षे एक पूर्वांग थाय, ते पूर्वांगने चोराशीलाख गुणा करीए तेवारे एक पूर्व थाय, ते एक पूर्वना तीस लाख क्रोडने ५६ हजार क्रोड वर्ष थाय, एवा एक क्रोड पूर्वनी) स्थिति जाणवी, ए बीजो भेद कह्यो ॥ १७६ ॥

अर्थः-पु० पूर्वकोडी पु० प्रथक् ए यही पूरकादिके ने नवलाखे प्रथक् पूर्वकोडी तु० वली। उ० उत्कृष्टी वि० कही भगवंते । सा० काय स्थि० स्थिति ज० जलचर जीवनी ॥ भ० अंतरमुहूर्त ॥ ज० जघन्य ॥ १७७ ॥

मूलः—पुव्वकोडिपुहुत्तं तु उक्कोसेण वियाहिया ।
कायट्ठिई जलयराणं अन्तोमुहुत्तं जहन्नगं ॥ १७७ ॥

गाथा १७७ भावार्थः—ते जलचर पंचेंद्री जीवनी कायस्थिति जघन्य अंतर मुहूर्तनी ने उत्कृष्टी प्रथक् पूर्व क्रोडनी (केटी मार्गिने नव सुधी प्रथक् पूर्व क्रोडो कहीए), ए त्रीजो भेद कह्यो ॥ १७७ ॥

अर्थः-भ० अनंतकाल उ० उत्कृष्टुं जाणवं पडे । अ० अंतरमुहूर्त ज० जघन्य स्थिति ॥ वि० आदि

अंके न० पोतानी ज० जलचरनी का० काया। ज० जलचरने जलचरपणुं। पांमवानुं एटलुं अ० आंतरुं पडे ॥१७८॥

मूलः—अणन्तकालमुक्कोसं अन्तोमुहुत्तं जहन्नगं ।
विजढंमि सए काए जलयराणं अन्तरं ॥ १७८ ॥

गाथा १७८ भावार्थः—पोतानी जळचर तिर्यंच पचेंद्रीनी काया छांडये थके फरी जळचर तिर्यंच पचेंद्रीनी काया पामवाने आंतरु पडे तो जघन्य अंतर मुहुर्तनुं ने उत्कृष्टुं अनंताकाळनुं, ए चोथो भेद कह्यो ॥१७८॥

अर्थः—हवे तिर्यंच पचेंद्र भावथी कहेछे । ए० जळचर जीवना भेद व० वर्णथकी चे० पुरणे । गं० गंधथकी । र० रसथकी फा० फरसथकी । सं० संस्थानना दे० भेदथकी वा० पण वि० भेदना । स० सहस्रछे ॥

मूलः—एएसिं वण्णओ चेव गन्धओ रसफासओ ।
संठाणदेसओ वावि विहाणाइं सहस्सओ ॥

गाथा भावार्थः—हवे भावथी कहे छे, ए जळचर तिर्यंच पचेंद्रीना वर्णथकी, गंधथकी, रसथकी, स्पर्शथकी, संस्थान थकी हजारो भेद थाय छे ॥

अर्थः—हवे थलचर द्रव्यथी कहे छे च० च्यार पगना धणी चउपद य० थळी । प० परिसर्प एटले उरपरिसर्पने भुजपरिसर्प दु० चउपद १ ॥ अने २ परिसर्प ए बे प्रकारे थ० थलचर भ० होय ॥ च० चउपद च० चार प्रकारे । ते० ते भे० भेदने कि० कहेतांथकां सु० सांभळो ॥ १७९ ॥

मूलः—चउप्पया य परिसप्पा दुविहा थलयरा भवे ।

गाथा २०० भावार्थः—हवे गर्भज मनुष्यनी कायस्थिति जघन्य अंतरमुहुर्तनी अने उत्कृष्टी त्रण पल्यो-पमनी कही छे. उपर प्रथक (वेधी मांडीने नव सुधी सात भव अकेक पुर्व क्रोडीना करे ने आठमो त्रण पल्योप-मना आयुष्यनो भव कोइ जीव करे, ते आश्री) पुर्व क्रोडीनी जाणवी, ए त्रीजो भेद कह्यो ॥ २०० ॥

अर्थः—का० पृथ्वीकाय ठि० स्थिति म० मनुष्यनी जाणवी मनुष्यमांहि उत्कृष्टो रहेतो सात आठ भवलगे रहे अ० मनुष्य भव पामवानुं आंतरुं पडे ते मनुष्य ने० ए आगल कहिश तेटलुं भ० होय ॥ का० काळनुं अ० अनंता कालनु उ० उत्कृष्ट आंतरुंपडे । अ० अंतर मुहुर्त ज० जघन्य ॥ २०१ ॥

मूलः—कायट्ठिइ मणुयाणं अन्तरं तंमिमं भवे ।
कालमणन्तमुक्कोसं अन्तोमुहुत्तं जहन्नगं ॥ २०१ ॥

गाथा २०१ भावार्थः—पुर्वोक्त मनुष्यनी कायस्थिति जाणवी (अर्थात एमनुष्यमांही उत्कृष्टो रहे तो सात आठ भव सुधीज रहे) ए मनुष्यनी कायस्थिति कही, हवे मनुष्यनुं आंतरु कहेछे, पोतानी मनुष्यनी काया छांडेथके फरी मनुष्यनी काया पामवानुं आंतरु पडे तो जघन्य अंतरमुहुर्तनुं ने उत्कृष्टुं अनंताकाळनुं, ए चोथो भेद कह्यो ॥२०१॥

अर्थः—हवे मनुष्य भावथी कहे छे ए० ए मनुष्यनो भेद व० वर्णथकी चे० पुरुषे । गं० गंधथकी र० रसथकी फा० फरसथकी । सं० संस्थानना दे० भेदथकी वा० वळी । वि० भेदना स० सहस्र होय ॥ २०२ ॥

मूलः—एएमिं वण्णओ चेव गन्धओ रसफासओ ।
संठाणदेसओ वावि विहाणाइं सहस्ससो ॥ २०२ ॥

॥ ३६ ॥

॥४८६॥

मूलः—वेमाणिया उ जे देवा दुविहा ते वियाहिया ।
कप्पोवगा य बोधवा कप्पाईया तहेव य ॥ २०८ ॥

गाथा २०८ भावार्थः—जे वैमानीक देवता छे, ते वे प्रकारे, १ कल्पवासी देवता, २ कल्पातीत देवता ए वे भेदे जाणवा ॥ २०८ ॥

अर्थः—क० देवलोके उपना छे जे देवता ते । वा० वार प्रकारे कह्या । सो० सौधर्मा देवलोकना देवता १ इ० इशान देवलोकना देवता त० तेमज २ ॥ स० सनंतकुमार देवलोकना देवता ३ । मा० माहिंद्र देवलोकना देवता ४ ॥ बं० ब्रह्मलोक देवलोकना देवता ५ य० वली । लं० लांतक देवलोकना देवता ६ ॥ २०९ ॥

मूलः—कप्पोवगा बारसहा सोहम्मीसाणगा तहा ।
सणङ्कुमार माहिन्द बम्भलोगा य लन्तगा ॥ २०९ ॥

गाथा २०९ भावार्थः—तेमां कल्पवासी देवता १२ प्रकारे ते, १ सुधर्मा देवलोकना देवता, २ इशान देवलोकना देवता, ३ सनतकुमार देवलोकना देवता, ४ माहेंद्र देवलोकना देवता, ५ ब्रह्म देवलोकना देवता, ६ लांतक देवलोकना देवता ॥ २०९ ॥

अर्थः—म० महाशुक्र देवलोकना देवता ७ स० सहसार देवलोकना देवता ८ आ० आणय देवलोकना देवता ९ पा० पाणय देवलोकना देवता १० त० तेमज वली ॥ आ० आरण नामा देवलोकना देवता ११ अ० अच्युत देवलोकना देवता १२ ए० पूरणे । इ० एणे प्रकारे क० बार देवलोकना वासी सु० देवता ॥ २१० ॥

अ० गुरुनि समिपे, बीजो अरथ ता० पंडित मरण अं० छेहडे वि० टालेलो० रोपनां कांइ नइ । म० विनाशने दे० शरिरने फं० बांधे ॥ ३१ ॥

मूलः—तओ काले अभिप्पेए सड्ढी तालिसमन्तिए ।
विणएज्ज लोमहरिसं भेयं देहस्स कंखए ॥ ३१ ॥

गाथा ३१ भावार्थः—ए क्रम पर्व आदेलुं एक गितार्थ गुरुनी समीपे जेवो हर्ष लीला अवसरे तथा संलेखणा अवसरे हतो तेवोज हर्ष मरण समीपे धारण करी अहो मारुं मृत्यु थशे एवुं रोम कंपीतपणुं निपजवारी क्रम योग हीना नहीं करतां शुभध्या तजी शरीरना विनाशने इच्छे ॥ ३१ ॥

अर्थः—अ० हवे का० मरणकाल सं० आवे तबे । आ० सघला प्रकारे या० पालय न इच्छतो थको । स० शरमण शरिरने । स० सकाम मरणे म० मरे । ति० त्रिन मरण बांहि अंगित मरण १ पादोपगमन २ भक्तपच्चाणमरण ३ । भ० अनेरेएक कोइ मरणे मु० साधू इ० इम वे० हुं कहुं छुं ॥३२॥

मूलः—अहकालम्मि संपत्ते आघायाय समुस्सयं ।
सकाममरणं मरइ तिण्हमन्नयरं मुणि ॥ ३२ ॥ त्ति बेमि

इति अकाम सकाम मरणिज्जं नामा पञ्चमं अध्ययनं समत्तं ॥ ५ ॥

गाथा ३२ भावार्थः—हवे पर्व काळे आवशाथी औदारिक तथा कार्मण शरीरने हणतो थको विविधे करी चार आहारनुं पच्चक्खान करे ते भक्त पच्चक्खान पर्व (एनी अंदर हरता फरताने आश्रे अमुक कट-

लो जग्या तेनो नियम नहीं), वली मंडळ करी (जग्यानी हद बांधवी ते) मंडळनी बाहार न नीकळवुं ए त्रीजुं इंगीत मर्ग. हवे त्रीजुं पादोपगमन मर्ण ते कापेली वृक्षनी शाखानी माफक एक पासभेर रही बीजुं पासुं पग पलटाववुं नही. एवा त्रण प्रकारना मर्ण मांहीला एक सकाम मर्णे साधु मरे. ॥३२॥

एम सुधर्मास्वामी जंबूस्वामी प्रते कहेछेके हे जंबू जेम मे श्री महावीरदेव समीपे सांभल्युं हतुं तेम हुं तुज प्रते कहुंछुं. इति उत्तराध्ययनना सकाम अकाम मरण नामे पांचमा अध्ययननो भावार्थ संपूर्ण. ए पांचमां अध्ययनमां सकाम मर्ण वणुं करी साधुने कहुं ते भणी आ छठा अध्ययनने विषे साधुनो अधिकार कहेछे.

अर्थः—जा० जेतला अ० अज्ञानी मिथ्याती पू० पूरुष स० सघलाए ते० ते पूरुष दु० दूष पामवाना कारण छे दूषना सं० भोगवनार । लु० पीडा पामे व० घणीवार मु० मिथ्याति मूर्ष । अ० अनंता संसा० संसारने विषे ॥ १ ॥

मूलः—जावन्ति अविज्जापुरिसा सवे ते दुक्खसंभवा ।
लुप्पन्ति बहुसो मूढा संसारंमि अणन्तए ॥ १ ॥

गाथा १ भावार्थः—हवे छठा अध्ययननो भावार्थ कहेछे. जे तत्वना अजाण ने कुविद्यावंत एना मुर्ख अज्ञानी मिथ्याती ए सर्वे दुखना विभागी वसे ने ते मुर्ख अज्ञानी घणीवार दारिद्रीपणुं ने छेदन भेदना दीकनी पीडा पामे अने जेहनो अंत नथी एहवा संसारने विषे परीभ्रमण करसे ॥ १ ॥

अर्थः—सवि० विचारिने पं० पंडित त० ते कारण भणी । पा० एम जाणी जे संसार ते पारस सरिखो

हेट्ठिमा उवरिमा चेव मज्झिमा हेट्ठिमा तहा ॥ २१२ ॥

गाथा २१२ भावार्थः–ग्रैवेक नव छे तेनी त्रण त्रणनी त्रीकेकी त्रीक गणता त्रण त्रीक थाय ते मांही हेठली प्रथम त्रीकना हेठली (पेहली) ग्रैवेकना देवता, २ हेठली त्रीकना मध्य (बीजी) ग्रैवेकना देवता, ३ हेठली त्रीकना उपली (त्रीजी) ग्रैवेकना देवता, ४ मध्य त्रीकना हेठली (४) ग्रैवेकना देवता ॥ २१२ ॥

अर्थः–म०मध्य वचला त्रिकनुं म०मध्यनुं एटले पांचमां ग्रैवेयकना देवता चे० पुरणे । म० मध्य वचला त्रिकनुं । उ० उपलुं एटले छठा ग्रैवेयकना देवता । ६ त० तेमज । उ० उपला त्रिकनुं हे० हेठ नुं एटले सातमा ग्रैवेयकना देवता ॥ चे० पुरणे ॥ उ० उपला त्रिकनुं म० मध्य वचलुं एटले आठमा ग्रैवेयकना देवता ८ । त० तेमज वली ॥२१३॥

मूलः–मज्झिमा मज्झिमा चेव मज्झिमा उवरिमा तहा ।
उवरिमा हेट्ठिमा चेव उवरिमा मज्झिमा तहा ॥ २१३ ॥

गाथा २१३ भावार्थः–५ मध्य त्रीकना मध्य (५) मी ग्रैवेकना देवता, ६ मध्य त्रीकनी उपली (६) ग्रैवेकना देवता, ७ उपली (त्रीजी) त्रीकना हेठली (सातमी) ग्रैवेकना देवता, ८ उपली त्रीकना मध्य (८) ग्रैवेकना देवता ॥२१३॥

अर्थः–उ० उपला त्रिकनुं उ०उपलुं एटले नवमां ग्रैवेयकना देवता चे० पुरणे । इ० ए प्रकारे गे० ग्रैवेयक नवना सु० देवता कह्या । वि० विजयनामा पहेलुं अनुत्तर विमानना देवता १ ॥ वे० वैजयंत बीजा अनुत्तर विमानना देवता २ य० वली ॥ ज० जयंतनामा त्रीजा अनुत्तर विमानना देवता ३ ॥ अ० अपराजित नामा

तइयम्मि जहन्नेणं चउवीसं सागरोवमा ॥ २३५ ॥

गाथा २३५ भावार्थः–त्रीजा ग्रैवेयकना देवतानी आयुष्य स्थिति जघन्य २४ सागरोपमनी ने उत्कृष्टी २५ सागरोपमनी ॥ २३५ ॥

॥ ४९८ ॥

अर्थः–छ० छवीस सा० सागरोपमनी । उ० उत्कृष्टी ठि० स्थिति भ० होय च० चोथा ग्रैवेयकने विषे देवतानी ज० जघन्य स्थिति ॥ सा० सागर प० पचवीसनी ॥ २३६ ॥

॥ ३६ ॥

मूलः–छवीस सागराइं उक्कोसेण ठिई भवे ।
चउत्थम्मि जहन्नेणं सागरा पणुवीसई ॥ २३६ ॥

गाथा २३६ भावार्थः–चोथा ग्रैवेयकना देवतानी आयुष्यनी स्थिति जघन्य २५ सागरोपमनी ने उत्कृष्टी २६ सागरोपमनी ॥ २३६ ॥

अर्थः–सा० सागर स० सत्तावीसनी तु० वळी । उ० उत्कृष्टि ठि० स्थिति भ० होय ॥ पं० पांचमां ग्रैवेयकने विषे देवतानी ज० जघन्य स्थिति सा० सागरोपमनी उ० वळी छ० छवीसनी ॥ २३७ ॥

मूलः–सागरा सत्तवीसं तु उक्कोसेण ठिई भवे ।
पञ्चमम्मि जहन्नेणं सागरा उ छवीसई ॥ २३७ ॥

गाथा २३७ भावार्थः–पांचमा ग्रैवेयकना देवतानी आयुष्यनी स्थिति जघन्य २६ सागरोपमनी ने उत्कृष्टी २७ सागरोपमनी ॥ २३७ ॥

इत्तो कालविभागं तु तेसिं वुच्छं चउव्विहं ॥ २१६ ॥

गाथा २१६ भावार्थः—हवे देवता क्षेत्रथी कहे छे, ए सर्व देवता लोकना एक देशने विषे कह्या छे पण सर्व लोकने विषे कह्या नथी, हवे गुरु कहेता हवा हे शिष्य ? ते देवताना कालनो विचार चार प्रकारे हुं कहीश ॥२१६॥

अर्थः—हवे देवता कालथी कहे छे । सं० देवता छे प० छता आश्री । अ० अनादि कालना छे । आगल छेहडो वि० य० पण नथी ठि० स्थिति प० आश्री सा० आदि सहित छे स० आउषो पुरो थाय तेवारे अंत सहित वि० य० पण छे ॥ २१७ ॥

मूलः—संतइं पप्प नाईया अपज्जवसिया वि य ।
ठिइं पडुच्च साईया सपज्जवसिया वि य ॥ २१७ ॥

गाथा २१७ भावार्थः—हवे देवता कालथी कहेछे, ए देवता छतां आश्री अनादीकालनाछे तेनो अंत पण नथी अने भवस्थिति कायस्थिति ने आयुष्यस्थिति आश्री आदी सहीत छे तेहनुं आयुष्य पुर्ण थाय तेवारे अंत सहीत पण छे, ए प्रथम भेद कह्यो ॥ २१७ ॥

अर्थः—सा० साधेरो सा० सागर ए० एक उ० उत्कृष्टी ठि० आउषानी स्थिति भ० होय । भो० भवनपति वलेंद्रादिकनी । ज० जघन्य स्थिति ॥ द० दस वा० वरस । स० सहस्र ॥ २१८ ॥

मूलः—साहियं सागरं एक्कं उक्कोसेण ठिई भवे ।
भोगेऽजाणं जहन्नेणं दसवाससहस्सिया ॥ २१८ ॥

अट्ठमम्मि जहन्नेणं सागरा अउणतीसई ॥ २४० ॥

गाथा २४० भावार्थः–८ मां ग्रैवेकना देवताना आयुष्यनी स्थिति जघन्य २०. सागरोपमनी ने उत्कृष्टी ३० सागरोपमनी ॥ २४० ॥

अर्थः–सा० सागर । इ० एकत्रीसनी तु० वळी । उ० उत्कृष्टि ठि० स्थिति भ० होय । न० नवमा ग्रैवेयकने विषे देवतानी ज० जघन्य स्थिति । ती० त्रीस सा० सागरोपमनी ॥ २४१ ॥

मूलः–सागरा इक्कतीसं तु उक्कोसेण ठिई भवे ।
नवमम्मि जहन्नेणं तीसई सागरोवमा ॥ २४१ ॥

गाथा २४१ भावार्थः–९ मां ग्रैवेकना देवताना आयुष्यनी स्थिति जघन्य ३० सागरोपमनी ने उत्कृष्टी ३१ सागरोपमनी ॥ २४१ ॥

अर्थः– ते० तेत्रीस सा० सागरोपमनी । उ० उत्कृष्टी ठि० स्थिति भ० होय । च० च्यार अनुत्तर विमानने विषे पि० पण । विजय १ । वैजयंत २ । जयंत ३ अपराजित ४ ए ४ वि० विजय विमान आदे देइने ज० जघन्य स्थिति ए० एकत्रीस सागरोपमनी ॥ २४२ ॥

मूलः–तेत्तीसा सागराइं उक्कोसेण ठिई भवे ।
चउसुं पि विजयाईसु जहन्नेणेक्कतीसई ॥ २४२ ॥

गाथा २१८ भावार्थः–चमरेंद्रादीक भवनपतीना आयुष्यनी स्थिति जघन्य १० हजार वर्षनी अने उत्कृष्टी एक सागर झाझेरी ॥ २१८ ॥

अर्थः–प० पल्योपम दो० बे उ० उणांकांई एक। उ० उत्कृष्टि स्थिति। वि०कही भगवंते। अ०असुर कुमारनामा इंद्र व० वरजीने बीजा असुर कुमारादिक देवता भवनपतिनी स्थिति। ज० जघन्य। द० दस स० सहस्र वरसनी ॥

मूलः–(पलिओवम दोऊणा उक्कोसेण वियाहिया।
असुरेन्दवज्जेताण जहन्ना दस हिस्सगा)

गाथा भावार्थः–असुर कुमार सांही इंद्रवर्जिने बीजा भवनपती असुर कुमार देवतादीकना आयुष्यनी स्थिति जघन्य १० हजार वर्षनी ने उत्कृष्टी एक सागरसांही कांइक बे पल्योपम उणी कही ॥

अर्थः–प० पल्योपम ए० एकनी तु० वली। उ० उत्कृष्टी वि० स्थिति भ० होय। वं० व्यंतरनी ज० जघन्य। द० दस वा० वरस स० सहस्रनी ॥ २१९ ॥

मूलः–पलिओवममेगं तु उक्कोसेण ठिई भवे।
वन्तराणं जहन्नेणं दसवाससहस्सिया ॥ २१९ ॥

गाथा० १९ भावार्थः–वाण व्यंतर देवताना आयुष्यनी स्थिति जघन्य १० हजार वर्षनी ने उत्कृष्टी एक पल्योपम॥२१९॥

अर्थः–प० पल्योपम ए० एक तु० पुरुषे वा० वरस स० लाख सा० अधिकी ए उत्कृष्टि स्थिति जोतिषिनी। प० पल्योपमनो अ० आठमो भागनी। जो० ज्योतिषिनी ज० जघन्य स्थिति जाणवी ॥ २२० ॥

मूलः—पलिओवममेगं तु वासलक्खेण साहियं ।
पलिओवमट्ठभागो जोइसेसु जहन्निया ॥ २२० ॥

गाथा २२० भावार्थः—ज्योतिषी देवतानी आयुष्यनी स्थिति जघन्य पल्योपमनो आठमो भाग ने ॥ १६ ॥
लक्षवर्षे एक पल्योपम ने उपर एक लाख वर्षनी ॥ २२० ॥

अर्थः—दो० बे च० पुरणे सा० सागरनी ॥ उ० उत्कृष्टि वि० स्थिति भगवंते सो० सौधर्मी देवलो-
के विषे ज० जघन्य स्थिति । ए० एक च० वळी प० पल्योपमनी ॥ २२१ ॥

मूलः—दो चेव सागराइं उक्कोसेण वियाहिया ।
सोहम्मंमि जहन्नेणं एगं च पलिओवमं ॥ २२१ ॥

गाथा २२१ भावार्थ—प्रथमसुधर्मा देवलोकना देवतानी स्थिति जघन्य एकपल्योपमनी ने उत्कृष्टी बेसागरोपमनी ॥ २२१ ॥

अर्थः—सा० सागर । सा० झाझेरा दु० बेनी उ० उत्कृष्टि वि० स्थिति भगवंते । ई० इशान देवलो-
के विषे ज० जघन्य स्थिति ॥ सा० झाझेरु प० पल्योपम एक ॥ २२२ ॥

मूलः—सागरा साहिया दुन्नि उक्कोसेण वियाहिया ।
ईसाणम्मि जहन्नेणं साहियं पलिओवमं ॥ २२२ ॥

गाथा २२२ भावार्थः—बीजा इशान देवलोकना देवतानी स्थिति जघन्य एक पल्योपम झाझेरी ने उत्- ॥ ४०५ ॥

वि० छांडे पछे स० आपणा देवतानी का० काया ॥ दे० देवता थावानुं हु० होय अं० आंतरु एटलुं पडे ॥२४५॥

मूलः—अणन्तकालमुक्कोसं अन्तोमुहुत्तं जहन्नगं ।
विजढंमि मए काए देवाणं हुज्ज अन्तरं ॥ २४५ ॥

गाथा २४५ भावार्थः—पोतानी देवतानी काया छांडयेछे फरी देवता पामवानुं आंतरु पडे तो जघन्य अंतरमुहूर्तनुं ने उत्कृष्टुं अनंताकाळनुं ॥ २४५ ॥

अर्थः—ए० ए देवताना भेद व० वर्णथकी चे० पुरणे । गं० गंधथकी र० रसथकी फा० फरसथकी ॥ सं० संस्थानना दे० भेदथकी वा० पण वि० भेदना स० सहस्र होय ॥ २४६ ॥

मूलः—एएमिं वण्णओ चेव गन्धओ रसफासओ ।
संठाणदेसओ वावि विहाणाइं सहस्ससो ॥ २४६ ॥

गाथा भावार्थः—हवे भावथी देवताना भेद कहे छे, ए पुर्वोक्त देवताना वर्णथी, गंधथी, रसथी, स्पर्शथी, संस्थानथी हजारो भेद थाय छे ॥ २४६ ॥

अर्थः—सं० संसारीक जीव य० अने । सि० सिद्धना जीव ॥ इ० एणे प्रकारे जी० जीव वि० कह्या तिर्थंकर महाराजे रू० रूपीजे अजीव चे० पुरणे । अ० अरूपी अजीव य० वळी । अ० ए अजीव दु० बे प्रकारे वि० कह्या वीतरागे य० वळी ॥ २४७ ॥

बम्भलोए जहन्नेणं सत्त ऊ सागरोवमा ॥ २२५ ॥

गाथा २२५ भावार्थः-पांचमां ब्रह्मदेव लोकना देवतानी स्थिति जघन्य सात सागरोपमनी ने उत्कृष्टी १० सागरोपमनी ॥ २२५ ॥

अर्थः-च० चउद सा० सागरोपमनी उ० उत्कृष्टि ठि० स्थिति भ० होय ॥ लं० लांतकनामा देवलोकने विषे ज० जघन्य स्थिति ॥ द० दस उ० वली सा० सागरोपमनी ॥ २२६ ॥

मूलः-चउदस सागराइं उक्कोसेण ठिई भवे ।
लन्तगम्मि जहन्नेणं दस उ सागरोवमा ॥ २२६ ॥

गाथा २२६ भावार्थः-६ ठा लांतक देवलोकना देवतानी आयुष्यनी स्थिति जघन्य १० सागरोपमनी ने उत्कृष्टी १४ सागरोपमनी ॥ २२६ ॥

अर्थः-स० सतर सा० सागरोपमनी । उ० उत्कृष्टि ॥ ठि० स्थिति भ० होय म० माहाशुक्रनामा देवलोकने विषे देवतानी ज० जघन्य स्थिति । च० चउद सा० सागरोपमनी ॥ २२७ ॥

मूलः-सत्तरस सागराइं उक्कोसेण ठिई भवे ।
महासुक्के जहन्नेणं चउदस सागरोवमा ॥ २२७ ॥

गाथा २२७ भावार्थः-सातमां महाशुक्र नामे देवलोकना देवतानी आयुष्यनी स्थिति जघन्य १४ सा-

गरोपमनी

सागरनुं, ए चोथो भेद कह्यो ॥

अर्थः-इ० एणे प्रकारे जी० जीव अने अ० अजीवना भेद । गुरु समीपे य० वळी सो० सांभळीने । स० सद्दिने य० वळी स० सर्व न० नपने अ० अनुमत मनोज्ञ मानवा योग्य ज्ञान सहित थइ । र० रमे प्रवर्ते सं० संजमने विषे मु० साधु ॥ २४८ ॥

मूलः-इय जीवमजीवे य सोच्चा सद्दहिऊण य ।
सव्वनयागमगुमए रमेज्ज संजमे मुणी ॥ २४८ ॥

गाथा २४८ भावार्थः-ए प्रमाणे जीव अने अजीवना भेद गुरु समीपे सांभळीने सद्दही ने सर्वनय ए-ट० नैगमादीक नपने अनुमते ज्ञानक्रिया सहीत सम्यक्त्वचारीत्रने विष साधु रमे (प्रवर्ते) ॥ २४८ ॥

अर्थः-त० तेवार पछी दिक्षा लेइने विचरे छे तेवार पछी व० घणा वा० वरस लगी । सा० चारित्र अ० रुडी परे पालीने । इ० ए आगल कहेशे तेणे क० अनुक्रमे जो० शुभ जोग रुपिया व्यापारे अ० पोताना आत्मा शरिर । सं० दुर्बळ करी द्रव्यथी भावथी कषाय चार पातला करे मु० साधु ॥२४९॥

मूलः-तओ बहूणि वासाइं सामण्णमणुपालिय ।
इमेण कम्मजोगेण अप्पाणं संलिहे मुणी ॥ २४९ ॥

गाथा २४९ भावार्थः-दीक्षा लइने तेवार पछी साधु घणा वर्ष सुधी चारीत्र पालीने आगळ अनुक्रमे कहीशुं तेवा [illegible] आत्मा शरिर दुर्बळ करे तथा द्रव्यथी शरीर अने भावथी कषाय पातळां करे॥२४९॥

पागयम्मि जहन्नेण सागरा अउणवीसई ॥ २३० ॥

गाथा २३० भावार्थः–१० मां प्राणत नामे देवलोकना देवतानी आयुष्यनी स्थिति जघन्य १९ सागरोपमनी ने उत्कृष्टी २० सागरोपमनी ॥ २३० ॥

॥ ३३ ॥

अर्थः–सा० सागर इ० एकवीसनी तु० वळी । उ० उत्कृष्टी ठि० स्थिति भ० होय । आ० आरणनामा देवलोकने विषे देवतानी ज० जघन्य स्थिति । वी० वीस सा० सागरोपमनी ॥ २३१ ॥

मूलः–सागरा इक्कवीसं तु उक्कोसेण ठिई भवे ।
आरणम्मि जहन्नेणं वीसई सागरोवमा ॥ २३१ ॥

गाथा २३१ भावार्थः–११ मां आरण्यलोकना देवतानी आयुष्यनी स्थिति जघन्य २० सागरोपमनी ने उत्कृष्टी २१ सागरोपमनी ॥ २३१ ॥

अर्थः–बा० बावीस सा० सागरनी उ० उत्कृष्टि ठि० स्थिति भ० होय ॥ ज० अच्युत देवलोकने विषे देवतानी ज० जघन्य स्थिति । सा० सागर इ० एकवीसनी ॥ २३२ ॥

मूलः–बावीसा सागराइं उक्कोसेण ठिई भवे ।
अच्चुयम्मि जहन्नेणं सागरा इक्कवीसई ॥ २३२ ॥

गाथा २३२ भावार्थः–१२ मां अच्युत देवलोकना देवतानी आयुष्यनी स्थिति जघन्य २१ सागरोपमनी

तओ संवच्छरद्धं तु नाइविगिट्ठं तवं चरे ।। २५२ ।।

गाथा २५२ भावार्थः–पछी नवमाने दशमाए वे वर्ष लगी एकांतर उपवास करे अने पारणे आयंबील करे (ए १० वर्ष थयां) तेवार पछी अगीयारमां वर्षना प्रथम ६ मास सुधी कांइपण छठ अठमादीक तप आचरे नहि (ए साडा दश वर्ष थाय ।। २५२ ।।

अर्थः–त० तेवारे साडा दस वरस पछी सं० वरस अ० अर्ध छमास लगी तु० वळी । वि० छठ अठमादिक तु० वळी त० तप आकरुं च० करे प० थोडो थोडो चे० वळी ।। आ० आंबिल करे तं० ते इग्यारमां सं० वरसने विषे ।। उपला छमास लगी क० तप करे ।। २५३ ।।

मूलः–तओ संवच्छरद्धं तु विगिट्ठं तु तवं चरे ।
परिमियं चेव आयामं तंमि संवच्छरे करे ।। २५३ ।।

गाथा २५३ भावार्थः–पछी ११ मां वर्षना पाछला ६ मासने विषे छठ अठमादीक आकरो तप करे तेमज थोडो थोडो आयंबील तप करे (ए ११ वर्ष थया) २५३ ।।

अर्थः–को० हवे बारमे वरसे पुरे आंबिल करवा वचे वोजो तप करे । छेहडे वळी आ० आंबिल करे कोडि सहित तप कहीए ।। क० तप करीने सं० एक वरस लगी मु० साधु । मा० मासपमण अ० अर्द्ध मा० मासपमण करे करीने तु० वळी ।। आ० आहारादिक छांडवे करीने । त० अणसण तप च० करे ।।२५४।।

मूलः–कोडीसहियमायामं कट्टु संवच्छरे मुणी ।

मे । ना० एकेंद्रादि जाति पामराने प० मार्ग । प० जाणी अ० आत्मपे पोते स० सत्य मार्गने । मे० गवेषे वि० विचारपणो भू० सघला जीवने विषे क० करे ॥ २ ॥

मूलः—समिक्ख पण्डिए तम्हा पासजाईपहे बहू ।
अप्पणा सच्चमेसेज्जा मेत्तिं भूएसु कप्पए ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः—ए पुत्र कलत्रादीकनो संबंध ते मोहना हेतुए करी ए संसारपासशरीलो ते अज्ञान आत्मानां पणाने एकेंद्रियादी जाती पामरानो मार्ग जाणी पंडीत विचारी पोताना आत्माने सतरे भेदे संयम ते सत्यने विषे स्थापी सर्व जीव साथे मैत्री भाव करे ॥ २ ॥

अर्थः—मा० माता पि० पितार न्हु० बेटाने बहु भ० भाइ भ० स्त्रि पु० दीकरी । य० वली ओ० ए० उदरनां उपनां । ना० नहि अ० समर्थ ते० पूर्वे कर्या ते म० मूजने ता० त्राण शरण राखवाने । दु० पीडा पामता जीवने । स० पोताना क० कर्मे करिने ॥ ३ ॥

मूलः—माया पिया न्हुसा माया भज्जा पुत्ता य ओरसा ।
नालं ते मम ताणाय लुप्पन्तस्स सकम्मुणा ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः—माता पीता भाइ स्त्रि पुत्र पुत्रनी स्त्रियादीक पोताना कर्मे करी पीडा पामता मारा जीवने त्राण शरण राखवा कोइ समर्थ नहीं ॥ ३ ॥

अर्थः—ए० ए पूर्वे कर्या ते अ० अर्थने स० पोतानि बुद्धिइ करि । पा० देखी स० समकितदृष्टि;

छि० छेदे गे० विषयना वृद्धपणाने सि० संसारना सनेह च० वली । न० नकं० वांछे पु० पूर्व जेहस्यूं सं० परिचय होइ तेहने ॥ ४ ॥

मूलः—एयमट्ठं सपेहाए पासे सामियदंसणे ।
छिन्द गेद्धिं सिणेहं च न कङ्के पुव्वसंथवं ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थः—ए पुर्वोक्त अर्थने समकित द्रष्टी पोतानी बुद्धिए करी देखी मिथ्यात्वने त्था संसारना स्नेहने छेदी विषयना वृद्धपणाने तजी पुर्वे जेहनी साथे परीचय होय तेने न इच्छे ॥ ४ ॥

अर्थः—ग० गाइ वृषभ अ० घोडा म० मणी रत्नादिक । कुं० कर्णादिकनां कुंडल । प० हाथी प्रमुष दा० चाकरना पो० समूह स० सर्व ए० ए पूर्वे कह्या तेहने च० छांडिने पं० अलंकारे संजय पालीने का० अभीलाषा करे तेहवो । रु० रूपनो विक्रयनो करनार देवता भ० थाइस्य ॥ ५ ॥

मूलः—गवासं मणिकुण्डलं पसवो दासपोरुसं ।
सव्वमेयं चइत्ताणं कामरूवी भविस्ससि ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः—गुरु कहे छे हे शिष्य ! अथवा हे आत्मा ? गाय, अश्व (घोडा), मणि रत्नादिक, कान प्रमुखना कुंडल, हाथी, चाकर प्रमुख ए सर्व छांडीने संयम पाळीस तो मनोवंछीत वैकिय रूपनो कारण हार एहवो देव थइस ? ॥ ५ ॥

अर्थः—गा० गृहादिक जं० मनुष्यादिक चे० निश्चे । ष० सुवर्णादिक । ष० शाळि प्रमुख । उ०

मासद्धमासिएणं तु आहारेण तवं चरे ॥ २५४ ॥

गाथा २५४ भावार्थः—बारमे वर्षे प्रथम अने छेडे सरीखो तप करे एटले प्रथम आयंबील करे, बीजो तप करे अने छेडे वली आयंबील करे, ए कोडीसहीत तप करीये, ए तप करीने साधु एक वर्ष सुधी मास खमण, अर्ध मासखमण करवे करीने आहारादीक छांडवे करीने अणसण तप करे (ए बार वर्षनो) अणसण तप कर्यो ॥ २५४ ॥

अर्थः—कं० हांस्यादिकथी कंदर्पियो देवता थाय। आ० मंत्रादिक प्रजुंजेते सेवकपणे देवता थाय च० वली कि० केवली प्रमुपनी तथा ज्ञानवंतनी असातनाएकीलमपि देवता थाय मो० अज्ञानपणाना भावनाए निरंतर आ० अथवा घणा काल लगी रोस राखेते कोइ एक कष्ट कीधा थकी असुर कुमार देवनी जातिमांहे उपजे च० वली। ए० ए दु० दुर्गति ए करणीथकी दुर्गति पाम्यो। अने ते भणी ए दुर्गति कही । म० मरणने अवसरे एहवी भावना आवेतो मरीने ए पुर्वे कही ते दुर्गति पामे। अने वि० विराधक हो० होय निश्चे वीतरागे कह्युं ॥२५५॥

मूलः—कन्दप्पमाभिओगं च किविसियं मोहमासुरत्तं च।
एयाउ दुग्गईओ मरणम्मि विराहिया हान्ति ॥ २५५ ॥

गाथा २५५ भावार्थः—हांसी प्रमुख करवे करी कंदर्पियो देवता थाय, मंत्रादिक प्रयुंजे ते सेवकपणे देवता थाय, केवली प्रमुख ज्ञानवंतनी आशातना करवे करी किल्बिषी देवता थाय, अज्ञान पणानी भावना निरंतर अथवा घणा काल लगी दोष राखे ते कांइक कष्ट कर्याथी असुर कुमारनी जाती मांही देवता थाय, ए देवता मांही दुर्गती कहीये, ए दुर्गती पुर्वोक्त कृत्य कर्याथी पामे अने मर्णने अवसरे एहवी भावना आवे तो मरीने

दीक रसनां स्वाद भोगववाने तथा रुंधीने हेते भणुंजे ते सेवकपणे देवता थवानी भावनानी करणी करे (अर्थात अन्य० तेवा कृत्य करीने सेवक देवता थाय) ॥ २६३ ॥

अर्थः–ना० श्रुत ज्ञानादिक पांच ज्ञानना अवर्णवादनो बोलणहार ॥ के० केवलीना अवर्णवादनो ॥ ३६ ॥ बोलणहार ॥ ध० धर्माचार्यना अवर्णवादनो बोलणहार ॥ सं० साधु साध्वी श्रावक श्राविकाए चार । चतुर्विध संघनो अवर्णवादनो बोलणहार ॥ सा० साधुनां अवर्णवादनो बोलणहार ॥ मा० मायावंत अ० अवर्णवादनो बोलणहार कि० किलविषी संबंधी ॥ भा० भावनानी करणी कु० करे ॥ २६४ ॥

मूलः–नाणस्स केवलीणं धम्मायरियस्स सङ्घसाहूणं ।
माई अवण्णवाई किविसियं भावणं कुणइ ॥ २६४ ॥

गाथा २६४ भावार्थः–श्रुत ज्ञानादीक पांच ज्ञानना अवर्णवादनो बोलनार, केवलीना अवर्णवादनो बोलनार, धर्माचार्यना अवर्णवादनो बोलनार, साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविकाए चतुर्विध संघना अवर्णवादनो बोलनार एवो जीव होय ते, किल्विषी (देवतामांही हेड जातीना देवता) थावानी भावनानी करणी करे, (अर्थात एवा कृत्ये करीने किल्विषी देवता थाय) ॥ २६४ ॥

अर्थः–अ०घणा काल लगी रो०रोसनुं ॥ प०विस्तार करी रीस राखे त० तेमज य०यती नि० निमित्त [illegible] ॥ ३७ ॥

भावनाने विषे । हो० होय प० प्रवर्णवादनो ए० ए चे [illegible] ॥

BUGGOOMAL THAMODAN.
Mohalla Marotian Ward.
Bikanir.

॥ इति श्री उत्तराध्ययन सूत्र समाप्तम् ॥

एएहि कारणेहिं आसुरियं भावणं कुणइ ॥ २६५ ॥

गाथा २६५ भावार्थः-पण काल मरी रोगनो निस्तार करी गंग वानी रहे, तेमज वली विविध भातने विषे प्रवर्तनार होय, एवी करणीये करीने असुरकुमार थावानी भावनानी करणी करे (अर्थात् एवां कृत्ये करीने असुरकुमार थाय) ॥ २६५ ॥

अर्थः-स० तरवार प्रमुख सस्त्र ग० ग्रहण करीने गंगे करी परे। वि०विध भ०भातने परे प०वली ज० अग्नीमांहि पे० पेसीने परे प० वली ज० पाणीमांहि पेसीने परे ॥ प० वली प० ते भणावारता योग्य नहि एवा। भ० उपगरणनो से० सेवणहार। ज० एणा जन्म म० मरण पं० पामे उपराते ॥ २६६ ॥

मूलः-सत्थग्गहणं विसभक्खणं च जलणं च जलपवेसो य ।
अणायारभण्डसेवी जम्मणमरणाणि बन्धन्ति ॥ २६६ ॥

गाथा २६६ भावार्थः-तरवार प्रमुख शस्त्र ग्रहण करीने परे, विष खाइने परे, अग्नीमांही पेसीने परे, पाणीमांही पेशीन परे, ते आचरवा योग्य नहि एवा उपगरणनो सेवनार एवो होय ते एणाने जन्म मरण उपराते ॥ २६६ ॥

अर्थः-इ० ए पूर्वे कह्या ते पा० प्रगट क०कीधा थु० निर्धरे ॥ ना०ज्ञान दर्शी श्रीमहावीर देव ॥ प० कषाय एणी अग्नी उपशमावी शितली थुन थइ मोक्ष पोहता तेणे भगवंते छ० छत्रीश उ० उत्तराध्ययन म०

पानुं	लीटी	अशुद्धं	शुद्धं
३८	८४	सोतोश्नादाकि	सीतोष्णादी
४०	१९	नग्र	नग्र
५२	२७	वळाए	वेळाए
५६	९	पाणहार	खावणहार
६४	१५	पाणव	प्राणवध
६५	१०	निवाहवा	निर्वाहवाने
७२	१३	वचग्र	वचन
७४	२५	वचन	वचनरुप
८०	१२	आ ।	आत्माना
८०	१४	भीक्षांती	भीक्षावृती
८४	५	कुर्गतोये	कुगतीये
८४	११	–ठी	माठी
८६	६	शक्रेद्र	शक्रेंद्र
८६	१५	राजकणी	राजरुपी
८७	३	महावीर	महावीरे

पानुं	लीटी	अशुद्धं	शुद्धं
९१	१३	मात्रनो	मात्रनो
९३	१२	उद्वेपणुं	उद्वेगपणुं
९५	२५	सयंम	समय
९६	२२	बोणहार	बोलणहार
१०५	२६	परवारादि	परवादादि
१२६	१	गृद्धने	गुद्ध
१३१	२१	मार्गोना	मार्गना
१३३	१६	वंधाधाथी	वंधायाथी
१४७	१०	सेवेनार	सेवनार
१५४	२४	सेवयाकरवाना	सेवयानी
१६४	२१	आश्रनो	आश्रवनो
१६६	३	सध्याय	सज्ञाय
१६७	२५	मनुश	मनुष्य
१६८	१४	मुओ	मुए
१७५	२१	सोवरान	रावीराज

पानुं	लीटी	अशुद्धं	शुद्धं
२९४	१६	आवसथिए	आवसीयाए
२९५	२२	पारसीए	पोरसीए
२९६	१७	भागीने	मागीने
२९८	२४	गलाया	गलीया
३००	२५	कुशिष्श	कुशिष्य
३०७	१९	ज्ञान	ज्ञान
,,	२१	,,	,,
३०७	३०	सामायने	सामान्यने
३०८	१९	वयां	कयां
३०८	२१	कयांछे	कयांवसेछे
३१३	१७	सत	सतक
३२१	५	धुरथीज	मुळथीज
३३०	५	भक्तापे	भक्तीपे
३३३	२५	आसातना	असाता
३३७	७	दुगळ	पुद्गळ

पानुं	लीटी	अशुद्धं	शुद्धं
३४३	८	घणी	घणो
,,	३०	उगरण	उपगरण
३५०	१५	परपाखडियादिना	परपाखंडि आदिना
३५२	५	अमोनज्ञ	अमनोज्ञ
३५३	१३	जीपवे	जीतवे
३६६	२८	आलवचो	आलोचवो
३६९	४	असंमथी	असंजमथी
३७२	२२	वंतीया	वतीया
३७५	३०	आहियासीया	अहियासीया
३७६	२१	अणचार	अणाचार
३७९	६	सांभळो	सांभळ
३८०	२५	तिर्थकरे	तिर्थंकरे
३८१	७	तृणाने	तृष्णाने
३८४	२६	उपनावना	उपनावाना

पानं	लीटी	अशुद्धं	शुद्धं
३९०	२३	मृषावादनो	मृषावादनं
३९३	३	यावज्जीवने	यावज्जीवने
३९९	१३	ग्राहे	ग्रोक
४००	६	पाडयो	पीडयो
४०२	२०	वेदंए	वोदंए
४०४	१५	इमनां	समनां
४०५	५	स्दा	स्दा
४१०	२१	उड	आड
४१३	१९	वोहनानी	वोहनीनी
४१५	२७	नयमेनसके	मे नयमेनसके
४२०	२३	नरस्ने	चरने
४१६	१९	पृथ्वीसाकिनी	पृथ्वीसाहिनी
४३८	१३	पृढ	पृढ
४३९	१४	सासनो	सम्बन्धो

पानं	लीटी	अशुद्धं	शुद्धं
४४१	१	हांग	हांग
४४२	७	परमगुंभा	परमाणुंभा
४४५	९	परीणाम्याछे	परीणम्याछे
४५०	६	मंग	गंप
४५४	२३	मुहस्तने	गुहस्तने
४५८	१९	निशग	निशग
४६३	३	शरीरंत	शरीरंत
४७१	७	सस्थानना	संस्थानना
४७३	७	मंप	गंप
४७७	३	भेत	अंतर
४७७	२६	संकर प्रभा	संकर प्रभा
४८२	२३	भेगादिकन	भेगादिकने
४८३	२१	कृष्णांति	कृष्णांति

मूळ श्लोक शुद्धिपत्रं.

अध्ययन	श्लोक	अशुद्धं	शुद्धं
२	२३	लध्धुं	लद्धुं
१२	१६	किं तु	किं नु
१४	५	सुचिण्ण	सुचिण्णं
२०	२२	अधी या	अधीया
२१	१२	दंसियं	देसियं
२२	४६	धम्मे	धम्मे
२५	२७	नोवलिप्पइ	नोवलिप्पइ
२९	७२	०सेसाए	०सेसाउए
३४	१४	वारुणी एव रसो	वारुणीए व रसो
३५	११	पुढवीकाय	पुढवीकट्ठ (टीकाकार)
३६	१३	पप्पते नाई	पप्प ते नाईया
३६	१३८	उ दंसा	उदंसा
,,	२०७	दिसा	ठिया (टीकाकार)
,,	२२३	सणं कु०	सणंकु०

छ० छद गं० विषयना गृद्धपणाने सि० संसारना सनेह च० वली । न० नकं० वांछे पु० पूर्व जेहस्युं सं० परिचय होइ तेहने ॥ ४ ॥

मूलः—एयमट्ठं सपेहाए पासे समियदंसणे ।
छिन्द गेद्धिं सिणेहं च न कङ्के पुव्वसंथवं ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थः—ए पुर्वोक्त अर्थने समकित दृष्टी पोतानी बुद्धिए करी देखी मिथ्यात्वने त्या संसारना स्नेहने छेदी विषयना गृद्धपणाने तजी पुर्वे जेहनी साथे परीचय होय तेने न इच्छे ॥ ४ ॥

अर्थः—गा० गाइ प्रमुख अ० घोडा म० मणी रत्नादिक । कुं० कर्णादिकनां कुंडल । प० हाथी प्रमुख दा० चाकरना पो० समूह स० सर्व ए० ए पूर्वे कह्या तेहने च० छांडिने णं० अलंकारे संजम पालीने का० अभीलाषा करे तेहवी । रु० रुपनो विक्रयनो करनार देवता भ० थाइस्य ॥ ५ ॥

मूलः—गवासं मणिकुण्डलं पसवो दासपोरुसं ।
सव्वमेयं चइत्ताणं कामरूवी भविस्ससि ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः—गुरु कहे छे हे शिष्य ! अथवा हे आत्मा ? गाय, अश्व (घोडा), मणि रत्नादिक, कान प्रमुखना कुंडल, हाथी, चाकर प्रमुख ए सर्व छांडीने संयम पालीस तो मनोवंछीत वैक्रिय रुपनो कारण हार एहवो देव थइस ? ॥ ५ ॥

अर्थः—गा० गृहादिक जं० मनुष्यादिक चे० निर्ये । व० सुवर्णादिक । ध० शालि प्रमुख । ज०

पणी । दो० सावद्य करणीनि दुगंछानो करणहार अ० पोतानां पा० पात्रने विषे । दि० दृहस्थोदिषु सु० भोगवे जीमे भो० भोजन ॥ ८ ॥

मूलः—आदाणं नरयं दिस्स नायएज्ज तणामवि ।
दोगुंछी अप्पणो पाए दिन्नं भुंजेज्ज भोयणं ॥ ८ ॥

गाथा ८ भावार्थः—धनादिक परिग्रह नरकनो हेतु जाणीने त्रण मात्र पण अगदो लेवुं नहिए अने सावद्य (पाप) करणीनी दुःगंछा (निंद्या) करी पोताना पात्रने विषे जे भोजन गृहस्थ आपे ते जमे ॥८॥

अर्थः—इ० ए संसार मांहि । ए० एकेक मिथ्याती उ० पद पूरणे म० एम मांने एम परूपे पा० हिंस्यादिक पापने अ० अणत्यजीने एतले हिंसा करयाज करो। आ० पणी पूर्वे जे वडेरावडेरे। आ० जे अनुष्ठान आचर्युं होइ तेहने वि० भलो जाणीने आचरिने। स० तो सर्व दु० दुषथि मु० मुकाइ जीव ॥९॥

मूलः—इहमेगे उ मन्नन्ति अप्पच्चक्खाय पावगं ।
आयरियं विदित्ताणं सव्वदुक्खाण मुच्चई ॥ ९ ॥

गाथा ९ भावार्थः—आ संसारमांही एकेक अन्य दर्शनी एम मांने छे ए हिंसादिक पापने त्यज्या विना एतले हिंसादि पापकर्म करयाज करो, पूर्वे वडेराए अनुष्ठान (क्रिया) आचरेल होय ते भलुं जाणी आचर दायी सर्व दुःखथी मुकाशुं ॥ ९ ॥

अर्थः—इहि मिथ्याति केहवा छे। म० मुषे एम बोलता थका जे ज्ञान ते मुक्तिनुं कारण छे पणि।

सूत्र मळ्याना ठेकाणां.

शा. श्रीभोवनदास रुघनाथदास–ठे. आकाशट कुवानी पोळ,
अमदावाद.

शा. बालाभाइ छगनलाल–ठे. कीकाभट्टनी पोळ.
अमदावाद.

शा. पोपटलाल मोतीलाल–ठे. तळीयानी पोळ

त्राण शरण न थाय ॥ ११ ॥

अर्थः—जे० जे के० कोइ स० सरिरने विषे स० आशक्त छे । व० सरिरना वर्णने विषे । रू० रूपने विषे य० वली स० सर्व प्रकारे । म० मनेकरि का० कायाइ करि व० वचने करि स० सघला ने० ते अज्ञानी दुः दूपनांसं० भोगवणहार जाणवा ॥ १२ ॥

मूलः—जे केइ सरीरे सत्ता वण्णे रूवे य सव्वसो ।
मणसा कायवक्केणं सव्वे ते दुक्खसंभवा ॥ १२ ॥

गाथा १२ भावार्थः—जे कोइ मन वचन कायाये करी सर्वथा प्रकारे शरीरने विषे वर्ण रूपादिकथी आशक्त छे ते सर्व अज्ञानी दुःखना भोगवनार जाणवा ॥ १२ ॥

अर्थः—आ० पांन्या दी० लांबा अ० पंथने अ० अनंता सं० संसारने विषे त० ते माटे स० सर्व प्रकार व्यादिकना स्वरुपने प० देखतो थको । अ० प्रमाद रहित छतो प० संजमने विषे प्रवर्ते ॥ १३ ॥

मूलः—आवन्ना दीहमद्धाणं संसारम्मि अणन्तए ।
तम्हा सव्वदिसं पस्सं अप्पमत्तो परिव्वए ॥ १३ ॥

गाथा १३ भावार्थः—जेहनो अंत नथी अने आदि पण नथी एवा संसाररूप लांबा पंथने विषे पड्या, तेथी सर्व प्रकारे व्यादिक जीवना स्वरुपने देखतां थको (जाणतोयको) प्रमाद रहीत थइ संयमने विषे साधु प्रवर्ते ॥१३॥

अर्थः—च० च्यार गतियी बाहिर उ० उर्द्धगतिने प्रगतिने । आ० अंगिकार करिने । ना० न वछि

परमाधमादिक । प० दुष्कर्म अग्नि करि । पचता जीवने क० कर्मे करि ॥ ना० नहि अ० समर्थ.कोइ दु० दुष्कर्मी थी० मूंकावनाने ॥ ६ ॥

मूलः-थावरं जंगमं चेव धणं धन्नं उवस्सरं ।
पचमाणस्स कम्मेहिं नालं दुक्खाओ मोयणे ॥६॥

गाथा ६ भावार्थः—पर स्थ मनुष्यादिक, सुवर्णादि पनने आली प्रमुख धान्य, गरवखरी प्रमुख ए सर्व पोताना कर्मे करी दुःखरूप अग्नीये पचनाथकाने दुःखथी मुकावनाने कोइ समर्थ नथी ॥ ६ ॥

अर्थः—अ० मनने विषे अ० रखे स० सर्व सुप स० सर्वथा प्रकारे इच्छना संज्ञोगादिकथी उपनुं ते सुख सर्वने वल्लभ छे ए भाव दि० एम देखीने वि० प्रिय वाल्यो छे आत्मा जेहने एवा पा० जीवने न० न ह० हणे पा० प्राणीना पा० प्राणने । ध० सात भयथी वे० जीवना वारणी उ० निवर्त्तो सोइ.साधू ॥.७॥

मूलः-अज्झत्थं सव्वओ सव्वं दिस्स पाणे पियायए ।
न हणे पाणिणो पाणे भयवेराओ उवरए ॥ ७ ॥

गाथा ७ भावार्थः—ए सर्व सुख दुःख आत्मा थकी उपने छे एम जोइ सर्व जीवने पोत पोताना प्राण प्रीय छे एटले वाल्हा छे एम जाणीने साधू एकेंद्रियादीक जीवोना प्राणने हणे नहीं अने तेने भय उपजा वानी त्य, तेनी त्यागे वैर करवाथी निवर्त्या छे ॥ ७ ॥

अर्थः—आ० धनादिक परिग्रह न० नरकनुं हेतु छे दि० एम देखीने । ना० न लेइ त० त्रस थाव ८०

तलो पग स० साधु । पं० पंखी जिम प० पोतानी पांखने स० ग्रहिने उडे तीम साधु प० पोताना पात्रादिक उपगरणने स० ग्रहिने नि० किसीइ अभिलाषा रहित थको प० संजम मार्गे चाले ॥ १६ ॥

मूलः—सन्निहिं च न कुव्विज्जा लेवमायाए संजए ।
पक्खीपत्तं समादाय निरवेक्खो परिव्वए ॥ १६ ॥

गाथा १६ भावार्थः—पात्र खरडाय तेटलुं लेपमात्र पण आहारादिकनुं रात्रीए वासी राखवुं साधु न करे अने जेम पंखणी पोतानी पांख ग्रहीने उडे तेम कोइ प्रकारनी अभिलाषा रहीत थको पात्रादिक पोताना उपगरण ग्रहीने साधु संयम मार्गने विषे चाले ॥ १६ ॥

अर्थः—ए० एषणा समतिने विषे ल० लजावंत थको गा० ग्रामादिकने विषे अ० प्रतिबंध रहित थको च० प्रवर्ते अ० अममत्व थको प० गृहस्थना घरने विषे पि० आहारने ग० गवेषे ॥ १७ ॥

मूलः—एसणासमिओ लज्जू गामे अणियओ चरे ।
अप्पमत्तो पमत्तेहिं पिण्डवायं गवेसए ॥ १७ ॥

गाथा १७ भावार्थः—एषणा समतिने विषे लजावंत थको गृहस्थना घरने विषे अममत्वपणे आहारने गवेषी (शोधी) गाम नगरने विषे अप्रतिबंध थको साधु विचरे ॥ १७ ॥

अर्थः—ए० एणी परे से० ते महावीर उ० कहिना हुवा अ० प्रधान ना० केवल ज्ञानवंत ॥ अ० प्रधान दं० केवल दर्शन अ० प्रधान ना० ज्ञान दं० दर्शन ध० धरणहार । अ० अरिहंत ना० ज्ञान पुत्र महावीर ।

परवाणादिक । प० दुष्टस्य अग्नि करि । पचना जीवने रू० कर्मे करि ॥ ना० नहि अ० समर्थ कोइ तृ० दुष्टकी षो० मूंकावनाने ॥ ६ ॥

मूलः—थावरं जंगमं चेव धणं धन्नं उवक्खरं ।
पडमाणस्स कम्मेहिं नालं दुक्खाओ मोयणे ॥६॥

गाथा ६ भावार्थः—घर स्त्री मनुष्यादिक, गुरुवांदि पनने त्राजी प्रमुख धान्य, परस्परारी प्रमुख ए सर्व पोताना कर्मे करी दुःखरुप आवीय पचनाथकाने दुःखथी मुकावनाने कोइ समर्थ नथी ॥ ६ ॥

अर्थः—अ० मनने विषे अ० रहो स० सर्व सुप स० सर्वथा प्रकारे इहना संजोगादिकथी उपनुं ते सुख मर्शने कारण छे ए बाह्य दि० एम देखीने पि० प्रिय वाल्हो छे आत्मा तेहने एहवा पा० जीवने न० न ह० हणे पा० वांछीना पा० पाणने । ध० सात भयथी वे० जीवना वारथी उ० निवर्त्यो होइ-साधू ॥.७॥

मूलः—अज्झत्थं सव्वओ सव्वं दिस्स पाणे पियायए ।
न हणे पाणिणो पाणे भयवेराओ उवरए ॥ ७ ॥

गाथा ७ भावार्थः—ए सर्व सुख दुःख आत्मा थकी उपजे छे एम जोइ सर्व जीवने पोताना माण मीत्र छे एहवे भावना छे एम जाणीने सावु एकेंद्रियादीक जीवोना प्राणने हणे नही अने तेने भय उपजा करावी एवं, तेनी साथे वैर करवाथी निवर्त्या छे ॥ ७ ॥

अर्थः—आ० पोतादिक परिग्रह न० नरकनुं हेतु छे दि० एम देखीने । ना० न लेइ त० त्रस थावर ज०

तलो पग स० साधु । पं० पंपी जिम प० पोतानी पांखने स० ग्रहिने उडे तीम साधु प० पोताना पात्रादिक उपगरणने स० ग्रहिने नि० किसीइ अभिलाषा रहित थको प० संजम मार्गे चाले ॥ १६ ॥

मूलः—सन्निहिं च न कुव्विज्जा लेवमायाए संजए ।
पक्खीपत्तं समादाय निरवेक्खो परिव्वए ॥ १६ ॥

गाथा १६ भावार्थः—पात्र खरडाय तेटलुं लेपमात्र पण आहारादिकनुं रात्रीए वासी राखवुं साधु न करे अने जेम पंखणी पोतानी पांख ग्रहीने उडे तेम कोइ प्रकारनी अभिलाषा त्या प्रतिबंध रहीत थको पात्रादिक पोताना उपगरण ग्रहीने साधु संयम मार्गने विषे चाले ॥ १६ ॥

अर्थः—ए० एषणा समतिने विषे ल० लजावंत थको गा० ग्रामादिकने विषे अ० प्रतिबंध रहित थको च० प्रवर्ते अ० अममत्त थको प० गृहस्थना घरने विषे पि० आहारने ग० गवेषे ॥ १७ ॥

मूलः—एसणासमिओ लज्जू गामे अणियओ चरे ।
अप्पमत्तो पमत्तेहिं पिण्डवायं गवेसए ॥ १७ ॥

गाथा १७ भावार्थः—एषणा समतिने विषे लजावंत थको गृहस्थना घरने विषे अममत्तपणे आहारने गवेषी (शोधी) गाम नगरने विषे अप्रतिबंध थको साधु विचरे ॥ १७ ॥

अर्थः—ए० एणी परे से० ते महावीर उ० कहिता हुवा अ० प्रधान ना० केवल ज्ञानवंत ॥ अ० प्रधान दं० केवल दर्शन अ० प्रधान ना० ज्ञान दं० दर्शन ध० धरणहार । अ० अरिहंत ना० ज्ञात पुत्र महावीर ।

अ० मुक्तिनो साधन अणकर्ता थका य० कथी। वं० बंधने य० मोक्षने प० अंगीकार कीधा छे जेणे एनले मोडदे बंध मोक्षने कहे पण परमार्थ शून्य। वा० वचनने वि० वीर्य माने करिने स०म्यक्त्वगो करे रहियाताहरि। अ० आत्माने पोताने परने रिक्त। पण परमार्थनां अजाण ॥ १० ॥

मूलः—भणन्ता अकरेन्ता य बन्धमोक्खपइण्णिणो।
वायाविरियमेत्तेण समासासेन्ति अप्पयं ॥ १० ॥

गाथा १० भावार्थः—आ जगतने विषे अनेक कुतिर्थि एम माने छे के क्रिया अज करवाथीने फक्त ज्ञान भणवाथीज ए जीव मुक्ति भाग एम वचनना भांडवरे करी बंध मोक्ष कहे, पण क्रिया कांइ करे नहीं अने अमे ज्ञानपीज मोक्ष पामीशुं अर्थात अमारे क्रिया करवानी कांइ जरूर नथी एम कही पोताना आत्माने शांत करे ॥ १० ॥

अर्थः—न० नहि वि० विचित्र प्रकारनी। ता० वाण सरखी या० याता कु० नो किहांयी वि० कुरियानो सा० सीषवयो। वि० पूंता छे पा० पापकर्मे करि या० अज्ञानि थका पं० पंडितपणो मा० मानि छे ॥ ११॥

मूलः—न चित्ता तायए भासा कुओ विज्जाणुसासणं।
विसन्ना पावकम्मेहिं बाला पण्डियमाणिणो ॥ ११ ॥

गाथा ११ भावार्थः—जेओ कुविद्यानी शिक्षामणे रुच्या थका पाप कर्मे करी अज्ञानी थका पंडीत पणुं माने पण ते विचित्र प्रकारनी संस्कृतादिक भाषा शुभ अनुष्ठान (क्रिया) विना ते जीवने दुर्गतिने पडता

चपणु पामे ॥ १७ ॥

अर्थः—त० तेवार पछि जि० वे गति हार्याथका स० सदा होय । दु० वे प्रकारे दो दुर्गति ग० गयो पहुतोथको । दु० दोहिलो त० ते अज्ञानिने । उ० निकलवो ते वे गति मांहिथी । अ० आगामीए काले मु० मतिहे चि० वणो अ० पण ॥ १८ ॥

मूलः—तओ जिए सइं होई दुविहं दोग्गइं गए ।
दुल्लहा तस्स उम्मग्गा अद्धाए सुइरादवि ॥ १८ ॥

गाथा १८ भावार्थः—तेवार पछि मनुष्य ने देवतानी गति हारीने नर्क ने तिर्यंचनी बे गतिपे गयोथको ते अज्ञानिने भविष्यकाळ उपर वे गतिमांहीथी निकळवुं वणुंज दुष्कर ॥ १८ ॥

अर्थः—ए० एणीपरे जि० हार्यो । स० पोतानी ज्ञानदृष्टि आलोचीने जोग्यो । तु० तोलीने वा० अज्ञानपणे । च० वली पं० पंडितपणो मू० मूळगी पूंजीमांहि ते० ते जीव प० प्रवेश करे । मा० मनुष्यनी जो० जोनि मनुष्यपणामते । अ० पामे जे० जे नर जीव ॥ १९ ॥

मूलः—एवं जियं सपेहाए तुलिया बालं च पण्डियं ।
मूलियं ते पवेसन्ति माणुसिं जोणिमन्ति जे ॥ १९ ॥

गाथा १९ भावार्थः—एणीपरे मूळगी पुंजी हार्यो ते अज्ञानपणुं, पोतानी ज्ञानदृष्टीए आलोची तोलीने

देहने निर्दोष आहारादिके करि स० राषेपाले ॥ १४ ॥

मूलः—चहिया उद्धमादाय नाअक्कंसे कयाइ वि।
पुव्वकम्मखयट्ठाए इमं देहं समुद्धरे ॥ १४ ॥

गाथा १४ भावार्थः—चार गतिथी उंची पती मोक्षगतीने पोताना करमां राखीने कोइ वखते विषय कषायने इच्छे नहीं अने पाउला कर्म खपावाने वास्ते निर्दोष आहारे करी पोताना देहने पाले ॥ १४ ॥

अर्थः—वि० टाले क० कर्मना हे० हेतु मिथ्यात्वादिक । का० साधूनी करणीना अवसरने क० वांछणहार प० संजमभार्गे सवर्ते मा० मर्यादा जाणीने पि० आहारने पा० पाणीने । क० वृहस्थे पोता ने काजे कीधो एवा आहारने ज० पांचीने म० भिक्षे ॥ १५ ॥

मूलः—विविच्च कम्मुणो हेउं कालकंखी परिव्वए।
मायं पिण्डस्स पाणस्स कडं लद्धूण भक्खए ॥ १५ ॥

गाथा १५ भावार्थः—मिथ्यात्वादिक कर्मना हेतुने टालीने साधु क्रियाने काळ वळाए (वखतसर) करतो थको संयमने विषे सवर्ते अने वृहस्थे पोताने अर्थे आहार पाणी बनावेल होय एवो निर्दोष आहार मर्यादा पूर्वक पामीने साधु जमे ॥ १५ ॥

अर्थः—सं० आहारादिकनो वासी रापवो च० समूचणवे अर्थे न० नकु० करे ले० लेप मात्र परहाइ ते

चपणु पामे ॥ १७ ॥

अर्थः—त० तेवार पछि जि० वे गति हार्याथका स० सदा होय । दु० वे प्रकारे दो दुर्गति ग० गयो पहुतोथको । दु० दोहिलो त० ते अज्ञानिने । उ० निकलवो ते वे गति मांहिथी । अ० आगामीए काले मु० अतिहे चि० घणो अ० पण ॥ १८ ॥

मूलः—तओ जिए सइं होई दुविहं दोग्गइं गए ।
दुल्लहा तस्स उम्मग्गा अद्धाए सुइरादवि ॥ १८ ॥

गाथा १८ भावार्थः—तेवार पछि मनुष्य ने देवतानी गति हारीने नर्क ने तिर्यंचनी बे गतिये गयोथको ते अज्ञानिने भविष्यकाळ उपर वे गतिमांहीथी निकळवुं घणुंज दुष्कर ॥ १८ ॥

अर्थः—ए० एणीपरे जि० हार्यो । स० पोतानी ज्ञानदृष्टि आलोचीने जोज्यो । दु० तोलीने बा० अज्ञानपणे । च० वली पं० पंडितपणो मू० मूलगी पूंजीमांहि ते० ते जीव प० प्रवेश करे । मा० मनुष्यनी जो० जोनि मनुष्यपणामते । अ० पामे जे० जे नर जीव ॥ १९ ॥

मूलः—एवं जियं सपेहाए तुलिया बालं च पण्डियं ।
मूलियं ते पवेसन्ति माणुसिं जोणिमन्ति जे ॥ १९ ॥

गाथा १९ भावार्थः—एणीपरे मूळगी पुंजी हार्यो ते अज्ञानपणुं, पोतानी ज्ञानदृष्टीए आलोची तोळीने जो, वळी पंडीतपणुं ते मूळगी पुंजी मनुष्यपणानी तेना विषे प्रवेश करे एवंज जीवो स्वरूप करीने

अर्थः—मा० मनुष्य गतिने मनुष्यपणो पामवा त म० होय मू० मूलगा पूंजी । लो० लाभ ने मनुष्य मरिने दे० देवगति म० होय । मू० मूलगी पूंजीने छे० छेदी नांख्या होय जी० जीवने । न० नरकगतो वि० तिर्यंचपणो धु० निश्चे होय ॥ १६ ॥

मूलः—माणुसत्तं भवे मूलं लाभो देवगई भवे ।
मूलच्छेएण जीवाणं नरगतिरिक्खत्तणं धुवं ॥ १६ ॥

गाथा १६ भावार्थः—मनुष्य भवी मनुष्यपणुं पामे तेणे मूळगी पुंजी राखी, मनुष्य भवी देवता थाय ते लाभने पाम्यो, मनुष्य भवी नर्क तिर्यंचगतिमां जाय ते मूळगी पुंजी हार्यो ॥ १६ ॥

अर्थः—दु० बेहु प्रकारनीग० गतिनरक ? । तिर्यंचनीर। पा० अज्ञानिने होय ते गति केवीरीते। जा० आपदा पीडा व० मरण मू० ए व मूल आदि ते जेहने आपदा अने वध पणो छे ते गति माहि उपजे । दे० देवतापणो । मा० मनुष्यपणो च० वधी । जे० जे भणी जि० हार्यो लो० मांसादिकनी लोलताए नरक । ति० पुनं तेणेकरि तिर्यंचपणो पामे ॥ १७ ॥

मूलः—दुहओ गई बालस्स आवई वहमूलिया ।
देवत्तं माणुसत्तं जं जिए लोलयासढे ॥ १७ ॥

गाथा १७ भावार्थः—त्रिा। पणी आपदा (पीडा) ने वध (मरणं) रूप मूळ छे जेहनुं एवी नर्कने तिर्यंच वे गति अज्ञानीने होय. देवता ने मनुष्यपणुं हारी लेमांसादीकनी लुब्धताये नर्कपणुं ने धर्तबाए तिर्यं-

ओदणं जवसं देज्जा पोसेज्जा वि सयङ्गणे ॥ १ ॥

गाथा १ भावार्थः—सातमा अध्ययननो भावार्थ कहे छे. जेम कोइ निर्दय पुरुष प्राहुणा (ग्राहकने) ने वास्ते पोताना घरना आंगणाने विषे वोकडाने मग, अडद, चोखादिक खवरावी पोषे (पाळे) ॥ १ ॥

अर्थः—त० तिवार पछी से० ते वोकडो पु० पुष्टो थयो मांसेकरी प० समर्थ थयो । जो० उपन्यो मे० मेद म० । मोटो थयो उ० पेट । पी० तृप्ती थयो । वि० मोटुं थयुं दे० शरीर एहवो वोकडो । आ० प्राहुणाने परमार्थे प० वांछे ॥ २ ॥

मूलः—तओ से पुट्ठे परिवूढे जायमेदे महोदरे
पीणिए विउले देहे आएसं परिकङ्खए ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः—ते वार पछी ते वोकडो मांसादिके करी समर्थ मकारे पुष्ट थयो (जाडो थयो) अने मेद (मांस) वधवाथी पेट तथा शरीर जेनुं मोटुं थयुं, ते वारे घरधणी प्राहुणा (ग्राहक) ने इच्छे के हवे प्राहुणो आवे तो भलुं थाय ॥ २ ॥

अर्थः—जा० जिहां लगे न० न ए० आवे आ० प्राहुणा ता० तिहां लगे जी० जीवेछे सो० ते वोकडो दु० दुषी परमार्थे । अ० हवे आ० प्राहुणो प० आवे छते । सी० मस्तकने छे० छेदिने भु० भोगवे ॥ ३ ॥

मूलः—जाव न एइ आएसे ताव जीवइ सो दुही ।
अह पत्तंमि आएसे सीसं छेत्तूण भुज्जई ॥ ३ ॥

अर्थः—मा० मनुष्य मरिने मनुष्यपणो पामशे ते म० होय मू० मूलगी पूंजी । ला० लाभ ने मनुष्य मरिने दे० देवगति भ० होय । मू० मूलगी पूंजीने छे० छेदी घोर होय जी० जीवने । न० नरगपणो ति० तिर्यंचपणो धु० निश्चे होय ॥ १६ ॥

मूलः—माणुसत्तं भवे मूलं लाभो देवगई भवे ।
मूलच्छेएण जीवाणं नरगतिरिक्खत्तणं धुवं ॥ १६ ॥

गाथा १६ भावार्थः—मनुष्य भरी मनुष्यपणुं पामे तेणे मूळगी पुंजी राखी, मनुष्य भरी देवता थाय ते लाभने पाम्यो, मनुष्य भरी नर्क तिर्यंचगतियां जाय ते मूळगी पुंजी हार्यो ॥ १६ ॥

अर्थः—दु० दहु प्रकारनीग० गतिनरक ? । तिर्यंचनीर० वा० अज्ञानिने होय ते गति केहवीछे।आ० आपदा पीडा व० भरवू मू० ए व मूल आदि छे जेहने आपदा अने वध गणो छे ते गति माटि उपजे । दे० देवनापणो । मा० मनुष्यपणो प० वली । जं० जे भणी नि० हार्यो लो० मांसादिकनी लोलताए नरफ । स० पूर्व तेणेकरि तिर्यंचपणो पामे ॥ १७ ॥

मूलः—दुहओ गई बालस्स आवई वहमूलिया ।
देवत्तं माणुसत्तं जं जिए लोलयासढे ॥ १७ ॥

गाथा १७ भावार्थः—त्रिहां पण आपदा (पीडा) ने वध (मरवुं) रूप मूळ छे जेहनुं एवी नर्कने तिर्यंच वे गति अज्ञानीने होय. देवता ने मनुष्यपणुं हारी लेमांसादीकनी लुब्धतायें नर्कपणुं ने पर्तावाए तिर्य-

ओदणं जवसं देज्जा पोसेज्जा वि सयङ्गणे ॥ १ ॥

गाथा १ भावार्थः—सातमा अध्ययननो भावार्थ कहे छे. जेम कोइ निर्दय पुरुष माहुणा (ग्राहकने) ने वाश्ते पोताना घरना आंगणाने विषे वोकडाने मग, अडद, चोखादिक खवरावी पोषे (पाळे) ॥ १ ॥

अर्थः—त० तिवार पछी से० ते वोकडो पु० पुष्टो थयो मांसेकरी प० समर्थ थयो । जो० उपन्यो मे० मेद म० । मोटो थयो उ० पेट । पी० तृप्ती थयो । वि० मोटुं थयुं दे० शरीर एहवो वोकडो । आ० माहुणाने परमार्थे प० वांछे ॥ २ ॥

मूलः—तओ से पुट्ठे परिवूढे जायमेदे महोदरे
पीणिए विउले देहे आएसं परिकङ्खए ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः—ते वार पछी ते वोकडो मांसादिके करी समस्त प्रकारे पुष्ट थयो (जाडो थयो) अने मेद (मांस) वधवाथी पेट तथा शरीर जेनुं मोटुं थयुं, ते वारे घरधणी माहुणा (ग्राहक) ने इच्छे के हवे माहुणो आवे तो भलुं थाय ॥ २ ॥

अर्थः—जा० जिहां लगे न० न ए० आवे आ० माहुणा ता० तिहां लगे जी० जीवेछे सो० ते वोकडो दु० दुषी परमार्थे । अ० हवे आ० माहुणो प० आवे छते । सी० मस्तकने छे० छेदिने भु० भोगवे ॥ ३ ॥

मूलः—जाव न एइ आएसे ताव जीवइ सो दुही ।
अह पत्तंमि आएसे सीसं छेत्तूण भुज्जई ॥ ३ ॥

भ० ज्ञानवंत के० जिनेश्वर यकी जिनि सहित मिथ्यादिक के जेहने ते भगवंत । नि० करवुं अध्ययन नि० एम वे० हुं कहुं छुं. ॥ १८ ॥

मूलः—एवं से उदाहु अणुत्तरनाणी अणुत्तरदंसी अणुत्तरनाणदंसणधरे ।
अरहा नायपुत्ते भगवं वेसालिए वियाहिए ॥ १८ ॥ त्ति बेमि

इति सूयगडांग नियुक्तिउक्तं पढमं अध्ययनं समत्तं ॥ ६ ॥

गाथा १८ भावार्थः—जेनी जिनेश्वर जिनिने मिथ्यादिक पणा पदा जेनथी (उछराइ) दीके पृथक भने सर्व उत्कृष्ट ज्ञान दर्शनना धरनाहार एवा अरिहंत श्री सिद्धार्थ राजाना पुत्र श्री महावीरदेव स्वामीए सभामध्ये ए पूर्वोक्त अधिकार कह्यो ॥ १८ ॥

एवं सुधर्मास्वामी जंबूस्वामीने कहेना हवा के अहो जंबू जेम मे महावीरस्वामी मने संभलवुं छे तेम तुज मने हुं कहुंछुं. । इति छठा अध्ययननो भावार्थ समाप्त । ए छठा अध्ययनने विषे साधुना गुण स्था साधुनो आचार कह्यो तो तेवा साधु होय ते आहारना वृधी पड शरीर वधावे पण ज्ञान दर्शन चारित्रनी शुद्धि न करे तो बोकडाना दृष्टांते वृत्तिनी करी ते भणी आ सातमुं अध्ययन बोकडा दृष्टांतनुं कहे छे.

अर्थः—जे० जिम ए० आदुकाने स० काजे को० कोइक दयारहित पुरुष पो० पोषे । ए० बोकडाने ते० चोखा मधुर ज० मुग अडदादिकने दे० देइ पो० पोषे आ० संभावनाए स० पोताने ज० मरवे वारणे॥१॥

मूलः—जहा एगं समुद्दिस्स कोइ पोसेज्ज एलयं

वीजाए अणदीधेल वस्तुनो लेनार, चोर, कपटी, केहनुं हरू (चोरू) एहवुं जेहनुं चित्त ने धुवागे ॥ ५ ॥

अर्थः—इ० स्त्रिना वि० पंचेंद्रिना विषयने विषे गि० गृद्धआशक्त ९ य० वलि म० महा आ० आरंभनो १० प० परिग्रहनो लेणहार ११ । भूं० भोगवतोथको सु० मदिराने १२ मं० मांसने १३ । प० अनिहे वू० वख्यो मांस एहवो । प० परनो द० दमणहार १४ ॥ ६ ॥

मूलः—इत्थी विसयगिद्धे य महारम्भपरिग्गहे ।
भुञ्जमाणे सुरं मंसं परिवूढे परंदमे ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः—पांच इंद्रियोना तथा स्त्रिना विषयनेविषे लुब्ध, महाआरंभनो करणहार, महापरिग्रहनो मेलवनार, परजीवने दमन करनार, अने मदीराने मांस भोगववाथी शरीरनो मांस वृद्धि पामेलछे ॥६॥

अर्थः—अ० छाल्याना मांस पाता क० करड करड शब्द थाई । तेउवानो भा० लेकीने पागहार य० पदपुरगे । तु० मोटो पेट थयो चि० उपचित थयो । लो० लोहिनोए १५ अवगुणनो धणी । आ० आवशे न० नरकनुं । कं० वांछे ज० जिम ए० बहुआवे । प० इहांने ए० बोकडो वांछे ॥ ७ ॥

मूलः—अयकक्करभोई य तुन्दिले चियलोहिए ।
आउयं नरए कंखे जहाएसं व एलए ॥ ७ ॥

गाथा ७ भावार्थः—जेने खाना थका करड करड शब्द थाय छे एवा बकरादिकना मांसने लेकीने खानारो, तेथी रुधीर अने मांसे करी जेनुं पेटने शरीर पुष्ट थयुं एवा अवगुणनो धणी जेम बोकडो बांछना-

म० ज्ञानवंत वे० सिद्धिवंत यती क्रिनि सहित विण्याहिक छे जेवने ते भगवंते । ति० कहवुं अध्ययन ति० एम वे० हुं कहुं छुं. ॥ १८ ॥

मूलः—एवं से उदाहु अणुत्तरनाणी अणुत्तरदंसी अणुत्तरनाणदंसणधरे ।
अरहा नायपुत्ते भगवं वेसालिए वियाहिए ॥ १८ ॥ त्ति बेमि

इति सुद्धम नियंठिज्जं पढमं अध्ययनं सम्मत्तं ॥ ६ ॥

गाथा १८ भावार्थः—जेनी सिद्धियें क्रिनिये विण्याहिक पणा एवा भै'यर्या (उपनाम) दीके युक्त अने सर्व उत्कृष्ट ज्ञान दर्शनना धरनहार एवा अरिहंत श्री सिद्धार्थ राजाना पुत्र श्री महावीरदेव स्वामीए सभामध्ये ए पूर्वोक्त अधिकार कह्यो ॥ १८ ॥

एम सुधर्मास्वामी जंबूस्वामीने कहेता हवा के अहो जंबू जेम मे महावीरस्वामी मने संभलाव्युं छे तेम तुज मने हुं कहुंछुं. । इति उदा अध्ययननो भावार्थ समाप्त । ए उदा अध्ययनने विषे साधुना गुण तथा साधुनो सारुं कहयो जो तेवा साधु होय ते आहारना दोषी पड शरीर बचावे एम ज्ञान दर्शन चारित्रनी शुद्धि न करे जो बोकडानो दृष्टांते दुर्गती कही ते भणी आ सातवुं अध्ययन बोकडा दृष्टांतवुं कहे छे.

अर्थः—त० तिम ए० साधुजने स० सर्वे को० कोइक उपसहित पुरुष पो० पोपे । ए० बोकडाने जो० जोवा मळ्या ज० एवां अडादिकने दे० देइ पो० पोषे आ० लेखवताए स० संघरे

बीजाए अणदीधेल वस्तुनो लेनार, चोर, कपटी, केहनुं हरू (चोरू) एहवुं जेहनुं चित्त ने धुतारो ॥ ५ ॥

अर्थः—इ० सिना वि० पंचेंद्रिना विषयने विषे गि० वृद्धआशक्त ९ य० वलि म० महा आ० आरंभनो १० प० परिग्रहनो लेणहार ११ । मूं० भोगवतोथको सु० मदिराने १२ मं० मांसने १३ । प० अतिहे वृ० वध्यो मांस एहवो । प० परनो द० दमणहार १४ ॥ ६ ॥

मूलः—इत्थी विसयगिद्धे य महारम्भपरिग्गहे ।
भुञ्जमाणे सुरं मंसं परिवूढे परंदमे ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः—पांच इंद्रियोना तथा सिना विषयनेविषे लुब्ध, महाआरंभनो करणहार, महापरिग्रहनो मेळवनार, परजीवने दमन करनार, अने मदीराने मांस भोगववाथी शरीरनो मांस वृद्धि पामेलछे ॥६॥

अर्थः—अ० छालाना मांस पाता फ० करड करड शब्द थाई । तेहवानो भा० सेकीने पागहार य० पदपुरगे । तु० मोटो पेट थयो चि० उपचित थयो । लो० लोहिनोए १५ अवयुअनो धणी । आ० आउपो न० नरकनुं । कं० वांछे ज० जिम ए० बाहुणाने । ग० दृष्टांते ए० बोकडो वांछे ॥ ७ ॥

मूलः—अयकक्करभोई य तुन्दिले चियलोहिए ।
आउयं नरए कंखे जहाएसं व एलए ॥ ७ ॥

गाथा ७ भावार्थः—जेने खाता थका करड करड शब्द थाय छे एवा बकरादिकना मांसने शेकीने खानारो, तेथी रुधीर अने मांसे करी जेनुं पेटने शरीर पुष्ट थयुं एवा अवयुअनो धणी जेम बोकडो बाहुणा-

गाथा ३ भावार्थः—ज्यां सुधी प्राहुणो न आवे त्यां सुधी परमार्थथी दुःखे करी ते बोकडो जीवे अने प्राहुणो आववाथी ते बोकडानुं मस्तक छेदीने भोगवे ॥ ३ ॥

अर्थः—ज० जिम से० ते स० तिम्रे उ० बोकडो । आ० प्राहुणाने अर्थे स० कल्पी मूरयो । ए० एणे दृष्टांते बो० अज्ञानि अ० अधर्म वाहालो छे जेहने ई० वांछे न० नरकना आ० आउखाने ॥ ४ ॥

मूलः—जहा से खलु उरब्भे आएसाए समीहिए ।
एवं बाले अहम्मिट्ठे ईहई नरयाउयं ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थः—जेम ते बोकडाने निमे प्राहुणाने अर्थे फलफूल होवाथी परमार्थे ते प्राहुणानो इच्छीत कहीए, तेम जेहने अधर्म प्रीय छे एवा अज्ञानीने नर्कगती योग्य आचरण आचरवाथी नर्कनुं आयुष्य इछतो कहीए ॥ ४ ॥

अर्थः—हिं० हिंस्यानो करणहार । बा० अज्ञानि २ मृ० जुठावोलो ३ अ० पंथनेविषे वि० पंथीनो लूंटणहार ४ । अ० अनेराना अ० अणदिधाना ह० लेणहार ते० चोर ५ मा० मायाविआ ६ के० केहनुं ह० हस एहवो ७ स० धुतारो ८ ॥ ५ ॥

मूलः—हिंसे बाले मुसावाई अद्धाणम्मि विलोवए
अन्नदत्तहरे तेणे माई कं नु हरे सढे ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः—जेम अज्ञानी, हिंस्यानो करणहार, जुठावोलो, पंथने विषे पंथीने लुटनार,

तेवारे एक नियुतांग थाय. वली नियुतांगने चौरासीलाखगुणा करीए तेवारे एक नियुक्त थाय एवा असंख्याता नियुक्त सुधी देवना आयुष्यनी स्थिति अने असंख्यातागुणा कामभोगने कुबुद्धिवंत हारे छे ॥ १३ ॥

अर्थः—ज० जिम य० वली ति० त्रिण वा० वाणिया मू० मूलगी पूजीने ले० ग्रहिने नि० व्यापार करवा निसर्या निकल्या ए० एक अ० ए त्रण मांहिलो ल० पामीने ला० लाभने । ए० एक मू० मूलगे धने आ० घेर आव्यो ॥ १४ ॥

मूलः—जहा य तिन्नि वाणिया मूलं घेत्तूण निग्गया ।
एगोऽत्थ लहए लाभं एगो मूलेण आगओ ॥ १४ ॥

गाथा १४ भावार्थः—जेम त्रण वाणिया मुळगी पुंजी लइने व्यापार करवा निकळ्या तेमां एक वाणियो मुळगी पूजी वधारवाथी लाभ पाम्यो अने बीजो मुळगी पुंजी लइने घेर आव्यो ॥ १४ ॥

अर्थः—ए० एक मू० मूलगा धनने पि० पण हा० हारिने पोइने । आ० आव्यो त० तिहां थकने विषे वा० वाणियो व० व्यापारने विषे उ० उपमा ए० एत्रिग । ए० एम ध० धर्मने विषे वि० पणतु या० जाणा॥१५॥

मूलः—एगो मूलं पि हारित्ता आगओ तत्थ वाणिओ ।
ववहारे उवमा एसा एवं धम्मे वियाणह ॥ १५ ॥

गाथा १५ भावार्थः—बीजो मूळगी पुंजीने पण हार्यो, अनुक्रमे त्रणे वाणिया पोताना घरने विषे आव्या, ए त्रण व्यापारने विषे ओपमा कही तेम धर्मने विषे पण जाणो ॥ १५ ॥

। वंऊक तेम ते नरकनुं आयुष्य इच्छतो कहीए ॥ ७ ॥

अर्थः—आ० सिंहासनादिक म० पल्यंकादिक जा० रथादिक। दि० यनादिक का० मनोज्ञ शब्दादिकने भोग । भुं० पहला वानां भोगवीने । दु० दोहिलां आ० उपार्जन्युं ध० धनने हि० छांडीने व० पछी कर्म रूपी र० रजने सं० मेलवीने ॥ ८ ॥

मूलः—आसणं सयणं जाणं वित्तं कामाणि भुंजिया ।
दुस्साहडं धणं हिच्चा बहुं संचिणिया रयं ॥ ८ ॥

गाथा ८ भावार्थः—सिंहासनादिक, पल्यंकादिक, रथादिक, धनादिक अने मनोज्ञ (मनने ग पभोग भोगवीने ए सर्व दुःखे करी उपार्जेल धन तेहने छांडी पछी कर्म रूप रजने एकठीने (आ गा थेए नरकी आयाए पुरो थयो) ॥ ८ ॥

अर्थः—न० तिवार पछी क० कर्मे करि ग० भारि थयो न० जीव प० वर्तमानकालना सुखने विषे प र थयो। अ० थोकडानि० पछे आ० आयुष्यो आवे छते म० मरणने अं० छेडे अथवा। सा० सांभला पामे

मूलः—तओ कम्मगुरु जन्तू पच्चुप्पन्नपरायणे ।
आउ घ आगयाएसे मरणन्तम्मि सोयइ ॥ ९ ॥

गाथा ९ भावार्थः—ते वार पछी भारेकर्मी जीव नरकादिकना दुःखथी नहीं डरता वर्तमानका लना विषेज तत्परथको पछी कर्म रूपी रजे करी भारे थाय, जेम पाछुं आवतां थोकडा सोचे ।

सीलवंता सवीसेसा अदीणा जन्ति देवयं ॥ २१ ॥

गाथा २१ भावार्थः—जे जीवने पांच अणुव्रत, महाव्रतादिकनी शिक्षाए करीने गुणोएकरी सहीत होय अने कष्ट पडे धर्मने विषे दृढ रही कायरपणा रहीत होय ते मुळगी पुंजी, मनुष्यपणुं तेने ओलंघीने लाभरुप देवतापणुं पामे ॥ २१ ॥

अर्थः—ए० एणीपरे देवपणो पामे ते कोण । अ० दीनपणारहित भि० साधू आ० च० वली देशव्रतनि गृहस्थ तेहने वि० जाणीने । क० किंम णु० विचारणाए जि० हारयो ए० एहवो देवपणो मनुष्यपणो । जि० हारतो थको न० न सं० जाणे अपितु विवेकवंत जाणे ॥ २२ ॥

मूलः—एवमद्दीणवं भिक्खुं आगारिं च वियाणिया ।
कहण्णु जिच्चमेलिक्खं जिच्चमाणो न संविदे ॥ २२ ॥

गाथा २२ भावार्थः—एणीपेरे दीन (कायर) पणा रहीत साधु अन देशवरतो गृहस्थ देवतीपणुं पामे, एम जाणीने विषय कषाये करी देव तथा मनुष्यपणुं शुं विवेकी हारे ! (अर्थात विवेकी न हारे) ॥ २२ ॥

अर्थः—बोकडो१ कांगणी२ राजा ।३ वाणियो४ ए ४ दृष्टांत कथा हवे पांचमो दृष्टांत कहे छे । ज० जिम कु०डामना अ०अग्र उपरे उ०पाणीनो बिंदुओ स०समुद्रना पाणी स०संघाते ।मि०माफिए पण पासेगे (चडामां) पण नावेए० एणे दृष्टांते मा० मनुष्य संबंधी का० कामभोग । दे० देवताना का० कामभोगने अ० समीपे॥२३॥

मूलः—जहा कुसग्गे उदगं समुद्देण समं मिणे ।

नो बंधक तेम ते नरकनुं आयुष्य इच्छतो कहीए ॥ ७ ॥

अर्थः—आ० सिंहासनादिक स० पल्यंकादिक आ० रथादिक। वि० धनादिक का० मनोज्ञ शब्दादिकना कामभोग। भुं० एटला वानां भोगवीने। दु० दोहिलो आ० उपार्जेलुं प० धनने छि० छांडीने व० पापी कर्म रूपणी र० रजने सं० मेलवीने ॥ ८ ॥

मूलः—आसणं सयणं जाणं वित्तं कामाणि भुंजिया ।
दुस्साहडं धणं हिच्चा बहुं संचिणिया रयं ॥ ८ ॥

गाथा ८ भावार्थः—सिंहासनादिक, पल्यंकादिक, रथादिक, धनादिक अने मनोज्ञ (मनने गमतां) कामभोग भोगवीने ए सर्व दुःखे करी उपार्जेल धन तेहने छांडी पापी कर्म रूप रजमेळवीने (आ गाथानो संबंध नवमी गाथाए पुरो थशे) ॥ ८ ॥

अर्थः—त० तिवार पछी क० कर्मे करि गु० भारि थयो ज० जीव प० वर्तमानकालना सुखने विषे प० तत्पर थयो। अ० योकहानि व० परे आ० आवतो आवे छते म० मरणने अं० छेडे अधर्मि। सा० सोचना पामे ॥९॥

मूलः—तओ कम्मगुरु जन्तू पच्चुप्पन्नपरायणे ।
आउ ग्ग आगयाएसे मरणन्तम्मि सोयइ ॥ ९ ॥

गाथा ९ भावार्थः—ते वार पछी भारेकर्मी जीव नरकादिकना दुःखथी नहीं डरता वर्तमानकालना सुखना विषेज तत्परथको पापी कर्म रूपी रजे करी भारे थाय, जेम पाहुणो आवतांथी योकहा शोचे एटले

धर्मथी पडे ॥ २५ ॥

मूलः—इह कामाणियट्टस्स अत्तट्ठे अवरज्झई ।
सुच्चा नेयाउयं मग्गं जं भुज्जो परिभस्सई ॥२५॥

गाथा २५ भावार्थः—आ संसारने विषे जे जीव कामभोगथी निवर्ते नही ते जीव पोताना आत्मानो अर्थ, स्वर्ग तथा मोक्षने विणासे (नाश करे), ज्ञानादिक न्याय मार्ग सांभळीने पण धर्मथी भ्रष्ट थाय ॥२५॥

अर्थः—इ० ए संसारमांहि का० कामभोगथी नि० निवर्त्या पुरुषने । अ० आत्मानो अर्थ । ना० न विणसे विणसे नहि । पू० कोधो दे० एहवो जे उदारिक शरिर तेने नि० निरोधिते । भ० होइ दे० देवता त्ति० ए म मे० मे सु० सांभळ्युं ॥ २६ ॥

मूलः—इह कामानियट्टस्स अत्तट्ठे नावरज्झई ।
पूइदेहनिरोहेणं भवे देवे त्ति मे सुयं ॥२६॥

गाथा २६ भावार्थः—आ संसारने विषे कामभोगथी जे जीव निवर्ते ते जीव स्वर्ग तथा मोक्ष रूप पोतानो अर्थ विणासे नही अने कोहेलुं एवुं उदारीक शरीर छांडीने देवता थाय एम में सांभळ्युं छे ॥२६॥

अर्थः—इ० सुवर्णादिक रुद्धि१ । जु० शरिरनी कांति२ । ज० जशकिर्ति३ । व० शरीरनो वर्ण गंभीरादि गुणनी श्रद्धा४ आ० रोग रहित आउखो५ सु० सर्व सुख ६ अ० ए ६ बोल प्रधान देवपणामांहि पामे । भू० मली ज० जिहां म० मनुष्यपणामांहि ए ६ बोल कर्माने जिहां होय । त० जिहां से० ते पुरुष उ०

पमानेत्र पावे ॥ १९ ॥

अर्थः—मनुष्यपणो पामे ते केहवो छे । वे० विविध मा० मात्राए एटले अनेक प्रकारे सि० पंडितपणादिक । सिप्पाइकरी जे० जे कोइ नं० मनुष्य । गि० गृहस्थपणा मु० लौकिकपणे मनित कारियमुचिं करिइ इ० पामे मा० मनुष्य संबंधी जो० जोनिने क० लोकीक करणी स० सांची छे जेहनी ते सच्चवादी । हु० निश्चे पा० ते प्राणी जीवने ॥ २० ॥

मूलः—नेमायाहिं सिस्साहिं जे नरा गिहिसुवया ।
उवंन्ति माणुसं जोणिं कम्मसच्चा हु पाणिणो ॥ २० ॥

गाथा २० भावार्थः—जे मनुष्य पद्मकमाये, विनयवंत, अपलपरी, एवी अनेक प्रकारनी शीखाएकरी सहित अने लौकीकपण दुष्टमनादिकनो त्यागी मनवादी ने मनितकारीक एवी लौकिक करणी जेनी सारी होवाथी सुव्रति कहेवाय, ते जीव मरीने मनुष्यपणुं पामे. (मतलब समकित तथा मनपंचखाण तो नथी पण लौकिक दृष्टे विषे सारी वर्तणुंक होय ने जाण निंदनीक काम न करे तो मनुष्य मरीने मनुष्यपणुं पामे ॥ २० ॥

अर्थः—जे० जीवने सु० निश्चे वि० विशिष्ट सि० अनुभवादिक सिख्या होय । मू० मूलगी मुंगी मनुष्यपणा प्रत्ये ते० ते सुलभ । अ० अतिशयपणा वर्जणा । सी० अनुभव महाव्रतादिक सहित स० प्रधानमोक्ष प्रधानगुण सहित अ० निरवद्यागति पद्धो अ० पामे दे० देवलोगो ॥ २१ ॥

मूलः—जेसिं तु विउला सिक्खा मूलियं ते अइच्छिया ।

धर्मथी पडे ॥ २५ ॥

मूलः—इह कामाणियट्टस्स अत्तट्ठे अवरज्झई ।
सुच्चा नेयाउयं मग्गं जं भुज्जो परिभस्सई ॥२५॥

गाथा २५ भावार्थः—आ संसारने विषे जे जीव कामभोगथी निवर्ते नही ते जीव पोताना आत्मानो अर्थ, स्वर्ग तथा मोक्षने विणाशे (नाश करे), ज्ञानादिक न्याय मार्ग सांभळीने पण धर्मथी भ्रष्ट थाय ॥२५॥

अर्थः—इ० ए संसारमांहि का० कामभोगथी नि० निवर्त्या पुरुषने । अ० आत्मानो अर्थ । ना० न विणसे विणसे नहि । पू० कोधो दे० एहवो जे उदारिक शरिर तेने नि० निरोधिते । भ० होइ दे० देवता । त्ति० ए म मे० मे सु० सांभळ्युं ॥ २६ ॥

मूलः—इह कामनियट्टस्स अत्तट्ठे नावरज्झई ।
पूइदेहनिरोहेणं भवे देवे त्ति मे सुयं ॥२६॥

गाथा २६ भावार्थः—आ संसारने विषे कामभोगथी जे जीव निवर्ते ते जीव स्वर्ग तथा मोक्ष रूप पोतानो अर्थ विणासे नही अने कोहेलुं एवुं उदारीक शरीर छांडीने देवता थाय एम में सांभळ्युं छे ॥२६॥

अर्थः—इ० सुवर्णादिक रुद्धि १ । जु० शरिरनी कांतिर । ज० जशकिर्ति३ । व० शरीरनो वर्ण गं-भीरादि गुणनी श्लाघा४ आ० रोग रहित आउखो ५ सु० सर्व सुख ६ अ० ए ६ बोल प्रधान देवपणामांहि पामे । भु० वली ज० जिहां म० मनुष्यपणामांहि ए ६ बोल कथांने जिहां होय । त० तिहां से० ते पुरुष उ०

एवं माणुस्सगा कामा देवकामाण अन्तिए ॥२३॥

गाथा २३ भावार्थः—जेम डाभना अग्र उपर रहेला पाणीना बिंदुने समुद्रना पाणी संघाते मापवां डाभना पाणीथी समुद्रनुं पाणी असंख्यातगुणुं अधीक होय, तेम देवताना कामभोग मनुष्यना कामभोगथी असंख्यातगुणा अधीक छे ॥ २३ ॥

अर्थः—कु० डाभनी अणी उपरे बे० मात्र सरिखा इ० ए मनुष्यना का० कामभोग । स० अतिशे थोडा आ० आउखे छते क० किस्यू हे० हेतुने पु० आगलि का० करिने जो० अणपाम्या सुधर्मनी वांछना करवी ते जोग छे० पाम्या सुधर्मनुं पालवुं ते एम बेहुने न० न स० जाणे अज्ञानि जन मिथ्यात्वादिक विषयादिकने विषे आसक्तपणो पामे ए हेतु ॥ २४ ॥

मूलः—कुसग्गमेत्ता इमे कामा सन्निरुद्धम्मि आउए ।
कस्स हेउं पुराकाउं जोगक्खेमं न संविदे ॥२४॥

गाथा २४ भावार्थः—डाभाग्र उपर पाणीना बिंदुनी माफक ए मनुष्यना कामभोग छे. अतिशे थोडा आयुष्यमां विषय कषायमां लुब्ध थइने शा हेतुने सन्मुख करी अणपामेला सुधर्मनी इच्छा ते जोग तथा पामेला सुधर्मनुं रक्षण करवुं ते केमने अज्ञानीओ नही जाणता होय !!! ॥ २४ ॥

अर्थः—इ० ए संसारपांहिथी का० कामभोगथी अ० अनिवर्त्या पुरुषने अ० आत्मानो अर्थ अ० विणशे छे । मु० सांभलिने । ने० ज्ञानादिक न्याय म० मारग । जं० जेहथकी भु० नली प० भ्रष्ट थाय छे

चिच्चा अधम्मं धम्मिट्ठे देवेसु उववज्जई ॥ २९ ॥

गाथा २९ भावार्थः—धैर्यवंतनुं धैर्यपणुं जुओ ? सर्वज्ञ भाषीत क्षमादिक दस प्रकारे यती धर्मादिकने ग्रहण करी अधर्मने तजी धर्मज जेने प्रिय छे ते जीव देवताने विषे उपजे ॥ २९ ॥

अर्थः—तु० तोलिने जोज्यो णं० वचन ऽलंकारभणी वा० अज्ञानपणाने । अ० ज्ञानपणाने च० वली ए० एम पं० पंडित । च० छांडिने वा० अज्ञानपणाने । अ० ज्ञानपणाने से० सेवे अंगीकार करे मु० साधू । त्ति० एम बे० हुं कहुं छउं ॥ ३० ॥

मूलः-तुलियाण बालभावं अबालं चेव पण्डिए ।
चइऊण बालभावं अबालं सेवए मुणि ॥ ३० ॥ त्तिबेमि

॥ इति एलयं सप्तमं अध्ययनं सम्मत्तं ॥७॥

गाथा ३० भावार्थः—अज्ञानपणाने अने ज्ञानपणाने तोळी जोजो ? एम अज्ञानपणाने तजीने ज्ञानपणाने पंडीत अंगीकार करे एम सुधर्मस्वामी पोताना जंबुस्वामी नामना शिष्यने कहेता हवा के हे जबुं ? में श्रीमहावीरदेव समीपे सांभळ्युं हतुं तेम हुं तुंज प्रत्ये कहुंछुं ॥ ३० ॥

इति सातमुं अध्ययन समाप्त. ए सातमा अध्ययनमां आहारनुं बहुपणुं छांडवुं कहयुं तेतो निर्लोभी होय ते छांडे ते भणी आ आठमा अध्ययनने विषे निर्लोभी कंपील केवलीनुं उदाहरण कहीए छीए.

अर्थः—अ० अस्थिरकालथी । अ० असास्वता द्रव्यादि पदार्थथी एहवा । सं० संसारने विषे कु०

एवं माणुस्सगा कामा देवकामाण अन्तिए ॥२३॥

गाथा २३ भावार्थः—जेम दाभना अग्र उपर रहेला पाणीना बिंदुने समुद्रना पाणी संघाते मापतां दाभना पाणीथी समुद्रनुं पाणी असंख्यातगुणुं अधीक होय, तेम देवताना कामभोग मनुष्यना कामभोगथी असंख्यातगुणा अधीक छे ॥ २३ ॥

अर्थः—कु० दाभनी अणी उपरे मे० मात्र सरिखा इ० ए मनुष्यना का० कामभोग । स० अतिशे थोडा आ० आउखे छते फ० किस्यु हे० हेतुने पु० आगलि का० करिने जो० अणपाम्या सुधर्मनी वांछना करवी ते जोग खे० पाम्या सुधर्मनुं पालवुं ते एम वेदुने न० न स० जाणे अज्ञानि जन मिथ्यात्वादिक विषयादिकने विषे आशक्तपणो पामे ए हेतु ॥ २४ ॥

मूलः—कुसग्गमेत्ता इमे कामा सन्निरुद्धम्मि आउए ।
कस्स हेउं पुराकाउं जोगक्खेमं न संविदे ॥२४॥

गाथा २४ भावार्थः—दाभाग्र उपर पाणीना बिंदुनी माफक ए मनुष्यना कामभोग छे, अतिशे थोडा आयुष्यमां विषय कषायमां लुब्ध थइने शा हेतुने सन्मुख करी अणपामेला सुधर्मनी इच्छा ते जोग तथा पामेला सुधर्मनुं रक्षण करवुं ते तेमने अज्ञानीओ नही जाणता होय !!! ॥ २४ ॥

अर्थः—इ० ए संसारमांहिथी का० कामभोगथी अ० अनिवर्त्या पुरुषने अ० आत्मानो अर्थ अ० विणसे छे । सु० सांभलिने । ने० ज्ञानादिक न्याय म० मारग । जं० जेहभणी भु० वली प० भ्रष्ट थाय छे

दिकने विषे स्नेहना करणहार इहलोकने विषे शारीरिक, मानसिक एवी बे प्रकारनी वेदनाए पीड्योथको परलोके नर्कादिकथी न मूकाय, तेथी साधु पूर्वना संयोग (मातापितादिक) अने पश्चात् संयोग (स्वसुरादिक) ने छांडीने कोइ पदार्थने विषे नवो स्नेह नहि करतां स्नेह रहित थाय ॥ २ ॥

अर्थः—तो० तिवारपछी कंपीलमुनी । ना० ज्ञान दं० दरसने करि । सं० संपूर्ण सहित हि० हितने अर्थे । नि० मोक्षने अर्थे । स० सर्व जी० जीवने ते० ते श्रोताजनने वि० मिथ्यात्वादिक पासथी । विशेषे मो० मुंकाववाने अ० अर्थे । भा० उपदेश कहे छे ॥ कपीलमुनि केहवा छे मु० साधुमांहि । वरो० प्रधान छे । विग० विशेषे गयो छे मो० मोह जेथी केवली छे ॥ ३ ॥

मूलः—तो णाणदंसणसमग्गो हियनिस्सेसाएसव्वजीवाणं ।
तेसिंविमोक्खणट्ठाए भासई मुणिवरोविगयमोहो ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः—जेओ साधुमांही उत्तम अने विशेषे जेने मोह गएलो छे ने संपूर्ण ज्ञानदर्शने सहित एवा कंपील केवली सर्व जीवना हितना अर्थे मोक्षने अर्थे श्रोताजनने मिथ्यात्वादिक पासथी मूकाववाने अर्थे उपदेश कहेता हवा ॥ ३ ॥

अर्थः—स० सर्व गं० बाह्य अभ्यंतर परिग्रहने च० पुनः क० क्रोधादिक कलहने वि० छांडिने त० तथा प्रकारना कलेशना कारण जाणीने भि० साधु । स० सर्व का० मनोज्ञ शब्दादि जा० नाना प्रकारने विषे । पा० कडआ विषफल तेमनोअकरे । त० व वि० विषय ना० अमनोज्ञ समान ॥ ४ ॥

उपजे ॥ २७ ॥

मूलः—इड्ढी जुई जसो वण्णो आउं सुहमणुत्तरं ।
भुज्जो जत्थ मणुस्सेसु तत्थ से उववज्जई ॥२७॥

गाथा २७ भावार्थः—सुवर्णादिक धन, शरीरनी कांति, जसकीर्ति, वर्ण, दिर्घायुष, सर्व सुख—ए ६ बोल उत्तम ते देवपणामां पामे, वली मनुष्यपणामां ए ६ बोल उत्तम होय त्यांते जीव जइने उपजे ॥२७॥

अर्थ—बा० अज्ञानीनो प० देखे बा० अज्ञानपणो । अ० अधर्मने प० अंगीकार करीने नि० छांडिने ध० धर्मने अ० अधर्म वाहलो छे जेहने एहवा जे जीव । न० नरकने विषे उ० उपजे ॥ २८ ॥

मूलः—बालस्स पस्स बालत्तं अहम्मं पडिवज्जिणो ।
चित्ता धम्मं अहम्मिट्ठे नरए उववज्जई ॥ २८ ॥

गाथा २८ भावार्थः—अज्ञानीनुं अज्ञानपणुं जुओ के अधर्मने अंगीकार करी धर्मने छांडीने अधर्मज तेने प्रिय छे ते जीव नरकने विषे उपजे ॥ २८ ॥

अर्थः—धी० धीर्यवंतनुं प० देखीने धी० धीर्यपणुं । स० क्षमादि दसविध धर्मने विषे अ० अनुकूल कोमल परिणामपणे प्रवर्तवानो स्वभाव छे जेहने एहवानुं धीर्यपणुं देखीने नि० छांडीने अ० अधर्मने ध० धर्म वाहलो छे जेहने एहवा जे जीव । दे० देवने विषे उ० उपजे ॥ २९ ॥

मूलः—धीरस्स पस्स धीरत्तं सव्वधम्माणुवत्तिणो ।

अधीर्यवंत पु० पुरुषने । अ० हवे स० छे मु० रुडा वृतना धरणहार सा० साधु जे० जे होय ते त० संसार समुद्रने तरे । अ० तरतां दोहिलो छे एहवा समुद्रने व० वाणीयावा० जिम नावाए समुद्रने तरे तिम तरे ॥६॥

मूलः-दुपरिच्चया इमे कामा नो सुजहा अधीरपुरिसेहिं ।
अह सन्ति सुव्वया साहू जे तरन्ति अतरं वणिया वा ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः—ए शब्दादिक कामभोग तजवा अतिशय दुष्कर छे तेमज अधैर्यवंत पुरुषने तो छांडवा सोहीला नथी. जेम वाणीआ नावाए करी समुद्रने तरे तेम जे विषयना समुहे करी परिपूर्ण अने तरतां दुष्कर एवा संसार रूप समुद्रने तरवा एकेक सुव्रतना धरणहार साधु समर्थ छे ॥ ६ ॥

अर्थः—स०साधुछं अम्हो ए० एम एकेक व० बोलताथकां । पा० प्राणवंधने मि० मृग सरिषा अ० अजाणताथका । मं० मंदा अंध धर्म करवा असमर्थ नि० नरके ग० जाय । वा० अज्ञानी पा० पापनी दि० दृष्टिए करिने ॥ ७ ॥

मूलः- समणानुएगे वदमाणा पाणवहं मिया अयाणन्ता ।
मन्दा निरयं गच्छन्ति बाला पावियाहिं दीट्ठीहिं ॥ ७ ॥

भावार्थः—मृगना सरखा अजाण अने मिथ्यात्वरूप रोगे करी धर्म करवा असमर्थथका एकेक अन्यदर्शनी अमे साधु छीए एम बोलताथका प्राणवधादिक पापनी दृष्टीए करी ते अज्ञानी नर्के जाय॥७॥

अर्थः—इ० जिके पा० प्राणवधने नं० अ० न अनुमोदे अथवा बीजो अर्थ इ० जिके पाणव

णां दुख छे जेहने विषे ए विशेषण संसारनां पहवा संसारने विषे । किं० किम्पि ना० संभावनाए हो० होय तं० ते क० करणी । जे० जे करणीए अ० हुं दो० दुर्गती मने न० जावुं नहि ॥१॥ हवे कंपीलमुनी उपदेश कहे छे

मूलः--अधुवे असासयम्मी संसारम्मि दुक्खपउराए ।
किं नाम होज्ज तं कम्मयं जेणाहं दोग्गइं न गच्छेज्जा ॥ १॥

गाथा १ भावार्थः— हवे आदमा अध्ययननो भावार्थ कहे छे ॥ जेनो अनित्य (स्थिर नहि ते) काळ अने द्रव्यादिक पदार्थथी असास्वतो अने जीहां घणां दुःख छे एवा संसारने विषे एवी पण करणी होय के जे करणीए करी अमे दुर्गतीए न जइए!!! (एवुं षळभद्र प्रमुख पांचसे चोरोए कंपील केवळीने पुछ्युं!!!) ॥ १ ॥

अर्थः—वि० विशेषे ज० छांडिने पु० पहिला मातापिता प्रमुखनां सं० संजोगने न० कु० वलगतो न करे । सि० सिनेहने क० कोइ पदार्थने विषे । अ० सनेहरहित होय सि० सिनेहना क० करणहार पुत्र कलत्र मित्रादिकने विषे । दो० इह लोकनां मानसीकसरीर पीडाथकी । प० परलोके नरकादिकथकी मु० मुंकाय भि० साधु ॥ २ ॥

मूलः--विजहित्तु पुव्वसंजोगं न सिणेहं कहिंचि कुव्वेज्जा ।
असिणेहसिणेहकरेहिं दोसपओसेहि मुच्चए भिक्खू ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः—हवे कंपीलमुनि चोरोने आ प्रमाणे उपदेश देता हवा. हे तस्करो ! पुत्र कलत्रा-

अर्थः—ज० जगतने विषे नि० आश्रया एहवा भू० जीवने विषे किं भूतेपू । तस० त्रस नाम कर्मने उदये करि त्रसने विषे उपन्या । था० थावर नाम कर्मने उदये करि थावरने विषे उपन्या । तेहवाने विषे च० समुच्चय ते० ते मांहिला कोइ जीवनो नो० आ० न करे दं० वध । म० मने करि वा० वचने करि का० कायाये करि चे० निश्चे ॥ १० ॥

मूलः—जगनिस्सिएहिं भूएहिं तसनामेहिं थावरेहिं च ।
नो ते समारभे दण्डं मणसा वयसा कायमा चेव ॥ १०. ॥

गाथा १० भावार्थः—जे जगतमां नाम कर्मने उदये करीने पृथ्वीने आश्रयीने (आधारे) त्रस अने स्थावर जीवो रहेला छे तेनो मन वचन कायाए करी वध न करे॥ १० ॥

अर्थः—सु० आधाकर्मादि दोप रहित ते पण ए० एपणा समति सहित आहारने । न० जाणीने । त० तेहवा आहारने विषे ठ० थापे भि० साधु अ० पोताना आत्माने जा० संजम निर्वाहवाने अर्थे वा० आहारने । ए० गवेपे । र० रसने विषे गि० गृधन० न सि० होय भि० भिक्षाने विषे ॥ ११ ॥

मूलः—सुद्धेसणाउनाणं तत्थ ठवेज्ज भिक्खू अप्पाणं ।
जायाए घासमेसेज्जा रसगिद्धे न सिया भिक्खाए ॥ ११. ॥

गाथा ११ भावार्थः—पोताना आत्मानें संयम निर्वाह करवानें अर्थे आहारनी गवेपणा (शोधना) करी आधा कर्मादिक दोप रहित एपणा समितीए निर्दोप जाणी ते रस तथा भिक्षाने विषे गृद्ध (लुब्ध) नहि थतां

गाथा १३ भावार्थः—जे कोइ साधु स्त्री पुरुषनां लक्षण सामुद्रिकशास्त्र, स्वप्नशास्त्र, अंगस्फुरणादिक पापविद्याने प्रयुंजे (करे) तेने साधु न कहीए एम तिर्थंकरादिक आचार्ये कहेलुं छे ॥ १३ ॥

अर्थः—इ० ए मनुष्य जन्मने विषे जी० संजम जीवतव्यने । अ० तप संजमादिक अणकरवे करीने । प० भ्रष्ट थया स० समाधिना जो० जोगथकी । ते० ते का० कामभोगना र० रसने विषे गि० गृद्ध थयाथका । उ० उपजे । आ० असुरकुमार संबंधी का० कायाने विषे ॥ १४ ॥

मूलः—इह जीवियं अणियमेत्ता पब्भट्ठा समाहिजोएहिं ।
ते कामभोगरसगिद्धा उववज्जन्ति आसुरे काए ॥ १४ ॥

गाथा १४ भावार्थः—हवे ते लक्षणादिकना प्रयुंजनार साधुने शुं फळ थाय ते कहे छे, ए मनुष्य-जन्मने विषे तप संयमादिक करी पोताना आत्माने वश करे नहि अने समाधिना योगथी भ्रष्ट थइ कामभोगना रसने विषे गृद्ध (लुब्ध) थयाथका असुरकुमार संबंधी कायने विषे ते साधु उपजे ॥ १४ ॥

अर्थः—त० तिहांथकी वि० पण य० वली उ० निकळीने । सं० संसारने विषे व० घणो । अ० वारंवार परिभ्रमण करे व० घणा क० कर्मना ले० लेपे करिने लि० लीपाणा जीवने । बो० समकितनो लाभ । हो० होय सु० अतिहे दु० दोहिलो ते० ते जीवने ॥ १५ ॥

मूलः—तत्तो वि य उव्वट्टित्ता संसारं बहुं अणुपरियडन्ति ।
बहुकम्मलेपलित्ताणं बोही होइ सुदुल्लहा तेसिं ॥ १५ ॥

मूलः—सव्वं गन्थं कलहं च विप्पजहे तहाविहं भिक्खू ।
सव्वेसु कामजाएसु पासमाणो न लिप्पई ताई ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थः—सर्व बाह्य अभ्यंतर परिग्रह अने क्रोध लोभादिकने कलहनां कारण जाणीने साधु छोडे अने छकाय जीवोनो रक्षक एवो साधु सर्व मनोज्ञ (मनने गमता) शब्दादिक भुंडां फलना आपनार जाणीने ते शब्दादिकने विषे लेपाय नहि ॥ ४ ॥

अर्थः—भो० भोगरूप आ० आमिष दो० तेहम मोटो दोष । वि० तेहने विषे पूंनो । एटले भोगरूप आमिषने विषे पूंनो हि० आत्मानो हित । नि० मोक्ष ए केना उपायने विषे बु० बुद्धि वो० विपरीत छे जेहनी । बा० बाल अजाण य० पुनः । मं० मंद धर्म करवाने विषे अणउद्यमी मू० मूंढ मुर्ख ते । ब० बंधाय म० माखी व० जिम खे० पेल बलखाने विषे माखि बंधाय । तिम कामभोगने विषे अज्ञानि बंधाय ॥ ५ ॥

मूलः—भोगामिसदोसविसन्ने हियनिस्सेयसबुद्धिवोच्चत्थे ।
बाले य मन्दिए मूढे बज्झई मच्छिया व खेलम्मि ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः—आत्मानुं हित अने मोक्ष ए केना उपायने विषे जेनी बुद्धि विपरीत छे एवा अज्ञानी जीव धर्मने विषे अणउद्यमी थइ जेम मांखी बलखाने विषे बंधाय तेम जेना मोटा दोष छे एवां कामभोग रुप आमिष (मांस) ने विषे ते मूर्ख सुंच्याथका बंधाय ॥ ५ ॥

अर्थः—दु० अतिहेतजता दोहिला इ० ए का० कामभोग । नो० नथी मु० सोहिलो छांडता । अ०

मासा सोनुं मागवा गएलोहतो ने कोटी मासा सुधी चढ्यो तोपण लोभथी मन निवर्त्युं नहि (एम कपील-केवलीए पोताना हेवाल धन संबंधी कह्या, हवे बीजा स्त्री संबंधी हेवाल कहे छे ॥ १७ ॥

अर्थः—नो० ए० राक्षसी समान स्त्रीने विषे न० गि० वृद्ध न थाय गं० गूंवडा सरिखी पिडाकारि स्तन व० हृदयने विशे जेहने वली एवी केहवी छे अ० अनेक पदार्थने विशे चि० चित्त छे जेहनो । जा० जे स्त्रीओ पु० पुरुषने प० पण जो० अतिशे लोभावीने विमतारिने । खे० क्रिडा करे ज० यथा दृष्टांते । दा० दास संघाते जिम दास पासे चिंतव्या काम करावीने पोते क्रीडा करे ॥ १८ ॥

मूलः—नो रक्खसीसु गिज्झेज्जा गण्डवच्चासु णेगचित्तासु ।
जाओ पुरिसं पलोभित्ता खेलन्ति जहा व दासेहिं ॥ १८ ॥

गाथा १८ भावार्थः—जेना हृदयने विषे गुंवडा सरिखां पीडा कारी वेस्तन छे अने जेनुं अनेक पदार्थने विषे चित्त छे अने जेम दासनी पासे चिंतव्यां काम करावे तेम पुरुषने लोभवी छेतरीने तेनी साथे क्रीडा करे एवी राक्षसणी सरखी स्त्रीने विषे साधु लुब्ध न थाय ॥१८॥

अर्थः—ते माटे । ना० नारिने विशे नो० हृदयनो न करे । इ० स्त्रीने वि० विविध प्रकारे त्यजी-विस्वास नाणे अ० मुनीराज कहीं । व० ब्रह्मचर्यादिक धर्मने च० समुचय पे० मनोज्ञ भलो न० जाणीने

॥ त० ते ब्रह्मचर्यादिक धर्मने विशे

इ० हिंस्याने अणुजाणे० अनुमोदीने । मु० मुंकाय कया० कायाएणी सत्य दुष्पा० सर्व दुष्पी वचनोल्लंघ
न मुचे० न मुकाय । स० सर्व दुष्प ए० एम आ० आचार्ये अ० कणो जे० जेणे इ० एह सा० साधुनो ध०
धर्म प० परूप्यो ॥ ८ ॥

मूलः—न हु पाणवहं अणुजाणे मुचेज्ज कयाइ सवदुक्खाणं ।
एवायरिएहिं अक्खायं जेहिं इमो साहुधम्मो पन्नत्तो ॥८॥

गाथा ८ भावार्थः—प्राण वधादिक पांच आश्रवनी अनुमोदना (भलुं जाणवुं) करे ते कदापि दुःखथी
मूकाय नहि एम सम्यकत्व धर्म तथा साधुनो धर्म परूपेलो छे एम तीर्थंकरोए तथा गणधरोए कहेलुंछे ॥८॥

अर्थः—नि० ते माटे पा० प्राणी जीवने ना० न हणे ग० वली हणावे नहि अनुमोदे नहि । से० ते स०
सुमतिवंत साधुने ए० ए कारणथणी मु० कहिए ता० ते सुमतिवंत छकाय जीवना रक्षपाल । त ओ० तेथारे से०
ते साधुथी पा० पाप क० कर्म । नि० जाय उ० पाणी व० जिम ग० थल थकि उतरि जाय तिम ॥ ९ ॥

मूलः— पाणे य नाइवाएज्जा से समीए त्ति वुच्चई ताई ।
तओ से पावयं कम्मं निज्जाइ उदगं व थालीओ ॥ ९ ॥

गाथा ९ भावार्थः—जे प्राणवधादिक पांचे आश्रवनी अनुमोदना त्रिविधे करे नहि अने पांच सुमति-
वंत अने छकाय जीवना रक्षपाल होय एवा साधुनां पापकर्म जेम उंचा स्थळथी पाणी उतरी जाय तेम दूर

नवमे नमीराजा देवतानो पूंजनीक थयो तेमणी नवमे नमी राज रूषीनो संबंध कहेछे.

अर्थः—चइ० चवीने दे० देवलोक थकि उ० उपन्यो मा० मनुष्य लो० लोकमांहि उ० उदय नथी पाम्यो मो० दर्शन मोहनी कर्म जेहने । स० संभारि छे पो० पाछलि जा० जातिने ॥ १ ॥

मूलः—चइओण देवलोगाओ उववन्नो माणुसम्मि ।
उवसन्तमोहणिज्जो सरई पोराणयं जायं ॥ १ ॥

गाथा १ भावार्थः—हवे नवमा अध्ययननो भावार्थ कहे छे. सातमा देवलोकथी चवी (मरी) ने मनुष्य लोक विषे उत्पन्न थयो, अने जेने दर्शन मोहनी कर्म उदय पामेल नथी, तेथी देवलोकादिक पाछली जाती संभारी ॥१॥

अर्थः—ज्ञा० जातिने स० संभारिने भ० भगवंत ज्ञानवंत । स० स्वयंमेव आपणेप बु० प्रतिबोधने पाम्या अ० प्रधान ध० श्रुत धर्म चारित्र धर्मने विषे ॥ पु० वेटाने ठ० थापीने रा० राज्यने विषे अ० धर्म साहमो थइ नि० घर थकी नीकले छे न० नमीराज रूषीश्वर ॥ २ ॥

मूलः—जाइं सरित्तु भयवं सहसंबुद्धो अणुत्तरे धम्मे ।
पुत्तं ठवेत्तु रज्जे अभिणिक्खमई नमी गया ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः—जाती स्मर्ण उपजवाथी भगवंत (ज्ञानवंत) स्वयंमेव प्रतिबोध पामी पुत्रने राज्ये स्थापीने श्रुतधर्मने चारित्र धर्मने विषे सन्मुख थइ नमी राजा घरथी नीकळी अणगार थया. ॥ २ ॥

अर्थः—सो० ते नमीराजा दे० देवलोकनां कामभोग स० सरिषाभोग नमीराजा केहवाछे ॥ अं० ब० मनोज्ञ

तेरवा आहारने विषे निश्चलपणे पोताना आत्माने स्थापे ॥ ११ ॥

अर्थः—पं० निरस ने चे० समुच्चये मे० मेवे सी० शीतल पिं० आहारने पु० जूना धानने कु० उरडने । अ० अथवा व० मुग अडदादिक भेला धानने पु० चणादिकने वा० अथवा । ज० शरीरना निर्वाहने अर्थे नि० भोगवे पं० वीरकूटने ॥ १२ ॥

मूलः—पन्ताणि चेव सेवेज्जा सीयपिण्डं पुराणकुम्मासं ।
अदु वक्कसं पुलागं वा जवणट्ठाए निसेवए मंथुं ॥ १२ ॥

गाथा १२ भावार्थः—निरस आहार तिनळ (तांदो) जुनां धान्य अडद मग अडदादिक भेळां कर्यां होय ने धान्य चूर्णादिक वीरकूट इत्यादिक आहार मळे तोपण पोताना शरीरना निर्वाहने अर्थे ते आहार साधु भोगवे परन्तु के सरस अन्नपाणी पाम्या पछी आवो निरस आहार आव्यो होय तोपण ते साधु भोगवे पण ते सरस आहारने भोगवीने निरस आहारने फेंकी दीए नहि ॥ १२ ॥

अर्थः—जे० जे कोइ साधु ल० शी पूर्वना लक्षणने च० पूनः गु० गुणने च० वली । अं० अंगफरकनादि विद्याने च० अथवा जे० जे साधु प० प्रयुंजे (परखे) । न० नहि ते हु० निश्चे ते० ते स० साधु गु० कहिये । इ० एम भा० भाखीये अ० कर्यु ॥ १३ ॥

मूलः—जे लक्खणं च सुमिणं अङ्गविज्जं च जे पउञ्जन्ति ।
न हु ते समणा वुच्चन्ति एवं आयरिएहिं अक्खायं ॥ १३ ॥

अर्थः—को० विलापादिक शब्दनो कोलाहल सं० थयो ॥ आ० हुतो म० मिथिलानगरिनेविषे प० मवर्जा लेते छते ॥ त० तिवारे । रा० राजमहि छत्रापण । रि० रूषीसरिखा तेराजरषी ॥ न० नमीराजा अ० घरथकी निकले छते ॥ ५ ॥

मूलः—कोलाहलसंभूयं आसी महिलाए पवयन्तम्मि ।
तइया रायारिसिम्मि नमिम्मि आभिणक्खमन्तम्मि ॥ ५॥

गाथा ५ भावार्थः—जे न्यायवंत राजाहोय तेने (१)काम, (२) कोप, (३)लोभ, (४) हर्ष (५) मान (६) मद ए छवानां अल्प होय तेने राज्यमाही छता पण राजरषी कहाए, एवा नमीराज रूषी घरथी नीकळी मवर्जा लेते छते मिथिला नगरीने विषे लोकना विलापादिक शब्दनो कोलाहल थयो.॥ ५ ॥

अर्थः— अ० सावधान थयो रा० राजरूषी मत्य । प० मवजावु द्र० थानक द्रव्यथी वृतादीक भावथी ज्ञानादीक थानक ते थानक केहवो छे उ० मधान एहवा स्थानक मत्ये सावधान थयो छे नमीराजा एहवा अवसरे । स० सक्रेंद्र मा० ब्राह्मणने वे० रुपे । इ० एहवा व० वचनने अ० बोलतो हुवो ॥ ६ ॥

मूलः—अब्भुट्ठियं रायारिसिं पवज्जाठाणमुत्तमं ।
सक्को माहणवेसेणं इमं वयणमब्बवी ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः—द्रव्यथी वृतादिक भावथी ज्ञानादिक रुप मवर्जाना उत्तम स्थानकने विषे नमीराजऋषी सावधान थयो ते वखते पहेला देवलोकनोशक्रेंद्र ब्राहमणने रुपे आवीनेएवुं वक्ष्यरुप वचन कहेतो हवो.॥ ६ ॥

गाथा १५ भावार्थः—स्त्रीथी नीकळीने ते जीव संसारमांही वारंवार परिभ्रमण करे अने घणां कर्मना बंध करी लेवायला जीवने समकितनो लाभ पामवो अतिशय दुष्कर होय ॥ १५ ॥

अर्थः—क० संपूर्ण पि० पण जो० जे इंद्रादिक वैसमण । इ० ए को० संपूर्ण लोक । प० प्रतिपूर्ण धने भरिने दे० दीए । ए० एक लोभी नरने ते० तेणे धने ए० पण से० ते लोभीने । न० न संतोषाय । इ० एवीपरे दृ० धनादिक करि पूरो करवा दोहिलो इ० ए । आ० आत्मा लोभी जीव ॥ १६ ॥

मूलः—कसिणं पि जो इमं लोयं पडिपुण्णं दलेज्ज इक्कस्स ।
तेणावि से न संतूसे इइ दुप्पूरए इमे आया ॥ १६ ॥

गाथा १६ भावार्थः—कोइ इंद्र तथा वैश्रमणादिक देवता ए संपूर्ण लोकने धनादिके भरीने एक लोभी नरने आपे तोपण ते जीव संतोषाय नहि (मनलब के लोभनुं पूरु न थाय) ॥ १६ ॥

अर्थः—ज० जिम जा० लाभ होय । त० तिम । लो० लोभ होय जा० लाभथकी लो० लोभ प० प्रकटे व० वधे । दो० बे सुवर्णने मासे करि । कं० कीजीये कं० एहवुं कार्य करिने को० सोवननी कोडिए नि० पण न० निवर्त्यु नहि मन लोभथकी ॥ १७ ॥

मूलः—जहा लाहो तहा लोहो लाहा लोहो पवड्ढई ।
दोमासकयं कज्जं कोडीए वि न निट्ठियं ॥ १७ ॥

गाथा १७ भावार्थः—जेम जेम लाभ होय तेम तेम लोभ होय, केमके लाभथी लोभ वधे जेम बे

जे हेतु उदाहरणने उपनये करी पोतानी वस्तु सत्य करी स्थापीएने बीजानी वस्तुने उथापीए तेनुं नाम पक्ष समाप्त कहीए, हवे पांच प्रकारना हेतु जुदा जुदा कहे छे. १ तमारी प्रवर्जानुं लेवुं अयुक्त ए पक्ष, २ ए आक्रंदादिक दारुण (भयंकर) शब्द थायछे ए हेतुथी, ३ जेम जीव वध (मार) नां आक्रंदादिक शब्द करे तेम तमारी प्रवर्जाथी ए दारुण शब्द थाय छे ए उदाहरणथी, ४ जेनाथी आक्रंदादिक दारुण शब्द थाय ते धर्मार्थि पुरुषोए ग्रहण न करवुं (केमके तमारी प्रवर्जाथी आक्रंदादिक थाय छे तेने ग्रहण न करवी) ए उपनय, ५ तमारी प्रवर्जा जीव वध रुप होवाथी ग्रहण करवी अयुक्त छे, एम पक्षनुं समाप्तिपणुं करवुं, एवां पांच वचन रुप हेतु, अने आक्रंदादिक दारुण शब्दे घणा जीवोने दुःख उपजावनार्था तमारी प्रवर्जा कल्याणनुं कारण न होय ! एवां पांच वचन रुप हेतुने एक वचन रुप कारणे करी सहित एवा शक्रेंद्र सत्ये नमीराजऋषी कहेता हवा ॥८॥

अर्थः—म० मिथिलानगरिने विषे चे० उद्यान मांहि व० वृक्षहतो ॥ सी० शीतल छाया छे जेहनी एहवो म० मनोरम एहवे नामे तथा रमणिक ॥ प० पानडे करि पु० फूलेकरि फ० फले करि उ० सहित । व० पंपीयादिक घणा जीवने । व० घणागुणनोकरणहार हतो स० सदाय ॥ ९ ॥

मूलः—महिलाए चेइए वच्छे सीयच्छाए मणोरमे ।
पत्तपुप्फफलोवेए बहूणं बहुगुणे सया ॥ ९ ॥

गाथा ९ भावार्थः—मिथिलानगरिना उद्यानमां सदाय पत्र पुष्प फलने शीतल छांयाए करी पंखीआदिक घणा जीवने घणा गुणनो करणहार ने मनने रमणिक एवुं मणोरम नामे वृक्ष हतुं ॥ ९ ॥

धम्मं च पेसलं नच्चा तत्थ ठविज्ज भिक्खु अप्पाणं ॥ १९ ॥

गाथा १९ भावार्थः—तेथी स्त्रीने विषे लुब्ध न थाय ने स्त्रीनो त्रिविध प्रकारे साधु त्रिभाग भणे नहि अने ब्रह्मचर्यादिक साधुनो उत्तम धर्म जाणीने साधु पोताना आत्माने ते धर्मने विषे स्थापे ॥ १९ ॥

अर्थः—इ० एणे प्रकारे प० प्र० धर्म ॥ अ० कह्यो । क० कपीलमुनीश्वरे । ज० पद पूर्णे वि० निर्मल । प० प्रज्ञाए लेहनी तेणे । त० ते तरसो जे० जे उ० निश्चे का० ए धर्मने फरसे । ते० ते कपील मुनीश्वरे । आ० आराध्या दु० बेहुलोक नि० थय बे० कहुं छुं ॥ २० ॥

मूलः—इइ एस धम्मे अक्खाए कविलेणं च विसुद्धपन्नेणं ।
तरहिन्ति जे उ काहिन्ति तेहिं आराहिया दुवे लोग ॥२०॥ त्ति बेमि

इति कापिलीयं सप्तमं अध्ययनं समाप्तं ॥ ८ ॥

गाथा २० भावार्थः— जेनी निर्मळ प्रज्ञा (बुद्धि) छे तेवा कपीलमुनीश्वर ते प्रकारे मुनिनो धर्म कह्यो ते धर्मने जे करशे ते संसार रूपी समुद्र तरशे अने ए धर्म ग्रहण करशे ते बेलोकनो पलानिक ने परलोकें देवलोकनां तथा मोक्षनां सुख पामवाथी कपीलमुनीश्वरनी पेरे तेणे बहु लोक सफल कर्या. एम सुधर्मा स्वामी पोताना जंबु नामना शिष्यने कहेता हवा के हे जंबु ! एम मे श्री महावीर देवस्वामिनी समीपे सांभळ्युं इत्यं मे तुज प्रत्ये कह्युं. ॥२०॥ इतिश्री कपील केवली नामना आठमा अध्ययननो भावार्थ संपूर्ण थयो.

आठमे अध्ययने निर्लोभपणो बखाण्यो । अने ते निर्लोभी तो देवतानो पूजनीक होय ते भणी

तओ नमिं रायरिसिं देविन्दो इणमब्बवी ॥ ११ ॥

गाथा ११ भावार्थः—ए नमीराजऋषीना अर्थने सांभळीने पांच वचन रुप हेतुने एक वचन रुप कारणे प्रेरित एवो शक्रेंद्र नमीराजऋषी प्रत्ये आगळ कहीशुं तेम कहेतो हवो ॥ ११ ॥

अर्थः—ए० ए प्रत्यक्ष अ० अग्नि य० वली वा० वायरा सहित य० पुरणे। ए० ए दिसे छे इ० बळे छे मं० मंदिर ताहरा भ० हे भगवान अं० अतःपुर ते० ताहरा ए० वचन; अलंकारे । की० स्यामाटे न० नथी अ० जोतो हे महामुनीस्वर ॥ १२ ॥

मूलः—एअं अग्गी य वाओ य एयं डज्झइ मन्दिरं ।
भयवं अन्तेउरंतेणं कीम णं नावपिक्खह ॥ १२ ॥

गाथा १२ भावार्थः—हे भगवंत ! ए प्रत्यक्ष वायुयी प्रेरित एवी अग्निए करी तारा मंदीरने अंतेउरा दिक बळे छे तो शा माटे तुं साधु नथी जोतो ?, १ ए मंदिरादिक बळतां राखवां ए इंद्रनो पक्ष, २ शा हेतु ते पोतानाछे माटे, ३ ज्ञानादिकने उद्दीपणे करी, ४ ज्ञानादिकनी माफक जे जे पोतानीवस्तु राखवी ए उपन ये करी, ५ ए मंदीरादिक पोतानी वस्तु जरुर राखवी जोइए ए पक्षनी समाप्ती, ए मंदीरादिकनुं रक्षण कर्या विना पोतानी वस्तुनुं रक्षण करनार न होय तेथी विवेकी पोतानी वस्तुनुं रक्षण करे ए कारणे एवां पांच वचन रुप हेतुने एक वचन रुप कारण जाणवुं ॥ १२ ॥

अर्थः—ए० ए अ० अर्थ इत्यादिक नि० सांभळी । हे० हेतुए का० कारण चो० प्रेर्यो थको । त०

अंतेउरेने विषे म० रह्यो हुतो थको व० प्रधान भो० भोगने। उ० भोगवीने न० नमीराजा इ० चारित्र भो० भोगने प० छांडिने ॥ ३ ॥

मूलः—सो देवलोगसरिसे अन्तेउरवरगओ वरे भोए।
भुञ्जित्तु नमी राया बुद्धो भोगे परिच्चयई ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः—ते नमी राजा अंतेउरने विषे देवलोक सरीखा भोग भोगवीने बुद्ध था जाग थको ते भोगने छांड्या. ॥ ३ ॥

अर्थः—हिवे मिथिलानगरि केरी छे प० मिथिलानगरिने न० अनेकापुर नगर सहित छे ज० जनपद देश सहित छे व० चतुरंगी सेन्या उ० अंतेपुर च० पूनः प० स्वजनादिक, स० सर्व । नि० गमता राजा छांडिने अ० अरण्यमांने सन्मुख थइने नि० परणी निकल्यो ॥ ए० राग द्वेष रहित एकांत निरुपद्रवमांने अ० आव्यो । भ० भगवंत ज्ञानवंत ॥ ४ ॥

मूलः—मह्लिं सपुरजणवयं बलमोरुद्धं च परिगणं गयं ।
निग्गा अभिनिक्खन्तो एगन्तमहिट्ठिओ भयवं ॥ ४ ॥

भाषांतर ४ भावार्थः—अनेकापुर नगर सहित मिथिला नगरी, अने हाथी, घोडा, रथने, पायदळ, ए चतुरंगीणी सैन्यर अंतेउरी स्वजनादिक ए सर्वने गमी ते नमीराजा परणी नीकळ्यो भावथी निरागीने द्रव्यथी उद्यानमां ज्ञानांत थको एकांतमां जई रह्यो. ॥ ४ ॥

मूलः—चत्तपुत्तकलत्तस्स निव्वावारस्स भिक्खुणो ।
पियं न विज्जई किंचि अप्पियं पि न विज्जई ॥ १५ ॥

गाथा १५ भावार्थः—जेणें पुत्र स्त्री व्यापारादिक सर्व छांडयां छे एवा साधुने कोइ वस्तु उपर प्रीय पणुं नथी, तेम कोइ वस्तु उपर द्वेष पण नथी ॥ १५ ॥

अर्थः—च० चयुं खु० निश्चे मु० साधुने भ० कल्याण छे अ० अणगारने भि० भिक्षुने साधुने । स० सर्वथा प्रकारे आरंभ परिग्रहथी वि० विशेषे मु० मुकाणाछे । ए० हुं एकलोछुं एहवा एकत्वपणाने अ० देखुंछुं ॥ १६ ॥

मूलः—बहु खु मुणिणो भद्दं अणगारस्स भिक्खुणो ।
सव्वओ विप्पमुक्कस्स एगन्तमणुपस्सओ ॥ १६ ॥

गाथा १६ भावार्थः—घर तथा गृहस्थना व्यापारने आरंभ परिग्रह रहीत एवा साधुनेनिश्चे भद्रकलाण(सुख)हेवाथी हुं एकलो छुं एम एकत्वपणाने देखतो थको साधु विचरे, १ अमारूं कोइ नथी ए नमीराजऋषिनो पक्ष, २ हुं एकलो छुं एहतुं, ३ जेम सिद्धने कांइ नथी ए उदाहरणे करी, ४ जे एकाकी होय तेने कांइ नहोय ए उपनय करी, ५ तेथी ज्ञानादिक सिवाय अमारूं कांइ नथी ए पक्षनी समाप्ति, तेथी अमारी प्रवर्जा कल्याणनुं कारणछे एमकही इंद्रना हेतुने कारण उथाप्यांपणांच वचनरुप हेतुने एकवचनरुप कारण जाणवुं ॥१६॥

अर्थः—ए० ए अ० अर्थ नि० सांभली विचारिने। हे० हेतु छे का० कारण छे तेणे को० मेक्षोपयको

अर्थः—प्रश्न कि० किम पु० विचारणा । भो० आमंत्रणे अहो नमीराजा अ० आज । म० मिथिलानगरिने विषे अद्द केवा को० कोलाहले करी सं० व्यापिनके एहवा सु० सांभलीए छे दा० दुःखने मनने उद्वेग कारि स० शब्द पा० प्रासाद ते राजानां मंदिरने विषे नि० सामान्य थरने विषे ॥ ७ ॥

मूलः-किण्णु भो अज्ज मिहिलाए कोलाहलगसंकुला ।
सुव्वन्ति दारुणा सद्दा पासाएसु गिहेसु य ॥ ७ ॥

गाथा ७ भावार्थः—अहो नमी राजऋषी ? आज मिथिला नगरीने विषे राजाना मंदीरमांही ने सामान्य थरने विषे, सर्व स्थले दुःख अने मनने उद्वेगकारी एवा कोलाहल शब्द केम संभळाय छे ? ॥७॥

अर्थः-ए० ए पूर्वे कह्या ते अ० अर्थने नि० सांभळीने विचारीने ॥ हे० आत्मा जोडने दुःखनो हेतु ते ताहरि दिक्षा का० ते पर जीवने जेहथी दुःख उपजे ते तो परिभ्रमणनेा कारण एहवे हेतु कारणे चो० प्रेर्यो थको त० तेवार पछी न० नमी रा० राजऋषीश्वर ॥ दे० देवतानो इंद्र ते अक्केंद्रमते इ० एहवा वचनने । अ० बोलतो हुओ ॥८॥

मूलः-एयमट्ठं निसामित्ता हेओकारणचोइओ ।
तओ नमी रायरिसी देवेन्दं इणमब्बवी ॥ ८ ॥

गाथा ८ भावार्थः—ए अर्थ सांभळीने, १ पोतानी वस्तुनुं स्थापवुं ने बीजानी वस्तुनुं उथापवुं, एनुं नाम पक्ष कहीए, २ जे वस्तुथी पोतानो पक्ष सत्य करीए तेनुं नाम हेतु कहीए, ३ जेणे करी पोतानी वस्तु सत्य करीए तेनुं नाम उदाहरण कहीए, ४ जेणे करी हेतुने उदाहरण बंने सत्य थाय एनुं नाम उपनय कहीये, ५

त० तेवारे पछी न० नमीराजा । दे० देवेंद्र शकेंद्र प्रते इ० एम अ० बोलता हुवा ॥१९॥

मूलः—एयमट्ठं निसामित्ता हेऊकारणचोइओ ।
तओ नमी रायरिसी देवेन्दं इणमब्बवी ॥ १९ ॥

गाथा १९ भावार्थः—ए शक्रेंद्रनो अर्थ सांभळीने पांच वचनरूप हेतुने एक वचनरूप कारणे प्रेरित नमीराजऋषी शक्रद्र प्रत्ये कहेता हवा ॥ १९ ॥

अर्थ—स० सूद्ध तत्वनिरुचि रुपाण न० नगरि सर्व गुणनो आधार कि० करिने उपसम रूप वैराग्य रुपणि पोल कीधी त० तपना बारे भेदे सं० आश्रवनो रुधनो ते संवर अ० अरगळाकमाडादिक स० क्षेमा रूपियो नि० निपूण भलो पा० गढ करिने त्रण गुप्तरूप स्थान करावीने ति० सूभ मन योगरूप ते कोठा १, वचन योगरूप ते पाइ २, काय योगरूप ते सताग्नि ३। ति० ए त्रणे करिने गुप्तछे गढनगर दुप्प० कोणे पराभव्यो नजाय॥२०॥

मूलः—सद्धं नगरं किच्चा तवसंवरमग्गलं ।
खन्तं निउणपागारं तिगुत्तं दुप्पधंसयं ॥ २० ॥

गाथा २०भावार्थः—तत्वनी श्रद्धा रूप नगरने विषे बार भेदे तपसा रूपी कमाड मिथ्यात्वादिकने रूंधी संवर रूप भुंगळ क्षमा रूपीयो गढ सुभमनोयोगरूप कोठो, शुभ वचन योग रूप खाइ, सुभ काया रूप शतघ्निने त्रण गुप्तीए करी त्रारो गढ नगर कोइथी पराभव्यो नजाय? ॥ २० ॥

अर्थः—ध० धनुषने प० पराक्रम रूप कि० करिने ॥ जी० पणचने च० वली इ० इर्यासुमतिरूप क-

अर्थः—वा० वायरे करि डी० डलावता थके चे० वनने मांहि म० मनोरमनामा वृक्ष। दु० दुखीया अ० मरण रहित अ० पीडा पामे छे। ए० ए क० आक्रंद करे छे भो० अहो शिष्य स्व० पंखीया ॥ १० ॥

मूलः—वाएण हीरमाणंमि चेइयंमि मणोरमे।
दुहिया अमरणा अत्ता एए कन्दन्ति भो खगा ॥ १० ॥

गाथा १० भावार्थः—अहो शिष्य ? ए वनमां मनोरम वृक्ष पवनथी डालवेकरी ए पंखी मरण रहित पीडाथी थका आक्रंद करेछे, जेम ए पंखी पोताना स्वार्थने माटे आक्रंद करे छे पण दुःखने माटे करतां नथी जेम ए स्वजनादिक पोताना स्वार्थने वास्ते आक्रंद करेछे पण मारी मरणने वास्ते कोइ आक्रंद करता नथी तेथी तमारो हेतु अयुक्त एम तेनो हेतु उथाप्यो, वृक्षना दृष्टांते करी पोताना स्वार्थने माटे आक्रंदादिक करे छे तेथी जीवरक्षानुं तमारूं उदाहरण पण अयुक्त, एम इंद्रनुं उदाहरण पण अयुक्त, पोताना स्वार्थने माटे बीजा आक्रंद करता होय तो ते धर्मार्थिए न आदरवुं जोइए तेथी तमारो उपनयपण अयुक्त, अमारी मरणने वास्ते आक्रंदादिक करता नथी तेथी अमारी मरणनुं अटकावयुं युक्त छे तेथी तमारा पक्षनी समाप्ति पण अयुक्त, तेथी अमारी मरणा (दीक्षा) कल्याणनु कारण छे एवां पांच वचनरूप हेतुने एकलक्षणरूप कारण जाणवुं ॥ १० ॥

अर्थः—ए० ए प्र० पुनः अ० अर्थ नि० सांभली विचीारने हे० हेतुए करि का० कारणे करि चो० प्रेर्यो थको। प्र० शिष्य प्रति न० नमीराजऋषी प्रते। दे० देवतानो इंद्र आक्रंद इ० एम अ० बोलतो हुओ ॥ ११ ॥

मूलः—एयमट्ठं निमामित्ता हेओकारण चोइओ।

करी क्षत्री थया एवुं एक वचनरुप कारण जाणवुं, पण तमे पुर्वे कर्युं जे शारीरिक मानासिक दुखनुं कारण होय तेथी मोक्ष मार्गे नसीझे ते माटे गदादिक करावता ए तमारा हेतु कारण अयुक्त ॥ २२ ॥

अर्थः—ए० एय० पूनः अ० अर्थ सांभली विचारीने । हे० हेतु छे कारण छे घो० प्रेरयो थको त० तेवारपछीन० नमीराज ऋषि प्रते । दे० शक्रेंद्र इ० एम अ० बोलता हुवा । २३ ।

मूलः—एयमट्ठं निसामित्ता हेऊकारणचोइओ ।
तओ नमिं रायारिसिं देविन्दो इणमब्बवी ॥ २३ ॥

गाथा २३ भावार्थः—ए अर्थ सांभलीने पांच वचनरुप हेतुने एक वचनरुप कारणे प्रेरित एवो शक्रेंद्र नमीराजऋषि प्रत्ये एम कहेतो हवो ॥ २३ ॥

अर्थः—पा० शिपर वंध उंचा अवाश का०करावीने णं० अलंकारे ।व०वे त्रण गि० प०भूमि गोषा दिक सहित वली सामान्य घर वा० वरंडि सहित पीटणी पो० तलाव मांही क्रीडा करवाना मेहेलप० पदपूरणे करिने त० तेवार पछे ग० जाज्यो स० हे क्षत्रिराजऋषि ॥ २४ ॥

मूलः—पासाए कारइत्ताणं वद्धमाणगिहाणि य ।
वालग्गपोइयाओ य तओ गच्छसि खत्तिया ॥ २४ ॥

गाथा २४ भावार्थः—राजयोग शिखरबंध उंचा घर त्था वे त्रणादिक मजला वाला गोखादिक सहित सामान्य घर तेमज मेदी चौ वाराने पीटणी (अगासी) सहित एवा तलाव मांही क्रीडा करवानां घर करा-

तेवार पछे न० नमीराजऋषीश्वर । दे० देवेंद्र शक्रेंद्र प्रते इ० इम अ० बोल्या ॥ १३ ॥

मूलः—एयमट्ठं निसामित्ता हेऊकारणचोइओ ।
तओ नमी रायरिसी देवेन्दं इणमब्बवी ॥ १३. ॥

गाथा १३ भावार्थः—ए शक्रेंद्रना अर्थने सांभळीने पांच वचन रूप हेतु ने एकवचनरूप कारणे प्रेरित नमीराजऋषि शक्रेंद्र प्रत्ये बोलता हवा ॥१३ ॥

अर्थः—मु० मुझने ए० होय तेम व० हुंबसुंहुं जी० जीवुंहुंसुखे । जे० जे मंदीरमाही मी० माहरो न० नथी कि० कांइ थोडो पण । म० मिथिलानगरि ड० बलती छती । न० नहि मे० माहरो ड० बले कि० कांइ अल्प मात्र पण ॥१४ ॥

मूलः—सुहं वसामो जीवामो जेसिं मो नत्थि किंचण ।
महिलाए डज्झमाणीए न मे डज्झइ किंचण ॥ १४ ॥

गाथा १४ भावार्थः—जेम सुख होय तेम हुं वसुंहुं (रहुंहुं), सुखे करीने जीवुंहुं, ए मिथिलादिक नगरीने मंदीरादिक बलते थके माहरं (किंचित्) मात्र पण बलतुं नथी ॥ १४ ॥

अर्थः— च० छांडया पु० बेटा क० भार्या जेणे एहवा साधुने । नि० निवर्त्या सावद्य व्यापारथकी नि० साधुते पि० ए माहरे वस्तु प्रियकारि वल्लभकारि लोकिक ॥ न० नथी कि० थोडि पण अ० अप्रियकारि-अल्पामणी पि० पण न० नथी ॥ १५ ॥

करी क्षत्री थया एवुं एक वचनरुप कारण जाणवुं, पण तमे पुर्वे कर्युं जे शारीरिक मानासिक दुखनुं कारण होय तेपी मोक्ष मार्गे नसीझे ते माटे गढादिक करावना ए तमारा हेतु कारण अयुक्त ॥ २२ ॥

अर्थः—ए० एय० पूनः अ० अर्थ सांभली विचारीने । हे० हेतु छे कारण छे चो० प्रेरयो थको त० तेवारपछीन० नमीराज ऋषि प्रते । दे० शक्रेंद्र इ० एम अ० बोलता हुवा । २३ ।

मूलः--एयमट्ठं निसामित्ता हेऊकारणचोइओ ।
तओ नमिं रायारिसिं देविन्दो इणमब्बवी ॥ २३ ॥

गाथा २३ भावार्थः—ए अर्थ सांभलीने पांच वचनरूप हेतुने एक वचनरुप कारणे प्रेरित एवो शक्रेंद्र नमीराजऋषि प्रत्ये एम कहेतो हवो ॥ २३ ॥

अर्थः—पा० शिपर वंध उंचा अवाश का०करावीने णं० अलंकारे ।व०वे त्रण गि० य०भूमि गोषा दिक सहित वली सामान्य घर वा० वरंडि सहित पीटणी पो० तलाव मांही क्रीडा करवाना मेहेलप० पदपूरणे करिने त० तेवार पछे ग० जाज्यो ख० हे क्षत्रिराजऋषि ॥ २४ ॥

मूलः--पासाए कारइत्ताणं वद्धमाणगिहाणि य ।
वालग्गपोइयाओ य तओ गच्छसि खत्तिया ॥ २४ ॥

गाथा २४ भावार्थः—राजयोग शिखरबंध उंचा घर त्था वे त्रणादिक मजला वाला गोखादिक सहित सामान्य घर नेमज मेडी चौ वाराने पीटणी (अगासी) सहित एवा तलाव मांही क्रीडा करवानां घर करा-

मूलः—एसमट्ठं निग्गादेना हवइ णाएण चोडओ ।
तओ नमिं गणगिणं देविन्दो इणमब्बवी ॥ १७ ॥

गाथा १७ भावार्थः—ए प्रमाणवडेजी अर्थ सांपवतांने पांच कारणवडे हेतुने एक कारणवडे प्राप्ते देवेंद्र प्रमाणवडे कहि मनने हरखो दर्शे ॥ १७ ॥

अर्थः—पा० गहने का० कषायोने जे० जयनारेकहे । जो० जो जितेंद्रियपणो करवाने योग्य ५० कोट उपरला कोटाय० वर्ती ॥ ३० सा स० जो साधनो पाल करे ते साधीपण करवाने ५० जेवा पाले ग० घर मुकीने जाओ स० ते अविगतकहि ॥ १८ ॥

मूलः—पागारं कारइत्ता गोपुट्टालगाणि य ।
उस्सूलगसयग्घीओ तओ गच्छसि खत्तिया ॥ १८ ॥

गाथा १८ भावार्थः—गढ, पोल, कमाड, भुंगल, गढ उपरनो कोटो, खाइ, ने अनुक्रमे पाल करे एवा प्रकारनी शस्त्र करवाने जेवा पछी हे क्षत्रियवर तुंजने. १ जेम गढादिक करवो ए हेतुने पण, २ जेम खाईओ तेथी ए हेतु, ३ शत्रुनो दबावे नाखे ए उद्धारने अर्थे, ४ ने ने अर्थे होवे दबावे नाखे शत्रुओने ए उपनय अर्थे, ५ तेथी तमारे ए गढादिक करवा जोइए ! ए प्रकारे सभाजित जेम गढादिक करवा लिखाए सविषणुं न होय ए कारणथी एवा पांच कारणवडे हेतुने एक कारणवडे जाणवु. ॥ १८ ॥

अर्थ—ए० ए प्र० अर्थ नि० सांभलीने निर्धारीने । हे० हेतु जे का० कारण ओ० तेथी पछी ॥

तिने स० सहाय वि० धीर्यरूपं न० धनी के० कमाननो मध्यभाग साहवाने मुष्टिने। कि० करिने सा० सत्यरूप चापने करिने पं० पचुण्य-पांच्यो छे चारदा धर्मपथ होय॥ २१ ॥

मूलः—धणुं परक्कमं किच्चा जीवं च इरियं सया।
धिइं च केयणं किच्चा सच्चेण पलिमन्थए ॥ २१ ॥

गाथा २१ भावार्थः—पांच मुमती रूप पणछ, धैर्य रूप कमाननो मध्य भाग ते पकडवानी मुंठ अने सत्य रूप चापने करी पराक्रम रूपी पचुण्य चांप्यो छे. ॥ २१ ॥

अर्थः—स० सरखता० जोडवाने तेणे करि जु०महिनते पचुण्य तेणे करि वि०भेदिने विदारिने क० कर्म रूपीया क० वैरीनी सेन्यने सा० केदवाने ॥ सु० साधु वि० वेगलोछे सं० लोकिक संग्रामथी। वा० अथवा वि० विशेषे स० पोतानो छे। सं० भाव संग्रामने विषे एहवा साधु ध० संसारथी प० अतीशेशु० सुकाय ॥२२॥

मूलः—नवनागयजुत्तेण भित्तूणं कम्मकञ्चुयं।
मुणी विगयसंगामो भवाओ परिमुच्चए ॥ २२ ॥

गाथा २२ भावार्थः लौकिक संग्राम रहित एवा साधु, पराक्रम रूपी पचुण्यने नव रस लोहनां बाणे करी कर्म रूपी वैरीनी सैन्यने विदारवेकरी संग्रामथी मुक्त थया, गढादिक कर्या ए वस्त्र शरीरपुं माटे गढादिक करवा ए हेतु, मनवांछित इष्टसिद्धि जे जे सर्वे होय ते गढादिक करे ए इष्टसिद्धनुं मूलकारण, तेमाटे अमे गढादिक कर्या ए पण्डी यद्यपि एवां पांच वचन हेतु अमे गढादिक कर्या विना सर्वे पण न होय तेथी अमे गढादिक

जत्थेव गन्तुमिच्छेज्जा तत्थ कुव्वेज्ज सासयं ॥ २६ ॥

गाथा २६ भावार्थः—हे विप्र ! हुं अहीं रहिश के नहि ! अथवा आगळ मने घर मळशे के नहि ! एवो मनना मनमां संशय रहेतो होय तेज मार्गने विषे घर करे, पण मारा मनमां संशय नथी कारणके अहीं थी जवुंछे, माटे समकितादीक गुणे करी सहित होय तेने माटे मुक्ति रुप निवास योग्य होय माटे ज्यांहुं मुक्ति जवानी इच्छा राखुंछुं त्यां मारूं सास्वतु घर सिद्धीरुप हुं सास्वतुं घर करुंछुं. १ ए नेमीराजनो पक्ष, २ क्रीडाना रसिक पणा माटे ए हेतु, ३ भरतादिकने दृष्टांते, ४ जे क्रीडाना रसीक होय ते सास्वता घर करे ए उपनय, ५ जेम भरतादिके सास्वता घर कर्या तेम हुं पण क्रीडाना रसीक पणाथी सास्वतुं घर करुंछुं, ए प्रसनी समाप्ति, सास्वता घर कर्या विना क्रीडानुं रसीक पणुं न होय ए कारण, एवां पांच वचन रुप हेतुने एक वचन रुप कारण समजवुं ॥ २६ ॥

अर्थः—ए० ए अर्थने नि० सांभलीने विचारिने । हे० हेतुछे, का० कारणे प्रेरयो थको । त० तेवारे पछी न० नमीराजऋषि प्रते दे० शक्रेंद्र इ० एम अ० बोलता हुवा ॥ २७ ॥

मूलः—एयमट्ठं निसामित्ता हेऊकारणचोइओ ।
तओ नमिं रायरिसिं देविन्दो इणमब्बवी ॥ २७ ॥

गाथा २७ भावार्थः—एवो नमीराजऋषिनो अर्थ सांभळीने पांच वचन रुप हेतुने एक वचन रुप कारणे प्रेरित थको शक्रेंद्र नमीराजऋषि प्रत्ये कहेतो हवो ॥ २७ ॥

कीने तेवार पछी रे, क्षत्रिराज ? हुंजले ॥ १ तमारे मासादादिक करावचा ए इंद्रनो पक्ष, २ क्रीडाना रसिक पणा माटे ए हेतु, ३ ब्रह्मदत्तने उदाहरण करी, ४ जे जे क्रीडाना रसिक होय ते मासादादिक करावे ए उपनय, ५ जेम ब्रह्मदत्ते क्रीडाना रसिक पणाथी दिन दिन मत्ये घर कराव्यां तेम तमे पण क्रीडाना रसिकछो माटे तमारे पण मासादिक करावचा ए पक्षनी समाप्ति अने मासादादिक कराव्या विना क्रीडानुं रसिकपणुं न होय ए कारण एवां पांच वचनरूप हेतुने एक वचन रूप कारण जाणवुं ॥ २४ ॥

अर्थः—ए० एम० पूनः अ० अर्थने नि० सांभलिने विचारिने । हे० हेतुले का० कारण ले चो० तेणे प्रेरयो थको । त० तेवारे पछी न० नमीराजऋषीस्वर दे० शक्रेंद्र प्रत्ये इ० एम अ० बोलतो हुओ ॥ २५ ॥

मूलः-एयमट्ठं निसामित्ता हेऊकारणचोइओ ।
तओ नमी रायरिसी देवेन्दं इणमब्बवी ॥ २५ ॥

गाथा २५ भावार्थः—एहवो शक्रेंद्रनो अर्थ सांभलीने पांच वचनरूप हेतुने एक वचन कारणे प्रेरित नमीराजऋषी शक्रेंद्र प्रत्ये एम कहेतो हवो ॥ २५ ॥

अर्थः—सं० संसयने स० निश्चे सो० ते नर कु० करे । जो० जे मनुष्य म० मार्गने विषे कु० करे प० थरने प० आगल घर मंदिरे न मिलेतो इहां करि ले ए भमार्थ ॥ अ० जिहां ज्ञानवंत नर ए० ए निश्चे म० जानाने इ० वांछे । त० तिहां कु० करे सा० सास्वता मंदिरने एटले सिद्धपद रूप मंदिरने ॥२६॥

मूलः-संसयं खलु सो कुणई जो मग्गे कुणई घरं ।

तओ नमी रायरिसी देवेन्दं इणमब्बवी ॥ २९ ॥

गाथा २९ भावार्थः—एवो शक्रेंद्रनो अर्थ सांभळी पांच वचनरुप हेतुने एक वचनरुप कारणे प्रेरित नेमीराजऋषी शक्रेंद्र प्रत्ये कहेता हवा ॥ २९ ॥

अर्थः—अ० अनेकवार म० अज्ञानवंत मनुष्य ते मि० पोटा दं० दंड प० प्रजूनवे देवे । अ० चोरि ना अणकरणहार ते सरिरादि पुद्गल । अ० ए लोकने विषे व० वंधायछे मु० मुकाय का० चोरिना करणहारा ज० इंद्रियना विकार सहित जन । एटले इंद्रियना विकार चोरने कोइ मोहवंत वांधी न सके ॥ ३० ॥

मूलः—असइं तु मणुस्सेहिं मिच्छा दण्डो पजुज्जई ।
अकारिणोऽत्थ बज्झन्ति मुच्चई कारओ जणो ॥ ३० ॥

गाथा ३० भावार्थः—अहंकार पणे अने अज्ञानादिके करी वारंवार मनुष्यो वारंवार मनुष्यने जुठा दंड करेछे कारण के जे निरपराधी के जे चोरी नथी करता तेने शरीर त्याग तथा देश त्याग विगेरे दंड देछे अने जे चोरी कर्मना करनार ते मुकायछे. चोरादिकने टालीने नगरने क्षेम न करी शकीए १ अर्थात् जगतनुं अज्ञान टाळी शकुं नहि ए नमीराजनो पक्ष १, २ जाणवाने अशक्तिवान होवाथी ए हेतु, ३ चोरने उदा- हरणे करी, ४ अपराधीने छोडीदे अने विना अपराधीने वांधे ए उपनये, ५ तेथी नगरने क्षेम न कराय ए पक्षनी समाप्ति अने नगरने क्षेम कर्या सिवाय धर्म राजपणुं न होय ए कारणे एवां पांच वचनरूप हेतुने एक वचनरूप कारण ए कारण तमारां अयुक्तछे ए नमीराजऋषीए ई नां हेतु कारण उथाप्यां ॥ ३० ॥

धीने तेवार पछी हे क्षत्रिराज ? तुंजने ।१ तमारे प्रासादादिक करावना ए इंद्रनो पक्ष, २ क्रीडाना रसिक पणा माटे ए हेतु, ३ ब्रह्मदत्तने उदाहरण करी, ४ जे जे क्रीडाना रसिक होय ते प्रासादादिक करावे ए उपनय, ५ जेम ब्रह्मदत्ते क्रीडाना रसिक पणाथी दिन दिन प्रत्ये घर कराव्यां तेम तमे पण क्रीडाना रसिकछो माटे तमारे पण प्रासादिक करावना ए पक्षनी समाप्ति अने प्रासादादिक कराव्या विना क्रीडानुं रसिकपणुं न होय ए कारण एवां पांच वचनरुप हेतुने एक वचन रुप कारण जाणवुं ॥ २४ ॥

अर्थः—ए० एप० पूनः अ० अर्थने नि० सांभलिने विचारिने । हे० हेतुछे का० कारण छे चो० तेणे प्रेरयो थको । त० तेवारे पछी न० नमीराजऋषीश्वर दे० शक्रेंद्र प्रत्ये इ० एप अ० बोलतो हुओ ॥ २५ ॥

मूलः—एयमट्ठं निसामित्ता हेऊकारणचोइओ ।
तओ नमी रायरिसी देवेन्दं इणमब्बवी ॥ २५ ॥

गाथा २५ भावार्थः—एहवो शक्रेंद्रनो अर्थ सांभलीने पांच वचनरुप हेतुने एक वचन कारणे प्रेरित नमीराजऋषी शक्रेंद्र प्रत्ये एम कहेतो हवो ॥ २५ ॥

अर्थः—सं० संसयने ख० निश्चे सो० ते नर कु० करे । जो० जे मनुष्य म० मार्गने विषे कु० करे प० परने प० आगल पर मेलेके न पिलेतो इहां करि ले ए अर्थार्थ ॥ ज० जिहां ज्ञानवंत नर ए० ए निमे न० जाणे इ० वांछे । त० तिहां कु० करे सा० सास्वता मंदिरने एटले सिद्धपद रुप मंदिरने ॥२६॥

मूलः—संसयं खलु सो कुणई जो मग्गे कुणई घरं ।

जीतवाथीज जीव सुख पामे छे, १ एम वैरी नमाड्या ए नमीराजनो पक्ष, २ नराधिपतिपणा माटे ए हेतु, ३ भरतादिकने उदाहरणे करी, ४ जे जे नराधिपति होय ते ते वैरीने नमाडे ए उपनय ५, जेम भरतादिके अंतरंग वैरी नमाड्या तेम अमे पण अंतरंग वैरी नमाड्या ए पक्षनी समाप्ति अने अंतरंग वैरी नमाड्या सिवाय नराधिपतिपणुं न होय ए कारण, एम अंतरंग वैरीने नमाडी सत्यरीते नराधिपति थया अने तमे परमार्थ जाण्या सिवाय बाह्य वैरीने जीतवा कह्या तेथी तमारां हेतु कारण अयुक्त एम पांच वचनरुप हेतुने एक वचनरुप कारणे करी नमीराजऋषिये शक्रेंद्रनां हेतुने कारण उथाप्यां ए ६ प्रश्नोत्तर थयां (अहीं द्वेषना अभावनी परीक्षा करी) ॥ ३६ ॥

अर्थः—ए० इत्यादि अ० अर्थ नि० सांभलीने विचारिने हे० हेतुए कारणे प्रेरयो । त० तेवार पछे न० नमीराजऋषि प्रते । दे० शक्रेंद्र इ० इम अ० बोलता हुवा ॥ ३७ ॥

मूलः—एयमट्ठं निसामित्ता हेऊकारणचोइओ ।
तओ नमिं रायरिसिं देविन्दो इणमब्बवी ॥ ३७ ॥

गाथा ३७ भावार्थः—ए पूर्वोक्त नमीराजऋषिनो अर्थ सांभळीने पांच वचनरुप हेतुने एक वचनरुप कारणे प्रेरित शक्रेंद्र नमीराजऋषि प्रत्ये कहेतो हवो ॥ ३७ ॥

अर्थः—ज० जमाडिने वि० विपुल मोटां ज० यज्ञने । भो० जिमाडिने स० श्रमण तापस मा० ब्राह्मणने । द० सुवर्णादिक दान देइ य० वली भो० मनोगत भोग भोगवीने जि० जवन्य जाणीने य० पद

कीने तेवार पछी हे, क्षत्रिराज ? हुंजने । १ तमारे मासादादिक.करावना ए इंद्रनो पण, २ क्रीडाना रसिक पणा माटे,ए हेतु, ३ शब्दनने उदाहरण करी, ४ जे जे क्रीडाना रसिक होय ते मासादादिक करावे ए उपनय, ५ जेम शब्दरुप क्रीडाना रसिक पणाथी दिन दिन प्रत्ये पर कराव्यां तेम तमे पण क्रीडाना रसिकछो माटे तमारे पण मासादिक करावना ए पहली समाप्ति अने मासादादिक कराव्या विना क्रीडानुं रसिकपणुं न होय ए कारण एवां पांच वचनरुप हेतुने एक वचन रुप कारण जाणवुं ॥ २४ ॥

अर्थः—ए० एम० पूनः अ० अर्थने नि० सांभलिने विचारिने । हे० हेतुले का० कारण ले गो० तेणे प्रेरयो थको । त० तेवारे पछी न० नमीराजऋषीश्वर दे० शक्रेंद्र प्रत्ये इ० एम अ० बोलतो हुओ ॥ २५ ॥

मूलः-एयमट्ठं निसामित्ता हेऊकारणचोइओ ।
तओ नमी रायरिसी देवेन्दं इणमब्बवी ॥ २५ ॥

गाथा २५ भावार्थः—एटलो शक्रेंद्रनो अर्थ सांभलीने पांच वचनरुप हेतुने एक वचन कारणे प्रेरित नमीराजऋषी शक्रेंद्र प्रत्ये एम कहेतो हवो ॥ २५ ॥

अर्थः—सं० संसारने वि० विषे जो० जे मनुष्य म० मार्गने विषे कु० करे प० परने प० आगल थर मलेके न मिलेतो इहां फरि ले ए अभिप्राय ॥ ज० जिहां ज्ञानवंत नर ए० ए निषे न० आवाने इ० वांछे । त० तिहां कु० करे सा० सारता मंदिरने एटले सिद्धपद रुप मंदिरने ॥२६॥

मूलः-संसयं खलु सो कुणई जो मग्गे कुणई घरं ।

मूलः—एयमट्ठं निसामित्ता हेऊकारणचोइओ ।
तओ नमी रायरिसी देवेन्दं इणमब्बवी ॥ ३९ ॥

गाथा ३९ भावार्थः—ए पूर्वोक्त अर्थ सांभळीने पांच वचनरुप हेतुने एक वचनरुप कारणे प्रेरित नमीराजऋषि शक्रेंद्र प्रत्ये कहेता हवा ॥ ३९ ॥

अर्थः—जो० जे कोइ दानार स० दसलाप गायने १०००००० मा० महिने मा० महिने ग० गायने द० दिये । न० ते दसलाप गायना दानारने अ० पण सं० संजमनो ग्रहवो तेहज से० श्रेयनुं कारण होय अ० गायनां अण देणहारने वि० पण किं० कांइक थोडोए अदानीने पण । संजम ते श्रेयनुं कारण होय ॥४०॥

मूलः—जो सहस्सं सहस्साणं मासे मासे गवं दए ।
तस्सावि संजमो सेओ अदिन्तस्स वि किंचण ॥ ४० ॥

गाथा ४० भावार्थः—कोइ महीने महीने दश दश लाख गायोनुं दान करे, (अहीं भूमी सुवर्णादिकनुं पण दान समजवुं. लोकमां गायनुं दान प्रसिद्ध गणे छे तेथीज अहीं गायनुं दान मुख्यत्वे कहेलछे), तेवा पुरुषने जो कदाचित चारित्रावर्णि कर्मना क्षयोपशमपणाथी सर्व आश्रववेरमण रुप चारित्र आवे तो ते बीजुं कांइपण दान दीये नहि तोपण ते चारित्र प्रशंसनीय गणाय, वखाणवा योग्य पण गणाय, ए प्रथम अर्थ. ते गाय प्रमुखनुं दान करनारथी पण संयमनो पालनार साधु प्रसंसनीय जाणवो, ए बीजो अर्थ. तेवा गाय प्रमुखना दानथी पण संयमनिर्वय (पाप रहित) होवाथी प्रसंसनीक जाणवो, ए त्रीजो अर्थ. अहीं संयमनिर्व

अर्थः—आ० वाटपाडा चोरने लो० य० वली देशीने करीटो आने तेहवा फासिया चोरने गं० गंडी छोरा चोरने त० सर्व काल चोरिनां करणहारने य० पुनःनिवारिने। न० नगरने खे० कल्याण का० करिने न० तेवारे पछे ग० जाग्यो रा० ते क्षत्रियराजऋषि ॥ २८ ॥

मूलः—आमोसे लोमहारे य गण्ठिभेए य तक्करे।
नगरस्स खेमं काऊण तओ गच्छसि खत्तिया ॥ २८ ॥

गाथा २८ भावार्थः—ने मालना चोरने, दशीने धनने उरेडे ने माणस मारेले वाटे छुंटेले, थाड पाडे छे, गांठ कापेले एवा चोरोने निवारी नगरने क्षेम करीने तेवार पछी हे क्षत्री राज्य ! तमे जजो ! १ चोरने टाळीने नगरने क्षेम करवुं ए इंद्रनो धर्म, २ धर्म राजपणा पाछे ए हेतु, (३) भर्त्तादिक धर्मा राजाने दृष्टांते, (४) चौरादिक टाळ्या विना नगरने क्षेम न होय ए उपनय, (५) भर्त्तादिक धर्मी राजाए चोरने निवारी नगरने क्षेम कर्युं तेम तमे पण धर्मी राजा होवाथी चोरने निवारी नगरने क्षेम करवुं ए पक्षनी समाप्ति अने नगरने क्षेम कर्या वगर धर्मराजपणुं न होय ए कारण, एवां पांच वचन रूप हेतुने एक वचन [illegible] कारण जाणवुं ॥ २८ ॥

अर्थः—ए० इत्यादिक अ० अर्थने नि० सांभळीने विचारीने। हे० हेतु का० कारण चो० बेरयो थको न० निवार पछी न० नमीराजऋषी। दे० शक्रेंद्र म० ये इ० एम अ० बोलता हुवा ॥ २९ ॥

मूलः—एयमट्ठं निमामित्ता हेऊकारणचोइओ।

अर्थः—ए० इत्यादि अ० अर्थने नि० सांभलीने विचारीने । हे० हेतुए का० कारणे चो० प्रेरणो थको न० तेवार पछी न० नमीराजऋषि प्रते दे० शक्रेंद्र इ० एम अ० बोलतो हवो ॥ ३१ ॥

मूलः—एयमट्ठं निसामित्ता हेऊकारणचोइओ ।
तओ नमिं रायारिसिं देविन्दो इणमब्बवी ॥ ३१ ॥

गाथा ३१ भावार्थः—एवो नमीराजनो अर्थ सांभळीने पांच वचनरुप हेतुने एक वचनरुप कारणे प्रेरित शक्रेंद्र नमीराजऋषि प्रत्ये करेतो हवो ॥ ३१ ॥

अर्थः—जे० जे को० कोइक प० राजा तु० तुजने ना० नथी नमता न० हे नराधीप हे राजन । व० पोताने वसे ते० ते राजा प्रते आ० आणीने ण० अलंकारे त० तेवार पछे ग० जाज्यो ख० हे क्षत्रियराजऋषि ॥३२॥

मूलः—जे केइ पत्थिवा तुज्झं नानमन्ति नराहिवा ।
वसे ते ठावइत्ताणं तओ गच्छसि खत्तिया ॥ ३२ ॥

गाथा ३२ भावार्थः—हे नराधिपति ! जे कोइ राजा तमने नथी नमता तथा तमारी आज्ञा नथी मानता तेमने पोते वश करीने तेवार पछी हे क्षत्रियराज ! तुंजजे, १ तमो वैरीने नमाडो ए इंद्रनो पक्ष, २ नराधिपति माटे ए हेतु, ३ भरतादिकने उदाहरणे करी, ४ जे जे नराधिपति होय ते ते वैरीने नमाडे ए उपनय, ५ जेम भरतादिके वैरीने नमाड्या तेम तमारे पण वैरीने नमाडवा जोइए ए पक्षनी समाप्ति अने वैरीने नमाड्या विनाए नराधिपतिपणुं न होय ए कारण एवां पांच वचनरुप हेतुने एक वचनरुप कारण इंद्रना जाणवां ॥ ३२ ॥

भी कलाने पास न आवे ॥ ४४ ॥

मूलः—मासे मासे तु जो बालो कुसग्गेणं तु भुञ्जए ।
न सो सुयक्खायस्स धम्मस्स कलं अग्घइ सोलसिं ॥ ४४ ॥

गाथा ४४ भावार्थः—कोइ निर्विवेकी अज्ञानी मिथ्यादृष्टी मास मासखमणनां पारणा करे अने ते मासखमणने पारणे डाभना अग्र ऊपर आवे तेटलुंज अन्न भोगवे अथवा मासखमणने पारणे फक्त डाभ ज भक्षीने रहे तथा ग्रहे रही तेवो तप करे तोपण सर्वथी निर्वद्य एवा चारित्र धर्मनी बराबरी न थाय कारणके ग्रहस्थ देशथी त्यागीछे पण सर्वथी सावद्यना त्यागी नथी माटे मोक्षना अर्थिये शुर पुरुषे घोर एवो निर्वद्य चारित्र धर्म ग्रहण करवो, १ एकांत गृहस्थपणुं असंज्ञीनीक नहि होवाथी घोरपणुं आदरवुं नहि, (ए टले सावद्यपणानुं घोरपणुं आदरवुं नहि ए नमीराजनो पक्ष, २ निर्वद्यपणाना अभावपणा माटे ए हेतु, ३ जे जे गिर्वद्यपणानुं घोरपणुं न होय ए आदरवुं नहि ए उदाहरणे करी, ४ निर्वद्यपणाना अभावथी ग्रहस्थपणानुं वीरपणुं प्रशंसनिय नहि, ते माटे आदरवुं नहि ए उपनय, ५ तेथी ग्रहस्थाश्रम प्रशंसनिय नहि ए पक्षनी समाप्ति अने एकांत निर्वद्य घोरपणुं आदर्या विना प्रशंसनिकपणुं न होय ए कारण, ए पांच वचन रूप हेतुने एक वचनरुप कारणे करी इंद्रना हेतुने कारण नमीराजऋषिए ऊथाप्या ए ८ प्रश्नोत्तर थया ॥४४॥

अर्थः—ए० इत्यादिक अ० अर्थने वि० सांभलीने विचारिने । हे० हेतु कारणे चो० फेरव्यो थको । त० तेवार पछे न० नमीराजऋषी प्रत्ये दे० शक्रेंद्र एम बोलतो हवो ॥ ४५ ॥

पूरणे न० तेवार पछी ग० जाण्या स० ए सारसानक्षर ॥ ३८ ॥

मूलः—जइत्ता विउले जन्ने भोइत्ता समणमाहणे ।
दच्चा भोच्चा य जिट्ठा य तओ गच्छसि खत्तिया ॥ ३८ ॥

गाथा ३८ भावार्थः—वर्ष दिवस सुधी राजा सनोद ब्रह्मचर्य पाले अने घोडा, घोडा ने पीळा कान इत्यादिक शोभादिकना शास्त्रमां कहेलछे तेवा घोडा समगारीने छूटा मूके पछी ते ए घोडाने अने तेनी साथे संग्राम करी ते घोडाने छोडावीने पछी वर्ष दिवस बाकी रहे तेवारे जेम यज्ञनी विधि कहेलछे ते सुनव करी ते घोडाने ते यज्ञमां होमे मेने अश्वमेध कहीने तेमज गजादीक मेध समंजवा, तेवा विस्तीर्ण यज्ञ करी ब्रह्मवेदना जाण एवा शोभादिकना श्रमण अने ब्राह्मणने जमाडीने गाय तथा सुवर्णादिक दान दइने पछी शब्दरूप रस गंध स्पर्श रूप पांच इंद्रियोना विषय भोगवी राजर्षिनी अवस्थाए पोतेज यज्ञने कुल धर्म करीने तेवार पछी हे सखी राज ! तुंजने. १ यज्ञादिक धर्म करवो ए इंद्रनो पक्ष, २ प्राणीनी प्रीति पणा माटे ए हेतु, ३ प्राणीयोने जमाडवाथी गर्न जीवने सुख उपजे ए उदाहरणे करी, ४ तेथी यज्ञ अने ब्राह्मणादिकने जमाडवा रूप धर्म करवो ए पक्षनी समाप्ति अने ५ यज्ञ तथा ब्राह्मणादिकने जमाडवा रूप धर्म नहि करवाथी प्राणीने प्रीति पणुं नहि होय ए कारण एवा पांच वचनरूप हेतुने एक वचनरूप कारण शक्रेंद्रनां जाणवां ॥ ३८ ॥

अर्थः—ए० इत्यादि अ० अर्थने नि० सांभलीने विचारिने । हे० हेतुए कारणे चो० प्रेरयो एको । न० तेवार पछी न० नमि रा० राजऋषि । दे० शक्रेंद्र प्रते इ० एम अ० बोलवो एवो ॥ ३९ ॥

अर्थः—ए० इत्यादिक अ० अर्थ नि० सांभली विचारिने हे० हेतुए कारणे मेरथी थकी । त० तेवार पछी न० नमीराजऋषी । दे० शक्रेंद्र प्रते । इ० एम बोलता हवा ॥ ४७ ॥

मूलः—एयमट्ठं निसामित्ता हेऊकारणचोइओ ।
तओ नमी रायरिसी देवेन्दं इणमब्बवी ॥ ४७ ॥

गाथा ४७ भावार्थः—ए अर्थ सांभळीने पांच वचनरूप हेतुने एक वचनरूप कारणे मेरित नमीराज ऋषि शक्रेंद्र प्रत्ये कहेता हवा ॥ ४७ ॥

अ॰ः—सु० सोनाना रु० रूपानां उ० निश्चे प० पर्वत य० होय । सि० कदाचित् हु० निश्चे के० मेरु पर्वत स० सरिषा । अ० असंख्याता । न० नर मनुष्य ते लु० लोभीयाने । न० नहि ते० तेणे धने करि कि० थोडोए संतोष नही । इ० तृश्णा उ० निश्चे आ० आकाश स० सरिषी अ० अनंती छे ॥ ४८ ॥

मूलः—सुवण्णरूप्पस्स उ पव्वया भवे सियाहु केलाससमा असंखया ।
नरस्स लुद्धस्स न तेहिं किंचि इच्छा उआगाससमा अणन्तिया ॥ ४८ ॥

गाथा ४८ भावार्थः—सोना रूपाना असंख्याता मेरु जेटला ढगला करिने कोइ लोभी पुरुषने आपे तोपण तेनी तृष्णा निवर्ते नहि कारणके तृष्णा आकाशनी पेरे अनंतीछे अने धननी संख्याछे तेथी तेनुं केम पुरुं थाय ? धनथी तो संतोष न पामे पण बीजी वस्तुथी पण संतोष न पामे ते कहेछे ॥ ४८ ॥

अर्थः—पु० सघली पृथवी १ । सा० सर्वज्ञाल २ । ज० सर्वजव ३ सर्व धान्य ए० अवधारणे । ॥८२॥

न करेवाथी यज्ञ यज्ञए सावद्य (पाप सहित) सयजना. ते यज्ञ अमुकने सावद्य करेवाडुं कारण शुं ते कहे छे, तेना बारमे विषे ५९७ बोकडा वे पोहोरनी बेत्राए यज्ञमां होमे तो यज्ञ पुण्य रूप एम कहेजो, अने प्राणीयोनो वध थाय तेथीज यज्ञ सावद्य कहेजो अने नागुने आपवुं ते सिवाय तमाम पाप अमुकनुं दान ते पण सावद्यछे. वली भोगतो मांसदान सावद्यछे माटे हुं सावद्य कर्म करु नहि, कराडुं नहि, तेम भलु पण न जाणुं तेथी हे शक्रेंद्र ?, १ यज्ञादि करी धर्म करो एम तमे अमने कहुं ते तमारो पक्ष अयुक्त, २ ए धर्म करतां प्राणीने अवतिपणुं होय ए हेतु पण तमारो अयुक्त, ३ सावद्यपणुं होवाथी तमारु उदाहरण पण अयुक्त, ४ धर्मार्थि यज्ञादिक करे ए तमारुं उपनय पण अयुक्त, ५ तेथी यज्ञादिक करवुं ए तमारो पक्ष पण खोटो-अने ए यज्ञादिक किया कर्या विना प्राणीयोने अतिपणुं न होय ए तमारु कारण अयुक्त एवा शक्रेंद्रना हेतु कारणने ऊथापीने, १ हुं सावद्य न करु ए नमीराजनो पक्ष, २ प्राणीने अवतिपणुं माटे ए हेतु, ३ हिंसाने उदाहरणे करी, ४ तेथी प्राणीने अवतिपणुं होय ते ते धर्मार्थि न करे ए उपनय, ५ तेथी हुं सावद्य न करुं ए पक्षनी समाप्ति अने निर्णय कर्या सिवाय प्राणीने अवतिपणुं न होय ए कारण एवा पांच पक्षनरुप हेतुने एक वचनरुप कारणे नमीराजरूपिए पोतानो पक्ष स्थापन कर्यो, अहीं समकित निश्चल तानी परीक्षा करी ए सात प्रश्नोत्तर थया ॥ ४० ॥

अर्थः—ए० इत्यादिक अ० अर्थने नि० सांभली विचारिने हे० हेतुए का० कारणे चो० मेरव्यो प्र० को। त० तेवार पछे न० नमी रा० राजरूपी ऋषि। इ० शक्रेंद्र इ० एम अ० बोलता हवा ॥ ४१ ॥

गाथा ५० भावार्थः— एवो अर्थ सांभळीने पांच वचनरुप हेतुमे एक वचनरुप कारणे प्रेरित शक्रेंद्र नमीराजऋषि प्रत्ये कहेतो हवो ॥ ५० ॥

अर्थः—अ० आश्चर्य अ० अद्‌भूत मुजने उपजेछे भो० छता भोगने च० छांडेछे तुं प० हे पार्थिव हे राजान् । अ० पछे अछता का० काम भोगने प० वांछिसतुं चपल मनने थये थके । सं० संकल्पविकल्पे करि वि० हणाइने ॥ ५१ ॥

मूलः—अच्छेरयमब्भुदए भोए चयसि पत्थिवा !
असन्ते कामे पत्थेसि संकप्पेण विहन्नसि ॥ ५१ ॥

गाथा ५१ भावार्थः—हवे इंद्रे जाण्युं के अछती वस्तुने विषे तो एणे संतोष करीने रागने टाळ्यो छे पण छती वस्तुने विषे एने रागछेके नहि ते परिक्षा करेछे. हे नराधिपति ! मुजने आश्चर्य थायछे के ! तुं अनोपम छतां काम भोगने छोडीने अछता काम भोगनी आशा करेछे तो ते अछता काम भोग नहि मळ वाथी तुं संकल्पने विकल्पे करी हणाइश ? १ तमारे छती वस्तु न छांडवी ए इंद्रनो पक्ष, २ विवेकी पणा माटे ए हेतु, ३ ब्रह्मदत्तने उदाहरणे करी, ४ जेने विवेकी होय ते अछती वस्तुने माटे छती वस्तु ब्रह्मदत्तनी पेरे न छांडे ए उपनय, ५ तेथी तमारे पण अछती वस्तुने माटे छती वस्तु न छांडवी ए वचनी समाप्ति अने अ छती वस्तुने माटे छती वस्तुने अणछांडया विना विवेकीपणुं न होय ए कारण वडे पांच वचनरुप हेतुने

पुर इ लोकनेतो योग्य नथी, तेथी तमे ग्रहस्थाश्रममां रही अष्टमी चौदश पुनमने अमावास्यादिक तीथिने विष पोषध उपवास तेमज बारव्रत रूप श्रावकनो धर्म ग्रहण करो; २ तमे ग्रहस्थाश्रम आदरो ए इंद्रनो पक्ष, २ घोर (अर्थात्) एगा माटे ए हेतु, ३ जे जे घोर ते शूर पुरुषे आदरवुं ए उदाहरणे करी, ४. जेम क्षमादिकनी अभिवृद्धि करे तेम ग्रहस्थाश्रम घोर छे, तथी ते आदरवो ए उपनय, ५ तेथी तमे ग्रहस्थाश्रमने आदरो ए पक्षनी तथागि, ए पांच वचनरूप हेतु मने ग्रहस्थाश्रम ग्रहण कर्या विना शूरपणुं तथा ईश्वरपणुं न होय ए कारण एवा पांच वचनरूप हेतुने एक वचनरूप कारण जाणवुं ॥ ४२ ॥

अर्थः—ए० इत्यादिक अ० अर्थने नि० सांभलीने विचारिने । हे० हेतुए का० कारणे चो० प्रेरयो एक्को न० नेमराजऋषी । दे० शक्रेंद्र मल्ये इ० एम अ० बोलता हवा ॥ ४३ ॥

मूलः—एयमट्ठं निसामित्ता हेऊकारणचोइओ ।
तओ नमी रायरिसी देवेन्दं इणमब्बवी ॥ ४३ ॥

गाथा ४३ भावार्थः—एनो अर्थ सांभळीने पांच वचनरूप हेतुने एक वचनरूप कारणे प्रेरित नमी राजऋषि शक्रेंद्र प्रत्ये कहेता हवा ॥ ४३ ॥

अर्थः—मा० माग मा० मासखमणने पारणे भो० जे बा० बाल अविवेकि मिथ्याती । कु० दानने अ० अर्थे कणीए आवे नेटलुं अन्न । नु० कदाचित । धुं० जेवे न० नहि सो० ते मिथ्याति मासखमणनो करणहार । गु० गुणवान । प० श्रुत धर्म समकीत तथा चारित्र धर्मनी कं० कथाने अ० न पोसाय सो० सोल-

गपुर पण अनंतां दुर्गतीनां दुःख आपे तेथी ए काम भोग विष सरिखा कहीये. वळी आसी (जेनी दाढने विषे) विष सर्प उजळी मणिएने फणांटोपे करी अज्ञानीने जोतां रमणीक देखाय पण तेने स्पर्श करी परा भवेतो तत्काळ मरण पमाडे तेम ए काम भोग शल्यविषने आपि विष सर्पनी उपमाथी पण बघारे दुःखना दातार छे कारणके ते शल्यादिकतो स्पर्शवाथी एकज वखत मर्णादिक दुःख आपे पण काम भोगतो छता न होय पण जो तेनी अभीलाषा करेतो पण कुर्गतीये जाय तोते भोगव्यानुं तो कहेवुंजछुं ?, १ जे अनर्थनुं कारणछे माटे मारे छांडवा ए पक्षनी समाप्ति अने अनर्थ वस्तुने टाळवाना उपायमां रग होय तेवी छती वस्तु होयतोपण छांडवी ए नमीराजनो पक्ष, २ विवेकी पणा माटे ए हेतु, ३ शलय विपादिकने उदाहरणे करी, ४ जेजे विवेकी पुरुष होय ते अनर्थनो उपाय टाळवाने विषे प्रवर्ते ए उपनय, ५ तेथी प्रवर्त्या विना विवेकीपणुं न होय ए कारण एवां पांच वचनरूप हेतुने एक वचनरूप कारणे करी इंद्रना हेतु ने कारण उथाप्या ए १० प्रश्नोत्तर थया ॥ ५३ ॥

अर्थः—अ० नरकादिक अधोगतिने वि० जाय । को० क्रोधे करि । मा० माने करिने भ० माठी गं० गति होय मा० मायाए करि ग० शुभ गतिनो प० विनाश होय । लो० लोभथकी । दु० इहलोक परलोक भ० भय होय ॥५४॥

मूलः—अहे वयइ कोहेणं माणेणं अहमा गई ।
माया गइपडिग्घाओ लोभाओ दुहओ भयं ॥ ५४ ॥

गाथा ५४ भावार्थः—हवे काम भोग सेव्या विना फक्त तेनी अभीलाषा करतो थको पण जीव दुर्ग

मूलः-एगमट्ठं निसामित्ता हेऊकारणचोइओ ।
तओ नमिं रायरिसिं देविन्दो इणमब्बवी ॥ ४५ ॥

गाथा ४५ भावार्थः-ए अर्थ सांभळीने पांच वचनरूप हेतुने एक वचनरूप कारणे सहित शक्रेंद्र नमीराजर्षि प्रत्ये कहेतो हवो ॥४५॥

अर्थः-हि० धम्मा सोनाने तथा रूपा मु० चांदीने, सो० सोना तथा रूपा सो० चंद्रकांतादि मणीने । मु० मुक्ताफलने । कं० कांसाना भाजन [illegible] वा० वस्त्रोने । कों० कोठारने वं० वधारिने । भं० भंडारने । त० तेवारपछी । नि० जाणो । रा० हे राजर्षि ॥ ४६ ॥

मूलः-हिरण्णं सुवण्णं मणिमुत्तं कंसं दूसं च वाहणं ।
कोसं वड्ढावइत्ताणं तओ गच्छसि खत्तिया ॥ ४६ ॥

गाथा ४६ भावार्थः-हवे लोभनी परीक्षा करेछे. घडयुं तथा अघडयुं सोनुं, रूपुं, चंद्रकांतादिक मणि मोती, कांसानां भाजन (वासणो) वस्त्र, रथ, अश्वादिक, कोठार, भंडारादिक वधारीने तैयार पछी हेराजर्षि तुंजने ?. १ इच्छा सहित धर्म करवा योग्य न होय ए हेतुनो पक्ष, २ कांइ आपणा माटे ए हेतु, ३ मुंगा पणी फने उदाहरणे करी, ४ जे जे कांइ अंत होय तेने धर्म करवा योग्य न होय ए उपनय, ५ तेथी तमे इच्छा सहित होवाथी धर्म करवा योग्य नहि ए पक्षनी समाप्ति, ए पांच वचनरूप हेतु अने इच्छा सहित धर्म करवाना अयोग्यपणां विनां साकांक्षपणुं न होयए कारण एवां पांच वचनरूप हेतुने एक वचनरूप कारण जाणवुं ॥४६॥

गाथा ५६ भावार्थः–आश्चर्यकारी तमे क्रोधने जीत्यो, केमके जे राजा तमने नथी नमता तेने नमाडी जाओ एवुं में कयुं तेवारे तमे क्षोभापमान थया नहि, तेथी में जाण्युं जे एणे जरुर क्रोध जीत्यो छे. आश्चर्यकारी तमे अभिमानने जीत्यो, कारणके जे वखते तमने कयुं जे नगारा स्वजन अंतेऊरादिक वळे छे तेनुं रक्षण करो तेवारे तमने अभिमान न आव्यो जे मारा छत्रां मारा स्वजनादिक केम वळे छे तेथी में जाण्युं जे एणे अभिमान जीत्यो छे. आश्चर्यकारी तमे माया (कपटाइ) जीती, कारणके जे वखतमें तमने कयुं के तमे नगरने गढत्राइ प्रबलबोरने वस करवा करावो त्यां तमने कपटाइ नहि प्रगट थवाथी तमे माया जीती छे एम में जाण्युं. आश्चर्यकारी तमे लोभने जीत्यो कारणके जे वखते में तमने कयुं के तमे सोनारुपाना भंडार भरावो त्यां तमने लोभ नहि ऊपजवाथी में जाण्युं जे एणे जरुर लोभने जीत्यो छे. ॥ ५६ ॥

अर्थः–अ० आश्चर्यते० ताहरुंअ० सरलपणोसा० भठुं । अ० आश्चर्यते० ताहरुंसा० भठुं म० अहंकार रहितपणो । अ० आश्चर्यते० ताहरी उ० प्रधान खं० क्षमा ॥ अ० आश्चर्यते० ताहरी म० निर्लोभता उ० प्रधान ॥ ५७ ॥

मूलः–अहो ते अज्जवं साहु अहो ते साहु मद्दवं ।
अहो ते उत्तमा खन्ती अहो ते मुत्ति उत्तमा ॥ ५७ ॥

गाथा ५७–भावार्थः–आश्चर्यकारी ? कपटाइ टाळवाथी तमारुं सरळपणुं ? आश्चर्यकारी तमारुं मानने

वि० सुवर्णादिक सर्वधन प० सर्व धोषदादिके करी वि० सहित प० संपुर्ण लोक भराय एतलो सघलो धना दिक न० नहि अ० तृष्णा मटाडवा समर्थ ए० एकलोभीया मनुष्यने ॥ इ० एहवो वि० जाणीने त० संतोषहाने रुप जे न० तप तेने च० आचरे विवेकवंत ॥ ४९ ॥

मूलः—पुढवी साली जवा चेव हिरण्णं पसुभिस्सह ।
पडिपुण्णं नालमेगस्स इइ विज्जा तवं चरे ॥ ४९ ॥

गाथा ४९ भावार्थः—शाली (डांगर) जव प्रमुख सर्व धान्ये करा, रुपा सोनादिके करी, अश्व, हाथी प्रमुखे करी, सर्व वस्तुए करी, सघली पृथ्वी भरीने कोइ लोभी नरने आपे तोपण एक लोभीनी इच्छा निवर्तावा समर्थ नहि तो पछी पण लोभीनीनो तृष्णा निवर्तेज कयांथी ? एम जाणीने ज्ञानवंत तपश्चर्या आचरे, १ अमने कांइ पण इच्छा नथी ए नमीराजनो पक्ष, २ संतोषीपणा माटे ए हेतु, ३ सिद्धने उदाहरणे करी, ४ जे संतोषी होय तेहने कांइ पण इच्छा न होय ए उपनय, ५ तेथी अमने कांइ पण इच्छा नथी ए पक्षनी समाप्ति अने इच्छाना अभावपणा विना संतोषपणुं न होय ए कारण एवां पांच वचनरुप हेतुने एक वचनरुप करणे करी इत्यना हेतु कारण उपाप्या, ए ९ प्रश्नोत्तर गया ॥ ४९ ॥

अर्थः—ए० इत्यादिक अ० अर्थ नि० सांभली विचारिने हे० हेतुए का० कारणे करि चो० बेरघो पड्यो । म० मेवार पछे न० नमिराजऋषी प्रते दे० शक्रेंद्र इ० इम अ० बोलतो हवो ॥ ५० ॥

मूलः—एयमट्ठं निमामित्ता हेऊकारणचोइओ ।

लक्षणछे जेहनेविषे मु० मुनीवरना पगनेवांदीने । आ० आकाशे अ० उत्पत्यो ॥ शक्रेंद्रकेदेवोछेल० लीलास-
हितच० चपल कुं० कुंडलछे ति० मुगटछे जेहने ॥ ६० ॥

मूलः—तो वन्दिऊण पाए चक्कङ्कुसलक्खणे मुणिवरस्स।
आगासेऽणुप्पइओ ललियचलकुण्डलतिरीडे ॥६०॥

गाथा ६० भावार्थः—जे पग चक्रने अंकुशना लक्षणे करी शोभीत छे एवा नमीराज ऋषिना पगने वांदीने कर्णाभरण चपल कुंडलने मुगट छे जेने विषे एवो विलास संयुक्तथको शक्रेंद्र ज्यांथी आव्यो हतो त्यां ऊर्द्ध देवलोकने विषे गयो. ॥ ६० ॥

अर्थः—न० नमीराजरुषि न० नमाडे अ० पोताना आत्माने स० प्रत्यक्ष स० सक्रेंद्रे चो० प्रेरणाथकी। च० छांडिने गे० घरने च० वळी वि० विदेहदेशनो अधिपतिछे। सा० चारित्रनेविषेप० उद्यमवंतहुओ ॥६१॥

मूलः—नमी नमेइ अप्पाणं सक्खं सक्केण चोइओ।
चइऊण गेहं च विदेही सामण्णे पज्जुवट्ठिओ ॥ ६१ ॥

गाथा ६१ भावार्थः—शक्रेंद्रे प्रेरणा करवाथी नमीराजाए पोताना आत्माने नमाडयो अने विदेह देश घर छोडीने चारित्रने विषे उद्यमवंत थया. ॥ ६१ ॥

अर्थः—ए०एणीपरेक० निश्चलपणोकरे । सं० तत्वनोजाण । प० अतिहेविचक्षण प० दाखो वि०
विदेहेनिवर्त्तेभो० भोगथी । न० जेपरे० तेन० नमीराo राजऋषी । वि० एम वे० कुं ऋद्धुंढं ॥ ६२ ॥

एक वचनरूप कारण जाणवुं ॥ ५१ ॥

अर्थः—ए० इत्यादिक अ० अर्थ नि० सांभलीने विचारिने । हे० हेतुए कारणे मेरएो थको । न० तेवार पछी न० नमीराजऋषी ॥ दे० शक्रेंद्र प्रते इ० इम अ० बोलता हवा ॥ ५२ ॥

मूलः—एयमट्ठं निसामित्ता हेऊकारणचोइओ ।
तओ नमी रायरिसी देवेन्दं इणमब्बवी ॥ ५२ ॥

गाथा ५२ भावार्थः—एवो अर्थ सांभलीने पांच वचनरूप हेतुने एक वचनरूप कारणे मेरित. नमीराजऋषि शक्रेंद्र प्रत्ये कहेता हवा ॥ ५२ ॥

अर्थः—स० सल्य सरिखा का० काम भोगने नि० विष सरिखा का० काम भोगने का० काम भोग ते भा० सर्पनी उ० उपमा सरिखा । का० काम भोगने प० वांछता थकापण ॥ अ० नथी काम भोग पोते जेहने पण वांछता थका ज० जीवजाए उपजे दो० दुर्गती प्रते ॥ ५३ ॥

मूलः—सल्लं कामा विसं कामा कामा आसीविसोवमा ।
कामे य पत्थेमाणा अकामा जन्ति दोग्गइं ॥ ५३

गाथा ५३ भावार्थः—जेम भाला प्रमुखनो शल्य शरीरमां रहेवाथी पीडा उपजावे तेम ए काम भोग पणने विषे रहेवाथी अतिचिंतां विगेरे थणां दुःख उपजावे तेथी ए काम भोग शल्य सरिखा जाणवा. वली जेम तालपुटादिक विष खाधां थकां मधुर होय पण खाधा पछी मरणादिक दुःख दीये तेम ए काम भोग सेवतां

प्रकारना प्रमाद जाणवा जाणीने तजवा एम गौतमना नामथी सर्वे जीवोने महावीर ऊपदेश कर्यो छे.) ॥ १ ॥

अर्थः—कु० डाभनी अणीनेविषेज० जेमओ० ठारनोवि०विन्दुओ । थो० थोडोचि०रहेलं० हालतोथको ।
ए० एणीपरेण० मनुष्यनुंजी० आउयो । स० तेमाटेसमयमात्र गो० हेगौतममा० मथा प्रमादिप०मकरिसमप्रमाद ॥२॥

मूलः—कुसग्गे जह ओसविन्दुए थोवं चिट्ठइ लम्बमाणए ।
एवं मणुयाण जीवियं समयं गोयम मा पमायए ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः—जेम डाभने अग्रे ठारनो बींदुओ वायुथी प्रेरितथको थोडोकाळ रहे तेम ए मनुष्या-
दि जनुं आयुष्य जाणीने हे गौतम ? समय मात्रनो प्रमाद मकर ! ॥ २ ॥

अर्थः—इ० एणीपरे इ० थोडा आ० आउपानेविषे जी० थोडाजीवतव्यनेविषे व० घणा प० कष्टदुपछे
जेहनेविषे । वि० टाले र० कर्मरुपरजने पु० पुर्व क० कृत्पने । स० समयमात्र गो० हेगौतम मा० मिथ्याममादिक
प० मकरिसमप्रमाद ॥ ३ ॥

...दिक अयोगनीये जाय, कषाइए करी भली गतना नाश थाय,
गना मार्गना करवाथी क्रोधादिक ऊपजे, अने तेनां फळ पुर्वोक्त प्रमाणे थाय, तेथीज कापभोगनी मार्गना
करवाथी जीव दुर्गतीये जाय-तेथी हुं ए क्रोधादिकना फळने जाणुंछुं तेथीए क्रोधादिक नहि करुं. ॥ ५४ ॥
अर्थः-अ० छांडिनेमा० व्याचणना रु० रुपने वि० विकथकरिने इ० इंद्रगाने व० वंदिछे अ० स्तुति-
करेछे इ० आगळकरयेतेहने म० मधुरेव० वचनेकरिने ॥ ५५ ॥

मूलः—अवउज्झिऊण माहणरूवं विउरुविऊण इन्दत्तं ।
वन्दइ अभित्थुणन्तो इमाहि महुराहिं वग्गूहिं ॥ ५५ ॥

गाथा ५५ भावार्थः-ए रीत प्रभोत्तरे करी अनेकप्रकारे इंद्रे नमीराज ऋषिने प्रेरणा करी पण ते
नमीराज ऋषिने संयमथी लोभावी न शक्यो, त्यारपछी इंद्रे शुं कर्युं ते कहे छे. ब्राह्मण रूप छोडीने
ऊत्तर वैक्रिय इंद्रना मुलने रुपे थइने नमीराजने वंदन करीने मधुरवचने करी स्तुती करतो हवो. ॥ ५५ ॥
अर्थः-अ०मोटो आश्चर्य ते० ते नि० अतिशयनीन्यो को० कोध अ० आश्चर्य मा० तेअहंकार । प०
नीन्यो म० आश्चर्य ते० ते नि०शाठीदूरकीयापा० मायाने । अ० आश्चर्य लो० लोभनेव० वश्यकीयो ॥५६॥

मूलः—अहो ते निज्जिओ कोहो अहो माणो पराजिओ ।
अहो ते निरक्किया माया अहो लोभो वसीकओ ॥ ५६ ॥

ष्टो असंख्याती उत्सर्पिणी अवसर्पिणी काळ रहे तेथी हे गौतम समय मात्रनो प्रमाद माकर ? ॥ ५ ॥

अर्थः-आ० अपकायमांहे अ० गयोथको उ० उत्कृष्टोजी० जीव उ० पदपुरणे सं० वसेरहे । का० काल सं०ऽसंख्यातो असंख्याती उत्सरपणी अवसरपणी । तेमाटे स० समयमात्रपण अवसरपामिने गो० हेगौतममा० मकर प्रमाद प० मथा प्रमादि ॥ ६ ॥

मूलः-आउक्कायमइगओ उक्कोसं जीवो उ संवसे ।
कालं संखाईयं समयं गोयम मा पमायए ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः-अप (पाणी) कायने विषे जीव गयो थको उत्कृष्टो असंख्यातो काळ रहे. तेथी हे गौतम ? समय मात्रनो प्रमाद मा कर. ॥ ६ ॥

अर्थः-ते० तेउकायमांहे अ०गयोथको । उ० उत्कृष्टोजी०जीव उ० वली सं० वसेरहे । का० कालसं० ऽसंख्यातो असंख्याती उत्सर्पणी अवसर्पणी । स० तेमाटे समयमात्रपण अवसरपामिने गो० हे गौतममा० नकरप्रमाद प० मथाप्रमादि ॥ ७ ॥

मूलः-तेओक्कायमइगओ उक्कोसं जीवो उ संवसे ।
कालं संखाईयं समयं गोयम मा पमायए ॥ ७ ॥

गाथा ७ भावार्थः-अग्निकाय मध्ये जीव गयो थको उत्कृष्टो असंख्यातोकाळ रहे तेथी हे गौतम! समय मात्रनो प्रमाद मा कर ! ॥ ७ ॥

तमारुं निर्लोभीपणुं. ॥ ५७ ॥

अर्थः-इ० एभरते सि० विषे उ० प्रधानछुं भ० हे पुज्यछुं। प० परभवने विषे हो० होइश उ० उत्तम। लो०लोकमांहि उ० अतिशेषधान उ० उत्तम ठा० थानक सि० मुक्तिपनेश० हुंजाइशनी० कर्मरजरहितथको ॥५८॥

मूलः—इहं सि उत्तमो भन्ते पच्छा होहिसि उत्तमो ।
लोगुत्तमुत्तमं ठाणं सिद्धिं गच्छसि नीरओ ॥ ५८ ॥

गाथा ५८ भावार्थः-हे भगवंत्? तुं आ मनुष्यलोकने विषे ऊत्तम गुणथी ऊत्तम छे अने परभवनेविषे पण ऊत्तम थइश ? अने लोकमांहि जे प्रधान (ऊत्तम) एवा मोक्षना स्थानकने विषे कर्म रजरहित थइने जइश ! ॥ ५८ ॥

अर्थ-ए० एणीपरे अ० स्तवतोथको । रा० राजऋषीने । उ० प्रधान स० श्रद्धाएकरि । पा० प्रदक्षणा प्रणक० करतोथको पु० वारंवार नं० वांदिछे स० शक्रेंद्र ॥ ५९ ॥

मूलः—एवं अभित्थुणन्तो रायरिसिं उत्तमाए सद्धाए ।
पायाहिणं करेन्तो पुणो पुणो वन्दई सक्को ॥ ५९ ॥

गाथा ५९ भावार्थः-एम स्तुति करतो थको ऊत्तम श्रधाये करी नमीराजऋषिने शक्रेंद्र प्रदक्षिणा करतो थको वारंवार वंदन करतो हवो. ॥ ५९ ॥

अर्थः-तो० तिहांथकी वं० वांदिने पा० पगने । हवे तेपगकहेवाछे । च० चक्र प्र० अंकुसादिकल०

कालसं० संख्यातोएहवी सं० संज्ञानामछे जेहनो एटले संख्याता संख्याताहजारवरस । स० तेमाटे समयमात्रपण अवसरपामीने गो० हे गौतम मा० मकरमाद प० मथामादि ॥ १० ॥

मूलः—चेन्दियकायमइगओ उक्कोसं जीवो उ संवसे ।
कालं संखिज्जसन्नियं समयं गोयम मा पमायए ॥ १० ॥

गाथा १० भावार्थः—चेइंद्रीकाय मध्ये जीव गयो थको ऊत्कृष्टो संख्यातोकाळ रहे तेथी हे गौतम ! समय मात्रनो प्रमाद म कर ! ॥ १० ॥

अर्थः—ते० तेइन्द्रीयकायमांहे अ० गयोथको उ० उतकृष्टो जी० जीव उ० वळी सं० तिहांवसे का० काल सं० संख्याताएहवी सं० संज्ञानामछे जेहनो एतलेसंख्याता हजारवरस । स० तेमाटेसमयमात्रपण अवसरपांमीने गो० हेगौतम मा० मकरमाद प० मथामादि ॥ ११ ॥

मूलः—तेन्दिकायमइगओ उक्कोसं जीवो उ संवसे ।
कालं संखिज्जसन्नियं समयं गोयम मा पमायए ॥ ११ ॥

गाथा ११ भावार्थः—तेइंद्रीकाय मध्ये जीव गयो थको ऊत्कृष्टो संख्यातोकाळ रहे तेथी हे गौतम ! समय मात्रनो प्रमाद म कर ! ॥ ११ ॥

अर्थः—च० चउरेंद्रीकायमांहि अ० गयोथको उ० उत्कृष्टो जी० जोव । उ० वळी सं० तिहांवसे का० कालसं० संख्यातोएहवीसं० संज्ञानामछे जेहनोएतले संख्याताहजारवरस । स० तेमाटेसमयमात्रपण अवसरपां-

मूलः—एवं करन्ति संबुद्धा पण्डिया पवियक्खणा।
विणियट्टन्ति भोगेसु जहा से नमी रायरिसि ॥ ६२ ॥ त्ति बेमि,
इति नमिपव्रज्ञानवमं अध्ययनं सम्मत्तं ॥ ९ ॥

गाथा ६२ भावार्थः—एम तत्त्वना जाण होय ते नमीराज ऋषिनीपरे संयमने विषे निश्चळपणुं करे अने जे शास्त्रना भणने क्रिया करवाने विषे जे विचक्षण छे ते जेम नमीराज ऋषि कामभोगथी निवर्त्या तेम निवर्ते एम सुधर्मा स्वामी पोताना जंबुस्वामी नामना शिष्यने कहेता हवा के हे जंबू ? जेम में श्री महावीरदेव समीपे सांभळ्युं हतुं तमे में तुज प्रत्ये कहुं. ६२—०इति श्री उत्तराध्ययन सूत्रना नवमा अध्ययननो भावार्थ संपूर्णः—ए नवमा अध्ययनने विषे एकत्व भावना भावती कही. एकत्व भावना भावे, ते पांच प्रमादने छांडे, ते भणी, आ दशमा अध्ययनने विषे प्रमाद न करवो ते कहेछे.

अर्थः—दु० वृक्षनुं० पत्रं० पांडुरज० जेम ॥ नि० पडेरा० रात्रिदिननाम० समूहनेअ० अतिक्रमे-छते । ए०एणीपरेम० मनुष्यो० आउखुंप० तेमाटे समयमात्रपण अथवा अवसरपामिगो० गौतमप्रा० न थाय प्रमादीन०प्रकरिसप्रमाद ॥ १ ॥

मूलः—दुमपत्तए पण्डुयए जहा निवडइ राइगणाण अच्चए।
एवं मणुयाण जीवियं समयं गोयम मा पमायए ॥ १ ॥

गाथा १ भावार्थः—हवे दशमा अध्ययननो भावार्थ कहेछे—जेम पांडुरोगादिक प्राप्त थये वृक्षनुं पत्र

प० मथाप्रमादी ॥ १४ ॥

मूलः—देवे नेरइएयमइगओ उक्कोसं जीवो उ संवसे ।
इक्केकभवगहणे समयं गोयम मा पमायए ॥ १४ ॥

गाथा १४ भावार्थः—देवतानी ने नारकीनी गतीये जीव गयो थको उत्कृष्टो एक भव रहे तेथी हे गौतम ! समय मात्रनी प्रमाद म कर ! ॥ १४ ॥

अर्थः—ए० एमपूर्वोक्तप्रकारे भ० नरकादिकनाभवरूप सं० संसारनेविषे । सं० परिभ्रमणकरे छे जीव सु० शुभ अ० अशुभ क० कर्मेकरी । जी० जीव प० प्रमादेकरि व० व्यापिनपुष्टोछे ॥ स० नेमादेसमयमात्रपण अवसरपामीने गो० हेगौतम मा० मकरप्रमाद प० मथाप्रमादी ॥ १५ ॥

मूलः—एवं भवसंसारे संसरइ सुहासुहेहि कम्मेहिं ।
जीवो पमायबहुलो समयं गोयम मा पमायए ॥ १५ ॥

गाथा १५ भावार्थः—एम पांच प्रमादने शुभाशुभ कर्म करी जीव ए चतुर गतीरूप संसारने विषे परिभ्रमण करे छे तेथी हे गौतम ? समय मात्रनो प्रमाद म कर ! ॥ १५ ॥

अर्थः—ल० पामीने वि० पण मा० मनुषपणाने । आ० आर्यपणो सु० वलीपण दु० दुर्लभछे पामवानो जेमणी व० घणा द० चोर मि० म्लेछदीसेछे आर्ययोडादिसेछे ॥ स० नेमादेसमयमात्र अवसरपामीने गो० हे गौतम मा० मकरप्रमाद प० मथाप्रमादी ॥ १६ ॥

(सौभरिल) आयुष्यबंधने अभ वसागादिक सात प्रकारे आयुष्य तूटे ते भणी पूर्व कर्म कीधां ते जीवथी वेगळां करवां हे गौतम ? समय मात्रनो प्रमादमा कर ? ॥ ३ ॥

अर्थः-दु० पामवांणोदोहिलो स० निश्चेभकृत्यबुनियानेमा० मनुष्यभवंबीभ० भव । वि० घणेकाले वि० पमाय० सर्वसा० जीवनेमा० आकराठे य० जेमगोति० उद्यपक्र० कर्मनुं । स० तेमाटेसमयमात्र गो० हे गोतममा० मकरमप्रादप० मयाइस प्रमादी ॥ ४ ॥

मूलः-दुल्लहे खलु माणुसे भवे चिरकालेण वि सव्वपाणिणं ।
गाढा य विवाग कम्मुणो समयं गोयम मा पमायए ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थः-जेने अति निबड (आकरां) विपाकोदय एवा सर्व अकृत्य पुंनीया जीवने दश दृष्टांते करी अणे काले पण मनुष्यनो भव पामवो दोहीलो छे तेणी हे गौतम ! समय मात्रनो प्रमादमा कर ? ॥४॥

अर्थः-पु० पृथवीकायमांहि अ० गयोथको । उ० उत्कृष्टोपणो जी० जीव उ० पदपूरणे सं० त्यांरहे का०काल । अ० असंख्याती असंख्याती उत्सर्पणी अवसरपणी । स० तेमाटे समयमात्रपण अवसर पामीने गो० हेगौतम मा० मकरमप्रादप० मयामप्रादी ॥ ५ ॥

मूलः-पुढविकायमइगओ उक्कोसं जीवो उ संवसे ।
कालं संखाईयं समयं गोयम मा पमायए ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः-हवे मनुष्यनो भव थाथी दुष्कर छे ते कहे छे, पृथ्वीकायमां गयो थको जीव उत्कृ-

तेमाटेसमेमात्रपण अवसरपामीने गो० हेगौतम मा० मकरममाद प० मथाप्रमादी ॥ १८ ॥

मूलः—अहीणपञ्चेन्दियत्तं पि से लहे उत्तमधम्मसुई हु दुलहा ।
कुतित्थिनिसेवए जणे समयं गोयम मा पमायए ॥ १८ ॥

गाथा १८ भावार्थः—कदाचित् संपूर्ण पचेंद्रीपणुं मळ्युं तो ऊतमजीनोक्त सुत्रने चारित्ररुप धर्म सांभळवो दुकर, जुओ चार्वाकादिक कुतिर्थीना शांसनने घणा जनो सेवे छे तेथी हे गौतम ! समय मात्रनो प्रमादम कर ! ॥ १८ ॥

अर्थः—ल० पामीने वि० पण उ० प्रधान सु० सीधातनांसांभलवाने । स० सुधसद्दहणा पु० वली दु० दुर्लभछे । मि० मिथ्यातने नि० सेवेएहवा ज० जनलोकछे । निसेवए० अतिशेसेवेछे ज० लोक ॥ स० तेमाटेसमेमात्रपण अवसरपामीने गो० हेगौतम मा० मकरममाद प० मथाप्रमादी ॥ १९ ॥

मूलः—लद्धूण वि उत्तमं सुइं सद्दहणा पुणरावि दुलहा ।
मिच्छत्त निसेवएजणे समयं गोयम मा पमायए ॥ १९ ॥

गाथा १९ भावार्थः—कदाचित् ऊतमजीनोक्त धर्म सांभळवुं पाम्यो तो ते धर्मनी श्रद्धारुप सम्यक्त्वने पामवुं दुर्लभ छे, जुओ जमाळी प्रमुप घणा लोको मिथ्यात्वने सेवे तेथी हे गौतम ? समय मात्रनो प्रमादम कर ! ॥ १९ ॥

अर्थः—प० धर्मने पि० पण दु० निश्चे स० सद्दहणाएकरीसद्दहतोथको । दु० दोहिलो का० कामाए-

अर्थः-वा० वाउकायमाहि अ० गयोयको उ० उत्कृष्टोजी० जीव उ० यकी सं० निहांतसे । का० काल सं० असंख्यातो असंख्याती उत्सर्पिणी । स० तेयाहेसमयमात्रपण अवसरपामीने गो० हेगौतम मा० मकर पमाद प० प्रमादमाहि ॥ ८ ॥

मूलः-वाउकायमइगओ उक्कोसं जीवो उ संवसे ।
कालं संखाईयं समयं गोयम मा पमायए ॥ ८ ॥

गाथा ८ भावार्थः-वायुकाय मध्ये जीव गयो थको उत्कृष्टो असंख्यातो काळ रहे तेथी हे गौतम ! समय मात्रनो प्रमाद मा कर ! ॥ ८ ॥

अर्थः-व० वनस्पतिकायमांहे अ० गयोयको । उ० उत्कृष्टोजी० जीव उ० यकी सं० निहांतसे का० काल अ० अनंतोअनंती उत्सर्पिणी अवसर्पिणी परावर्त्त दे० जेअनंतानोदुरेभेलआवे । स० तेयाहेसमयमात्रपण अवसरपामीने गो० हेगौतम मा० मकरप्रमाद प० प्रमादमाहो ॥ ९ ॥

मूलः-वणस्सइकायमइगओ उक्कोसं जीवो उ संवसे ।
कालमणन्तदुरन्तं समयं गोयम मा पमायए ॥ ९ ॥

गाथा ९ भावार्थः-वनस्पतीकाय मध्ये जीव गयो थको उत्कृष्टो अनंतोकाळ रहे तेथी हे गौतम ! समय मात्रनो प्रमाद म कर. ॥ ९ ॥

अर्थः-बे० बेंद्रियकायमांहे अ० गयोयको । उ० उत्कृष्टोजी० जीव उ० यकी सं० निहांतसे । का०

ह० होयछे ते० ताहरा। से० तेथी च० तेपुर्वेनेत्रेनुंबलहतुं नेनेत्रनाबलथी। व० नेत्रनोबल य० समुचय हा० हीणो-
थायछे। तेमाटे स० समयमात्रपण अवसरपामीने गो० हेगौतम मा० मकरसमाद प० मथावमादी ॥ २२ ॥

मूलः—परिजूरइ ते सरीरयं केसा पण्डुरया हवन्ति ते।
से चक्खुबले य हायई समयं गोयम मा पमायए ॥ २२ ॥

गाथा २२ भावार्थः—सर्वप्रकारे तारुं शरीर हानी पामे छे ने जरावे करी केश धोळा थाय छे ने चक्षुनुं
बळहीण थाय छे, तेथी हे गौतम समय मात्रनो प्रमादपण कर ! ॥ २२ ॥

अर्थः—प० सर्वथाप्रकारे जू० वयहाणी पामेछे जीर्णथायछे। ते० ताहरुं स० सरिर के० केश पं० धोळा
ह० होयछे ते० ताहरा। से० तेपुर्वे घा० घाणेंद्रिनुंबलहतुंतेथी। घा० घाणेंद्रिनुंबल य० वळी हा० हीणुंथायछे।
तेमाटे स० समयमात्रपण अवसर पामीने गो० हेगौतम मा० मकरसमाद प० मथावमादी ॥ २३ ॥

मूलः—परिजूरइ ते सरीरयं केसा पण्डुरया हवन्ति ते।
से घाणबले य हायई समयं गोयम मा पमायए ॥ २३ ॥

गाथा २३ भावार्थः—सर्व प्रकारे तारुं शरीर हानी पामे छे ने जरावे करी केश धोळा थाय छे
ने घ्राण (नासिका) इंद्रीनुं बळ हानी पामे छे तेथी हे गौतम ! समय मात्रनो प्रमादपण कर। ॥ २३ ॥

अर्थः—प० सर्वप्रकारे जू० वयहीणीपामेजीर्णथायछे ते० ताहरुं स० सरिर। के० केश पं० धोळा ह०
होयछे ते० ताहरा। से० तेपुर्वेजजि०जिभेंद्रिनेंबलहतुंतेथी जि० जिभेंद्रियनुंबल य० समुचय हा० हीणुंथायछे

मीने गो० हे गौतम मा० मकरमपाद. प० मथामपादी ॥ १२ ॥

मूलः—चउरिन्दियकायमइगओ उक्कोसं जीवो उ संवसे ।
कालं संखिज्जसन्नियं समयं गोयम मा पमायए ॥ १२ ॥

गाथा १२ भावार्थः—चौइन्द्रिकाय मध्ये जीव गयो थको, उत्कृष्टो संख्यानोकाळ रहे, तेथी हे गौतम! समय मात्रनो प्रमाद न कर! ॥ १२ ॥

अर्थः—चं० पचेन्द्रियकायमांहि अ० गयोथको उ० उत्कृष्टो जी० जीव उ० थकी सं० तिहांवसे । स० सातभवउत्कृष्टासात पूर्वकोडिना अ० आठमोभवउत्कृष्टोत्रणपल्योपमनो एतलेसात आठभवग्रहे ग० भवनुंग्रहनकरे स० तेमाटेसमयमात्रग अप्रमत्तपणामांहीने गो० हेगौतम मा० मकरप्रमाद प० मथामपादी ॥ १३ ॥

मूलः—पञ्चिन्दियकायमइगओ उक्कोसं जीवो उ संवसे ।
सत्तट्ठभवग्गहणे समयं गोयम मा पमायए ॥ १३ ॥

गाथा १३ भावार्थः—मनुष्य तिर्यंचरूप, पचेंद्रीकाय मध्ये जीव गयो थको उत्कृष्टो सात तथा आठ भव रहे (अर्थात् सातभव कर्मभूमीना संख्याता वर्षनाने एकभव युगळीयानो असंख्याता वर्षनो करे पछी ते युगळीयो मरी निश्चे देव थाय माटे सात तथा आठ भव करवा) तेथी हे गौतम! समय मात्रनो प्रमाद न कर! ॥१३॥

अर्थः—दे० देवमांहि ने० नारकीमांहि चं० चग्री अ० गयोथको उ० उत्कृष्टोनी० जीव उ० पडपूर्णो सं० तिहांवसे इ० एकेक भ० भवनुंग० ग्रहणकरे स० समयमात्रग अप्रमत्तपणामांहीने गो० हे गौतम मा० मकरप्रमाद

ह० होयछे ते० ताहरा। से० तेथी च० तेपुर्वेनेत्रेन्द्रियनुंबलहतुं तेनेत्रनाबलथी। व० नेत्रनोबल य० समुचय हा० हीणो-थायछे। तेमाटे स० समयमात्रपण अनसरपामीने गो० हेगौतम मा० मकरप्रमाद प० मथाप्रमादी ॥ २२ ॥

मूलः—परिजूरइ ते सरीरयं केसा पण्डुरया हवन्ति ते।
से चक्खुबले य हायई समयं गोयम मा पमायए ॥ २२ ॥

गाथा २२ भावार्थः—सर्वप्रकारे तारुं शरीर हानी पामे छे ने जरायें करी केश धोळा थाय छे ने चक्षुनुं बळहीण थाय छे, तेथी हे गौतम समय यात्रनो प्रमादम कर ! ॥ २२ ॥

अर्थः—प० सर्वथाप्रकारे जू० वयहाणी पामेछे जीर्णथायछे। ते० ताहरु स० सरिर के० केस पं० धोला ह० होयछे ते० ताहरा। से० तेपुर्वे घा० घाणेंद्रियनुंबलहतुंतेथी। घा० घाणेंद्रियनुंबल य० वली हा० हीणुंथायछे। तेमाटे स० समयमात्रपण अवसर पामीने गो० हेगौतम मा० मकरप्रमाद प० मथाप्रमादी ॥ २३ ॥

मूलः—परिजूरइ ते सरीरयं केसा पण्डुरया हवन्ति ते।
से घाणबले य हायई समयं गोयम मा पमायए ॥ २३ ॥

गाथा २३ भावार्थः—सर्व प्रकारे तारुं शरीर हानी पामे छे ने जरायें करी केश धोळा थाय छे ने घ्राण (नासिका) इंद्रीनुं बळ हानी पामे छे तेथी हे गौतम ! समय मात्रनो प्रमादय कर। ॥ २३ ॥

अर्थः—प० सर्वप्रकारे जू० वयहीणीपामेजीर्णथायछे ते० ताहरुं स० सरिर। के० केश पं० धोला ह० होयछे ते० ताहरा। से० तेपुर्वेजेजि०जिभेंद्रियनुंबलहतुंतेथी जि० जिभेंद्रियनुंबल य० समुचय हा० हीणुंथायछे

मूलः—लद्धूण वि माणुसत्तणं आयरिअत्तं पुणरावि दुल्लहं ।
वहवे दसुया मिलक्खुया समयं गोयम मा पमायए ॥ १६ ॥

गाथा १६ भावार्थः—कदाचित् मनुष्यनो भव पण्यो तो ऊत्तरोत्तर गुणनी प्राप्ति तथा आर्यदेशने विषे ऊत्पत्ती दुर्लभ छे, जुओ पण्यां अनार्यादिक मलेच्छना देशोने विषे अनार्य छे तेथी हे गौतम ! समय मात्रनो प्रमाद न कर ! ॥ १६ ॥

अर्थः—अ० पामीने वि० पण आ० आर्यपणाने । अ० संपूर्ण पं० पंचेंद्रियपणो दु० निश्चे दु० दुर्लभछे पामवो जेहपणो । वि० विगलेंद्रियपणो विगलेंद्रिय । दु० प्रायेपणामांहि दी० दिसेछे । स० तेमाटेगयेमात्रपण अवसर पामीने गो० हेगौतम मा० मकरप्रमाद प० पथाप्रमादी ॥ १७ ॥

मूलः—लद्धूण वि आयरियत्तणं अहीणपञ्चेन्दियया हु दुल्लहा ।
विगलिन्दियया हु दीसई समयं गोयम मा पमायए ॥ १७ ॥

गाथा १७ भावार्थः—कदाचित् पणथादिक साडापचवीस आर्य देशने विषे ऊत्पती पण तो संपूर्ण पंचेंद्रीपणुं दुर्लभ छे जुओ ! अंधकोणा मुंगा विगलेंद्री प्रमुख पणा देखाय छे तेथी हे गौतम ! समय मात्रनो प्रमादम कर ! ॥ १७ ॥

अर्थः— अ० संपुर्ण पं० पंचेंद्रियपणुं पि० पण से० तेनीज ल० पाये । उ० तोहिपण उत्तमप्रधान ध० श्रुतधर्मनुं सु० सांभलवुं दु० निश्चे दु० दुर्लभ छे । कु० कुतीर्थिपरपाषंडिनेसेवे एहवा छे न० लोक स०

प० मयामप्रमादि ॥ २६ ॥

मूलः—परिजूरइ ते सरीरयं केसा पण्डुरया हवन्ति ते।
से सव्वले य हायई समयं गोयम मा पमायए ॥-२६॥

गाथा २६ भावार्थः—सर्व प्रकारे तारुं शरीर हानी पामे छे ने जराए करी केश धोळा थाय छे ने सर्व इंद्रीनुं बळ हानी पामे छे, तेथी हे गौतम समय मात्रनो प्रमाद न कर. ॥ २६ ॥

अर्थः—अ० चितनोउद्वेग गं० कंठमालादिक गुमडा वि० अजिर्णविसेष । आ० तत्काल घातपामेएह तारोग वि० अने।प्रकारना फु० फरसे । ते० ताहरासरिरने ॥ वि० जीवरहितथइपडे ॥ वि० पडेतेरोगेकरि ते० ताहरो स० सरिर । स० तेमाटे समय मात्रपण अवसर पांमीने । गो० हेगौतम मा० मकर प्रमाद प० मयाप्रमादि ॥ २७ ॥

मूलः—अरई गण्डं विसूइया आयङ्का विविहा फुसन्ति ते।
विहडइ विद्धंसइ ते सरीरयं समयं गोयम मा पमायए ॥२७॥

गाथा २७ भावार्थः—चित्तनुं ऊद्वेपणुं ने अजीर्ण (अपचो) ने आतंकादिक अनेक प्रकारना रोगे करी तारा शरीरना बळनो विद्धंश (नाश) पामे तेथी हे गौतम समय मात्रनो प्रमाद मकर ! ॥ २७ ॥

अर्थः—वो० टालिने सि० स्नेहरागने अ० आत्माने कु० कमलजेते व० जेम सा० सरदऋतुनुं पा० पाणीने छांडिने कमलउचुंरहे तेम तुं पण । से० ते हवे स० सर्व सि० स्नेहेकरि व० रहितथको स० ते माटे

अवसरपामीने गो० हेगौतम मा० मकरमपाद प० मथामपादी ॥ २० ॥

मूलः—धम्मं पि हु सद्दहन्तया दुल्लहया काएण फासया ।
इह कामगुणेहि मुच्छिया समयं गोयम मा पमायए ॥ २० ॥

गाथा २० भावार्थः—कदाचित ते धर्मनी श्रद्धा आवी तो कायाये करी श्रेणीक कृष्णादिकनीपेरे स्पर्शना करवी दुष्कर, जुवो ए संसारने विषे शब्दादिक कामना गुणोने विषे मुर्छीत थयेला तेथी हे गौतम ! समय मात्रनो प्रमाद न कर ! ॥ २० ॥

अर्थः—प० सर्वथाप्रकारे जू० वयहाणी पामेछे जीर्णथायछे । ते० ताहर्नु स० सरिर । के० केस प० धोला इ० थायछे ते० ताहरा से० तेथी सो० पूर्वेश्रोतेंद्रीयनोबलहतो सो० श्रोतेंद्रियनुंबल प० सडवपे स० हीणुंथाय ॥ स० तेमाटेसमयमात्रपण अवसरपामीने गो० हेगौतम मा० मकरमपाद प० मथामपादी ॥ २१ ॥

मूलः—परिजूरइ ते सरीरयं केसा पण्डुरया हवन्ति ते ।
से सोयबले य हायई समयं गोयम मा पमायए ॥ २१ ॥

गाथा २१ भावार्थः—सर्वप्रकारे ताहुं आयुष्य तथा शरीर हानी पामे छे, ने जरा (श्रद्धावस्था)वे करी केश धोळा थाय छे, ने काननुं बळ हतुं ते हीणुं थाय छे, तेथी हे गौतम ! समय मात्रनो प्रमादम कर. ॥२१॥

अर्थः—प० सर्वथाप्रकारे जू० वयहाणीपामेछेजीर्णथायछे ते० ताहर्नु स० सरिर । के० केस पं० धोला

मा तं विइयं गवेसए समयं गोयम मा पमायए ॥ ३० ॥

गाथा ३० भावार्थः—मित्र, स्वजन अने घणुं धन संचेलु होय तेने छांडीने रखे ! ते धनादिकने फरी वांछे ! माटे हे गौतम ! समय मात्रनो प्रमाद म कर ! ॥ ३० ॥

अर्थः—न० नथी हुं० निश्चे जि० जिनतीर्थंकर । अ० एकालनेविषे दि० दिसतानथी तथापि तोहिपण । ब० घणो म० मानवापाग दि० दिसेछे म० मुक्तिपोहचवानोमार्ग । तेमार्गकेहयोछे । दे० तीर्थंकरें देखाडयोछे ते मार्गने एटले जिनोक्त सिद्धांतने आधारे भव्यजीव संदेहराहितथका धर्मकरस्ये ॥ सं० सांप्रतसाक्षात् वर्तमानकालें ने० न्यायमार्गनां परुपकतीर्थंकरछते प० जिनोक्त पंथमवर्नतेछते । स० ते माटे समयमात्रपण अवसर पामीन गो० हेगौतम मा० मकरप्रमाद प० मथाप्रमादी ॥ ३१ ॥

मूलः—न हु जिणे अज्ज दिस्सई बहुमए दिस्सइ मग्गदेसिए ।

संपइ नेयाउए पहे समयं गोयम मा पमायए ॥ ३१ ॥

गाथा ३१ भावार्थः—आजकाळे जीन (तीर्थंकर) नथी देखाता पण मुक्तिये पहोंचाडणहार जीनेंद्रनो मार्ग देखाय छे, एम पांचमा आराना जीवो कहेसे अने ते तारेतो जीनेंद्रनो ने तेना न्याय मार्गनो सांप्रतिका-ळे जोग मळयो छे तेथी हे गौतम समय मात्रनो प्रमाद म कर ! ॥ ३१ ॥

अर्थ—अ० छांदिने क० कांटासरिपाकटकवृतीर्थिनां प० पंथने । ओ० पेठो । सि० छतोहे गोतम तुं

मूलः—परिजूरइ ते सरीरयं केसा पण्डुरया हवन्ति ते ।
से जिब्भबले य हायई समयं गोयम मा पमायए ॥ २३ ॥

गाथा २३ भावार्थः—सर्व प्रकारे जाकं शरीर हानि पामे छे, ने जगते फरी केश पांजा थाय छे. ने जीभनुं बळ हानी पामे छे तेथी हे गौतम ! समय मात्रनो प्रमाद मकर ! ॥ २३ ॥

अर्थः— प० सर्वप्रकारे नू० वयहाणीपामेछे जीर्णथायछे । ते० ताहरुं स० शरिर । के० केश पं० धोळाइ० होयछे ते० ताहरा से० तेजेदुर्बे फरसेंद्रीनुं बळहतुंतेथी का० फरसेंद्रिनुंबळ ग० वधी हा० हीनुंथायछे। स० तेमाटेसमयमात्रपण अलभमानोछे । गो० हे गौतम मा० मकरप्रमाद प० पमायमाटी ॥ २३ ॥

मूलः—परिजूरइ ते सरीरयं केसा पण्डुरया हवन्ति ते ।
से फासबले य हायई समयं गोयम मा पमायए ॥ २४ ॥

गाथा २४ भावार्थः—सर्व प्रकारे जाकं शरीर जीर्ण थाय छे ने नवार फरी केश पांजा थाय छे ने दूं बळ हतुं तेथी स्पर्श इंद्रीनुं बळ हानी पामे छे तेथी हे गौतम ! समय मात्रनो प्रमाद मकर ! ॥ २४ ॥

अर्थः—प० सर्वप्रकारे नू० वयहाणी पामेछे जीर्णथायछे ते० ताहरुं । स० शरिर के० केश प० पोळा इ० होयछे ते० ताहरां ॥ से० तेजेदुर्बे स० स्पर्शइंद्रीनुं बळहतुं तेथी स० सर्व अवयवनुं बळ ग० घटां हा० हीनुंथायछे ॥ स० तेमाटे समयमात्रपण अलभमानो गो० हेगौतम मा० मकरप्रमाद

॥ इति दुमपत्तयं दशमं अध्ययनं समत्तं ॥ १० ॥

गाथा ३७ भावार्थः–पदने सुत्रे करी शोभीतने भली उपमाये तथा ऊत्तम अर्थे करी कहुं एवुं केवली परण्युं सिद्धांत सांभळीने रागद्वेषने छेदीने सिद्धरुप गतीये गौतम पहोंच्यो ! एम सुधर्मास्वामी पोताना जंबूनामना शिष्यने कहेता हवा केहे जंबू ! जेम में श्री महावीरदेव स्वामी समीपे सांभळ्युं हतुं तेम में तुंन मत्ले कर्युं. ॥ ३७ ॥ इति ऊतराध्ययनना दशमा अध्ययननो भावार्थ संपूर्ण थयो. १०

ए दशमा अध्ययनने विषे प्रमाद तजवो कह्यो, तेतो विनितने बहु श्रुती होय ते प्रमाद छांडे तें माटे अगीयारमुं बहु श्रुतीनामे अध्ययननो भावार्थ कहे छे.

अर्थः–सं० संजोगथी वि० विशेषे प्र० प्रकर्षे मु० मुकाणोछे । अ० एहवासाधूनो । भि० भिक्षुनो साधुनो आ० आचारने पा० प्रगट क० करिश । आ० अनुक्रमे सु०सांभळो मे० मुनने कहेताथका ॥ १ ॥

मूलः–संजोगविप्पमुक्कस्स अणगारस्स भिक्खुणो ।
आयारं पाउकरिस्सामि आणुपुर्विं सुणेह मे ॥ १ ॥

गाथा १ भावार्थः–जेओ बाह्यने अभ्यंतर एवा बे प्रकारना संयोगथकी मुंकाणाने जेना व्रतने विषे आगार नथी तथा जेने घर नथी ने निर्ग्रंथ भीक्षाना करणहार एवा साधुनो बहु श्रुतनी पुनारुंए आचार प्रगट करीश ते अनुक्रमे तुं सांभळ ! एम गुरु शिष्यने कहेता हवा. ॥ १ ॥

अर्थः–जे० जेओइ य० वली भ० पण हो० होयएवंबहुश्रुतनाअध्ययनो अर्थजाणवाने अर्थे । वि० ॥

स० तेमाटे समयमात्रपण अवसर पांमीने गो० हेगौतम मा० मकरमाद प० मथामादी ॥ २० ॥

मूलः—परिजूरइ ते सरीरयं केसा पण्डुरया हवन्ति ते ।
से जिब्मबले य हायई समयं गोयम मा पमायए ॥ २४ ॥

गाथा २४ भावार्थः—सर्व प्रकारे तारुं शरीर हानी पामे छे, ने जराये करी केश धोळा थाय छे; ने जीभनुं बळ हानी पामे छे तेथी हे गौतम ! समय मात्रनो प्रमाद मकर ! ॥ २४ ॥

अर्थः— प० सर्वथाप्रकारे जू० वयहाणीपामेछे जीर्णथायछे । से० ताहरुं स० शरिर । के० केश प० धोळाइ० होयछे ते० ताहरा से० तेनेपुर्वे फरसेंद्रीनुं बलहतुंतेथी फा० फरसेंद्रिनुंबल य० बळी हा० हीणुंथायछे। स० तेमाटेसमयमात्रपण अवसरपांमीने । गो० हे गौतम मा० मकरप्रमाद प० मथामादी ॥ २५ ॥

मूलः—परिजूरइ ते सरीरयं केसा पण्डुरया हवन्ति ते ।
से फासबले य हायई समयं गोयम मा पमायए ॥ २५ ॥

गाथा २५ भावार्थः—सर्व प्रकारे तारुं शरीर जीर्ण थाय छे ने जराए करी केश धोळा थाय छे ने पूर्वे बळ हतुं तेथी स्पर्श इंद्रीनुं बळ हानी पामे छे तेथी हे गौतम ! समय मात्रनो प्रमाद मकर ! ॥ २५ ॥

अर्थः—प० सर्वथाप्रकारे जू० वयहाणी पामेछे जीर्णथायछे ते० ताहरुं । स० शरिर के० केस प० धोळा इ० होयछे ते० ताहरां ॥ से० तेनेपुर्वे स० सर्वअवयवनुं बलहतुं तेथी स० सर्व अवयवनुं बल य० बळां हा० हीणुंथायछे ॥ स० तेमाटे समयमात्रपण अवसर पांमीने गो० हेगौतम मा० मकरप्रमाद

व्यासील । त्ति० एसरुप वु० कहिए ते आठ बोल अ० नथी इसवानो स्वभाव जेहने १ । स० सदाय दं० दमतेंद्रि २ । न० नहोयएहवो य० समुचय म० परनामर्मनो उ० बोलणहार ३ ॥ ४ ॥

मूलः—अह अट्ठहिं ठाणेहिं सिक्खासीले त्ति वुच्चई ।
अहस्सिरे सया दन्ते न य मम्ममुदाहरे ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थः—हवे आठ स्थानके करी आसेवणाने ग्रहणा शिक्षा पामे ते आठ स्थानक कहे छे (१) नथी इसवानो जेनो स्वभाव, (२) ने इंद्रीयोने दमन करनार, ३ ने पराया मर्मनो कहेनार न होय. ॥४॥

अर्थः—न० नहोयऽसी० सर्वथी चारित्रनो विराधक ४ । न० नहोय वि० देशथकी विराधक ५ । न० न सि० होय । अ० अतिशे लो० लोलपि ६ । अ० अक्रोधी ७ । स० सत्यमार्गनेविषे र० रातोहोय ८ । एआठगुणनोधणी सि० सिक्षाने सी० अभ्यासने करणहार त्ति० एसरुपले वु० कहिए ॥ ५ ॥

मूलः—नासीले न विसीले न सिया अइलोलुए ।
अकोहणे सच्चरए सिक्खासीले त्ति वुच्चई ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः—४ देशथी, ५ ने सर्वथो चारित्रनो विराधीक न होय, ६ ने अती इंद्रीयोनो लोलपो न होय, ७ अक्रोधी, ८ ने सत्यवचननो बोल्नार ए आठ गुणनो धणी होय ने आसेवणाने ग्रहणा शिक्षा पामे. ॥५॥

अर्थः—अ० हवे च० चौद ठा० स्थानके । व० प्रवर्ततोथको उ० पूरणे सं० सजंतीसाधु । अ० अवि-

समयमात्रपण अवसरपामीने गो० हेगौतम मा० मकरममाद ० मयाममादी ॥ २८ ॥

मूलः—चोच्छिन्द सिणेहमप्पणो कुमुयं सारइयं व पाणियं ।
से सव्वसिणेहवज्जिए समयं गोयम मा पमायए ॥ २८ ॥

गाथा २८ भावार्थः—रागरूप आत्माथी स्नेहने छेदीने जेम कमळ शरद् ऋतुना पाणीने छांडीने वेगळे ऊंचो रहे तेम तुं पण सर्व स्नेहने वर्जवो थको हे गौतम समय मात्रनो प्रमाद मकर ! ॥ २८ ॥

अर्थः—चि० छांडिने ण० अर्थकारे प० पननेम० स्त्री भा० भार्याने ॥ प० मरणो हि० जेहथकी सि० तुं अ० भावमिगुणपणाने पाम्योछे ॥ मा० रोम० पर्णावस्कने पु० फरीने चि० पण भा० आदरे स० समयमात्रपण तेमाटे अवसरपामीनेहे गो० गौतम मा० मकरममाद प० मयाममादी ॥ २९ ॥

मूलः—चिच्चाण धणं च भारियं पवइओ हि सि अणगारियं ।
मा वन्तं पुणो वि आविए समयं गोयम मा पमायए ॥२९॥

गाथा २९ भावार्थः—धन स्त्री प्रमुखने छांडीने प्रवर्ज्या आदरीने अणगार थइत्र ? ने रह्ये ? ते छांडीने वळी आदरे ते माटे हे गौतम ! समय मात्रनो प्रमाद म कर ! ॥ २९ ॥

अर्थः—अ० छांडिने भि० भिक्षने धं० धंधनने । चि० पण चे० वली प० पदपूरणे । प० धनना ओ० समूहने सं० संचयने । मा० रोमं० तेहोडयापदार्थने चि० बीजीवार ग० गवषे । स० तेमाटे समयमात्रपण अवसरपामीने । गो० हेगौतम मा० मकरममाद प० मयाममादी ॥ ३० ॥

सुप्पियस्सावि मित्तस्स रहे भासइ पावयं ॥ ८ ॥

गाथा ८ भावार्थः–५ पोते अतीचारादिक कृत्य करेल होय ते बीजाये करेला कहे, ६ मित्र उपर कोप करे, ७ अत्यंत मित्र होय तेनुं पण मुखे मीठुं बोले ने पाछळ छानां मर्म प्रमुखनुं प्रकासवा रुप भूंडुं बोले. ॥८॥

अर्थः–प० असंबंधभाषी ८ । दु० द्रोहि ९ । थ० अहंकारि १० । लु० रसनोलोलपी ११ । अ० अजितेंद्रि १२ । अ० अन्यसाधुने संविभागनकरे १३ । अ० अप्रतितकारिओ १४ । अ० अविनीत त्ति० एहवो बु० काहिए ॥९॥

मूलः–पइन्नवाई दुहिले थद्धे लुद्धे अनिग्गहे ।
असंविभागी अवियत्ते अविणीए त्ति वुच्चई ॥ ९ ॥

गाथा ९ भावार्थः–८ असंबंध भाषीने निश्चयकारी भाष्या बोले, ९ द्रोही होय, १० मानी होय, ११ रस लंपटी होय, १२ अजीतेंद्री होय, १३ अन्य साधुने आहारादिकनो संविभाग न करे, १४ अप्रीतिकारीयो होय ते द्रव्य लींगीने अविनीत कहीए, ॥ ९ ॥

अर्थः–अ० हवेप० पनरेठा० थानके मु० रुडो त्ति० विनीत त्ति० एम बु० कहिए । नी० गुरुथी निचेआसणेवेसे ? अ० गतिचपल ? थानकचपल २ भाषाचपल ३ भावचपल ४ ए ४ चपलपणारहित २ ॥ अ० मायाकपटरहित ३ अ० कतुहलपणारहित कुतुहलजुवेपणनहीं. ४ ॥ १० ॥

मूलः–अह पन्नरसहिं ठाणेहिं सुविणीए त्ति वुच्चई ।
नीयावत्ती अचवले अमाई अकुऊहले ॥ १० ॥

म० ज्ञानादिके करिमोटा प० मुक्तिना पंथमवर्त्तना तुं पडाड । ग० गाय
विमुख विशेष निश्चयकरिने जेथी मुक्तिपामीए एवो निश्चयकरि मवर्त्तनोयको । स० समयमात्र तेमाटे गो०
हेगोतम अवसरपामीने मा० मकरप्रमाद प० मथामसादि ॥ ३२ ॥

मूलः–अवसोहियकण्टगापहं ओइण्णो सि पहं महालयं ।
गच्छसि मग्गं विसोहियं समयं गोयम मा पमायए ॥ ३२ ॥

गाथा ३२ भावार्थः–तुं कुमार्ग रूप कंटक पंथने तजीने सम्यक् ज्ञानादिक मुक्तिना मोटा मार्गे पहां-
च्यो छे तो चारित्रे वर्त्तनो थको मोक्षना मार्गे जाय्ये ? माटे हे गौतम समय मात्रनो प्रमाद म कर. ॥ ३२ ॥

अर्थः–अ० असमर्थ ज० जेम । भा० भारनोउपाडणहारलीधम मार्गेजइने पछीतापकरे तेम तुं मा० रखे
वि० विषमभुंडा म० मार्गने अव० प्रवेशकरिने । प० पछे प० पछीतापकरेरखे । स० तेमाटे समयमात्रपण
अवसरपामीने गो० हेगौतम मा० मकरप्रमाद प० मथामसादी ॥ ३३ ॥

मूलः–अबले जह भारवाहए मा मग्गे विसमे वगाहिया ।
पच्छा पच्छाणुतावए समयं गोयम मा पमायए ॥ ३३ ॥

गाथा ३३ भावार्थः–जेम कोई भारवाहक प्रदेशथी घणुं धन उपार्जन करी शरीरनी असमर्थतावंत
थको धननो भार लइ चोरना भयथी विषममार्गे गयो ने त्यां ते भार उपाडवा असमर्थवंत होवाथी त्यांज
जंगलमां नांखी पोताने वैर जइ अहो में मंद भाग्ये ए धन नांखी दीधुं एम पश्चाताप करवा लाग्यो तेम

अर्थः-ज० जेममे० ने अश्वक० कंबोजदेशना उपना घोडामांहे ॥ आ० गुणेकरि क० प्रधान कथायकी
वासनपामे ने माटे मि० होय । आ० एहवो अश्वघोडोज० जेम वेगेकरि प०प्रधान ए०एम ह०होय व०बहुश्रुत
॥ १८० ॥ सु०साधु ॥ हवे उपमा मेलेछे । कंबोज देशना उपना तेसमान जिनसासनमा सकल साधु ते मध्ये गुणेकरी व्याप्त
बहुश्रुत साधुपण तीर्थ परिग्रहे त्रास न पामे ते प्रधानवेग ते संवेगादिक प्रधान ए बीजी उपमा थइ ॥ १६ ॥

॥ ११ ॥

मूलः-जहा से कम्बोयाणं आइण्णे कन्थए सिया ।
आसे जवेण पवरे एवं हवइ बहुस्सुए ॥ १६ ॥

गाथा १६ भावार्थः-ऊत्तम जे निर्मळ मातपिताथी ऊत्पन थयेला ने स्वामी भक्तादिक (शाली होत्र-
शास्त्र समाणे) विनयादिक गुणे युक्तने भयंकर शब्द सांभळी त्रास न पामे तथा शस्त्रना प्रहारथी भयभ्रांत न
थाय अने चालवामां अत्यंत वेगवंतने राजादिकने बलभवंत एवा कंबोज देशना ऊपन्या आकीर्ण जातीना घोडा
ते जेम घोडानी जातीमांही ऊत्तम तेम बहुश्रुति साधु पण सर्व ज्ञान क्रियावंत मुनिना मंडळ मध्येपर तीर्थीना वादा-
दिक परीसहथी त्रास न पामे तथा सम्यक् प्रकारे आचारे करी सहित होनाथी सर्वेने बलभकारी होय ए
बीजी उपमा कही. ॥ १६ ॥

अर्थः-ज०जेमतेसुर आ० गुणवंत अश्वे स० चालेलाने । मू० मुखद्व० हद । प० पराक्रमसहीष्णी
उ० देखाये । ते० तथाप्रकारना जातिप्रने गो० निर्योगेकरि । अ० ए० पंडितनो आणी पेरेकरि धीमे अने कोइ

श्रुतज्ञान विद्यारहित ग० अहंकारि पु० रसादिकनो लोलपी । अ० नथी इंद्रीयवशनेहनें । अ० वारंवार उ० क्रोधमानादिकनो उपशम ते । अ० अविनीत अ० अबहुश्रुतकहिये ॥ २ ॥

मूलः—जे यावि होइ निव्विज्जे थद्धे लुद्धे अणिग्गहे ।
अभिक्खणं उल्लवई अविणीए अबहुस्सुए ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः—जे पुरुषविद्या रहित होय तथा कुविद्यावंत होय तथा विद्यावंत होय तो अभिमानी होय ने रसादिकने विषे लुब्धने जेनी इंद्रीयो निग्रह (करवे) नहि अने वारंवार असंबद्ध भाषानो बोलनार होय ते सद्विद्यानुं फल न पामे एवाने अविनीत, अबहुश्रुत कहीये. ॥ २ ॥

अर्थः—अ० हवे पं० पांच ठा० स्थानके जे० जेहवडे करीने अ० श्रुतसंपदानी ते ग्रहणअनेशुश्रूषा पामवानी आसेवनाशिक्षा न० न लहे० पामे । ग० अहंकारथी मो० मोहथी १ । प० रसपाद आदिक्ष मदादेकरि रो० रोगेकरी आ० आलसेकरि जुदेजुदेप्रकारेकरी ग० वडी ॥ ३ ॥

मूलः—अह पंचहिं ठाणेहिं जेहिं सिक्खा न लब्भई ।
थम्भा मोहा पमाएणं रोगेण आलस्सेण य ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः—क्रोधथी, मानथी, प्रमादथी, रोगथी ने आलसथी ए पांच स्थानके करी भणेशुणे पण ए रीते ते शिक्षा न पामे. ॥ ३ ॥

अर्थ—अ० हवे अ० आठ ठा० स्थानकेकरि ॥ शि० ज्ञान अने ग्रहण पामवानी शिक्षाने सी० अभ्यासलेखि-

गाथा १८ भावार्थः–जेम साठवर्षनो वळवानहाथी हाथणीयोने परिवारे परवर्योथको तेने अनेरावैरी हाथीपराभवी (जीती) न शके तेमवहु श्रुति साधुपण शास्त्ररूप वळेकरी उत्पातीया ते (अणदीठीने अणसांभळी तुर्त सत्परीते प्रगट थाय ते) विनया (विनय करवाथी आवडेते), कर्मीया (दरेककाम करतां कामआवडे), प्रणमीया (जेमजेम वय प्रणमे तेमतेम बुद्धी प्रणमे) एवी चारमकारनी बुद्धिरुप, हाथणीये परवर्योथको परवादीरुप अनेरोहाथी पराभवी न शके ए चोथी उपमा ॥ १८ ॥

अर्थः–ज० जेमसे० तेटपभ ति० तीपाछे सि० सिंघजेहना जा० पूठोथयोछे खं० पंथ जेहने वि० एहथको विराजेछे। व० वृषभ जू० गायममुख जूथनो अधिपति ठाकुर । ए० एम ह०होय व०वहुश्रत हवे उपमां कहेछे, ससमय, परसमयना जाणपणारुप सिंघडा तेणेकरी परमतीनेभेदे १ । आचारांगादिक सुतपंथनो तेणेकरि पूठोछे संजमभार निर्वाहवावहुश्रुतरुप वृषभ २ साधसाधवीमपूपजूथनो अधिपतियको विराजेछे ३ ए ५ मी उपमा ॥१९॥

मूलः–जहा से तिक्खसिङ्गे जायखन्धे विरायई ।
वसहे जूहाहिवई एवं हवइ वहुस्सुए ॥ १९ ॥

गाथा १९ भावार्थः–जेनां तीक्षण शींगडांने स्कंध पुष्ट एवो वृषभ (वळद) गायोना युथमांही शोभे तेम वहुश्रुति साधु पण स्वसमय (जैनधर्म) ने परसमय (अन्यधर्म) ना जाणपणारुप वे शींगडां तेणे करी परवादीने भेदे अने आचारंगादिक श्रुतरुप स्कंधे करी पुष्ट अने संयमरुप भार निर्वाह करी चतुर्विध संघरुपी युथनो अधिपति थके शोभे ए संजमी उपमा ॥ १९ ॥

मूलः—अह चउद्दसाह ठाणाह वट्टमाण उ संजए ।
अविणीए वुच्चई सो उ निव्वाणं च न गच्छइ ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः—पूर्वे कहीयुं एवा चौद स्थानके संयतीने वर्तनो थको अविनीत कहीये ने ते निर्वाण (मोक्ष) न पामे. ॥ ६ ॥

अर्थः—अ० वारंवार को० क्रोधी भ० होयकोपचडे । १ । प० दीर्घकालेक्रोधने अथवा निकषाने प० पुनः प० करे । २ । मे० भण्डेनेसाधुनेसाथे पित्राइकरतोथको प० तेहनोमित्रपणो नेतोडे । एतले कृतघ्निगाय॥३॥ सु० सिद्धांतनाज्ञानने ल० पामीने प० अहंकारकरे ४ ॥ ७ ॥

मूलः—अभिक्खणं कोही भवइ पबन्धं च पकुव्वइ ।
मेत्तिज्जमाणो वमइ सुयं लद्धूण मज्जई ॥ ७ ॥

गाथा ७ भावार्थः—१ क्रोधी होय ने २ दीर्घकाळ सुधी क्रोध करे, ३ अने मैत्रीपणुं करतां ते मैत्रीपणुं तजे एटले निकषगारी तथा कृतघ्नी होय, ४ ने श्रुतज्ञान पामीने अभिमान करे. ॥ ■ ॥

अर्थः—अ० संभावनाए पा० पोतानाअपराधने प० परनेमाथे नापवानो स्वभावछे जेहनो ५ ॥ अ० संभावनाए मि० मित्रउपरे कु० क्रोधकरे ६ ॥ गु० अतिहे पि० मित्रकारिऽ०पणाथि० मित्रनुं र० एकांतपरपुंछे मा० पोते पा० पाडभोगुंइं ७ ॥ ८ ॥

मूलः—अवि पावपरिक्खेवी अवि मित्तेसु कुप्पई ।

अप्पडिहयबले जोहे एवं हवइ बहुस्सुए ॥ २१ ॥

गाथा २१ भावार्थः—जेम शंखचक्रने गदानो धरनार एवो बळवंत वासुदेव अनेरावैरी सुभटोथी जीत्यो न जाय तेम बहुश्रुति साधु पण शास्त्ररूपी रथे बेशी ज्ञानदर्शन चारित्र ए त्रण शंखादिकनो धरनार शुद्ध मतीरूप बळवंतथको कर्मरूप तथा परवादीरूप शत्रुने जीतवा समर्थवंत होय ए सातमी ओपमा जाणवी. ॥ २१ ॥ ॥ ११ ॥

अर्थः—ज० जिम से० ते चक्रवर्ती चा० चक्रे वर्तवानो सभाव छे जेहने ते च० चक्रवर्ती चा० चातुरंगी सेनाए करि ऽ० सत्रुनो अंत कीधो छे म० महारुधिनो धणी चो० चउद्द र० रतननो अहि० अधिपती धणी ॥ ए० एम ह० होय व० बहुश्रुत, हवे उपमा ज्ञान १ दर्शन २ चारित्र ३ तप ४ चारे करी कर्मशत्रूनो अंत कियो छे जणे । १ । बहुश्रुतरुप चक्रवर्ती जिननी आज्ञारुप चक्रे करि वर्ते छे । ते माटे चक्रवर्ती २ । महाऋतरुप तथा लब्धिरुप महारुधिनो धणी ३ चउद पूर्वरुप चौद रत्ननो धणी अथवा चौद पूर्वाश्रीत ज्ञान रत्ने करि सकल जीवनो अधिपती नाथ ए ८ मी उपमा ॥ २२ ॥

मूलः—जहा से चाउरन्ते चक्कवट्टी महड्ढिउ ।
चोद्दसरयणाहिवई एवं हवइ बहुस्सुए ॥ २२ ॥

गाथा २२ भावार्थः—जेम चोरासीलाख हाथी, चोरासीलाख रथ ने छन्नुं क्रोड पायदळ एवी चार प्रकारनी सम्या सहितने एकतरफ चुल हेमवंत पर्वतने बीजी तरफ समुद्रना किनारा सुधी चार दिशाना अंतनो कारणहारने विविध विधाधरोनां छंदो गीतकीर्त्तिना करनारने चोसठहजार अंतेउरीनीश्यामां वेलीय ॥ १०२ ॥

गाथा १० भावार्थः—पूर्व कहीशुं एवा बेंतर स्थानके वर्तनो हीर्यनेन गुरुवोनने कहाय, १ गुरुथकी नाच आगलादिके वेगे, २ उतावलुं उतावलुं चालवुं ते गती चपळ १, स्थान चपळ ते बेशं थकां पग हस्तादिक हलावे २, भाषा चपळ तेम तेम बोले ३, भाव चपळ ते मुख अर्थ पूर्ण थया सिवाय बीजुं मारंभ करे एवा चार प्रकारना चपळताने करी रहित, ३ मायावे (कपटाइ) करीरहित, ४ इंद्रजाळादिकनां कुतूहळे करीरहित. ॥ १० ॥

अर्थः—अ० नकरेकोपने च० वळी अ० तिरस्कार अपमानकरे ६ ॥ प० दीर्घकालनोक्रोधने न० पुनः न० न कु० करे ७ । मे० जेथी गुर्भावाइ करनोहोय ते साथे भ० मीत्राइकरे ७ । सु० श्रुतज्ञानने ल० पामीने न० नकरे म० अहंकार ८ ॥ ११ ॥

मूलः—अप्पं चाहिक्खिवइ पबन्धं च न कुव्वई ।
मेत्तिज्जमाणो भयई सुयं लद्धुं न मज्जई ॥ ११ ॥

गाथा ११ भावार्थः—६ तीरस्कार वचन न बोले, ८ क्रोधादिकनो विस्तार न करे, ७ अकृतज्ञीपणुं तथा उतावार करवा जी मैत्रीपणुं करे, ८ श्रुतज्ञान पामीने अभिमान न करे. ॥ ११ ॥

अर्थः—न०नहि य०वळी पा०पोताना अवगुण प०प्रगटमाथे नकाढे ९॥ न०नहीं य०वळी मि०मित्रउपरे दु०कोपकरे १० । अ० अप्रीतिकारिया अ० पण मि०मित्रनुं । र० एकांतरहस्य कु० कहाने भा० बोले. ११ ॥१२॥

मूलः—न य पावपरिक्खेवी न य मित्तेसु कुप्पई ।
अप्पियस्सावि मित्तस्स रहे कल्लाण भासई ॥ १२ ॥

[illegible] वर्णी विराजे छे ए १२ मी उपमा ॥ २५ ॥

मूलः—जहा से सामाइयाणं कोट्ठागारे सुरक्खिए ।
नाणाधन्नपडिपुण्णे एवं हवइ बहुस्सुए ॥ २६ ॥

गाथा २६ भावार्थः—कोइ गृहपति [illegible] करेल एवा कोठार जीवीत प्रकारना धान्ये करी पूर्ण भरेल [illegible] संघने आधाररूपने प्रमादादिक चोर तथा कर्मादिकना भयथी सर्वथा [illegible] गादिक सूत्रधान्ये करी पूर्णरूपे होवे ए बारमी उपमा जाणवी. ॥ २६ ॥

अर्थः—ज० जेम सा० ते जंबू वृक्ष । दृ० वृक्षमांहि प्र० प्रधान छे० तेम आ० आप । ते । आप सु० सुदंसण । आ० आणादिय पहुवे नामे दे० देवलानो विषय छे ते जेनुं विषय । ए० एम ब० बहु० बहुश्रुत. हवे उपमा, सामान्य साधारण वृक्षमांहि प्रधान १ बहुश्रुतरूप जंबूवृक्ष सामान्य मुनि करीने अधिक [illegible] आपे ते माटे सुदंसण २ । जाणादि० देवाधिदेवनो बहुश्रुतने विषे वास छे ए १३ मी उपमा थई ॥२७॥

मूलः—जहा सा दुमाण पवरा जम्बू नाम सुदंसणा ।
आणादियस्स देवस्स एवं हवइ बहुस्सुए ॥ २७ ॥

करणुर भमनार दिनगणिए वेदुने विषे चार अंगनी सज्झायरूप वाजित्रना निर्घोषेकरि शोभे, एहवो बहुश्रुत रूपगुर परनीर्थीना जयुए जित्यो नजाय ए त्रीजी उपमा ॥ १७ ॥

मूलः—जहाइण्णसमारूढे सूरे दढपरक्कमे ।
उभओ नन्दिघोसेणं एवं हवइ बहुस्सुए ॥ १७ ॥

गाथा १७ भावार्थः—जेम दृढ शाक्रमनो धणी शूरवट आकीर्ण जातीना गुणवंत घोडेचडयोथको बेहुपासे प्रधानना वाजीत्रना निर्घोष अवाजवडेकरी तथा बंदीजन आशिर्वादेकरी शोभेने कोइ शत्रुनो जीत्योन जाय तेम बहु श्रुति साधुना सिद्धांतरुपी गुणवंत अश्वपरस्वार थइ रात्रीदिवसे स्वाध्याय करवा रुप वाजीत्रे करीशोभनोथको अष्टप्रवचन मातेने धोपावनारी स्वनीर्थीए चिरंजीवी भूयात्एवा आशिर्वादेकरि सहित परनादि थी जयुथी जीत्यो न जाय ए त्रीजी ओपमा. ॥ १७ ॥

अर्थः—अ० जेम क० डायणीए प० परिवर्यो । क० डाथी स० साठ हा० वरसनो । व० महाबलवंत अ० अनेराधीए इ० इणापरहि ए० एम इ० होयव० बहुश्रुत. इवेउपमा जाणवी डायणीए करी ? बहुश्रुत स्वाधी २ साठवरस अपुरो परिवयनोथणी ? समाधि सहीत श्रुते बलवंत ४ । परमतिरुप अनेराधीए इणापरहि ए चोथी उपमा ॥ १८ ॥

मूलः—जहा करेणुपरिकिण्णे कुञ्जरे सट्ठिहायणे ।
बलवन्ते अणडिहए एवं हवइ बहुस्सुए ॥ १८ ॥

मूलः—तम्हा सुयमहिट्ठिज्जा उत्तमट्ठगवेसए ।
जेणप्पाणं परं चेव सिद्धिं संपाउणेज्जासि ॥ ३२ ॥ त्ति बेमि ॥

॥ इति बहुस्सुयं एकादशं अध्ययनं सम्मत्तं ॥ ११ ॥

गाथा ३२ भावार्थः—ते माटे मोक्षना अर्थि बहुश्रुति साधु ज्ञानदर्शन चारित्रनो अर्थ गवेषे (शोधे)ने सिद्धांतने भणे अने जे सिद्धांतने आश्रये करी पोताना तथा परना आत्माने मुक्ति पमाडे एम सुधर्मास्वामी पोताना जंबूनामना शिष्यने कहेताहवा के हे जंबू ! जेम मेंथी महावीरदेवसमीपे सांभळ्युं हतुं तेम मेंतुंज प्रत्ये कहुं. ॥३२॥ इतिश्री ऊतराध्ययन सूत्रना इग्यारमा बहुसुत्री अध्ययननो भावार्थ संपूर्ण ! बहुश्रुति साधु होय ते हरकेशी मुनिनीपेरे देवतानो पुजनीक होय ते माटे बारमा अध्ययनने विषे हरकेशी मुनिनो संबंध कहेछे.

अर्थः—सो० चंडालना कु० कुलने विषे सं० उपन्यो । गु० ज्ञानादिक गुण उ० प्रधान तेहनो ध० धरणहार मु० मुनि ह० हरिकेशी व० बल ना० एहवे नामे आ० हुंतो भि० भाव भिक्षु जि० जितेंद्रि ॥ १ ॥

मूलः—सोवागकुलसंभूओ गुणुत्तरधरो मुणी ।
हरिएसबलो नाम आसि भिक्खू जिइन्दिओ ॥ १ ॥

गाथा १ भावार्थः—चंडाळना कुलने विषे उत्पन्न थयो एवो हरकेशी चंडाळ तथा बीजुं बळ नाम ते हरकेशी निरवद्य भिक्षानो करनार ने इंद्रीयोने जीतनार ने ज्ञानादिक उत्तम गुणनो धारक, एवो साधु थयो ॥ १ ॥

अर्थः—इ० इर्यासमति ए० एषणासमति भा० भाषासमति उ० उच्चारादिक परठवानि स० सूंपतिने विषे

अर्थः—न० जेवसे० ने सींहाने० तिणी दा० दाढाने मेहनी। उ० आरहडो भाकारो दु० बीजेकोणे गंज्योनजाय स्त्री० सींह पि० मृगादिक भक्षीना पशुमांहि प० प्रधान। ए० एम ह० होय। बहुश्रुत, हवेउपमा नैगमादिक सातनय रूपणी तिणी दाढातेगेकरि परवादिने विदारे? तेकरी आरहडो २ ज्ञानक्षमादिक गुणेकरिने सहित तेमाटे कोणेगंज्योनजाय। बहुश्रुत नकांक्षिपरवादीना मतरूप मृगतेमांहि प्रधान ए छठी उपमा ॥ २० ॥

मूलः—जहा मे निक्खदाढे उद्दगो दुप्पहंसए।
सीहे मियाण पवरे एवं हवइ बहुस्सुए ॥ २० ॥

गाथा २० भावार्थः—जेनी तीक्ष्ण दाढाने आकरो आरडनो थको मे कोइथी गांजयो न जाय एवो सींह भक्षीना मृगादिक पशुमांही जेम उत्तम तेम बहुश्रुति साधु पण नैगमादिकसातनयरूप तीक्ष्ण दाढाये करी परवादीने विदारे, तथे करी आरडनो ज्ञान क्षमादिक गुणे करी सहित होवाथी कोइथी गांजयो न जाय ते परवादि-रूप मृगमांही उत्तमपणो जोये ए छठी उपमा. ॥ २० ॥

अर्थः—न० जेमाटे० जे वा० वासुदेव सं० संख १ च० चक्र २ अजेग० गदानो ३ ध० धारणहार। अ० अजेरे वरिए० राजाउत्तमी। व० बलजेहनुं भो० सुभट। ए० एवह० होयव० बहुश्रुत ॥ हवेउपमा। वासुदेव समान बहुश्रुतने भणी सूत्रमांहे एरीतेकीधाछे। कोइपण्यती रथपाछेवालेनहि० ज्ञान १ दरसन २। चारित्र ३ ए त्रणरूप संपादिकनो धरणहार १ गुणमणिए करी यजनन २ कर्षण ३ तपुरमनमणिया शत्रुने जीतवा सुभट ३ ए सातमी उपमा ॥२१॥

मूलः—जहा से वासुदेवे सङ्खचक्कगदाधरे।

कोसलदेश कोसलानगरीना ऊध्यानने विषे जक्षना देरामां, रात्रीए ध्यानमां ऊभा छे त्यां ते वखते ते नगरना राजानी कुंवरीभद्रा एवेनामे पोतानी सखीओ साथे रमवा आवी छे, तेओ रमत करतां थांभल्याओने वांदे छे तेमां भद्राकुंवरी अजाणतां उभेला मुनिने वांदी पाछळथी तेना जाणवामां आव्युं के कोइ मनुष्य छे ते देखी दुर्गछा करती थुनिऊपर थुंकी ते वखते मुनिनी सेवामां त्यां तिंदुक नामे जक्ष हतो तेने मुनिनी अशातना करती देखी जमीन ऊपर फेंकी दीधी, मोंढामांथी लोही नीकळेछे, आंखो बहार नीकळीछे, मरणतुल्य थइ गइछे, ते कुंवरीना आवा समाचार सांभळी राजा आव्यो, मुनि पासे कुंवरी पडीछे, ते देखी राजा मुनिने कहेछे के हे प्रभु ? आ बाळजीव ऊपर दया करीने सजीवन करो, ते वखते जक्षमुनिना शरीरमां पेठो बोल्यो के मने ते कुंवरी परणावो तो साजी करुं, ते सांभळी राजाये कबुल कर्युं. ते जक्षे साधुने वेभान करी ने कुंवरी साधे परणाव्यो, के तुरत जक्ष शरीरमांथी नीकळी गयो ने साधुशुद्धीमां आवी बोल्यो के आ शुं ? मारेतो परणवानुं जावजीवसुधी पचखाण छे, एम मिछामीदुकडं दइने मुनिविहार करी गया, पछी ते साधुने परणावेलीने कोइ राजाए इच्छी नहि, पछी पोताना पुरोहितने (गोरने) परणावी ते पुरोहिते पोतानी सुद्धी करवामाटे यज्ञ मांडयोछे त्यां मुनि आवशे.)

अथः–तं० ते साधुने पा० देपीने ण० अलंकारे ए० आवता थका । त० तपे करी प० दुर्बल कीधुंछे शरिर । पं० जीर्ण असार उ० उपधी उ० उपगरण छे जेहना उ० हास्य करे छे अ० अनार्य म्लेच्छ सरिसा॥४॥

मूलः–तं पासिऊण एज्जन्तं तवेण परिसोसियं ।

करा रमण करनारने, १ सन्यापति, २ गाथापति, ३ वार्धिक (सुतार), ४ मोहीत, ५ घोडो, ६ हाथी, ७ स्त्री, ८ चक्र, ९ छत्र, १० दंड, ११ चर्म (नाथा), १२ खड्ग, १३ मणि, १४ कांगणी एवां चौद रत्नोने नवनीध्याननो अधिपतीने एक छत्रे करी छ खंडनुं राज्य पाळनार एवो चक्रवर्ती मोटी ऋधीनो धणी शोभे तेमज बहुश्रुति साधु पण दानशीयळ तपने भावरुप चतुरंगीणी सन्यायेकरी सहितने चौदपुर्वरुपी चौद रत्नोनो अधिपतीने नवतत्वरुपी नवनीधान महाव्रत तथा ध्यान, अठावीश प्रकारनी लब्धीरुपी रुधीये करी सहितने जीनेंद्रनी आज्ञारुप चक्रे करी कर्मशत्रुने जीतीने चार गतीरुप चार दिशानो अंत करी मोक्षरुपी राज्यध्यानीने विषे अक्षयसुखनो भोगी थाय ए आठमी उपमा. ॥ २२ ॥

अर्थः—म० जेम से० ते स० सहस्र ते हजार आंख ने आंपना सरिषु देवतुं छे जेहने ते सह संयें फहिए। व० वज्रनो आयुध छे पा० हाथने विषे जेहने पु० शत्रुना पुर नगरने द० विदारणहार। स० शक्रेंद्र दे० अनेक देवनो अहि० अधिपती शोभे। ए० एप ह० होय ब० बहुश्रुत॥ हवे उपमा। श्रुतज्ञान रुपणी सहस्र आंखो छे १, वज्र सरिखा दृढ हाथ छे दया पाळवा समर्थ २, कर्मना पुर सहुने विदारणहार ३, बहुश्रुत रुपीयो शक्रेंद्रादि शक्तिवंत नाटे शक्रेंद्र ४, देवनो पुजनिक सामान्य धर्म देव साधु तेहनो अधिपती। ए ५ बोले करी विराजे बहुश्रुत साधु ए नवमी उपमा. ॥ २३ ॥

मूलः—जहा से सहस्सक्खे वज्जपाणी पुरन्दरे।
सक्के देवाहिवई एवं हवइ बहुस्सुए ॥ २३ ॥

(हरकेशीमुनिए कंठने विषे एटले खभे वस्त्र नांख्युं छे तेनुं कारण ते वखते हरकेशी मुनि पांचमी पडीमां वहे छे माटे जुनां अने मेलांवस्त्र सर्वे पोताना शरीर ऊपर लेइने फरे छे तेने कांइपण मुकवुं नथी) ॥ ६ ॥

अर्थः–हवे ब्राह्मण साधुप्रते बोल्या क० कोण तु० तुं । ए० एहवो अ० दर्शन करवा योग्य नहि का० कोण व० प्रश्ने आ० आशाए । इ० ए यज्ञना पाडाने विषे आ० आव्यो सि० छे ओ० असार छे चे० वस्त्र जेहना एहवा पं० रजे करि पि० पिशाच भू० भुत सरीपा । ग० तुंजा यज्ञना पाडाथी क्ख० तुंपर हो जा अम्हारी दृष्टि आगेथी कि० केम इ० इंहा ठि० उभो रह्यो सि० छे ॥ ७ ॥

अध्य ॥ १२ ॥

मूलः–कयरे तुमं एत्थ अदंसणिज्जे काए व आसा इहमागओ सि ।
ओमचेलगा पंसुपिसायभूया, गच्छ क्खलाहि किमिहंठिओ सि ॥ ७ ॥

गाथा ७ भावार्थः–अरे एवो तुं अदर्शनिक कोण ? ने शी आशाए अहीं आव्यो छुं अने हे असार वस्त्रधारी रजे करी वस्त्र मलीन थयेलां छे, पिशाच, भूत सरिखुं तारुं रुप छे तो तुं ए यज्ञना पाडाथकी दूर जा, अमारी दृष्टिथी वेगळो था, तुं शामाटे अहीं ऊभो रह्यो छे ! ॥ ७ ॥

अर्थः–ज० जक्ष त० तेणे अवसरे तिं० तिंदुकनामा रु० वृक्षनो वा० वसणहार वृक्षने हेठल यक्षनो स्थानक छे तिहांनो वासी । अ० सातानो उपजावणहार त० ते हरिकेशी म० महामुनिने । प० साधुने शरीरे आछादिने नि० पोतानां स० शरीरने इ० एहवा । व० वचनने उ० बोलतो हुवो ॥ ८ ॥

मूलः–जक्खो तहिं तिन्दुगरुक्खवासी, अणुकम्पओ तस्स महामुणिस्स ।

देवनो वास एवुं जंबूद्वीप तथा बीजुंद्वीप सुदर्शनद्वीप जेम जोग तम बहुश्रुते साधु
ऊत्तमने शास्त्रार्थरुप अमृतफळ आपवाथी सुदर्शन अने जेने विषे देवाधिदेव (तीर्थंकर)नो वास होवाथी
ए तेरमी ओपमा जाणवी. ॥ २७ ॥

अर्थः–ज० जेम । सा० ते न० नदी सकळ नदीमांहि प० प्रधान । स० नदि सा० समुद्र मांहि ग० गर
भली । सा० सीतानदी नी० नीलवंत प० पर्वत थकी निकळी विराजे प० एम ह० होय प० बहुश्रुत । हवे उपमा,
साधुरुप नदीमांहि प्रधान १ मलिन० निर्मळ श्रुतज्ञान रुप जळे भरी नदी २ सागर मुक्तिरुप समुद्रमां जइ भळे बहुश्रुत
रुपणी सीता मोटी माटे ३ नी० नीलवंत मोटा उत्तम कुळथी निकळ्याछे माटेज ग्रहण थयो। ए १४ मी उपमा ॥२८॥

मूलः–जहा सा नईणगवरासलिला सागरंगमा ।
सायी नीलवन्तपवहा एवं हवइ बहुस्सुए ॥ २८ ॥

गाथा २८ भावार्थः–जेनो प्रवाह नीलवंत पर्वतथी नीकळे छे, ने जेनुं निर्मळ पाणी छे, ने जेनुं पाणी
लवणसमुद्रमां जइ मळे छे ने जंबूद्वीपमां बीजी नदीयोथी मोटी एवी जेमसीतादी शोभे तेम बहुश्रुति साधु
पण नीलवंत पर्वतरुप मोटा उत्तमकुळथी नीकळेला ने सदविद्या ऊदार्यादिकगुणे युक्तने श्रुतज्ञान रुप निर्मळ
जळेकरी भरेला ने बीजा सामान्य साधुमांही प्रधानने मुक्तिरुप समुद्रमां जनारमां ए चौदमी ओपमा जाणवी.॥२८॥

अर्थः–ज० जेम से० ते पर्वत न० सकल प० पर्वतमांहि प्रधान । सु०अतिशे मं० मंदीर एहवे नामे मोटो
मेरु गि० पर्वत । ना० अनेक प्रकारनी उ० ओषधि करी प० देदीप्यमान छतो विराजे । प० एम ह० होय प०

मुषनि ग० वली त्र० जतना आ० आयाण नि० निक्षेपणा सुयनिने विषे। सं० संजती गु० अति ग० [illegible]

मूलः—इरियाभासाए उच्चारसमितीसु य ।
जओ आयाणनिक्खेवे संजओ सुसमाहिओ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः—ईर्या, भाषा, एषणा, आदान निक्षेपन ने ऊचारादि परीष्ठापना, एवी पांच समितिने विषे, यत्नवंतपणे ने संयतीए पोतानो आत्मा, अती समाधीने विषे स्थाप्यो छे. ॥ २ ॥

अर्थः—म० मनगुप्ती गु० गुप्तो व० वचनगुप्ते गुप्तो । का० कायगुप्ते गुप्तो नि० निर्तेंद्रिय । भि० भिक्षाने अर्थे व० ग्रामनगरां इ० गच्छ छे जेहने विषे । ज० यत्नना आ० पादाने विषे उ० पहोच्यो ॥ ३ ॥

मूलः—मणगुत्तो वयगुत्तो कायगुत्तो जिइन्दिओ ।
भिक्खट्ठा बम्भइज्जम्मि जन्नवाडमुवट्ठिओ ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः—दुष्टमन संबंधरूप मनगुप्ती, अशुभवचन संबंधरूप वचनगुप्ती, असत्यकायानी क्रिया संबंधरूप कायगुप्ती, एवी त्रण गुप्तीवंतने जीतेंद्रीते संयतीपणाथीज ब्राह्मणना, यज्ञपाडाने विषे, भिक्षाने अर्थे पहोच्यो. ॥३॥ (हरकेशी मुनिए पूर्वभवे जातीनो मद करवाथी आ भवे चंडालकुलं पाम्या छे, पण पूर्वसंचित पुण्ये के तेणे कोनी पासेथी दीक्षा लीधी ! तेने कहे छे के जातीमदवाला जीवो पोतानी मेळेज दीक्षा ले तेम नथी [illegible] मुनि विगरे पोतानी मेळेज दीक्षा लीधी छे तेम !) हरकेशीमुनि ग्रामानुग्राम फरता

जे० जे ब्राह्मण मांहिए बोल कह्या ते घणा लाभे। मो० मृषावादनुं बोलवुं। अ० अदत्तादाननुं लेवुं च० शब्दथी अब्रह्मनुं सेववुं प० परिग्रहनुं राखवुं च० वली रागद्वेषनुं करवुं ते० ते मा० ब्राह्मण जा० जातिए करी वि० विद्याए करी वि० रहित। ता० ते तु०अवधारणे खे० क्षेत्र सु० अतिशे पा० पाप उपजावानो खेत्र ॥ १४ ॥

मूलः—कोहो य माणो य वहो य जेसिं मोसं अदत्तं च परिग्गहं च ।
ते माहणा जाइविज्जाविहूणा ताइं तु खेत्ताइ सुपावयाइं ॥ १४ ॥

गाथा १४ भावार्थः—तेवारे यज्ञ आवरीत मुनि कहेता हवा ? जे क्रोध माने करी सहित अने जीवोनी हींसाना करणहार, जुठवचनना बोलनार, अणदीधेली वस्तुना लेनार, मैथुनना सेवनार, परिग्रह सहित अने जातीने विद्याये करी हीणा एवा ब्राह्मणने आपवुं ते अत्यंत पापक्षेत्र छे. ॥ १४ ॥

अर्थः—तु० तुम्हे इ० ए लोकने विषे भो० अहो ब्राह्मणो भा० भारना ध० वहणहारा छो गि० वेदनी वाणीना ॥ अ० अर्थने परमार्थने न० न जा० जाणो अ० भणीने पण वे० वेदने । उ० मोटा कुलने विषे अ० नानाकुलने विषे मु० साधु च० भिक्षाने अर्थे प्रवर्ते ता० ते तु० निश्चे खे० खेत्र सु० अतिशे पे० शोभनीक॥१५॥

मूलः—तुब्भे त्थ भो भारधरा गिराणं अट्ठं न जाणाह अहिज्ज वेए ।
उच्चावयाई मुणिणो चरन्ति ताइं तु खेत्ताइ सुपेसलाइं ॥ १५ ॥

गाथा १५ भावार्थः—अहोविप्रो ? तमे ए लोकने विषे देवसंबंधी वाणीना भारवाहक छो (मजुर)

गाथा ४ भावार्थः—तपे करी जेनुं शरीर दुर्बळ करेलुं तथा सुकायेलुं (अने जीर्ण) असार कांबळा-दिक उपगरण धारेलो एवा मुनिने आवतो देखीने अनार्यमलेच्छनीपेरे ब्राह्मण हांसी करी निंदा करवा लाग्या.॥४॥

अर्थः—जा० जातिने म० मदे करि प० अहंकारी हिं० हिंस्याना करणहार अ० अजितेंद्रिय । अ० अ० ब्रह्मचारि बा० अज्ञानि । इ० एहवा व० वचनने अ० बोल्या हुआ ॥ ३ ॥

मूलः—जाईमयपडिबद्धा हिंसगा अजिइन्दिया ।
अबम्भचारिणो बाला इमं वयणमब्बवी ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः—एम जातिये ब्राह्मण एवा अहंकारी, जीवोनो वधकरनार अजितेंद्री ने अब्रह्मचारी ने बाळक मूर्ख सरखा पूर्वे कहीयुं तेवुं वचन बोलता हवा. ॥ ५ ॥

अर्थः—क० कोण आकारे आ० आवेछे दि० अत्यंत ब० कुरूप का० वर्णे काळो पि० पिशाचगो । फो० बेडी चीपडि ना० नासिकाछे जेहनि ओ० असारचे० वस्त्रछे जेहनां पं० रजे करि पि० पिशाच भू० सरिषो सं० उकरडाने विषे नाख्यो होय जेहवो जे दू० वस्त्र तेहने प० धरता धरिने क० कंठना एक देशने विषे ॥ ६ ॥

मूलः—कयरे आगच्छइ दित्तरूवे काले विगराले फोकनासे ।
ओमचेलए पंसुपिसायभूए संकरदूसं परिहरिय कण्ठे ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः—जेनुं काळावर्णथी बीहामणुंरूप ने वक्र (वांकी) नासिकाने छे असारवस्त्र धारी ? ने रजे करीने पीशाचसरिखा ! अने उकरडानुं वस्त्र गळे धरिने अत्यंत कुरूपवंत ? अहीं क्यां तुं आवे छे !!!

मने जो एपणीक आहार नहिं आपो तो शुं आज यज्ञनो लाभ पामशो ? एम यक्ष बोल्यो. ॥ १७ ॥

अर्थः–हवे ब्राह्मण बोल्या के० कोइ इ० इहां ख० क्षत्री उ० अग्निना समीपना रहेनार विप्र वा० अथवा । अ० भणावनार विप्र वा० वली खं० विद्यार्थिए करी स० सहित विप्र ते इहां आवो ए० एहने तु० अवधारणे दं० दांडेकरी फ० वीलादिक फलेकरी ह० हणो साधुने । कं० गलानेविषे घे० ग्रहिने ख० काढो जो० कोइ बलवंत होय ते णं० अलंकारे ॥ १८ ॥

मूलः–के इत्थ खत्ता उवजोइया वा अज्झावया वा सह खण्डिएहिं ।
एयं तु दण्डेण फलेण हन्ता कण्ठम्मि घेत्तूण खलेज्ज जो णं ॥ १८ ॥

गाथा १८ भावार्थः–तेवारे ब्राह्मण कहेवा लाग्या के अरे अहीं कोइ क्षत्री अथवा अग्निरक्षक ऊपाध्याय छात्र (निशाळीआ) सहित छे! जो होयतो ए साधुने लाकडीए करी वीजोरादिकने फळे करी हणी गळे झालीने यज्ञवहार वेगळो काढो. ॥ १८ ॥

अर्थः–अ० अध्यापके ब्राह्मणना व० वचनने सु० सांभलीने उ० ध्याया त० तिहां व० घणा कु० कुमार । दं० दंडेकरी वि० नेत्रेकरी क० चावखेकरी च० पदपुरणे ए० वली निरधार करी । स० एकठा मिल्या तं० ते इ० ऋषीने ता० हणे छे दंडादिके ॥ १९ ॥

मूलः–अज्झावयाणं वयणं सुणेत्ता उद्धाइया तत्थ बहू कुमारा ।
दण्डेहि वित्ते हे कसेहि चेव समागया तं इसिं तालयन्ति ॥ १९ ॥

पच्चायइत्ता नियगं सरीरं इमाइं वयणाइमुदाहरित्था ॥८॥

गाथा ८ भावार्थः-ते बारे हरिकेशीमुनिश्वरनो भक्तिसंबंधे अनुकूल चेष्टानोकर्ता एवो तिंदूक यक्षनो वासी यक्ष ते मुनिना शरीरमां प्रवेश करीने पूर्वे कहीशुं तेवुं वचन कहेवा लाग्यो. ॥ ८ ॥

अर्थः-स० साधु छुं अ० हुं सं० संजतीछुं ब० ब्रह्मचारी छुं । वि० निवर्त्यो छुं ध० धनना प० पचवाथी प० परिग्रहथी । प० परने अर्थे स० नीपनो उ० अवधारणे भि० भिक्षाना का० कालनेविषे अ० आहारने अ० अर्थे इ० इहां आ० आव्यो अ० छुं हुं ॥ ९ ॥

मूलः-समणो अहं संजओ बम्भयारी विरओ धणपयणपरिग्गहाओ ।
परण्णवित्तस्स उ भिक्खकाले अन्नस्स अट्ठा इहमागओमि ॥ ९ ॥

गाथा ९ भावार्थः-हुं श्रमण (साधु) दुष्टव्यापार निवर्तवाथी संयती ? ने ब्रह्मचारी शोभनीक ब्रह्मनो धरनारने धनने धान्यादिकथी ने आहारादिक पचवा (रांधवा)थी ने सुवर्णादिक परिग्रहथी निवर्त्यो छुं अने ग्रहस्थे पोताना स्वार्थने माटे बनावेल होय एवा आहारने अर्थे भिक्षाकालने विषे हुं अहीं आव्यो छुं. ॥९॥

अर्थः-वि० नमीने नेने दीजीए छे दान स० स्वाभीजी खांड खानादिक भु० जमे छे तुरमगादिक प० वली । अ० अन्न प० पर्यु छे म० तुम संबंधी ए० ए प्रत्यक्ष जा० जाणो मे० मुज प्रते जा० जाचवे करी जी० जीवतुं जेहने वि० ए कारणे । से० भेत अ० शांत आहारने ल० पामी त० तपसी ॥ १० ॥

मूलः-वियरिज्जइ खज्जइ भुज्जई य अन्नं पभूयं भवयाणमेव ।

राजा तथा इंद्रना वंदनिक एवा मुनिए मने मने करी पण इच्छी नहि ने मने छांडी एज, ए ऋषीश्वरछे.॥

अर्थः-ए० एहज उ० निश्चे सो० ते उ० उग्र त० तपनो करणहार म० माहात्मा। जि० जितेंद्रिय सं०

संजती व० ब्रह्मचारी जो० जे साधु मे० मुजने त० तेवारे ने० न वांछे दि० देता थका। पि० पिताए स० पोते

को० कोसल देसना र० राजाए ॥ २२ ॥

॥ १२ ॥

॥ १२ ॥

मूलः-एसो उ सो उग्गतवो महप्पा जितिन्दिओ संजओ बम्भयारी।
जो मे तया नेच्छइ दिज्जमाणिं पिउणा सयं कोसलिएण रन्ना ॥ २२ ॥

गाथा २२ भावार्थः-वळी ए संयती उग्र (आकरी) तपश्चर्यानो करणहार जीतेंद्रीने ब्रह्मचारी छे,

तेने मारा पिता कोसल देशना राजाए मुने देतां थकां पण मुनें इच्छी नहि, अने अंगीकार पण न करी.॥२२॥

अर्थः-म० महा यशवंत ए० ए साधु म० अत्यंत शक्तिवंत । घो० दुकर व्रतनो धरणहार। घो०

आकरा प० पराक्रमनो धणी य० वली। मा० रखे ए० ए साधुने ही० हिलो अ० हिलवायोग्य नहि। मा०

रखे स० सर्व तुम्हने। ते० तप तेज करी भे० तमने नि० वाली भस्म करे ॥ २३ ॥

मूलः-महाजसो एसो महाणुभावो घोरव्वओ घोरपरक्कमो य।
मा एयं हीलेह अहीलणिज्जं मा सव्वतेएण भे निद्दहेज्जा ॥ २३ ॥

अर्थः-अरे ब्राह्मणो ए यती महा यशनो धणी, अत्यंत शक्तिवंत, भाग्यवान अने घोर

मूलः—थलेसु बीयाइ ववंन्ति कासगा तहेव निन्नेसु य आसयाए ।
एयाए सद्धाए दलाहि मज्झं आराहए पुण्णमिणं खु खित्तं ॥ १२ ॥

गाथा १२ भावार्थः—तेवारे यज्ञापवीतीत मुनि कहेता हवा के, हे विप्रो ? जेम कृष्णी, थोडा वरसादे अथवा पणा वरसादे, ऊंची भूमीने विषे नीची भूमीने विषे, बीज वावे छे, तेथी फलनी प्राप्ति थशे, एम जाणी बीज रोपे छे, पण ऊंची भूमीमां रोपवुं ने नीची भूमीमां न रोपवुं एम करतो नथी तेम तुं पणी एकसणीनी श्रद्धाए, मुजने आपीने निश्चेए पुण्यक्षेत्र आराध्य.? (अर्थात्दातार कांइ ऊंचनीच गणता नथी.)॥१२॥

अर्थः—हवे ब्राह्मण बोल्या । खे० खेत्र अ० अमने वि० जाण्या मनवें छे लो० लोकने विषे । अ० जे खेत्रने विषे प० दीधा थका अक्षारिक वि० उपने पु० समस्त पुन्य । जे० ते मा० ब्राह्मण जा० जातिए करि वि० विद्याए करी उ० सहित होय । ता० ते तु० निश्चे खे० खेत्र मु० अतिशे पे० शोभनीक ॥ १३ ॥

मूलः—खेत्ताणि अम्हं विदियाणि लोए जहिं पकिण्णा विरुहन्ति पुण्णा ।
जे माहणा जाइविज्जोववेया ताइं तु खेत्ताइ सुपेसलाइं ॥ १३ ॥

गाथा १३ भावार्थः—तेवारे ब्राह्मणो कहेता हवा ए लोकने विषे जेने आपवाथी जन्मांतरे समस्त पुन्यदान सफल उपजे, ते खेत्र अमारां जाण्यां वर्ते छे, के जे ब्राह्मणनी जाती भने विद्याए करी सहित, एज खेत्र शोभनीकने मनोनकारि छे (अर्थात ब्राह्मण सिवाय बीजां पुन्यक्षेत्र नथी.) ॥ १३ ॥

अर्थः—हवे यज्ञ बोल्यो को० क्रोध य० वली मा० मान म० अज्ञथी माया लोभ । प० जीवनी हिंसा प० वली

विषे जे मुनि निरवद्य भिक्षाये करतें तेज शोभनीकने पुन्यलोप छे. ॥ १५ ॥

अर्थः-हवे विष बोल्या अ० उपाध्यायना प० हे अवगुणना भा० बोलणहार। प० बोले छे किं० किंम तु० अवधारणे स० समीपे अ० अम्हारि अ० संभावनाए ए० ए। वि० विणस्यो अ० अन्न पा० पाणी। न० य० नहिज णं० अलंकार दा० दिजीए तु० तुजने नि० हे निर्ग्रंथ ॥ १६ ॥

मूलः-अज्झावयाणं पडिकूलभासी पभाससे किं तु सगासि अम्हं।
अवि एतं विणस्सओ अन्नपाणं न य णं दाहामु तुमं नियण्ठा ॥ १६ ॥

गाथा १६ भावार्थः-ऊपाध्यायना अवगुण भाषवाणी, विषो कहेवा लाग्या के, केम तुं, अमारा समीपे, ऊपाध्यायना अवगुण बोले छे; अमे ते अवगुणरुप वारय नहि तमो थकीगे, माटे हे निर्ग्रंथ! ए थयेली गयेलुं अन्नपाणी पण तने निश्चे नहि आपीए. ॥ १६ ॥

अर्थः-हवे यक्ष बोल्यो, म० मुजने स० पंच सुमती करी सु० अतिशे स० समाधिवंतने वली ॥ गु० त्रण गुप्ती करि गु० गुप्तने जि० जितेंद्रिने एहवा मुजने। ज० जो मे० मुजने न० नहि दा० दे अ० इहां ए० एषणीक आहारने। किं० किम इ० आज ज० यज्ञना ल० फलने पामशो ला० लाभने ॥ १७ ॥

मूलः-समितीहि मज्झं सुसमाहियस्स गुत्तीहि गुत्तस्स जितिन्दियस्स।
जइ मे न दाहित्थ अहेसणिज्जं किमित्थ जन्नाण लहित्थ लाहं ॥ १७ ॥

याथा १७ भावार्थः-पांच सुमतीये करी सहित, अने त्रण गुप्तीये गुप्त, ने पांच इंद्रीय जीतेल, एवा

गाथा २०. भावार्थः—वळी ते यक्षे बालकोनां मस्तक मरडीने वाल्या
पसारी छे, ने चेष्टा पण कांइ करता नथी, तेमज हाथ पग चलावता नथी, आंख पसारी छे, मुखपर्यंत
नांखे छे, मुख उंचां कीधां छे, जीभ बहार काढी छे ने नेत्र पण फाट्यां छे. ॥ २० ॥

अर्थः—ए पूर्व कह्या ते० तेहवाने पा० देखीने ख० विद्यार्थिने क० काष्ट भू० सरिखा । वि०
दुमनो थयो वि० आकुल व्याकुल थयो अ० हवे मा० ब्राह्मण सो० ते इ० ऋषीने । प० प्रसंते करी। सभा०
भार्यासहित । ही० जे तुमने हील्या च० वली नि० निंद्या ते च० वली ख० खमज्यो भं० हे पुज्य ॥३०॥

मूलः—ते पामिया खण्डिय कट्ठभूए विमणो विमणणो अह माहणो सो।
इमिं पमाएइ सभारियाओ हीलं च निन्दं च खमेह भन्ते ॥ ३० ॥

गाथा ३० भावार्थः—काष्ट सरिखा एवा हवाले विद्यार्थिओंने पड्या देखीने यज्ञनो करावणहार पु-
रोहित अत्यंत विखवाद पाम्यो के हवे शुं थशे? एम विचारी ते ब्राह्मण ते भार्यासहित ऋषीने प्रसन्न करतो हवो
के हे पुज्य ! अमे तमारी हीलणा कीधी, निंद्या कीधी ते हे भगवंत ! तमे अमारो अपराध क्षमा करो. ॥३०॥

अर्थः- वा० बालके मू०मुर्ख अ०अजाणे ज०जे ही०हील्या त०ते अपराधने ख०खमो भं० हे पूज्य म० मोटा
प० उपगारी इ० ऋषीस्वर ह०होय न०नहि कुं० निश्चे मु० साधु को० क्रोधनेविषे प०तत्पर ह०होय नहि॥३१॥

मूलः—बालेहि मूढेहि अयाणएहिं जं हीलिया तस्स खमाह भन्ते ।
महप्पसाया इसिणो हवन्ति न हुं मुणी कोवपरा हवन्ति ॥ ३१ ॥

॥ १२ ॥

गाथा १९ भावार्थः—एवां उपाध्यायनां वचन सांभळीने घणा ब्राह्मणादिकन, आकरा एकठा थईने
आवदीए करी वेगळाळे करी..चावखे करी नाडे करी साधुने मारवाने माटे दोड्या. ॥ १९ ॥
अर्थः—इवे तेणे अवसरे र० राजानी ॥ त० ते यज्ञना पाडानेविषे को० कोसम्ब देशना राजानी भू०
बेटी । भ० भद्रा इ० एहवे ना०[नामे करी अ० नथी निंदनीक अ० अंग जेहनां तं० तेने पा० देवीने सं०
संजतीने ह० इणना थकाने । कु० कोपवंत कु० कुमारने प० निवारे छे, टाढा करे छे ॥ २० ॥
मूलः—रन्नो तहिं कोसलियस्स धूया भद्द त्ति नामेण अणिन्दियङ्गी ।
तं पासिया संजय हम्ममाणं कुद्धे कुमारे परिनिव्ववेइ ॥ २० ॥
गाथा २० भावार्थः—तेवारे ते यज्ञ पाडानेविषे जेना मनोहर अंग छे, तेवी कोशलीक राजानी भद्रा
[नामे पुत्रीए ते संयतीने इणना जोइ ते क्रोधवंत कुंवरोनो क्रोध समाववाने माटे एम कहेती हवी. ॥ २० ॥
अर्थः—दे० देवताने अ० वखानकारे करी नि० प्रेरणाए करी ॥ दि० दिधी मु० हुं र० राजाए म०
एणे एणे मने करी । न० ध्याए नहि प्रा० बांछे नही । ए कहवो छे न० राजानो । दे० इंद्रनो अ० वंदनीक
छे । ते० तेणे साधुए । अ० हुं व० वमी इ० इच्छारे स० ते ए० ए ॥ २१ ॥
मूलः—देवाभिओगेण निओइएण दिन्ना सु रन्ना मणसा न झाया।
नरिन्ददेविन्दभिवन्दिएणं जेणामि वन्ता इसिणा स एसो ॥ २१ ॥
गाथा २१ भावार्थ—अरी कुंवरी ! देवताने वगे करी प्रेरणा करवाथी ए यतिने राजाए मने परणावी पण

तुब्भं तु पाए सरणं उवेमा समागया सव्वजणेण अम्ह ॥ ३३ ॥

गाथा ३३ भावार्थः–अहो ऋषीश्वर अमे सर्व परिवार साथे आवीने तमारा पगनुं शरण ग्रहण करीए छीए, तो तमे अर्थ धर्मनी गती जाणोछो तेथी क्रोध न करो अने ए जीव उपर कृपा करी जीव रक्षा करो ? ॥३३॥

अर्थः–अ० पुंज्युं अम्हे ते० तुज संबंधी सर्व अंग म० हे महानुभाव । न० नहि ते० ताहरुं किं० कांइए किंचित् मात्र न० न अ० पुंजो एहवो भु० भोगवो सा० सालिना कू० कुरने ना० अनेक प्रकारना वं० सालणा तेणे करी सं० सहित ॥ ३४ ॥

मूलः–अच्चेमु ते महाभाग न ते किंचि न अच्चिमो ।
भुञ्जाहि सालिमं कूरं नाणावञ्जणसंजुयं ॥ ३४ ॥

गाथा ३४ भावार्थः–हे महानुभाग्य ! तमारां अंगोपांग सर्व पुजीएछीए, तमारीचरण रजादिकपण अपुज्यनिक नथी माटे स्वामीजी ! ए चावल (चोखा) नीपन्यांछे ते विविध प्रकारनां शाक सहित ए चावल भोगवो !॥३४॥

अर्थः–इ० ए प्रत्यक्ष च० पुरणे मे० अम्हारे अ० छे । प० घणो अ० अन्न । तं० ते अन्नने भु० भोगवो अ० अम्हारा अ०उपगारने अ०अर्थे । हवे साधु बोल्या करुं तुमारो कहिण एम करीने वा० एवुं कर्म ति० ते प०वांछे भ० भात पा०पाणीने । मा० मासखमणने । ओ० पुरणे पा० पारणानेविषे म० महांत आत्मा ॥३५॥

मूलः–इमं च मे अत्थि पभूयमन्नं तं भुञ्जसू अम्ह अणुग्गहट्ठा ।
वाढं ति पडिच्छइ भत्तपाणं मासस्स ओ पारणए महप्पा ॥ ३५ ॥

मनने सगळाने एना नप नेने करी भस्म कर ? ॥ २३ ॥

अर्थः-ए० ए पुर्वोक्त सो० ए कन्याना व० वचनने सो० सांभळीने । ते केहवी छे प० ब्राह्मणनी स्त्रीना भ० भद्राना वचन केहवा छे । सु० भला हा० भाष्या छे । इ० एणीने ने० वेयावच्चने अ० अर्थे । ज० जश (पण परिवार माटे बहु वचन) । कु० पण कुमारने नि० हणनाने वारे छे ॥ २४ ॥

मूलः—एयाइ तीसे वयणाइ सोच्चा पत्तीइ भद्दाइ सुहासियाइं ।
इमिस्स वेयावडियट्ठयाए जक्खा कुमारे विणिवारयन्ति ॥ २४ ॥

गाथा २४ भावार्थः-एवां सोमदेव पुरोहितनी स्त्री भद्रानां भल्यां वचन सांभळीने यक्षिनी वैयावच्च करवाने पण सावधान थयां ने ब्राह्मणोना कुमारोने ते यज्ञ निवारतां हवां. ॥ २४ ॥

अर्थः-ते० ते यक्ष यो० यौद्धामणुं रु०रूपछे । जेहनुं डि० रणे अ० आकाशने विषे ॥ अ० अशुभ परिणाम माटे अमुर म० ते यज्ञना पाडाने विषे ने० ते ज० विद्यार्थी लोकमते ना० हणेछे ॥ ते० ते कुमार केहवाछे वि० विद्यार्थीछे दे० देह जेहना रु० रुधिरने प० वमता ने । ता० देखीने भ० भद्रा इ० एहवुं । भा० बोली शु० वली ॥२५॥

मूलः—ते घोररूवा ठिय अन्तलिक्खे असुरा तहिं तं जण तालयन्ति ।
ते भिन्नदेहे रुहिरं वमन्ते पासित्तु भद्दा इणमाहु भुज्जो ॥ २५ ॥

गाथा २५ भावार्थः-ते यक्ष घोर (भयंकर) रुद्र रूप करीने आकाशने विषे रहीं ते यज्ञना पाडाने विषे ते विद्यार्थी बालकोने मारतां हवो, ने एवी रीते के ते बालको धरती उपर पडया ने मुखथकी रुधीर

गाथा २७ भावार्थः-ए यतो आशीविष सर्प सरिखो उग्र तपनो करणहार छे अने घोर अतने घोर पराक्रमनो धणी छे, एवा मोटा ऋषीश्वरने तमे भोजननी वेळाए पीडा करो छो, तेथी अग्निमां जेम पतंगीयानी सेन्या बळी भस्म थाय तेम तपने ए यतो बाळी भस्म करशे. ॥ २७ ॥

अर्थः-सी० मस्तके करीने ए० ए मुनीना स० शरणने उ० पडिवज्जो । स० एकठा मिल्या स० सर्व ज० जनसहित तु० तुम्हे ज० जो इ० वांछो जी० जीवतो वा० अथवा ध० धनने वा० पुरणे । लो० सर्व लोकने पि० ए ए० ए जतो कु० कोप्योथको ड० बाले ॥ २८ ॥

मूलः-सीसेण एयं सरणं उवेह समागया सव्वजणेण तुम्हे ।
जइ इच्छह जीवियं वा धणं वा लोगं पि एसो कुविओ डहेज्जा ॥२८॥

गाथा २८ भावार्थः-जो तमे जीवीतव्य तथा धनने इच्छो तो ए मुनिने मस्तक नमावीने पगे पडो अने तेनुं शरण ग्रहण करो ? जो एम नहि करो तो ए साधु कोप्योथको सगळा लोकने भस्म करशे. ॥ २८ ॥

अर्थः-अ० नमाडा छे पि० वांसालगे उ० मस्तक जेहना प० लांबी कीधी छे वा० बाहा अ० नथी अंग उपांग हलावकारुप चे० चेष्टा जेहने नि० फाटि अ० आंख छे जेहनी रु० रुधिर व० वमता छे । उ० ऊंचा मु० मुख छे जेहनां नि० बाहिर निकळ्या छे जी० जिभ अने ने० नेत्र जेहनां ॥ २९ ॥

मूलः-अवहेडियं पिट्ठिसउत्तमङ्गे पसारिया बाहु अकम्मचेट्ठे ।
निज्झेरियच्छे रुहिरं वमन्ते उड्ढंमुहे निग्गयजीहनेत्ते ॥ २९ ॥

लीए नहीं, परिग्रह, स्त्री, क्रोध, मान, माया, लोभ ए दुर्गतीना दातार जाणीने प्रत्याख्याने करी परीहरी इंद्रीयोने दमन करतो थको प्रवर्ते. ? ॥ ४१ ॥

अर्थः-सु० भलीपरे सं० आवता रुंध्या छे आश्रव जेणे। पं० पांच सं०संवरे करी । इ० ए मनुष्यलोकने विषे।जी० असंजम जीवतव्यने अ०अणवांछता थका । वो०ममताभावने अणकरवे करी वोसराव्युंछे का० सरिर जेणे सु० मनजोगे करी पवित्र । च० सुश्रुषा अणकरवे करी त्यजो छे दे० देह जेणे । एहवा जे साधु ते । म० मोटो छे कर्मशत्रूनो ज० यज्ञ जेहनेविषे एहवा ज० यज्ञमांहे सि० श्रेष्ट प्रधान यज्ञने ज० करे ॥४२॥

मूलः-सुसंवुडो पञ्चहि संवरेहिं इह जीवियं अणवकङ्खमाणो ।
वोसट्ठकाओ सुइचत्तदेहो महाजयं जयति जन्नसिट्ठं ॥ ४२ ॥

गाथा ४२ भावार्थः-पांच संवरे करी पांच आश्रव जेणे भलीपेरे रुंध्या छे, अने ए मनुष्यलोकने विषे असंयम जीवतव्य अणवंछताथका कोइ अतीचार लगाडे नहि ने निर्मळव्रत पाळवे करी पवीत्र अने परीसह सेहेवे करी शरीरनी शुश्रुषा जेणे तजेली छे अने मोटा कर्मरुपी शत्रुने जीतवा एवो साधु उत्तम यज्ञ करे.॥४२॥

अर्थः-हवे विप्र बोल्या के० कोण ते० तमारो जो० अग्नि के० कोण य० वली । ते० तमारे जो० अग्निनुं ठा० थानक । का० कोण ते० तुमारे सु० चाटुवा । कं० कोण च० वली ते० तमारे का० गोर संधु कर्ण ॥ प० इंधण य० वली ते० तमारे क० कोण सं० उपद्रव्य टाळवाने सांति करवाने अर्थे मंत्रनी रुचि ते

गाथा ३१ भावार्थः—हे भगव॰ मूढ अज्ञानी बालकोए तमने हीड्या, निंद्या, पीड्या त अपराध क्षमा करो अने ऋषीतो प्रसन्न चित्तने महा प्रसाद (महेरबानी) वंत होय ने मुनिश्वर तो क्रोधवंत न होय ॥३१॥

अर्थः—इदे साधु बोल्या पु० पुर्वकाळे च० पुनः इ० वर्त्तमानकाळे अ० अनागत काळे च० पुरणे । प० प्रदेश न० नहि मे० मुनने अ० छे को० अल्प मात्र पण । ज० जश इ० नेहभणी वे० वैयावचने पक्षपातने क० करे छे न० ते माटे इ० एमज । ए० ए इ० इण्या कु० कुमार ॥ ३२ ॥

मूलः—पुव्विं च इण्हिं अणागयं च मणप्पदोसो न मे अत्थि कोइ ।
जक्खा हु वेयावडियं करेन्ति तम्हा हु एएहि हया कुमारा ॥ ३२ ॥

गाथा ३२ भावार्थः—ने वारे यती कहेता हवा के हे त्रिभो ! पहेलां, हवणां, ने आगे मनमां पण मारे कोना उपर द्वेष नथी । तेवारे ब्राह्मणो कहेता हवा के हे स्वामी ? तो ए कुंवरोने कोणे पठाड्या ? तेवारे यती कहेता हवा के हे महानुभावो ! मारा विनय वैयावचने अर्थे ए यक्ष देवताए तमारा कुंवरोने हण्या, मार्या ने काष्ट समान करेला छे ? ॥ ३२ ॥

अर्थः—इदे ब्राह्मण बोल्या अ० आपना अर्थने च० पुनः प० यतीना धर्मने च० वली वि० विशेषे नाणनायका तु० तुमे न० नज वि० वली कु० कोपो भू० हृदयंनी प० पठाछे जेहनी तु० तुम्हारा तु० निश्चे पा० पगनो स० तरण उ० करूं छुं अम्हे । स० एकठा स० सर्व ज० जनेउरी सहित । अ० अम्हे ॥ ३३ ॥

मूलः—अत्थं च धम्मं च वियाणमाणा तुब्भे न वि कुप्पह भूइपन्ना ।

पवित्र ति० तिर्थ पुन्य क्षेत्र अथवा सं० छे ति० संसाररूप समुद्र तरवाना उपायभूत क० कोहनेविषे सि० नहाए थके व० अथवा वली र० कर्मरजने ज० टाळोछो ॥ आ० कहे नो० अम्हने । सं० हे संजती ज० हे जक्षना पू० पुज्यनिक । इ० वांछोछो ना० जाणवो भ० तमारी स० समिपे ॥ ४५ ॥

मूलः—के ते हरए के य ते सन्तितित्थे कहिं सिणाओ व रयं जहासि ।
आइक्ख नो संजय जक्खपूइया इच्छामो नाउं भवओ सगासे ॥ ४५ ॥

गाथा ४५ भावार्थः—तेवारे विप्रो कहेता हवा के हे यक्षना पुजानिक संयति ? तुमारे द्रहकोण ? संसारसमुद्रथी तरवानुं पुण्यक्षेत्र (तीर्थ) कीयुं ? अने कीहां स्नान करवाथी कर्मरजने टाळोछो ए अर्थ तमारां समीपे जाणवा इच्छीये छीये ! माटे अमने कहो. ? ॥ ४५ ॥

अर्थः—हवे साधु बोल्या । ध० दया धर्मरूप ह० द्रह बं० ब्रह्मचर्यरूप सं० पवित्र ति० तीर्थ पुन्य क्षेत्र तीर्थ । वली केहवोछे अ० निर्मलछे । अ०आत्माने प० भलीछे ले० सुकलादि लेश्या जेहने विषे एहवो द्रहछे । ज० जे एहवा द्रहनेविषे । सि० न्हायोथको वि० कर्म मलरहित थाय वि० कलंकरहित थाय । सु० अतिशे सी० सीतली भू० भूतथको दुं प० टाल्युं छे । दो० कर्मरूप दोषने ॥ ४६ ॥

मूलः—धम्मे हरए बम्भे सन्तितित्थे अणाविले अत्तपसन्नलेसे ।
जहिं सिणाओ विमलो विसुद्धो सुसीइ भूओ पजहामि दोसं ॥ ४६ ॥

गाथा ४६ भावार्थः—तेवारे साधु कहेता हवा के हे विप्रो ! अहींसादी धर्मरूप द्रह ब्रह्मचर्यरूप पुण्यक्षेत्र

गाथा २५ भावार्थः-ए अमारे अन्न पकावानो वेला छे, माटे अमारो घरे जइने तमे भोगवो! तेवारे महात्माए तेनो घणो आग्रह देखी ते अन्नपाणी मासक्षमणने पारणे लिधे। ॥ २५ ॥

अर्थः-त० ते यज्ञना पाडानेविषे गे० सुगंधनो उ० पाणीनो पु० फूलनो वा० वरसात वरस्यो। दि० प्रधान त० तिहांज व० द्रव्यनी धा० धारा ग० पुनः पु० वृष्टी ॥ प० वजादि दु० दुंदुभी गु० देवताए। आ० आकाशनेविषे अ० आश्चर्यकारी दा० दान रिधुं च० थयी पु० निरुपम कीधो देवताए ॥ २६ ॥

मूलः-तहियं गन्धोदयपुप्फवासं दिव्वा तहिं वसुहारा य वुट्ठा।
पहयाओ दुन्दुहीओ सुरेहिं आगासे अहो दाणं च घुट्ठं ॥ २६ ॥

गाथा २६ भावार्थः-ते यतीए आहार लीधो तेवारे देवताए सुगंधी पाणीनो, पुष्पनी ने सुवर्ण द्रव्यनी वृष्टी करीने आकाशने विषे वाजिंत्र वगाडी अहोदान महोदान एम उद्घोषणा करी. ॥ २६ ॥

अर्थः-स० प्रत्यक्ष गु० निथे दी० दीसे छे त० तपनो वि० विशेष। न० न दी० दीसे जा० जातिनो वि० विशेष को० कांइ थोडो पण। सो० चंडालना पु० पुत्र ह० हरिकेशी बल सा० साधु। ज० जे गायुनी से० एवी इ० ऋद्धि म० अतिशयवंत महात्मवंत ॥ २७ ॥

मूलः-सक्खं खु दीसइ तवोविसेसो न दीसई जाइविसेस कोई।
सोवागपुत्तं हरिएससाहुं जस्सेरिसा इड्ढि महाणुभागा ॥ २७ ॥

गाथा २७ भावार्थः-ते वारे ब्राह्मणो कहेता हवा के ए प्रत्यक्ष तपनोज महीमा देखायछे, पण जातीनो कांइ

अर्थः–जा० जातिना प० पराभव्या थका स० अलंकारे का० कीधो नि० नियाणो तु० पूरणे ह० हस्तनागपुर नगरने विषे चु० चुलणी राणीनी कुखने विषे ब० ब्रह्मदत्त उ० उपन्यो प० पदम गु० गुल्म नामा विमानथकी चवीने १

मूलः–जाईपराइओ खलु कासि नियाणं तु हत्थिणपुरम्मि ।
चुलणीए बम्भदत्तो उववन्नो पउमगुम्माओ ॥ १ ॥

॥ १३ ॥

गाथा १ भावार्थः–चंडाळनी जातिए पराभव्यो थको संभुति साधुये हस्तीनागपुर नगरे नियाणुं कर्युं त्यांथी मरी ते पहेला देवलोकमां नलनी गुल्म विमानमां गया अने त्यांथी चवीने ब्रह्मराजानी चुलणी राणीनी कुक्षीने विषे ब्रह्मदत्त उपन्यो. ॥ १ ॥

अर्थः–कं० कंपीलपुर नगरे सं० उपन्यो ब्रह्मदत्त चि० चित्तरुपिनो जीव पु० वली जा० उपन्यो पु० पुरिमताल नामा नगरने विषे से० सेठना कु० कुलने विषे वि० निर्मल ध० धर्मने सो० सांभळीने प० प्रवर्ज्या दीक्षा लीधी ॥ २ ॥

मूलः–कम्पिले सम्भूओ चित्तो पुण जाओ पुरिमतालम्मि ।
सेट्ठिकुलम्मि विसाले धम्मं सोऊण पव्वइओ ॥ २ ॥

॥११९॥

गाथा २ भावार्थः–संभुत (उर्फे ब्रह्मदत्त) चक्रवर्ति कंपीलपुर नगरने विषे उपन्यो अने पुरिमताल नगरने विषे विस्तिर्ण कुलवाळा इभ्यशेठी (नारसें धनुष्यनो हाथीने उपर त्रणसें धनुष्यनी अंबाडी एवो हस्ती-
[illegible]) पळवं जेना घरमां धन होय तेना कुळने विषे चित्त उपन्यो. तेणे साधुनी पासे धर्म

पु० मन्ना यत्नने कु० तीर्थंकर व० कहे ॥ ४० ॥

मूलः—कहं च रे भिक्खु वयं जयामो पावाइ कम्माइ पुणोल्लयामो ।
अक्खाहि नो संजय जक्खपूइया कहं सुजट्ठं कुसला वयन्ति ॥ ४० ॥

गाथा ४० भावार्थः—हवे ब्राह्मणो पूछता हवा के हे यक्षना पुजनिक भिक्षु ! अमे केम चालीए अने केवी क्रिया करीए के जेथी पापकर्म दूर थाय अने भलो यज्ञ तत्वज्ञानीए केवो कहेलो छे ते अमने कहो.॥४०॥

अर्थः—उ० छकायनो अ० आरंभ अणकरनो थको । मा० मृषा ने अ० अदत्तने च० पुनः अ० अ-
णमेवनागका । प० परिग्रहने इ० स्त्रिओने मा० मान मा० मायाने । ए० ए पुर्वे कया तेहने प० माठा जाणीने
प० मनमें इं० इंद्रिने दमता थका ॥ ४१ ॥

मूलः—छज्जीवकाए असमारभन्ता मासं अदत्तं च अरोवमाणा ।
परिग्गहं इत्थिओ माण मायं एवं परिन्नाय चरन्ति दन्ता ॥ ४१ ॥

गाथा ४१ भावार्थः—तेवारे साधु कहेता हवा? छकाय जीवनुं रक्षण करे, मृषावाद बोले नहि, अदत्त

मूलः—आसिमो भायरा दो वि अन्नमन्नवसाणुगा ।
अन्नमन्नमणूरत्ता अन्नमन्नहितेसिणो ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः—पाछले चंडाळना भवे आपणे वे भाइ हता तथा आपणे ते भाइ चंडाळना कुळने विषे अन्योअन्य वशवर्ति अने मांहोमांही धर्मस्नेहवंतने परस्पर अनुरक्तने मांहोमांही हितना वंच्छक हता ॥५॥

अर्थः—दा० दासपणे द० दशार्ण देसने विषे आ० हता मि० मृग हता का० कालंजर न० पर्वतने विषे हं० हंस हुता म० मृतगंगा नदीना ती० तीरने विषे सो० चंडाळ हुता का० कासी भू० भूमीनेविषे ।६।

मूलः—दासा दसण्णे आसी मिया कालिञ्जरे नगे ।
हंसा मयङ्गतीरे सोवागा कासिभूमिए ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः—पहेले भवे दशार्ण देशने विषे वे दास हता, बीजे भवे कालंजर पर्वतने विषे वे मृग हता, त्रीजे भवे मृत गंगानदीने तीरे वे हंस हता, चोथे भवे काशी देशने विषे वे चंडाळ हता. ॥ ६ ॥

अर्थः—दे० देवता य० थयो दे० देवलोकने विषे हुता । आ० हुता अ० अम्हे आपणे वे म० मोटी रुपिना धणी । इ० ए नो० प्रत्यक्ष छ० छडी जा० जाती अ० अन्योऽन्य जा० जुइजुइ ॥ ७ ॥

मूलः—देवा य देवलोगम्मि आसि अम्हे महिड्ढिया ।
इमा नो छड्डिया जाई अन्नमन्नेण जा विणा ॥ ७ ॥

मूलः—के ते जोई के य ते जोइठाणे का ते सुया कं च ते कारिसङ्गं ।
पहाय ते कयरा सन्ति भिक्खू कयरेण होमेण हुणासि जोइं ॥ ४३ ॥

गाथा ४३ भावार्थः—तेवारे विभो कहेता हवा के अहो साधु तमारे अग्नि केवा ? अग्निनुं स्थानक कीयुं ? अग्निमां घृत घालवानो चाटवो कीयो ? इंधणां कीयां ? छांणा प्रमुखे करी अग्निसंधुक्षीने एवोकारीत (छांणानो गोर) कीयो ने शांति पाठरुप मंत्रकीयो ? अने आहुती केवा ? ॥ ४३ ॥

अर्थः—हवे साधु बोल्या । त० तपरुप जो० अग्नि जी० जीवने जो० अग्निनो ठा० थानक । जो० शुभ मन वचन कायाना जोगरुप ते सु० चाडवा स० शरीररुप का० गोर संयूक्तपणे क० कर्मरुप इ० इंधणां सं० संजमने विषे आत्माने जो० जोडवो ते सं० शांती करवानो मंत्र पाठ हो० एवो होम हु० होमो छो इ० ऋषीश्वरोने प० भलो ए कर्त्तव्य ॥ ४४ ॥

मूलः—तवो जोई जीवो जोइठाणं जोगा सुया सरीरं कारिसङ्गं ।
कम्मेहा संजम जोगसन्ती होमं हुणामि इसिणं पसत्थं ॥ ४४ ॥

गाथा ४४ भावार्थः—तेवारे साधु कहेतो हवो के अहो विभो ! अमारे जीवने अग्निनुं स्थानक, तपरुप अग्नि, शुभ मनवचन कायाना योग व्यापाररुप चाडवा, शरीररुप कारीष (छांणानोगोर), आठ कर्म रुपीयां इंधणां, संयम व्यापाररुप शांतिपाठ एवो यज्ञ ऋषीश्वरने प्रसस्य (भलो) कहेल छे माटे एवो होम हुं करुंछुं. ॥ ४४ ॥

अर्थः—हवे विभ बोल्या । के० कोण ते० तमारे ह० द्रह के० कोण य० वली ते० तमारे सं० ॥ संति

पण तारां शुभ कर्म क्यां गयां अने ए शुं थयुं ! ! ! ॥ ९ ॥

अर्थः—हवे मुनि बोल्या स०सर्व सु०रुडो तपादिक आचरयो ते स०फल सहित होय न० मनुष्य सर्व जीवने । क०कीधा फ०कर्मनो अणभोगवे न०नथी मो० मुकावयो । अ०द्रव्ये करी क०शब्दादिक कामे करी य० वळी उ० ए हेतु मकारे करी । आ० आत्मा म० माहरो पु० पुन्यना फ० फले करी उ० सहित ॥ १० ॥

मूलः—सव्वं सुचिण्णं सफलं नराणं कडाण कम्माण न अत्थिमोक्खो ।
अत्थेहि कम्मेहि य उत्तमेहिं आया ममं पुण्णफलोववेए ॥ १० ॥

गाथा १० भावार्थ—तेवारे चित्तमुनि कहेता हवा के हे ब्रह्मदत्त ! पुन्य करेलां ते सर्व मनुष्यादिकने उदय आवे ने ते कर्म भोगव्या सिवाय छुटको थाय नहि केमके द्रव्ये करी तथा शब्दादिक काम भोगे करी मारो आत्मा पण पुन्यफळे करी सहितज तुं जाणजे. ॥ १० ॥

अर्थः—जा० जेम तुं ताहरा आत्माने जाणे छे सं० हे संभूत आत्माने एहवो जाणे छे म० मोटा म-हातमपणो म० महर्द्धिकपणो । पु० पुन्यने फ० फलेकरी उ० सहित ते ताहरा आत्माने जेम एहवो जाणे छे । चि० चितने स० पण जा० जाणो त० तेमज रा० हे राजन । इ० ऋद्धि जु० ज्योति त० ते चित्रने वि० पण य० जे अणी प्र० प्रभा हता एम जाणे ॥

मिथ्यात्वादिक मेलरहित शुद्धत्वादिक निर्मलत्वेकरीने, एवा धर्मरूपीया ह्रदने विषे स्नान करवाथी आत्मा कर्मरूपी मेल कलंकरहित शुद्ध थाय, अनी शीतलभुत थयो थको सर्व कर्मरुप दोषने दुं छांडुं छुं. ॥ ४६ ॥

अर्थः-ए० पूर्वोक्त सि० स्नानने कु० निर्थकरे दि० दीठो। म० ए मोटो सि० स्नान इ० ऋषिश्वरोने प० मान्यो। ज० ज्यां सि० न्हाया थका वि० मल मेल रहित वि० रागादिक कलंक रहित थाय । म० मोटा ऋषिश्वर उ० प्रधान ठा० मुक्तिरुप थानकने प० पाम्या सि० एम वे० हुं कहुं छउं ॥ ४७ ॥

मूलः—एयं सिणाणं कुसलेहि दिट्ठं महासिणाणं इसिणं पसत्थं ।
जहिं सिणाया विमला विसुद्धा महारिसी उत्तमं ठाणंपत्त ॥ ४७ ॥ त्ति बेमि

इति हरिएसिज्जं नाम ह्यदसं अज्झयनं सम्मत्तं ॥ १२ ॥

गाथा ४७ भावार्थः—ए स्नान तत्वज्ञानीए कर्युं अने ए उत्तम स्नान ऋषीश्वरोने भलुं कर्युं छे के ज्यां स्नान करवाथी कर्मरुपी मेल रहित ने रागादिक कलंक रहित थइ मोटा ऋषीश्वर मुक्तिरुप उत्तम स्थानकने पाम्या. एम सुधर्मास्वामी पोताना जंबु नामना शिष्यने कहेता हवा के हे जंबु ! जेम में श्री महावीर देव स्वामी तमोपे सांभळ्युं हतुं तेम में तुज प्रत्ये कर्युं. ॥ ४७ ॥ इति श्री बारमा हरकेशी बळ मुनिना अध्ययननो भावार्थ संपुर्ण. १२. ए बारमा अध्ययनने विषे नव वखाण्यो ए तपना करनारे नियाणुं न करवुं, ते माटे तेरमुं अध्ययन कहीये छीये.

नथी । काम गुण केहवा छे वा० अज्ञानीने अ० अभिराम सुं० मनोहर वहाला छे वली केहवा छे दु० दुखना आवेश सु० कारण छे अथवा दुखना मवाह छे एहवा कामगुणने विषे सुख नथी, साधुने सुख छे, साधु केहवा छे वि० निवर्त्या छे फा० कामगुणथी वली केहवा छे । त० तपरुप ह० धन छे जेहने वली केहवा छे। सी० सीलना जे गु० गुण तेहने विषे र० राता छे । एहवा साधुने ॥ १७ ॥

॥ १३ ॥

मूलः—बालाभिरामेसु दुहावहेसु न तं सुहं कामगुणेसु रायं ।
विरत्तकामाण तवोहणाणं जं भिक्खुणं सीलगुणे रयाणं ॥ १७ ॥

गाथा १७ भावार्थ—हे राजन् ! ए कामभोग बाल (अज्ञानी)ने मनोहर छे पण कामभोगना गुणने विषे सुख नथी अने सुख तो काम भोगथी विरक्त थएला अने तपरुप धननना धणी अने शियलेना गुणने विषे रक्त एवा साधुने छे, तेवुं सुख बीजे ठेकाणे नथी. ॥१७॥

अर्थः—न० हे नरना इंद्र । सो० चंडालनी जा० जाति प्रते ग० पाम्या । दुहओ० एहवी आपण बेहुनी नराणं० नर मनुष्य मांहि । अहमा० अधर्म जा० जाति आपणी हती । जं० जे जातिने विषे व० आपण बे । सव्व० सर्व ज० लोकने वेस्सा० द्वेषकारी । व० वसता य० हुवा सोवा० चंडालना निवेसण० घरने विषे ॥१८॥

मूलः—नरिंद जाई अहमा नराणं सोवागजाई दुहओ गयाणं ।
जहिं वयं सव्वजणस्स वेस्सा वसी य सोवागनिवेसणेसु ॥ १८ ॥

॥ १२३ ॥

[illegible] [illegible] [illegible] [

गाथा २० भावार्थः–तेज तुं हे राजन्! मोटा महात्म्यनो धणीने मोटी ऋद्धिनो धणी आ कालने विषे छे ने पुन्यनां फळे करी सहित छे मोटे हवे असास्वता भोगने छांडीने मोक्षना हेतुए संसारथी नीकळ! ने चारित्र ग्रहण कर! ॥ २० ॥

अर्थः–इ० ए मनुष्य संबंधी अ० असास्वता जी० आउखाने विषे रा० हे राजन ध० अतिशे तु० पुरुषे। पु० पुन्यने अ० अणकरतो थको पुरुष से० ते पुरुष सो० पश्चाताप करे म० मरणने मु० मुखे उ० पहुतो थको। ध० धर्मने अ० अणकरवे करी प० पर लो० लोकने विषे ॥ २१ ॥

मूलः–इह जीविए राय असासयम्मि धणियं तु पुण्णाइ अकुव्वमाणो।
से सोयई मच्चुमुहोवणीए धम्मं अकाऊण परम्मि लोए॥ २१ ॥

गाथा २१ भावार्थः–हे राजन! ए मनुष्यनुं जीवतव्य असास्वतुं छे अने पुन्यनो तथा धर्मनो अणकरनार पुरुष मर्णने मुखे तथा परलोके पहोंच्यो थको पश्चाताप करशे. ॥ २१ ॥

अर्थः–ज० जेम इ० ए लोकने विषे सी० सिंह व० पुरुषे मि० मृगने ग० ग्रहिने लेइ जाय ॥ तेम म० मरण रुप सिंह ते न० नर मनुष्यने ग्रहीने ने० पहुचाडे परलोके लेइ हु० निश्चे अं० अंतकालने विषे न० नहि त० तेहने मा० माता व० अथवा पि० पिता व० अथवा भा० भाइ। का० अंतकालने विषे तं० ते पोताना आउखाना भागना सह० देणहार। भ० होय नहि एटले माता प्रमुख पोताना आउखाना भाग देइ नहि जे जीवतो रहे ॥ २२ ॥

पणी एही ज्ञान एटलु छतें मतें आपणे ने जुदा जुदा उपन्या. ॥ ७ ॥

अर्थः-हवे चिन्तवति थोन्या । क० कर्म केहवा नि० निदान प० प्रकाँ कीधा । तु० ते रा० हे राजान वि० विवेके नि० चिंतव्या एटले तपनो फल मागी लीधो । ते० ते निदाणा कर्मना लीधा ॥ फ० फलने वि० विपाके फरी वि० वियोगने उ० पाम्या जुजुवा उपना ॥ ८ ॥

मूलः—कम्मा नियाणपयडा तुमे राय विचिन्तिया ।
तेसिं फलविवागेण विप्पओगमुवागया ॥ ८ ॥

गाथा ८ भावार्थ—तेवारे मुनि कहेता हवा के हे राजा ! तमे सनंतकुमार नामे चौथा चक्रवर्तिनी पदवी नाथे थी एनला हेतथी भोग चौदमी नियाणांरूप कर्म बांध्युं ते नियाणानां कर्मे करी आपणे थे जुदा जुदा उपन्या ने वियोग पाम्या. ॥ ८ ॥

अर्थः-हवे चक्रवर्ति बोल्या स० सत्य कर्तव्य सो० शोभा कपट रहित तप पवित्र कर्तव्य ए बेहुए करी प० कीधा उदाराणा ने क० कर्म म० मने मु० मुनि मले क० कीधा हता ते० ते कर्मे अ० आज हुं प० भोगवुंछं कि० शरीरे पु० पित्तें वि० हे चित्र वि० पण सं० ते पुन्य नथी भोगवतो न० जेम हुं भोगवुं छुं तेम ॥ ९ ॥

मूलः—सव्वं विलवियं गीयं सव्वं नट्टं विडंबियं ।
सव्वे आभरणा भारा सव्वे कामा दुहावहा ॥ ९ ॥

गाथा ९ भावार्थ—तेवारे ब्रह्मदत्त कहेतो हवो के पाछला भवने विषे हुं राज्य योग्ये

गाथा ११ भावार्थ—हे शंभूति ! जेम तुं मारा आत्माने मोटुं महात्म्यने महर्धिकपणुं पुन्यफले करी सहित जाणेछे तेमज तिमने पण हे राजन्! तुं जाणजे, कारणके ऋद्धि द्युति कांति तिमने पण घणी छती.॥११॥

अर्थः-प० मोटो रु० जीवादिक द्रव्य गुण पर्यादिक अर्थरूप छे जेहमांहि एहवी, वली गाथा केहवी छे व० वचने करी अ० थोडी गा० एहवी गाथा थिरे गी० कही न० मनुष्यनां सं० इंद्र प० पांहि ॥ जं० जे गाथा सांभळीने भि०साधु सी० चारित्र गु० ज्ञान ए बेहुए करी उ० सहितछे एहवो ते साधु ते ने ॥ इ० ए जिन वचननें विषे ज० सावधान जतनवंत होता हवा स० श्रमण साधु भ० हुं जा० हुओ ॥ १२ ॥

मूलः—महत्थरूवा वयणप्पभूया गाहाणुगीया नरसङ्घमज्झे ।
जं भिक्खुणो सीलगुणोववेया इह ज्जयन्ते समणो मि जाओ ॥१२॥

गाथा १२ भावार्थ—जेमां परमार्थ घणो ने वचन थोडां एवी गाथा अतिशयें भाषसना इंद्रमां कही के जे गाथा सांभळीने साधु ज्ञान चारित्रादिक गुणे सहितथको जीनवचननें विषे उद्यमवंत होय ते गाथा में पण सांभळीने वैराग्य उत्पन्न थवाथी हुं संयति तपस्वी थयो. ॥ १२ ॥

अर्थः-हवे चक्रवर्ति बोल्या इ० ईषा आवास १ उ० बीजो उदय २ ॥ म० त्रीजो मधु ३ अ० चोथो कर्क ४ प० वली प० पांचमो साया ५ । प० कथा ए पांच आ० आवास प० पुरणे र० रमणीक ॥ इ० ए कथा ते गि० घरने वि० हे चित्त ध० धन प्र० प्रभूत घणा धनने । प० अंगीकार करी पाम्ये गु० सर्व गुणेकरी

राजाने प० महाऋद्धिना धणीने का० काम भो० भोगने विषे गि० गृद्धपणे नि० नियाणुं अ० बुंदुं क० कीधुं ॥२८॥

मूलः—हत्थिणपुरम्मि चित्ता दट्ठूणं नरवइं महिड्ढियं ।
कामभोगेसु गिद्धेणं नियाणमसुहं कडं ॥ २८ ॥

गाथा २८ भावार्थः—हे चित ! हस्तिनागपुरने विषे महर्धिक शनंतकुमार चक्रवर्तिनी ऋद्धि देखीने कामभोगने विषे हुं गृद्ध थयो तेवारे में बुंदुं नियाणुं कर्युं. ॥ २८ ॥

अर्थः—त० तेनियाणाथकि मे० मने अ० अणानिट्टया ॥ इ० ए प्रत्यक्ष ए० एहवो फ० फलउदय आव्यो छे ॥ जा० जाणतोथको वि० पण जं० जेचारित्र ध० धर्मने हुं अंगीकार करी सकतो नथी ॥ का० काम भो० भोगने विषे मु० मुर्छाणोछुं तेमाटे ॥ २९ ॥

मूलः—तस्स मे अपडिकन्तस्स इमं एयारिसं फलं ।
जाणमाणो वि जं धम्मं कामभोगेसु मुच्छिओ ॥ २९ ॥

गाथा २९ भावार्थः—ते नियाणुं में आलोव्युं नहि एटले तेनो मिच्छामि दुक्कडं दीधो नहि तेथी मारे ए ऋध्यादिक प्रत्यक्ष फलउदय आव्युं जे भणी चारित्र धर्मनो मार्ग हुं जाणुं छुं अने ए धर्मनां फल जाणुं छुं, पण ए कामभोगने विषे मुर्छित थयो थको ए चारीत्रधर्महुं अंगीकार करी शकतो नथी. ॥ २९ ॥

अर्थः—ना० हाथी ज० जेम पं० कादवेकरि सहित ज० जलने विषे पाणीने विषे अ० पूलोथको ।

द० देखीने थ० थलने न० न अ० पामे बी० कांठाने ॥ ए० एहवि

आपणे वे हता अने ए जानिने विषे आपणे सर्व लोकने द्वेषकारी निंदनीकने अपीतिना करणहार एवा चंडा-ळना घरने विषे वसेल्या हता. ॥ १८ ॥

अर्थः-नी० ते प० पुरुषे जा० जानिने विषे उ० पुनः पा० पापकरणीने विषे पु० करता गु० आ-पण बे सो० चंडालना नि० घरने विषे । स० सर्व लो० लोकने दु० निंदनीक हता । इ० आ भवने विषे पु० पुरुषे रीपी पापि छते फ० शुभ कर्म पु० पुर्व भवने विषे फ० कीधा हता ते थकी संचय पाम्यो छे ॥१९॥

मूलः-तीसे य जाईइ उ पावियाए वुन्छामु सोवागनिवेसणेसु ।
सव्वस्स लोगस्स दुगंछणिज्जा इहं तु कम्माइ पुरे कडाइं ॥ १९ ॥

गाथा १९ भावार्थः-ते पापनी करणहारी एवी चंडालनी जाति पाम्या थका ने चंडालना घरमां रह्या थका सर्व लोकोने निंदनीक हता, अने हवे आ भवने विषे उत्पन्नाति ऋद्धि पाम्याथी पूर्व भवने विषे शुभकर्म करेल्या तेनोज प्रताप छे. ॥ १९ ॥

अर्थः-सो० ते संभूतनो जीव इ० इहां अ० हुं रा० हे राजन म० मोटा प्रभावपनो धणी म० मोटी ऋद्धिनो धणी पु० पुन्यना फ० फल उ० सहित छे । इ० छांदिने भो० भोगने अ० असाश्वताने आ० चारित्र लेवाने इ० इच्छुए अ० निकल्यो हे राजन संसारथी ॥ २० ॥

मूलः-सो दाणि सिं राय महाणुभागो महिड्ढिओ पुण्णफलोववेओ ।
चइत्तु भोगाइ असासयाइं आदाणहेउं अभिणिक्खमाहि ॥ २० ॥

करणीने क० कर । रा० हेराजन् ॥ ध० गृहवासे रहेछेते धर्मने विषे ठि० रखावका स० सर्व प० जीवने कं० दयानो पालणहार थाय । नो० ते आर्यकरणी तेमाटे हो० थाइस्य दे० देवता इ० एमनुष्य नाभव थशे वि० विक्रय-सरिरनो करणहार देव ॥ ३२ ॥

मूलः—जइ तं सि भोगे चइउं असत्तो अज्जाइ कम्माइ करेहि रायं ।
धम्मे ठिओ सवपयाणुकम्पी तो होहिसि देवो इओ विउवी ॥ ३२ ॥

गाथा ३२ भावार्थ—अहो राजन् ? जोतुं भोग छांडवाने समर्थ नहि तो तुं जीव दयादिक आर्य कर्म कर ? जो ग्रहस्थावासने विषेरहीने सर्व जीव दयादिक ग्रहस्थ धर्म करीश ? तोपण मनुष्यना शरीरथी वैक्रेय शरीरनो धणी एवो देवता थइश ॥ ३२ ॥

अर्थः—न० नहि तु० तुजने भो०भोगने च० छांडवानी बु० बुद्धी । गि० तुगृद्ध अ० छे आ० आरंभ अने । प० परिग्रहने विषे मो० निफल फोगट क० कीधो ए० एतलो वि० वचननो विलाप ग० प्रवत्योछुं हुं सज्झाय ध्याननने विषे ॥ रा० हेराजन् आ० जिनमार्ग आमंत्रीओ असि० छे एहवो हुं छुं ॥ ३३ ॥

मूलः—न तुज्झ भोगे चइऊण बुद्धी गिद्धो सि आरम्भपरिग्गहेसु ।
मोहं कओ एत्तिउ विप्पलावो गच्छामिरायं आमन्तिओ सि ॥ ३३ ॥

गाथा ३३ भावार्थ—जेवारे राजा प्रतिबोध न पाम्यो तेवारे मुनि कहेताहवा हे राजा ? भोग छांड-

मूलः—जहेह सीहो व मियं गहाय मच्चू नरं नेइ हु अन्तकाले ।
न तस्स माया व पिया व भाया कालम्मि तम्मंसहरा भवंति ॥ २२ ॥

गाथा २२ भावार्थः—जेमांसंद मृगने लइ जाय तेम काळ मनुष्यने अंतसमे लइ जाए तेवारे तेने माता-पिता अथवा भाइ पोताना आयुष्यनो भाग देने तेने जीवतो राखी शके नहिं ॥ २२ ॥

अर्थः—न० नहि त० तेहना दु० दुखने वि० वेहची लेय नहि ना० नाखिया । न० न मि० मित्र व० वस्त्र वेहची न लीए. सु० बेटा वेहची न० न लीए व० भाइ न० न लेय वेहची ए० एकलो स० पोतेज प० भोगवे दु० दुखने । क० कर्मनो करणहार ए० अनेज अ० कहे जाय फ० कर्म ॥ २१ ॥

मूलः—न तस्स दुक्खं विभयन्तिनाइओ न मित्तवग्गा न सुयानबंधवा ।
एक्को सयं पच्चणुहोइ दुक्खं कत्तारमेव अणुजाइ कम्मं ॥ २३ ॥

गाथा २३ भावार्थः—वली परलोके गया थका तेनुं दुःखनानिया मित्र बेटा तथा भाइ बहेंची न लीए अने कर्मनो करणहार तेनेज पाछळ कर्म जाय, ने त्यां एकलो पोतेज दुःख भोगवे. ॥ २३ ॥

अर्थः—जे० छांडिने दु० मनुष्यने च० वळी च० पशु प्रमुखने च० वळी । खे० उपाडी भूमिकाने वि० परने ध० धनने ध० धान्य साथी प्रमुखने च० वळी स० सर्व पदार्थने छांडीने । सा० पोताना कर्म अने आत्मा बी० बीजा लें जेहने एकलो थको अ० कर्मवशे परवश प० जीवने । प० पर भ० भव प्रते गं० स्वर्गादिक प्रते पा० अथवा पा० नरकादिक प्रतें ॥ २४ ॥

देखता ग० गाता व० वचनने मू० सांभले। मा० म का० करीने क० कर्मने प० पोता मांस भक्षणादिक ॥ २६ ॥

मूलः—उवगिज्जई जीवियमणमायं वणं जग हरइ नरस्स रायं।
पक्खिगणा वयणं सुणाहि मा कुणि कुम्माइ महालयाइं ॥ २६ ॥

गाथा २६ भावार्थः—हे गलन ? आ आयुष्य निरंतर क्षय थाय छे ने आरीनी मरणे निरंतर मरे छे अने यद्यपना वर्णादिकने जग (वृद्धावस्था) हरण करे छे, तेथी एवां वचन सांभळीने अहो ! पंखाळ देखता गला ! तारा आत्मा जेवीभयंकरणादिक रौद्र (भयंकर) मुंडा कृत्य तुं न कर ! ! ! ॥ २६ ॥

अर्थः—हवे गाता कहे छे अ० हुं अ० पण जा० जाणुंछुं तेमहिज ज० जेम ए० एजगमांहि सा० हे साधु जे० जे वे० मुखने मू० मुखो मा० कहोछे व० वचनने ए० ए पूर्वोक्त वचनने पण। भो० भोगा० ए मे० प्रतिबंधना करनार ह० होयछे ते० तेभोग दु० छांडवा दोहिला अ० हे भदंत अ० अमारिया आ० कायाने ॥ २७॥

मूलः—अहं पि जाणामि जहेह साहू जं मे तुमं साहसि वक्कमेयं।
भोगा इमे सङ्गकरा हवन्ति जे दुज्जया अज्जो अम्हारिसेहिं॥ २७ ॥

गाथा २७ भावार्थः—तेवारे गाता कहेतो हतो अहो साधु ! जे मने तमे कहोछो ने उपदेश दियो छो ते हुं पणजाणुंछुं ! अहोआर्य! ए भोग सुखने प्रतिबंधनुं कारण छे ने पण पोतानी अशक्तपणे ए भोग छांडवा दोहिला छे, ॥ २७ ॥

अर्थः—पुनः मयंकरेण ह० हर्षनाकरनार सिं सिं० सिंहनीपरे दु० दोहिलेनं० अलंकारे न० नरनायकी

इच्छता । न० नहि भि० साधुना म० मार्गेण भ० पार्श्वगुणार्थी ॥ ३० ॥

मूलः—नागो जहा पङ्कजलावसन्नो दट्ठुं थलं नाभिसमेइ तीरं ।

एवं वयं कामगुणेसु गिद्धा न भिक्खुणो मग्गमणुव्वयामो ॥ ३० ॥

गाथा ३० भावार्थः—जेम हाथी पाणी भने कादवमांही गुंच्यो थको किनारानने देखे पण नीकळी शके नहि तेम हुं कामभोगने विषे लुब्ध थयो थकीनो मार्ग आदरी शकतो नथी. ॥ ३० ॥

अर्थः—इत्येवं रूपि करिने अ० अमेरे उत्तमलो मायरे लोग का० आउषा रुपकाल तू० शिघ्रनाशरे रा० रात्रिदिन न० नहि व० थकीउ० पण भो० भोग पु० पुरुषने नि० नित्य गहाय गिरहे पुरुषना अविवाकविना इ० आकर्षीए भो० भोग जे ने पु० पुरुषने च० तजे कोनीपरे लोग जेम । खी० रहित । दु० इलनी परे फ० फलरहित वृक्षने व० वळी प० पंखी ज० जेमतजेतेम ॥ ३१ ॥

मूलः—अंवइ कालो तरन्ति राइओ न यावि भोगा पुरिसाण निच्चा ।

उविच्च भोगा पुरिसं चयन्ति दुमं जहा खीणफलं व पक्खी ॥ ३१ ॥

गाथा ३१ भावार्थ—तेथारे चित्तमुनि कहेताहवा के राजन ! रात्री दिवस उत्तमता जतांथी आयुष्य क्षीण क्षीण थतुंजे ने भोगपण मनुष्ये साथेनथी अने जेम फळ रहित वृक्षने पंखी तजे तेम पुरुषने काम भोग तजीने जायछे. ॥ ३१ ॥

अर्थः—न० नोर्ड० नु व० छे । भो० भोगने । प० आंहताने अ० अमयनो । अ० आर्ष क० कर्मनी

॥१३०॥

पास आज्ञा मागीये छीये. ॥ ७ ॥

अर्थः-अ० हवे ता० पिता त० ते अवसरने विषे ते० ते मु० भावमुनिना । त० तपने वा० व्याघातकारी शास्त्र वचनने व० बोलतो हूओ ॥ इ० एहवी व० वाणीने वे० वेदना वि० जाण व० कहे छे । ज० जेम न० न हो० होय अ० अपुत्रीयाने लो० परलोक ॥ ८ ॥

मूलः-अह तायगो तत्थ मुणीण तेसिं तवस्स वाघायकरं वयासी।

इमं वयं वेयविओ वयन्ति जहा न होई असुयाण लोगो ॥ ८ ॥

गाथा ८ भावार्थः-हवे ते पिता भावचारित्रीयाना तपने विघ्नकारी वचन बोलतो हवो, अहो कुंवरो ! आपणा वेदधर्ममां कहुं छे के (श्लोक) अपुत्रस्यगतिर्नास्ति, स्वर्गोनैवच नैवच तस्मात् पुत्र मुखंद्रष्ट्वा, पश्चाद्धर्मं समाचरेत् (इतिवेदवाक्यम्) अर्थ०अपुत्रीयाने स्वर्गनी गति नथी, तेथी हे पुत्र ! तमे पुत्रनुं मुख जोइने पछी धर्मसमाचरो. ॥ ८ ॥

अर्थः-अ० भणीने वे० वेदने प० जमाडीने वि० ब्राह्मणने ॥ पु० पुत्रने प० थापीने गि० घरने विषे । जा० हे पुत्र । भो० भोगवीने भो० भोगने इ० स्त्री स० संघाते पछे । आ० अटवीना वासी हो० होज्यो । मु० मुनी प० प्रशस्त भला ॥ ९ ॥

मूलः-अहिज्ज वेए परिविस्स विप्पे पुत्ते परिट्ठप्प गिहंमि जाया ।

काया (अर्थात् तेने म [illegible]
एम राजाने पुत्रोने मुनिराया. ॥ ३३ ॥

अर्थः-पं० पंचाल्देशनो रा० राजा वि० पूर्णे य० यत्नी व० ब्रह्मदत्त ॥ सा० साधु म० ने जिनो व० वचनने अ० अणकरीने । अ० अतिमोटा भुं० भोगवीने । का० कामभोगने । अ० मोटागो० ते राजा न० नरकने विषे प० सातापेद उपनो ॥ ३४ ॥

मूलः-पञ्चालराया वि य बम्भदत्तो साहुस्स तस्स वयणं अकाउं ।
अणुत्तरे भुञ्जिय कामभोगे अणुत्तरे सो नरए पविट्ठो ॥ ३४ ॥

गाथा ३४ भावार्थ—ब्रह्मदत्त चक्रवर्ति पंचाल देशनो राजा साधुनुं वचन अणकरीने उत्कृष्टा काम भोगवीने सातसे ने सोलवर्षनुं आयुष्य भोगवीने उत्कृष्टा सातमी नरकना पांचमा अप्रइठाणा नरका वासाने विषे उत्कृष्टी तेत्रीस सागरोपमनी स्थितिए नारकीपणे उपन्यो. ॥ ३४ ॥

अर्थः-चि० चित्त वि० पण का० कामथी वि० निवर्तवानो का० अभिप्रायी उ० प्रधान चा० चारि० वरंत त० तपवंत म० मोटाऋषी अ० प्रधान सं० संजमने पा० पालीने अ० प्रधान सि० सिद्धि ग० गतिमनेग० पहुतो सि० एम बे० हुं कहुंछुं ॥ ३५ ॥

मूलः-चित्तो वि कामेहि विरत्तकामो उदग्गचारित्ततवो महेसी ।
अणुत्तरं संजम पालइत्ता अणुत्तरं सिद्धिगइं गओ ॥ ३५ ॥ त्ति बेमि ॥

॥ इति चित्तसम्भूतं अध्ययनं समत्तं ॥ १३ ॥

मूलः—पुरोहियं तं कमसो ऽणुणन्तं निमंतयन्तं च सुए धणेणं ।
जहक्कमं कामगुणेहि चेव कुमारगा ते पसमिक्ख वक्कं ॥ ११ ॥

गाथा ११ भावार्थः—वे पुत्रने धने करी कामभोगना गुणादिक संसारी सुखने आमंत्रतो थको एवा पुरोहित प्रत्ये बंने कुंवारो विचारीने बोलता हवा. ॥ ११ ॥

अर्थः—ए बे काव्य युग्म । वे० वेद अ० भण्या थका । न० न भ० होय ता० त्राण रक्षाना करणहार । नरकने विषे उपजे जा० जन्मेला य० वली पु० वेटा न० न ह० होय ता० त्राण । को० कोण णा० संभावनाये । ते० तादृशं अ० माने ए० ए पूर्वोक्त वचनने ॥ १२ ॥

मूलः—वेया अहीया न भवन्ति ताणं भुत्ता दिया निन्ति तमं तमेणं ।
जाया य पुत्ता न हवन्ति ताणं को णाम ते अणुमन्नेज्ज एयं ॥ १२ ॥

गाथा १२ भावार्थ—अहो पिताजी ! वेद भण्या थका जीवने, त्राणसरण नहि अने ब्राह्मणने धर्मबुद्धिए जमाडवाथी जीवने मिथ्यात्वनी प्राप्ति थाय अने पुत्र जन्म्याथका शरण न थाय तेमज ते नर्कादिक गतिए पडता जीवने राखी न शके, तो हे तात ! ए तमारूं वचन अज्ञानी माने. ॥ १२ ॥

अर्थः—हे तात भोग केहवा छे स्व० क्षण मे० मात्र सो० सुख छे [illegible] ० घणा का० काल दु० दुःख छे

संसारना भ० भयथकी ज० भोगने छोडिने । जि० जिनकरना म० मार्गना [illegible]

मूलः—सकम्मसेसेण पुराकएणं कुलेसुदग्गेसु य ते पसूया ।
निव्विण संसारभया जहाय जिणिंदमग्गं सरणं पवन्ना ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः—पूर्व भवना करेल शुभकर्म भोगवतां जेप रही गयेल तेथी ऊत्तम ब्राह्मणना कुळने विषे बे पुत्रपणे ऊपन्या अने संसारना भयथकी उद्वेग पाम्या ने भोग छोडीने जिनकरनो ऊपदेशलो एवा मोक्षमार्गनुं शरण ग्रहण कर्युं ? ॥ २ ॥

अर्थः—पु० पुरुषपणाने । आ० पाम्या दु० कुमार बे० बे ऽ० पण । पु० पुरोहित ने राजानो गुरु त्रिजो त० ते पुरोहितनी ज० जसा ए हवे नामे य० यशी प० भार्यानो चोथो जीव । वि० विस्तीर्ण थयो कि० कीर्ति छे य० जेहनी त० तेमज उ० इषुकार नामा रा० राजा पांचमो । इ० अत्र भर भा भरते विषे दे० प्रधान खीवडेरी क० कमलावती उठो जीव । य० पुरुष ॥ १ ॥

मूलः—पुमत्तमागम्म कुमार दो वी पुरोहिओ तस्स जसा य पत्ती ।
विसालकित्ती य तहेसुयारो रायत्थ देवी कमलावई य ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः—बे ब्राह्मणना पुत्र अने त्रिजो भृगु पुरोहितने चोथी तेनी यशा, ए चार ब्राह्मणना कुळने विषे ऊपन्या अने विस्तीर्ण जेनी कीर्त्ति एवो पांचमो इषुकार राजाने उठी तेनी पटराणी कमळावती ए ये क्षत्रीकुळने विषे ऊपन्या ! ए प्रमाणे छ ए जीव इषुकार नगरीमां पूर्व पुन्योदयथी एकठा थयाछे ॥३॥

आसक्तथको छक्काय जीवनी घात करीने धनने गवेषतो पुरुष जरा मृत्युने पामे छे. ॥ १४ ॥

अर्थः-इ० ए माणकादिक च० वली मे० माहरे अ० छे । इ० ए माणकादिक च० वली मे० माहरा न० नथी । इ० ए घरादिक च० वली मे० माहरा कि० करवा जोग्य छे इ० ए व्यापारादिक अ० करवा जोग्य नथी । तं० ते पुरुषने ए० एम ला० अति लाल पाल घणो बोलनो धको एहवा पुरुषने । ह० दिन रात्रि रुपिया चोर ह० हरे छे मरण पमाडे छे ते माटे । इ० एम क० केम प्र० प्रमाद धर्म करवाने विषे योग्य ॥ १५ ॥

अध्य० ॥ १४ ॥

मूलः—इमं च मे अत्थि इमं च नत्थि इमं च मे किच्च इमं अकिच्चं ।
तं एवमेवं लालप्पमाणं हरा हरंति त्ति कहं पमाए ॥ १५ ॥

गाथा १५ भावार्थ-ए सुवर्णादिक मारे छे, अने ए रत्नादिक मारे नथी, एघरादिक कीधो छे ने ए व्यापादिक नथी कर्यो, एवा पुरुषने एम लाल्य पाल्य करताने रात्रिदिवस रुपी चोर आयुष्यने हरीने परलोके लइ जाय छे. एम जाणीने शुं, ! धर्मने विषे प्रमाद करवो ? ॥ १५ ॥

अर्थः-हवे पुरोहित बोल्यो ध० सुवर्णादिक धन प० घणो छे आपणे । स० सहित इ० स्त्रीए करी । त० तेम म० मनजन का० कामभोगना गुण प० घणा छे । लोगो० लोक जस्स० जे धनने क० निमित्ते । तवं० तपने तप्पइ० तप करे छे ॥ तं० ते धन स० सर्व सा० वसी छे इ० ए घरने विषे ए० निश्चे तु० तुम्हारे ॥ १६ ॥

मूलः—धणं पभूयं सह इत्थियाहिं सयणा तहा कामगुणा पगामा ।

ते पुरोहितने पण पुत्र पलाल विषे छे, अने ते बंने पुत्रने जाण
विषे जे तप संयमादिक निर्याणा रहित कर्यो हतो ते सर्व संभार्यो छे. ॥ ५ ॥

अर्थः-जे० ते बे कुमार या० कामभोग मनुष्य संबंधीया जे० जे या० वली पण दि० देव संबंधीया
का० कामभोगने विषे । अगद्ध० अमानवान थका । मो० मोक्षनी अ० अभिलाषी अ० उपनी छे तत्व ज्ञानने
विषे ग० रचि जेहने एहवा बे कुमार ना० वापनी सर्भाये उ० आवीने इ० । एम उ० बोलता हवा ॥ ६ ॥

मूलः-ते कामभोगेसु अगद्धमाणा मागुस्सएसुं जे यावि दिव्वा ।
मोक्खाभिकंखी अभिजायसड्ढा तायं उवागम्म इमं उदाहु ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः-ते बंने कुंवर देव मनुष्यने तिर्यंच संबंधी कामभोगने विषे, अनादर करतायका
करनी अश उपजवाथी मोक्षना अभिलाषी थइ पितानी सर्भाये आवीने एम कहेवा लाग्या. ॥ ६ ॥

अर्थः-अ० अमाइस्सो ह० देवीने इ० ए प्रत्यक्ष दि० मनुष्यपणे रहितो जे भणी व० गणो छे अ०
अंतराय विघ्नादि जेहने विषे न० नहि ग० वली दी० गणो आ० आउखो । त० ते माटे गि० घरने विषे
न० न र० रहीने न० न ज्ञा० अर्थ पामुं । आ० पुत्राए स्त्रीए च० अंगीकार करवुं मो० चारित्रने ॥ ७ ॥

मूल-अमामयं कट्टु इमं विहारं बहुअन्तरायं न य दीहमाउं ।
तम्हा गिहंसि न रइं लभामो आमन्तयामो चरिस्सामु मोणं ॥ ७ ॥

गाथा ७ भावार्थः-हे पिता ! आ मनुष्यजन्म अशाश्वतो छे ने तेनी अंदर पण घणा रोगादिकनी

सरिरने विषे स० जीव । सं० अछतो नयो उपजे । ना० रहे नहि ना० शरीर विणसे तेवारे रहे नहि ॥१८॥

॥१३३॥

मूलः—जहा य अग्गी अरणी असन्तो खीरे घयं तेल्लमहा तिलेसु।
एमेव ताया सरीरंसि सत्ता संमुच्छई नासइ नावचिट्ठे ॥ १८ ॥

॥ १४ ॥

गाथा १८ भावार्थ—हवे पितापरलोकनी नास्ती रुप वचन कहेतो हवो. हे पुत्र ? जेम अरणी मांही अछती अग्नि उपजे छे, दूधने विषे जेम घी अछतुं उपजे छे, वळी तलने विषे जेम तेल अछतुं उपजे छे, तेमज स्त्री पुरुषना संयोगे पांच भुत मळी अछतो जीव शरीरने विषे उपजे छे अने ते शरीरनो विनाश थाय त्यारे जीवनो पण विनाश थाय छे. ॥ १८ ॥

अर्थः—हवे कुमार बोल्या नो० नथी इ० इंद्री गो० ग्रहवा जोग्य आत्मा अ० अरुपपणा माटे अ० अरुपपणा माटे वि० निश्चे य० जे भणी हो० होय नि० नित्य सदा आत्मा ते माटे खोटो सदहवो ते निय० निश्चे अस्स० ए जीवने बंधो० कर्म बंधक छे, बंध केहवो छे अज्झ० मिथ्यात्व छे हे० हेतु कारण जेहनो एहवो बंध होय च० वळी तिर्यंकर बंध० बंधन सं० संसार मांहि परिभ्रमण करवानो हे० हेतु कारणने व० कहे ॥ १९ ॥

मूलः—नो इन्दियग्गेज्झ अमुत्तभावा अमुत्तभावा वि य होइ निच्चो।
अज्झत्थहेउं नियअस्स बन्धो संसारहेउं च वयन्ति बन्धं ॥ १९ ॥

गाथा १९ भावार्थ—हवे पुत्र कहेता हवा ? हे पिताजी! जीव आत्मा अरुपी होवाथी इंद्रीयोए करी

भोगाग भोग सहइत्थियाहिं आरण्णगा होह मुणी पसत्था ॥ ९ ॥

गाथा ९ भावार्थः—माटे हे पुत्र ! वेद भणीने ब्राह्मणो जमाडीने घरने विषे पुत्रने स्थापीने भने स्त्री संघाते भोग भोगवीने तेवार पछी अटवी मांही तपधारी भला मुनी थजो. ॥ ९ ॥

अर्थः—सो० सोकरण अ० अग्नीए करी आ० आत्माना गुण जे रागादिक रूप इ० इंधणे करी मो० मोहरूप जे अ० वायरो तेह थकी पं० अतिशय अधिक ते प्रज्वल्यो जेहने तेणे करी एहवे बोले करी ॥ सं० अतिशय तपी रह्यो छे । भा० अंतःकरण जेहनो एहवा पिता प्रते कुमार बोलता हवा ए संबंध—कहवा पिता प्रते प० सर्वथा प्रकारे त० तरिने विषे बलतो थको ॥ ल्या० अतिशे दिन वचन बोलतो थको प० घणे प्रकारे ब० घणो बोलतो जेम होय तेम च० वली ॥ १० ॥

मूलः—सोयग्गिणा आयगुणिन्धणेणं मोहाणिला पज्जलणाहिएणं ।
संतत्तभावं परितप्पमाणं लालप्पमाणं बहुहा बहुं च ॥ १० ॥

गाथा १० भावार्थः—हवे ते भृगु पुरोहित आत्माना रागादिक गुणरूप इंधणने (लाकडाने) विषे मोहरूप पवने करी पुत्रना वियोगरूप शोकनी अग्नि घणी प्रदीप्त कर्याथी अंतःकरण सर्वथा प्रकारे बलतोथको अतिदीन वचन बोलतो हवो अने मोहनी कर्मने लीधे विलविलाट करतो हवो. ॥ १० ॥

अर्थः—पु० पुरोहित तं० ते क० अनुक्रमे सो० अ० कहेतो थको संसारिक पुत्रने । नि० आमंत्रतो थको च० वली पु० ते पुत्रने प० घनेकरी ज० जथा क्र० अनुक्रमे का० कामभोगने गुणकरी आमंत्रतो थको च०

गाथा २१ भावार्थः–सर्व लोक पीडाते थके सर्व दीशाने विषे वींटाय छे ने अतितीक्ष्ण शस्त्रनी धारा पडते थके अमे घरने विषे रती (खुशी) नथी पामता. ॥ २१ ॥

अर्थः–हवे पूरोहित पुछे छे के० कोणे अ० हण्यो पीडयो लो० लोक। के० कोणे वा० वली प० वींटयो लोक। का० कोण वा० वली अ० अभुली बाणनी श्रेणी चु० कहि जा० हे पुत्र चिं० चिंता करुंछुं हुं ते माटे हु० निश्चे मे० मुज प्रते ए विचार कहो ॥ २२ ॥

मूलः–केण अब्भाहओ लोगो केण वा परिवारिओ ।
का वा अमोहा वुत्ता जाया चिंतावरो हुमे ॥ २२ ॥

गाथा २२ भावार्थः–हवे पिता कहेतो हवो ? हे पुत्र ? कोणे लोक पीडयो छे, कोणे लोक वींटयो छे, कोण तीक्ष्ण शस्त्रनी धारा कही हे पुत्र हुं चिंतातुर छुं माटे मने कहो. ॥ २२ ॥

अर्थः–हवे कुमार कहे छे म० मरणे अ० हण्यो पीडयो लो० लोक। ज० जराए प० अतिशे वा० वींटयो लोक ॥ अ० अभूल बाणनी श्रेणी र० दिन रात्री चु० कही ॥ ए० एम ता० हे तात वि० जाणो ॥ २३ ॥

मूलः–मच्चुणा ऽब्भाहओ लोगो जराए परिवारिओ ।
अमोहा रयणी वुत्ता एवं ताय विजाणह ॥ २३ ॥

गाथा २३ भावार्थः–तेवारे पुत्र कहेता हवा ! हे पिताजी ! ए लोक मरणे पीडयो छे अने जरा (वृद्धावस्था) ए वींटयो छे. रात्रिदिवस तीक्ष्ण शस्त्रनीधारा छे के जे आयुष्यने कापे छे, एम हे तात ? तमे जाणो ? ॥ २३ ॥

जेह थकी। प० अतिशे दु० दुख छे जेह थकी। अ० नथी पगा सो० सुख जेहं थकी। सं० संसार थकी मो० मोक्षना पोहोचणहारने वि० शत्रु भू० समान्य। खा० खाण अ० अनर्थनी उ० एगज का० काम भो० भोग॥१३॥

मूलः—खणमेत्तसोक्खा बहुकालदुक्खा पगामदुक्खा अनिगामसोक्खा।
संसारमोक्खस्स विपक्खभूया खाणी अणत्थाण उ कामभोगा॥ १३॥

गाथा १३ भावार्थः—हे पिताजी! ए कामभोग केवा छे, जेमां क्षणमात्रनुं सुख ने घणाकाळनुं दुःख छे, तेवी घणुं दुःख पण सुख नथी.! अने ए कामभोग जीवने मुक्तिये नहि जता देवाथी, मोक्षमार्गना शत्रु छे, अने कामभोग एकांत अनर्थनी खाण छे. ॥ १३ ॥

अर्थः—संसारना सुख पामवाने अर्थे। प० अहो परहो फरे अ० नथी निवर्त्यो का० कामभोगथी जे। अ० दिवस प० वली रा० रात्री एटले दिवस रात्रि अनेरा स्वजनादिकने विषे। प० दुसे अति दाझतो थको। अ० अनेरा स्वजनादिकने विषे प० अतिशे आसक्त थतो ध० धनने। प० गवेषतां थको। प० पामे म० मरणने पु० पुरुष पूर्व कर्यो ने ज० जराने पामे ब० वली॥१४॥

मूलः—परिवयन्ते अनियत्तकामे अहो य राओ परितप्पमाणे।
अन्नप्पमत्ते धणमेसमाणे पप्पोत्ति मच्चुं पुरिसे जरं च॥ १४॥

गाथा १४ भावार्थः—विषय सुखना त्यागने अर्थे आयापाछा भमनाथका कामभोगथी अणनिवर्त्तिने दिवसने विषे विषय अणरागथी चिंतान्यो अनिष्ट करी बळनाथका अनेरा स्वजनादिकने विषे

मूलः—एगओ संवसित्ताणं दुहओ सम्मत्तसंजुया ।
पच्छा जाया गमिस्सामो भिक्खमाणा कुले कुले ॥ २६ ॥

गाथा २६ भावार्थः—तेवारे पिता कहेतो हवो ! हे पुत्रो ! तमे अमे बेहु सम्यकत्व देशव्रत्ति सहित एक गृहस्थावासना स्थानकने विषे वशीने पछी वृद्धावस्थाए संयम लइ निर्दोष आहार घरघरने विषे याचता थका विचरशुं ॥२६॥

अर्थः—हवे कुमार उत्तर कहे छे ज० जेहने अ० छे म० मरण संघाते स० मैत्रि प्रिती ज० जेहने अ० छे प० नासवानी शक्ति जो० जे कोइ जा० जाणे न० नहीं म० हुं मरिस्य सो० ते पुरुष हु० निश्चे कं० वांछे सु० आगले दिन सि० होय धर्म ॥ २७ ॥

मूलः—जस्सत्थि मच्चुणा सक्खं जस्स अत्थि पलायणं ।
जो जाणइ न मरिस्सामि सो हु कंखे सुए सिया ॥ २७ ॥

गाथा २७ भावार्थः—तेवारे पुत्रो कहेता हवा हे पिताजी जेने मृत्यु संघाते प्रीति होय ? ने जेने मृत्युथी नाशवानी शक्ति होय ! तेमज हुं नहि मरुं ! एम जे कोइ जाणतो होय ? तेज आगले काले धर्म करीश, ! एम इच्छे ?॥२७॥

अर्थः—ते माटे हे तात अ० आजज ध० चारित्र धर्मने प० अंगीकार करस्युं ज० अर्थात ज० जे धर्मने प० पडिवज्यां थका न० नहि । पु० वली भ० अवतरु भवांतरने विषे भमवो ॥ अ० अण पाम्यु ए० जिने ग० वली न० अ० नथी कि० योद्दए संसारि सुख रखो अनंतवार पाम्यो ते माटे धर्म करवानी स०

गाथा १६ भावार्थ–तेवारे पिता कहेतो हवो ! धन मधु छ, स्त्री पणछे, वांचन मधुरा पणा छे, तेमज मनोहर काम भोगना गुण शब्दादिक पण घणा छे, के जेने माटे लोक तप करेछे, ते सर्व संसारनो सुख तमारे वश (पासे) छे. ॥ १६ ॥

अर्थः–इवे-ते कुमार बोल्या प० धनेकरी किं० शुं थाय प० धर्मनो धु० भार उठाववाना अ० अधिकारे विषे न थाय धने । स० स्वजने करी शुं थाय वा० अथवा का० काम गुणे करी शुं थाय च० पुरुषे ए० अवधारणे । तम० ते माटे साधु भ० होशुं गु० गुणना उ० समोहना धा० धरणहार । व० लोकोत्तर वि० विहार छे तेहनो एहवा साधु होशुं अ० अंगीकार करीने भि० निर्दोष भिक्षाने ॥ १७ ॥

मूलः–धणेण किं धम्मधुगहिगारे सयणेण वा कामगुणेहि चेव ।
समणा भविस्सामु गुणोहधारी बहिंविहारा अभिगम्म भिक्खं ॥ १७ ॥

गाथा १७ भावार्थ–तेवारे पुत्र कहेता हवा, हे पिताश्री ! जेम बळदनी खांधउपर पुंगळ मूक्युं होय, ते भारनो निर्वाह करे, तेम धर्म रूपीयो भार निर्वाह करवाथी धर्म धुरी करीये एवा धर्म धुराने स्वजन वा० करनार गुणोना समूहना धरणहार एवा अमे साधु थइशुं ॥ १७ ॥

अर्थः–पुरोहित बोल्यो ज० जेम य० निर्द्धार अ० अग्नी अ० अरणीथकी अ० अग्नी मध्ये उपजे ॥ खी० दुधने विषे य० घी जेम ते० तेम जेम अ० अथ हवे नि० तिलने विषे । ए० एमज ना० हे पुत्र स०

अर्थः–पं० पांखे करी वि० रहित व० समुचय ज० जेम ए० ए लोकने विषे। पं० पंखी शोभे नहि। भि० सेवके करी वि० रहित व० जेम र० संग्रामने विषे न० राजा शोभे नहि। वि० विणठो गयो सा० धन जेहनो एहवो व० वाणीओ व० जेम पो० वाहाणने विषे शोभे नहि ॥ प० रहित पु० पुत्र अ० छुं त० तेम अ० हुं अ० पण ते माटे शोभुं नहि ॥ ३० ॥

मूलः–पंखाविहूणो व जहेव पक्खी भिच्चविहीणो व रणे नरिन्दो।
विवन्नसारो वणिओ व पोए पहीणपुत्तो मि तहा अहं पि ॥ ३० ॥

गाथा ३० भावार्थ–जेम पांख विनानो पंखी न शोभे तथा शोचे, संग्रामने विषे सेवक रहित राजा जेम न शोभे तथा शोचे, जेम धन गयेल एवो वाणीयो वहाणने विषे न शोभे तथा शोचे, तेम हुं पण पुत्र रहित न शोभुं तथा शोचुं छुं. ॥ ३० ॥

अर्थः–हवे भार्या बोली सु० भलीपरे। सं० भर्या छे का० कामभोगना गु० गुण शब्दादिक। इ० ए प्रत्यक्ष ते० तुम्हारे। सं० एकठा दगला कीधा छे अ० प्रधान र० रस छे जेहनां। प्र० घणा छे जेहने। भु० भोगवीये ता० ते भणी का० कामना गुणने प० अतिशे घणो होय तेम। प० पछे वृद्धा अवस्थाने विषे ग० अंगीकार करीस्युं। प० प्रधान म० मार्गने ॥ ३१ ॥

मूलः–सुसंभिया कामगुणा इमे ते संपिण्डिया अग्गरसप्पभूया।
[illegible] ॥ ३१ ॥

हेतु छे तेथी आत्मा कर्मथी बंधाय छे, आत्मा अरूपी ४, ५५ कम रूपीनी साथे बंधाय संसारने विषे परिभ्रमण करेछे. ॥ १९ ॥

अर्थः-न० जेम व० अम्हे ष० धर्मने अ० अजाणता थका ॥ पा० पापने पु० पूर्व क० कर्मने अ० करता हवा मो० अज्ञान थका । ओ० रोग्या थका प० अति रक्ता करता पालता थका ॥ हवे तं० ते पापकर्मने ने० नहि पु० वली ऽ० निश्चे स० समाचरूं नहि ॥ २० ॥

मूलः—जहा वयं धम्ममजाणमाणा पावं पुरा कम्ममकासिमोहा ।
ओरुब्भमाणा परिरक्खियन्ता तं नेव भुज्जो वि समायरामो ॥ २० ॥

गाथा २० भावार्थः-जेम अमे अजाणता थका भयने विषे रुंध्या, घरमांहीथी नीकळवुं अणपामता थका, मोह तथा अज्ञानपणाथी पूर्वभवने विषे पापकर्म कीधा ते पापकर्म हवे अमे नहि करीए. ॥ २० ॥

अर्थ-लो० लोकने विषे किं भूते लोके पुनः कथं भूते लोके एहवा लोकने विषे । अ० सम्मुख पीडा पाम्यो छे स० सर्व दिस विदिसने विषे ॥ प० अतिविटयो छे घेर्यो छे स्थानेकरी । अ० तीरादिकनी श्रेणी करी । प० उपरे पडती थकी तेणे करी तिरादिकनी श्रेणी केहवी छे अमो० अमुली छे ते माटे गि० परने विषे र० रतिने न० न ल० पामुं ॥ २१ ॥

मूलः—अब्भाहयंमि लोगंमि सव्वओ परिवारिए ।
अमोहाहिं पडन्तीहिं गिहंमि न रइं लभे ॥ २१ ॥

पलेन्ति पुत्ता य पई य मज्झं ते हं कहं नाणुगमिस्समेक्का ॥ ३६ ॥

गाथा ३६ ॥ भावार्थ–हवे ब्राहमणी कहेती हवी, जेम जाळ तोडीने आकशने विषे पंखी उडी जइ घणा देशने ओळंगता थका विचरे, तेम ए वे मारापुत्र, मारो भर्तार भोग रुपी जाळ छोडीने जायछे ? तो हुं पण तेनी साथे जइश. ? एकली रहीने शुंकरुं ? ॥ ३६ ॥

अर्थः–तं० ते पु० पुरोहितने प्रवर्ज्या लेता ने सो० सांभळीने दे० कमलावती च० ते रायं० इषुकार राजाने । अभिक्ख० वारंवार समुवाय० बोलती हवी कथं भूतं पुरोहितं समुयं० पुत्र सहित स० स्त्री सहित पुत्रना उपदेश सांभळीने घरथी अभिनि० निकळीने पहाय० त्यजीने भो० भोगने वली कुड० कुटंबने त्यजीने सारं० धनादिकने त्यजीने कुटंब अने धन केहेवुं छे विउलं० विस्तिर्ण उ० प्रधान छे एटला वाना छांडीने प्रवर्ज्या लीधी छे एहिजगाथानो अर्थ फेर कहे छे पुरोहि० पुरोहित तं० ते केहवा छे पुरोहित समुयं० पुत्र सहित सदार० स्त्री सहित । सोच्चा० सांभळीने अभिरानिक्ख० घरथी नीकळीने वली पहा० त्यजीने भोए० भोगने कुंटब० कुंटब । सारं० धनने विउलं० विस्तीर्ण उ० उत्तम प्रधान एटला वाना त्यजीने प्रवर्ज्या लीधी छे एहवा पुरोहितने सांभळीने च० ते रायं० इषुकार राजाने अभि० वारंवार समुवाय० बोलती हवी दे० कमलावती राणी ॥३७॥

मूलः–पुरोहियं तं ससुयं सदारं सोच्चा अभिनिक्खम्म पहाय भोए ।
कुडुम्बसारं विउलुत्तमं च रायं अभिक्खं समुवाय देवी ॥ ३७ ॥

गाथा ३७ भावार्थ–पछे राणीए पती सांभळीने विस्तीर्ण तथा प्रधान धनने त्यजीने भोगने छांडीने

अर्थः-जा० जे जा० ते व० जाय छे ॥ र० रात्रिदीन न० न आवे पा० ते रात्री प० पाछी वळी । अ० अधर्मने कु० करता जीवने भ० निष्फळ ज० जाय छे रा० रात्रि ॥ २४ ॥

मूलः-जा जा वच्चइ रयणी न सा पडिनियत्तई ।
अहम्मं कुणमाणस्स अफला जन्ति राइओ ॥ २४ ॥

गाथा २४ भावार्थः-जेम रात्रीदिवस जाय छे ते ते पाछी आवती नथी, पण गृहस्थना व्यापाररूप अधर्म करता ते रात्रिदिवस निष्फळ जाय छे. ॥ २४ ॥

अर्थ-जा० जे जा० ते व० जाय छे र० रात्री । न० आवे पा० ते रात्री प० पाछी वळी । ध० धर्म प० पुनः कु० करता जीवने । स० फलसहित ज० जाय छे रा० रात्रिओ ॥ २५ ॥

मूलः-जा जा वच्चइ रयणी न सा पडिनियत्तई ।
धम्मं च कुणमाणस्स सफला जन्ति राइओ ॥ २५ ॥

गाथा २५ भावार्थः-जेम रात्रीदिवस जाय छे, ते पाछी आवती नथी, पण धर्म करता ते रात्रिदिवस सफळ जाय छे. ॥ २५ ॥

अर्थः-हवे समज्यो पुरोहित बोल्यो । ए० एक थानकने विषे सं० वस्त्रोने पं० अलंकारे । क० करीने अम्हो आपण बे स० समहित सं० सहित थका । प० पछे जा० हे पुत्र ग० विचरशुं । संजमने विषे भि० निर्दोष भिक्षा करता थका कु० घरघर ॥ २६ ॥

अर्थः-म० मरिस्य रा० हे राजन । ज० जेवारे त० तेवारे वा० पूरणे म० मनोहर का० कामना गुणने प० छांडीने ए० एक हु० निश्चे ध० धर्म न० हे नरना दे० देव ता० त्राण आधार । न० नहि वि० थाय अ० अनेरो धनादिक इ० ए लोकने विषे ए० ए मरण आवे छते किं० कांइ त्राण सरण ॥ ४० ॥

मूलः-मरिहिसि रायं जया तया वा मणोरमे कामगुणे पहाय ।
एक्को हु धम्मो नरदेव ताणं न विज्जई अन्नमिहेह किंचि ॥ ४० ॥

गाथा ४० भावार्थ-हे राजा ज्यारे त्यारे पण ए मनोहर कामभोगने छांडिने तुं मरीश ? अने दुर्गतिये पडीश ? ते वखते हे नरदेव ! एक धर्म सिवाय बीजो कोइ धनादिक शरण नहि थाय ? ? ॥ ४० ॥

अर्थः-न० नथी अ० हुं र० रति पामती प० पंखिणी प० पंजरने विषे वा० जेम सं० स्नेहरुपी जाल छि० छेदी यही हुं च० अंगीकार करीस्य मो० चारित्रने कथंभूता ऽहं० अ० सुवर्णादि रहितछुं उ० मायारहित करणीना करणहार छुं नि० विषयादिक आमिष मांसरहित छुं प० परिग्रहने आ० आरंभ दो० दोष तेहथी नि० निवर्तु छुं ॥ ४१ ॥

मूलः-नाहं रमे पक्खिणि पंजरे वा संताडइत्ता चरिस्सामि मोणं ।
अकिंचणा उज्जुकडा निरामिसा परिग्गहारम्भ निवत्तदोसा ॥ ४१ ॥

गाथा ४१ भावार्थ-तेवारे राजा कहेता हवा के हुं आटलुं चारित्र जाणे छे तोए हुं राज्यने विषे केम रही

मूलः–अज्जेव धम्मं पडिवज्जयामो जहिं पवन्ना न पुणब्भवामो ।
अणागयं नेव य अत्थि किंची सद्धाखमं णे विणइत्तु रागं ॥ २८ ॥

गाथा २८ भावार्थः–जे धर्म अंगीकार करवाथी फरी भवांतरे आवे नहि ? एवो यतीधर्म आज अं-
गीकार करूं ! विषय सुख शुं ? नथी पाम्यो ! (अर्थांतर घणी वखत पाम्यो छे) माटे ए रागने छोडीने
धर्म करवानी श्रद्धा करवी एज युक्त छे. ॥ २८ ॥

अर्थः–हवे पुरोहित भार्या प्रते समजावे छे । पु० पुत्र प० रहित । मुनने हु० निश्चे न० नथी जुगतो
वा० वसवो ग्रहवासने विषे । वा० हे वासिष्ट गोत्रनी उपनी भि० गोचरीनो का० काल एटले चारित्र लेवानो
अवसर वर्ते छे सा० साखाये करी रु० वृक्ष ल० पामे स० समाधिने छि० छेदि सा० साखाये त० ते वृक्षने
ए० एम खा० ठुंठो कहिये साखा विना थडने छाया कोण करे ॥ २९ ॥

मूलः–पहीणपुत्तस्स हु नत्थि वासो वासिट्ठि भिक्खायरियाइ कालो ।
साहाहि रुक्खो लहई समाहिं छिन्नाहि साहाहि तमेव खाणुं ॥ २९ ॥

गाथा २९ भावार्थः–हवे पुरोहित पोतानी स्त्रीने कहेतो हवो ? हे वासीष्ट गोत्रनी धरणहारी ! मारेतो
हवे व्रतग्रहण करी भिक्षाचरि करवानो समय वर्त्ते छे, कारणके जेम शाखा प्रतिशाखाए करी [illegible] शोभे ने
समाधी पामे, पण शाखा छेदायाथी वृक्ष शोभा रहित खीला जेवुं ठुंठो देखाय तेम वे पुत्ररहित मुनने गृहस्थावासे
वसवुं युक्त नथी. ॥ २९ ॥

अर्थः–लघु पणे संजम लेवाय तो एम करी ते कहे छे। भो० भोगने भो० भोगवीने य० वली व० पछे छांडिने ल० लघु वायुनी भू० उपमाए अप्रतिबंधपणे वि० विचरे आ० हर्ष पामता थका सं० संजमने विषे प्रवर्ते ते पुरुष विवेकी नर केहनी परे। दि० पंखीनी इ० परे पंखी केहवा छे काम० पोतानी इछाये। क० प्रवर्तणहारा तेम आपणे थइए ॥ ४४ ॥

अध्य० ॥ १४ ॥

मूलः–भोगे भोच्चा वमित्ता य लहुभूय विहारिणो।
आमोयमाणा गच्छन्ति दिया कामकमा इव ॥ ४४ ॥

गाथा ४४ भावार्थ–भोगवेला भोगने छांडीने तथाविध अनुग्रहने विषे हर्ष पामता संयमने विषे प्रवर्तीने पंखी जेम पोतानी इच्छाये विचरे तेम साधु पण ग्रामादिकने विषे अप्रतिबंधपणे विहार करे. ॥४४॥

अर्थः–इ० ए शब्दादिक भोग य० वली व० अनेक प्रकारे ग्रही राख्या छे ते पण फंद० फंदे अथीर सभाव छे तेहनां ते अथीर कामभोग म० माहरा तुमारा ह० हाथ थकी अ० आज तथा हे आर्य आ० आव्या छे। व० आपणे च० पण स० आसक्त छइए का० कामभोगने विषे ते छांडिने भ० होइस्युं ज० जेम इ० ए पुरोहितादिक साधु थया तेम थइशुं ॥ ४५ ॥

मूलः–इमे य बद्धा फन्दन्ति मम हत्थज्जमागया।
वयं च सत्ता कामेसु अभिम्मामो जहा इमे ॥ ४५ ॥

गाथा ३१ भावार्थ-त्यारे पुरोहितनी स्त्री जशा कहेती हवी ? अहो स्वामी ? ए कामभोग सर्व खाटरे छे, एटला कालना उपन एला मधुर स्वादिक एण एणा छे, ते माटे आपणे ये कामभोग मनोहर शब्दादिक गुणोने भोगवीने पछी दृढावस्थाए आपण बन्ने उत्तम मार्ग अंगीकार करीशुं (दीक्षा लेशुं ?) ॥ ३१ ॥

अर्थः-हवे पुरोहित बोल्यो । भु० भोगव्या । का० भोगादिक रस । भो० हे भोगनी स्त्री ज० जन्मे छे० आपणने व० यौवन वय । न० नथी जी० हुं काय अमंजस जीवीतव्यने अर्थे प० न छांडतो भो० भोगने संजम पालवाने अर्थे छांडुं छुं ॥ ते माटे चरिस्सामि० अंगीकार करिशुं मो० चारित्रने करतो थको संसारादिकना दु० दुःखने अल्पाभ० अल्पाभने च० वली सु० सुखने च० वली दु० दुःखने संचि० समताएणे करी सरिखाने च० पुण्ये इत्यादि० देखतो थको गवेषतो थको रागद्वेष रहितपणा थकी ॥ ३२ ॥

मूलः-भुत्ता रसा भोइ जहाइ णे वओ न जीवियट्ठा पजहामि भोए ।
लाभं अलाभं च सुहं च दुक्खं संचिक्खमाणो चरिस्सामि मोणं ॥ ३२ ॥

गाथा ३२ भावार्थ-तेवारे पुरोहित कहेतो हवोके हे भद्रे ! भोग भोगव्या हता, ते यौवनवय जावशे, तेथी अमंजस जीवितव्यने अर्थे के परभव भोगादिकनी इच्छाये के पेट भराइने अर्थे ए भोग हुं छांडतो नथी, पण फक्त संजम पालवाने अर्थे ते ए भोगने छांडीने आहारादिक लाव्यो, भगव्याव्यो, सुखउपजे तथा दुःख उपजे शोक सरिखा भावपणेज प्रवर्तवा रूप संजम आदरशुं ? ॥ ३२ ॥

अर्थः-हवे भार्या बोली भा० एवे इ० अलंकारे नु० नु सो० भार्या प्रमुख स्वजनने सं० संभारे गु०

विषे यत्नापूर्वक आपणे चालीए ? ॥ ४७ ॥

अर्थः-ना० हाथी व० जेम वं० बंधनने छि० छेदीने । अ० पोतानी व० वस्ती अटवी प्रते व० जाय तेम तुं पण हे राजा पोतानी वस्ती मुगति प्रते जाय ए० ए जेम तुमने कह्युं ते प० हेतवे कह्युं म० हे महाराजा । उ० इखुकारा इ० एहवो मे० मे मु० पूर्वे सांभल्युं छे ॥ ४८ ॥

मूलः-नागो व बन्धणं छित्ता अप्पगो वसहिं वए ।
एयं पच्छं महारायं उसुयारि त्ति मे सुयं ॥ ४८ ॥

गाथा ४८ भावार्थ-हे महाराजा ? जेम हाथी रासडी प्रमुखना बंधन छेदीने पोताना विध्यांचळ अटवीनी वस्तीने विषे जाय, तेम तुं पण हाथी सरिखो बळवान कर्म बंधनरुप रासडीने छेदीने मुक्तिरुप विंध्याचळ अटवीने विषे जजे ! तथा बीजा पण धीर पुरुषो जाय ? एवुं हेत करी हे इखुकार ! राजा में पूर्वे साधुनी समीपे सांभळ्युं छे ! ॥ ४८ ॥

अर्थः-हवे कमलावती राणीना वचन सांभलीने वि० विपुल मोटा र० राजने च० छांडिने । य० वली का० कामभोगने दु० जीतता दोहिला एहवा नि० विषय रहित हुवा वली नि० धनादिक आमिष रहित । नि० स्नेह रहित नि० परिग्रह रहित हुवा ॥ ४९ ॥

करनो जाणीने कमळावती देवी वारंवार इषुकार राजाने कहेती हवी. ॥ ३७ ॥

अर्थः-वंता० वम्यानो खाणहार पु० पुरुष रा० हे राजन सो० ते पुरुष न० न होय० होय प्र० प्रशंसकनीक या० जे भणी ब्राह्मणे प० छांडयो प० धनने आ० अंगीकार करवुं इ० तुम्हे वांछो छो ॥ ३८ ॥

मूलः-वन्तासी पुरिसो रायं न सो होइ पसंसिओ ।
माहणेण परिच्चत्तं धणं आदाउमिच्छसि ॥ ३८ ॥

गाथा ३८ भावार्थ-अहो राजा! जे पुरुष वम्यो (भोगवेलो) आहार ग्रहण करे, ते पुरुष प्रशंसायोग्य न होय ? जे भणी ब्राह्मणे छांडेल धन ते तुं ग्रहण करवा इच्छेछे, ए तने युक्त नथी ? ॥ ३८ ॥

अर्थः-स० सर्व ज० जगत ज० जो कदाचित तु० तुम्हारे पोते होय । स० सर्व प० अथवा अवि० कदाचित । ध० धन भ० होय स० ते सर्व अ० पण ने० तुम्हारी आपना ब्राह्मणने अर्थे ने अ० समर्थ नहि । न० नहि ए० पण ता० त्राण सरणने अर्थे तं० ते धनादिक त० तमने ॥ ३९ ॥

मूलः-सव्वं जगं जइ तुहं सव्वं चावि धणं भवे ।
सव्वं पि ते अपज्जत्तं नेव ताणाय तं तव ॥ ३९ ॥

गाथा ३९ भावार्थ-जो कदाचित सर्व जगतनुं धन तारे होय तोपण ते धनादिकथी तारी तृष्णा पुर्ण करवा असमर्थ ? पण हे राजा ते धनादिक तुने दुःखथी शरणभुत नहि थाय ! ॥ ३९ ॥

धाने थयो अने जन्म मरणना भयेकरी उद्वेगवंत थका दुःख तथा कर्मना अंतना गवेषी थया. ॥ ५१ ॥

अर्थः–विगय मो० तिर्थंकरना सा० सासनने विषे पु० पुर्व भवने विषे भा० सुद्ध भावनाए करीने भा० भाव्योछे मन जेहनो एहवा छए जीव अ० थोडा ए० निश्चय का० काले दु० दुखना अं० अंतने उ० पाम्या ॥५२॥

मूलः–सासणे विगयमोहाणं पुव्विं भावणभाविया ।
अचिरेणेव कालेण दुक्खस्सन्तमुवागया ॥ ५२ ॥

गाथा ५२ भावार्थ–जीन सासनने विषे मोहरहित तथा पूर्व जन्म जाती स्मरण ज्ञान उपन्यो, तेणे करी आत्मा भावीत थयाथी वैराग्य पाम्या ? अने थोडाज काळना संयमे करी कर्म दुःखनो अंत करी छए जीव मोक्षने विषे पहोंच्या. ॥ ५२ ॥

अर्थः–रा० राजा स० सहित दे० देवी कमलावती ए० पुरणे। मा० ब्राह्मण य० पुरणे पु० पुरोहित मा० ब्राह्मणी दा० बे कुमार च० पुरणे ए० अवधारणे । स० सर्व ते० । ते छए प० सीतली भुत हूवा मोक्ष मोक्ष पहूता ॥ त्ति० एम हुं बे० कहुं छुं ॥ ५३ ॥

मूलः–राया सह देवीए माहणो य पुरोहिओ ।
माहणी दारगा चेव सव्वे ते परिनिव्वुडा ॥ ५३ ॥ ॥ त्ति, बेमि ॥

॥ इति उमुयारिज्जं नाम चतुर्दशं अध्ययनं सम्मत्तं ॥ १४ ॥

विषय कषायरूप आमिश (मांश) रहित रहने संयम आदरीश ? ॥ ४१ ॥

अर्थः–द० दावानले करी ज० जेम र० अटवीने विषे । द० बलता एता जं० जीव मृगादिक । अ० अणवलता अनेरा स० अज्ञानी जीव प० हरख पामे । रा० रागद्वेषने व० वश म० पहता थका ॥४२॥

मूलः–दवग्गिणा जहा रण्णे डज्झमाणेसु जन्तुसु ।
अन्ने सत्ता पमोयन्ति रागद्दोसवसं गया ॥ ४२ ॥

गाथा ४२ भावार्थ–अटवीने विषे दवनी अग्नि थकी मृगादिक जीव बळते थके अनेरा ते दवगी दूर होय ते जीव रागद्वेषने वशे पडीया थका खुशी थाय. ॥ ४२ ॥

अर्थः–ए० एणे दृष्टांते ए० एम व० आपणे मू० मुर्ख अज्ञानी का० काम भो० भोगने विषे मू० मुर्छणा थका द० आखो जगत बले छे तेहने विषे न० नथी मु० मुक्तता तेणे करी बले छे रा० राग दो० द्वेष रूप अ० अग्नी करी ज० जगत बले छे ॥ ४३ ॥

मूलः–एवमेव वयं मूढा कामभोगेसु मुच्छिया ।
डज्झमाणं न बुज्झामो रागद्दोसग्गिणा जगं ॥ ४३ ॥

गाथा ४३ भावार्थ–एम अमे अज्ञानी थका कामभोगने विषे मुछ्य थइने सर्व जगतने रागद्वेष रुपणी अग्निए करी बळता जोइने नथी जाणता ॥ ४३ ॥

मूल–गओवरयं चरेज्ज लाढे विरए वेयवियायरक्खिए।
पन्ने अभिभूय सव्वदंसी जे कम्हि वि न मुच्छिए स भिक्खू ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थ–प्रधान यती रागथी निवृत थको विचरे, वळी सिद्धांतनो जाण आपणा आत्माने दुर्गती पडतां रक्षणनो करणहार असंचयथी निवर्त्यो, ज्ञानवंत थको परीसहने जीतीने सर्व जीवने आपणा आत्मा सरिखा देखे अने कोइ वस्तुने विषे मुछीत नहि, तेने साधु कहीये. ॥ २ ॥

अर्थः–अ० आकरा वचनने व० वधनेवि० जाणीने पमेथी० धीरसुभट। मु० साधु च० विचरेअ प्रतिबंधपणे ला० प्रधान नि० सदाय। आ० आत्मानो गु० गोपवणहार॥ अ० व्यग्रपणा रहित म० मनछे जेहनो अ० हर्षादीके करी आकुलव्याकुलपणे करी रहित। जे० जे ॥ क० सर्व पदार्थने अ० सहेस० ते भि० साधु ॥३॥

मूलः–अक्कोसवहं विइत्तु धीरे मुणी चरे लाढे निअमायगुत्ते।
अव्वग्गमणे असंपहिट्ठे जे कसिणं अहियासए स भिक्खू ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थ–कोइ आक्रोशे निर्भर्छे, मारे तो स्वकर्म फळ जाणीने तथा क्रोध कर्मबंधनो हेतु छे, एम जाणीने अक्षोभ थको ते दुःख खमे अने क्रोधने छांडे, वळी मुनि सदाय अप्रतिबंधपणे देशांतरने विषे विचरे अने असंयमथी आत्माने गोपवे, संसारनी चिंता रहित मनने आपणे वामे राखे, अने संसारनी चिंता मांहि पडे नहि, विखवाद करे नहि, तेमज अहंकार करे नहि, वळी आकुळ व्याकुळपणाये करी रहित, जे सघळा आक्रोश वचन ताडनादिक सहे ते साधु कहीये. ॥ ३ ॥

मांगने मनोहर लाग्या छतां पण स्थिर रहे नहि, माटे जेम पुरोहित मनी वंछा जेम अं

अर्थः-हा० आमिष सहित कु० पंखीने दि० देखीने अनेरे पंखीये । व० पांखा उपनावता थका मने तथा नि० आमिष रहित पंखीने पीडा अण उपनावता थका सुखी देखीने ते माटे हे नाथ आ० परिग्रह रूप आमिषने मे० मनने उ० छांडिने । वि० विचरीयो नि० परिग्रहादि आमिष रहित थका ॥ ४६ ॥

मूलः-सामिसं कुललं दिस्स वज्झमाणं निरामिसं ।
आमिसं सव्वमुज्झित्ता विहरिस्सामो निरामिसा ॥ ४६ ॥

गाथा ४६ भावार्थ-मांस सहित पंखीने बीजा पंखीयो दुःखी करे अने मांस रहित पंखीने दुःख न दीए ? एम देखीने परिग्रहरूप मांसने छोडीने तथा विषयरूप मांसरहित थका विचरीशुं ? ॥ ४६ ॥

अर्थः-नि० आमिष सहित गृध पंखीनी उ० उपमा उ० समुपजन० जाणीने का० कामभोगने सं० सं० सारवा व० उपारवाना कारण जाणीने उ० सर्व गु० गृद्ध पंखीने पा० समीपे इ० जेम । सं० वीहतो थको । व० इहले इहले प० पछे तेम भावे संजम समीप थनार्थ चार्याए ॥ ४७ ॥

मूलः-गिद्धोवमे उ नच्चाणं कामे संसारवड्ढणे ।
उरगो सुवण्णपासे व संकमाणो तणुं चरे ॥ ४७ ॥

गाथा ४७ भावार्थ-मांस सहित पंखीने तथा मांस रहित पंखीनी ओपमा जाणीने तेमज कामभोग संसारना उपारनार जाणीने जेम गरुडी शंकातो सर्व इहले इहले चाले तेम विषयरूपी बीजां पक्षी संसारने

अर्थः—जे० जेणे करी पु० वलीज० छांडिने जी० संजम जीवितव्यने वा० अथवा क० संपूर्ण मो० मोहनी कर्मने नि० वांधे न० एहवा नर नारिना संगने प० छांडे । स० स.ाय न० तपस्वी ॥ न० न य० वली को० कुतुहलने उ० पामे स० ते भि० साधु ॥ ६ ॥

मूलः—जेण पुण जहाइ जीवियं मोहं वा कसिणं नियच्छई ।
नरनारिं पजहे सया तवस्सी न य कोऊहलं उवेइ स भिक्खू ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः—जेनाथी संयम जीवतव्य छांडे, तथा कषाय नोकषाय रूप संपूर्ण मोहनी कर्म वांधे, एवा नरनारीनो तपस्वी संग छांडे तथा जे ग्रहस्था वासे भोग भोगव्या, ते संभारे नहि तेमज कुतुहल तमासा न करे ते साधु कहीये. ॥ ६ ॥

अर्थः—वस्त्रादिक तथा सरिरना अवयवादिक । छि० छेदवानि विद्याने स० सात स्वरनि भो० भौमनि हाल्यानि । अं० आकासे कस्याक चिन्ह थाय तेहना सु० सुपनानि । ल० पुरुषादिक लक्षणानि दं० दांतडिनी व० घर करवानी वि० विद्याने प्रजूने नहि वली ॥ अं० अंगनुं वि० फरकयुं स० कागादिकना स्वरना वि० विचार प्रजूने नहि । जे० जे वि० एटली विद्याए करीने न० न जी० आजीवका करे स० ते भि० साधु । ७॥

मूलः—छिन्नं सरं भोममन्तलिक्खं सुमिणं लक्खणदण्डवत्थुविज्जं ।
अङ्गवियारं सरस्स विजयं जे विज्जाहिं न जीवति स भिक्खू ॥ ७ ॥

गाथा ७ भावार्थः—नख वस्त्र दांतादिकने छेदवानी विद्या. रूपभादिक सातस्वरनो विचार, भूमिकंप-

गाथा ४९ भावार्थ-एवां कमळावती राणीनां वचन सांभळीने इषुकार राजा प्रतिबोध पाम्यो। पछी राजा राणीए विस्तीर्ण राज्य तज्युं! तेमज जे जोतरा दोहिला एवा कामभोगने छांडया, वळी विषयरूप मांसने तजीने स्नेह तथा परिग्रह रहित थया. ॥ ४९ ॥

अर्थः-स० साचा ध० धर्मने वि० जाणीने च० छांडीने । व० प्रधान का० कामना गुणने । अह खा० तिर्थंकरे कह्यो तेहवो घो० करता दोहेलो एवा त० तपने प० अंगीकार करीने प्रवर्तता हुवा । ए छ जीव केरवा छे घो० आकरा प० आक्रमना धणी ॥ ५० ॥

मूलः-सम्मं धम्मं विआणित्ता चच्चा कामगुणे वरे ।
तवं पगिज्झहक्खायं घोरं घोरपरक्कमा ॥ ५० ॥

गाथा ५० भावार्थ-सम्यक प्रकारे धर्म जाणीने उत्तम कामभोगना गुणने तज्या, अे कर्मरूप वैरीने विदारवा निर्दय एवा तिर्थंकरादिकनो कहेल तप अंगीकार कर्यो. ॥ ५० ॥

अर्थः-ए० एम ते० ते छए जीव क० अनुक्रमे बु० बूझया। स० सर्व ते छए जीव ध० धर्मने विषे प० तत्पर । ज० जन्मने म० मरणने भ० भयंकरी उ० उद्वेग पाम्या थकाद्द० दुखनां अं० अंतना ग० गवेषणहार।५१।

मूलः-एवं ते कमसो बुद्धा सव्वे धम्मपरायणा ।
जम्ममच्चुभउव्विग्गा दुक्खस्सन्तगवेसिणो ॥ ५१ ॥

गाथा ५१ भावार्थ-एणीपेरे ए छए जीव अनुक्रमे बुझ्या (समज्या) ने सघळा ए धर्मने विषे साव-

भोगीपुरुष वि० विविध प्रकारना य० वली मि० चित्रनी चितारा प्रमुख नो० न जे० जेनी व० वीजे मि० श्लाघाकीजे पू०पुजाने तं०तेसवला पुजावोलगी ते पापना

मूलः—खत्तियगण उग्गरायपुत्ता माहण भोइय विविहा य सिप्पिणो ।
नो तेसिं वयइ सिलोगपूयं तं परिन्ना परिवज्ज भिक्खू ॥ ९ ॥

गाथा ९ भावार्थः—क्षत्रीना समुह, कोटवाल राजपुत्र, ब्राह्मण, राजा, ब्राह्मण, भोगी पुरुष, विविध प्रकारनाविज्ञानी चीतारा प्रमुख इत्यादिकनी प्रशंसा न करे तथा तेनी पूजा पण न करे, तेनी प्रशंसा पूजा अनर्थनो हेतु जाणीने परीहरे तेने साधु कहीये. ॥ ९ ॥

अर्थः—गि०गृहस्थने जे०जे प० चारित्रपणे दि० दिठाहोय ज० गृहस्थपणे व० वली सं० परिचयान्त इ० होय ते० ते वे प्रकारना गृहस्थ संघाते इ० इह लो० लोकना फ० फलनेअर्थे जो०जे सं० परिचयने न० न क० करे स० तेभि० साधु ॥ १० ॥

मूलः—गिहिणो जे पवइएण दिट्ठा अपवइएण व संथुया हविज्जा ।
तेसिं इहलोइयफलट्ठा जो संथवं न करेइ स भिक्खू ॥ १० ॥

गाथा१०भावार्थः—यतीये दीक्षालइने जेकोइ ग्रहस्थने दीठाहोय तथा दीक्षा ली नापहेला ग्रहस्थपणे ग्रहस्थीने दीठा होय ते बन्ने प्रकारना ग्रहस्थ संघाते इहलोकना फळने अर्थे परिचय न करे तेने साधु कहीये. ॥ १० ॥

अने जशोभद्र ए बे पुत्र, ए रीत जैन वर्तमान शासनना उपकारी तीर्थंकर थइ मोक्षने विषे पधार्या : एम सुधर्मास्वामीए जंबुस्वामी प्रत्ये पण हे शिष्यजीवो तमे जेम मने श्री भगवंत महावीरदेव पासेथी सांभल्युं ते तेम हुं तुज प्रत्ये कहुं छुं ॥ २ ॥ ए चौदमा अध्ययनने विषे निर्ग्रंथना गति स्वरूपनुं कथन देखाड्युं. तेणे साधुपणुं होय ते भणी आ पंदरमा अध्ययनमां साधुना गुण कहे छे. ॥ १५ ॥

अर्थः–मोणं० संजमनेष० अंगीकार करीने । स० पामीने प० धुरागारि० धर्मने । स० शस्त्रादिकनुं साधु गति उ० माया रहित क० क्रियानो करणहार । नि० निर्ग्रंथ गति । सं० स्वजन परिग्रहनेत्र० सांइ प० न पामे का० काययोगने । अ० अज्ञात कुलनो आहारनो ए० गवेषणाए प० एष णाने । स० ते भि० साधु ॥ १ ॥

मूलः–मोणं चरिस्सामि समिच्च धम्मं सहिए उज्जुकडे निआगछिन्ने ।
संथवं जहिज्ज अकामकामे अन्नायएसी परिव्वए स भिक्खू ॥ १ ॥

गाथा १ भावार्थ–हवे पंदरमुं अध्ययन कहेशे. मौन्य एटले मुनिधर्म, चारित्रधर्म पामे मने अंगीकार करीने भनेरा साधु संघाते सरळ स्वभाव सहित निर्माण करी सहित, स्वजननी साथे परिचय न करे । कामाभिलाष रहित थको अज्ञात कुलने विषे आहारादिकनी गवेषणा करी संयम पालवाने विषे विचरे, ते साधु कहीये ? ॥ १ ॥

अर्थः–सा० रागथी उ० जेम निवर्त्यो होय तेम च० चारित्रना० पालन साधु ॥ सि० आत्मार्थी निर्ग्रंथो वे० सिद्धांतनो जाणआ० आत्मानो र० रक्षणहार । प० अज्ञातने अ० परिग्रहादिक निर्वाने स० सर्व जीवने दं० आत्मा समानदेखणहार । जे० जे साधु के० कोइ वस्तुने वि० विषेपणत० त्रस० मुक्तांग स० ते भि० साधु ॥ २ ॥

तु० पुरणे पं० सामान्य कु० कुल शने प० विचरे स० ते भि० साधु ॥ १३ ॥

मूलः—आयामगं चेव जवोदणं च सीयं सोवीरं च जवोदगं च ।
न हीलए पिण्डं नीरसं तु पन्तकुलाइं परिवए स भिक्खू ॥ १३ ॥

गाथा १३ भावार्थः—ऊसामण, जवनो भात, ठाढो आहार, अंतमात आहार, जव तथा कांजी प्रमुखनुं धोवण इत्यादिक रसअन्नादिकने पामीने ते आहारने निंदे नहि तथा सामान्य कुळने विषे भिक्षाने अर्थे विचरे तेने साधु कहीये. ॥ १३ ॥

अर्थः—स० शब्द वि० अनेक प्रकारना द्वेषकारी । भ० छे लो० लोकने विषे । दि० देवता संबंधी मा० मनुष्य संबंधी ति० तेमज तिर्यंच संबंधीया शब्द । भी० रुद्र भ० भयकारी । भे० अतिशे विहामणां उ० मोटा शब्द । जे सो० सांभळीने न० न वि० बीए नहि स० ते भि० साधु ॥ १४ ॥

मूलः—सद्दा विविहा भवन्ति लोए दिवा माणुस्सगा तिरिच्छा ।
भीमा भयभेरवा उदारा सोच्चा न विहिज्जई स भिक्खू ॥ १४ ॥

गाथा १४ भावार्थः—ए लोकने विषे अनेक प्रकारना द्वेष ऊपजावनार दुःखकारीने मोटा कठण अत्यंत बीहामणा एवा देवता मनुष्य अने तिर्यंचना शब्दो सांभळीने जे धर्मध्यानथी चलायमान थाय नहि, तेने साधु कहीये. ॥ १४ ॥

अर्थः-पं० अंत प्रांत स० संथारो आ० पाटपछुपने भ० सेवीने सी० ताढ उ० तापने सहिने ॥ वि० विविध प्रकारना च० वली दं० दंस म०मसना परिसहने पामीने अ० अवर म० मन थको अ० आकुलव्याकुलपणा रहित थको । जे० जे क० सर्व पदार्थने अ० सहे स० ते भि० साधु ॥ ४ ॥

मूलः—पन्तं सयणासणं भइत्ता सीउण्हं विविहं च दंसमसगं ।
अव्वग्गमणे असंपहिट्ठे जे कसिणं अहियासए स भिक्खू ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थ-अल्प मूल्यवंत एवा संथारो (पथारी) पीठादिक आसन भोजन आछादनादिक सर्व अल्प सेवीने ताढ, ताप अनेक प्रकारना दांस मच्छरादिकथी उपनी वेदना ? आकुलव्याकुळ चित्त रहित तथा हर्ष विखवाद रहित सघळी खमे तेने साधु कहीये ॥ ४ ॥

अर्थः—नो० न स० सत्कारने इ० वांछे न० न पू० पुजाने वांछे ॥ नो० न य० वली व० वंदनाने पण न वांछे ते साधु । क० कथांथी प० प्रसंसाने वांछे ॥ से० ते सं० संजती सु० सुव्रती त० तपस्वी । स० ज्ञानादिक सहित ॥ आ० आत्मानो ग० गवेषी स० ते भि० साधु ॥ ५ ॥

मूलः—नो सक्कइमिच्छई न पूयं नो य वन्दणगं कओ पसंसं ।
से संजए सुव्वए तवस्सी सहिए आयगवेसए स भिक्खू ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थ-सत्कार तथा पुजा नवांछे, (नइच्छे) वंदणा तथा गृहस्थ गुण कीर्तन करे तेपण न वांछे, ते संयती सुव्रती तपस्वी ज्ञानक्रिया सहीत आत्माने कर्म रहित शुद्ध पणुं वांछे ते साधु कहीये ॥५॥

समाहिबहुले गुत्ते गुत्तिन्दिए गुत्तबम्भयारी सदा अप्पमत्ते विहरेज्जा ? इमे खलु ते थेरेहिं भगवन्तेहिं दस बम्भचेरट्ठाणा पन्नत्ता, जे भिक्खू सोच्चा निसम्म संजमबहुले संवरबहुले समाहिबहुले गुत्ते गुत्तिन्दिए गुत्तबम्भयारी सया अप्पमत्ते विहरेज्जा । तं जहा । विवित्ताइं सयणासणाइं सेविज्जा से निग्गन्थे । नो इत्थी–पसु–पण्डग–संसत्ताइं सयणासणाइं सेवित्ता भवति से निग्गन्थे । तं कहमिति चे. आयरियाह । निग्गन्थस्स खलु इत्थि–पसु–पण्डग–संसत्ताइं सयणासणाइं सेवमाणस्स बम्भयारिस्स बम्भचेरे सङ्का वा कङ्खा वा विइगिच्छा वा समुपज्जिज्जा भेदं वा लभेज्जा उम्मायं वा पाउणिज्जा दीहकालियं वा रोगायङ्कं हवेज्जा, केवलिपन्नत्ताओ धम्माओ भंसेज्जा । तम्हा नो इत्थि–पसु–पण्डग–संसत्ताइं सयणासणाइं सेवित्ता हवइ से निग्गन्थे. ॥ १ ॥

॥ १६ ॥

गद्य ? भावार्थः–हे चिरंजीवी शिष्य ? मे सांभळ्युं छे ! श्री महावीरदेव स्वामीए आम कर्तुं ? पूर्

जीन शासनने विषे निश्चे स्थीवर भगवंते जे दश ब्रह्मचर्यनी समाधीनां स्थानक कह्यां छे, जे साधु सांभळीने हैयामांही धारीने संयम पुष्टो करे, संवर वधोळो करे, चित्तसमाधीए करी समाधी वधोळो करे अने मन वचन काया तथा पांचे इंद्रीने गोपवीने गुप्त ब्रह्मचारी थको अप्रमादपणे सदाय विचरे, ते जीन शासनने विषे स्थीवर भगवंते जे दश [illegible]

विचार, स्त्री पुरुषना लक्षणनो विचार, अंग स्फुर्ण विचार, शियाळीयादिकना शब्दनो विचार, ने कोइ एवी विद्याए करी आजीविका न करे तेने साधु कहीए. ॥ ७ ॥

अर्थः-मं० मंत्र १ मू० जडिबुट्टि २ वि० विविध प्रकारना वि० वैद्यकशास्त्र ३ ओषधी वि० विगेरे ४ । व० वमनने ५ वि० विरेचन ६ । धू० धुप देवाने ७ । णे० नेत्र आंखिना अंजनने सि० स्नानने ८ । आ० रोगादिक पिडाने स० माता पितादिकने संभारवो ९ ति० वैद्यकनुं भणवुं तेहने १० च० वळी । तं० ते पूर्वोक्त दस बोल ते । प० पाडवा जाणी पचवतो प० संजमने विषे प्रवर्त्ततो स० ते भि० साधु ॥ ८ ॥

मूलः-मन्तं मूलं विविहं विज्जचिन्तं वमणविरेयणधूमणेत्तसिणाणं ।
आउरे सरणं तिगिच्छं च तं परिन्नाय परिव्वए स भिक्खू ॥ ८ ॥

गाथा ८ भावार्थः-१ मंत्रने, २ जडी बुटीआदिक मूळीने, ३ वैद्यक शास्त्री औषध विगेरेने, ४ औषध दइने वमन करावे तेने, ५ विरेच (जुलाप) ने, ६ गुदाए धुमाडो दइ रोगथी मुक्त थवाने वास्ते स्नान करावे, ७ पुत्रादिकने धुपवुं ते, ८ आंखनुं औषध करे, ९ पुत्रादिकने अर्थे एक पोतीये स्नान करावबुं, १० रोगादिकथी पीडाता माता पितादिकने संभारवुं ने वैद्यक शास्त्रनुं भणवुं, एटला बोल मुंडा जाणीने पचखीने संयमने विषे प्रवर्त्ते तेने साधु कहीये ॥ ८ ॥

अर्थ-ख० क्षत्रिना ग० समुह उ० उग्रकुलना उपन्या । रा० राजाना पु० पुत्र । मा० ब्राह्मण भो०

पाउणिज्जा दीहकालियं वा रोगायङ्कं हवेज्जा, केवलिपन्नत्ताओ धम्माओ भंसेज्जा। तम्हा नो इत्थीहिं सद्धिं सन्निसेज्जागए विहरेज्जा ॥ ३ ॥

गद्य ३ भावार्थः—स्त्रीनी साथे एक आसनपर बेसे नहि, तेमज ज्यां स्त्री बेठी होय त्यां एक मुहुर्त्त (बेघडी) सुधी ब्रह्मचारी न बेसे ते निर्ग्रंथ कहीए, तेवारे शिष्य पुछतोहवो के शा कारणथी ब्रह्मचारीए स्त्रीनी साथे एक आसने बेसवुं नहीं? तेवारे गुरु कहेता हवा, ते निर्ग्रंथने निश्चे स्त्रीनी साथे एक आसने बेसवाथी ब्रह्मचारीने ब्रह्मचर्यने विषे शंका उत्पन्न थाय के हुं ब्रह्मचर्य पाळुं के न पाळुं अथवा बीजाने पण शंका उपजे के ए साधु स्त्रीनी साथे एक आसने बेसे छे तो ते ब्रह्मचर्य पाळतो हशे के नहि पाळतो होय? तथा स्त्रीनी साथे विषय सेववानी आकांक्षा (इच्छा) उत्पन्न थाय अथवा एम पण मनमां थाय के ए ब्रह्मचर्य पाळवानुं फळ हशे के नहि होय? माटे हुं ए स्त्रीने सेवुं, एम थवाथी चारीत्रनो विनाश थाय, पछी ते उन्मादपणुं पामे अने स्त्रीनी अभिलाषथी दीर्घ (घणा) कालनो रोगिष्ट थाय ने केवळी परुप्या धर्मथी भ्रष्ट थाय, ते माटे निश्चे निर्ग्रंथ स्त्री सहित एक आसने न बेसे, तथा ज्यां स्त्री बेठी होय त्यांथी ऊठया पछी एक मुहुर्त सुधी साधु न बेसे ॥ ३ ॥

अर्थः—नो० नहि इ० स्त्रीनां। इ० नयणादिक इंद्रिकेहवीछे। म० मननेहरे म० मनने विषय मांहिरमाडे। एहवीइंद्रियने आ० देखणहार। नि० भीनागुणनो संभाळनार भ० होय से० ते नि० साधु तं० ते क० श्या माटे। इ० एम जे० कदाचीत पुछे शिष्य आ० गुरु आ० कहे। नि० साधुने सं० निश्चे। इ० स्त्रीनां इ० इंद्रिय

मेवादिक सा० स्वादिमने । प० ग्रहस्थे अ० अणदेवे करा । प० निषेधो । नि० निर्ग्रंथ साधु । जे० जे साधु त० त्यां न० न करे प० द्वेष म० ते भि० साधु ॥ ११ ॥

मूलः—सयणासणपाणभोयणं विविहं खाइमसाइमं परेसिं ।
अदए पडिसेहिए नियण्ठे जे तत्थ न पउस्सई स भिक्खू ॥११॥

गाथा ११ भावार्थः—पाट पाटला प्रमुख संथारो, पाणी भोजन अनेक प्रकारना खजुरादिक तथा लवींगादिक साधुये ग्रहस्थ पासे याचवाथी निषेध (नकारो) करे, तेना ऊपर द्वेषनकरे, तेसाधु कहीये. ॥११॥

अर्थः—जं० जे किं० कांइ भा० असनादिक पा० पाणी वि० अनेक प्रकारे खा० स्वादिम सा० स्वादिमने प० ग्रहस्थ थको ना० यांचीने । जो० जे साधु तं० ते आहारादिकने ति० मन वचन कायाए करी न० न साधु अणु० साधुने संविभागने करे म०मन व०वचन का०काया सु० भलो सं०संवरवंत सा० ते भि० साधु ॥१२॥

मूल—जं किंचि आहारपाणजायं विविहं खाइमसाइमं परेसिं ।
जो तं तिविहेण नाणुकम्पे मणवयकायसुसंवुडे स भिक्खू ॥ १२ ॥

गाथा१२भावार्थः—अनेक प्रकारना अन्नपाणी मेवाने मुखवास प्रमुख ग्रहस्थना घरथकी लइने साधु साधुने संविभाग करे तथा आश्रव अने कषायने टालीने मन, वचन, कायाने भलीपेरे संवर्याछे, तेने साधु कहीये. ॥१२॥

अर्थः—आ० उसामणने चे० वली पुरणे ज० जवनो उ० उदन भातने च० वली । सी० ताढो सो० कांजी आंछण प० वली ज० जवना उ० पाणीने प० वली न० नहि दी० दिले वि० आहारने नी० निरसने

करीने वारंवार स्त्रीने दृष्टीये करी जुए नहि तथा घणा स्त्रीना रुपादिकनो चींतवनार ते साधु न कहीये, तेवारे शिष्य पुछतो हवो ते शाकारणथी स्त्रीनी इंद्रीयो दृष्टीये करी नीरखवी नहि, तेवारे आचार्य कहेता हवा ने निग्रंथने निश्चे मनोहर तथा मनने रमणीक एवी स्त्रीनी इंद्रीयो वारंवार दृष्टीये करी जोतां थकां तथा स्त्रीना गुण चिंतवे करी ब्रह्मचारीने ब्रह्मचर्यने विषे शंका ऊपजे ? के हुं ब्रह्मचर्य पाळुं के न पाळुं ? अथवा स्त्रीना ने शंका ऊपजे के ए साधु स्त्रीनी इंद्रीयो वारंवार दृष्टीये करी नीरखे छे, नो ते ब्रह्मचर्य पाळतो हशे के नहि पाळतो होय. ? तथारुप प्रमुखे नीरखवाथी स्त्रीनी साथे विषय सेववानी आकांक्षा उत्पन्न थाय अथवा ए ब्रह्मचर्य पाळवानुं फळ हशे के नहि होय ते माटे हुं स्त्रीने भोगवुं, एम थवाथी चारित्रनो विनाश थाय ? पछी ते उन्मादपणुं पामे अने स्त्रीनी अभिलाषथी दीर्घकाळनो रोगिष्ट थाय ने केवळी परुप्या धर्मथी भ्रष्ट थाय ते माटे निश्चे निग्रंथ स्त्रीनी इंद्रीयो वारंवार दृष्टीये करी जुए नहि. ॥ ४ ॥

अर्थः–नो० न नि० साधु इ० स्त्रीना कु० पापांगनी भींतने अ० आंतरे वा० अथवा । दू० परियंवने (वस्त्रने) अं० आंतरे वा० अथवा पि० माटीनी भींतने अ० आंतरे वा० अथवा । कु० स्त्रीना कोयल सरिखा स० शब्दना ? वा० अथवा रु० रोवाना शब्द २ वा० अथवा गी० गावाना शब्द ३ वा० अथवा इ० हसवाना स० शब्द ४ वा० अथवा थ० सनेह उपजावानां स० शब्द ५ वा० अथवा कं० वीरह आकुल व्याकुलना शब्द ६ वा० अथवा वि० विलापना स० शब्द ७ । ए सात प्रकारना शब्दने वा० वळी । सु०

देखणहार । उ० कषायरहित अ० कोइ जीवने बाधा न उपजावे सं० ते भि० साधु ॥ १५ ॥

मूलः—वादं विविहं समिच्च लोए (महिए) खेयाणुगए य कोवियप्पा ।
पन्ने अभिभूय सव्वदंसी उवसन्ते अविहेडए सभिक्खू ॥१५॥

गाथा १५ भावार्थः—ए लोकमांही व्याकरण तर्क नमूरा परमार्थहीना गणा प्रकारना वादने जाणीने ज्ञायना परमार्थनो जाण ने आत्मा सर्वागमनेा जाणीने ज्ञानदर्शन चारित्र सहितपणो परीसहने जीतीने सर्व जीवने आपणा आत्मासरीखा देखीने उपशांतपणाथको कोइ जीवने पीडा उपजावे नहि तेने साधु कहीये. ॥१५॥

अर्थः—अभि० संसारने विदारने जी० जीवे नहि अ० पर रहित तथा मूढपणा रहित । अ० आते रुद्र अभि मित्र एहवो नहि । नि० निवेदि स० सर्व आरंभ परिग्रहनो । वि० छांडिने गि० गरने ए० रागद्वेष रहित ए० कहो ज्ञान सहित कहे प० विचरे सं० ते भि० साधु त्ति० एम वे० कहुं छुं ॥ १६ ॥

मूलः—अभिभूयजीवी अगिहे अमित्ते जिइन्दिए सव्वओ विप्पमुक्को ।
अणुपुव्वाई लहुअणमक्खी चिच्चा गिहं एगचरे स भिक्खु ॥१६॥ त्ति बेमि

॥ इति सभिक्षु पञ्चदशं अध्ययनं सम्पूर्णं ॥ १५ ॥

गाथा १६ भावार्थः—चीजारा प्रभुपणो कल्पाव करी आजीविका न करे, जीतेंद्रीय बाह्य अभ्यंतरनी

यसद्दं वा रुइयसद्दं वा गीयसद्दं वा हसियसद्दं वा थणियसद्दं वा कन्दियसद्दं वा विलवियसद्दं वा सुणेत्ता भवति से निग्गन्थे। तं कहमिति चे, आयरियाह। निग्गन्थस्स खलु इत्थीणं कुड्डन्तरंसि वा दूसन्तरंसि वा भित्तन्तरंसि वा कुइयसद्दं वा रुइयसद्दं वा गीयसद्दं वा हसियसद्दं वा थणियसद्दं वा कन्दियसद्दं वा विलवियसद्दं वा सुणेमाणस्स बम्भयारिस्स बम्भचेरे सङ्का वा कङ्खा वा विइगिच्छा वा समुपज्जिज्जा भेदं वा लभेज्जा उम्मायं वा पाउणिज्जा दीहकालियं वा रोगायङ्कं हवेज्जा केवलिपन्नत्ताओ धम्माओ भंसेज्जा। तम्हा नो इत्थीणं कुड्डन्तरंसि वा दूसन्तरंसि वा भित्तन्तरंसि वा कुइयसद्दं वा रुइयसद्दं वा गीयसद्दं वा हसियसद्दं वा थणियसद्दं वा कन्दियसद्दं वा विलवियसद्दं वा सुणेमाणे विहरेज्जा ॥ ५ ॥

गद्य ५ भावार्थः-स्त्रीना मैथुन सेववानी वेळाए कोयलना जेवा शब्द, रोवाना शब्द, गीतना शब्द, हसवाना शब्द, मैथुन सेववानी वेळाए स्त्रीना स्नेहवाळां वचन, पतिनो विरह होय त्यारे विषयना विरहथी आकुळव्याकुळ थकां आकंद शब्द करे, पतिना विरहथी स्त्री विलविलाट शब्द करे, ए पुर्वोक्त स्त्रीना शब्द पापाणनी भींतने आंतरे, परियंचने आंतरे तथा माटीनी भींतने आंतरे न सांभळे ते साधु कहीये. तेवारे शिष्य पुछतो हवो के शाकारणथी भींतना आंतरे स्त्रीना शब्द साधु न सांभळे? तेवारे आचार्य कहेता हवा ते निग्रंथने जिवे पुर्वोक्त स्त्रीना [illegible] भींतने आंतरे [illegible] जिवे भोग भोगवे छे ते ब्रह्मचर्य पाळवे छे

दैवायां धारीने संयम पुष्टो करे, संवर वहोळो करे, निजस्वरूपपणे करी समाधी वहोळी करे अने मन वचन काया तथा पांचे इंद्रीने गोपवीने गुप्त ब्रह्मचर्य थको अप्रमादपणे सदाय विचरे. हवे गुरुउत्तर कहेता हवा ! पूर्वे कहीजुं ए प्रकारे जीनशासनने विषे स्थीवर भगवंते ते दश ब्रह्मचर्यनी समाधीना स्थानक कह्यां, जे साधु सांभलीने दैवायां धारीने संयम पुष्टो करे, संवर वहोळो करे, निजस्वरूपपणे करी समाधी वहोळी करे अने मन वचन काया तथा पांचे इंद्रीयोने गोपवीने गुप्त ब्रह्मचर्य थको अप्रमादपणे सदाय वीचरे, ते जेम छे तेम कहेले, स्त्री पशु नपुंसक रहित उपाश्रय सज्या संथारो पाट पाटला प्रमुख भोगवे तेने निर्ग्रंथ कहीये ! पण स्त्री पशु नपुंसक सहित उपाश्रय सज्या संथारो, पाट पाटला प्रमुखनो सेवणहार होय तेने निर्ग्रंथ न कहीये, तेवारे शिष्य कहेतो हवोके आ कारणे ते निर्ग्रंथ, स्त्री, पशु, नपुंसक सहित उपाश्रयादिकने न सेवे तेवारे आचार्य कहेता हवा ! निर्ग्रंथ ते निश्चे स्त्री, पशु, नपुंसक सहित उपाश्रय सज्या संथारो पाट पाटला प्रमुख भोगवता ब्रह्मचारीने ब्रह्मचर्यने विषे शंका उपजे के हुं ब्रह्मचर्य पाळुं के न पाळुं ? अथवा बीजाने शंका उपजे के ए साधु स्त्रीयादिक सहित स्थानक भोगवे छे तेने ब्रह्मचर्य पाळतो हशे के नहि पाळतो होय ? तथा स्त्रीनी साथे विषय सेवानी आकांक्षा (इच्छा) उत्पन्न थाय अथवा ए ब्रह्मचर्य पाळ्यानुं फळ हशेके नहि होय ? माटे हुं स्त्रीने सेवुं, एम थकाथी चारित्रनो विनाश पामे, पछी ते उन्माद (दीवाना पणुं) पामे अने घीना अभिलाषथी दीर्घ कालनो रोगिष्ट थाय अने केवळी प्रज्ञप्त धर्मथी भ्रष्ट थाय, ते माटे स्त्री पशु नपुंसक सहित उपाश्रय सज्या संथारो पाट पाटलादिकनो सेवणहार न होय ते निर्ग्रंथ कहीये ॥ १ ॥

अर्थः—जो० नहीं ३० स्त्रीनी क० शृंगारकारणी कथानो क० कहेणहार भ० होय से० ते नि० साधु ।

बम्भयारिस्स बम्भचेरे सङ्का वा कङ्खा वा विइगिच्छा वा समुपज्जिज्जा भेदं वा लभेज्जा उम्मायं वा पाउणिज्जा दीहकालियं वा रोगायङ्कं हवेज्जा, केवलिपन्नत्ताओ धम्माओ भंसेज्जा। तम्हा नो इत्थीणं पुव्वरयं पुव्वकीलियं अणुसरेज्जा ॥ ६ ॥

गद्य ६ भावार्थः—पूर्वे गृहस्थपणे स्त्री संघाते विषय सेवन करेल होय तेमज स्त्री संघाते क्रीडा रमत करेल होय ते संभारे नहि ते साधु कहीये. तेवारे शिष्य पुछतो हवो के शा कारणथी पूर्वे स्त्री संघाते विषय क्रिडा करेल होय ते संभारवी नहि, तेवारे आचार्य कहेता हवा ते निग्रंथ निश्चे पूर्वे गृहस्थपणे स्त्री संघाते विषय सेवन करेल होय, तेमज स्त्री संघाने क्रीडा रमत करेल होय, ते संभारवाथी ब्रह्मचारीने ब्रह्मचर्यने विषे शंका उपजे के हुं ब्रह्मचर्य पाळुं के न पाळुं ? अथवा बीजाने शंका उपजे के ए साधु पुर्वनी स्त्री साथे विषय क्रीडा करेल संभारे छे तो ते ब्रह्मचर्य पाळतो हशे के नहि पाळतो होय ? तथा स्त्री साथे पूर्वे विषय क्रीडा संभारवाथी स्त्रीनी साथे विषय सेववानी इच्छा उत्पन्न थाय अथवा ए ब्रह्मचर्य पाळ्यानुं फळ हशे के नहि होय ? माटे स्त्रीने भोगवुं, एम थवाथी चारित्रनो विनाश थाय, पछी ते उन्मादपणुं पामे अने स्त्रीनी अभिलाषथी दीर्घकाळनो रोगिष्ट थाय ने केवळी परुप्या धर्मथी भ्रष्ट थाय, ते माटे निश्चे निग्रंथ पूर्वे स्त्री साथे विषय क्रीडा करेल होय ! ते संभारे नहि. ॥ ६ ॥

अर्थः—नो० नहि नि० साधु प० अति सरस आ० आहार आ० जमनारो ह० होय से० ते नि० साधु ।

व० ब्रह्मचारिने ध० ब्रह्मचर्यने विषे। सं० संकाउपजे। ब्रह्मचर्य पाळुं के न पाळुं अथवा भागळाने संकाउपजे ए सीभंगो रहेछे केम नथी पाळतो वा० वळी। क० अब्रह्मनी वांछा उपजे वा० वळी। वि० ब्रह्मचर्य पाळ्याना फळनो संदेह वा० वळी। स० उपजे। भे० चारित्रना विनासने वा० वळी ल० पामे। उ० उन्माद पस्तपणाने वा० वळी पा० पामे दी० घणा का० काळ लगे वा० वळी रो० रोगने जरादिक शूळादिक ह० होय। के० केवळी प० परूप्या ध० धर्मथी भं० भ्रष्टथाय। न० तेमाटे नो० न इ० स्त्रीना इ० इंद्रियने म० मनने हरे म० मनने विषय मांहि रमाडे एटवी इद्रीने आ० जोतोथको। नि० जोय ॥ ४ ॥

मूलः—नो इत्थीणं इन्दियाइं मणोहराइं मणोरमाइं आलोइत्ता निज्झाइत्ता भवति से निग्गन्थे। तं कहमिति चे, आयरियाह। निग्गन्थस्स खलु इत्थीणं इन्दियाइं मणोहराइं मणोरमाइं आलोएमाणस्स निज्झायमाणस्स बम्भयारिस्स बम्भचेरे सङ्का वा कङ्खा वा विइगिच्छा वा समुपज्जिज्जा भेदं वा लभेज्जा उम्मायं वा पाउणिज्जा दीहकालियं वा रोगायङ्कं हवेज्जा, केवलिपन्नत्ताओ धम्माओ भंसेज्जा। तम्हा नो इत्थीणं इन्दियाइं मणोहराइं मणोरमाइं आलोएज्जा निज्झाएज्जा. ॥ ४ ॥

गद्य ४ भावार्थः—जोतां मनहरे तेथी मनोहर अने चींतवतां चित्तने हुलाज ऊपजे के अहो ए केवी सुंदरछे, एम मनने रमणीक एवी स्त्रीनी इद्रीयो अपणी दृष्टीये करीने थोडी पण जुए नहि. स्त्रीना गुण चींतवबे

आहार करेछे ? तो ते ब्रह्मचर्य पाळतो हशे के नहि पाळतो होय ! तथा दिन दिन प्रत्ये सरस आहार करपाथी स्त्रीनी साथे विषय सेववानी इच्छा उत्पन्न थाय अथवा ए ब्रह्मचर्य पाळ्यानुं फळ हशे के नहि होय ? ते माटे स्त्रीने भोगववुं एम धवाथी चारित्रनो विनाश थाय पछी ते उन्मादपणुं पामे अने स्त्रीनी अभिलाषथी दीर्घ काळनो रोगिष्ट थाय ने केवळी परुप्या धर्मथी भ्रष्ट थाय ते माटे निर्ग्रंथ दिन दिन प्रत्ये घणो सरस आहार करे नहि. ॥ ७ ॥

अर्थः–नो० नहि अ० अति मात्राए । पा० पाणी अने भो० भोजनने आ० आहारता थको । भ० होय से० ते नि० साधु । तं० ते क० श्या माटे । इ० एम चे० कदाचेत शिष्य पुछे । आ० आचार्य गुरु आ० कहे । नि० साधुने ख० निश्चे । अ० अति मात्राए । पा० पाणी अने भो० भोजनने । आ० आहार करतो थको ब० ब्रह्मचारिने । ब० ब्रह्मचर्यने विषे । सं० संका उपजे ब्रह्मचर्य पाळुं के न पाळुं अथवा आगळयानें संका उपजे ए स्त्री भेगो रहेछे केमनथी पाळतो वा० वळी कं० अब्रह्मनी वांछा उपजे वा० वळी वि० ब्रह्मचर्य पाळवाना फलनो संदेह वा० वळी स० उपजे भे० चारित्रना विनासने वा० वळी ल० पामे । उ० उन्माद मस्तपणाने वा० वळी पा० पामे दी० घणा का० कालळगी वा० वळी रो० रोग ते ज्वरादिक शूळादिक ह० होय । के० केवळी प० परुप्या ध० धर्मथी भं० भ्रष्ट थाय त० ते माटे नो० नहि । अ० अति मात्राए । पा० पाणी भो० भोजनने आ० करे ॥ ८ ॥

दू० परिवंचने (वस्त्रने) अं० आंतरे वा० अथवा । भि० माटीनी भींतने अं० आंतरे वा० वळी कु० सीना कोयला सरिखा स० शब्द १ वा० अथवा रु० रोवाना शब्द २ वा० अथवा गी० गीतना शब्द ३ वा० अथवा इ० इमलाना शब्द ४ वा० अथवा थ० स्नेह उपजावाना स० शब्द ५ वा० अथवा कं० वीरह आकुल व्याकुलना स० शब्द ६ वा० अथवा वि० विलापना शब्द । ए ७ ए सात प्रकारना शब्दने वा० वळी सु० सांभळनारो साधु । बं० ब्रह्मचारिने । व० ब्रह्मचर्यने विषे सं० संका उपजे ब्रह्मचर्य पाळुं के न पाळुं अथवा आगळ्याने संका उपजे ए सी मेळो रहे ते केम नथी पाळतो वा० अथवा कं० अब्रह्मनी वांछा उपजे वा० अथवा वि० ब्रह्मचर्यव्रतमांना फळनो वा० वळी संदेह स० उपजे । भे० चारीत्रना विनाशने वा० वळी ल० पांमे ४ । उ० उन्माद पम्मराणाने वा० वळी पा० पामे । दी० घणा का० काल लगे वा० वळी रो० रोग ते ज्वरादिक मूलादिक इ० होय । के० केवली प० परूपा । ध० धर्मथी भं० भ्रष्ट थाय । त० ते माटे नो० न इ० सीना ए शब्द । इ० पाषाणनी भींतने अं० आंतरे वा० अथवा दू० परिवंच(वस्त्रने) अं० आंतरे । वा० अथवा । भि० माटीनी भींतने अं० आंतरे वा० वळी । कु० सीना कोयला सरिखा शब्द १ वा० अथवा । रु० रोवाना स० शब्द २ वा० अथवा । गी० गावाना स० शब्द ३ वा० अथवा इ० इमलाना स० शब्द ४ वा० अथवा थ० स्नेह उपजावाना स० शब्द ५ । वा० अथवा कं० वीरह आकुल व्याकुलना शब्द ६ वा० अथवा वि० विलापना शब्द ७ ए सात प्रकारना शब्दने वा० वळी । सु० सांभळनो थको वि० विसरे साधु ॥ २ ॥

मूलः—नो निग्गन्थे इत्थीणं कुड्डन्तरंसि वा दूसन्तरंसि वा भित्तन्तरंसि वा कुड्-

ज० जनने । अ० वांछता थकाने । वं० ब्रह्मचर्यने विषे । सं० शंका उपजे ब्रह्मचर्य पाळु क न पाळु आगलपाने शंका उपजे ए स्त्री भेगो रहे छे केम नथी पाळतो वा० वळी कं० अन्नत्रनी वांछा उपजे वा० वळी वि० ब्रह्मचर्यना पाळ्यानो फलनो संदेह वा० वळी स० उपजे भे० चारित्रनो विनास वा० वळी ल० पामे उ० उन्माद मस्तपणाने वा० वळी पा० पामे । दी० घणा काललगी वा० वळी रो० रोग ते ज्वरादि शूलादिक। ह० होय के० केवली प० परूप्या ध० धर्मथी भं० भ्रष्ट थाय । त० ते माटे नो० नही निग्रंथ साधु । वि० विभुषानो करणहार । ह० होय ॥ ९ ॥ ॥ १६ ॥

मूलः—नो विभूसाणुवादी हवति से निग्गन्थे। तं कहमिति चे, आयरियाह। विभूसावत्तिए भूसियसरीरे इत्थिजणस्स अभिलसणिज्जे हवति। तओ णं इत्थिजणेणं अभिलसिज्जमाणस्स बम्भचेरे सङ्का वा कङ्खा वा विइगिच्छा वा समुपज्जिज्जा भेदं वा लभेज्जा उम्मायं वा पाउणिज्जा दीहकालियं वा रोगायङ्कं हवेज्जा, केवलिपन्नत्ताओ धम्माओ भंसेज्जा। तम्हा ना विभूसाणुवादी हविज्जा ॥ ९ ॥

गद्य ९ भावार्थ—स्नानादिक करवे करी शरिरनी विभुषा (शोभा) न करे ते साधु कहीए, तेवारे शिष्य पुछतो हवो के शा कारणथी साधु शरीरनी विभुषा न करे, तेवारे आचार्य कहेता हवा, ते निग्रंथ निश्चे विभूषानो करणहार अने विभुषा शरीरवंत साधु स्त्रीजनने वांछनीक होय, तेवारे पछी ते साधु स्त्रीजनने प्रार्थनीक रोगादी उत्पन्नथाने ब्रह्मचर्यने विषे शंका [illegible] ब्रह्मचर्य पाळे के न पाळे? अथवा स्त्रीजने शंका

न पाळु अथवा बीजाने अर्क उपजे के ए साधु भीतर जाता दुष्ट शब्द सांभळे छे वा ते अब्रह्मचर्य पाळता हशे के नहि पाळतो होय ! तथा विषय शब्द सांभळवाथी स्त्रीनी साथे विषय सेववानी आकांक्षा उत्पन्न थाय, अथवा ए ब्रह्मचर्य पाळ्यानुं फळ हशे के नहि होय ! ते माटे स्त्रीने भोगवुं, एम थवाथी चारित्रनो विनाश थाय, पछी ते उन्मादपणुं पामे अने स्त्रीनी अभिलाषथी दीर्घकाळनो रोगिष्ट थाय ने केवळी परुप्या धर्मथी भ्रष्ट थाय ते माटे निश्चे निर्ग्रंथ भीतने भांतरे स्त्रीना विषय संबंधी शब्द न सांभळे. ॥ ६ ॥

अर्थः—नो० न नि० साधु इ० स्त्रीना पु० पाछल्या विषय विलास पु० पुर्वनी । की० क्रिडाने । अ० सांभळनारो इ० होय । से० ते नि० साधु । त० ते फ० शा माटे इ० एम वे० कदाचित पुछे शिष्य । आ० गुरु आ० कहे । नि० साधुने ख० निश्चे इ० स्त्रीनी पु० पुर्वनी रती । पु० पुर्वनी क्रीडाने । अ० संभारताने । ब० ब्रह्मचारीने । ब० ब्रह्मचर्यने विषे सं० संका उपजे वा० अथवा । कं० कंखा उपजे वा० अथवा । वि० फळनो संदेह वा० वळी स० उपजे भे० चारित्रनो विनासने वा० वळी ल० पामे । उ० उन्माद मस्तपणाने वा० वळी पा० पामे । दी० घणा काळलगे वा० वळी रो० ज्वरादि शूळादि रोग इ० उपजे । के० केवळी प० परुप्या ध० धर्मथकी भे० भ्रष्ट थाय त० ते माटे नो० न साधु । इ० स्त्रीना पु० पुर्वनी रती पु० पुर्वनी की० क्रीडा अ० समारे ॥ ६ ॥

मूलः—नो निग्गन्थे इत्थीणं पुव्वरयं पुव्वकीलियं अणुसरित्ता हवइ से निग्गन्थे। तं कहमिति चे, आयरियाह। निग्गन्थस्स खलु इत्थीणं पुव्वरयं पुव्वकीलियं अणुसरेमाणस्स

गमिज्जा। निग्गन्थस्स खलु नो इत्थीणं मज्झाओ इत्थिसंसत्ताओ पणीयाओ पाणभोयणाओ आहारित्तए वा पाणित्तए वा। निग्गन्थस्स खलु नो इत्थीणं मज्झाओ इत्थिसंसत्ताओ पणीयाओ पाणभोयणाओ आहारेमाणस्स वा पाणमाणस्स वा बम्भचेरे संका वा कंखा वा वितिगिच्छा वा समुप्पज्जेज्जा भेदं वा लभेज्जा उम्मायं वा पाउणिज्जा, दीहकालियं वा रोगायंकं हवेज्जा, केवलिपन्नत्ताओ धम्माओ भंसेज्जा तम्हा नो निग्गन्थे इत्थीणं मज्झाओ इत्थिसंसत्ताओ पणीयाओ पाणभोयणाओ आहारेज्जा वा पाणेज्जा वा से निग्गन्थे। दसमे बम्भचेरसमाहिठाणे भवति ॥ १० ॥

१०१०-१० ॥

१०१०-१०

१०१०-१०

१०१०-१०

प्रणीत आ० आहारने । आ० जमतो थको । ब० ब्रह्मचारीने । ब० ब्रह्मचर्यने विषे । सं० शंका उपजे ब्र-ह्मचर्य पाळुं के ना पाळुं अथवा आगल्याने शंका उपजे ए गुरु भेळो केम रहे छे केम पाळतो नथी वा० अथवा कं० अङ्गारनी पांछा उपजे वा० अथवा वि० ब्रह्मचर्य पाळ्यानां फलनो संदेह वा० अथवा स० उपजे ३ । भे० चारित्रना विनाशने वा० थकी ल० पामे ४ ॥ उ० उन्माद मस्तपणाने वा० थकी पा० पामे । दी० घणा का० कालनुंगे वा० थकी । रो० रोग ते ज्वरादिक शूलादिक ह० होय के० केवली प० पण्या । ध० धर्मथी भं० भ्रष्ट थाय । त० ते माटे नो० न । प० प्रणीत । आ० आहारने आ० करे साधु ॥ ७ ॥

मूलः—नो निग्गन्थे पणीयं आहारं आहरित्ता हवइ से निग्गन्थे। तं कहमिति चे, आयरियाह। निग्गन्थस्स खलु पणीयं आहारं आहारेमाणस्स बम्भयारिस्स बम्भचेरे सङ्का वा कङ्खा वा विइगिच्छा वा समुपज्जिज्जा भेदं वा लभेज्जा उम्मायं वा पाउणिज्जा दीहकालियं वा रोगायङ्कं हवेज्जा, केवलिपन्नत्ताओ धम्माओ भंसेज्जा। तम्हा नो पणीयं आहारं आहारेज्जा ॥ ७ ॥

गाथ ७ भावार्थः—वीजां टीपां अरे तेवो यती सरस आहार दिन दिन प्रत्ये न करे तेने साधु कहीये. इंहां शिष्य पुछतो हवो के शा कारणथी तेवो सरस आहार दिन दिन प्रत्ये न करे ! तेवारे आचार्य कहेता हवा ते निर्ग्रंथने निश्चे तेवो घणो सरस आहार पाणी दिन दिन प्रत्ये करता ब्रह्मचारीने ब्रह्मचर्यने विषे शंका उपजे के हुं ब्रह्मचर्य पाळुं के न पाळुं ! अथवा बीजाने शंका उपजे के ए साधु दिन दिन प्रत्ये घणो सरस

मूलः–पणीयं भत्तपाणं तु खिप्पं मयविवड्ढणं ।
बम्भचेररओ भिक्खू निच्चसो परिवज्जए ॥ ७ ॥

गाथा ७ भावार्थ–ब्रह्मचर्यने विषे रक्त छे तेवा साधु, जे सिघ्र कंदर्प (विषय) ने वधारनार एवो सरस आहारपाणी सदाय वर्जे. ॥ ७ ॥

अर्थः–प० धर्म ल० लाभा आहारने । मि० मर्यादाए का० अवसरे । ज० संजम निर्वाहने अ० अर्थे । प० स्वल्प वितनो धणी साधु । ना० अति मात्राए भु० जमे तु० पुरणे ब० ब्रह्मचर्यने विषे र० रातो स० सदाय साधु ॥ ८ ॥

मूलः–धम्मलद्धं मितं काले जत्तत्थं पणिहाणवं ।
नाइमत्तं तु भुञ्जिज्जा बम्भचेररओ सया ॥ ८ ॥

गाथा ८ भावार्थ–जे सदाय ब्रह्मचर्यने विषे रक्तछे तेओ गोचरीना काळे धर्म निवर्तेथा जे मर्यादापूर्वक आहार लाव्यो, ते संयमरुप यात्रानिर्वाह करवाने अर्थे निरागपणे भोगवे पण अति मात्राए (मर्यादा ऊपरांत) न भोगवे.॥८॥

अर्थः–वि० विभूषाने प० वर्जे स० सरिरनो प० समारवुं वं० ब्रह्मचर्यने विषे र० रातो भि० साधु भि० शृंगारना अ० अर्थने धा० धारे न० नहि ॥ ९ ॥

मूलः–विभूसं परिवज्जेज्जा सरीरपरिमण्डणं ।

चेरेसङ्का वा कङ्खा वा विइगिच्छा वा समुप्पज्जिज्जा भेदं वा लभेज्जा उम्मायं वा पाउणिज्जा दीहकालियं वा रोगायङ्कं हवेज्जा, केवलिपन्नत्ताओ धम्माओ भंसेज्जा: तम्हा नो अति-मायाए पाणभोयणं आहारेज्जा ॥ ८ ॥

गाथ ८ भावार्थ-मर्यादा उपरांत अति आहार पाणी करे नहि ते साधु कहीये, तेनाथी शिष्य पूछतो हवो के शा कारणथी अति आहार करे नहि, तेनारे आचार्य कहेता हवा, ते निर्ग्रंथने निशे अति आहार पाणी करता थका ब्रह्मचारीने ब्रह्मचर्यने विषे शंका उपजे के हुं ब्रह्मचर्य पाळुं के न पाळुं ? अथवा बीजाने शंका उपजे के ए साधु मर्यादा उपरांत अति आहार पाणी करे छे तो ते ब्रह्मचर्य पाळतो हशे के नहि पाळतो होय ? तथा अति आहार करवाथी स्त्रीनी साथे विषय सेववा करवानी इच्छा उपजे अथवा ए ब्रह्मचर्य पाळवानुं फळ हशे के नहि होय ? ते माटे स्त्रीने भोगवुं, एम थवाथी चारित्रनो विनाश थाय, पछी ते उन्मादपणुं पामे अने स्त्रीनी अभिलाषाथी दीर्घ काळनो रोगीष्ट थाय अने केवळी प्ररूपेला धर्मथी भ्रष्ट थाय, तेमाटे निर्ग्रंथ मर्यादा उपरांत अति आहार पाणी न करे. ॥ ८ ॥

अर्थः-नो० नहि वि० विभूषानो करणहार ॥ इ० होय से० ते नि० साधु । नं० ते फ० ना माटे इ० एम वे० कदाचित पूछे शिष्य । आ० आचार्य गुरु आ० कहे वि० विभूषानो करणहार । भू० विभूषा सहित स० स्त्रीनो धणी ॥ इ० ती न० जनने अ० वंछनीक इ० होय । न० नेत्रारे पछे णं० अलंकारे

स्त्री संघाते भु० एकठा जमवो य० वली सि० एक आसने वेठो होय ६ सातमे वोले प० प्रणीत भ० भात प० वली पा० पाणी ७ । आठमे वोले अ० अति मात्राए पा० पाणी अने भो० भोजननुं जमवुं ॥ १२ ॥

मूलः—कुइयं रुइयं गीयं सहभुत्तासियाणि य ।
पणीयं भत्तपाणं च अइमायं पाणभोयणं ॥ १२ ॥

गाथा १२ भावार्थ—५ कांकिलाना जेवा शब्दे रोवुं, गीतनुं सांभळवुं, ६ पूर्वे स्त्रीनी संघाते हसवुं, एकठां जम्यां होय, स्त्रीनी संघाते एक आसने वेठा होय, ते संभारवुं, ७ प्रणीत (सरस) आहार पाणी, ८ मर्यादा उपरांत पाणीने भोजननुं जमवुं. ॥ १२ ॥

अर्थः—नवमे वोले ग० शरिरने भू० विभूषा इ० मनवंछीत वलभ च० वली ९ दसमे वोले । य० वली का० शब्दादिक काम भो० भोग दु० जे जितता दोहिला १० । ए दस वोल केहवा छे न० नर मनुष्यने अ० आत्माना ग० गवेखीने । वि० विष ता० तालपुट ज० जेम तालपुट सरिखा ॥ १३ ॥

मूलः—गत्तभूसणमिट्ठं च कामभोगा य दुज्जया ।
नरस्सत्तगवेसिस्स विसं तालउडं जहा ॥ १३ ॥

गाथा १३ भावार्थ—९ मनवांछित वलभ एवीं शरीरनी विभूषा (शोभा), १० जीतवां दोहीला एवा पांच प्रकारना शब्दादिक कामभोग, ए दश बोल आत्माना गवेषी मनुष्यने तालपुट विष सरिखांछे. ॥१३॥

उपजे के साधु शरीरनी विभुषा करे छे तो ते ब्रह्मचर्य पाळनो इछे के नहि पाळतो होय ? तथा विभुषा करवाथी स्त्रीनी साथे विषय सेवन करवानी इच्छा उपजे ? अथवा ए ब्रह्मचर्य पाळ्यानुं फळ इछे के नहि होय ? ते माटे स्त्रीने भोगवुं, एम थवाथी चारित्रनो विनाश थाय, पछी ते उन्मादपणुं पामे अने स्त्रीनी अभिलाषथी दीर्घ काळनो रोगिष्ट थाय अने केवळी परुप्या धर्मथी भ्रष्ट थाय ते माटे, साधु शरिरनी विभुषा न करे ! ॥ ९ ॥ ए ब्रह्मचर्यनी नव वाड कही हवे दशमो ते वाड फरतो कोट कहे छे.

अर्थः—नो० नहि स० मनोहर शब्द रु० रुप र० रस गं० गंध फा० फरसना ज० रागनी वि० भोगवणहार इ० होय से० ते नि० साधु नं० ते क० ना माटे । इ० एम चे० कदाचित पुछे शिष्य आ० गुरु आ० कहे । नि० साधुने स० निश्चे । स० शब्द रु० रुप (र० रस) गं० गंध । फा० फरसना । भ० भोगवना थकां । ब० ब्रह्मचारीने । ध० ब्रह्मचर्यने विषे सं० शंका उपजे ब्रह्मचर्य पाळुं के ना पाळुं अथवा आगळाने शंका उपजे ए स्त्री भेळो रहे छे । केम नथी पाळतो वा० अथवा । कं० अब्रह्मनी वांछा उपजे वा० अथवा वि० ब्रह्मचर्य पाळ्यानां फळनो संदेह वा० वळी स० उपजे ? । भे० चारित्रनो विनाशने वा० वळी ल० पामे । उ० उन्माद मस्तपणाने वा० वळी पा० पामे दी० घणा का० कालनगे वा० वळी । रो० रोग ते ज्वरादिक शूळादिक इ० होय के० केवळी प० परुप्या ध० धर्मथी भं० भ्रष्ट थाय । त० ते माटे नो० नहि । स० शब्द रु० रुप र० रस गं० गंध फा० फरसना अ० सेवणहार भ० होय । से० ते नि० निर्ग्रंथ साधुने द० दसमो ब० ब्रह्मचर्यनुं स० समाधिनो ठा० थानक भ० होय ॥ १० ॥

मूलः—नो सद्दरूवरसगन्धफासाणुवादी हवेज्जा से निग्गन्थे । तं कहमिति चे, आ-

मूलः—देवदाणवगन्धव्वा जक्खरक्खसकिन्नरा ।
बम्भयारिं नमंसन्ति दुक्करं जे करन्ति तं ॥ १६ ॥

॥ १६ ॥

छाया १६ भावार्थ—वैमानिकदेव, ज्योतिषीदेव, भुवनपति, गंधर्व, यक्ष, राक्षस, किन्नर ए व्यंतरनी जाति एवा देवताओ, जे ब्रह्मचर्य पालवां दोहीलुं एवा ब्रह्मचारीने नमस्कार करे. ॥ १६ ॥

अर्थ—ए० ए ब्रह्मचर्यरूप ध० धर्म ध्रु० निश्चल नि० निरंतर सदा छे । सा० शाश्वतो छे जि० तिर्थंकरे दे० कह्यो छे । सि० पूर्वे सिद्धा सि० वर्तमानकाले सीझे छे च० अवधारणे । अ० एणे ब्रह्मचर्ये । सि० सिझसे आगमिक काले त० तेमहिज आ० अनेरा अनंता जीव । सि० एम वे० हुं कहुंछुं ॥ १७ ॥

मूलः—एस धम्मे धुवे निचे सासए जिणदेसिए ।
सिद्धा सिज्झन्ति चाणेण सिज्झिस्सन्ति तहावरे ॥१७॥ [त्ति बेमि]

इति सम्भवेर समाहिठाणा नाम पोडसं अज्झयनं सम्मत्तं ॥ १६ ॥

छाया १७ भावार्थ—ए ब्रह्मचर्य स्वधर्म निरंतर सदाय निश्चल शाश्वतो छे, ए ब्रह्मचर्य पालवे करी पूर्वे अनेरा जीव सिद्ध थया, वर्तमानकाले सीझेछे अने आगमीकाले सीझशे, एम तिर्थंकरे कहेल छे, ए प्रमाणे सुधर्मस्वामीनी शेषाला जंबू स्वामना शिष्यने कहेता हवा के हे जंबू जेम मे श्रीमहावीर देवस्वामीनी सभिपे सांभ-

अर्थः-नं० जे मानव वि० स्त्रीआदिक रहित अ० ब्रह्म व्रत क पाळतो होय ? तथा विशुद्ध प० थकी। च० ब्रह्मचर्यनी र० रक्षाने अ० अर्थे आ० एहवा मानवने वा ए ब्रह्मचर्य पाळ्यानुं फळ हशे के नहि

मूलः-जं विवित्तमणाइण्णं रहियं इत्थिजणेण य । पछी ते उन्मादपणुं पामे अने स्त्रीनी
बम्भचेरस्स रक्खट्ठा आलयं तु निसेवए ॥ पथी भ्रष्ट थाय ते माटे साधु शरीरनी

थाय ? भावार्थ-ब्रह्मचर्य राखवाने अर्थे स्त्री पशु नपुंसक रहित ५ वाड करतो कोट कहे छे.

अर्थः-स्त्रीनी कथा म० मनने प० आनंदनी ज० करणहारी । का० विषयना रा० रागनी वि० धो-
धारणहारी । ब० ब्रह्मचर्यने विषे । र० राखो भि० साधु ते । शी० स्त्रीनी कथाने तु० पुरुषे वि० वर्जे ॥२॥

मूलः-मणपल्हायजणणी कामरागविवड्ढणी ।
बम्भचेररओ भिक्खू थीकहं तु विवज्जए ॥ २ ॥

अर्थ उच्चारवा अ० भावार्थ-मनने आनंदनी करावणहारी, विषयरागनी वधारनारी एवी स्त्री संबंधी शणगार
रस कीरेक होय के जे पुरुषने विषे रक्त होय ते वर्जे. ॥ २ ॥

दिशा धारण करीन इत्यादिक० संगाते संथव० परिचय च० वली सं० ती संगाते क० कथा च० पुरुषे अ०
अर्थः-प० सरस अ० राखो भि० साधु । नि० सदाय प० वर्जे ॥ ३ ॥
ब्रह्मचर्यने विषे र० राखे संथवं थीहिं संकहं च अभिक्खणं ।
रओ भिक्खू निच्चसो परिवज्जए ॥ ३ ॥

वली भो० जमींने पे० पाणी प्रमुख पीइने सु० सुखे व० सुए पा० पाप स० श्रमण इ० एहवो वु० कहिए ॥३॥

मूलः—जे केई पव्वइए निद्दासीले पगामसो ।
भोच्चा पेच्चा सुहं वसइ पावसमणे त्ति वुच्चई ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः—जे साधुने निद्रानो स्वभाव घणो छे, अने आहार पाणी करीने घणीवार लगी सुखे सुइ रहे तेने पापश्रमण कहीए. ॥ ३ ॥

अर्थः—आ० आचार्य उ० उपाध्याय गुरुए सु० सिद्धांत अने वि० विनयमार्गने च० वली गा० शीखव्यो ते० ते गुरुवादिकने विषे चे० पछे पांच आवे खि० हिले वा० अज्ञानि पा० ते पाप स० श्रमण इ० एहवो वु० कहिए ॥४॥

मूल—आयरियउवज्झाएहिं सुयं विणयं च गाहिए ।
ते चेव खिंसई बाले पावसमणे त्ति वुच्चई ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थ—आचार्य, उपाध्याय अने जेणे विनयमार्गने सिद्धांत शीखवेल होय तेवा गुरुवादिकने, पांच आव्या पछी अज्ञानी हीले निंदे एवो होय तेने पापश्रमण कहीये. ॥ ४ ॥

अर्थः—आ० आचार्य उ० उपाध्याय गुरुने । स० साचे मने न० न प० सेवा करे । अ० नहीं प० उपगार माने प० तथा पूजा श्लाघा बोले थ० अहंकारी । पा० ते पाप स० श्रमण इ० एहवो वु० कहिए ॥ ५ ॥

मूलः—आयरियउवज्झायाणं सम्मं न पडितप्पइ ।

मचारी (ब्रह्मचारी) इन्द्रादिक सबलोगने जेने नमे. ॥ ९ ॥

अर्थः-स० अनोहर छन्द ६० लहे ष० वर्ग सं० संयमे च० वली र० रमणे फा० फरसाने त० तेरमे ष० वली । ष० पांच प्रकारना सा० ए कामना गुणने । नि० सदाय प० वर्जे मुनिराज ॥ १० ॥

मूलः—छंदं रुवे य गन्धे य रसे फासे तहेव य ।
पञ्चविहे कामगुणे निच्चलो परिवज्जए ॥ १० ॥

भाषा १० आचार्य-अनोहर छन्दना रूप संयमे रमणे ए पांच प्रकारना कामना गुणने सदाय साधु वर्जे. ॥१०॥

अर्थः-वली पांचमे पांचे ने आ० उपाधय पी० थी त्र० मने वली आ० सहित ए पहिलो बोल १ तेमे बीजे । पां० पांची ष० कथा ६ प० मनने स्थगित ष० वली बीजे बीजे सं० परिचय वे० वली ना० छोडी २ । स० ने सोभागना ई० इच्छिनो । इ० इत्यादि ए चोथो बोल ४ ॥ ११ ॥

मूलः—आलओ थीजणाइण्णो थीकहा य मणोरमा ।
संथवो चेव नारीणं तासिं इन्दियदरिसणं ॥ ११ ॥

भाषा ११ आचार्य-वली पहिले ने पांच प्रकारे कहे ते. १ स्त्रीने वली सहित उपाधय. २ मनने रमणीक एवी स्त्रीनी कथा, ३ स्त्रीनो परिचय, ४ स्त्रीओनी इंद्रियोनुं देखवुं. ॥ ११ ॥

अर्थः-तासिं पांचे बहु० पंचेन्द्रिय सहितनो छाद ६० रूपु सी० सोभाग्यनो ३ तेने बीजे स०

उ० रुडा कर्तव्यनो उलंघणहारो य० वली च० क्रोधि य० वली। पा० ते पाप स० श्रमण त्ति०एहवो वु० कहिए ॥८॥

मूलः–दवदवस्स चरती पमत्ते य अभिक्खणं ।
उल्लङ्घणे य चण्डे य पावसमणे त्ति वुच्चई ॥ ८ ॥

गाथा ८ भावार्थ–उतावळो उतावळो चाले, इर्या सुमतिने विषे प्रमादे चाले, वारंवार रुडा कर्मनो कर्तव्यनो ओलंघणहार, क्रोधवंत एवो होय तेने पापश्रमण कहीये. ॥ ८ ॥

अर्थः–प० पडिलेहण करे ते प० प्रमादि थको करे। ज० जिहां तिहां नांखे पा० पात्र क० कंबलादिक उपगरणने प० पडिलेहणा करवाने विषे अ० सावधान नहि। पा० ते पाप स० श्रमण त्ति० एहवो वु० कहिए ॥९॥

मूलः–पडिलेहेति पमत्ते अवउज्झइ पायकम्बलं ।
पडिलेहाअणाउत्ते पावसमणे त्ति वुच्चई ॥ ९ ॥

गाथा ९ भावार्थ–प्रमादी थको पडीलेहणा करे अने ज्यां त्यां कांबळी पात्रादिक उपगरणने नांखे अने पडीलेहणा करवाने विषे असावधान एवो होय तेने पापश्रमण कहीये. ॥ ९ ॥

अर्थः–प० पडिलेहण करे ते प० प्रमादि थको करे से० ते किं० कांइक विकथा वृ० निंद्ये नि० सांभळीने पडिलेहणादिकथी उपयोग चुके गु० गुरुने वचने कथनने पा० असातना उपजावे नि० सदाय। पा०

साधु । स० सकाना था० थानक स० सर्व । व० धन प० एकाग्र [illegible] साधु ॥ १३ ॥

मूलः—दुज्जए कामभोगे य निच्चसो परिवज्जए ।
सद्धायाणाणि सव्वाणि वज्जेज्जा पणिहाणवं ॥ १४ ॥

गाथा १४ भावार्थ—जीतवां दोहीला एवा पांच प्रकारना कामभोगने सदाय साधु वर्जे अने एकाग्रह चित्तना धणी साधु सर्व शंकानां स्थानक वर्जे. ॥ १४ ॥

अर्थः—ध० धर्म रूपिया आ० आरामने विषे च० विचरे भि० साधु ठि० धीर्यवंत ध० धर्मरुप रथे प्रवर्तवाने विषे सा० सारथी ध० धर्मरुप आ० आरामने विषे र० रातो दं० दमतेंद्रि । बं० ब्रह्मचर्यने विषे स० समाधिवंत ॥१५॥

मूलः—धम्मारामे चरे भिक्खू धिइमं धम्मसारही ।
धम्मारामे रते दन्ते बम्भचेरसमाहिए ॥ १५ ॥

गाथा १५ भावार्थ—जे धैर्यवंत धर्म रूपीयो रथ प्रवर्तावनाने विषे सारथी समान अने धर्म रूपीया आरामने विषे रक्त अने इंद्रियोना दमनारने ब्रह्मचर्यने विषे समाधी सहित एवा साधु धर्म रूपीया आराम (बगीचा) ने विषे विचरे. ॥ १५ ॥

अर्थः—दे० देव वैमानीक ज्योतिषी देव । दा० दानव भवनपति गं० गंधर्व । ज० जक्ष र० राक्षस कि० किन्नर ए० अंजलीए जाणि । बं० ब्रह्मचारीने न० नमस्कार करे । दु० दुष्कर जे० जे पुरुष । क० ब्रह्मचर्यने करे पाले ते० ते पुरुषने ॥ १६ ॥

नेरानी भली प्रज्ञा (बुद्धि) ने हणे अने जबडाने विषे तेमज वचनना कलेशने विषे रक्त छे एवो होय तेने पापश्रमण कहीये. ॥ १२ ॥

अर्थः-अ० अथिर आ० आसनने विषे कु० कचकचता आसनने विषे ज० जिहां त० तिहां नि० बेसे । आ० आसनने विषे बेसे तिहां अ० सावधानपणे सहित न बेसे, वारंवार हाथपगादिक हलावतो चपळाइ करे ॥ पा० ते पाप स० श्रमण त्ति० एहवो बु० कहीए ॥ १३ ॥

अध्य० ॥ १७ ॥

मूलः-अथिरासणे कुकुइए जत्थ तत्थ निसीयई ।
आसणम्मि अणाउत्ते पावसमणे त्ति वुच्चई ॥ १३ ॥

गाथा १३ भावार्थ-अस्थिर आसनने विषे कचकचाट थाय तेवा आसनने विषे ज्यां त्यां बेसे अने सावधानपणा रहित आसनने विषे बेसे अने त्यां वारंवार हाथपगादिक हलावतो थको चपळाइ करे एवो होय तेने पापश्रमण कहीये. ॥ १३ ॥

अर्थः-स० सचित्त र० रज खरडे पा० पग पुंजया विना । सु० संथारा उपर सुवे ॥ से० सेज्याने उपाश्रयादिकने न० पुंजे प० पडिलेहे नहि ॥ सं० संथारे सुतो थको ॥ अ० सावधानपणे रहित चपळाइपणे प्रवर्ते ॥ पा० ते पाप स० श्रमण त्ति० एहवो मु० कहीए ॥ १४ ॥

मूलः-समरक्खपाए सुवइ सेज्जं न पडिलेहइ ।

... सु० सा-
...० साहत छे सु० भनिने दु० दुर्लभ ल० पामीने चो० समकितनो ला० चारित्रने वि० विचरे प० दिसा लीधा पछी य० यती ज० जेम सु० दिक्षने सुख उपने तेम अनगें तु० पुरणे ॥ १ ॥

मूलः—जे केइ उ पव्वइए नियण्ठे धम्मं सुणित्ता विणओवन्ने ।
सुदुल्लहं लहिउं बोहिलाभं विहरेज्ज पच्छा य जहा सुहं तु ॥ १ ॥

गाथा १ भावार्थ—जे कोइ दिसा लेइने साधु थयो ने भगवंत धर्म सांभलीने विनयभाव सहित छतो अतिशे पामवा दुकर एवुं समकित ने चारित्र पाळीने पछी जेम अरिहंते सुख उपने तेम विचरे ॥ १ ॥

अर्थः—जे० उपाश्रयने द० भली पाम्यो पा० ओढवाना वस्त्र मि० पात्रो भ० छे । उ० मळे छे भो० जमवाने अन्न त० तेमहिज पा० पीवाने पाणी जा० हुं जाणुंछुं जं० जे जीवादिक पदार्थ व० वर्तेछे भा० हे आउसतंत इ० एम । किं० शब्दे ना० संभावनाए । का० शुं करुं सु० सुयने भणने करी भं० हे पुज्य ॥ २ ॥

मूलः—सेज्जा दत्ता पाउरणं मि अत्थि उप्पज्जई भोत्तु तहेव पाउं ।
जाणामि जं वट्टइ आउसो त्ति किं नाम काहामि सुएण भन्ते ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः—शिष्य कहेछे एमो हे पुज्य ! उपाश्रय भलो पाम्यो, ओढवानां वस्त्र पात्रे छे, जमवाने अन्न पाणी पण मळेछे अने जीवादिक पदार्थ वर्तेछे, ते हुं जाणुं छुं, तो हे आयुष्यमन ! सुयने भणने करी शुं करुं ॥२॥

अर्थः—जे० जे के० कोइ प० साधु नि० निद्रानो सी० स्वभाव घणोछे जेहने प० घणीवार लगे सूइ रहे

अर्थः–आ० गुरुवादिकने प० छांडिने प० पर पाखंडीने से० सेवे गा० छ मासमांहे एक संघाडाथी गणिए० बीजे संघाडे जाय ने गाणं गणिए० कहिये ते दु० दुष्ट भूत जाणवो हिलनीक होय पा० ते पाप स० श्रमण त्ति० एहवो वु० कहीए ॥ १७ ॥

मूलः–आयरियपरिच्चाई परपासण्डसेवए ।
गाणंगणिए दुब्भूए पावसमणेत्ति वुच्चई ॥ १७ ॥

गाथा १७ भावार्थ–गुरुवादिकने छांडे अने पर पाखंडीने सेवे अने छ मास मांही एक संप्रदायथी बीजा सम्प्रदायमां जाय अने भुंडा आचारनो धणी निंदाय एवो होय तेने पापश्रमण कहीये. ॥ १७ ॥

अर्थः–स० पोताने गे० घरप० छांडिने प० गृहस्थ गे० घरने विषे वा० फरे संसारनो कामार्थि लोल्पीपणो य० वली नि० जोतिष निमित्त परुपवे करी य० द्रव्यनी उपार्जना करे। पा०ते पाप स० श्रमण त्ति० एहवो वु० कहीए॥१८॥

मूलः–सयं गेहं परिच्चज्ज परगेहंसि वावरे ।
निमित्तेण य ववहरइ पावसमणे त्ति वुच्चई ॥ १८ ॥

गाथा १८ भावार्थ–पोतानुं घर तजीने ग्रहस्थने घरे संसारना कामार्थि ने लोल्पी (लुब्ध) थको फरे वली ज्योतिष निमित्त पकाडे करी द्रव्यनी उपार्जना करे एवो होय तेने पापश्रमण कहीये. ॥ १८ ॥

अर्थः–स० पोतानी ज्ञातिवंधनो वि० आहार जे० जमे ने० नवाछे सा० साधुदाणीनो आहार। वि० गृहस्थने घरे तथा ग्रहस्थीना वि० आसन उपरे स० वली वा० वेसे ॥ पा० ते पाप स० श्रमण त्ति० एहवो वु० कहीए ॥ १९ ॥

गाथा ५ भावार्थ–जे कोई अहंकारी छतो, आचार्य उपाध्यायनी साचे मने करीने सेवा न करे, उपकार न माने तेमज पुजा श्रद्धा न बोले एवो होय तेने पापश्रमण कहीए. ॥ ५ ॥

अर्थः–स० पगे चांपतो थको पा० त्रस प्राणने बी० सचित्त बीज ते ह० अंकुरादिक प्रणने य० पृथव्यादिक जीवने मर्दतो थको एहवो अ० असंजती सं० संजतीपणो म० मानतोथको पा० ते पाप स० श्रमण त्ति० एहवो वु० कहिये॥६॥

मूलः–सम्मद्दमाणो पाणाणि बीयाणि हरियाणि य ।
असंजते संजयमन्नमाणो पावसमणे त्ति वुच्चई ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः–त्रस प्राणीने, सचेत बीजने, हरीकाय, अंकुरादिक तृणने, पृथ्वी, पाणी, तेउ, वायुना जीवने मर्दतो, पगे चांपतो, असंयती थको संयतीपणुं पाले एवो होय तेने पापश्रमण कहीये. ॥ ६ ॥

अर्थः–सं० तृणादिक संथाराने फ० पाटने पी० बाजोठादिक। नि० सज्झाय करवा बेसवानी भूमिकाने। पा० पुछणाने। अ० पुंजा विना एटला वाना उपर आ० बेसे। पा० ते पाप स० श्रमण त्ति० एहवो वु० कहिए ॥७॥

मूलः–संथारं फलगं पीढं निसेज्जं पायकम्बलं ।
अप्पमज्जियमारुहति पावसमणे त्ति वुच्चई ॥ ७ ॥

गाथा ७ भावार्थ–तृणादिकना संथाराने, पाटने, बाजोठादिकने, सज्झाय करवानी भूमिकाने, बेसवानी भूमिकाने, पापपुछणाने, कांबळीने एटला वानाने पुंज्या विना ते पर बेसे तेने पापश्रमण कहीये. ॥ ७ ॥

अर्थः–द० उतावलो उतावलो च० चाले । प० इर्यादिकने विषे प्रमादि य० पूरणे अ० वारंवार ।

अर्थः-जे० जे व० वर्जे ए० ए स० सदाय उ० वली दो० दोषने से० तें सु० सुव्रती हो० होय सु० साधुना वृंद म० मध्ये ॥ अ० ए लो० लोकने विषे अ० अमृतनी व० परे । पू० पुजनीक होय ॥ आ० आराधे (दु० बे) लो० लोक । इ० ए लोक त० तेमहिज । प० परलोकने पण आराधे त्ति० एम वे० हुं कहुंछुं ॥ २१ ॥

मूलः-जे वज्जए एते सदा उ दोसे से सुव्वए होइ मुणीण मज्झे ।
अयंसि लोए अमयं व पूइए आराहए लोगमिणं तहा परि ॥२१॥ त्ति बेमि ॥

॥ इति पावसमणिज्जनाम सप्तदशं अध्ययनं सम्मत्तं ॥ १७ ॥

गाथा २१ भावार्थः-ए पूर्वोक्त दोष सदाय जे वर्जे ते साधुना वृंद मांही सुव्रत्ति होय, अने ते ए लोकने विषे अमृतनी पेरे पूज्यनिक होय, अने आ लोक तेमज परलोक ए बन्ने लोकने आराधे एम सुधर्मा स्वामी पोताना जंबू नामना शिष्यने कहेता हवा के हे जंबू ? जेम में श्री महावीरदेवस्वामी समीपे सांभल्युं हतुं; तेम में तुंज प्रत्ये कहुं. ॥ २१ ॥ ए सत्तरमा अध्ययनने विषे पाप स्थानक वर्जवो कह्यो ते तो संयती होय ते वर्जे अने रस लंपटपणुं ने ऋद्धीने छांडवे करीने संयतीपणुं होय, तेथी अढारमा अध्ययनने विषे संयती राजऋषिनुं उदाहरण कहे छे. ॥ १७ ॥

अर्थः-कं० कंपिलपुर नामा न० नगरने विषे रा० राजा उ० तेणे राजाए पुन्यने उदये करी पाम्यो छे

गुरुपारिभावए निच्च पावसमणे त्ति वुच्चइ.॥ १० ॥

गाथा १० भावार्थ-प्रमादी थको पडीलेहणा करे अने कांइक विकथाने सांभळीने पडिलेहणादिकथी उपयोग चुके अने गुरुने वचने करीने पराभवे ने नित्य सदाय असाता उपजावे एवो होय तेने पापश्रमण कहीये. ॥१०॥

अर्थः-ज० पणो मा० मायां कपट करे य० वळी मु० घणो मुखरि थ० अहंकारी लु० लोलपि लोभीओ अ० अजितेंद्रि अ० साधर्मिकने संविभाग न करे अ० अपतिनकारीयो पा० ते पाप स० श्रमण ति० एहवो वु० कहीए॥११॥

मूलः-बहुमाई य मुहरी थद्धे लुद्धे अणिग्गहे ।
असंविभागी अवियत्ते पावसमणे त्ति वुच्चई ॥ ११ ॥

गाथा ११ भावार्थ-घणी कपटाइ करे, घणुं जुदुं बोले, अहंकारी, लोभीओ, अजितेंद्रिय, स्वधर्मिनो संविभाग न करे, अप्रतिनकारीयो एवो होय तेने पापश्रमण कहीये. ॥ ११ ॥

अर्थः-वि० विवादरुप जयडाने च० पुनः उ० उदेरे संभारे अ० अधर्मि अ० पोतानी बुद्धिए करी प० भली बुद्धि मद्रा (इ० इणी छे जेणे) वु० जयडाने विषे क० वचनना बलेशने विषे र० राता छे पा० ते पाप स० श्रमण ति० एवो वु० कहीए ॥ १२ ॥

मूलः-विवादं च उदीरेइ अहम्मे अत्तपन्नहा ।
वुग्गहे कलहे रत्ते पावसमणे त्ति वुच्चई ॥ १२ ॥

गाथा १२ भावार्थ-विवाद जयडाने उदेरे (संभारे) अने मुंढा आचारवंत पोतानी कुबुद्धिये करीने

गाथा ३ भावार्थः–मृगने मेरिने घोडे चडयो थको कंपीलपुर नगरना केशरी नामना उद्यानने विषे वीचरावतो थको केटलाएक मृगने मांसने विषे गृद्धी (लुब्ध) थको वध करतो हतो. ॥ ३ ॥

अर्थः–अ० हवे के० केसरि उ० उद्यानने विषे। अ० अणगार त० तपरुप ध० धन सहित। स० सध्याय ज्झा० धर्म ध्यानादिक ध्यान। सं० सहित ध० धर्म ज्झा० ध्यान झि० ध्याय छ एकाग्र चिते करी ॥ ४ ॥

मूलः–अह केसरम्मि उज्जाणे अणगारे तवोधणे ।
सज्झायज्झाणसंजुत्ते धम्मज्झाणं झियायति ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थः–हवे ते केसरी उद्यानने विषे तप रुप धनना धणी अने स्वाध्यायने धर्म ध्यानादिके करी सहित एवा अणगार (साधु) तिहां एकाग्रहचित्ते धर्म ध्यान ध्याता हवा. ॥ ४ ॥

अर्थः–अ० तृसे करी व्याप्त मं० नागरवेलना मंडप हेठे झा० धर्म ध्यान ध्यावेछे खव० पपावीने आ० आश्रवने त० ते मुनिने आ० आव्यो मि० मृगपा० पासे व० वधेछे ते मृग आव्यो मुनि पासे से० ते न० राजा वधेछे ॥५॥

मूलः–अफोवमण्डवम्मि झायति खवियासवे ।
तस्सागए मिगे पासं वहेति से नराहिवे ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः–ते मुनितृसे करीने व्याप्त (संकीर्ण) एवा नागर वेलना मंडप हेठे आश्रव खपावीने धर्मध्यान ध्याय छे, ते मुनिनी पासे मृग आव्यो, ते मृगनो राजा वध करतो हतो. ॥ ५ ॥

अर्थः–अ० हवे आ० घोडे ग० चडयो थको रा० ते राजा। सि० शिघ्र आ० आवीने सो० ते राजा

गाथा १४ भावार्थ-सचेतरने खरडेला पगने पुंज्या विना संथारा उपरे सुवे अने उपांथादिक संज्यान पुंजे परीक्षवे नहि अने संथारे सुतो थको सावधानपणा रहित चपळपणे मचर्ने एवो होय तेने पापश्रमण कहीये.॥१४॥

अर्थः-दु० दुध द० दही वि० विगयना आ० आहारे अ० वारंवार॥ अ० अरक्त रातो नहि य० वली त० तप क० करवाने विषे ॥ पा० ते पाप स० श्रमण त्ति० एहवो वु० कहीए ॥ १५ ॥

मूलः-दुद्धदहीविगईओ आहारेइ अभिक्खणं ।
अरते य तवोकम्मे पावसमणे त्ति वुच्चई ॥ १५ ॥

गाथा १५ भावार्थ-दुध दही विगयने वारंवार घणी वखत आहारे (जपे) अने तप करवाने विषे अरक्त एवो होय तेने पापश्रमण कहीये. ॥ १५ ॥

अर्थः-अ० उगता सूर्यथी ते अ० आथमता य० वली सू० सूर्य गुधि आ० आहार करे अ० वारंवार चो० गुरुवादिके शिखामण देता थका प० साहमी शिखामण दीए पण शिखामण न पामे पा० ते पाप स० श्रमण त्ति० एहवो वु० कहीए ॥ १६ ॥

मूलः-अत्थन्तम्मि य सूरम्मि आहारेइ अभिक्खणं ।
चोइओ पडिचोएइ पावसमणे त्ति वुच्चई ॥ १६ ॥

गाथा १६ भावार्थ-सूर्योदयथी ने सूर्य अस्त थता सुधी वारंवार आहार करे अने गुरुवादिक शीखामण देता सामुं बोले अने शीखामण न माने एवो होय तेने पापश्रमण कहीये. ॥ १६ ॥

मूलः–आसं विसज्जइत्ताणं अणगारस्स सो निवो ।
विणएण वन्दए पाए भगवं एत्थ मे खमे ॥ ८ ॥

गाथा ८ भावार्थः–हवे ते राजा घोडो मुकीने विनयसहित मुनिना पग वांदीने एम कहेतो हवो के हे भगवंत ? अहीं मृग वधरूप महारो अपराध क्षमा करो (माफ करो). ॥ ८ ॥

अर्थः–अ० हवे सो० ते म० भगवंत पुज्य अ० अणगारना० ध्याने म० मिश्रीत छे धर्म ध्यानने विषे तल्लीन छे रा० राजाने न० न दिधो प० प्रत्युत्तर त० तेवार पछी रा० राजा भ० भये करी इ० आकुलव्याकुल थयो ॥ ९ ॥

मूलः–अह मोणेण सो भगवं अणगारे झाणमस्सिते ।
रायाणं न पडिमन्तइ तओ राया भयद्दुओ ॥ ९ ॥

गाथा ९ भावार्थः–हवे ते वखते पुज्य (मुनि) मौन्य भावे धर्मध्याननें विषे तल्लीन होवाथी राजानें पाछो प्रत्युत्तर न दीधो, ते वारे राजा भये करी आकुळव्याकुळ थयो. ॥ ९ ॥

अर्थः–सं० संजति राजा अ० हुं अ० छुं । भ० हे भगवंत वा० बोलावो मे० मुजने कु० कोण्यो थको ते० ने अ० अणगार मुनी । ड० वाले न० नर मनुष्यनी को० कोडिने ॥ १० ॥

मूलः–मुञ्चओ अहमस्मीति भगवं वाहराहि मे ।

मूलः—भंजइ पिण्डं जमइ भुंजइ सामुदाणियं ।
गिहिनिसेज्जं च वाहेइ पावसमणे त्ति वुच्चई ॥ १९ ॥

गाथा १९, भावार्थ—पोतानी ज्ञातिनोज आहार करे पण सामुदाणी (सार कुल)नो आहार न खाँडे अने वृद्ध रोगी ने तपस्वी ए त्रण कारण सिवाय गृहस्थने घेरे तथा गृहस्थना आसन पर बेसे, एवो होय तेमे पाप श्रमण कहीये॥१९॥

अर्थः—ए० एहवो होय ने पं० पासत्थो १ । उसन्नो २ । अहाछंदो ३ संसत्तो ४ कुशिलीयो । ए ५ कु० कुशिल सहित तथा ज्ञान १ दर्शन २ चारित्र ३ तप ४ वीर्य ५ ए पांचनो कुशिल अर्थात् आश्रवनो अण-रुंधणहार जाणवो ॥ रु० यतीना वेषनो प० धरणहार । हे० एणो हिणो अ० ए लो० लोकने विषे वि० विषनी पे० पेर गं० निंदनीक न० नहि मु० सासुथी प० प्रधान से० ते पापश्रमणने इ० ए लोकना सुखने गणे ने० नहि प० पर लो० लोके सुखी ॥ २० ॥

मूलः—एयारिसे पञ्चकुसीलसंवुडे रूवन्धरे मुणिपवराण हेट्ठिमे ।
अयंसि लोए विसमेव गरहिए न से इहं नेव परत्थलोए ॥ २० ॥

गाथा २० भावार्थः—पूर्वोक्त कह्यो एवो होय ते १ पासथो २ उसनो ३ अहाछंदो ४ संसतो ५ कुशीलीयो ए पांच कुशील सहित तथा १ ज्ञान २ दर्शन ३ चारित्र ४ तप ५ वीर्य ए पांचनो कुशीलीयो, अने आश्रवनो अण रुंधनार ने यतीना वेसनो धरनार अने प्रधान (उत्तम) सासुथी गणो हीणो एवो होय ते ए लोकने विषे विषनी पेरे निंदनीक ने एवो पापश्रमण ए लोकने विषे सुखी नहि, अने परलोकने विषे पण सुखी नहि. ॥ २० ॥

जीवतव्यने रुपने विषे तं० तुं मु० मुंढपणे मूर्छायछे हे रा० राजा पे० परलोकनो अर्थ तुं न० नथि अ०जाणतो ॥१३॥

मूलः—जीवियं चेव रूवं च विज्जुसंपायचञ्चलं।
जत्थ तं मुज्झसी रायं पेच्चत्थं नावबुज्झसि ॥ १३ ॥

गाथा १३ भावार्थः—हे राजा तुं जीवतव्य अने रुपने विषे मुंढपणे मुर्छाय छे, ने आऊखुंने रुप वीजळीना चमत्कारनी पेरे चपळ छे अने परलोकनो अर्थ पण तुं नथी जाणतो. ॥ १३ ॥

अर्थः—दा० भार्या य० वळी सु० पुत्र चे० पदपुरणे मि० मित्र य० वळी त० तेम बं० बांधव जी० घरनो धणी जीवे त्यां लगी अ० घरना धणीनां उपार्ज्या धनादिक भोगवता थका जीवे म० घरनो धणी मुओ तेवार पछी तेहने न० न जाय अ० केडे परभवे य० वळी ॥ १४ ॥

मूलः—दाराणि य सुया चेव मित्ता य तह बन्धवा।
जीवन्तमणुजीवन्ति मयं नाणुव्वयन्ति य ॥ १४ ॥

गाथा १४ भावार्थः—स्त्री पुत्र बांधवादिक ज्यांसुधी घरनो धणी जीवे त्यांलगी तेनुं उपराजेलधनादिक भोगवे, पण ते घरधणी मुवा पछी तेनी केडे परभवे न जाय. ॥ १४ ॥

अर्थः—जी० काढे म० मुवाने पु० पुत्र पि० पिता मुओ होय तेहने प० अतिघणो दु० दुःखी थको। पि० पिता वि० पणत० तेमज पु० पुत्रने काढि मुओ थके बं० भाइने पणभाइ मुवा थका काढे रा० हे राजा

मूलः—कम्पिले नगरे राया उदिण्णबलवाहणे ।
नामेणं संजए नामं मिगवं उवणिग्गए ॥ १ ॥

गाथा १ भावार्थः—पंचालदेशे कंपीलपुर नगरने विषे संजती नामे राजा, तेने पुन्योदय करीने चतुरंगीणी सैन्या तथा वाहनी प्रबल ऋद्धी वर्तेज छे, ते राजा एकदा मस्तावे मृगना शिकारने माटे पोतानी नीकल्यो.॥१॥

अर्थः—ते० अर्थात् अर्णीका स० हाथिनिअनीका सहित । र० रथनि अर्णीका सहित त० तेमज य० वली पा० पायदला सबदानी अनीका सहित म० मोटि रुद्धि स० समस्त प० परिवारे परिवर्यो निकल्यो ॥२॥

मूलः—हयाणीए गयाणीए रहाणीए तहेव य ।
पायत्ताणीए महया सव्वओ परिवारिए ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः—ते अश्व (घोडा) नी अर्णीका हाथीनी अणीका रथनी अणीका तेमज पायदला सबदानी अर्णीका एवी रीते ऋद्धीने समस्त परिवार परवर्यो. ॥ २ ॥

अर्थः—मि० मृगने मृ० हेतिने हे० घोडाए ग० चढ्यो थको निकल्यो २ ॥ कं० कंपीलपुर नगर संबंधीओ उ० उद्यान के० केशरि उद्यानने विषे । भी० भीहतो सं० थको मि० केसरिक मृगने त० तिहां । व० वधे छे ए० एम्हं मृ० मृग थको ॥ ३ ॥

मूलः—मिए छुभित्ता हयगतो कम्पिल्लुज्जाण केसरे ।
भीए सन्ते मिए तत्थ वहई सम्मुच्छिए ॥ ३ ॥

म[illegible] कं कम्मं सुहं वा जइ वा दुहं ।
कम्मुणा तेण संजुत्तो गच्छती उ परं भवं ॥ १७ ॥

[illegible] पुरुष जे शुभाशुभ (सुखकारी ने दुःखकारी) कर्म कर्यां, ते कर्मेकरी सहित ते पुरुष परभव प्रत्ये एम जाणीने हे राजा तुं तप आचर ! ! ! ॥ १७ ॥

अ० [illegible] ते मुनी पासे सो० ते राजा ध० धर्म । अ० अणगारने अ० समिपे म० मोक्ष [illegible] संवेग । नि० मनुष्य देवतादिकनां कांम भोगरूप अरुचि रूप निर्वेदतणे करी स[illegible] ॥ १८ ॥

मूल.—सोऊग तस्स सो धम्मं अणगारस्स अन्तिए ।
महया संवेगनिव्वेदं समावन्नो नराहिवो ॥ १८ ॥

गाथा १८ भावार्थः—ए प्रमाणे मुनिनी समीपे संयती राजा धर्म सांभळीने मोटा मोक्षना अभिलाषरूप संवेग (वैराग्य) ने मनुष्य देवतादिकना कामभोग ऊपरे अरुचीरूप ते निर्वेद करी सहित थयो. ॥ १८ ॥

अर्थः—स० ते संजति राजा च० छांडिने र० राज्यनेनि० निकल्यो जि० जिनसासननेविषे म० गर्दभालीमुनी नामा भ० भगवंतपुज्य अ० अणगारने अ० समिपे ॥ १९ ॥

न० त्यां । इ० इच्छामि० मृगने उ० वली । पा० देखीने अ० अणगारने न० तिहां पा० देखीने ॥ ५ ॥

मूलः—अह आगओ राया सिग्घमागम्म सो तहिं ।
हए मिए उ पासित्ता अणगारं तत्थ पासई ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः-हवे घोडे चढ्यो थको संजती राजा त्यां शिघ्र (उतावळो) आवी हण्या मृगने देखीने त्यां अणगारने देखतो हवो. ॥ ६ ॥

अर्थः-अ० हवेग० राजा न० तिहां सं० चीतवीयको अ० इम जाणेले अणगारना मृगने म० मोटोमु इ० हण्यो ए मृग मुनिनो हुंते भणी म० मे उ० वली मे० मोटा पु० पुन्यने घणीए र० रस गि० गृद्धे ध० जीव घात कीधी ॥७॥

मूलः—अह राया तत्थ संभन्तो अणगारो मणा हतो ।
मए उ मन्दपुण्णेणं रसगिद्धेण घण्णुणा ॥ ७ ॥

गाथा ७ भावार्थ-त्यां राजा मुनीने देखीने चीतवो भयभ्रांत थयो अने मनमां विचारवा लाग्यो के आ मृग (हरण) मुनिनो होवो जोइए, कारण के आटले मुधी दोडीने मुनिनी पासे आव्यो, माटे जरुर ते मृग मुनिनोज हो ते मृगने में हण्यो (मार्यो) ते भणी हुं मोटा पुन्यनो धणी मांसनी लालचथी साधुना मृगने पण हुं ओळखी शक्यो नहि तेथी हुं निश्चे मारूं पुन्य परवारी बेठो. ॥ ७ ॥

अर्थः-आ० घोडाने वि० मुकीने । अ० साधुना गो० ने । निवो० राजा वि० विनये सहित वं० वांदे ते पा० पगने । ध० हे भगवान ए० इहां मृगवधरूप मे० माहरो अपराध ख० खमो ॥ ८ ॥

कहं पडियन्नी बुद्धे कहं विणीए त्ति वुच्चसा ॥ २१ ॥

छाया २१ भाषार्थः—तेनाम १ नाम शुं ? २ तारुं गोत्रशुं ? ३ ज्ञाने अर्थे त्रीकर्ण शुद्ध क्रिया करेछे ते पडीएनी आदरे छे, ४ क्रिया आचार्यने सेवेछे ! ५ अने कोण विनित शिष्य कहीए ? (एपांचप्रश्नपूछ्यां)॥२१॥

मूलः—२१ संजती राजऋषी क्षत्रीराजरूपी प्रते कहेछे सं० संजतिमाहरो ना० नाम ना० नामे । त० तेमणे० गोत्रने गो० गोतम । ग० गर्दभालिमुनि म० माहरा आ० धर्माचार्य वि० श्रुतज्ञानभने च० चारित्रना पा० पारगामी ॥ हवे पांचमो प्रश्न तेहनो उत्तर कहेछे ॥ २२ ॥

मूलः—सञ्जओ नाम नामेणं तहा गोत्तेण गोतमो ।
गद्दभाली ममायरिया विज्जाचरणपारगा ॥ २२ ॥

छाया २२ भाषार्थः—तेवार संयति मुनि क्षत्री राज ऋषिने पुर्वोक्त पांच प्रश्नना उत्तर कहेता हवा, १ संयति माहरुं नाम, २ गौतम माहरुं गोत्र, ३ श्रुत ज्ञानने चारित्रनो पारगामी एवो गर्दभाली मारो आचार्य, ४ जे आचार्य जीवपणथी निवर्त्यो ते ऋषि मोक्ष पामे तेमाटे सत्य जाणवे ते गुरुने मोक्षने अर्थे सेववा, ५ अने तेने मेंर ते विनित शिष्य जाणवो. ॥ २२ ॥

भाषाः—क्रि० आत्मादिना क्रियाना करणहार । १८० क्रियावादि १ अ० ८४ अक्रियावादि २ । वि० वनीत विनयवादि ३ ॥ अ० अज्ञा ६७ अज्ञानवादि ४ च० एम त्रणमेने जेणद शिष्यवादि ॥ म० देशनीराजऋषि

गाथा १० भावार्थः-ते वारे राजा कहेतो हवो के हे भगवंत ? हुं संयतीराजा छुं, मुजने बोलावो, केमके मुनि कांप्यो पछी तेनुं लेश्याए करीने क्रोडी मनुष्यने बाळे. ॥ १० ॥

अर्थः-अ० अयय प० हे राजा तु० तुजने। अ० तुंपण अभयदाननो दा० दातार भ० थातुं प० वळी॥ अ० अनित्यनी० मनुष्य लो० लोकने विषे कि० किम हिं० हिंस्याने विषे प० सन्मुख थाय ॥ ११ ॥

मूलः-अभओ पत्थिवा तुज्झं अभयदाया भवाहि य ।
अणिच्चे जीवलोगम्मि किं हिंसाए पसज्जसि ॥ ११ ॥

गाथा ११ भावार्थः-ते वारे मुनि ध्यान पारीने कहेता हवा हे राजा ? तुजने अभय हो. ! अने तुं पण अभयदाननो दातार था ? अने ए अनित्य मनुष्यलोकने विषे केम हिंस्याने विषे सन्मुख थायछे ??? ॥११॥

अर्थः-अ० निवारे स० सर्व प० मुकिने । ग० जावुं अ० कर्मने वसे आपणे वसे नहि ते० तारे अ० अनित्य जी० मनुष्य लो० लोकने विषे कि० शुं र० राज्यने विषे प० आसक्त थाय छे ॥ १२ ॥

मूलः-जया सव्वं परिच्चज्ज गन्तव्वमवसस्स ते ।
अणिच्चे जीवलोगम्मि किं रज्जम्मि पसज्जसि ॥ १२ ॥

गाथा १२ भावार्थः-ज्यारे सर्व मुकीने कर्मने वसे करीने जवुं छे तो ए मनुष्यलोकने विषे तथा राज्यने विषे शुं ? आसक्त थायछे. ॥ १२ ॥

अर्थः-जी० आउषो चं० अने क० मन च० रखी वि० वीजळीना सं० चमत्कारनी परे चं० चंचळछे ज० जे

नित्यछे, २ कोइ कहे जीव आपणी इच्छाए काळथी अनित्य छे, ३ कोइ कहे जीवपरथी (ते अनेरा पदार्थनी अपेक्षाए ह्रस्वत्व दीर्घत्वनी पेरे ते) छे ने काळथी नित्य छे, ४ कोइ कहे जीवपरथी छे ने काळथी अनित्य छे, एवी रीते काळवादी चार प्रकारे जीव माने छे, तेवीज रीते, २ अजीव, ३ पुन्य, ४ पाप, ५ आश्रव, ६ संवर, ७ निर्जरा, ८ बंध, ९ मोक्ष, ए नवे पदार्थने चार चार प्रकारे काळवश मानेछे, तेथी तेना नवे चोक ३६ भेद काळवादीना जाणवा. १

॥१७॥

॥ १८ ॥

२ बीजो स्वभाववादी ते सर्वे वस्तु स्वभावे नीपजेछे, स्वभावे वणसेछे, जेम स्वभावेज योवनवंती स्त्री पणीनो योग छतां गर्भ धरे नहि ने वंझा रहे, स्त्रीने मुखे मुंछ नहि होवापणुं, हथेळीमां केश नहि उगवापणुं, लिंबडे आंबफळ नहि लागवापणुं, मोरनां पींछां स्वभावेज चीतरेलपणुं, संध्याये विचीत्र रंगपणुं, वावळना कांटानुं अणीदारपणुं, मृगनां नेत्रनुं रमणीकपणुं, अग्निनी जवाळा उंची जवापणुं, पर्वत स्थिर, वायु चळपणुं, एक वासणमां कोळु पासे मूकवाथी पडेली कणकनी चीकासनुं जवापणुं, रजस्वळावाळी स्त्रीनी छाया साजीखारना पाणीमां पडवाथी क्षारनुं जवापणुं, मच्छकाष्ट तुंबडुं जळमां तरवापणुं, कागधातु पाषाण जळमां डुबवापणुं, पक्षी जातिगगनमां फरवापणुं, दंडे उपरज आंपण लागु पडवापणुं, गांगडुं कण नहि सीझवा (रंधावा)पणुं, सूर्यनां किरणनुं उष्णपणुं, चंद्रमानां किरणनुं शितळपणुं, ए विगेरे नमाम वस्तुओ पोतपोताना स्वभाववश छे एवुं माने ते स्वभाववादी. तेना चार भेद ते १ कोइ कहे जीव आपणी इच्छाए स्वभावे नित्य छे, २ कोइ कहे जीव आपणी इच्छाए स्वभावे अनित्य छे, ३ कोइ कहे जीवपरथी छे ते स्वभावे नित्य छे, ४ कोइ कहे जीवपरथी छे

मूलः—नीहरन्ति मयं पुत्ता पितरं परमदुक्खया ।
पितरो वि तहा पुत्तं बन्धू रायं तवं चरे ॥ १५ ॥

गाथा १५ भावार्थः—मरेला पिताने अनीहि दुःखी थको पुत्र काढे अने मरेला पुत्रने पिता काढे, तेमज भाइ परेलाने पण भाइ काढे एम जाणीने हे राजा ! तुम आचर ! ! ! ॥ १५ ॥

अर्थः—त० ते मृओ तेवारे पछे ने० तेणे ज्ञि० उपाज्यों होय ते द० धनना धणी बीजा थाय । दा० स्त्रीने विषे म० मत्री प० धणी र० राजा किंवा होय की० ते स्त्री संगाते क्रिडा करे अ० अनेरा न० नर रा० हे राजा ह० हर्ष सहित दृ० अंतरंग प्रीति सहित अल० जे मृओ तेहना कराव्या आभरणादिक पहेरीने परपुरुष संगाते स्त्री विषय भोगवे॥ १६॥

मूलः—तओ तेणज्जिए दव्वे दारे य परिरक्खिए ।
कीलन्तिन्ने नरा रायं हट्ठतुट्ठमलङ्किया ॥ १६ ॥

गाथा १६ भावार्थः—हे राजा ! ते घरधणी मुआ पछी ते घरधणीए जे धन उपराज्युं होय ते धनना धणी बीजा थाय अने ते स्त्रीनुं पण रक्षण कर्युं हतुं ते स्त्री संगाते अनेरा नर क्रीडा करे अने मुओ तेनां करावेल्यां आभरणादिक पहेरीने अंतरंग प्रीति सहित हर्ष सहित ने संतोष सहित ते स्त्री परपुरुष संगात विषय सुख भोगवे.॥ १६॥

अर्थः—ने० मृओ अ० तेणे पुरुषे जं० जे क० कीधा क० कर्म । सु० सुभ जे सुपकारि वा० अथवा अ० नो वा० वली दु० अपुपदुपकारी । क० सुभ अशुभ कर्म ते० तेणे कर्मे सं० सहित । ग० जे मृओ ते जाय उ० वली प० पर भ० भवे एम जाणीने नुं हे राजा तम आचर ॥ १७ ॥

वर्ति बळदेव वासुदेव इंद्रादिक देवो सर्वेने कर्म प्रमाणेज सुख दुःख अनुभववां पडे छे तेथी कर्म करे तेज थाय छे, एवुं जे माने ते कर्मवादी, तेना चार भेद, १ कोइ कहे जीव आपणी इच्छाए कर्मथी नित्य छे, २ कोइ कहे जीव आपणी इच्छाए कर्मथी अनित्य छे, ३ कोइ कहे जीवपरथी छे ने कर्मथी नित्य छे, ४ कोइ कहे जीव परथी छे ने कर्मथी अनित्य छे, एवी रीते कर्मवादी चार प्रकारे जीव माने छे, तेवीज रीते पुर्वोक्त नवे पदार्थने चार चार प्रकारे कर्मवश माने छे तेथी तेना नवेचोक ३६ भेद चोथा कर्मवादीना जाणवा. ४

॥ १७२ ॥

॥ १८ ॥

५ हवे पांचमो पुरुषार्थ (उद्यम) वादी ते आत्माना उपक्रमे करीने विश्व उपजेछे, सर्व वस्तु पुरुषार्थथी थायछे, दूधमांथी घी काढवुं, तलमांथी तेल काढवुं, खेतीथी अन्न पकववुं, विद्या धन संपत्तिनुं मेळववुं, पाणीने उंचे लइ जवुं, मछीमांथी पाणी काढवुं, अनंत कर्मनो क्षय करी सिद्ध गतिनुं पामवुं, ए विगेरे अनेक वस्तुने विषे उद्यम करवाथीज फळीभूत थवाय छे. एक काममां एक वखत उद्यम करवाथी मुराद हांसल न थाय तो तेनो वारंवार उद्यम करवाथीज सुफळ थायछे, नवी नवी कळा कौशल्यतानी वृद्धि पण उद्यम वडेज थाय छे, एटलुंज नहि पण आ सृष्टीमां सर्व स्थळे उद्यमनोज प्रचार छे तेथी उद्यमज श्रेष्ठ छे ने बीजुं सर्वे व्यर्थ छे एवुं जे माने ते उद्यमवादी, तेना चार भेद ते १ कोइ कहे जीव आपणी इच्छाए पुरुषार्थथी नित्य छे, २ कोइ कहे जीव आपणी इच्छाए पुरुषार्थथी अनित्य छे, ३ कोइ कहे जीव परथी छे ने पुरुषार्थथी नित्य छे, ४ कोइ कहे जीव परथी छे ने पुरुषार्थथी अनित्य छे. एवी रीते पुरुषार्थवादी चार प्रकारे जीव माने छे तेवीज रीते नवेचोक नवे पदार्थने चार चार प्रकारे पुरुषार्थ वश माने छे तेथी तेना नवेचोक ३६ भेद पांचमा

॥१७२॥

गाथा १९ भावार्थः–ने संयतीराजा राज्य देवा छांडीने गर्दभाळी भगवंत (पुज्य) अणगारनी पदवीये जीनशासनने विषे नीकळ्या. ॥ १९ ॥

अर्थः–चि० तादिने त० राज्यने प० दिक्षालिधी ॥ स० तिहांपार्गमांहि जाते क्षत्रिरराजऋषि ॥ प० संजतिनामा मुनिवरने दे० हे ॥ अ० तेम ने० नाहरुं । द्वी० दिसेछे वीकार रहित रु० नायरुप ॥ प० प्रसस्त विकाररहित ने० नाहरु त० तेम म० मनविकार रहित भवंत छे ॥ २० ॥

मूलः–चिच्चा रट्ठं पवइए खत्तिए परिभासइ ।
जहा ते दीसई रूवं पसन्नं ते तहा मणो ॥ २० ॥

गाथा २० भावार्थः–ने संयतीराजा दीक्षा ल्इ गीतार्थ थइ समस्त साधुनी सामाचारी सीखी गुरुनी आज्ञा ल्इ एकाकीपण विचरता कोइक गामने विषे आव्या, त्यां क्षत्री राजऋषि मळ्या, ते क्षत्रीराज मुनि पूर्वे देवलोकथी चव्या पछी कोइक निमित्तीयाने देखीने जातिस्मर्ण ज्ञान उपन्युं, त्यां क्षत्री राजऋषि संयतिमुनिने कहेता हवा हे मुनि ! तारुं विकाररहितपणुं दिसेछे तेमज प्रसन्नकारी विकाररहित तारुं मनपण दिसेछे ॥२०॥

अर्थः–चि० हुं ना० नाम नाहरो कि० क्यो गो० गोत्र क० ज्याने अ० अर्थे त्रिकरण शुद्ध क्रिया करेछे त०तमो मा० पतिपणु आर्य्य ॥ क० केणे प्रकारे प० सेवेछे यु० आचार्यादिकने ॥ क० केणे प्रकारे वि० विनित शिष्य चि० एम उ० कहेछ ॥ २१ ॥

मूल –किंनामे किंगोत्ते कम्मट्ठाए व माहणे ।

एवीरीते जीवने वारमकारे मानेछे तेज प्रमाणे पुन्यने पाप ए वे वर्जि साते पदार्थना वारवार भेद गणतां वार सतां ८४ भेद त्रीजा अक्रियावादीना जाणवा. ॥ २ ॥

हवे त्रीजा विनयवादी तेना ३२ भेद कहेछे. ३ हवे त्रीजो विनयवादी ते विनयनेज श्रेष्टमाने छे, राजा शेठ माता पिता गुरुदेवना विगेरे सर्वेविनयथीज प्रसन्न थायछे तेथी यथोचित सर्वेनो विनय करवो एवुं जेमाने ते विनयवादी तेना बत्रीस भेद ते १ आर्यसुरनो २ राजानो ३ ज्ञानिनो ४ यतिना ५ स्थावरनो ६ धर्मनो ७ मातानो ८ पितानो ए आठ जणानो १ मनथी २ वचनथी ३ कायाथी ४ दानथी ए चार प्रकारे विनय करेछे तेथी आठ चोक ३२ भेद त्रीजा विनय वादीना जाणवा. ॥ ३ ॥

हवे चोथो अज्ञानवादी तेना ६७ भेद कहेछे. ४ हवे चोथो अज्ञानवादी ते अज्ञाननेज श्रेष्ट मानेछे, जेम अजाणतां कोइने आपणो धक्कोवागे तोने गुन्हो माफथायछे पणजाणीने मारवाथी गुन्हो माफथतो नथी, वळी अंधमाणस कुवामां पडेतो तेने कोइपण दयालावीने काढे पण जाणीने कुवामां पडेलापर द्वेष करायछे तेज प्रमाणे अज्ञानताए पापाश्चरण करवाथी परभवे ते गुन्हो माफथायछे पण जाणीने पापाश्चरण करे तेनो तो छुटकोज नथी अथवा कोण जाणे ? परभवे स्वर्ग नर्कादिकछे किंवा नथी एवुं जे माने ते अज्ञानवादी तेना ६७ भेद ते ॥ कोइ कहे १ कोण जाणे ? जीवनुं सत्यपणुं, २ कोइ कहे कोण जाणे ? जीवनुं असत्यपणुं ?, ३ एम जीवनुं सदसत्यपणुं, ४ वाच्यपणुं, ५ अवाच्यपणुं, ६ सद्वाच्यपणुं, ७ असद्वाच्यपणुं, एवी रीते जीवने सात प्रकार छे तेज प्रमाणे पूर्वोक्त नव पदार्थना सात सात भेद गणतां नव सतां ६३ भेद अने ६४ उत्पत्तीनुं सत्यपणुं ६५

मिथ्याति केहवाछे । मे०जीवादीक पदार्थने । कहेता पोताने कल्पित शास्त्रें करी अ०जथातथापणाना जाणणहारा तेमेयन्नेएहवा मिथ्याति कि० कुछित आघी पाछी परुपणाने प० भाषे पलेछे तेहनो । मत मारो नथी ॥२२॥

मूलः—किरियं अकिरियं विणयं अन्नाणं च महामुणी ।
एएहिं चउहिं ठाणेहिं मेयन्ने किं पभासई ॥ २३ ॥

गाथा २३ भावार्थः—हवे पांचमो प्रश्न विनित शिष्यना मननुं तेनो उत्तर विस्तार पूर्वक सांयति मुनि कहेता हवा. अहो कर्मीगज महामुनि ! ज्ञानविना क्रियाना करनार आस्तिक ते १ क्रियावादीना १८० भेद अने २ अक्रियावादी ते नास्तिक तेना ८४ भेद, एक फक्त विनयथीज सिद्धि माने तेवा विनय वादीना ३२ भेद अने अज्ञानज श्रेयछे तेनुं माननारा अज्ञान वादीना ६७ भेद, एम ४ चार मळीने ३६३ मिथ्यात्व दृष्टीना जाणवा० (हवे ए ३६३ भेद शीरीते थाय ते विस्तार पूर्वक कहेछे)

१ प्रथमक्रियावादी ते ज्ञाननी कांइ जरुर नथी एकली क्रिया करवाथीज सिद्धिछे एवुं माने तेना १८० भेद छे, तेमा १ कालवादी, २ स्वभाववादी, ३ नियतवादी, ४ कर्मवादी, ५ पुरुषार्थवादी ए पांच, तेमां १ कालवादी ते सर्ववस्तु कालवश छे, काळे उपजे छे, काळे विणसे छे, काळे स्त्री गर्भ धरेछे, काळे पुत्र जन्मे छे, काळे बोलेछे, काळे चालेछे, काळे दूधथी दहीं थायछे, काळे फळ पाकेछे, काळे छए ऋतुनो भिन्न भिन्न स्वभाव थायछे, तिर्थंकर, चक्रवर्ति, बळदेव, वासुदेव, देवताओ विगेरे सर्वे वस्तु कालवशछे एवुं माने ते कालवादी, तेना चार भेद, १ कोइ कहे जीव आपणी इच्छाए (ते जीव पोते पोताना खरुंखोज होय ते) कालथी

दिव्वं च गइं गच्छन्ति चरित्ता धम्ममारियं ॥ २५ ॥

गाथा २५ भावार्थः-जे असत्य परुपणाना करनार ते घोर (वीहामणा) नरकने विषे पडे अने जीनोक्त सत्य परुपणा आर्य तिर्थंकरनो धर्म आचरीने प्रधान देवता तथा सिद्धगति प्रत्ये जाय. ॥ २५ ॥

अर्थः-मा० माया कपट सहित । वु० परुप्यो ए० ए पापंडिए पापंडिनो मत तु० अवधारणे तेमाटे एहनी मु० मृषा भा० भाषा नि० निर्थक भाषाएथी मुक्तिनहि तेमाटे एहवो हुंनथी । तोहुं केहवोछुं सं० संजम पालतो थको वि० निश्चे अ० हूं ॥ इ० इर्यादिक पांचसुमातिने विषे व० वसुं छुं य० वली ॥ २६ ॥

मूलः-मायावुइयमेयं तु मुसाभासा निरत्थिया ।
संजममाणो वि अहं वसामि इरियामि य ॥ २६ ॥

गाथा २६ भावार्थः-ए क्रियावादी प्रमुखनो परुपेलो मत्त कपटाइ सहित छे अने तेनुं बोल्युं तेपण कपटाइ सहित छे अने ए मिथ्यात्वीए परुपेल ते मृषा (जुठी) भाषा छे अने ए मोक्षरुप परमार्थ साधवाने शुन्यरुप छे तेथी ए मिथ्यात्वीनुं वचन अणसदहतो थको संयमसहित इर्यादिक पांच सुमतिन विषे वसुंछुं. ॥ २६ ॥

अर्थः-स० सर्व ते० तेपापंडि वि० जाण्यावर्ते छे म० मूजने ते केहवाछे॥ मि० मीथ्यात दृष्टि अ०भावे करी अनार्य ॥ वि० विद्यमान छतोछे प० पर लो० लोक ते मिथ्यात्वी न सदहे हुंपण केहवो छुं । सं० साचे

चार प्रकार स्वभाववश माने छे तथा तेना नवयाके २५ भेद पोता स्वभाववादीना जाणवा. २

३ हवे त्रीजो नियतवादी ते जे भवितव्यता थनार छे ते इंद्रादिकथी पण टळती नथी अने जे थनार नथी ते कोइथी थायज नहि, जेम आंबाना वृक्षे कोर (मोर) आव्यो होय पण तेमां केटलाक खरीपडे, केटलाक राखडी थाय ने केटलाक फळरूपे भावी प्रमाणे थाय छे, माणस पोतानुं मन वश करवा धारे छे पण भावी प्रबळताथी वश थतुं नथी. वंटोळीयानी पडवाडे जेम घण पत्रादिक उडेछे तेम भवितव्यताने योगे सर्वे थाय छे, अभवी जीव घणी तप संयमादिकनी क्रिया कर्या छतां पण नहि सिद्ध गति पामवारुप भावी प्रबळताथी सिद्ध गती पामतो नथी, तेथी सर्वे भवितव्यताने वश छे एवुं माने ते नियतवादी, तेना चार भेद ते १ कोइ कहे जीव आपणी इच्छाए भवितव्यताथी नित्य छे, २ कोइ कहे जीव आपणी इच्छाए भवितव्यताथी अनित्य छे, ३ कोइ कहे जीवपरथी छे ने भवितव्यताथी नित्य छे, ४ कोइ कहे जीवपरथी छे ने भवितव्यताथी अनित्य छे, एवी रीते नियतवादी चार प्रकारे जीव मानेछे, तेवीज रीते पुर्वोक्त नवे पदार्थने चार चार प्रकारे नियतवश माने छे तेथी तेना नवे चोकु ३६ भेद त्रीजा नियतवादीना जाणवा. ३

४ हवे चोथो कर्मवादी ते कर्म करे तेज थाय छे, बीजुं सर्व व्यर्थ छे, एकज व्यापार बे माणस करे पण तेमां लाभालाभ कर्म प्रमाणेज मळे छे, बे भाइए साथे जन्म धर्यो होय पण एक काष्टनो भारो माथे वहन करतां पण उदर पुरणा थती न होय ने एक राज्यसंपत्ति भोगवे, एक कंडीयामां कोइए सर्प पुरेलो हतो तेनी अंदर कांइ खावानुं हशे एम जाणी एक उंदर ते कंडीयो कापी अंदर गयो के तुर्त ते सर्प उंदरने गळीगयो ने तेज रस्तेथी सर्प बहार निकळी गयो, जुओ उंदरनो उद्यम अवळो पडयो ने कर्म प्रमाणेज थयुं. तिर्थंकर चक्र-

अर्थः-से० ते हुं चु० चव्यो। बं० ब्रह्म लो० लोक पांचमा देवलोकथकी मा० मनुष्य भ० भवने वि० विषे सं० संजाति राजापणे अ० पोतानो य० वली प० अनेरानो च० वली जा० जाणवो ज० जथातथ्य त० तेहवुं होय ते जा० जाणुं ॥ २९ ॥

मूलः-से चुए बम्भलोगाओ माणुसं भवमागते ।
अप्पणो य परेसिं च आउं जाणे जहा तहा ॥ २९ ॥

गाथा २९ भावार्थः-ते हुं पांचमां ब्रह्म लोकथी चवीने मनुष्यना भवने विषे संजाति राजापणे उपन्यो तो हुं पोतानुं तथा अनेरानुं यथा तथ्य जेवुं होय तेवुं आखुं जाणुं छुं. ॥ २९ ॥

अर्थ-वली संजातिरुपि केहवाछे । नाणा० मिथ्यातीना नानाप्रकारनी रु० रुचिने च० वली ल० विख्यातिना नाना प्रकारनां लांबा अभिप्रायने च० वली प० वर्जे सं० साधु अ० अनर्थनो कारण मिथ्यात्वादिक असुभ योग जे० जे य० वली स० हिंस्यादिक सर्व अनर्थने वर्जे हुं पण एहवो छुं। इ० एहवे वि० विद्याज्ञाने करी साधु होय ते अ० प्रवर्तेचाले ॥ ३० ॥

मूलः-नाणारुइं च छन्दं च परिवज्जेज्ज संजए ।
अणट्ठा जे य सव्वत्था इइ विज्जामणुसंचरे ॥ ३० ॥

अने पांचे वस्तुथी एक कार्यनी सिद्धी मानवाथी सम्यक्त्वदृष्टी जाणवा, ए पांचेना छत्रीस छत्रीस भेद गणतां छत्रीस पंचां १८० भेद प्रथम क्रियावादीना जाणवा. १ हवे बीजो अक्रियावादी तेना ८४ भेद कहेछे

२ हवे बीजो अक्रियवादी (नास्तिकमती) ते नैयाइक मते इश्वरमाने, मिमांसक मते आत्मा सर्वएक जमाने, जेमएक चंद्रमानुं प्रतिबींब हजारोपाणीना वासणमां पडवाथी एक छतां अनेक चंद्रमांकले देखायछे तेम प्रमाणे १ प्रथ्वी २ पाणी ३ अग्नि ४ वायु ५ आकाश ए पांचभूतनुं बनेलुं शरीर तेमांएक इश्वरनुं तेज सर्व शरीरमां पडवाथी चलणादी सर्वक्रियाओ थायछे, ज्यारे ते तेज इश्वरना रुपमां मळीजछे ने पांचभूत पण पोत-पोताना रुपमां मळीजने त्यारे पुन्य पापनो बदलो सुख दुखरुप भोगववो पडतोनथी, वळी सर्व वस्तु क्षणेक्षणे उपजेने विणसेछे तेथी धर्म क्रिया करवानी कांइ जरुर नथी एवुं जे माने ते अक्रियवादीना ८४ भेद ते कहेछे, तेमां १ काळ २ स्वभाव ३ यदृच्छा (ते अकस्मात कांइ वस्तु उपजे, ते वस्तु मळवाथी बीजी वस्तु थाय, जेम माणसनुं माथुं परवी सहित होय ने पृथ्वी पाणीनो अनुकुळ योगमळवे तेमांथी केरडानुं वृक्षथाय, वळीपाडानुं जींगडुं परवी सहित होय तेने पृथ्वी पाणीनो योगमळवे तेमांथी केळनुं वृक्षथाय, तेमज मांखनी इगार वाळी दोरडीने रोवाथी पृथ्वी पाणीने योग फुदीनो थाय ए विगेरे) ४ नियत ५ कर्म ६ पुरुषार्थ ए छ, तेमां १ कोइ कहे जीव आपणी इच्छाए काळथी नित्यनथी, २ कोइकहे जीवपरथी काळथी नथी, ३ जीवआपणी इच्छा ए स्वभावथी नथी, ४ जीवपरथी स्वभावथी नथी, ५ जीव आपणी इच्छाए यदृच्छा नथी, ६ जीव परथी यदृ-च्छानथी, ७ जीव आपणी इच्छाए नियतथी नथी, ८ जीवपरथी नियतथी नथी, ९ जीव आपणी इच्छाए कर्म-थीनथी, १० जीवपरथी कर्मथीनथी, ११ जीव आपणी इच्छाए पुरुषार्थथी नथी, १२ जीवपरथी पुरुषार्थ नथी-

पण बीजा नांहि न मले ॥ ३१ ॥

मूलः—जं च मे पुच्छसी काले सम्मं सुद्धेण चेयसा ।
ताइं पाउकरे बुद्धे तं नाणं जिणसासणे ॥ ३२ ॥

गाथा ३२ भावार्थः—हे अतीराजऋषि संयतीमुनि प्रते कहेता हवा, भावत हे मुने एक वेत मने जे तेथी अवसरे सम्यक प्रकारे जे शुद्ध मने करी मुजने प्रश्नादिक पुछशो तथा तमे जे प्रश्न पूछशो तेने हे केवळज्ञानी तिर्थंकर कहेता हवा ते ज्ञान जीनसासनने विषे पण बीजा पासेरीना मले तेवो नथी ॥ ३२ ॥

अर्थः—कि० ज्ञानसहीतसहित क्रियाना च० अक्षपारणे रो० मोक्षपदने वी० पामेलाछे ॥ इ० आकुछित समकित रहित क्रियाने मिथ्यात्वीनी क्रीयाने प० कहे । दि० सर्वविरती रती दि० श्रावकने सं० सहितपणे ध० धर्मचारित्र धर्मपने च० तमेउनने ए भाइरी आसीश पहो चारित्र धर्म केरलोछे । इ० आचरने आचरता दोहिलोछे तमसारिषा शुरवीरने सु० सोहिलोछे ॥ ३३ ॥

मूलः—किरियं च रोयती धीरे अकिरियं परिवज्जए ।
दिट्ठीए दिट्ठीसंपन्ने धम्मं चरसु दुच्चरं ॥ ३३ ॥

गाथा ३३ भावार्थः—जीनमतनुं एकज ज्ञान छे के जे ज्ञानने समकित सहित क्रियाने पेखवेछ साधु

चारे वादीना मळीने ३६३ भेद जाणवा. ए ३६३ मिथ्यात्वदृष्टी ने जीवादिक पदार्थने पोतपोतानां कल्पित-शास्त्रे करीने कहे अने यथातथ्यपणाना जाणनार अने आघीपाछी परुपणाना करनार मिथ्यात्वी छे तेवो हुं नथी. ॥ २३ ॥

अर्थः-इ० ए किरियादिना स्वरुपने । पा० प्रगट करनारहवा थु० तत्वना जाण तिर्थंकरे । ना० ज्ञात क्षत्रियवीर प० सीतली भूत वि० सायक ज्ञान दरसन च० पायक यथाख्यात चारित्र तेणेकरि । सं० सहित छे स० सत्यवादि स० साचा प० परारुपना करणहारले ॥ २४ ॥

मूलः-इति पाउकरे बुद्धे नायए परिणिव्वुए ।
विज्जाचरणसंपन्ने सच्चे सच्चपरक्कमे ॥ २४ ॥

गाथा २४ भावार्थः-जे तत्वना जाण अने सायकज्ञान सायकचारित्रे करी संयुक्त सत्यवादी ने साचा पाकमना धणी ने शितळीभूत थया एवा ज्ञात क्षत्री श्रीमहावीर देव ए पुर्वोक्त ३६३ मिथ्यात्वीनुं स्वरुप प्रगट करता हवा. ॥ २४ ॥

अर्थः-प० उपजे घो० घीहःमणी न० नरकनोविरे जे० जे न० नर मनुष्य पा० पापनां का० करणहारा अने मिथ्यात्वी । दि० अने प्रधान देव तथा सिद्धि ग० गति प्रत्ये च० वळी ग० उपजे । च० आचरिने ध० धर्म आ० आर्यनिर्यंकरना धर्मने आचरिने ॥ २५ ॥

मूलः-पडन्ति नरए घोरे जे नरा पावकारिणो ।

पण बीजा मांहि न मळे ॥ ३१ ॥

मूलः—जं च मे पुच्छसी काले सम्मं सुद्धेण चेयसा ।
ताइं पाउकरे बुद्धे तं नाणं जिणसासणे ॥ ३२ ॥

गाथा ३२ भावार्थः—हवे क्षत्रीराजऋषि संयतीमुनि प्रत्ये कहेता हवा, आपण वेहुनो एक जैन मत छे तेथी अवसरे सम्यक प्रकारे जे शुद्ध मने करी मुजने प्रश्नादिक पुछशे तथा तमें जे प्रश्न पुछशो तेनो उत्तर जे केवळज्ञानी तिर्थंकर प्रगट करता हवा ते ज्ञान जीनसासनने विषे छे पण बीजा पाखंडीना मतने विषे नथी ॥३२॥

अर्थः—कि० ज्ञानसमकीतसहित क्रियाना च० अवधारणे रो० रोचवेकरे धी० धीर्यवंतसाधु ॥ अ० आकुछित समकित रहित क्रियाने मिथ्यातीनी क्रीयाने प० वर्जे । दि० समकिते करी दि० ज्ञानेकरी सं० सहितथको ध० धर्मचारित्र धर्ममते च० तमेप्रवर्तो ए० माहरी आशीश एहवो चारित्र धर्म केहयोछे । दु० कायरने आचरता दोहिलोछे तमसरिषा शुरवीरने सु० सोहिलोछे ॥ ३३ ॥

मूलः—किरियं च रोयती धीरे अकिरियं परिवज्जए ।
दिट्ठीए दिट्ठीसंपन्ने धम्मं चरसु दुच्चरं ॥ ३३ ॥

गाथा ३३ भावार्थः—जीनमतनुं एकज ज्ञान छे के जे ज्ञानने समकित सहित क्रियाने धैर्यवंत साधु रूचवे अने समकितरहित मिथ्यात्वनी क्रियाने वर्जे तेथी समकितने ज्ञाने करी सहित थको कायर पुरुषने [illegible]

मूलः—सव्वत्त विइया मज्झ मिच्छादिट्ठा अणारिया ।
विज्जमाणे परे लोए सम्मं जाणामि अप्पगं ॥ २७ ॥

गाथा २७ भावार्थः—ए सर्वे मिथ्यादृष्टि मारा जाण्या वर्त्ते छे अने ते मिथ्यात्वी भावे करीने अनार्य ते, छतो परलोक छे, पण ते मानता नथी, पण हुं सम्यक् प्रकारे मारा आत्मानो पूर्वभव जाणुंछुं ॥२७॥

अर्थः—अ० हुं अ० हतो म० महाप्राण नामा पांचमे देवलोके ॥ जु० ज्योतिवंतद्युती व० सोवरसनो उ० उपमा एटले दशसागरने आउखे ॥ जा० जे सा० ते पा० आउषा रूपणीपाली । तेपाली के, वीसे । म० मोटी पाली दस सागर रूप पाली । दि० ब्रह्मदेवलोक संबंधि आउषाने पाळो व० देव संबंधि स० सावरनो उ० उपमा ॥ २८ ॥

मूलः—अहमासि महापाणे जुतिमं वरिससतोवमे ।
जा सा पालीमहापाली दिव्वा वरिससओवमा ॥ २८ ॥

गाथा २८ भावार्थः—हुं पांचमा ब्रह्मनामा देवलोके महा प्राण नामे विमानने विषे देवता हतो अने त्यां चार गाऊनो लांबो ने चार गाऊनो पहोळो, ने चार गाऊनो ऊंडो एवो ते देवकुरु ऊत्तरकुरु जुगळीयाना सात दिवसना जन्मेला बाळकना वाळना अणेकाना असंख्याता खंड करी ते कूवो ठांसीने भरे पछी ते सो सो वरसे ते कुवामांथी अणेको खंड काढतां जेटले काळे ते कुवो खाली थाय तेने एक पल्योपम कहीये, एवा दश क्रोडाक्रोडी कुवा खाली थाय त्यारे एक सूक्ष्म अर्द्ध सागरोपम थाय, एवा दशसागरोपमनुं मारुं आउखुं हतुं ते भोगवीने. ॥ २८ ॥

इस्सरियं केवलं हिच्चा दयाइ परिनिव्वुडे ॥ ३५ ॥

गाथा ३५ भावार्थः–तेमज बीजो सगर चक्रवर्ती के जेनी पूर्व दक्षिणने पश्चिम ए त्रण दिशाए समुद्र सुधी अने चोथी ऊत्तरदिशामां चुल हीमवंतपर्वत सुधी आज्ञा प्रवर्ते एवा भरतक्षेत्रनुं राज्य अने संपूर्ण ऋद्धराइ छांडीने ते पण दयाने संयमे करी मोक्षने विषे पहोंच्या ॥ ३५ ॥

अर्थः–च० छांडीने भा० भरतक्षेत्रनुं वा० राज्य । च० चक्रवर्ति म० मोटीरुधिनोधणी । प० दिक्षा लेवाने अ० सावधानहुओ ॥ म० मघव ना० नामा चक्रवर्ति म० महा ज० यसवंत ॥ ३६ ॥

मूलः–चइत्ता भारहं वासं चक्कवट्टी महड्ढिओ ।

पव्वज्जमब्भुवगतो मघवं नाम महाजसो ॥ ३६ ॥

गाथा ३६ भावार्थः–महा यशवंत एवो मघव नामे चक्रवर्ती मोटी ऋद्धीनो धणी ते भरतक्षेत्रनुं राज्य तजीने दीक्षा लेवाने सावधान थयो ॥ ३६ ॥

अर्थः स० सनत कुमार म० मनुष्यनोइंद्र ॥ च० चक्रवर्ति म० मोटीरुधिनोधणी पु० पुत्रने र० राज्य नेविषे ठ० थापीने ॥ सो० तेणे रा० राजाए वि० पण सरिर असारजाणीने त० तप च० आचर्यो ॥ ३७ ॥

मूलः–सणङ्कुमारो मणुस्सिन्दो चक्कवट्टी महड्ढिओ ।

पुत्तं रज्जे ठवेऊणं सो वि रायां तवं चरे ॥ ३७ ॥

वर्जे भने हिंसादिक सर्व अनर्थनो हेतु तथा नरकादिकनो हेतु जाणीने वर्जे एवा विधान ज्ञानकरी साधवपणा मुनि संयम मार्गने विषे चालवे ॥ ३० ॥

अर्थः-प०हुं निरुपलेछुं । प० सावद्य प्रश्नादिक निमित्तना कहेवाथकी । प०ग्रहस्थनुं ॥ मं० गुणसाधवणोट्ठिणी वा० अथवा पु०थकी निरुपलेछुं । अ० आश्चर्यकारी संजमनेविषे । उ० सावधानपणे साधुमवर्ते अ० दिनरात्रि । इ० पूर्वोक्त कथनेम वि० पंडित जाणनारपणे । न० नप संजमने च० आचरे ॥ अहोसत्रि० रात्र एवं ए मारगे विनयमार्ग एटलामुखी संजतिएसीत्रराजरुषिने पुछवानो मत्युत्तर कह्यो ॥ ३१ ॥

मूलः-पडिकमामि पसिणाणं परमन्तेहि वा पुणो ।
अहो उट्ठिए अहोरायं इति विज्जा तवं चरे ॥ ३१ ॥

गाथा ३१ भावार्थः-एकी सावध प्रश्नने निमित्तना कहेवाथी तथा ग्रहस्थ संघाते सावध गुप्त गोष्ठीथी हुं निरुपलेछुं अने विस्मयकारी धर्मने विषे दिवस रात्रीए साधु सावधान थको प्रवर्ते ए पूर्वे कह्युं तेम पंडित जाणनो थको नप संयमने आचरे ए प्रमाणे अहो क्षत्रीराजऋषि ! ए मारो विनय मार्ग छे एटला सुधी संजती मुनिए क्षत्रीराजऋषिए पुछेला प्रश्नोनो उत्तर कह्यो ॥ ३१ ॥

अर्थः-इक्ष्वाकुराजऋषि संजतिने मत्ये कहेछे । आपण बेहुनो एक जिनमतछे तेमाटे । जं० जे च० वली मे० मुनने पु० प्रश्नादिक पूछतो का० अमारे । स० सम्यग् प्रकारे गु० गुप्त चे० मनेकरि सा० तमो ने पुछशो तेहने पा० प्रगटकरनारुंछे तेहनो उत्तर कहेछे नु० निश्चेकर तं० ते ना० ज्ञानने जि० जिनशासनने विषे छे

अर्थः-इ० इक्षागवंसी रा० राजामांहि व० वृषभसमांन कु० कुथु ना० नामा न० नरनोराजा वि० प्रसिद्ध कि० कित्ति भ० भगवंतपुज्य । प० पाम्या ग० मोक्षगति अ० प्रधान ॥ ४० ॥

मूलः-इक्खागरायवसभो कुन्थू नाम नरीसरो ।
विक्खायकित्ती भगवं पत्तो गइमणुत्तरं ॥ ४० ॥

गाथा ४० भावार्थः-इक्षवागवंशीराजा मांही वृषभ (बळद) समान अने जेनी प्रसिद्ध कीर्त्ति एवो एहो कुंथुनाथ नामे चक्रवर्ती ते भगवंत पण ऊत्तम मोक्षगती पाम्या. ॥ ४० ॥

अर्थः-च० छांडिने वि० मोटुं र० राज्य । च० छांडिने व० मोटीऋधिनोधणी । च० छांडिने उ० प्रधान भो० भोग । म० महापद्म नामा चक्रवर्तीएपण । त० तप च० आचर्यो ॥ ४१ ॥

मूलः-चइत्ता विउलं रज्जं चइत्ता वलवाहणं ।
चइत्ता उत्तमे भोए महापउमे तवं चरे ॥ ४१ ॥

गाथा ४१ भावार्थः-नवमो महापद्म नामे चक्रवर्ती मोटी ऋद्धिनो धणी तेणे पण भरतक्षेत्रनुं राज्य अने भोग छांडीने तप आचर्युं ? ॥ ४१ ॥

अर्थः-ए० एक च० छत्र एहवो राज्य प० चमेकरीने । म० छखंड त्रयवीना राजाना मा० माननो नि० मर्दणहार । इ० हरिषेण च० चक्रवर्त्ती ॥ प० पाम्यो ग० मोक्षगति अ० प्रधान ॥४२॥

अर्थः-इस प्रकार [illegible] सहित विशाल पु० पुण्यवाले प० पहुंचेहुए शुद्धजिन मतने जा० जाणीने अंगीकारने अंगीकारीने भरतादिके संसारसुखो अ० अर्थ ने मुक्तिफल प० धर्म ने जिनशासनकथ ज्ञानदर्शन सहित चारित्र धर्म ए बेहुएकरी उ० जोगिनके पुनरपि तेहनोपुनःपण जाणीने अ० भरत नामाएकचक्रवर्तिए वि० तजी भा० भरत सा० तेहने चे० जाणीने राज्यसुखो का० कामभोगने छांडिने प० संजमेन एवा चारित्र आदर्यो ॥ ३४ ॥

मूलः-एवं पुण्णपुरं सोच्चा अत्थधम्मोवमोहियं ।
भरहो वि भारहं वासं चेच्चा कामाइ पव्वए ॥ ३४ ॥

गाथा ३४ भावार्थः-इम प्रकारा चरित्रवा शूरवीर जीनशासन सांभली एवा तेना गुण कीर्तन करवाने जे जाणजो ? अर्थ ने मुक्तिरूप फल अने धर्म ने जीनशासनरूप ज्ञानदर्शन सहित चारित्र ए बेहुए करीने जोगिवा छे. पुनरपि पहुंचे शुद्ध मनने जाणजो तेने जाणीने पण भरतक्षेत्रनु राज्य अने कामभोगने छांडीने चारित्र आदर्यु ॥ ३४ ॥

अर्थः-सगर० सागर नामा चक्रवर्ति वि० पण सा० समुद्रने पर्यंतसो आज्ञा मनवर्ते जोयीदिस पूर्वदिशा पर्यंतभूमी । भं० भरतो भरतक्षेत्रनो सा० राज्य न० सागरनामे राजानी । इ० एकछत्र के० केवल संपूर्ण वि० छांडिने प० इणए संजमेपरि प० मोक्षपद्धा ॥ ३५ ॥

मूलः-सगरो वि सागरन्तं भरहवासं नगरिवो ।

गाथा ४४ भावार्थः–प्रत्यक्ष शक्रेंद्रे प्रेरणा करवाथी प्रमोद (हर्ष) सहित दशार्णदेशनुं राज्य छांडीने दशार्णभद्र नामे राजा ए राज छोडी नीकळ्यो ने संयमव्रत आदर्यो. ॥ ४४ ॥

अर्थः–क० करकंडु नामे राजा क० कलिंग देसने विषे वुड्यो ॥१॥ पं० पंचाल देशने विषे य०वळी दु० दुमह राजा वुड्यो २ । न० नमी रा० राजा वि० विदेह देशने विषे वुड्यो ३ । गं० गंधार देसने विषे य० वळी न० नग्गइ राजा वुड्यो ४ ॥ ४५ ॥

मूलः–करकण्डू कलिङ्गेसु पञ्चालेसु य दुम्मुहो ।
नमी राया विदेहेसु गन्धारेसु य नग्गई ॥ ४५ ॥

गाथा ४५ भावार्थः–हवे चार प्रत्येक बुद्धनां नाम कहेछे, कलिंग देशने विषे करकंडु नामे राजा वूड्यो (समज्यो) (१), पंचाल देशने विषे द्विमुख नामे राजा वुड्यो (२), विदेश देशने विषे मिथुलानगरीमां नमीराजा वुड्यो (३), गंधारदेशने विषे निर्गतराजा वुड्यो (४) ॥ ४५ ॥

अर्थः–न० नमी राजाए न० नमाडयो अ० आपणा आत्माने स० प्रत्यक्ष स० शक्रेंद्र । चो० प्रेर्योथको प० छांडिने रे० राज प० विदेह देसनुं राज्य । सा० चारित्रने विषे प० सम्यग प्रकारे सावधान हुओ ॥४६॥

मूलः–नमी नमेइ अप्पाणं सक्खं सक्केण चोइओ ।

अर्थः-हवे नवमा सागरनो चक्रवर्ति [illegible] सहित क्रियारत पु० पुन्यवंत प० पट्खंडपृथ्वि मनने सो० सोधनिने अवधारिने भरतादिक संसारसुखनो भ० भर्ग ने मुक्तिफल ध०धर्म ने जिनशासनरूप ज्ञानदर्शन सहित चारित्र धर्म ए बेहुएकरी उ० छोडिने पुन्यवंत बेहुनोपुन्यवंत सांभळीने भ० भरत नामाचक्रवर्तिए वि० बली भा० भरत वा० षेषने चे० छांडीने राज्यनी का० कामभोगने छांडिने प० संजमचरण थया चारित्र आदर्यो ॥ ३४ ॥

मूलः-एयं पुण्णपयं सोच्चा अत्थधम्मोवसोहियं ।
भरहो वि भारहं वासं चेच्चा कामाइ पवए ॥ ३४ ॥

गाथा ३४ भावार्थः-हवे नवमा सगरना चक्रवर्ति जीनशासन सांभळी थया तेना गुण कीर्तन करवुं ते सांभळो ! अर्थ ने मुक्तिरूप फळ अने धर्म ने जीनशासनरूप ज्ञानदर्शन सहित चारित्र ए बेहुए करीने शोभित छे. पुन्यवंत एवुं शुद्ध मनने सांभळी हवे चारीने चेत्या भरतचक्रवर्तिए पण भरतक्षेत्रनुं राज्य अने कामभोगने छांडीने चारित्र आदर्यु ॥ ३४ ॥

अर्थः-सग० सागर नामा चक्रवर्ति वि० पण सा० समुद्रान्ते पर्यंत आज्ञा मनवें चोथीदिस चुल्लहिमवंत पर्वतसुधी । भ० एवो भरतक्षेत्रनो वा० राज्य न० सागरनामे राजानी । इ० ठकुराइ के० केवल संपूर्ण वि० छांडिने व० व्रताए संजमेकरि प० पोतेकर्युं ॥ ३५ ॥

मूलः-सगरो वि सागरन्तं भरहवासं नगरिनो ।

पीने ते राजाए पण तप आचर्यो. ॥ ३७ ॥

अर्थः-च० छांडिने भा० भरत वा० क्षेत्रनुं राज्य च० चक्रवर्ती प० मोटीऋधिनोधणी । सं० सांति-नाथ सं० सांतिनो करणहार लो० लोकनेविषे । प० पाम्या ग० मोक्षगति अ० प्रधान ॥ ३८ ॥

मूलः-चइत्ता भारहं वासं चक्कवट्टी महड्ढिओ ।
सन्ती सन्तिकरे लोए पत्तो गइमणुत्तरं ॥ ३८ ॥

गाथा ३८ भावार्थः-लोकने विषे शांतिनो करनारो पांचमो शांतिनाथ नामे चक्रवर्ती मोटी ऋद्धीनो धणी तेणे भरतक्षेत्रनुं राज्य छोडीने ऊत्तम मोक्षगती पाम्या. ॥ ३८ ॥

अर्थः-सा० त्रिणदिस समुद्रलगे आज्ञा प्रवर्ते एहवोराज च० छांडिने म० भरतक्षेत्रने विषे न० मनु-ष्यमांहि व० प्रधानठाकुर अ० अरनाथ व० बळी अ० कर्मरुपणी रजेकरी रहित प० थइने प० पाम्या मोक्षनी अ० प्रधान ग० गति ॥ ३९ ॥

मूलः-सागरन्तं चइत्ताणं भरहं नरवरीसरो ।
अरो य अरयं पत्तो पत्तो गइमणुत्तरं ॥ ३९ ॥

गाथा ३९ भावार्थः-त्रण दिशाए समुद्रलगी अने चोथी ऊत्तरदीशाये चुल हेमवंतपर्वत सुधी तेनी आज्ञा प्रवर्त्ते एवा भरतक्षेत्रने विषे मनुष्यमांही ऊत्तम ठाकुर ते सातमो अरनाथ नामे चक्रवर्ती तेपण राज्य छांडीने कर्मरुपणी रजरहित थइने ऊत्तम मोक्ष गतीए पहोंच्या. ॥ ३९ ॥

संसार समुद्रने तरता हुवा । त० एकेक तग सरिषा तरे छे । त० तरसे अ० आगमिकाळे ॥ ५३ ॥

मूलः—अच्चन्तनियाणखमा सच्चा मे भासिया वई ।
अतरिंसु तरन्तेगे तरिस्सन्ति अणागया ॥ ५३ ॥

गाथा ५३ भावार्थः—समकितादिक कारणेकरी अत्यंत कर्मरुप मेल शोधवा समर्थ—ए में जीनागमरुप सत्यवाणी कहीछे, ते वाणी अंगीकार करीने अतितकाळे अनंता तर्या अने वर्तमानकाळे तमारा सरखा तरेछे अने भविष्यकाळमां अनंता तरशे ॥ ५३ ॥

अर्थः—क० केवधी० धीर्यवंत साधु अ० मिथ्यातने । कुहेते करी । अ० पोताना आत्माने मिथ्याते करी प० केम वसावे वसावे नहि इत्यर्थ । स० सर्व सं० संग थकी वि० मुंकाणोथको । सि० सिद्ध भ० थाय नी० कर्मरज रहित थको । त्ति० एम वे० हुं कहुंछुं ॥ ५४ ॥

मूलः—कहिं धीरे अहेऊहिं अत्ताणं परियावसे ।
सवसङ्गविनिम्मुके सिद्धे भवति नीरए ॥ ५४ ॥ त्ति बेमि ॥

॥ इति सञ्जइज्जंनाम अष्टादशं अध्ययनं सम्मत्तं ॥ १८ ॥

गाथा ५४ भावार्थः—धैर्यवंत डाह्यो पुरुष मिथ्यातीना कुहेतुने विषे पोताना आत्माने केम वसावे ? (अर्थात् नज वसावे) अने सर्व संगथी मुकाणोथको कर्मरुप रज रहित थइ साश्वतो सिद्ध थाय, एम सुधर्मा स्वामी पोताना जंबू नामना शिष्यने कहेता हवा के हे जंबू ? जेम में श्री महावीरदेवस्वामीनी समीपे सांभळ्युं हतुं तेम में तुज

हरिसेणो मणुस्सिन्दो पत्तो गइमणुत्तरं ॥ ४२ ॥

गाथा ४२ भावार्थः-एकज छत्र एवं राज्यवश करीने छखंड पृथ्वीना बीजा राजाना माननो मर्दण-हार अने मनुष्यमांही इंद्रसमान एवो दशमो हरिषेण नामे चक्रवर्ती ऊत्तम मोक्षगती पाम्यो. ॥ ४२ ॥

अर्थः-भ० सहित रा० राजाने स० सहये करीने सु० भली विधे राज्यादिक प० छांडिने द० संजम च० आदर्यो ज० जयनामे राजाए नि० जिनोक्त संजम आदर्यो तेणे चक्रवर्तिए प० पाम्यो ग० मोक्ष गतिने भ० प्रधान ॥४३॥

मूलः-अन्निओ रायसहस्सेहिं सुपरिच्चाई दमं चरे ।
जयनामो जिणक्खायं पत्तो गइमणुत्तरं ॥ ४३ ॥

गाथा ४३ भावार्थः-राजाओना सहये करीने सहित भलीविध राज्यादिकने छांडीने अग्यारमो जय. नामे चक्रवर्ती ए जीनोक्त संयममार्ग आदरीने ऊत्तम मोक्षगती पाम्या. १ ए दश चक्रवर्ती मोक्ष गया अने आठमो सुभूम नामे चक्रवर्ती अने बारमा ब्रह्मदत्त ए बंने नर्क गया तेथी अहीं गण्या नथी. हवे जे राजाओ जैनधर्ममां थया तेना नाम कहेछे. ॥ ४३ ॥

अर्थः-द० दशार्ण देशनुं र० राज्य सु० प्रमोद सहित च० छांडिने मु० महाव्रत च० आदर्यो जेणे द० दशार्ण भ० भद्र नि० निकल्यो । स० प्रत्यक्ष स० शक्रेंद्र चो० प्रेर्यो थको ॥ ४४ ॥

मूलः-दसण्णरज्जं मुदितं चइत्ताणं मुणी चरे ।
दसण्णभद्दो निक्खन्तो सक्खं सक्केण चोइओ ॥ ४४ ॥

छे) अने माता पिताने बहुज प्रियकारी एवो बळश्री नामे (उर्फे) लोक प्रसिद्ध मृगा नामनो पुत्र हतो. ॥२॥

अर्थः-नं० आनंदकारीछे सो० तेमृगापूत्र उ० बळी पा० शिपरवंध प्रासादनेविषे। की० क्रीडाकरेछे स० घणी इ० स्त्रीसहित दे० देव दो०दोगुंदकदेवतानिपरे च०वली ए० अवधारणे ॥ नि० सदाय मु० प्रमोदसहित मा०मन॥३॥

मूलः-नन्दणे सो उ पामाए कीलए सह इत्थिहिं।
देवो दोगुन्दगो चेव निच्चं मुदितमाणसो ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः-ते आनंदकारी मृगापुत्रप्रासाद (महेल) ने विषे त्रायत्रींसक देवतानीपेरे स्त्री सहित नित्य प्रमोद (हर्ष) थी क्रिडा करतो विचरतो हवो. ॥ ३ ॥

अर्थः-म० चद्रकांतादिमणी र० कर्केतनादिक रतनतेणे को०जम्योछे पिटणीनुं त० तळुं ॥ पा० प्रासादनां आ० गोपनेविषे ढि० रह्यो ॥ आ० जोयछे न० नगरमांहि ॥ च० च्यारवाट एकठीमलेतिहां ॥ त्ति० त्रिनवाटएकठी मिले तिहां च० घणी वाट एकठी मळे त्यां जोवेछे ॥ ४ ॥

मूलः-मणिरयणकोट्टिमतले पासायालोयणट्ठिओ।
आलोएइ नगरस्स चउक्कतियचच्चरे ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थ-जेनुं भोंयतळीयुं माणिरत्नथी कुटेलुं तेवा प्रासादना गोखे रहीने नगरना चण चारे ने घणा पंथ मळे त्यां जोतो हवो ॥ ४ ॥

अर्थः-म० हवे न० ते च्यारवाट प्रमुपनेविषे ॥ अ० आवतो पा० दीनोदेखेछे ॥ स० तपसी साधुने

देशनुं राज्य अने पर छांडीने सम्यक प्रकारे चारित्रने विषे सावधान थयो ॥ ४६ ॥

अर्थः-ए० एमन० राजा मांहि व० घोरी समान नि० निकल्या । जि० जिन सा० शासनने विषे ॥ पु० पुत्रने र० राज्यने विषे ठ० स्थापीने । सा० चारित्रने विषे प० सम्यग प्रकारे सावधान थया ॥ ४७ ॥

मूलः-एते नरिन्दवसभा निक्खन्ता जिणसासणे ।
पुत्ते रज्जे ठवेऊणं सामण्णे पज्जुवट्ठिया ॥ ४७ ॥

गाथा४७ भावार्थः-एम राजा मांही घोरी समान पुत्रने राज्यने विषे स्थापीने जीनशासनेविषे नीकल्या अने सम्यक प्रकारे चारित्रने विषे सावधानथया ॥ ४७ ॥

अर्थः-सो० सिंधु सोवीर देशनो रा० राजा व० घोरी समान ॥ च० छांडिने राजा मु० संजम च० आदर्यो । उ० उदायण नामा राजाए प० दिक्षा लीधी । प० पाम्या ग० मोक्षगति अ० प्रधान ॥ ४८ ॥

मूलः-सोवीररायवसभो चइत्ताण गुणी चरे ।
उदायणो पव्वइओ पत्तो गइमणुत्तरं ॥ ४८ ॥

गाथा ४८ भावार्थः-सिंधु सोविर देशनो घोरी समान उदायन नामे राजा तेणे पण राज्य छांडीने संयम आदर्यो अने उत्तम मोक्षगती पाम्यो. ॥ ४८ ॥

अर्थः-त० तेमज का० कासीदेशनो रा० राजा नंदनामा सातमो बलदेव । से० अति प्रसंसनिक स० संजमने विषे प० उद्यमवंत । का०कामभोग प०छांडिने प०प्रकर्षे ॥ ह०हणे क०कर्मरुपी ओ म०मोटो व०वन ॥४९॥

मोहंगयस्स सन्तस्स जातीसरणं समुप्पन्नं ॥ ७ ॥

गाथा ७ भावार्थः–ते मृगापुत्रने साधुनां दर्शने क्षयोपशम शमभाव शोभनीक ने मोह उपशांतभाव मात्र थयाथी पाछली जातिस्मरी (एटले लगोलग संज्ञीपचेंद्रीना नवसें भव सुधी करेला होय तो ते तमाम पाछला भव देखी शके एवुं जातिस्मर्ण ज्ञान उपन्युं) ॥ ७ ॥

अर्थः–दे० देवलोकथी चु० चव्यो सं० थको । मा० मनुष्य भ० भवे आ० आव्यो । सं० संज्ञिपचंद्रिने ना० ज्ञानउपजेजाति स्मर्णते । स० उपन्यो । जा० जाति स० संभारि पु० पाछलिपूर्व भवनी ॥ ८ ॥

मूलः–देवलोग चुओ संतो माणुरसं भवमागओ ।
सन्निनाण समुप्पन्ने जाइ सरणं पुराणयं ॥ ८ ॥

गाथा ८ भावार्थः–जे संज्ञी (मन सहित होय ते) नेज ज्ञान होय ते जातिस्मर्ण ज्ञान मृगापुत्रने उपजवाथी देवलोकथी चवि (मरी) मनुष्य जन्ममां हुं आव्यो एम जोतो हवो ॥ ८ ॥

अर्थः–जा० जातिसरण सं० उपनेथके । मि० मृगापुत्र म० मोटीरुधिनोधणी ॥ स० समरिसंभारि पो० पाछली जा० जाति । सा० चारित्रजेपण च० वळी पु० पूर्वे क० पाल्युं हतुं ॥ ९ ॥

मूलः–जातीसरणे समुप्पन्ने मियापुत्ते महिड्ढिए ।
सर्इ पोराणिइं जाइं सामण्णं च पुरा कयं ॥ ९ ॥

मूलः—तद्दवुग्ग तव किया अधाकरणेण चपरा ।
महव्वलो रायरिसी आदाय सिरसा सिरिं ॥ ५१ ॥

गाथा ५१ भावार्थः—तेपन शरीर उपर ममत रहित पणे उग्र तप तथा संयमनेविषे अत्यग्रचित्ते करीने महाबल नामे राजऋषिए माथा साटे संयम रुपणी अथवा केवल ज्ञान रुपणी लक्ष्मी ग्रहीने मोक्षनेविषे पहोच्या (पूर्वोक्त सिवाय बीजा पण सगर चक्रवर्ति राजा तथा अनेरा पण राजा जैनसासनेविषे संयमीपणा.) ॥५१॥

अर्थः—क० केम धी० धीरवंत साधु अ० मिथ्यात्विना परुप्याहुवेल तेणे करी उ० घेलानी परे मतवाला व० वली म० पूर्वाने विषे । च० केम विचरे अर्थात् मतवालानीपरे प्रवर्ते नहि । ए० ए भरतादिक राजा वि० ज्ञान सहित क्रिया शुद्ध मार्गनो विशेष । आ० ग्रहीने एटले मू० शुरद० दृढ प० पराक्रमना धणी ए शुद्ध मार्गने आदरता हुवा ॥ ५२ ॥

मूलः—कहं धीरो अहेऊहिं उम्मत्तो व महिं चरे ।
एते विसेसमादाय सूरा दढपरक्कमा ॥ ५२ ॥

गाथा ५२ भावार्थः—जे धैर्यवंत ज्ञानी पुरुष होय ते मिथ्यातीना परुपेला कुहेतुवे करी उन्मत्त (दिवाना) नी पेर केम पृथ्वीने विषे विचरे ? (अर्थात् नज विचरे) तेथी ए भरतादिक राजा शुरद्रढ पराक्रमना धणी ज्ञान सहित क्रियारुप विशेष शुद्ध मार्ग जाणीने जैनमार्गने आदरता हवा. ॥ ५२ ॥

अर्थः—अ० अन्यतनि० ममकितादिक कारणे करी । स० कर्मरुप मेल टालवाने समर्थ हुवा । तुमे जेवडीवो आगले हुवे । ग० सत्ये करी मे०मे मा० कही भाषा व० वांणी । ज्ञान सहित क्रियाए करीने अ०

विषे में पंचमहाव्रतरूपें संयम सांभळ्यो ते प्रवर्जा हुं ग्रहण करुं (इहां पंचमहाव्रत कहेवाथी प्रथम ऋषभदेव प्रभुने वारे मृगापुत्र थएला होय तेम जणाय छे) ॥ ११ ॥

अर्थः–अ० हेमाता । ता० हेपिता म० मे भो० भोग भु० भोगव्या वि० विषफलकिंपाक वृक्षनी फलनी उ० उपमाए प० भोगभोगव्यापछे क० कडुआ वि० विपाकनादेणहारछे एभोग । अ० निरंतर दु० दुपनादेणहारछे॥१२॥

मूलः–अम्म ताय मए भोगा भुत्ता विसफलोवमा ।
पच्छा कडुयविवागा अणुबन्धदुहावहा ॥ १२ ॥

गाथा १२ भावार्थ–हे मातापिता ? किंपाक (एक जातनां झेरी) वृक्षनां फळनी पेरे निरंतर कडवां फळ आपनार एवा विषयभोग में भोगव्या ॥ १२ ॥

अर्थः–इ० ए स० शरीर अ० अनित्य । अ० असुचिमय शरीर । अ० असुचिथी सं० उपन्यो एउदारिक शरीर अ० असास्वतो वा० वासजीवनो इ० ए । दु० दुखनोहेतु के० रोगज्वरादिक कलेशनुं भा० भाजन ए शरीर॥१३॥

मूलः–इमं सरीरं अणिच्चं असुई असुइसंभवं ।
असासयावासमिणं दुक्खं केसाण भायणं ॥ १३ ॥

गाथा १३ भावार्थ–जे रोगो तथा जरा (वृद्धावस्था) दिक दुःखोनुं घर ने ज्यां जीवनो असास्वतो हमेश कायम नहि तेवा वास ने अशुची (अपवित्राइ) थी प्रगट थएलुं होवाथी अशुचीमय एवुं आ उदारिक

प्रत्ये कहुं. ॥ ५४ ॥ इतिश्री उत्तराध्ययनसूत्रना अढारमा अध्ययननो भावार्थ संपूर्ण ॥ १८ ॥ ए अढारमा अध्ययनने विषे भोग अने ऋद्धीनो त्याग कह्यो, तेनो चारित्रने विषे होय, अने चारित्र तो सावद्य निकिन्सा (वैद्य) अणकरवे करी होय, ते माटे ओगणीसमा अध्ययनने विषे मृगापुत्रनो अधिकारकहे छे. ॥ १८ ॥

अर्थः-सु० सुग्रीवनामा न० नगरनेविषे र० रमणीक । का० मोटाउंचा प्रासादेसहित उ० उद्यानवन सो० नगरशोभे ते नगरनेविषे रा० राजा । ब० बलभद्र ति० नामे । मि० मृगानामे त० ते बलभद्रराजानी अ० अग्र मा० महिषी एटले पटराणी ॥ १ ॥

मूलः-सुग्गीवे नयरे रम्मे काणणुज्जाणसोहिए ।
राया बलभद्दो त्ति मिया तस्सग्गमाहिसी ॥ १ ॥

गाथा १ भावार्थः-मोटा प्रासादोथी क्रिडा करवा लायक एवा उद्यान (वन) थी शोभीत अने ऋद्धि समृद्धियी रमणिय एवा सुग्रीव नामना नगरने विषे बलभद्र नामे राजा हतो ने तेनी मृगावती नामनी पट्टराणी हती ॥१॥

अर्थः-ते० तेबेनो पु० पुत्र ब० बलश्रि नामाकुमार मि० मृगापुत्र ति० एहवोनामेते वि० प्रसिद्धछे अ० माता पि० पिताने द० बलभ जु० जुवराजाले द० गृहस्थपणे यतिनागुण आव्याछे ते भणी यतिमांहि इ० अग्रेसर ॥२॥

मूलः-तेसिं पुत्ते बलसिरी मियापुत्ते त्ति विस्सुए ।
अम्मापिऊण दइए जुवराया दमीसरे ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः-तेओने युवराज पदवीनो धणी ने यतिनो ईश्वर (अहीं भविष्यकाळमां थशे ते आश्री वाक्य

दु० दुखनो हेतु हु० निश्चे सं० संसार ज० ज्यां की० कलेसाय ज० जीव ॥ १६ ॥

मूलः—जम्मं दुक्खं जरा दुक्खं रोगाणि मरणाणि य ।
अहो दुक्खो हु संसारो जत्थ कीसन्ति जन्तवो ॥१६॥

गाथा १६ भावार्थ—अहो ! ज्यां जन्म जरा मर्ण ने रोगादिकनां अत्यंत दुःखोनो हेतु एवा संसारने विषे प्राणी कलेशाय (पीडा पामे) ॥ १६ ॥

अर्थः—खे० उघाडी अगासीभूमी व० ढांकिभूमि घरादिक ॥ हि० सुवर्णादिक च० वळी पु० पुत्र ॥ दा० भार्या च० वली बं० बंधव ॥ च० छांडिने । इ० उदारिक दे० सरिर । ग० जावुं अ० अवस्य मे० मुजने ॥१७॥

मूलः—खेत्तं वत्थुं हिरण्णं च पुत्तदारं च बन्धवा ।
चइत्ताण इमं देहं गन्तव्वमवसस्स मे ॥ १७ ॥

गाथा १७ भावार्थ—उघाडी भुमिका ने घर प्रमुख ढांकी भुमिका सुवर्णादिक धन स्त्री पुत्र बंधू (विगेरे कुटुंब) अने आ उदारिक शरीर (ए तमाम) ने तजीने अवश्य परलोके जवुं ! ! ! ॥ १७ ॥

अर्थः—ज० जेम किं० किंपाक दृक्षना फ० फलनुं । प० परिणाम न० नथी सुं० भलो जेम जेम परिणामे तेम तेम । ए० एम भु० भोगव्या भो० भोगवुं प० परिणाम न० नथी सुं० भलो ॥ १८ ॥

मूलः—जह किम्पागफलाण परिणामो न सुन्दरो ।

सं० संजतिने ॥ त० तप बारभेदे नि० अभिग्रह सं० सतरभेदे संजमनो ध० धरणहार ॥ सी० अढारसहस्रशीलांग रूपणीरुधिवंत । गु० ज्ञानादिक गुणनो आ० आगर ॥ ५ ॥

मूलः—अह तत्थ अइच्छन्तं पासई समणसंजयं ।
तवनियमसंजमधरं सीलड्ढं गुणआगरं ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः—त्यां अनंतर पंथने विषे बारे भेदे तपश्चर्या ने सतरे भेदे संयमनो धरनार ने अढार सहस्रशीलांगरथरूपणी ऋद्धिनो धणी एवा संयतिने पंथ अतिक्रम (ओळंघतो) थको मृगापुत्रे दीठो ॥५॥

अर्थः—तं० तेयतिने दे० जोवेछे मि० मृगापुत्र । दि० दृष्टिए अ० अणमेल्लणोएहो उ० वली फ० फेस म० मुं जाणुंछुं ए० एहवुं रु० रूप ॥ दि० दिठुंछे पु० पूर्वे ज० जे पु० पूर्वभवे ॥ ६ ॥

मूलः—तं देहइ मियापुत्ते दिट्ठीए अणिमिसाए उ ।
कहिं मन्नेरिसं रूवं दिट्ठपुव्वं मए पुरा ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः—ते यतिने मृगापुत्र मेषोन्मेष दृष्टीए जोवा लाग्यो अने कयुं के में पूर्व जन्मने विषे एवुं स्वरूप जोयुं छे एम विचारवा लाग्यो ॥ ६ ॥

अर्थः—सा० साधुना द० दर्शनथकीज के त० तेमृगापुत्रने ॥ अ० परिणाम सो० शोभनिकथकीज के । मो० मोह ग० गयो मोहउपशम्यो । अथवा पूर्वने विषेहुतो सं० संतो ॥ जा० जाति स० स्मर्णज्ञान । सं० उपनुं ॥७॥

मूलः—साहुस्स दरिसणे तस्स अज्झवसाणम्मि सोहणे ।

अने रोगे करी पीडयो थको दुःखी थाय ॥ २० ॥

अर्थः–अ० पंथने जो० जेपुरुष म० मोटापंथने तु० वळी । स० संबल सहित जो प० मोटोपंथ अंगीकार करे ग० जातोथको सो० तेपुरुष । सु० सुखी हो० होय छु० भुख त० त्रषाएकरी । व० रहित थको ॥२१॥

मूलः–अद्धाणं जो महन्तं तु सपाहिज्जो पवज्जई ।
गच्छन्तो सो सुही होइ छुहातन्हाविवज्जिओ ॥ २१ ॥

गाथा २१ भावार्थ–जेम कोइ पुरुष संबळे (भाताए) करी सहित थको मोटी अटवीना पंथने विषे जतां क्षुधा ने तृषाए करी रहित थको सुखी थाय ॥ २१ ॥

अर्थः–ए० एम ध० धर्मने अ० पण का० करीने । जो० जेग० जाय प० पर भ० भवे । ग० जातोथको ॥ सो० तेपुरुष सु० सुखी हो० होय । अ० अल्प क० कर्मपोतेरहे । अ० असातावेदनी रहितहोय मरुदेवीनीपरे ॥२२॥

मूलः–एवं धम्मं पि काऊणं जो गच्छइ परं भवं ।
गच्छन्तो सो सुही होइ अप्पकम्मे अवेयणे ॥ २२ ॥

गाथा २२ भावार्थ–एम श्रुत ने चारित्र धर्मे करी सहित जे कोइ परभवने विषे जाय ते अल्प पाप कर्मे अने अशातावेदनीए करी रहित थको (मरुदेवी माताना पेरे) सुखी थाय ॥ २२ ॥

अर्थः–ज० जेम गे० घरग्रहस्थनुं प० वलतेथके । त० ते गे० घरनो जो० जे प० धणी सा० सारवस्तु भं० बहूमुल्य वस्त्रने वी० काढे । अ० जिर्णवस्त्रादिक अ० छांडे पडयारहेवादे ॥ २३ ॥

पाळेलुं ते जोतो हवो ॥ ९ ॥

अर्थः-वि० विषयनेविषे अ० । अणरानतोथको ॥ र० रागतोथको सं० संजमनेविषे य० वळी अ० मातापिताने उ० समिपे आवीने इ० एहवा व० वचनने अ० बोल्यो ॥ १० ॥

मूलः-विसएसु अरज्जन्तो रज्जन्तो संजमम्मि य ।
अम्मापियरमुवागम्म इमं वयणमब्बवी ॥ १० ॥

गाथा १० भावार्थः-ते मृगापुत्र विषयने विषे विरक्त थको ने चारित्रने विषे रक्त थको माता पितानी समीपे आवी (आगळ कहीशुं तेवुं) वचन बोलतो हवो ॥ १० ॥

अर्थः-सु० सांभल्याहता पुर्वभवनेविषे म० महाव्रत मे० मे । पं० पांच ॥ न० नरकनेविषेने दु० दुष च० वळी ति० तिर्यंच जो० योनीनेविषे जे दुषतेपणसांभल्या हतानेभणी । नि० निवर्तावानो का० अभिलाषी थयोछुं मि० वळी म० संसार रुपियासमुद्रथी ॥ अ० दिशालेवानी आज्ञाथी प० हुं दिशालेईश अ० हेमातापिता ॥ हवे मातापिता आमंत्रेछे पछे हवे मृगापुत्र कहेछे ॥ ११ ॥

मूलः-सुयाणि मे पञ्चमहव्वयाणि नरएसु दुक्खं च तिरिक्खजोणिसु ।
निव्विण्णकामो मि महण्णवाउ अणुजाणह पव्वइस्सामि अम्मो ॥ ११ ॥

गाथा ११ भावार्थः-नारकी तिर्यंच मनुष्य ने देव (किल्विषी ने विषे जे दुःखो छे एवा संसार-समुद्रथी हुं निवर्तवानो कामी थयो छुं, तो हे माता पिता ? जो तमे आज्ञा (रजा) आपो तो पुर्व भवने

धारवा एवुं चारित्र दुष्करछ. ॥ २५ ॥

अर्थः–स० समता आपणा आत्मासरिपोभाव स० सर्व भू० जीवनेविषे । स० शत्रु मि० मित्रनेविषे आपणा आत्मासरिपो भाव वा०वळी । ज० सर्वजग ज्परे सरिपोभाव । पा० प्राणातिपातनी वि० विरति जा० जावजीवलगे दु० पाळतां दोहिलो ए व्रत ॥ २६ ॥

मूलः–ममया सव्वभूएसु सत्तुमित्तेसु वा जगे ।
पाणातिपातविरई जावज्जीवाए दुक्करं ॥ २६ ॥

गाथा २६ भावार्थः–आलोकने विषे शत्रुमित्र प्रमुख सर्व प्राणीयोने विषे सम (सरखी) दृष्टीथी जोवुं एहवी जावजीवसुधी प्राणातिपातनी विरती तेएवी रीते के वसेने सोळखीलीयो ते सूक्ष्मजीवने १ दिवसे, २ रात्रीये, ३ सुतां, ४ जागतां, ५ एकलां, ६ प्रसदामां एछ प्रकारे नव कोटीए न हणवा, ए नवे छके ५४ सूक्ष्मनी, एवीज वादरजीवनी ५४, एवीत्रसजीवनी ५४ अने एवीस्थावर जीवनी एम २१६ खीलीयो तेमज छकायना रक्षणरुप त्रणसेने चोवीस खीलीयो ते एवी रीते के पुर्वोक्त छ प्रकारने नव कोटीए गुणतां ५४ पृथ्वीकायनी, एम ५४ अपकायनी, एम ५४ तेउकायनी, एम ५४ वायुकायनी, एम ५४ वनस्पतिकायनी, एम ५४ त्रसकायनी, एम ३२४ खीलीयो पाळवारुप प्रथम महाव्रत दुष्कर ॥ २६ ॥

अर्थः–नि० सदाय सर्व का० काळे अ० असमाहपणे मु० मृषावादनुं वि० वर्जवुं ॥ भा० भाषवो हि० हितकारी स० सत्य नि० सदाय हितकारि सत्यवचन बोलवो ते० तेणेकारणे दु० दुष्कर ॥ २७ ॥

अर्थः-अ० असाश्वता म० शरीरनेविषे । र० रती नो० नथी ल० पामतो अ० हुं ॥ प० पछेहद्ध पणेछांडवो पु० पण वा० असास्वताभणी बालपणे व० वली च० छांडतो एशरीर फे० पाणीनाफेणनां यु० पुरपुंश सं० सरिपात्रशरीरनेविषेहुं मनिरथीपामतो ॥ १४ ॥

मूलः—असासए सरीरम्मि रइं नोवलभामहं ।
पल्ला पुण य चइयव्वे फेणबुब्बुयसन्निभे ॥ १४ ॥

गाथा १४ भावार्थ—पाणीना परपोटानीपेरे नाशवंत अने बाल्यावस्था तथा वृद्धावस्थाए जरुर छांडवानुं एवा असाश्वता शरीरने विषे हुं रति (आनंद) नथी पामतो ॥ १४ ॥

अर्थः-मा० मनुष्यपणा अ० असारनेविषे ॥ वा० आधी ने अनिपणी व्याधिते कोढादिक । रो० रोगते ज्वरादिक तेहनो आ० घर ॥ ज० जरा म० मरणथकी स० ग्रधुंछे एहवा शरीरनेविषे । ख० क्षणमात्र वि० वली न० न र० रतिपामुं अ० हुं ॥ १५ ॥

मूलः—माणुसत्ते असारम्मि वाहीरोगाण आलए ।
जरामरणत्थम्मि खणं पि न रमामहं ॥ १५ ॥

गाथा १५ भावार्थः—जे व्याधि (पीडा) ने कुष्ठादिक रोगोनुं घर अने जरामरणे करी ग्रसीत (घेराएलुं) एवा असार मनुष्यपणाने विषे क्षणमात्र हुं रति नथी पामतो ॥ १५ ॥

अर्थः-ज० जन्मनुं दु० दुख ज० जरानुं दु० दुख रो० रोग । म० मरण स० वली । अ० हेमाता

म० महाव्रत व० ब्रह्मचर्यरूप ॥ धा० ब्रह्मचर्य धारवो सु० अतिदुःकर ॥ २९ ॥

मूलः–विरई अबम्भचेरस्स कामभोगरसन्नुणा ।
उग्गं महव्वयं बम्भं धारेयव्वं सुदुक्करं ॥ २९ ॥

गाथा २९ भावार्थः–कामभोगना जाणने अब्रह्मचर्यने विरतिते एवीरीते के एकसो बासठ स्त्रीलीयोतेे पुर्वोक्त छ प्रकारे ने नवकोटीए गुणतां ५४ देवतानी, एवी ५४ मनुष्यनी, एवी ५४ तिर्यंचनी एम १६२ स्त्रीलीयोए महा उग्र (भयंकर) ब्रह्मचर्यनुं धारवा रूपचोथुं महावत अति दुक्कर ॥ २९ ॥

अर्थः–ध० धन ध० शालीआदि पे० दासनां व० समूहनेविषे प० परिग्रह उपरी ममतानो वि० वर्जवुं स० सर्व आ० आरंभनो प० त्याग नि० ममता रहितपणो सु० अति दु० दुकर ॥ ३० ॥

मूलः–धणधन्नपेसवग्गेसु परिग्गहविवज्जणा ।
सव्वारम्भपरिच्चाओ निम्ममत्तं सुदुक्करं ॥ ३० ॥

गाथा ३० भावार्थः–सर्व आरंभनो त्याग करी धन धान्य ने दास वर्गने विषे ममत्वभावने तजवुं ते एवी रीते के वगमेने चोवीस स्त्रीलीयो ते पुर्वोक्त छ प्रकार ने नव कोटीए गुणतां ५४ अल्प कीमतनी, एवी ५४ बहु कीमतनी, एवी ५४ अणुनी, एवी ५४ स्थुलनी, एवी ५४ सचेतनी, एवी ५४ अचेतनी, एम ३२४ स्त्रीलीयोए परिग्रह तजीने निर्ममत्व भावे रहेवुं एवुं पाचमुं महाव्रत अतिदुकर ॥ ३० ॥

गाथा १८ भावार्थ-जेम किंपाक वृक्षनां फळ भोगव्या पछी परिणामे भलां नहि (कारण के ते फळ जोवामां घणां रमणिय ने खाती वखते पण घणां मधुर होय छे पण खाधा पछी ते घडीए जीवने काया न्यारां करे) तेम जे भोग भोगव्या तेनुं परिणाम भलुं नहि (अर्थात् शब्दादिक कामभोग मनने रमणिय अने भोगवतां पण घणां प्रिय छे पण पछी एकांत दुःखदाता छे.) ॥ १८ ॥

अर्थः-अ० पंथने जो० जे पुरुष म० मोटो पंथ तु० वळी अ० संबल रहित प० मोटो पंथ अंगीकार करीने ग० मोटा पंथने विषे जातो थको सो० ते पुरुष। दु० दुखी हो० होय। छु० क्षुधा त० तृषाये पी० पीडयोथको ॥१९॥

मूलः-अद्धाणं जो महन्तं तु अप्पाहिज्जो पवज्जई ।
गच्छन्तो सो दुही होइ छुहातण्हाए पीडिओ ॥ १९ ॥

गाथा १९ भावार्थः-कोइ पुरुष संबळे (भाताए) करी रहित थको मोटी अटवीना पंथने विषे जातां थकां क्षुधा तृषाए पीडयो थको दुःखी थाय ॥ १९ ॥

अर्थः-ए० एम ध० धर्मने अ० अणकरये करीने जो० जे कोइ । ग० जाय प० पर भ० भव प्रते ग० जातो थको सो० ते दु० दुखी हो० होय वा० व्याधि अने रो० रोगे करीने पी० पीडयोयको ॥ २० ॥

मूलः-एवं धम्मं अकाऊणं जो गच्छइ परं भवं ।
गच्छन्तो सो दुही होइ वाहीरोगेहि पीडिओ ॥ २० ॥

गाथा २० भावार्थ-एम श्रुतने चारित्र धर्म अण करवाथी जे कोइ परभवने विषे जाय ते जीव व्याधि

अर्थः–ता० चपेटादिकनुं प्रहार त० आंगलि प्रमुखेकरी तर्जनुं चे० वळी व० वधनुं बं० बंधनुं प० परिसह दु० दोहिली भि० भिक्षाचरि। जा० जाचनाकरवी दोहिली य० वळी अ० जाचनाकिधापछे लाभेनहिते अलाभपरिसह ॥ ३३ ॥

मूलः–तालणा तज्जणा चेव वहबन्धपरीसहा ।
दुक्खं भिक्खायरिया जायणा य अलाभया ॥ ३३ ॥

गाथा ३३ भावार्थः–ताडन चेपटादिक, आंगुळां प्रमुहादिकनी तर्जनानो, वद्ध (मार) नो, तेमज भिक्षाचरी करवी दोहली ने याचनानो, अलाभनो परिसह खमवो महादुकर ? ॥ ३३ ॥

अर्थः–का० पंपीनीपरे जा० जेइ० एआहारलेवानी वि० वृति आजीविका यतीनि ॥ के० केसनो लो० लोच। य० वळी दा० कायरपुरुषनां हैयाने विदारवा एहवो लोचनोपरिसह दोहिलो दु० दुकर बं० ब्रह्मचर्यव्रत धो० कर्मवैरिप्रतेरुद्र । धा० एव्रतधारवोपालवो य० वळी अ० अधीर्यवंत आत्माने अतिदोहिलो ॥ ३४ ॥

मूलः–कावोया जा इमा वित्ती केसलोओ य दारुणो ।
दुक्खं बम्भवयं घोरं धारेउ य महप्पणो ॥ ३४ ॥

गाथा ३४ भावार्थः–जेम पंखी कांटाने तजीने कणने चुगे तेम साधुए सदोस आहार तजीने निर्दोष आहार ग्रहीने विचरवुं ने घोर (भयंकर) ब्रह्मचर्यादिक व्रतनुं धारवुं ने केशनुं लुंचन ए सर्व अधैर्यवंत आत्माने महादुकर॥३४॥

अर्थः–सु० सुखभोगववा योगळे तु० तुं पु० हेपुत्र सु० कोमल सु० अतिशेरुडिपरेस्नानकरवे करी निर्मैल सरिरछे ताहरो ॥ न० नथी हु० निश्चे सी० छे प० समर्थ तु० तुं। पु० हेपुत्रनाया सा० चारित्र अ० पालवोदोहिलो ॥३५॥

मूलः—जहा गेहे पलित्तम्मि तस्स गेहस्स जो पहू ।
सारभण्डाणि नीणेइ असारं अवइज्जइ ॥ २३ ॥

गाथा २३ भावार्थ—जे कोइ गृहस्थनुं घर बळते छते ते घरनो धणी जाणे (जुनां) वस्त्रादिक तजीने महा मूल्यवाळी सार वस्तु काढे ॥ २३ ॥

अर्थः—ए० एम लो० लोक प० बळतेथके ज० जराअने म० मरणतेणेकरी पलतेथके य० वळी । अ० पोतानां आत्मानेसार बहुमूल्यजाणीने ता० तरनो ॥ तु० तमे अ० हिसानी आज्ञादीधेथके ॥ २४ ॥

मूलः—एवं लोए पलित्तम्मि जराए मरणेण य ।
अप्पाणं तारइस्सामि तुब्भेहिं अणुमन्निओ॥ २४ ॥

गाथा २४ भावार्थ—एम जराने मर्णे करी आ लोक बळते छते ए असार कामभोगने तजीने (हे माता पिताओ ?) तमारी आज्ञा थये छते (धर्मथी) सारभूत एवा मारा आत्माने तारीश ! ! ! ॥ २४ ॥

अर्थः—तं० तेमृगापुत्र वि० बोलतोहतोते बोलतामते अ० माता पि० पिताबोल्या ॥ पु० हेपुत्र सी० चारित्र दु०पालवादोहिलो ॥ गु०क्षमागुणना तु०वळी स०सहस्र ॥ धा०धारवाराणवा भि० यतीने ॥ २५ ॥

मूलः—तं विन्ति अम्मापियरो सामण्ण पुत्त दुक्करं ।
गुणाणं तु सहस्साइं धारेयव्वाइं भिक्खुणो ॥ २५ ॥

गाथा २५ भावार्थः—तेमृगापुत्रने मातापिता कहेताहता के हे पुत्र ? ए क्षमादिक गुणोना सहस्र अतिशे

वाहाहिं सागरो चेव तरियवो गुणोदही ॥ ३७॥

गाथा ३७ भावार्थः–उंची चुल हेमवंत पर्वतथी पडती एवी गंगा नदीना सामे पुरे जवुं दुक्कर तेम योवनावस्थाए इंद्रियोथी प्रतिकुळपणे वर्त्तिते संयम पाळवो दुक्कर, वळी जेम वे भुजाए करी समुद्र तरवो दुक्कर तेम यतीना गुणोरुपी समुद्र तरवो दुक्कर ! ॥ ३७ ॥

अर्थः–वा० वेलुना क० कवल चे० जेम नि० निरसनेम उ० वळी सं० संजमपणनिरस । अ० पडग धा० धाराउपरे चे० जेम ग० चालुवुं दोहिलुं । दु० तेमदोहिलो च० आचरता त० तपचारेभेदे ॥ ३८ ॥

मूलः–वालुयाकवलो चेव निरस्साए उ संजमे ।
अमिधारागमणं चेव दुक्करं चरिउं तवो ॥ ३८ ॥

गाथा ३८ भावार्थः–वेळुना कोळीयानीपेरे पांच इंद्रियोना विषय सुखरुप रसथी रहित संयम छे, वळी जेम खड्ग (वे धारवाळी तरवार) नी धारा उपर चालवुं दुक्कर, तेम तारे भेदे तपश्चर्या करवी दोहीली ॥३८॥

अर्थः–अ० जेमसर्प वे० एकांत॥ दि० दृष्टिचाले । च० चारित्रनेविषे तेमसाधुपणे जेम एकांतेइर्या समतिचाले पु० हेपुत्रसंजम आचरता दु० दोहिलो ज० जवना लो० लोहमय चे०वळी चा० चाववा सु० अत्यंत दु०दुकर॥३९॥

मूलः–अही वेगन्तदिट्ठीए चरित्ते पुत्त दुक्करे ।
जवा लोहमया चेव चावेयवा सुदुक्करं ॥ ३९ ॥

मूलः-निच्चकालप्पमत्तेणं मुसावायविवज्जणं ।
भासियव्वं हियं सच्चं निच्चाउत्तेण दुक्करं ॥ २७ ॥

गाथा २७ भावार्थः-सर्व काळने विषे अप्रमादपणे रही बीजुं महादुत मृषावाद (असत्य वचन) ने तजीने उपयोग पूर्वक सर्वने हीतकारी ते एवीरीते के वसेने सोळ स्त्रीलीयो ते पुर्वोक्त छ प्रकारे ने नवकोटीए गुणता ५४ क्रोधनी, एवी ५४ लोभनी, एवी ५४ भयनी, एवी ५४ हांसीनी एम २१६ स्त्रीलीयो ए सत्य वचन बोलवारूप संयम दुकर ॥ २७ ॥

अर्थः-दं० दांत सो० शोधन ने दांतने अर्थेसत्री आ० आदी ॥ अ० अदत्तनुं वि० वर्जवुं ॥ अ० निरवद्य ए० एषणीकछनुंदोषरहित गि० एहवो निर्दोष आहार लेवो अ० अति दु० दुकर ॥ २८ ॥

मूलः-दन्तसोहणमाइस्स अदत्तस्स विवज्जणं ।
अणवज्जेसणिज्जस्स गिण्हणा अवि दुक्करं ॥ २८ ॥

गाथा २८ भावार्थः-वेताबीशहोष रहित आहार ग्रहण करवुं ते दंतशोधन (दांतखोतरवा-नी सळीयादिक) पण अणदिधेलुं नहि लेवुं ने एवी रीतेके त्रणसेने चोवीस स्त्रीलीयो ते पुर्वोक्त छ प्रकारे ने नवकोटीए गुणता, ५४ अल्प कीमतनी, एवी ५४ बहुकीमतनी, एवी ५४ अणुंनी, एवी ५४ स्थूलनी, एवी ५४ सचेतनी, एवी ५४ अचेतनी, एम १२४ स्त्रीलीयोए अणदीधेलुं नहि लेवारूप अदत्तहुत दुकर ॥ २८ ॥

अर्थः-वि० विरति अ० अब्रह्मचर्यना । का० काम भो० भोगनां र० रमणनां सु० जाणीने उ० उप

मूलः—जहा तुलाए तालेउं दुक्करो मन्दरो गिरी ।
तहा निहुयनीसङ्कं दुक्करं समणत्तणं ॥ ४२ ॥

गाथा ४२ भावार्थः—जेम त्राजवे करी लक्ष जोजननो मेरु पर्वत तोल्वो दुष्कर तेम शंका रहित नि- श्चळपणे दश प्रकारे यतिधर्म पाळवो दुष्कर ॥ ४२ ॥

अर्थः—ज० जेम । भु० भुजाएकरी । त० तरवो । दु० दुकर र० रत्ननो आ० आगर संयंभुर मणसमुद्र त० तेम अ० जे उपसमवंत नथी तेहने । दु० दुकर द० उपसम रुपीयो सा० समुद्रतरवो दोहिलो ॥४२॥

॥ १९ ॥

मूलः—जहा भुयाहिं तरिउं दुक्करं रयणायरो ।
तहा अणुवसन्तेणं दुक्करं दमसागरो ॥ ४३ ॥

गाथा ४३ भावार्थः—जेम बे भुजाए करी रत्नागर (समुद्र) तरवो दुष्कर तेम उपशम (क्षमा) रुप समुद्र तरवो दुष्कर ॥ ४३ ॥

अर्थः—तेमणी भु० भोगवे मा० मनुष्य संबंधिया भो० भोग । प० शब्द रुपरस गंधफरस ए पांचप्र- कारे कामभोग तुं० तुं भोगव हे जायापुत्र भु० भुक्त भो० भोगीथइने त० तेवारपछे जा० हेपुत्र प० पछे प्रधपणे । ध० चारित्रधर्म च० आचरजे ॥ ४४ ॥

मूलः—भुञ्ज माणुस्सए भोगे पञ्चलक्खणए तुमं ।

॥१९२॥

घीमगुरु वासीराखवानो । सं० संचय चे० वळी व० तेहनोवर्जवो गृ० अतिशे दु० दुष्कर ॥ ३१ ॥

मूलः—चउविहे वि आहारे राईभोयणवज्जणा ।
सन्निही संचओ चेव वज्जेयव्वो सुदुक्करं ॥ ३१ ॥

गाथा ३१ भावार्थः— घृत (घी) गोळादीक (खावा पीवानी) वस्तुनो रात्रीए संचय नहीं राखवो अन्न पाणी मेवाने मुखवास एवा चार प्रकारना आहार ने रात्रीए भोजननुं वर्जवुं ते एवी रीते के बसेने सोळ खिलीयो ते पूर्वोक्त छ प्रकारने नव कोटीए गुणतां, ९४ अन्ननी, ९४ पाणीनी, ९४ मेवानी ने ९४ मुखवासनी एम २१६ खीलीयोए रात्रीभोजन त्यागरुप छट्ठं व्रत ने अतिशे दुष्कर ॥ ३१ ॥

(एम महाव्रतरुपी नंदु तेनी १७८२ खीलीयो उपर मुजब जाणवी.)

अर्थः— छु० भुख व० वळी त० तणानुं सी० शीतनुं उ० उष्णनुं तापपरिसह । दं० डंस म० मसानी वे० वेदना ॥ अ० अक्रोसपरिसह दु० दुष्कारिओ से० उपाश्रय य० वळी त० तणाना फा० फरस ज० मेलनोपरिसह ए० निश्चे य० वळी ॥ ३२ ॥

मूलः—छुहा तण्हा य सीउण्हं दंसमसगवेयणा ।
अक्कोसा दुक्खसेज्जा य तणफासा जल्लमेव य ॥ ३२ ॥

गाथा ३२ भावार्थः—क्षुधानो, तृषानो, टाढनो, तापनो, डांसमच्छरनो, कठोरवचननो, दुष्कारी उपाश्रयनो, तृण स्पर्शनो, मेलनो परिसह खमवो दुष्कर ? ॥ ३२ ॥

अर्थः–ज० जरा म० मरण रुपणी कं० अटवीनेविषे । चा० चारगतिरुप संसार भ० भयनो आ० आगार तेहने विषे म० मे । सो० भोगवी भी० अतिरौद्र वेदना । ज० जन्म म० मरणरुप दुखभोगवी य० वळी ॥ ४७ ॥

मूलः–जरामरणकन्तारे चाउरन्ते भयागरे ।
मए सोढाणि भीमाणि जम्माइं मरणाणि य ॥ ४७ ॥

गाथा ४७ भावार्थः–चार गतिरुप भयनो आगर एवा संसारमांहो जरामर्णरुपी अटवीने विषे में अनंती वखत जन्ममर्णनी अशाता वेदनी भोगवी ॥ ४७ ॥

अर्थः–ज० जेम इ० एमनुष्यलोकमांहि अ० अग्नी उ० उसन इ० एअग्नीथी अ० अनंतगुणो उसनता त० ते नरगमांहि न० ते नरकनेविषे वे० वेदना उ० उसन अ० असाता वे० भोगवी म० मे ॥ ४८ ॥

मूलः–जहा इहं अगणी उण्हो इत्तो णन्तगुणे तहिं ।
नरएसु वेयणा उण्हा अस्साया वेइया मए ॥ ४८ ॥

गाथा ४८ भावार्थः–ए मनुष्य लोकने विषे जेवी उश्न अग्नी होय तेथी अनंतगुणी नर्कने विषे उश्न अग्निनी में अशातावेदनी भोगवी ॥ ४८ ॥

अर्थः–ज० जेम इ० मनुष्यलोकमांहि इ० ए सी० सीतनाढ ॥ इ० ए तादथी अ० अनंतगुणो सीत त० तिहां न० नरकनेविषे वे० वेदना सी० सीतताढनीवेदनां ॥ अ० असाता वे० भोगवी म० मे ॥ ४९ ॥

मूलः–जहा इहं इमं सीयं इत्तो णन्तगुणे तहिं ।

मूलः—सुहाइओ तुम पुत्ता सुकुमालो सुमज्जिओ ।

न हु सी पभू तुमं पुत्ता सामण्णमणुपालिया ॥ ३५ ॥

गाथा ३५ भावार्थः—हे पुत्र ? तुं निर्मळ वस्त्रादिके सुकुमार (कोमळ) ने सुख भोगववा योग्य तेथी पंचमहाव्रतरूप संयम पाळवाने समर्थ (शक्तिवान) नथी ॥ ३५ ॥

अर्थः—मा० जावज्जीवमविस्सामो गु० गुणाणं तु० वली म० समुद्रमोटो । गु० भारे उ० वली लो० लोढना भा० भागनी प० पेरे जो० जे पु० पुत्र हो० होय दु० संजमनोभार वहेवा अत्यंत दोहिलो॥३६॥

मूलः—जावज्जीवमविस्सामो गुणाणं तु महब्भरो ।

गुरू उ लोहभारो व्व जो पुत्ता होइ दुव्वहो ॥ ३६ ॥

गाथा ३६ भावार्थः—हे पुत्र ! गुणोना मोटा गुणोनो समूह (जथो) ते बहुज भारे लोढानीपरे मर्यादापूर्वी वहेवा (उपाडवा) अत्यंत दोहिलो ॥ ३६ ॥

अर्थः—मा० पुत्तदेयंत पव्वउवरथी हेठउतरेछे । नेआकासगंगाकहिये गं० तेगंगानेसाहमेपूरेनेमनावो-दोहिथो ज० वली । प० जेणेदीपथी वाळीआवतोहोय तिहांसाहमोजावो तेमतिश्रोतकहिए मतिश्रोतनाबुं नेष दृष्टर प० वली दु० तेमयोजनवयनेहिंद संजम पाळवो दुकर । मा० भुंजाएकरीनेम सा० समुद्रतरवो दोहिलो हेतुनेम० वली । तेम त० तमबुं गु० संजमगुणोनो गुण उ० समुद्र ॥ ३७ ॥

मूलः—आगासे गङ्गसोउ व्व पडिसोओ व्व दुत्तरो ।

गाथा ५१ भावार्थः–म्होटी दवाग्नि जेवी मारवाडनी वज्र सरखी वेलुने विषे पूर्वे अनंतीवार भुजने वाळ्यो ॥५१॥

अर्थः–र० आरडतां कुं० पचवाना कुं० भाजननेविषे पचवानेअर्थे घाल्यो ॥ उ० उंचावृक्षनी सापादिकनेविषे व० बांध्यो अ० बांधव रहित क० लांबे करवतेकरी क० टुंकेकरवतेकरी । छि० छेद्यो पु० पुर्वे अ० अनंतिवार ॥५२॥

मूलः–रमन्तो कुन्दुकुम्भीसु उड्ढं वद्धो अबन्धवो ।
करवत्तकरकयाईहिं छिन्नपुव्वो अणन्तसो ॥ ५२ ॥

गाथा ५२ भावार्थः–कुंभीने विषे आक्रंद करतां उंचा वृक्षनी शाखाए बांधवरहितपणे बांधी नानी करवती तथा मोटा करवते करी पूर्वे अनंतीवार भुजने छेद्यो. ॥ ५२ ॥

अर्थः–अ० अति नि० तिक्षण कं० कांटेकरी आ० व्याप्त ॥ तु० उंचा सि० सामलि पा० वृक्षनेविषेबांधीने ॥ खे० पेडिपमाड्यो पा० पासाए व० बांधीने ॥ क० आयोपाळो क० पांचवेकरि दु०दुपीकीधो भुजने सहेता दोहिलो॥५३॥

मूलः–अइनिक्खकण्टगाइण्णे तुङ्गे सिम्वलिपायवे ।
खेवियं पासवद्धेणं कड्ढोकड्ढाहिं दुकरं ॥ ५३ ॥

गाथा ५३ भावार्थः–अति तिक्षण कांटे करीने व्याप्त एवा संवल वृक्षे बंधनथी उंचे बांधीने आयोपाळो खेंचवे करी अशक्य (न सहन थाय ते) खेद भोगव्यो. ॥ ५३ ॥

अर्थः–म० मोटा सं० कोल्हनेविषे उ० मेलदिनिपरे या० वळी ॥ आ० आक्रंदकरतोथको मु०अती भे०रौद्र-पणे ॥ पी० पीलो वि०भुजने ॥ स० आपणे क०कर्मेकरी ॥ पा० आत्मकर्मेने उदयेकरी अ० अनंतीवार॥५४॥

ते, वली जेम सर्व एराग्र इंद्रीए चालवुं ते (... ... चालवुं ते) सावधतिने विषे चालवुं दुष्कर ! ॥३९॥

अर्थः-न० जेम अ० अग्नीनी शि० शिखा दि० अतिचलती पा० पीता हो० होय सु० अति दु० दोहिली न० नपन दु० दुकर क० पालना जे० जे ता० यौवनवयनोविषे स० गलीपणो ॥ ४० ॥

मूलः—जहा अगिगसिहा दित्ता पाउं होइ सुदुकरा ।
तह दुकरं करेउं जे तारुण्णे समणत्तणं ॥ ४० ॥

गाथा ४० भावार्थः-जेम अत्यंत बळती अग्निनी शिखा (ज्वाळ) पीवी दोहीली तेम तरुणपणे (नानी उंमरे) चारित्र पालवुं दुष्कर ! ॥ ४० ॥

अर्थः-न० जेम दु० इहे भ० भरवुं जे० जे । हो० होय वा० वायरेकरि को० कोथलो न० तेम दु० इहे क० पालवुं संजम जे० जे श्री० पंद संयमणाना गणीए कायर पुरुषे स० गलीपणुं पालवुं दोहिलु ॥४१॥

मूलः—जहा दुक्खं भरेउं जे होइ वायस्स कोत्थलो ।
तहा दुक्खं करेउं जे कीवेणं समणत्तणं ॥ ४१ ॥

गाथा ४१ भावार्थः-जेम वायुथी कोथळो भरवो दुष्कर तेम पंद (निर्वंद) संयमणना गणीने तथा कायरने गाळपणुं पालवुं दुष्कर ॥ ४१ ॥

अर्थः-न० जेम दु० दोहेलो मं० मेरु गि० पर्वत । ... नि० निश्चल नी० संकाशित दु० दुष्कर पालना म० इमविष गतिपर्य ॥ ॥ ४२ ॥

[illegible]ओ भिन्नो विभिन्नो य ओइण्णो पावकम्मुणा॥ ५६ ॥

॥ १९ ॥

भावार्थः-पापेकरी नर्कने विषे गयां थकां अळसीना पुष्पने वर्णे राता एवा खड्गे तथा [illegible] तथा घणा खंडने सूक्ष्मखंड मारा कर्या. ॥ ५६ ॥

पदार्थः-अ० परवसे लो० लोहना उन्हा र० रथनेविषे । जु० जातर्यो ज० वलति स० समोल जु० [illegible] नेविषे जोतर्यो मुजने चो० प्रेस्यो तु० परोहणेकरी जु० जोतरेकरी प्रेर्यो । रो० रोझनी वा० परे [illegible] नेत्रनेलाकाडिएकरी मारनेहेठोपाडेतेम मुजने पा० लाकडिएकरी पाड्यो ॥ ५७ ॥

मूलः-अवसो लोहरहे जुत्तो जलन्ते समिलाजुए ।
चोइओ तुत्तजुत्तेहिं रोज्झो वा जह पाडिओ ॥ ५७ ॥

गा ५७ भावार्थः-जेनी समोल तथा धुंसरी अग्निवर्णि एवा तप्तलोढाना रथे मुजने परवशपणे ही जोत्रनां बंधने बांधी रोझने जेम लाकडीना प्रहारे पाडे तेम मर्मस्थानकने विषे मुजने मार्यो. ॥ ५७ ॥

पदार्थः-हु० देवतानी विक्रयकिधी अग्निनेविषे ज० वलतिनेविषे । चि० एहवीचेहनोविषे । म० भिसा- वि० परे । द० वाल्यो य०वली प०पच्यो सेक्यो भडभूंकीयो अ० परवसपणे पा० पापकर्मेकरी नो करणहार हुंपाम्योएवेदना ॥ ५८ ॥

मूलः-हुयासणे जलन्तम्मि चियासु महिसो विव ।
दड्ढो पक्को य अवसो पावकम्मेहि पाणिओ ॥ ५८ ॥

॥ १९ ॥

भुक्त भोगा थइन दृढ़पने धर्म ग्रहण करज । ॥ ४४ ॥

अर्थः–सो० तेमृगापुत्र वे० कहेछे अ० माता पि०पितानें ए० एमज ए० तुमारो वचन ज० जेमछे तेम फु० साचो कहुंछुं इ० इह लो० लोकने विषे नि० निपरनी त्रपा नहोय निस्पृह होय तेहने । न० नथी किं० कांइए लगार मात्र पण दु० दुःकर ॥ ४५ ॥

मूलः–सो वेइ अम्मापियरो एवमेयं जहा फुडं ।
इह लोए निप्पिवासस्स नत्थि किंचिवि दुक्करं ॥ ४५ ॥

गाथा ४५ भावार्थः–पुर्वोक्त माता पितानां वचन सांभळीने मृगापुत्र कहेछे हवो के हे मातापिता ! ए तमे कहुं ते सत्य छे पण आ लोकने विषे जे निस्पृही होय तेने कांइ पण दुष्कर नथी ॥ ४५ ॥

अर्थः–सा० सरिर अने मा० मानसी वे० घणी वे० वेदना असाता रूप अ० अनंतीवार । म० मे सो० भोगवी भी० अतिरौद्र वेदना ॥ अ० घणीवार दु० दुःखने भ० भयनी उपजावणहारीवेदना य० वळी भोगवी ॥४६॥

मूलः–सारीरमाणसा चेव वेयणाओ अणन्तसो ।
मए सोढाओ भीमाओ असइं दुक्खभयाणि य ॥४६॥

गाथा ४६ भावार्थः–घणीवार दुःख तथा भय नीपजावनारी एवी शारीरिक ने मानसिकरुप असातावेदनीमें अनंतीवार भोगवी ॥ ४६ ॥

अर्थः-उ० उसंनतापेकरी त० तप्पो सं० पछे पाम्यो अ० पडगसरिपा पांनडाछे जेहना तेअसीपत्र प० मोटोवनपांम्यो ॥ अ०पडगसरीपा प०पांनडे प०पडतोयको ॥ छि०मुजनेछेद्यो । पु०पुर्वे अ०अनंतीवार ॥६१॥

मूलः-उण्हाभितत्तो संपत्तो असिपत्तं महावणं ।
असिपत्तेहिं पडन्तेहिं छिन्नपुव्वो अणेगसो ॥ ६१ ॥

गाथा ६१ भावार्थः-तापथी गभरायो थको असि (तरवार) पत्र नामे वनने विषे पहोंच्यो ते जेनां खड्गनी धार सरिखां तिक्ष्ण पत्र पडवे करी अनंतिवार छेद्यो ॥ ६१ ॥

अर्थः-मु० मुद्गरेकरी मु० सहस्रविसेपेकरी मू० त्रिसुलेकरी मू० सस्त्रविशेषे य०वळी ॥ ग० गदाए करी गइछे आसात्राणसरण सुखनी भ० भाग्यां ग० गात्र प० पाम्यो दु० दुष अ० अनंतीवार ॥ ६२ ॥

मूलः-मुग्गरेहिं मुसत्तीहिं सूलेहिं मूसलेहि य ।
गयासं भग्गगत्तेहिं पत्तं दुक्खं अणन्तसो ॥ ६२ ॥

गाथा ६२ भावार्थः-मुद्गरे करी मुसंढी नामना शस्त्रे करी शुळीए करी मुसळे (सांबेळे) करी अनाथ जाणी गात्र भांग्यां एवुं अनंति वखत दुःख पाम्यो ॥ ६२ ॥

अर्थः-सु० छरपलानी ति० तिक्षण धा० धाराएकरी । छु०छरिपालीएकरी क०कातरणीएकरी य०वळी । क० वखनीपरेकाप्यो । फा० कातरणीएकरी वेखंडकिया छि० पालिएकरी त्रिछेछेद्यो ॥ उ० खालउतारी य०

नरएसु वेयणा सीया जप्पाया वेइया मए ॥ ४९ ॥

गाथा ४९ भावार्थः—ए मनुष्यलोकने विषे मद्यमांसादिकमां जेवी गाढ शीत वेदनी अनंतगुणी गाढवी अजाता वेदनी पें नर्कने विषे भोगवी ॥ ४९ ॥

अर्थः—कं० आकंदकरता मुखने कुं० लोहमय पकवानुं वेदुगारिसा कुं० भातन तेहनोविषे ॥ ३० कंपा मा० पग अ० नीचो सि० मस्तकेकरीने । दु० देवतानी विकुर्वाकिरी अग्निनेविषे । न० नासन्यपान करती अग्निनेविषे । ए० पच्चो पु० पुर्वे अ० अनंतिवार ॥ ५० ॥

मूलः—कन्दन्तो कुन्दुकुम्भीसु उड्ढपाओ अहोसिरो ।
हुयासणे जलन्तम्मि पक्कपुव्वो अणन्तसो ॥ ५० ॥

गाथा ५० भावार्थः—लोहादिकनां भातन (वासण) मे विषे आकंद करतो पको पग भनं नीचुं मस्तक करी देवकृत नाखेलमान अग्निने विषे अनंतीवार मुखने रांध्यो. ॥ ५० ॥

अर्थः—प० मोटा द० दवनी । अ० अग्नी सं० सरिषी । म० मारुभादिनेविषे जेवरी वेदुगोद तेवेदु सरिषी व० वलय्य मा० वेदु । फ० कदंबनामा नदीनीवेदुने सरिषी मा० उपन वेदुनेविषे ग० बली । दं० डांख्यो उ० उर्वेदुनने अ० अनंतीवार ॥ ५१ ॥

मूलः—महादवग्गिसंकासे मरुम्मि वइरवालुए ।
कलम्बवालुयाए य दड्ढपुव्वो अणन्तसो ॥ ५१ ॥

उल्लिओ फालिओ गहिओ मारिओ य अणन्तसो ॥ ६५ ॥

गाथा ६५ भावार्थः–म्होटी जाले करी मच्छनीपेरे परवशपणे मुजने अनंती वखत ग्रयो खेंच्यो फाडयो ने मार्यो॥६५॥

अर्थः–वी० सींचाणानेरूपेकरी जा० जालेकरी ॥ लि० सरसेकरी स० पंपीनी वि० परे ॥ ग० सींचाणानेरूपे ग्रहिओ ल० सरसेकरी लाग्यो चोट्यो व० बांध्यो जालेकरी य०वली मा०मार्योमुजने य०वली अ०अनंतीवार॥६६॥

॥ १९६ ॥ ॥ १९ ॥

मूलः–वीदंसएहि जालेहिं लिप्पाहिं सउणो विव ।
गहिओ लग्गो बद्धो य मारिओ य अणन्तसो ॥ ६६ ॥

गाथा ६६ भावार्थः–पांजराने विषे सींचाणाना रूपे पंखीनीपेरे जाले ग्रही बांधी अनंतीवार मार्यो॥६६॥

अर्थः–कु० कुहाडो फ० फरसी आ० आदीतेणेकरी । व० वाढोसुतारनेरूपे दु० वृक्षनी वि० परे ॥ कु०कुटीनेनाहनां कटकाकीधा । फा० फाड्यो छि० छेद्योवृक्षनीपेरे । त०त्रिछीपालपरहिकीधीमुंजने य०वली अ० अनंतीवार॥६७॥

मूलः–कुहाडफरसुमाईहिं वड्ढईहिं दुमो विव ।
कुट्टिओ फालिओ छिन्नो तच्छिओ य अणन्तसो ॥६७॥

गाथा ६७ भावार्थः–सुतार जेम वृक्ष छेदे तेम कुहाडे करी फरसीए करी छेद्यो ने मुंजनी पेरे फाडयो ने कुटयो ने गाढानी पुंठनी पेरे अनंती वखत त्राडयो ॥ ६७ ॥

अर्थः–च० चपेटा मु० मुष्टी आ० आदितेणेकरी । कु० लोहारजेम अ० लोहनेकूटे तेम अ० मुजने लोहनीपेरे । मा० मुद्गरादिकनो महारकीधो कु०कुट्यो वि० नानाकटकाकीधा । चू० चूर्णकीधा य०वली अ०अनंतीवार ॥६८॥

॥१९६॥

मूलः—महाजन्तेसु उच्छू वा आरसन्तो सुभेरवं ।
पीडितो मि सकम्मेहिं पावकम्मो अणन्तसो ॥५४॥

गाथा ५४ भावार्थः—पोतानां कर्मे करी मोटा शब्दे किये नेलडीने पेरे रौद्र (भयंकर) पणे आक्रंद करतो छतो मूनने अनंती वखत पील्यो. ॥ ५४ ॥

अर्थः—ह० शब्दकरतो को० कोल्हनेरूपे सु० स्थाननेरूपे ॥ सा० सामनामा परमाधामीए कोल्हनोरूप० कीधो स० सवदनामे परमाधामीएस्थानतो स्थकीधो ते परमाधामीए प० वली ॥ पा० भूमीउपरे पाड्यो फा० निर्णवनीपरेफाड्यो ति० शस्त्रनिपरोहेड्यो ॥ वि० तडफडतो अ० गणीवार ॥ ५५ ॥

मूलः—कूवन्तो कोलसुणएहिं सामेहिं सबलेहि य ।
पाडिओ फालिओ छिन्नो विप्फुरन्तो अणेगसो ॥ ५५ ॥

गाथा ५५ भावार्थः—श्यामअने सबल जातिना परमाधामि स्थान (कुतरा) ने थूकरता रूपे डहडाट शब्द करता थका भूमी उपर पाडी तडफडतो थको अनंती वखत मुनने छेद्यो (चक्रादिके), भेद्यो (भालादिके) ॥५६॥

अर्थः—भ० पहणेहरि प० वली भ० अन्तरीना व० वर्णेकरी म० मालेकरी प० शस्त्रविशेष प० वली। ति० वेगेकिया भि० मोटापंड पणाकीधा । वि० शस्त्रखंड पणा किया प० वली ओ० उपनोहतो इंनाकनोविषे पा० पापकर्मेकरी ॥ ५३ ॥

मूलः—असीहिं य असिवण्णाहिं भल्लीहिं पट्टिसेहि य ।

खावो अत्यंत प्रिय हतो एम परमाधामी संभारीने माराज शरीरनुं मांस त्रोडी त्रोडीने तेना कटका करी भटधां करीने अग्निवर्ण करी अनंतीवार मुजने खवराव्यो ॥ ७० ॥

अर्थः–तु० तुजने पि० वल्लभहुता । सु० मद्य सी० ताडवृक्षनो मद्य । मे० गोळनो नीपनोमद्य व० वळी म० महुडानो निपनोमद्य य० वळी ॥ पा० एमभचारीनेपायो मि० मुजने ज० जाजल्यमान अग्नीसरिखो उसनकरी । व०चरवी रु० लोहीहोयतेहवापुद्गलमाहेरा सरीरनुं लोही य० प्रमुप ॥ ७१ ॥

मूलः–तुहं पिया सुरा सीहू मेरओ य महूणि य ।
पाइओ मि जलन्तीओ वसाओ रुहिराणि य ॥ ७१ ॥

गाथा ७१ भावार्थः–गोळ तथा महुडां प्रमुखनुं वनेलुं मधुपान (दारु) तुजने बहुज प्रीय हतुं एम संभारीने माराज शरीरनुं रुधीर ने चरवी जाज्वळमान करी मुजने पायुं ॥ ७१ ॥

अर्थः–नि० सदाय । भी० भय त० त्रासतेणेकरी । दु० दुपसहित व० कपमांन सरीरतेणेकरी । य० वळी प० अति दु० दुप सं० संबंधी । वे० वेदना वे० भोगवी मे० मे ॥ ७२ ॥

मूलः–निच्चं भीएण तत्थेण दुहिएण वहिएण य ।
परमा दुहसंबद्धा वेयणा वेदिता मए ॥ ७२ ॥

गाथा ७२ भावार्थः–नित्य भय सहित उद्वेगसहीत दुःख सहीत कंपायमान सरिर सहित अती दुःख

पीसिए। वि० पिट्ठी वि० बिर्कविकार करोहनो नेवार। दं० दलनमे वि० मुद्गनाश पीसि अ० अनंतिसार पिट्ठी ई० मूलने ॥ ५९ ॥

मूलः—वन्ना मंडामतुण्डेहिं लोहतुण्डेहि पक्खिहिं ।
पिट्ठुनो पिट्ठन्तो हं दट्ठुगिज्जेहि पन्तनो ॥ ५९ ॥

गाथा ५९ भावार्थः—हंस वत्ता मुद्ग नाम पंखीए नोंसना सरीखी वना कठण लोहसरीखी नोंच वाली वज्राकारे वज्राकार करनो मूलने अनंतिसत्व पिट्ठी. ॥ ५९ ॥

अर्थः—व० वृत्ता कि० पीठवो आ० आपीठवो । प० पक्षिभो वे० वैकल्पीनामा पक्षीओ ॥ आ० पाणी आ० पीधुं वि० मूलने वि० विनाशपीठवो। मु० मुखवडे वा० वागसरिखाकाशोपकरणे वि० हणाय ॥६०॥

मूलः—वग्घाविट्ठन्तो धावन्तो पनो वेयरणिं नदिं ।
जंसे गाहिं ति चिन्तन्तो सुधागहिं विवाडओ ॥६०॥

गाथा ६० भावार्थः—वृषभ पीठवो वली पाणी पीधुं एम चिंतवतो अतिदुष्टजल होवनो वैतरणिए पहोंचवो ते मेली करवत (छरा) ओ वडे मांसनो चिरवा वेग देवे करी हणायो ॥ ६० ॥

मूलः—सव्वभवेसु असाया वेयणा वेदिता मए ।
निमेसन्तरमित्तं पि जं साता नत्थि वेयणा ॥ ७५ ॥

गाथा ७५ भावार्थः—मेणेन्येप ज्यां शाता (सुख) नहि एवा सर्व भवने विषे में अशाता वेदनी भोगवी. ॥७५॥

अर्थः—तं० तेथना पुत्रप्रते वि० बोल्या । अ० माता पि० पिता । छं० ताहरीइछाए पु० पुत्र प० जो ताहरीइछा दिखालेवानीछे तोदिखाले । न० एतलोविसेष पु० वली सा० चारित्रनेविषे । दु० सावद्य पडिगणुं वि० नकरवोकरो तेथणो दोहिलो छे. ॥ ७६ ॥

मूलः—तं विन्तम्मापियरो छन्देणं पुत्त पव्वया ।
नवरं पुण सामण्णे दुक्खं निप्पडिकम्मया ॥ ७६ ॥

गाथा ७६ भावार्थः—तेवारे मृगापुत्रनां मातापिता कहेतां हवां के हे पुत्र ? जो प्रवर्जा लेवी होयतो तारी इच्छा एज चारित्रने विषे सावद्य (जेथां पाप थाय तेवुं) औषध नहि थाय. ॥ ७६ ॥

अर्थः—मो० ते मृगापुत्र वे० बोल्यो अ० माता पि० पितामते । ए० एमज ज० जेमतुमे कु० कहो तेहजमाबुद्धवचन प० पडिगणुंछे दु० दोष कु० करेछे । अ० अटवीनेविषे मि० मृग प० पंखीने ॥ ७७ ॥

मूलः—मो वेइ अम्मापियरो एवमेयं जहा फुडं ।
पडिकम्मं को कुणइ अरण्णे मियपक्खिणं ॥ ७७ ॥

मूलः—खुरेहिं तिक्ख[illegible]हिं कप्पिओ फालिओ छिन्नो उक्कित्तो य अणेगसो ॥६३॥

गाथा ६३ भावार्थः—छुरीनी तिक्ष्ण धाराए करी खाल उतारीने हण्यो कातरणीए करी अनेक परत काप्यो फाड्यो ने छेद्यो ॥ ६३ ॥

अर्थः—पा० पासेकरी कू० दिसेनहितेहवी जा० जालेकरी । मि० मृगनीपरे अ० परवस्यपणे अ० हूं ॥ बा० बाध्यो व० बांध्यो रु० रुंधीराप्यो वा० वळी व० घणीवार चे० पुरणे वि० जीवपीरहित सरिखो किधो मुनने ॥ ६४ ॥

मूलः—पासेहिं कूडजालेहिं मिओ वा अवसो अहं ।
वाहिओ बद्धरुद्धो वा बहुसो चेव विवाइओ ॥ ६४ ॥

गाथा ६४ भावार्थः—नागपाश बंधन जेवी जाळे करी मृगनीपेरे परवशपणे घणी वखत बांध्यो मार्यो ने श्वासोच्छवास रुंधी जीवतव्यथी रहित कर्यो ॥ ६४ ॥

अर्थः—ग० घरडीएकरी म० मगरमछनेरूपे परमाधामीए जा० जालेकरी ॥ म० माछलानी वा० परे ॥ अ० परवसपणे अ० मने उ० घटलेकरी फा० फाड्यो मछनेरूपे परमाधामीए ग० ग्रह्यो जालेकरी ॥ मा०मार्यो मुजने ग० घणी अ० अनंतीवार ॥ ६५ ॥

मूलः—गलेहिं मगरजालेहिं मच्छो वा अवसो अहं ।

को ने भत्तं च पाणं वा आहरित्तु पणामए ॥ ८० ॥

पदार्थः-को-कोण ने-मुझने भोयण-भोजन पाण-पाणी, तेने सुश्रावकादि कोण पूछे, तेने भोजनपाणी कोण लावीआपे॥८०॥

अन्वयः-को-केवो ण-वली से-तेणेगीमुझने सु-सुखी होइ-होय। च-तेवारे ण-जाय गो-गोचरी

एवं तिहाअजाणीय कुणाइक तिहांसोय तिहाजाय भ-भातपाणादिक पा-पाणीने अ-अर्थे। च-वनगहनसेवादिक

ग-तिहांसोधरायण तिहांमुनजाय च-वली ॥ ८१ ॥

मूलः-जया य से सुही होइ तया गच्छइ गोयरं ।

भत्तपाणस्स अट्ठाए वणगहणेसु सणेसु य ॥ ८१ ॥

पदार्थः-जेवारे ते मुनि निरोगी थाय तेवारे भोजनपाणीने अर्थे गहनवनमां अने सणवरे जाय. ॥८१॥

अन्वयः-या-कुणाइकघरने पा-पाणी पा-पीने च-वनगहनसेवादिक होयतिहां स-सणवरम्म ण-तिरे

दि-एवने जा-जाय कुं-एवनसणी च-जाणवलिये ॥ च-पछेजाय नि-आवली रहेवानी जा-भूमीलोय तिहां॥८२॥

मूलः-साहुस्स दाणिये पावं उवरोहे सणेहि य ।

मिगचारियं चरिस्सामि सव्वदुक्खविमोक्खणिं ॥ ८२ ॥

मूलः—चवडमुद्दमाईहिं कुमारेहिं अयं पिव ।
नाडिओ कुट्टिओ भिन्नो चुण्णिओ य अणन्तसो ॥६८॥

गाथा ६८ भावार्थः—चोराए करी मुद्दीए करी नेम लोहार लोढाने कूटे नेम कुटी अनंती वखतमूक्ष्म टुकडाकर्या॥६८॥

अर्थः—न० नाना न० पांचा त्रो० लोह न० नरको (कथीर) मी० सीसुल्यादिक तेणाळीरसकरी ॥ न० दुष्टी पा० पापी मुजने क० अत्यंतकल्पकल्पनोरम ॥ भा० आरडनो सु० अति भे० रौद्रपणे ॥ ६९ ॥

मूलः—नत्ताइं नम्बलोहाइं नउयाइं सीसयाणि य ।
पाइओ कलकलन्ताइं आरसन्तो सुभरवं ॥ ६९ ॥

गाथा ६९ भावार्थः—त्रांबु लोहं नरक (कथा) ने सीसादिक वस्तु गाळीने अत्यंत कलकलतुं करी आतेने आरडतो थको मुजने पाधुं ॥ ६९ ॥

अर्थः—हवे परमाधमी एमबोल्या ॥ तु० तुजने पुर्वभवनेविषे वि० वलभद्रना भे० भांसएमबचारीने । भे० भोगना पेदकरीने सो० भोगना सोखाकरीने ग० वली ग्रा० पराभ्युं । विस० आपणा शरिरनो भे० भांस । अ० अहीनासरिषुं व० वर्णेकरि अ० पर्णावार ॥ ७० ॥

मूलः—तुहं पियाइं मंसाइं खण्डाइं सोल्लगाणि य ।
खाविओ विगमंसाइं अग्गिवण्णाइं णेगसो ॥ ७० ॥

गाथा ७० भावार्थः—अहो ! अनार्य कर्मना करणहार ! तुजने पुर्व जन्मने विषे मोर अमुरनो मांस

तुं गुपिरोयतो ए० एम पु० हेपुत्र ज० जेम मु० सुखथाय तेमकर । अ० माता पि० पिताए णु० दिक्षानि आज्ञा दीधे थके ज० जांदे उ० परिग्रह त० दिक्षानीआज्ञा तेवारपछी ॥ ८५ ॥

मूलः—मिगचारियं चरिस्सामि एवं पुत्ता जहा सुहं ।
अम्मापिईहि णुन्नाओ जहाइ उवहिं तहा ॥ ८५ ॥

गाथा ८५ भावार्थः—मृगनीपेरे हुं विचरीश ? एम मृगापुत्रे कये थके मातापिता केहेवा लाग्यां के हेपुत्र ! जेम तमने सुख उपजे तेम करो ! एम मातापितानी आज्ञा (रजा) ए करी मृगापुत्रे आभरणादिकनी उपाधी तजी. ॥८५॥

अर्थः—मृगापुत्रे कयुं मि० मृग चा० चर्यारूप संजमने च० आदरु एम । मृगापुत्रेकह्यो स० सर्व दु० भ्रातारुप दुपनी वि० मुकावणहार मृगचर्या आचरस्युं ॥ तु० हेमाता तुझे दिक्षानी अ० आज्ञा दिधी छे तोहुंदिक्षालेसुं ॥ पछे मातादिके कयु ग० जानुं पु० पुत्र ज० जेम मु० सुखथाय तमने तेमकरो ॥ ८६ ॥

मूलः—मियचारियं चरिस्सामि सव्वदुक्खविमोक्खणिं ।
तुब्भेहिं अब्भणुन्नाओ गच्छ पुत्त जहासुहं ॥ ८६ ॥

गाथा ८६ भावार्थः—तमारी आज्ञा होय तो सर्व दुःखथी मुकावणहार एवो मृगचर्यारूप संयम आदरुं ? एम मृगापुत्रे केहेवाथी मातापिता कहेवा लाग्या के हे पुत्र ? जेम तमने सुख उपजे तेम करो ! ॥ ८६ ॥

अर्थः—ए० एम सो० तेमृगापुत्रे अ० मातापि० पितानेसमीपे अ० दिक्षानी आज्ञामागीने च० थकेमकारो ॥ म० ममत्वभाव वि० छेद ना० तेसारे । म० मोटा ना० सर्प ए० कांची कं० कांचलिलईनेम मृगापुत्रपरिग्रहने छांडे छे ॥८७॥

अर्थः–नि० नित्यवेदना चं० उत्कृष्ट प० पर्णास्थितिनी वेदना । घो० रौद्र अ० सहेताअतिघणी वेदना म० मोटा भ०भय सहित भी० कंपमानसरिर तेणेकरी न०नरकनेविषे वे० पुर्नेकहीवेदना भोगवी म०मे ॥७३॥

मूलः–निच्चं चण्डुग्गयाओ घोराओ अइदुस्सहा ।
महब्भयाओ भीमाओ नरएसु वेदिता मए ॥ ७३ ॥

गाथा ७३ भावार्थः–मे कर्म पजबुल मे नित्र (आकरो) अनुभाग मे लांबी स्थीती भयंकर मे अति खमतां थकां दुष्कर मे जीहां मोटा भय उपजे मे उपजावे एहवी नर्कने विषे में वेदना (पीडा) भोगवी ॥७३॥

अर्थः–ना० जेहवी मा० मनुष्य लो० लोकनेविषे वेदनाछे । ता० तेहवी दी० दिसेछे वे० वेदनापण । ए० एमनुष्यलोकनेविषे जेहवो वेदनाछे तेवेदनाथी अ० अनंतगुणी अधिकी न० नरकनेविषे दु० दुषअने वे० असाता वेदनी ॥ ७४ ॥

मूलः–जारिसा माणुसे लोए ताता दीसन्ति वेयणा ।
एत्तो अणन्तगुणिया नरएसु दुक्खवेयणा ॥ ७४ ॥

गाथा ७४ भावार्थः–जेवी ए मनुष्यलोकने विषे अती असाता वेदनी होय तेथी अनंतगुणी अधीक नर्कने विषे असाता वेदनी छे. ॥ ७४ ॥

अर्थः–स० सर्व भ०भवनेविषे अ० असाता ॥ वे० वेदना वे० भोगवी म० मे । नि० मेषानमेष मि० मात्र पि० घडी जं० जेमणी सा० साता न० नथी । वे० सातावेदनी ॥ ७५ ॥

करीछेदे । चं० कोएकचंदनप्र लिंपणकरे तेथेहुउपरे क० सरिपोभाव य० वली । अ० जिमेथके अ० अण- जिमेथके । त० तेमजकरीने भावरेमुनि ॥ ९३ ॥

मूलः—अणिस्सिओ इहं लोए परलोए अणिस्सितो ।
वासीचन्दनकप्पो य असणे अणसणे तहा ॥ ९३ ॥

गाथा ९३ भावार्थः—तपसंयमनु करी आलोकने विषे चक्रवर्ति प्रमुखनी ऋद्धि पामीए तथा परलोके देवनी ऋद्धि पामीए एवी अभिलाषा रहित अने कोइ चंदनथी चर्चे ने कोइ वांसले करी शरीर कापे तथा भोजन जमवापणे ने अणजमवापणे एकज भाव. ॥ ९३ ॥

अर्थः—अ० अप्रशस्तध्यान द्वा० पापआश्रवनाद्वार ॥ स० सर्वथकी पि० रुध्यांछे जेणे आ० आश्रवने । अ० शुद्धअंतःकरण सहित उ० धर्मध्यानादिकने जो० उपादेयकरी । प० प्रशस्तभलुं द० उपशम सा० जिनशासनने विषे ॥ ९४ ॥

मूलः—अप्पसत्थेहिं दारेहिं सव्वओ पिहियासवे ।
अज्झप्पज्झाणजोगेहिं पसत्थदमसासणे ॥ ९४ ॥

गाथा ९४ भावार्थः—हिंसादिक सर्व पापनी क्रियाओ ने आश्रव सर्वथा प्रकारे रुधी अध्यात्म ध्यानना [illegible]

अटवीन विषे मृग तथा पंखीनुं ओषध कोण करे छे. ॥ ७७ ॥

अर्थः-ए० एकत्रो अ० अटवीने व०विषे। ज० जेम उ०वली च० विचरे मि०मृग। ए० एवाज रीपरे प० इंधर्म च० आचरीश। तं० तनरथेदे संजमेकरी। न० नारथेदे तपेकरी धर्मआचरीश य०वली ॥ ७८ ॥

मूलः-एगन्भूए अरण्णे व जहा उ चरई मिगे।
एवं धम्मं चरिस्सामि संजमेण तवेण य ॥ ७८ ॥

गाथा ७८ भावार्थः-अटवीने विषे जेम एकत्रो मृग विचरे तेम संयमपणे करी एकान्तपणे आचरीश ॥७८॥

अर्थः-ज० जेवारे मि० मृगने आ० रोग। प० पोती अ० अटवीमांहि ना० रोगउपजे अ० रहेनोइ।
पतिहां रु०रूखेडे हसना पडनेविषे को०तिहां कोण एमृगने पं०वली ता०तेवारे ति०पडिजणो वेदणअरंते ॥ ७० ॥

मूलः-जहा मिगस्स आतङ्को महारण्णम्मि जायई।
अक्कन्तं रुक्खमूलम्मि को णं ताहे तिगिच्छई ॥ ७९ ॥

गाथा ७९ भावार्थः-मोटी अटवीने विषे ज्यारे अशाता वेदनी कर्मने उदय मृगने रोग आवे तेवारे ते
हसने थडे रहेवाने कोण त्यां तेनुं ओषध करे छे !!! ॥ ७९ ॥

अर्थः-को० कोण ना० वली से० तेमृगने ओ० ओषध दे० दे। को० कोण ना० वली से० ते मृगने
मु० पुछे मु० सुख। को० कोण से० तेमृगने भ० भात च०वली पा० पाणी ना०वली आ० आणिदे

मूलः-को वा से ओसहं देइ को वा से पुच्छई

मू०-पुत्तो पसन्नि मंजुला पण्डिया पवियक्खणा ।
विणिज्जन्ति भोगेसु मियापुत्ते जहामिसी ॥ १७ ॥

॥ १९ ॥

छाया-० ० आसाव०-तेन मृगापुत्रकपि भोगेषु निवर्त्यो तेन तत्त्वतो जात पंडित विचिक्षण होय ते

अर्थ-० ० ०

मृगचर्यानेरीते उ० उत्तो प० जाय देवलोक तथा मोक्षगतिपर्यंत दि० उपदेश ॥ ८३ ॥

मूलः—एवं समुट्ठिओ भिक्खू एवमेव अणेगए ।
मिगचारियं चरित्ताणं उड्ढं पक्कमती दिसं ॥ ८३ ॥

गाथा ८३ भावार्थः—एम संयमने विषे उद्यमवंत एवा साधुने विविध प्रकारनो रोग उपजे तेवारे मृगनी पेरे गोचरिए विचरीने उंची देवलोक तथा मुक्तिनी गति प्रत्यें जाय. ॥ ८३ ॥

अर्थः—ज० जेम मि० मृग ए० एकलो अ० अणेडामे चरनोथकी विचरे तेमयति पण साधव टाल्याभणी एक परनी भिक्षानले अणेघरे भिक्षालेतो विचरे अ० अणेघरे मृगवासोरहे तेम यतिअणेथानके वासोरहे एकथानके प्रतिबंधनरहे मृ० जेम मृगमहाग तृणादिक गोचरिकरे तेम यतिमहा गो० गोचरिकरिने संजमभार निर्वाहकरे । प० पछी ए० एममृगनिपरे भ्० साधु गो० गोचरिए प० गयोथको । नो० भुडाआहार माटे गृहस्थने ही० होलेनहि नो० नही नि० प०-पछी नि० निंदाकरे ॥ ८४ ॥

मूलः—जहा मिगे एग अणेगचारी अणेगवासे धुवगोयरे य ।
एवं मुणी गोयरियं पविट्ठे नो हीलए नो वि य खिंसएज्जा ॥ ८४ ॥

गाथा ८४ भावार्थः—जेम एकलो मृग नवां नवां स्थानकने विषे वसे पण एक स्थले सदाय गोचरिए निर्वाह न करे तेम साधु मृगचर्यानी पेरे गोचरिए गयो थको पोताना तथा परना आत्माने हीले निंदे नहि. ॥८४॥

अर्थः—मृगचर्याकरतुं नि० मृग चा० चर्याकर संजम च० आचरवुं । एमातादिके करतुंजोएम संजम लोय

...ग्गमगतिं तवं अणुनिदिं सुणेह मे ॥ १ ॥

...पुण्य १ आर्यार्थ-आर्यत्व मिश्र आचार्य उपाध्याय अने सर्व साधुने आवेथी नमस्कार करीने ...

...ग्रंथना ६ अंगने भणवाथी थयेला ते निष्पन्न ते हुं कहुंछुं ते तुं सांभळ ॥ १ ॥

...अन्वय १- तत्तओणं स०- राजा मे० श्रेणिक स० मगधदेशनोराजा । वि० बोटकलिप्तनो ...

...निवासनेवा ते०- तिहांनो ते वस्ती मे० श्रेणिकनुंनिवास चे० वर्तेविषे ॥ २ ॥

भूत०-पभूयधणो नया सेणिओ मगहाहिवो ।

विहारजत्तं निज्जाओ मण्डिकुच्छिंमि चेइए ॥ २ ॥

...पुण्य २ अन्वयार्थ-पभूय०-घणो०-घणा छे मगध देशनो अधिपती एवो श्रेणिकनामे राजा ते विहारयात्रा नामना वनने विषे नीकळ्यो ॥ २ ॥

...अन्वय १- पभूय०-घणो- घणा छे- मगहाहिवो- मगधदेशनो अधिपती एवो । नया- श्रेणिकनामे राजा ते । विहारजत्तं- विहारयात्रा नामना वनने विषे । निज्जाओ- नीकळ्यो । मण्डिकुच्छिंमि- मण्डिकुक्षी नामना । चेइए- चैत्यने विषे ॥ २ ॥

...भूत०-पभूयधणधन्नवा...पभूयजणवाहणे ।

मूलः—एवं सो अम्मापियरो अणुमाणित्ताण बहुविहं ।
ममत्तं छिन्दई ताहे महानागो व्व कंचुअं ॥ ८७ ॥

गाथा ८७ भावार्थः—एम मृगापुत्रे माता-पिताने अनेक विविध प्रकारनी ममत्वभाव छेदवाने जेम सर्प कांचळी तजे तेम भोग तजीने चाल्यो. ॥ ८७ ॥

अर्थः—इ० हाथीवाळा मथुरा रथ पाखळीय ममुख स्त्रि वि० सुवर्णादिक च०नळी वि० मित्र ग० वळी पु० पुत्र दा० स्त्रि ५० वळी न० नाटिमगादिकने । इ० अपरज च० वळी प० वगनेविषे ल० लागीछोय ते झाटकीने अलगीकरे तेमरजनीपर । नि० छांडिने नि० निरभो निरालंबनार्थे ॥ ८८ ॥

मूल.—इड्ढी मित्तं च मित्तं य पुत्तदारं च नायओ ।
रेणुयं व पडे लग्गं निद्धुणित्ताण निग्गओ ॥ ८८ ॥

गाथा ८८ भावार्थः—जेम वस्त्रे रज लागी होय तेने झाटके तेम सुवर्णादिक ऋद्धि, मित्र, पुत्र, स्त्री, ज्ञाति सगादिकने तजीने नीकळ्यो. ॥ ८८ ॥

अर्थः—पं० पांच म०महाव्रत जु० सहितछुओ । पं० पांच स० समितिसहित ति० त्रण ति० गुप्तिगुप्त । सहित हुवोमृगापुत्र य०वळी । स० छत्रभ्यंतरतप बा० बाह्यना छभेदेतप । त० बारभेदेतप क०करवानेविषे उ० उद्यमवंत हुवा मृगापुत्र ॥ ८९ ॥

मूलः—पंचमहव्वयजुत्तो पंचहिं समिओ तिगुत्तिगुत्तो य ।

अहो यक्षी अहो भुत्ती अहो भोगे असङ्गता ॥ ६ ॥

पदा० ६ अहोऽक्षक्ष अहो ! अहो देवेन्द्रक्ष एतो वर्ण, अहो ! एतुं रूप ! अहो ! ए आर्यनुं सौम्यतापणुं,
अहो ! एनी द्युति, अहो एनी निर्लोभता, अहो ! एनुं भोगनी निरासपणुं ॥ ६ ॥

अव०-अ० देविंदा णा० एवं उ० वुत्ती व० वाहीये । का० करीने य० वंदी प० प्रदक्षणाने । न०
मं ०० ओर इ० इमं इ० अंजलिकरोमि ॥ प० कायसंफासं प० पुसेछे ॥ ७ ॥

॥ २० ॥

मूल-तम्म पाए उ वन्दित्ता काऊण य पयाहिणं ।
नाइदूरमणासन्ने पञ्जली पडिपुच्छती ॥ ७ ॥

पदा० ७ मूलार्थ-तमारा पगने वांदीने अति वेगळो नहि तेम अति नजीक नहीं,
एवी रीते हे राय जोईने पूछवा लागी ॥ ७ ॥

अव०-क० अत्यासन्ने नि० ते वुं अ० देखीने प० अनुचितनेविषे दिशाओथीछे तेनेअविदिशाओथी ।
अ० जोईने व० अहवे म० निर्लोभ इ० सारासार उपयोगवंत नि० कुशलेछे वुं मा० चारित्रनेविषे मुनिराज ॥
ए० ए अ० अहे मु० वु पूछवे संलाप मा० एमछे ॥ ८ ॥

मूल-कहणे सि भवतो अज्जाओ भोगकारणम्मि संजया ।
[illegible] ॥ ८ ॥

भा० वासीन अ० आपणा आत्माने ॥ ९४ ॥

मूलः–एवं नाणेण चरणेण दंसणेण तवेण य ।
भावणाहि य सुद्धाहिं सम्मं भावेत्तु अप्पयं ॥ ९५ ॥

गाथा ९५ भावार्थः–एम ज्ञाने करी चारित्रे करी सम्यक्त्वे करी तप करी निर्मळ चार तथा पंचमहाव्र-
तनी पचवीस भावनाए सम्यक्भावे आत्माने वासे. ॥ ९५ ॥

अर्थः–ए० एणा उ०वळी वा० बारसगे । सा० चारित्र अ० पाळीने । मा० एकमासे । उ०वळी अ०
अणसणकरी । सि० मोक्ष प० पाम्या अ० प्रधानगति ॥ ९६ ॥

मूलः–बहुयाणि उ वासाणि सामण्णमणुपालिया ।
मासिएण उ भत्तेण सिद्धिं पत्तो अणुत्तरं ॥ ९६ ॥

गाथा ९६ भावार्थः–घणां वर्ष चारित्र पाळीने एक मास भक्तनां त्रीस अणशणे करी उत्तम एवी
मोक्षगतिए मृगापुत्रमुनि गयो. ॥ ९६ ॥

अर्थः–ए० एणीपरेकरे मृगापुत्रनीपरे क० करेजे सं० तत्वनाजाण । प० तेणेदिनहोय प० जेविचक्षण
तेथापथी वीहेपापना दोषनोजाणहोय तेणप्रकरे वि० निवर्ते भो० कामभोगथी । मि० मृगापुत्र ज० जेम इ०
ऋषिजेम भोगथी निवर्त्या तेमनिवर्ते ॥ ९७ ॥

अहो खन्ती अहो मुत्ती अहो भोगे असङ्गता ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः–अहो ? आश्चर्यकारक एनो वर्ण, अहो ! एनुं रुप ! अहो ? ए आर्यनुं सौम्यतापणुं, अहो ? एनी क्षमा, अहो एनी निर्लोभता, अहो ? एनुं भोगथी विरक्तपणुं ॥ ६ ॥

अर्थः–त० तेयतिनां पा० पग उ० वळी वं० वादीने । का० करीने य० वळी प० प्रदक्षणाने । न० न अ० अति दू० दूरनहि अ० अतिडुकडोनहि ॥ पं० वेहाथजोडीने प० पुछेछे ॥ ७ ॥

मूलः–तस्स पाए उ वन्दित्ता काऊण य पयाहिणं ।

नाइदूरमणासन्ने पञ्जली पडिपुच्छती ॥ ७ ॥

गाथा ७ भावार्थः–प्रदक्षिणा करी ते यतिना पगने वांदीने अति वेगळो नहि तेम अति डुकडो न. एवी रीते वे हाथ जोडीने पुछतो हवो ॥ ७ ॥

अर्थः–त० तरुणनानो सि० छे तुं अ० हेअ[illegible] प० लघुवयनेविषे दिसालोधीछे तेकेमदिक्षालीधी भो० भोगने का० अवसरे सं० हेसंजति उ० सावधान उद्यमवंत सि० हुवोछुं तुं सा० चारित्रनेविषे मुनिराज ए० ए अ० अर्थ सु० तुं मुनने संभलाव ता० पहेलुं ॥ ८ ॥

मूलः–तरुणो सि अज्जो पव्वइओ भोगकालम्मि संजया ।

उवट्ठितो सि सामण्णे एयमट्ठं सुणामि ता ॥ ८ ॥

मूलः—विवाणिया दुक्खविवड्ढणं धणं ममत्तबन्धं च महाभयावहं ।
सुहावहं धम्मधुरं अणुत्तरं धारेज्ज निव्वाणगुणावहं महं ॥१९॥ त्ति बेमि ॥

(इतिश्री विपाकश्रुतीयं एकोनविंशतितमं अध्ययनं सम्पूर्णं ॥ १९॥)

गाथा १९ भावार्थः—दुःखने वधारनार, ममताने बंधन करनार, भली रीतीयां विघ्न उपजावनार, नीरादिक मोटा भयनुं कारण, एवुं धन जाणीने तेने तजी सुगतनी गतिरूप ने महाशुभ (धैर्य) तेनने तेनवा योग्य एवा पर्यायने विषे तेणी ज्ञानादिकनी शक्तिनो मोटो लाभ एवा उत्तमबोधने धारवो, एम सुधर्मास्वामी पोताना जंबूस्वामी नामना शिष्यने कहेता हवा के हे जंबू ? जेम मे श्रीमहावीरदेवस्वामीनी समीप सांभळ्युं तुं तेम में तुज प्रत्ये कहुं ॥ १९ ॥ इतिश्री मृगापुत्रना अंगणीसमा अध्ययननो भावार्थ संपूर्ण ॥ १० ॥ पूर्वे अंगणीसमा अध्ययनने विषे गाढ़ा अंगनो त्याग करवो तेनो महानिर्ग्रंथनेज होय ने माटे वीसमा अध्ययनने विषे अनाथी महानिर्ग्रंथनुं उदाहरण कहेछे ॥ १९ ॥

अर्थः—सिद्धा० सिद्धोनेज्या अरिहंतविशेषण सर्वज्ञनाहोय तेहने सिद्धशब्दे अरिहंत अने सिद्धबेहुजणा सि० सिद्धअरिहंतने न० नमस्कार कि० करीने। सं० संजति आचार्यउपाध्याय सर्वसाधुने न० नमो भा० भावी ॥ अ० हेतनाजेथकि जीवनेज्ञानादिक नेअर्थेहितेनी तेमोक्षादिक होवी न० तेमनोहेतु ग० ज्ञानने न० अतिशये-नमस्कार ॥ अ० एहवी सि० सिद्धादिक गु० गुरुहेतु हेतिपद सांभल मे० मुजनेकहेवारूप ॥ १ ॥

मूलः—सिद्धाण नमो किच्चा संजयाणं च भावओ ।

अर्थः–हो० हुं थाउंहुं ना० नाथतमारो भ० हे भय त्राणवीहता प्राणीनी रक्षाकरणहार ॥ भो० भोग भु० भोगव सं० हेसंजतिमुनी ॥ मि० मित्र ना० नाति करी प० सहित मा० मनुष्यभव खु० तेमणी मु० अति दु० दुर्लभछे ॥ ११ ॥

मूलः–होमि नाहो भयन्ताणं भोगे भुञ्जाहि संजया ।
मित्तनाईपरिवुडो माणुस्सं खु सुदुल्लहं ॥ ११ ॥

गाथा ११ भावार्थः–हे ? भयथी त्राण ? (रक्षण करनार) हुंतमारो नाथ थइश ! ने हेसंयति ! ए मनुष्यनो भव दुर्लभछे माटे मित्र ज्ञाति सहित विषय भोगभोगवो ? ॥ ११ ॥

अर्थः–हवेयतिकहेछे अ० आप वि० पण अ० अनाथछो हेराजन सि० तमेपण । से० हेश्रेणिक म० मगधदेसना आ० ठाकुर । अ० आपपण अ० अनाथ सं० छो । तुं क० केहनो ना० नाथ तुं भ० थाइश ॥१२॥

मूलः–अप्पणा वि अणाहो सि सेणिया मगहाहिवा ।
अप्पणा अणाहो सन्तो कस्स नाहो भविस्ससि ॥ १२ ॥

गाथा १२ भावार्थः–तेवारे मुनि कहेताह्या के हेमगधदेशना धणी श्रेणिकराजा ? तुं पोतेज अनाथ छता कोनो नाथथइश ॥ १२ ॥

अर्थः–ए० पमयनिए मृ० करेथके न० राजा मो० ने । मृ० अतिआकुल व्याकुल चित्तेकरी मृ० अति वि०

समाधिवंत नि० वेठोदिठोरु० दृश्यनेमू० हेठले सु० सुकुमाल सु० सुखोचितजेहनो ॥ ४ ॥

मूलः—तत्थ सो पासई साहुं संजयं सुसमाहियं ।
निसिन्नं रुक्खमूलम्मि सुकुमालं सुहोइयं ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थः—ते वनमां एक दृश्यनी सभीपे सुकुमारने सुखोचितने सुख योग्य ने समाधिवंत एवो एक संयति (साधु) दीठो ॥ ४ ॥

अर्थः—त० तेणतिना रु० रूपने तु० वली पा० देखीने ॥ रा० राजा तं० ते सं० संजतिना रुपनेविषे अ० अत्यंत प० उत्कृष्टो भा० आश्चर्यकारी अ० अतुल उपमारहित रु० रूपनुं वि० विस्मय ॥ ५ ॥

मूलः—तस्स रूवं तु पासित्ता राइणो तम्मि संजए ।
अचन्तपरमो आसी अउलो रूवविम्हओ ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः—ते यतीनुं अति उत्कृष्ट रुप जोइने श्रेणीकराजा आश्चर्य पाम्यो ॥ ६ ॥

अर्थः—अ० आश्चर्यकारी । व० मरिरनो वर्ण अ० आश्चर्यकारी रु० रुपने । अ० आश्चर्यकारी अ० आश्चर्य सो० सौम्यपणो ॥ अ० विस्मयकारी । सं० समा अ० विस्मयकारी मु० निर्लोभपणाने । अ० विस्मयकारी भो० भोगनेविषे अ० संगरहितपणो ॥ ६ ॥

मूलः—अहो वण्णो अहो रूवं अहो अज्जस्स सोमया ।

मूलः-एरीसे सम्पयग्गम्मि सव्वकामसमप्पिए ।
कहं अणाहो भवति मा हु भन्ते मुसं वए ॥ १५ ॥

गाथा १५ भावार्थः-एवी वांछित वस्तुनीभारे ऋद्धिछतां हुंकेम अनाथ ! माटे हेभगवत् आपतुं पुर्वोक्त वाक्य मृषा (जुठुं) तोनाहेहोय ! ! ! ॥ १५ ॥

अर्थः-हवेमुनिकहेछे तु० तु न० न जा० जाणे । अ० अनाथपणानो अ० अर्थ पु० उतपती च०वळी प० हे राजा जे० जेम अ० अनाथ भ० होय स० सनाथहोय वा० अथवा । न० हेराजा ॥ १६ ॥

मूलः-न तुमं जाणे अणाहस्स अत्थं पुत्थं च पत्थिवा ।
जहा अणाहो भवती सणाहो वा नराहिवा ॥ १६ ॥

गाथा १६ भावार्थः-एवुं श्रेणीकराजतुं वाक्य सांभळी मुनि कहेता हवा के हे नरेंद्र ? तुं अनाथपणुं ने सनाथपणुं केम होय ? तेना विशेष अर्थनी उत्पति जाणतोज नथी ! ॥ १६ ॥

अर्थः-मृ० सांभल मे० मुजनेकहेताथका म० हेमहाराजा । अ० अव्यग्रसावधान चे० चित्तेकरीसांभल । ज० जेम अ० अनाथ भ० होय । ज० जेम मे० मे प० परुप्यो ॥ १७ ॥

मूलः-सुणेह मे महाराय अवक्खित्तेण चेयसा ।
जहा अणाहो भवई जहा मेयं पवत्तियं ॥ १७ ॥

गाथा १७ भावार्थः-हे [illegible]

अर्थः–हवे मुनिराज कहेछे। मि० हुं अ० अनाथहतो म० हेमहाराजा मगधदेशनां ॥ ना० अणपामी वस्तु पमाडे, पाम्योछे तेहनी रक्षाकरावे एहवायोग्य क्षेमकुंकरणहारनाथ। म० माहरे न० न वि० हतो मुजने अ० अनुकंपा करणहार कोइ सु० मित्र वा० पणनहोतो। कं० लगारमात्र थोडोपण न० नथामुं अनुकंपाए-करी सुखनो अ० देणहार म० हुं ॥ ९ ॥

मूलः–अणाहो मि महाराय नाहो मज्झ न विज्जई ।
अनुकम्पगं सुहं वावि कंचि नाभिसमेमहं ॥ ९ ॥

गाथा ९ भावार्थः–तेवारे मुनि कहेताहवा के हेमहाराजा ? मारेयोग्य क्षेमना करनार कोइ नाथ (धणी) नहि, अनुकंपाएकरी सुखआपनार कोइ मित्रनाहि तेथीहुं अनाथ होवाथी में दीक्षा धारणकरी ॥ ९ ॥

अर्थः–त० तेवारपछी सो० ते प० हस्यो रा० राजा । से०श्रेणिक म०मगध देशनो भा० ठाकुर ॥ ए० एम ते० तुजने इ० ऋधिवंतने क० केम ना० नाथ न० न वि० हुवो ॥ १० ॥

मूलः–ततो सो पहसिओ राया सेणिओ मगहाहिवो ।
एवं ते इड्ढिमन्तस्स कहं नाहो न विज्जई ॥ १० ॥

गाथा १० भावार्थः–तेवारे मगध देशनो अधिपती श्रेणीकराजा हस्यो ने कहेवा लाग्यो के अहो ! एवी वर्णादिकनी ऋद्धिवंतने योग्य क्षेमनो करनार नाथ केम नहोय !!! ॥ १० ॥

आ० पीडे अ० वैरी कु० कोप्योथको ॥ ए० एहवी मे० मुजने अ० आंखने विषे वे० वेदना उपनी ॥ २०॥

मूलः—सत्थं जहा परमतिक्खं सरीरविवरन्तरे ।
आवीलिज्ज अरी कुद्धो एवं मे अच्छिवेयणा ॥ २० ॥

गाथा २० भावार्थः—जेम वैरी कोप्यो थको अति तिक्ष्ण शस्त्रे करी शरीरना आंतरा कान प्रमुखने विषे घोचीने पीडे तेवी मुजने आंखनी वेदना उपनी ॥ २० ॥

अर्थः—ति०केडनामे० मुजने अ० मध्यभागने विषे पीडा उपनी च०वली । उ० मस्तकपण च० वली पी० दुषवाआव्यो । इ० इंद्रना अ० वज्रना प्रहार स० सरिपीयो० रौद्र वीजाने भय उपजावे तेहवी वे० वेदना प० अत्यंतदा० सहेतां दोहिली ॥ २१ ॥

मूलः—तियं मे अन्तरिच्छं च उत्तमङ्गं च पीडती ।
इन्दासणिसमा घोरा वेयणा परमदारुणा ॥ २१ ॥

गाथा २१ भावार्थः—इंद्रना वज्रनी पेरे अनेराने देखतां भय उपजे तेवी केडना मध्य भागे तथा मस्तकने विषे घणीज दाघज्वरनी वेदना उपनी के जे खमी न शकाय ॥ २१ ॥

अर्थः—उ० आव्या मे० माहरे अर्थे आ० वैद्य । वि० विद्याएकरी मं० मंत्रेकरी ति० पडिगणाना करणहार ॥ अ० एहवा डाला वीजा वैद्य नथी या० अथवा सास्त्र भणवेकरी स० सास्त्रना कु० जाण मं० मंत्रनां म० मूलना वि० जाण ॥ २२

अर्थः–हे मुनिराज करेछे। वि० हुं अ० अनाथनो म० हेमहाराजा मगधदेशना ॥ ना० अणपामा वस्तु पमाडे, पाम्योछे तेहनी रक्षाकरावे एहवायोग्य सेमनुंकरणहारनाथ। म० माहरे न० न वि० हतो मुजने अ० अनुकंपा करणहार कोइ मु० मित्र वा० पणनहोतो। कं० लगारमात्र गोदोपण न० नथामुं अनुंकंपाए-करी सहितनो अ० देणहार म० हुं ॥ ९ ॥

मूलः–अणाहो मि महाराय नाहो मज्झ न विज्जई ।
अणुकम्पगं सुहं वापि कंचि नाभिसमेमहं ॥ ९ ॥

गाथा ९ भावार्थः–हेवारे मुनि करेलाछे के हेमहाराजा ? मारेयोग्य क्षेमना करनार कोइ नाथ (धणी) नहि, अनुकंपाकरी सुखआपनार कोइ मित्रनहि तेणीहुं अनाथ होवाथी में दीक्षा धारणकरी ॥ ९ ॥

अर्थः–त० तेवारपछी सो० ते प० इग्यो रा० राजा । से०श्रेणिक म०मगध देशनो आ० ठाकुर ॥ ए० एम ते० मुजने इ० इच्छितने क० केम ना० नाथ न० न वि० हुवो ॥ १० ॥

मूलः–तओ सो पहसिओ राया सेणिओ मगहाहिवो ।
एवं ते इड्ढिमन्तस्स कहं नाहो न विज्जई ॥ १० ॥

गाथा १० भावार्थः–हेवारे मगध देशनो अधिपती श्रेणीकराजा इग्यो ते कहेवा लाग्यो के अहो ! एम तुंऋद्धिवंतने योग्य क्षेमनो करनार नाथ केम नहोय !!! ॥ १० ॥

मूलः–पिया मे सव्वसारं पि दिज्जा हि मम कारणा ।
न य दुक्खाउ मोयन्ति एसा मज्झ अणाहया ॥ २४ ॥

गाथा २४ भावार्थः–मारां माता पिताए मारे माटे सर्व धन आप्युं, पण मुजने ते दुःखथी पीडता मूकावी न शक्या ते मारुं त्रीजुं अनाथपणुं ॥ २४ ॥

॥ २० ॥

॥२०९॥

अर्थः–मा० माता य०वली मे०माहरी म०हेमहाराजा ॥ पु० पुत्रने सो० सोगेकरी दु०दुपीआरातिवंत । म० नहीं जेभणी माताए य०वली दु०दुपथी मो०मुकाव्यो नहि ए०एम म० माहरू अ० अनाथपणो ॥ २५ ॥

मूलः–माया य मे महाराय पुत्तसोगदुहट्टिया ।
न य दुक्खाउ मोयन्ति एसा मज्झ अणाहया ॥ २५ ॥

गाथा २५ भावार्थः–हे महाराजा ! मारी माता पुत्रने दुःखे करी शोग दुःख ने आर्तध्यान धरती हती पण ते माता ते दुःखथी मुजने मुकावी न शकी ए मारुं त्रीजुं अनाथपणुं ॥ २५ ॥

अर्थः–भा०भाइ मे०माहरो म० हेमहाराजा स० सगा एक उदरना उपन्याजे० वडो क० नाहनापण हुता ॥ न०नहीं तेणे भाइए य०वली दु०दुपथी वि० मुकाव्यो मुजने ॥ ए०एम म०माहरुं अ०अनाथपणुं ॥२६॥

मूलः–भायरो मे महाराय सगा जेट्ठकणिट्ठगा ।
न य दुक्खा विमोयन्ति एसा मज्झ अणाहया ॥ २६ ॥

॥२०९॥

गाथा २६ भावार्थः–हे महाराजा ! सगा एक उदर (पेट) ना उपन्या मारायी नाना ने मोटा एवा

मूलः–एवं वुत्तो नरिन्दो सो सुसंभन्तो सुविम्हिओ ।
वयणं अस्सुयपुव्वं साहुणा विम्हयन्निओ ॥ १३ ॥

गाथा १३ भावार्थः–एम मुनिएकहेवायी तेश्रेणिक राजा अति व्याकुळ चित्तथको आश्चर्यकारी पूर्वनहि सांभळेलुं एवुं वचन सांभळी संशयवंत (एटले हुंकोणछुं तेआमुनि जाणतानथी एम) थको बोल्यो ॥ १३ ॥

अर्थः–अ० अश्व ३३ सहस्र ह० ३३ सहस्रहाथी मं० मनुष्य ३३ कोडि मे० मारेछे ॥ पु० नगर अं० अंतपुर च०वळी मे० मारेछे । मु० भोगवुंछुं मा० मनुष्यसंबंधिया भो० भोगने । आ० आज्ञामारी रुडिपरे सेवक आराधेछे इ० ठकुराइपणो च०वळी मे० मारेछे ॥ १४ ॥

मूलः–अस्सा हत्थी मणुस्सा मे पुरं अन्तेउरं च मे ।
भुञ्जाहि माणुसे भोगे आणा इस्सरियं च मे ॥ १४ ॥

गाथा १४ भावार्थः–तेत्रीस हजार हाथी, तेत्रीसहजार घोडा, तेत्रीसहजार रथ, तेत्रीसक्रोड पायक, एक क्रोडने इकोतेर लाख गाम नगर मनुष्यनेविषें ठकराइपणुं ने मारी आज्ञा प्रवर्तेछे ने अंतेउरनेविषे मनुष्यसंबंधी भोग भोगवतोथको विचरुंछुं. ॥ १४ ॥

अर्थः–ए० एहवी सं० संपदा अ० अग्रप्रधान । स०सर्व का० मनवंछीतवस्तु स० सहितछे माहरोआ त्मातेहभणी क० केम अ० अनाथ भं० थाउंछुं । मा० रखे हु०हे भं० भगवान मु० मृषा व० बोलताहो ॥१५॥

गाथानो संबंध त्रीजमी गाथाए संपूर्ण थशे) ॥ २८ ॥

अर्थः-अ० अन्न पा० पाणी च०वळी ण्हा० न्हावण अंगोल च०वळी । गं० चुयादिक सुगंध द्रव्य म० फूल वि० चंदनादिकनुं विलेपन । म० मुजने ना० जाणता वा० अथवा अ० अजाणता । सा० तेवा० जोवनवंतीस्त्री ने० न भु० भोगवे ॥ २९ ॥

मूलः-अन्नं पाणं च ण्हाणं च गन्धमल्लविलेवणं ।
मए नायमनायं वा सा बाला नेव भुञ्जती ॥ २९ ॥

गाथा २९ भावार्थः-ते योवनवंती अन्नपाणी स्नान पुष्पादीक सुगंधी पुष्पमाळा कस्तुरीयादिक विलेपन मारा जाणतां तथा अजाणतां थकां पण भोगवती नहि ॥ २९ ॥

अर्थः-ख० क्षणमात्र पि० पण मे० माहरे म० हे महाराजा पा० पासेथी मे० माहारा न० न फ० अळगी जाय सदाय पासे रहे । न० न ते पण स्त्री य० वळी दु० दुपथी वि० मुकाव्यो मुजने । ए० एम म० माहरुं अ० अनाथपणुं ॥ ३० ॥

मूलः-खणं पि मे महाराय पासाओ मे न फिट्टती ।
न य दुक्खा विमोयन्ति एमा मज्झ अणाहया ॥ ३० ॥

गाथा ३० भावार्थः-ते स्त्री मारी पासेथी एक क्षीण पण अळगी नहि जतां सदाय पासेज रहेतीहती ते स्त्री पण मुजने दुःखथी मुकावी न शकी ए मारुं एहवं अनाथपणुं ॥ ३० ॥

...॥ १७ ॥

अर्थः-हे० हे गौतमी ना० नामा व० नगरी । पु० पुण्यात्मनिर्मिती पु० पुण्यीतूनी नगरी तेहने वि० विषे पुरुषन

मूलः—एवं च चिन्तइत्ताणं पसुत्तो मि नराहिवा ।
परियत्तन्तीए राईए वेयणा मे खयं गया ॥ ३३ ॥

गाथा ३३ भावार्थः—हे नरेंद्र ! एम चिंतवीने हुं सुतो ने ज्यारे रात्री अति क्रमी त्यारे मारी वेदना क्षय थई ॥३३॥

अर्थः—त० तेवारे पछी क० रोग रहित थएथके प० प्रभातने विषे आपु० पुछीने यं० मातादिक स्वजन बांधवने खं० क्षमावंत दं० इंद्रीनो दमणहार हुओ नि० आरंभ रहित हुओ प० पडिवज्यो अ० अणगार साधुपणाने ॥३४॥

मूलः—तओ कल्ले पभायम्मि आपुच्छित्ताण बन्धवे ।
खन्तो दन्तो निरारम्भो पव्वइओ अणगारियं ॥ ३४ ॥

गाथा ३४ भावार्थः—प्रभाते वेदना समावाथी निरोगी थए छते बांधवादिकने पुछी क्षमावंत इंद्रियोने दमनरूप ने निरारंभी एवुं अणगारपणुं ग्रहण कर्युं ॥ ३४ ॥

अर्थः—तो० तेवारे पछे इं० हुं ना०नाथ जा० हुवो अ०आपणा आत्मानो य० तथा । प० परआत्मानो पण हुं नाथ हुओ य०वली । स० सर्वेचे० वली भू० नाना मोटा सर्व जीवनो हुं नाथ हुवो ॥ त० त्रस वेंद्रियादिक जीव अने था० थावर पृथ्व्यादिक जीवनो हुं नाथ हुओ य०वली ॥ ३५ ॥

मूलः—तो हं नाहो जाओ अप्पणो य परस्स य ।
सव्वेसिं चेव भूयाणं तसाण थावराण य ॥ ३५ ॥

गाथा ३५ भावार्थः—में दीक्षा लीधी त्यारे नाना ने मोटा एवा त्रसने पृथ्वीयादिक स्थावर एवा

मूलः—उवट्ठिता मे आयरिया विज्जामन्तातिगिच्छया ।
अधी या सत्थकुसला मन्तमूलविसारया ॥ २२ ॥

गाथा २२ भावार्थः—वैद्यकशास्त्रमां निपुण ने मंत्रमूलीना जाण ने विद्याए तथा मंत्रे करी औषध करवामां चतुर एवा वैद्यो मारे माटे आव्या ॥ २२ ॥

अर्थः—ते० ते वैद्य मे० मुजने ति० वेदुपडिगणुं कु० करे ॥ चा०च्यार प्रकारे ते च्यार प्रकार कहेछे चा० वैद्य दाक्षा पंडित १ । ओषध जेहवुं जोइए तेहवुं २ । रोगी ओषध करवानो अर्गि ॥३॥ रोगीने पडिगणुं करतां जे मातादिक सेवा करवीहोय तेहवी पण हूती ज० जेम हि० हित होय तेम करे न० न य०वली दु० दुपथी ते चारप्रकारे पडिगणुं करणहारे वि० मुकाव्यो मुजने । ए०एम म० माहरो अ० अनाथपणो ॥ २३ ॥

मूलः—ते मे तिगिच्छं कुवन्ति चाउप्पायं जहाहितं ।
न य दुक्खा विमोयन्ति एसा मज्झ अणाहया ॥ २३ ॥

गाथा २३ भावार्थः—एक वैद्यकशास्त्रमां पंडीत, बीजे शुद्ध औषधी, त्रीजे रोगीने विश्वासपात्र, चोथे औषध करवामां चातुर्य ए चार प्रकारे जेम हीत थाय तेवी रीते ते वैद्यो औषध करतां ते दुःखथी मुजने मुकावी न शक्या ? ए माहरुं मथम अनाथपणुं ? ॥ २३ ॥

अर्थः—पि०पिताए मे०माहरे स०सर्वसा०धन पि०पण ॥ दि०देई हि०वली म०माहरी आंखनी वेदना टालवाने का०अर्थे ॥ न०न पिताए य०वली दु०दुपथी मो०मुकाव्यो मुजने । ए०एम म०माहरो अ०अनाथपणो ॥२४॥

मूलः–अप्पा कत्ता विकत्ता य दुक्खाण य सुहाण य ।
अप्पा मित्तममित्तं च दुप्पट्ठियसुपट्ठिओ ॥ ३७ ॥

गाथा ३७ भावार्थः–सुखनो कर्ता तथा भोक्ता, मित्र तथा शत्रु, रुडो तथा खुंडो पोताः . आत्मा छे, बीजो कोइ सुख दुःखादिकनो आपनार नथी ॥ ३७ ॥

अर्थः–हवे श्रेणीकराजा प्रते बीजो अनाथपणो असंजतिनुं अनाथीमुनी कहे छे इ० ए अ० अनेरो बीजो पण वि० वली अ० अनाथपणो नि० हे राजा हु० निश्चे तं० ते ए० एक चि० चित्ते नि० स्थिर निश्चल चित्ते थइने सु० सांभल नि० निर्ग्रंथनो ध० धर्मल० पामीने नि० राजा ज० जेम सी० सीदाय सिथिल होय अनुष्ठान करवावेला ए० एकेक एगे० कुंडरिकादिक चारित्र मुकीने वेश छांडिने घरवासमध्ये गया ते तथा वेश राखिने केटलेक पोटामार्गनी परंपरा चलावी एहवा जे जाय व० घणा का० कायर न० मनुष्य ॥ ३८ ॥

मूलः–इमा हु अन्ना वि अणाहया निवा तमेगचित्तो निहुओ सुणेहि ।
नियण्ठधम्मं लहिया निवा जहा सीयन्ति एगे बहुकायरा नरा ॥ ३८ ॥

गाथा ३८ भावार्थः–हे राजा ? वली बीजुं अनाथपणुं चित्तनी एक स्थीरता करीने सांभळ ! एकेक कायर मनुष्य निग्रन्थ यतीधर्म पामीने ढीलाचारी थाय ॥ ३८ ॥

अर्थ०–जो० जेप० दिक्षा लेइने म० महाव्रतने पडिवजींने । स० सम्यक प्रकारे च० वली नो० न फा० सेवे प०

माता भाइओ ने दुःखथी मुकने मुकावी न शक्या ए मारुं चोथुं अनाथपणुं ॥ २६ ॥

अर्थः-भ० हेनो भे० भाइओ म० हे महाराजा ! न० मारी एक उदरनी उपनी भे० बहेन भाइ नानो पण भाइ ॥ न० नहीं उ० थइने ते पण वेदने दु० दुःखथी वि० मुकाव्यो नहि मुकने ॥ ए० एम म० मारुं अ० अनाथपणुं ॥ २७ ॥

मूलः-भइणीओ मे महाराय माया जेट्ठकणिट्ठगा ।
न य दुक्खा विमोयन्ति एसा मज्झ अणाहया ॥ २७ ॥

गाथा २७ भावार्थः-हे महाराजा ! मारी नानी ने मोटी बेनो ने दुःखथी मुकने मुकावी न शकी ए मारुं चोथुं अनाथपणुं ॥ २७ ॥

अर्थः-भा० भाया भे० भाइओ म० हे महाराजा ॥ अ० मुअउरत्त अनुरक्त अभ्यंतर प्रेमवंती हुती ॥ अ० परिहत्था हुती । अं० अंसुए पु० पुंलिंगी न० आंख नेत्रे आंसुएकरी । उ० हेयुं भे० माहरुं प० सिक्ति सींचवी हुती ॥ २८ ॥

मूलः-भारिया मे महाराय अणुरत्ता अणुव्वया ।
अंसुपुण्णेहिं नयणेहिं उरं मे परिसिंचती ॥ २८ ॥

गाथा २८ भावार्थः-हे महाराजा ! मारी जे स्त्री नाम उदर ऊपरे गमतारी ने कहेलि ने शीलोना महात्म्यथी करी पवित्रता ने अश्रु (आंसु) थी भरया ने नेत्र हेराने सींचती हती ने मारा शोकथी (आ

अर्थः–चि० घणाकाळलगे अ० पण से० ते मु०मस्तक मुंडनी रु०रुचिवंत भ०थइने अ०अस्थिर जेहनाव्रत वळी व्रत लीये वळीमुकेसमकितविनाव्रतअस्थीर त०तपस्वीनि०अभिग्रहथी भ०भ्रष्ट चि०घणावरसलगेपि०पण अ० आत्माने कि० लोचादिके कलेसकरी कलेशपमाडिने । न० न पा० पारगामी हो० होय हु० निश्चे सं० संसारनो ॥४१॥

मूलः–चिरं पि से मुण्डरुई भवित्ता अथिरव्वए तवनियमेहि भट्ठे ।
चिरं पि अप्पाण किलेसइत्ता न पारए होइ हु संपराए ॥ ४१॥

गाथा ४१ भावार्थः–जे समस्त अनुष्ठान (क्रिया) रहित ने घणा काळ सुधी मुंडनी रुचीने वारंवार व्रत ग्रहण करीमुकवाथी अस्थीर व्रति ने तप नियमथी भ्रष्ट एवो ते यती घणां वर्ष सुधी लुंचनादिक कष्ट सहन करे पण जेने विषे जीव परिभ्रमण करे छे तेवा संसारनो ते पारगामी न थाय ॥ ४१ ॥

अर्थः–पु० जिननी आज्ञा तेशुद्ध समकितरुप धनविना पोलीठाली मु० मुठी ज० जेम से० ते अ० असार अ० अयंत्रि तवसि अणकीधोहोय आत्माजेहनोते कू० खोटा क० नाणानीपरे मुल न पामे वा० वळी रा० काचनोकटको वे० वैदूर्य रतननीपरे प्प० तेजकांति धरतो दिसेपण अ० अणअर्थनिक हो० होय य०वळी जा० जाण आगले ॥४२॥

मूलः–पुलेव मुट्ठी जह से असारे अयन्तिए कूडकहावणे वा ।
राढामणी वेरुलियप्पगासे अमहग्घए होइ य जाणएसु ॥ ४२ ॥

गाथा ४२ भावार्थः–अयंत्रीत कुटकार्पानी पेरे जेम पोलीमुठी असार ने काचनो कटको वैडुर्यमणिनी पेरे प्रभा धरतो होय पण प्रविण पुरुषनी पासे अल्प मुल्यवंत थाय ॥ ४२ ॥

अर्थः-ग० ने संग उदयमें नहि नेवारे पछी अ० हुं ए० एहवो आ० कहेनोदुवो एम बोल्यो। दु० एकवो दुसह दु० निंद्य पु० वार पु० वार। वे० सहिता दोहिली जे वेदना अ० भोगवी जे० जे सं० जे संसारनुं अ० अंत नथी एहवा संसारमांहि ॥ ३१ ॥

मूलः-तनो हं एकमाहंसु दुक्खमा हु पुणो पुणो।
वेयणा अणुभविउं जे संसारम्मि अणन्तए ॥ ३१ ॥

गाथा ३१ भावार्थः-अनंत संसारमांही नरकनां थकां दोहिली एवी अमीनिवाली रोगनी वेदना हुं वारंवार एकलोज भोगवुंछुं ॥ ३१ ॥

अर्थः-ग० एकवार ज० कली ज० जोमू० पुराउ वे० वेदना वि० विप्पीर्ग गणी इ० ए आंखनी वेदनाथी तो ख० खमावंत इ० इंद्रीनो दमनहार नि० आरंभ रहित थाउं प० पडिवजुं आदरुं अ० अणगारपणुं अंगीकार करुं ॥ ३२ ॥

मूलः-सहं च जइ मुच्चेज्जा वेयणा विउला इतो।
खन्तो दन्तो निरारम्भो पव्वए अणगारियं ॥ ३२ ॥

गाथा ३२ भावार्थः-एवी मोटी वेदना हुं भोगवुंछुं तो जो एकवार ए वेदनाथी मुक्त थाउं तो क्षमावंत इंद्रीनो दमनहार ने निरारंभी एवी दीक्षा आदरुं करुं ॥ ३२ ॥

अर्थः-प० एहवुं च० कही नि० एम चिंतवीने। प० सुतो मि० हुं म० हे महाराजा। प० एहले अतिघणी वे० वेदना मे० मारगे ग० घर ग० गइ ॥ ३३ ॥

जाय तथा जेम अविधिए शस्त्र ग्रहण करवाथी मारे ने जेम अविधीए मंत्र जपवाथी वैताळ मारे तेम ए शब्दादिक विषययुक्त यतीधर्म मारे ॥ ४४ ॥

अर्थः- जे०जेवेषधारी ल० सामुद्रीक शरीरना लक्षण सु० सुपननो विचार प० लोकआगले कहेतो थको प्रवर्तें नि० भूमिकंपादिक अतितकाल प्रमुखनो निमित्तभाषे को० पुत्रादिकने अर्थे स्त्रीभरतारने एकपोतिए स्नान करावनाने विषे सं० अतिआशक्त कु० जुठोआश्चर्यकारी वि० विद्या मंत्रादिकेकरी आ० पापनी उपराजणकरी जी० जीवे न० तेमंत्रादिकथी न ग० पामे स० सरणमंत्रादिकथी आधार त० अंत का० काळनेविषे ॥ ४५ ॥

मूलः—जे लक्खणं सुविण पउञ्जमाणे निमित्तकोऊहलसंपगाढे ।
कुहेडविज्जासवदारजीवी न गच्छई सरणं तम्मि काले ॥ ४५ ॥

गाथा ४५ भावार्थः—जे चक्रादिक लक्षण विचार कहे तथा स्वप्नविचार कहे तथा संतानादिकने अर्थे अतितकाळादिकनुं निमित कहे तथा मंत्र यंत्र तंत्रादिक विद्याथी आश्चर्य उपजावी केवळ (संपूर्ण) पाप कर्म उपराजे पण अंतकाळे ते शरणन थाय ॥ ४५ ॥

अर्थः—त० अतिअज्ञानपणेकरी उ० वळी से० द्रव्ययतिवेषधारी । अ० सीलरहित ॥ स० सदाय दु० दुषी वि० विपरितपणो उ० पामे परलोकनेविषे सुखपामवानी आशा होय ते दुखपामे । सं० निरंतर जाय न० नरक ति० तिर्यंचनी जो० जोनिनेविषे । मो० चारित्र वि० विराधीने अ० असाधु रू० रूप ॥ ४६ ॥

मूलः—तमं तमेणेव उ से असीले सया दुही विप्परियामुवेति ।

पर आत्मानो ने मारा आत्मानो यवेनो हुं नाथ थयो ॥ ३५ ॥

अर्थः-हवे श्रेणीक राजा प्रते साधु उपदेश कहे छे । अ० आपणो आत्मानन० नदि वे० वैतरणीना दुषनो करणहार । अ० आत्मा मे० माहरो कू० कुडसामलीवृक्षना दुषनो उपजावणहार । अ० आपणो आत्माज का० मनवंछित वस्तु रुपीया दु० दुषनो देणहारो धे० कामधेनुं गायना सुखनो उपजावणहार मे० आपणो अ० आत्माज नं० नंदन व० वननीपरे आनंदकारी ॥ ३६ ॥

मूलः-अप्पा नदी वेयरणी अप्पा मे कूडसामली ।
अप्पा कामदुहा धेणू अप्पा मे नन्दणं वणं ॥ ३६ ॥

गाथा ३६ भावार्थः-आत्मा वैतरणी नदीनुं दुःखदाता, आत्मा कुड सामली वृक्षनां फळदाता, आत्मा कामधेनुं गायनीपेरे वंछीत सुखदाता, आत्मानंदन वननी पेरे आनंदकारी (पाठांतरे) दृष्टत्व करवायी पोतानोज आत्मा वैतरणीनां दुःखनो दातार तथा कुडसामळी वृक्षना दुःखनो दातारछे अने सुकृत्यथी कामधेनु गायनां सुखनो दातार पण पोतानोज आत्मा छे. रागादिक दोष छोडीने आत्मारुपी वगीचामां संतोष दया क्षमादिक धर्मकृत्यमांही रमाडवाथी आत्मा आनंदवन कहीए तथा नंदनवननां सुखनो दातार पण आत्मानछे ॥ ३६ ॥

अर्थः-अ० आपणो आत्माज क० कर्मनो करणहार नि० कर्मनो टालणहार य० वळी दु० दुषनी उपराजणनो करणहार य० वळी सु० सुषनी उपराजणनो करणहार आपणो आत्माज य० वळी अ० आपणोज आत्मा मि० मित्र अने अ० वेरी य० वळी दु० भूंडे आचारे ठि० रह्यो सु० रुडे आचारे ठि० रह्यो ते आपणोज आत्मा ॥३७॥

मूलः—न तं अरी कण्ठछेत्ता करेइ जं से करे अप्पणिया दुरप्पया ।
से नाहई मच्चुमुहं तु पत्ते पच्छाणुतावेण दयाविहूणो ॥ ४८ ॥

गाथा ४८ भावार्थः—प्राणनो नाशकरनार वैरी जेटलो अनर्थनकरे तेटलो पोतानो आत्मा दुष्टाचारीयको अनर्थ करे ते मुखे दुराचार आचरतो थको विचार न करे पण सत्तरे भेदे संयमरहित मणने मुखे पहोत्योयको पश्चाताप करशे॥४८॥

अर्थः—नि० अर्थ रहित निः फल ते चारित्रादिक आदरीने पश्चाताप करे । परमांहि पण जइ न शके न० चारित्रनी रु०रुची उ०वळी त० ते द्रव्य यतिवेषधारीने । जे० जेउ० उत्तम अ० अर्थने संजमने वि० विराधी ॥ इ० इहलोक ऽवि० पण से० ते वेषधारीने न०नथी प०पर वि०वळी लो० लोक पण नथी ॥ दु० बेहु लोकमांहि अ० पण से० ते वेषधारी भ्रष्ट चिंताए करी झि० पीजे पेट पामे त० तिहां लो० लोकमांहि ॥४९॥

मूलः—निरट्ठिया नग्गरुई उ तस्स जे उत्तमट्ठं विवज्जासमेइ ।
इमे वि से नत्थि परे वि लोए दुहओ वि से झिज्जइ तत्थ लोए ॥ ४९ ॥

गाथा ४९ भावार्थः—ते द्रव्ययतिनी चारित्रनी रुची निष्फळ ने आलोके तथा परलोके भष्टाचारिने सुख नही ने बचेलोकने विषे ते अरापो करे. ॥ ४९. ॥

अर्थः—ए०एणीपरे । अ०आपणा पोताने छ० छांदे प्रवर्तवेकरी । कु० कुसीलियानो रु०रुप । ध० मार्ग वि० विराधीने जि० जिनेंद्रनो उ० जिनउत्तमनो । क० जेमएंपणी आसिएसहित द्रव्य साधे तेह संबंधीनी ति

मूद थका आधाकर्मि आहार तथा थानकनी परुपणा करी पणाकाल पणाना पटर्याहि मिथ्यात पाछि ॥ न० न मु० एटलो होय ते मुलथी छि० छेदी सके । यं० रागद्वेष रुपिया बंधन तथा कर्मरुप बंधन सं० ते कापर ॥३९॥

मूलः—जो पवइत्ताण महव्वयाइं सम्मं च नो फासयई पमाया ।
अनिग्गहप्पा य रसेसु गिद्धे न मूलओ छिन्नइ बन्धणं से ॥ ३९ ॥

गाथा ३९ भावार्थः—जे मनुष्य थइने पंच प्रमादने वसे करीने अहिंसादिक पंच महाव्रतने सम्यक न पाले तेम नहि पण रसादिक स्वादने विषे लुब्ध थवाथी जेनो आत्मा वश न होय ते राग द्वेष रुपी बंधनने मूलथी छेदी न शके ॥३९॥

पदः—आ० यतनपणो ज० जेहने य० वली न० नथी का० कांइलगारमात्रपण ॥ इ० इर्याने विषे ते पा० पाले इर्यासमिति भा० भाषाने विषे । त० तेमज । ए० एषणा समितिने विषे । आ० आदान उपगरण पा० नि० -पगरण मुकता ॥ दु० मात्रो आदिपरठवतां ॥ वी० श्रीमहावीरादिक सत्यवंत धीर्यवंत तेणे मार्ग पा० सेव्यो तेने । म० मार्गे अ० चालि न० न शके ॥ ४० ॥

मूलः—आउत्तया जस्स य नत्थि काइ इरियाए भासाए तहेसणाए ।
आयाणनिक्खेवदुगुञ्छणाए न वीरजायं अणुजाइ मग्गं ॥ ४० ॥

गाथा ४० भावार्थः—इर्या (जोइने चालवुं) समितिने विषे, भाषा समिति (विचारी बोलवुं ते) ने विषे, निर्दोष आहारपाणीयादिक लेवारुप एषणा समितिने विषे, भंडोपगरण लेतां मूकतां तथा परठवतां एवी पांच समितिरुप मुक्तिमार्गे जे वीर (शुरा) ने धैर्यवंत शुरुपे आचर्यो तेने विषे जेने कांइ पण यत्न (रक्षण) पणुं न होय ॥४०॥

मूलः—चरित्तमायारगुणन्निए तओ अणुत्तरं संजम पालियाण ।
निरासवे संखवियाण कम्मं उवेइ ठाणं विउलुत्तमं धुवं ॥ ५२ ॥

गाथा ५२ भावार्थः—ज्ञानसंयुक्त थको संयम (चारित्र) नो आचार पाळी आश्रवरहित थइ कर्मने क्षय करी नित्य अनंतासिद्धनुं स्थानक ते मुक्तिपद पामे ॥ ५२ ॥

अर्थः—हवे सुधर्मास्वामी कहे छे । ए० एम पूर्वे कह्यो तेम कर्म शत्रु मते रौद्र । दं० इंद्रीनो दमणहार वि० वळी म० महा त० तपो ध० धन मोटा तपरूपिया धननो धणी । म० मोटा मु० मुनी । म० मोटा प० प्रज्ञावंत म० मोटा य० यसवंत अनाथि निर्ग्रंथ । म० मोटा नि० निर्ग्रंथने हितकारी इ० एम म० महा मु० श्रुत मोटो अध्ययन । से० ते श्रेणिकराजा प्रते क० कह्यो अनाथी महामुनीए म० मोटा वि० विस्तारे ॥ ५३ ॥

मूलः—एवुग्गदन्ते वि महातवोधणे महामुणी महापइन्ने महायसे ।
महानियण्ठिज्जमिणं महासुयं से कहेई महया वित्थरेणं ॥ ५३ ॥

गाथा ५३ भावार्थः—ए पूर्वोक्त प्रकारे कर्मशत्रु प्रत्ये रौद्र (भयंकर), इंद्रियोने दमन करनार, तपोधनी दृढव्रती महाप्रज्ञा (बुद्धि) वंत, यशवंत, मोटा निर्ग्रंथने हीतकारी एवा महामोटा अनाथीए महाश्रुत अध्ययन मोटा विस्तारे करी श्रेणीकराजाने कह्युं ॥ ५३ ॥

अर्थः—तु० संतोषाणो य० वळी से० श्रेणीक रा० राजा । इ० इम उ० बोल्यो क० वे हाथ जोडिने । अ० अनाथपणुं ज० जेम भू० हतुंतेम कहुं । सु० भलीपरे मे० मुनने उ० उपदेश्यो ॥ ५४ ॥

अर्थः-इ० पामत्याना त्रि० लिंगवेश इ० ए मनुष्यलोकनेविषे धा० धारीने । इ० रजोहरणादिक मुनीनोचिन्ह वेषकरी । जी० आजीविकारत जीवनव्यने वृ० वधारिने पेटभराय करीने अ० असंजति एको अ सं० कारणे ५ आश्रवसेवता थाके ने तथा सावुना वेषसरिषा आचार । जपादि मुख निन्हवसरिषा फारफेर मार्गना पक्षक । तेहने संजति न जाणवा । सं० दुसंजतिरूं । ल० एमकहेनायको पवर्ते वि० अनेकप्रकारनी वेद-नाशहा आ० पामे से० तेहथकिली वि० घणाकालन्ने वि० पण ॥ ४३ ॥

मूलः-कुसीललिङ्गं इह धारइत्ता इसिज्झयं जीविय वूहइत्ता ।
असंजए संजयलप्पमाणे विणिग्घायमागच्छइ से चिरं पि ॥ ४३ ॥

गाथा ४३ भावार्थः-ए मनुष्य जन्मने विषे पामथा (मुनिनी क्रियाथी भ्रष्ट) दिकनो वेष धरीने रजोहरणादिक मुनिनां चिह्न राखी आजीविका करे ने असंयति थको संयति कहेवरावे ने घणा काळसुधी नर्कने विषे पीडा पामे॥४३॥

अर्थः-वि० विष नु० घणी पी० पीधो ज० जेम का० कालकूट । इ० हणाय मरे । स० सस्त्र ज० जेम दु० दुष्टो ग० ग्रहीयुं । ए० ए वि० घणी ध० हिंसादिकर्म वि० विष उ० उपमाने सहित । इ० मरे वे० वेताल इ० जेम आ० अविधीमंत्र जपनायको ॥ ४४ ॥

मूलः-विसं तु पीयं जह कालकूडं हणइ सत्थं जह कुग्गहीयं ।
एसो वि धम्मो विसओववन्नो हणइ वेयाल इवाविवन्नो ॥ ४४ ॥

गाथा ४४ भावार्थः-जेम कालकूट (रायमां मेलाथी माणसूं कालजाय तेवूं) वि० खायाथी माण

सामेमि ते महाभाग इच्छामि अणुसासिउं ॥ ५६ ॥

गाथा ५६ भावार्थः–हे संयति ? अनाथ जीवना तमेज नाथ ? ने सर्व जीवना रक्षपाळ हे महा भाग्यवंत ? तमने शमावुंछुं ? ने मारा आत्माने तमारा उपदेशरुप शिखामण वांछुंछुं ? ॥ ५६ ॥

अर्थः–पु० पुछीने म० मे । तु० तुजने झा० धर्मध्याननो वि० वियाघात जो० जे क० कीधो । नि० आर्मण दिधुं य० वळी भो० भोगकरी हे संजती तुं भोग भोगव इत्यादिक तं० ते स० सर्व मस्तकेकरी पमावुंछुं मे० माहरो म० अपराध सर्व खमो ॥ ५७ ॥

मूलः–पुच्छिऊणं मए तुब्भं झाणविग्घाओ जो कओ।
निमन्तिया य भोगेहिं तं सव्वं मरिसेहि मे ॥ ५७ ॥

गाथा ५७ भावार्थः–हे संयति ? प्रथम वये केम प्रवजित थया ? एम जे पूछयुं तथा ध्यानमां विघ्न कर्युं, अने भोग भोगवो एम आमंत्रण कर्युं इत्यादि अपराध ते सर्व मस्तके करीने हुं खमावुंछुं !!! ॥ ५७ ॥

अर्थः–ए० एणीपरे थु० स्तवीने स० ते रा० बीजा राजा मांहि सी० सींह समान श्रेणीक नामे राजा ॥ अ० अणगारमांहि सी० सींह समान तेहने प० उत्कृष्टि भ० भगतीए करी ॥ स० कुटंब स० प० परिवार सहित स० बांधव सहित ध० धर्मनुं अ० रक्तथको वि० निर्मल मिथ्यात्व रहित चे० चित्तेकरी ॥५८॥

मूलः–तुट्ठो य सेणिओ राया इणमुदाहु कयञ्जलि ।
अणगारसीहं परमाइ भत्तीए ।
सओरोहो सपरियणो सबन्धवो धम्माणुरत्तो विमलेण चेयसा ॥ ५८ ॥

संधावती नरगं तिरिक्खजोणिं मोणं विराहेत्तु असाहुरूवे ॥ ४६ ॥

गाथा ४६ भावार्थः—साधुनी क्रियाथी रहित ते द्रव्यपति अति अज्ञाने करी विधीत जाणपणे पोहोंत्यो तत्वादिकने विषे सदा दुःखी थको चारित्र विराधीने निरंतर नर्कतिर्यंचनी योनिने विषे भमति थको जाय॥४६॥

अर्थः—उद्दे० आधाकर्मादिक आहारयानकभोगवीने तेहनालाभ देखाडिने परुपणाकरी नवाग्रंथ करीने लाभ देखाडि ॥ की० यतीनेअर्थे मोल्ये आण्यो पोतेलइने ॥ नि० नित्यपिंडभेट ॥ न० न मु० मुकाप किं० कांइलगारमात्र अ० अणएपणीकसदोप ॥ अ० अग्नीनी वि० परे । स० सर्व भ० भक्षी भ० थइने । इ० इहांथी चु० चवीने ग० जाय क० करीने पा० पापकर्म ॥ ४७ ॥

मूलः—उद्देसियं कीयगडं नियागं न मुचई किंचि अणेसणिज्जं ।
अग्गी विवा सव्वभक्खी भवित्ता इत्तो चुए गच्छइ कट्टु पावं ॥ ४७ ॥

गाथा ४७ भावार्थः—जेम अग्नी सर्व भक्षी होय तेम आधाकर्मि मुल्यथी लीधेलुं नित्य पींडादिक सदोप तथा निर्दोप कांइपण मुकेनाहि ते पापकर्म करी अहींथी मरीने दुर्गतिए जाय ॥ ४७ ॥

अर्थः—नतं० पोते मिथ्यात सेवता थका समकितरुप जीवतव्यना हणणहारा खुटणहारा तं० ते टलुं पाडुओ (दुःप) अ० वैरी क० प्राणनो छे० हणणहार । न० न क० करे ॥ जं० जेटलुं पाडुओ से० ते वेप धारी क० करे । अ० आपणो पोतानो आत्मा दु० भूंडा आचारनो धणी ॥ से० ते वेपधारीना० जाणसे म० मरणने मु० मुपे प० पहुतो तु० नेवारे । प० पश्चाताप करे द० संजम वि० विराधी एटले संयम रहित ॥४८॥

पंखीनी पेरे प्रतिबंधरहित मोहथी विरक्त थई अनाथीमुनि पृथ्वीने विषे विचरतो हवो एम सुधर्मास्वामी पोताना जंबूस्वामी नामना शिष्यने कहेता हवा के हे जंबू ? जेम में श्री महावीरदेवस्वामीनी समीपे सांभळ्युं हतुं तेम में तुज प्रत्ये कर्युं ॥ ३० ॥ इतिश्री उत्तराध्ययनना विसमा अनाथीमुनिना अध्ययननो भावार्थ संपूर्ण ॥ २० ॥'

अर्थः—विसमा अध्ययनने विषे अनाथपणो कह्यो ॥ ते अनाथपणो छांडिने मोटा निर्ग्रंथने मार्गे च लवुं कर्युं । तेतो हीयादिक रहित स्थानक सेवता महा निर्ग्रंथपणो होय । ते एकविसमा अध्ययनने विषे विचित्राचर्याए समुद्रपालनामा मुनि विचर्या ते संबंध कहेछे । सकल लोकना सुख दुःखनो जाण होय ते वैराग्य पणो पामे । समुद्रपाल कुमारनीपरे तेणे एकविसमुं अध्ययन कहेछे ॥ चं० चंपानगरीने विषे पा० पालितनामे ना०नाम । सा० श्रावक आ० हुतो वा० वाणीओ म० श्री महावीरदेव भ०भगवंतनो सी० सीष्य श्रीमहावीरजीना समजाव्या थाटे शिष्य सो० ते उ०वळी म० महांत आत्मानो ॥ १ ॥

मूलः—चम्पाए पालिए नाम सावए आसि वाणिए ।
महावीरस्स भगवओ सीसे सो उ महप्पणो ॥ १ ॥

गाथा १ भावार्थः—चंपानगरीमां पालीत नामे सारथवाह हतो ते ज्ञातेवणिक ने महावीर भगवंतनो श्रावक शिष्य ने महांत आत्मानो धणी हतो ॥ १ ॥

मूलः—एमेव हा छन्दकुसीलरूवे मग्गं विराहेत्तु जिणुत्तमाणं।
कुररी विवा भोगरसाणुगिद्धा निरट्ठसोया परियावमेइ ॥ ५० ॥

गाथा ५० भावार्थः—ते कुशिलीयो महाव्रतादिकने पाळे नहि ने पोताने छांदे (पोतानी मरजी मपाणे) वर्तति जीनेंद्रनो मार्गविराधी जेम पंखणी मांससहित काइ पामे तेम ते भोगरसादिकेने विषे लुब्ध थको मर्णांते पश्चाताप करे ॥५०॥

अर्थः—हवे अनाथी महानिग्रंथ श्रेणीकराजा प्रते कहे छे सो० सांभळीने मे० बुधीवंत श्रेणीकराजा सु० भलो भा० भाष्युं इ० ए मे जे भाष्यो ते ॥ अ० सिक्षामण कहिने ना० ज्ञानने गु० गुणेकरी उ० सहित एवी सीक्षामण सांभलीने म० मार्ग कु० कुसीलियानो ज० छांडिने स० सर्व। म० मोटा नि० निग्रंथने मार्गे। व० तुं जाजे प० एणे पंथे जाजे तुं सुखी थाइस ॥ ५१ ॥

मूलः—सोच्चाण मेहावि सुभासियं इमं अणुसासणं नाणगुणोववेयं।
मग्गं कुसीलाण जहाय सव्वं महानियण्ठाण वए पहेण ॥ ५१ ॥

गाथा ५१ भावार्थः—ए विषय दोषवंत ने पंडितनी सुभाषित ज्ञानरुप शिक्षामण सांभळीने सर्वथा प्रकारे कुशिळियानो मार्ग तजीने मोटा निग्रंथने मार्गे जाय. ॥ ५१ ॥

अर्थः—च० चारित्रना आ० आचारनुं सेवनुं गु० ज्ञानादिक गुण वि० सहित। अ० प्रधान यथाख्यात सं० चारित्र पा० पालीने। नि० आश्रव रहित सं० क्षय करिने क० कर्म ॥ उ० पामे ठा० स्थानक वि० अनंत सिद्धनुं ठाम ॥ उ० उत्तम स्थानक ध्रु० नित्य सदायछे ॥ ५२ ॥

अर्थः-से० क्षेमकुशल । आ० आव्यो चं० चंपानगरिए । सा० श्रावक वा० वाणीओ आपणे घ०घरे सं० पधेछे त०तेने घ० घरने विषे दा० पुत्र से० ते सु० सुशोचित भोगभोगववा योग्य विचरे छे ॥ ५ ॥

मूलः-खेमेण आगए चम्पं सावए वाणिए घरं ।
संवड्ढती तस्स घरे दारए से सुहोइए ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः-ते श्रावक वाणीयो अनुक्रमे चालतां क्षेमकुशळे चंपा नगरीये पोताना घरे आव्यो, ने तेने घरे बाळक सुकमाळथको वृद्धी पामतो हवो ॥ ५ ॥

अर्थः-बा० बोतेर क०कलाएकरी संपुर्ण निपुण जाणछे य०वळी । सि० सिख्यो नी० नीतिशास्त्रनो को० जाण हुओ । जो० जौवने करी य० वळी सं० सहित योवनवंत थयो । सु० भलो रु० रुप छे पि० पलभ दं० दरसन छे जेहनो ॥ ६ ॥

मूलः-बावत्तरी कलाओ य सिक्खती नीइकोविए ।
जोव्वणेण य संपन्ने सुरूवे पियदंसणे ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः-जेनुं दर्शन वल्लभकारी स्वरुपवंत ते बालक बहोतेरकळा भण्योने नीतिशास्त्र शीख्यो ने अनुक्रमे योवन प्राप्त थयो ॥ ६ ॥

अर्थः-त० ते समुद्रपालने रु० रुपवंत भ० भार्या । पि० पिताए आ० आणी परणावी रु० रुपीणी

मूलः—तुट्ठो य सेणिओ राया इणमुदाहु कयञ्जली ।
अणाहत्तं जहाभूयं सुट्ठु मे उवदंसियं ॥ ५४ ॥

गाथा ५४ भावार्थः—श्रेणीकराजा संतुष्ट थयोथको बेहाथ जोडीने एम कहेतो हवो के जेम सत्य अनाथपणुं भगवंते रीते हतुं तेम मुज प्रत्ये कर्तुं ॥ ५४ ॥

अर्थः—तु० ताहरुं तु० भलो ल० लाध्यो सु० निर्थे म० मनुष्य ज० जन्म । सा० लाभरूप समूह संपदा तथा परभवे संबन्ध थाय तेहवो लाभ उपराजवो सु० भलो ल० लाध्यो य० वली तु० ते म० हे महाऋषी । तु० तुमे स० सनाथ य० वली स० तुमे बांधव सहित य० वली जं० जे भणी भे० तुम्हे ठि० स्थिताछो रह्याछो म० मार्गने विषे । जि० जिन उ० उत्तमना निर्थकरना ॥ ५५ ॥

मूलः—तुज्झं सुलद्धं खु मणुस्सजम्मं लाभा सुलद्धा य तुमे महेसी ।
तुम्मे सणाहा य सबन्धवा य जं भे ठिया मग्गे जिणुत्तमाणं ॥ ५५ ॥

गाथा ५५ भावार्थः—हे महाऋषि ? भलो तमने मनुष्यनो जन्म लाध्यो तथा भली रत्नादिक संपदा लाधी ने हे भगवन् ! तमे उत्तम जीनेंद्रना मार्गे रहेवाथी तमेज सनाथ ! ने तमेज सबांधव ? ॥ ५५ ॥

अर्थः—तं० तुम्हे अ० छो । ना० नाथ अ० अनाथना । स० सर्व भू० जीवना सं० हेसंजती । खा० हुंपमायुंछुं ते० तुमने म० हे महा भाग्यवंत इ० हुं वांछुंछुं । अ० मुजने सीखवो तमारी शीषामण हुं वांछुं छुं ॥ ५६ ॥

मूलः—तं सि नाहो अणाहाणं सव्वभूयाण संजया ।

मूलः–तं पासिऊण संवेगं समुद्दपालो इणमब्बवी ।
अहो सुभाण कम्माणं निज्जाणं पावगं इमं ॥ ९ ॥

गाथा ९ भावार्थः–ते चोरने जोइने समुद्रपाल कहेवा लाग्यो के अहो ? ए प्रत्यक्ष पोताना पापकृत्यथी कडवां फळ भोगवे छे, एम वैराग्य ऊपन्यो ॥ ९ ॥

अर्थः–सं० तत्वनो जाण थयो तथा जातीसमरण सहित थयो ॥ सो० ते समुद्रपाल त० तिहां गोपने विषे भ० भगवंत महात्मावंत प० उत्कृष्टो सं० वैराग आ० आव्यो । आ० पुछीने आज्ञा मागीने अ० माता पि० पिता कने । प० पडिवर्ज्युं अ० अणगारपणो ॥ १० ॥

मूलः–संबुद्धो सो तहिं भगवं परमसंवेगमागओ ।
आपुच्छम्मापियरो पवए अणगारियं ॥ १० ॥

गाथा १० भावार्थः–ते भगवंत समुद्रपालने जातिस्मरण ज्ञानथी तत्वनो जाण थयो ने उत्कृष्टो वैराग्य प्राप्त थवाथी मात पिताने पुछी (आज्ञा लइ) ने सर्वजित थइ अणगार थयो ॥ १० ॥

अर्थः–ज० छांडिने स० स्त्रीयादिक स्वजननो संबंध अ० धन म० मोटो कि० क्लेसहोय जेहथी ॥ म० मोटो मो० मोहनो हेतु क० संपूर्ण भ० भयनो हेतु ते स्त्री धनादिक छांडिने । प० चारित्र ध० धर्म च० वळी अ० रुच्यो समुद्रपाल । व० पांच महाव्रत सी० दोष रहित आहार लेइने उत्तर गुण महाव्रतादिक सेवे छे । प० बावीस परीसहने पमीने य० वळी ॥ ११ ॥

गाथा ५८ अन्वयः-पूर्वोक्तेन प्रकारेण अनगारमुनिना स्तुतिः कृता) विनयावनत उत्तमांग मस्तक वाली निर्मल वर्णानुरूपकरी मेखला तथा कुंडल सहित (आ गाथानो समास भोगण- स्तुती आकार पूर्व थयेल.) (अही भगीरथना कुलमां नमीने जिनधर्म ग्रहण करी समर्थज्ञानधारी थयो ॥५८॥

अर्थः-इ० इंदेरी विनयांग० शोभायमान मुख । का०कर्णने ग०वली प० मडाण्या ॥ अ० गांडिने वि० अलंकरी । अ० एवो आपणे स्थानके न० भगीरथराजा ॥ ५९ ॥

मूलः-उत्तमियंगोमकुलो कयऊण य पयाहिणं ।
अभिवन्दिऊण सिग्घा अइगओ नगहियो ॥ ६१ ॥

गाथा० अन्वयः-शोभायमान विनयवंतपणे मुकुलसहित मांडि भगीरथराजा पोताने स्थानके गयो० ॥

अर्थः-इ० वीरो नमस्कृति जगतीतले वीरजीए तम विनाशेलि वि०वली गु०गुणेकरी ग० भर्यो ॥ वि०विन गु०गुणेकरि वि०विन इ०इंदेरी वि०विनयों ग०करी ॥ वि०पंचमी इ०दंडे वि०प्रतिबंध रहित ॥ वि० विचरे छे इ० इंदेरी शांति शो०शोभ वि०सहित केवलि थइने ॥ वि०एम श्री सुधर्मास्वामीए जंबूने वे० कयुं ॥६०॥

मूलः-इइगो वि गुणगमिद्धो निग्गुत्तिगुत्तो निदण्डविरओ य ।
विहग इव विप्पमुक्को विहड वसुहं विगयमोहो ॥६०॥ ॥ त्ति बेमि ॥

इति श्री अन्तगडदशांगे विनयवर्णे त्रयोदशं अध्ययनं समाप्तं ॥ १३ ॥

गाथा ६० अन्वयः-एवा प्रकारना गुणे करीने करी एकांत गुप्ते ने दंड देवाथी रहित थइ

मूलः—सव्वेहि भूएहि दयाणुकम्पे खन्तिक्खमे संजयबम्भयारी ।
सावज्जजोगं परिवज्जयन्तो चरिज्ज भिक्खू सुसमाहिइन्दिए ॥ १३ ॥

गाथा १३ भावार्थः—सर्वत्रसने स्थावर जीवने हीतनो कर्त्ता क्षमाए करी कडीन वाक्यनो खमनार ब्रह्मचारी थको इंद्रियोने वश करी सावद्य व्यापारने वर्जे, एवो यती समाधीवंत थको विचरे ॥ १३ ॥

अर्थः—का० काले काले का० पडिलेहणादिक अनुष्ठान करतो थको वि० विचरे र० देसने विषे व० समर्थाईए अ० असमर्थाईए । जा०जाणीने अ०आपणा आत्माने य०वली । सी० सींहनी व०परे । स०वीहामणा शब्दकरी न० न सं० त्रासे । व० अशुभ वचन सु० सांभलीने अ० विरुओ वचन भुंडो न० न आ० बोले ॥१४॥

मूलः—कालेण कालं विहरेज्ज रट्ठे बलाबलं जाणिय अप्पणो य ।
सीहो व सद्देण न संतसेज्जा वयजोग सुच्चा न असब्भमाहु ॥ १४ ॥

गाथा १४ भावार्थ—काले काल अनुष्ठान (क्रिया) करतोथको देश प्रदेशनेविषे विचरे, संयमयोग न सीदाय तेम पोतानी शक्ति अशक्ति जाणी विचरे, भयंकर कठोर वचन सांभळी सींहनी पेरे डरे नहि तेम अभिमान पण न करे ॥ १४ ॥

अर्थः—उ० शुभ अशुभ विपाक उदय आवे ते आपणा पोताना उपराज्या कर्मनो फल विचारतोथको उ० पळी प० संजम पाले पि० विवेकारी अ० अप्रियकारी स० सर्व नि० पमे स० सर्व वस्तु । स० सर्व थानकने विषे अ० अनिच्छापणे न० न करे । न० न या० बोले पू० पूजा ग० आपणा आत्मानी निंदा न० पण न बोले मं० संजती ॥१५॥

मूलः—उवेहमाणो उ परिव्वएज्जा पियमप्पियं सव्व तितिक्खएज्जा ।

पोएण ववहरन्ते पिहुण्डं नगरमागए ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः–ते श्रावक निर्ग्रंथ प्रवचनने विषे प्रविण ने पंडित इतो ते नाम (वाहाण) नो वेपारी एकदा पिहुडनगरे गयो ॥ २ ॥

अर्थः–पि० पिहुडा नगरीने विषे । व० व्यापार करता त० ते पालितने वा० वागीआं दे० दे छे । पू० पेटि । तं०तेस० गर्भ सहित प० स्त्रीने गि० लेइने । स० आपणे पोताने देशे । अ०हवे प०चाल्यो ॥१॥

मूलः–पिहुण्डे ववहरन्तस्स वाणिओ देइ धूयरं ।
तं सगत्तं पइगिज्झ सदेसमह पत्थिओ ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः–पिहुडनगरमां रहेतां त्यां कोइ वणिके पोतानी पुत्री ते पालीत श्रावकने परणावी से अन्यदा गर्भवंती थई तेने लइने पोताना देश तरफ चाल्यो ॥ ३ ॥

अर्थः–अ० हवे पा० पालितनी श्रावकनी ध० स्त्री स० समुद्र मांहे प० प्रसवो अ० हवे वा० पुत्र तं० तिहां समुद्र मांहि जा० जण्यो तेह भणी स० समुद्रपाल इ० एहवो ना० नाम ॥ ४ ॥

मूलः–अह पालियस्स घरणी समुद्दंमि पसुवती ।
अह बालए तहिं जाए समुद्दपालि त्ति नामए ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थः–ते पंथे चालतां पालीतनी स्त्रीये समुद्रमां पुत्रने जन्म आप्यो ने ते बालकनुं नाम समुद्रपाळ पाड्युं ॥४॥

मूलः–परीसहा दुविसहा अणेगे सीयन्ति जत्था बहुकायरा नरा ।
से तत्थ पत्ते न वहिज्ज भिक्खू संगाममीसे इव नागगया ॥ १७ ॥

गाथा १७ भावार्थः–तेवा बावीस परीसह खमवोपरां दोहीला त्यां एकेक अति कायर नर सीदाय (दुःख पामे) पण समुद्रपाल मुनी जेम उत्तम हाथी संग्रामे गयोथको डरे नहि तेम उपसर्गथी ते पंडित डरे नहि ॥ १७ ॥

अर्थः–सी० सीत उ० उसन दं० डांस म० मसाना (मच्छर) य० वली फा० फरस । आ० रोग वि० घणा प्रकारना फु० फरसे दुपदे दे० सरिरने । अ० आक्रंद अण करतो थको त० तिहां दुप उपनेथके अ० दुपआहियासे । र० कर्मरुपणी रज खे० खपावे । पु० पूर्व कृ० भवना ॥ १८ ॥

मूलः–सीओसिणा दंसमसा य फासा आयङ्का विविहा फुसन्ति देहं ।
अकुक्कुओ तत्थऽहियासएज्जा रयाइ खेवेज्ज पुरे कयाइं ॥ १८ ॥

गाथा १८ भावार्थः–टाढ, ताप, डांस, मच्छर अनेक प्रकारना रोग ए शरीरने विषे आवीने दुःख दीए तेवारे आक्रंद (पोकार) अणकरतो थको पुर्व कृत्य कर्मक्षय करवाने वास्ते खमे ॥ १८ ॥

अर्थः–प० छांडिने रा० राग च० वली त० तेमज दो० द्वेष । मो० मोह छांडिने च० वली भि० साधु स० निरंतर वि० विचिक्षण । मे० मेरु पर्वत व्य० जेम वा० वायरेकरी अ० कंपे नहि तेम समुद्रपालमुनि निश्चलपणे ॥ प० परीसह पमे आ० काउवानीपरे सर्व इंद्री गोपवीने आतम गु० गुप्तथको आपणा आत्माना कीधा शुभ अशुभ भोगवुं छे एम समभावे परीसह स० पमे ॥ १९ ॥

जेम सुख भोगवे छे तेम समुद्रपाल सुख भोगवे छे ॥७॥

मूलः—तस्स रूववइं भज्जं पिया आणेइ रुक्मिणिं ।
पासाए कीलए रम्मे देवो दोगुन्दओ जहा ॥ ७ ॥

गाथा ७ भावार्थः—ते समुद्रपाळने यौवन प्राप्तवंत जाणी तेना पिताए श्वरूपवंत रुपणी नामे तेनी परणावी, तेवारे ते समुद्रपाळ वणीक प्रासाद (महेल) ने विषे त्रायत्रींसक देवतानी पेरे क्रीडा करतो हवा ॥७॥

अर्थः—अ० इये अ० केटलेक क०काले । पा०प्रासादने विषे आ० गोपने विषे ठि० स्थितो रमो हुतो तेणी वेळाए । व० चोरने बांधवाना सं० आभरण करेणना फुलनी माळा गळे घालीने । सो० चोरने वधवानी सोभा सहित चोर कीधो छे व० पहनो चोर वधवा योग्य कीधो छे तेहने पा० देखे छे व० चोरने वध करवानी भूमिकाए लेइ जाता देखीने ॥ ८ ॥

मूलः—अह अन्नया कयाइ पासायालोयणट्ठिओ ।
वज्झमण्डणसोभागं वज्झं पासइ वज्झगं ॥ ८ ॥

गाथा ८ भावार्थः—केटलेककाळे अन्यदा प्रासादना गोखने विषे रह्यो थको मारवानां चिह्न (गळे कणेरनी माळा, फुटयो ढोल, बंधने बांधेल विगेरे) सहित चोरने गामनी बहार लइ जाता दीठो ॥ ८ ॥

अर्थः—तं० ते चोरने पा० देखीने सं० वैराग्य उपनो । स० समुद्रपाल इ० इमअ० बोलतो हुवो । अ० आश्चर्य अ० अशुभ क० कर्मनुं । नि० छेहडे पा० अशुभ विपाक इ० ए प्रत्यक्ष भोगवे छे ॥ ९ ॥

पाप आश्रव आववानो ठाम टाल्या । अ० ममता रहित अ० परिग्रह रहित ॥ २१ ॥

मूलः–अरइरइसहे पहीणसंथवे विरए आयहिए पहाणवं ।
परमट्ठपएहिं चिट्ठई छिन्नसोए अममे अकिंचणे ॥२१॥

गाथा २१ भावार्थः–असंयमने विषे रती (खुशी) ने संयमने विषे अरती (दीलगीरी) ने ग्रहस्थना परिचय रहित उत्तम संयमवंत पोताना आत्मानो हेतवंत थको आश्रवथी निवृती शोक ममता ने परिग्रहनी तृष्णाने छेदी ज्ञानादीक परमार्थपदने विषे रहे ॥ २१ ॥

अन्य०

॥ २१ ॥

अर्थः–वि० स्त्रीयादिक रहित ल० उपाश्रय म० सेवता ता० छकायनी रक्षाना करणहार ता० आपणा आत्माने दूरगति पडता राखे नि० यतिने अर्थे ग्रहस्थ उपाश्रय लिपे नहि तेहवो उपाश्रय समुद्रपाल सेवे तथा रागरहित कर्ममेल लागे नहि अ० बीजादिक रहित इ० बीजा यतिए चि० जे दोष रहित उपाश्रय सेव्या म० मोटा यशना धणीए तेहवा उपाश्रय सेवे ते समुद्रपाल यति का० कायाए करी फा० सहे प० परीसहने ॥ २२ ॥

मूलः–विवित्तलयणाइ भएज्ज ताई निरोवलेवाइ असंथडाइं ।
इसीहि चिण्णाइ महायसेहिं कारण फासेज्ज परीसहाइं ॥ २२ ॥

गाथा २२ भावार्थः–आत्मानो तथा छकायनो रक्षक एवो मुनि राग बीज प्रमुखने स्त्रीयादिक रहित

मूलः—जहित्तु सग्गन्थमहाकिलेसं महन्तमोहं कसिणं भयावहं।
पारेयायधम्मं च उभिरोयएज्जा वयाणि सीलाणि परीसहे य ॥ ११ ॥

गाथा ११ भावार्थः—मोटा क्लेशनुं, मोटा मोहनुं ने मोटा भयनुं कारण एवी लक्ष्मीने स्वजनादिकना संबंधने छांडीने मूल गुण पंच महाव्रतने उत्तर गुण बावीस परीसह प्रमुखनुं सहेवुं ने प्रव्रज्या रूप धर्म आदरवाने शीखव्यो ने ते धर्मने सेव्यो ॥ ११ ॥

अर्थः—अ० दया च० वली स० सत्य अ० अदत्तनो त्याग च० वली । न० नेवार पछे। अबं० अब्रह्मचर्य अ० परिग्रहनो त्याग च०वली ॥ प० पडिवजीने प० पांच म० महाव्रत । च०आचरे ध०धर्मश्रुत चारित्ररूप । जि० तिर्थंकरनो दं० उपदेश्यो वि० सिद्धांतनो जाण ॥ १२ ॥

मूलः—अहिंस सच्चं च अतेयणं च तत्तो अबम्भं अपरिग्गहं च ।
पडिवज्जिया पञ्च महव्वयाणि चरिज्ज धम्मं जिणदेसियं विदू ॥ १२ ॥

गाथा १२ भावार्थः—जीवोनी दया, सत्य बोलवुं, अणदीधेलुं न लेवुं, ब्रह्मचर्य पाळवुं, परीग्रह रहित एवो पंच महाव्रत रूपधर्म सर्वज्ञ तिर्थंकरे कहेलो ते श्रुतने चारित्ररूप धर्म आदर्यो ॥ १२ ॥

अर्थः—स० सर्व भू० जीवने विषे द० दयाए करी अ० परजीवने दुख देखीने कंपे पर जीवने हेतनो करणहार ॥ सं० समाएकरी स० सर्व वचन पमे सं० संजति बं० ब्रह्मचारी । सा० पाप जो० व्यापार प० वर्जनोयरो मुनी ॥ च० विचरे भि० साधु गु० भली स० समाधि करी साहित इ० इंद्रि जेहने ॥ १३ ॥

यादिकना व्यापार रहित अयोगी थइ, मोटो संसाररूप समुद्र तरी ज्यां गये फरी संसारमां न आवे एवी मोक्षनी गतीये सभुद्रपाळ मुनि पहोत्यो ? एम सुधर्मास्वामी पोताना जंबु नामना शिष्यने कहेता हवा के हे जंबु ? जेम में श्री महावीरदेव स्वामीनी समीपे सांभळ्युं हतुं तेम में तुज प्रत्ये कयुं ॥ २४ ॥ इतिश्री उत्तराध्य- यनना एकवीसमा अध्ययननो भावार्थ संपुर्ण ॥ २१ ॥ एकवीसमा अध्ययनने विषे स्त्रीयादिक रहित स्थान सेववो कह्यो अने स्त्रीयादिक सहित स्थानक सेवतां रहनेमिने अवगुण उपन्यो ते रहनेमिए जेम धिर्यपणुं कियुं तेम धिर्यपणुं करवुं ते भणी बावीसमा अध्ययनने विषे रहनेमिनो संबंध कहेछे.

अर्थः-सोरि० सोरि पु०पुर नामा न० नगरने विषे । आ० हतो रा०राजा म० मोटो इ० ऋद्धिवंत । व० वसुदेव इ० एहवो ना० नामे रा० राजाने ल० लक्षणेकरी सं० सहित ॥ १ ॥

मूलः-सोरियपुरंमि नयरे आसि राया महिड्ढिए ।
वसुदेवो त्ति नामेणं रायलक्खणसंजुते ॥ १ ॥

गाथा १ भावार्थः-सोरीपुर नामना नगरने विषे राजाना लक्षणे युक्त ने मोटो ऋधीवंत एवो वसुदेव नामे राजा हतो (अहीं युवराजा समजवो.) ॥ १ ॥

अर्थः-त० तेहनी भ० भार्या दु० बे आ० हती रो० रोहिणी अने दे० देवकी त० तेमज । ना० ते दो०बेना दु० बे पु०पुत्र छे । इ० बलभद्र छे रा० बलभद्र रोहिणीनो पुत्र के०कृष्णवासुदेव देवकीनो पुत्र ॥२॥

अध्य० ॥ २२ ॥

न सव्व सव्वत्थ अभिरोयएज्जा न यावि पूयं गरहं च संजए ॥ १५ ॥

गाथा १५ भावार्थ–पोताना कर्मफळ विचारतो संयम पाळे, मिश्र अनियंत्र शब्दादिकने सर्वे, सर्व वस्तु सर्व स्थानके देखी अभिलाष न करे, तेम पोतानी पूजा तथा मात्सरी निंदा थाय तो साधु के जेथी मारां कर्म क्षय थाय, एम न इच्छे ॥ १५ ॥

अर्थः–अ० पण छं० अभिप्राय छे। इ० एह मा० मनुष्यलोकने विषे जे० जे भा० भावथी। सं० तिरीकरने छांदे तत्परति मनर्ने । भि० समुद्रपाल साधु ॥ भ० भय भे० अत्यंत विद्यामणा त० तीहां महाभय पडीवर्ज्या पछे । उ० उपजे भी० अति रौद्र भय । दि० देवता संबंधिया म० मनुष संबंधीया अ० तेम ति० तिर्यंच संबंधीया भयनो परीसह उपजे ते पमे ॥ १६ ॥

मूलः–अणेगछन्दा इह माणवेहिं जे भावओ संपगरेइ भिक्खू ।
भयभेरवा तत्थ उइन्ति भीमा दिव्वा मणुस्सा अदुवा तिरिच्छा ॥ १६ ॥

गाथा १६ भावार्थः–अनेक छंदा एवा मनुष्यना अभिप्रायने जाणीने जे भव्यीव्रतीवंत साधुने अति भयंकर भय उपजे तेवा मनुष्य तिर्यंच अने देव संबंधी उपसर्ग आवे ॥ १६ ॥

अर्थः–प० परीसह दु० दोहिला अ० चालीस। सी० सीदाय ज० जिहां व० घणा का० कायर न० नर मनुष्य ॥ से० ते समुद्रपाल । त० तिहां प० ते उपसर्ग पामे थके न० न व० धीरे भि० साधु। सं० संग्रामने विषे सी० मस्तके नीर लागे इ० जेम ना० हाथी शूर होय ते नासे नहि तेम समुद्रपालमुनी परीसह उपनेथके नासे नहि ॥१७॥

अर्थः–सो० ते ऽरि० अरिष्टनेमि ना० नामा उ०वली । ल०लक्षण साथियादिक स० भलो स्वर कंठ तणे करी सं० सहित अ० एक सहस्रने उपरे आठ । ल० लक्षणनो ध० धरणहार । गो० गोतम गौत्री का० काली छ० शरिरनी खालडी छे ॥ ५ ॥

॥ २२ ॥

मूलः–सो ऽरिट्ठनेमिनामो उ लक्खणस्सरसंजुओ ।
अट्ठसहस्सलक्खणधरो गोयमो कालगच्छवी ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः–ते अरिष्टनेमी सौभ्ये गांभीर्ये गुणादिकना ने स्वस्ती (साथीयो) प्रमुख एक हजार ने आठ उत्तम लक्षणना धरणहार ने जेनुं गौतम गौत्र ने शरीरनो रंग कृष्णवर्णे हतो ॥ ५ ॥

अर्थः–व० वज्रऋषभनाराच सं०संघयण । स० समचउरससंस्थान झ०माछलिना सरखोउ०उदर पेटछे जेहनो त०ते नेमनाथने काजे रा०राजेमति नामे क०कंन्या । भ०भार्यापणे जा०जाचेछे के०कृष्ण वासुदेव ॥६॥

मूलः–वज्जरिसहसंघयणो समचउरंसो झसोयरो ।
तस्स गयमई कन्नं भज्जं जायइ केसवो ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः–वळी वज्र ऋषभ नाराच संघयणने समचउरससंठाणना धणीने मच्छनीपेरे जेनुं सुंदर (रमणीक) उदर (पेट) ते नेमीस्वरनी स्त्री करवाने माटे श्री कृष्णे (उग्रसेन राजानी पुत्री) राजेमती कन्याने याची ॥६॥

अर्थः–भ० हवे सा० ते रा० राजवर क० कन्या सु० सुशीला सती शीलवंती चा० नीची दृष्टि

॥ २२५ ॥

मूलः—पहाय रागं च तहेव दोसं मोहं च भिक्खू सततं वियक्खणो ।
मेरु व्व वाएण अकम्पमाणो परीसहे आयगुत्ते सहेज्जा ॥ १९ ॥

गाथा १९ भावार्थः—निरंतर विचक्षण एसो मुनि राग, द्वेष, मोहने छांडीने जेम वायुथी मेरु पर्वत कम्पायमान न थाय, तेम आत्माने गोपवी सर्वभावोथकी पोताना कृत्यकर्म जाणीने परीसह सहे ॥ १९ ॥

अर्थः—प० इत्यादी भावथी उज्ज्वलता सहित सा० साचो न होय निश्चयता रहित । म० महा मुनी ॥ म० न पा० पामे पु०पुरुष स०निंदा च०चपल न बोले सं०संजमी मुनी म० ते समुद्रपाल उ० सरलभाव । प० परिषहने सं० संजमी । नि० सम्यग्ज्ञान दर्शन चारित्रना म० मोक्ष मार्ग वि० वरनिर्जरा उ० पामे ॥ २० ॥

मूलः—अणुन्नए नावणए महेसी न यावि पूयं गरहं च संजए ।
स उज्जुभावं पडिवज्ज संजए निव्वाणमग्गं विरए उवेइ ॥ २० ॥

गाथा २० भावार्थः—साधु इत्यादी वर्णवेत ने भावथी अभिमानादिकथी उंचो न होय, तेम द्रव्ये इत्यादी अनुवर्तने भावथी पापर सर्वनोवरत न होय, वली पूजाने निंदा संयमी इच्छे नहि, (तेमज गाथा) सरलभाव मुनिए सरल (कपट रहित) भाव अंगीकार करी ने ज्ञान दर्शनादिक निर्वाणरूप मार्ग पामे॥२०॥

अर्थः—प० संजमने विषे अति स० अभंगपणे विषे गी स० ते रही अति रमे गहे । प० रहित गी० गुरुपणा परिणत । वि० आथवी विरती । जा० आत्मा आत्मानो हेतु प० प्रधान संजमवंत प० उत्कृष्टो प० अर्थ ने मोक्ष साधवानो अर्थ ज्ञानादिक प० पर्यालोचे वि० विद्वान छे । वि० छेदा सो० विच्छेदादिक थोड

मूलः—सव्वोसहीहिं ण्हविओ कयकोउयमङ्गलो ।
दिव्वजुयलपरिहितो आभरणेहिं विभूसितो ॥ ९ ॥

गाथा ९ भावार्थः—ते नेमनाथने समस्त औषधीये स्नान करावी गाल प्रमुखे टपकां ते कौतुकने कपाळमां तीलक करी चोखा प्रमुखनुं चोडवुं ते मंगळकारी उत्तम वस्त्र पहेरावी हार प्रमुख आभरण (घरेणां) थी शोभीत कीधो ॥९॥

अर्थः—म० मातो च० वळी गं० गंधहस्ती वा० कृष्णवासुदेवनो जे० वेतालीस लाख हाथीमांहि वडोरो हाथी आ० ते उपरचढतो सो० सोभेछे अ० अधिक सि० मस्तकनेविषे चू० चुडामणी मुगटज० जेम शोभेतेम श्रीनेमनाथ शोभेछे॥१०॥

मूलः—मत्तं च गन्धहत्थिं वासुदेवस्स जेट्ठगं ।
आरूढो सोहए अहियं सिरे चूडामणी जहा ॥ १० ॥

गाथा १० भावार्थः—वासुदेवना वेताळीस लाख हाथी मांही सर्वथी मोटो ए गंध हस्तीना उपरे नेमनाथ वेसवाथी जेम मस्तकने विषे चुडामणी शोभे तेम शोभवा लाग्यो ॥ १० ॥

अर्थः—अ० हवे ऊ० उंचे छ० छत्रेकरी चा० बे पासे चामरे य० करी । सो० शोभनीक दिसे छे ॥ द० जादवने च० समूहे य० करी सो० ते श्री नेमिनाथ स० सर्व प० परिवारे सहित परिवर्या ॥ ११ ॥

मूलः—अह ऊसिएण छत्तेण चामराहि य सोहिए ।
दसारचक्केण य सो सव्वओ परिवारिओ ॥ ११ ॥

अने आचरीने। ध० दसविध यतिधर्मनो सं० समूह। अ० प्रधान ना० केवलज्ञानना ध० धरणहार ज० यशवंत। भो० उद्योत करे छे सू० सूर्य जेम अ० आकाशने विषे तेम ज्ञाने करी उद्योत करे छे ॥ २३ ॥

मूलः—सन्नाणनाणोवगए महेसी अणुत्तरं चरिउं धम्मसंचयं।
अणुत्तरे नाणधरे जसंसी ओभासई सूरिए वन्तलिक्खे ॥ २३ ॥

गाथा २३ भावार्थः—महा यशवंत एवो समुद्रपाळ महा ऋषि ज्ञानने क्रियाने क्षमादिक दश प्रकारना यती धर्मे करी आकाशने विषे जेम सूर्य उद्योत करे तेवुं उत्तम केवळ (संपूर्ण) ज्ञाननो धरणहार थयो ॥२३॥

अर्थः—दु० बेहु प्रकारे शुभ अशुभ प्रकृति। ख० खपावी य० ने पु० पुन्य पा० पाप नि० गति रहित शैलेसी अवस्थाए कायादिकना व्यापार रहित अजोगी केवली स० सर्व कर्मथी वि० मुकाणा त० तरीने सं० संसार समुद्रनी व० परे म० संसाररुपियो मोटो समुद्र स० समुद्रपाल मुनि अ० वली संसारमांहि आवे नहि एहवी ग० गति पहोच्यो त्ति० श्री गुणसुंदरस्वामीए जंबू प्रत्ये कहुं हे जंबू जेम में श्रीमहावीर देव समीपे सांभळ्युं हतुं तेम हुं तुज प्रत्ये वे० कहुं छुं ॥ २४ ॥

मूलः—दुविहं खवेऊण य पुण्णपावं निरङ्गणे सव्वओ विप्पमुक्के।
तरित्ता समुद्दं व महाभवोघं समुद्दपाले अपुणागमं गए॥२४॥ त्ति बेमि ॥

॥ इतिश्री समुद्रपालीयं एकविंशं अध्ययनं सम्मत्तं ॥ २१ ॥

गाथा २४ भावार्थः—घाती, अघाती, पुन्य, पाप एवा बे प्रकारना कर्मक्षय करी शैलेशी अवस्थाए का-

अतिशे घणा दु० दुखी जीवने देखीने ॥ १४ ॥

मूलः—अह सो तत्थ निज्जन्तो दिस्स पाणे भयद्दुए ।
वाडेहिं पञ्जरेहिं च सन्निरुद्धे सुदुक्खिए ॥ १४ ॥

॥ २२ ॥

गाथा १४ भावार्थः—त्यां तोरणे नेमनाथ जातां वाडाने विषे पशुओने पांजराने विषे पंखीयोने रोकी राखेलां अति दुःखीयां ने मर्णना भयथी गभराएलां एवां प्राणीयोने दीठां ॥ १४ ॥

अर्थः—जी० जीवीतव्यनो ऽ० अंत सं० पाम्या छे एहवा जीवने मं० मांसने अर्थे भ० खावा नि० मते । पा० देखीने से० ते श्रीनेमिनाथ म० महा प्रज्ञावंत । सा० सारथीप्रत्ये इ० एहवुं अ० बोलता हुवा ॥१५॥

मूलः—जीवियन्तं तु संपत्ते मंसट्ठा भक्खियव्वए ।
पासित्ता से महापन्ने सारहिं इणमब्बवी ॥ १५ ॥

गाथा १५ भावार्थः—अविवेकी पुरुषोए गौरवने विषे मांस भक्षण करवा वास्ते रोकेला एवा प्राणीयोने मरणना समीप पहोंच्या जोइ महा प्रज्ञावंत नेमनाथ ते सारथी प्रत्ये एम कहेता हवा ॥ १५ ॥

अर्थः—क० केहने अ० अर्थे इ० ए प्रत्यक्ष पा० जीव । ए० ए स० सर्व जीव सु० सुखना वांछक । वा० वाडे प० पांजरे च० वळी । सं० रुंध्याथका य० वळी अ० रहे छे ॥ १६ ॥

मूलः—कस्स अट्ठा इमे पाणा एते सव्वे सुहेसिणो ।
वाडेहिं पञ्जरेहिं च सन्निरुद्धा य अच्छहिं ॥ १६ ॥

तासिं दोण्हं दुवे पुत्ता इट्ठा रामकेसवा ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः–तेने देवकी ने रोहणी एवी बे स्त्रीयो हती, तेमां रोहणीनो (बळभद्र) बळदेव ने देवकीनो कृष्ण वासुदेव एवा बे पुत्रो हता ॥ २ ॥

अर्थः–सो० सोरिपुरनामा न० नगरने विषे । आ० हुंतो रा० राजा म० महर्द्धिक ॥ स० समुद्र-विजय ना० नामे राजा ने । रा० राजाने ल० लक्षणेकरी सं० सहित छे ॥ १ ॥

मूलः–सोरियपुरंमि नयरे आसी राया महिड्ढिए ।
समुद्दविजए नामं रायलक्खणसंजुए ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः–सोरीपुर नामना नगरने विषे राजाना लक्षणे युक्त ने महा ऋद्धीवंत एवो समुद्रवि-जय नामनो राजा हतो ॥ ३ ॥

अर्थः–त० तेहनी भ० भार्या सि० सिवा ना० नामा । ती० तेहनो पु० पुत्र म० महा य० यशवंत भ० भगवंत अ० अरिष्टनेमी सि० वळी । लो० लोकना ना० नाथ द० यतीना ठाकुर ॥ ४ ॥

मूलः–तस्स भज्जा सिवा नाम तीसे पुत्तो महायसो ।
भगवं अरिट्ठनेमि त्ति लोगनाहे दमीसरे ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थः–तेनी सीवा नामनी राणी ने तेनो महायशवंत लोकनो नाथ (धणी) ने यतीनो ठाकोर ने उपशमवंतने इंद्रियोने दमन करनार एवो भगवंत अरिष्टनेमी नामे पुत्र हतो ॥ ४ ॥

मे० मुजने ए० ए जीववान तु० वली नि० कल्याणकारी । प० परलोकने विषे भं० कल्याण नही होय ॥ १९॥

मूलः—जइ मज्झ कारणा एए हम्मन्ति सुबहू जिया ।
न मे एयं तु निस्सेसं परलोगे भविस्सई ॥ १९ ॥

गाथा १९ भावार्थः—जो मारा कारणे ए घणां जीवो हणाशे, तो मुजने परलोके कल्याण नहि थाय ॥१९॥
अर्थः मो० ते श्री नेमिनाथ कुं० कुंडल जु० जुगल ने सु० कंदोरा च० प्रमुख म० महा यशवंत । आ० आभरण य वली स० सर्व मुगट मस्तकनो वरजीने सा० सारथीने प० दीधा ॥ २० ॥

मूल—मो कुण्डलाण जुयलं सुत्तगं च महायसो ।
आभरणाणि य सव्वाणि सारहिस्स पणामए ॥ २० ॥

गाथा २० भावार्थः ते महा यशवंत नेमीनाथे कुंडलनुं जोडुं ने कंदोरा प्रमुख सर्व आभरण सारथीने आपी दीधां ॥२०॥
अर्थः—म० मनमां प परिणाम य० वली क० चारित्र लेवानो कीधो श्रीनेमीनाथे एक वरस लगे दान दीधुं । दे० देवता लोकांतिकादिक य० वली ज० जेम आववानी विधीछे तेम अनुक्रमे स० मनुष्य लोकमां उतर्या । स० सर्व रुद्धि सहित । म० परिवार सहित । नि० दिक्षानो महोत्सव न० ते श्रीनेमीनाथनो का० करवा निमित्ते जे० जे आव्या ॥२१॥

मूलः—मणपरिणामे य कए देवा य जहोइयं समोइण्णा ।
सव्वड्ढीइ सपरिसा निक्खमणं तस्स काउं जे ॥ २१ ॥

गाथा २१ भावार्थः—नेमनाथे मन आणी चारित्र लेवानुं मन कर्युं, तेवारे सर्व ऋद्धिये ने परिवारें

छीनाथा प० वर्णी ने सरखी प० शरिरनुं तेज कांति छे ॥ ७ ॥

मूलः—अह सा रायवरकन्ना सुसीला चारुपेहणी ।
सव्वलक्खणसंपन्ना विज्जुसोयामणिप्पभा ॥ ७ ॥

गाथा ७ भावार्थः—ते राजेमती कन्या ते भली (नीची) दृष्टीयादिक, दुष्ट स्त्रीयोना दोष रहित ते शिवक (प्रथमवर्ष) प्रमुख सदा आचारनी पालनारी ते सर्व स्त्रीनां लक्षणे युक्त ते जेनां शरीरनी प्रभा स्त्री-दामीनी वर्णीने विजळीनीपेरे उद्योतकारी हती ॥ ७ ॥

अर्थः—अ० हवे आ० बोल्यो ज० पिता नी० ते राजेमतिनो । वा० वासुदेव प० महर्द्धिक अते । इ० इहां जो ग० आवे कु० कुमार जा० जो से० ते कं० कन्या द० देउ । इं० हुं ॥ ८ ॥

मूलः—अहाह जणओ तीसे वासुदेव महिड्ढियं ।
इहागच्छऊ कुमरो जा से कन्नं दलामहं ॥ ८ ॥

गाथा ८ भावार्थः—राजेमतीनी मागणी करवायी ते कन्यानो पिता उग्रसेन राजा कहेतो हवो के जो मोटी ऋद्धीवंत वासुदेव तथा कुमार नेमनाथ अहिं आवे तो तेने कन्या आपुं. ॥ ८ ॥

अर्थः—अ० सर्व उ० ऋद्धि वृद्धि जय विजय आदरी करी प० महेरान्यो क० किधा को० कौतुक म० ठो प्रमुख मस्तकमांहि मुकीने मंगल कीधा दि० प्रधान जु० वस्त्र प० पहेर्या आ० हारादिक आभरणेकरी वि० विभूषीत कीधा श्री नेमनाथ ॥ ९ ॥

वरदत्त, ए सर्व मळी एक हजार पुरुष संघाते, चित्रा नक्षत्रे ते नेमीनाथप्रभू घरथी नीकल्या ॥ २३ ॥

अर्थः–अ० हवे सीवीकाथी उतर्या पछे से० ते श्री नेमनाथ सु० सुगंध ग० गंधे करी। तु० सीघ्र म० सुकुमाल कुं० खीटलीने आकारे वांका वल्याछे केस ते। स० आपणे हाथे करी लु० लोच करेछे के० केसनुं। पं० पांच मु० मुष्टि करी श्री नेमनाथे लोच करी दिक्षा लीधी स० समाधिवंत प्रज्ञाए ॥ २४ ॥

मूलः–अह से सुगन्धगन्धिए तुरियं मउकुञ्चिए ।
सयमेव लुञ्चई केसे पञ्चमुट्ठीहिं समाहिओ ॥ २४ ॥

गाथा २४ भावार्थः–हवे नेमनाथप्रभु शीवीकाथी उतर्या पछीजे सुगंधेकरी सहित अने सुकोमलने खीटलीने खींतिने आकारे वांकावलेला एवा केशनुं पोताने हाथेज सीघ्रपणे पंचमुष्टीये लुंचन (लोच) करी समाधीवंतथका दीक्षा लीधी २४

अर्थः–वा० कृष्ण वासुदेव य० एम णं० वळी भ० भणे कहेछे। लु० लोच कीधा भणी लुत्त के० केस जि० जितेंद्रि प्रते । इ० वांछित । म० मनोरथ पहुचवा मोक्षरुप तु० उतावळो। पा० पामज्यो तं० ते द० यतीना ठाकुरनाथ॥ २५॥

मूलः–वासुदेवो य णं भणइ लुत्तकेसं जिइन्दियं ।
इच्छियमणोहरं तुरियं पावेसू तं दमीसरा ॥ २५ ॥

गाथा २५ भावार्थः–लुंचनकेशीने जीतेंद्रीय प्रत्ये कृष्णवासुदेव एम कहेता हवा के ? हे यतीना ठाकुर मोक्ष पहोचवारुप इच्छीत मनोरथ उतावळो पामजे ? ? ? ॥ २५ ॥

अर्थः-च० च्यार प्रकारनी से० सेन्या र० रचवे करी शोभे छे । ज० जेम अनुक्रमे रचि शोभाए तेम रची छे, हाथी तिहां एकेका हाथीनी अणीका १ एम घोडानी अणीका २ । एम रथनी अणीका ३ एम पा यदलना अणीका ४ ॥ तु० वाजिंत्रने सं० शब्देकरी दि० प्रधान शब्देकरी ग० आकाश फु० फरस्यो छे ॥१२॥

मूलः—चउरङ्गिणीए सेनाए रइयाए जहक्कमं ।
तुरियाण सन्निनाएण दिव्वेण गगणंफुसे ॥ १२ ॥

गाथा १२ भावार्थः-हस्ती, घोडा, रथ ने पायक एवी चार प्रकारनी सेन्याने अणगारी अनुक्रमे योग्य रचने स्थापी ने उत्तम वाजिंत्रनी ध्वनी (अवाज) थी आकाश पुर्यो ॥ १२ ॥

अर्थः-ए० एहवी पुर्वोक्त इ० ऋद्धिए करी । जु० शरीरनी कांती उ० उत्तमे य० करी । नि० आपणा पोतानां । भ० भवनथी नि० नीकल्यो । दि० यादवमांहि पु० प्रधान पुरुष श्री नेमीनाथ ॥ १३ ॥

मूलः—एयारिसाए इड्ढीए जुतीए उत्तमाइ य ।
नियगाओ भवणाओ निज्जाओ वण्हिपुङ्गवो ॥ १३ ॥

गाथा १३ भावार्थः-उत्तम शरीरनी कांती ने एवी पुर्वोक्त ऋद्धीये करी उत्तम यादव पोताना भुवन थकी नीकल्यो ॥ १३ ॥

अर्थः-अ० हवे तेवार पछी सो० ते श्री नेमिनाथ न० तिहां नि० जानाथका । दि० देवीने पा० मृगादिक जीवने भ० भयभ्रांत वा० वाडामांहि राखवेकरी पं० पांजरे च० करी । स० अतिशे रुंधया छे मु०

गाथा ३३ भावार्थः-ते राजेमती गीरनार पर्वते जतीयकी वचे वरसादे करी भीजाणी ने वरसाद वरसवाथी अंधकार थयो तेवारे गुफानी मध्ये जइने रही ॥ ३३ ॥

अध्य० ॥ २२ ॥

अर्थः-चीο वस्त्र विο विस्तारेछे मोकळा करेछे सुकवेछे जο जेम जाο जन्मथकी होय त्तिο तेहवी नागी पाο देखीन रο रहनेमी भο भग्नचित्त थयो पο अंधकार हुइ तिहां पहिलु न दिसे ते भणी पछे दिο दीठो यο वळी तीο तेणी साध्वीए विο पण ॥ ३४ ॥

मूलः-चीवराइं विसारन्ति जहा जाय त्ति पासिया ।
रहनमी भग्गचित्तो पच्छा दिट्ठो य तीइ वि ॥ ३४ ॥

गाथा ३४ भावार्थः-ज्यां अंधारुं होय त्यां प्रथम देखाय नहि तेथी त्यां राजेमती वस्त्र मोकळां करी सुकवती हवी, तेवारे नग्न थयते होय तेवी नग्न जोइने रहनेमीनुं भग्न चित्त थयुं ? अने पछीथी साध्वीए त्यां यतीने दीठो ॥३४॥

अर्थः-भीο वीहनी यο वळी साο ते राजेमती तο ते गुफामांहे दο देखीने । एο एकांत स्थानके संο संयत तο ते रहनेमीने देखीने वाο वाहाए भुजाए करी काο कायाने मर्कटवंध स्तन उपरे संο ढांकती । वेο कांपती शिथलना भंगना भयथी निο बेठी राजेमती ॥ ३५ ॥

मूलः-भीया य सा तहिं दट्ठुं एगन्ते संजयं तयं ।
बाहाहिं काउ संगोप्फं वेवमाणी निसीयई ॥ ३५ ॥

॥ २३१ ॥

गाथा १६ भावार्थः—अहो सारथी ! ए विचारा गरीब जीवो सर्व सुखना इच्छीत तेने शुं करवा ए वाडामां तथा पांजरामां विषे रुंधी राखेला छे ॥ १६ ॥

अर्थः-अ० हवे सा० सारथी त० श्रीनेमीनाथ पुछे तेवार पछी भ० कहेछे। ए० ए भ० शोभनीक मृगादिक उ० घणी पा० जीवने। तु० तुम्हारा वि० विवाहना क० कार्यने विषे ॥ भो० जमाडवाने अर्थे व० घणा ज० लोकने ॥१७॥

मूलः—अह सारही तओ भणइ एए भद्दा उ पाणिणो ।
तुज्झं विवाहकज्जंमि भोयावेउं बहुं जणं ॥ १७ ॥

गाथा १७ भावार्थः—तेवारे सारथी कहेतो हवो के ए शोभनीक प्राणीयो तमारा विवाहना कार्यने विषे घणां लोकोने जमाडवाने वास्ते रुंध्यां छे ॥ १७ ॥

अर्थः-सो० सांभलीने त० ते सारथीनो ते श्रीनेमीनाथ व० वचन व० घणा पा० जीवनुं वि० विनाशकारी व० वचन सांभळीने चि० चिंतवे से० ते म० महा प्रज्ञावंत सा० दया सहित जि० जीवने विषे हि० हेतुओ ॥१८॥

मूलः—सोऊण तस्स वयणं बहुपाणिविणासणं ।
चिन्तेइ से महापन्नो साणुक्कोसो जिए हिओ ॥ १८ ॥

गाथा १८ भावार्थः—घणा जीवोनो विनाश रुप सारथीने समीपे वचन सांभळीने ते जीवोनी करुणा सहित महा प्रज्ञावंत चिंतवतो हवो ॥ १८ ॥

अर्थः—ज० जो म० माहरे का० काजे ए० ए । इ० एणे सु० अति व० घणा जि० जीव । न० नहि

दु० दुर्लभछे भु० भुक्तभोगी थइने पु० तेवार प० पछी जि० जिन म० मार्ग च० आपण वे आचरशुं ॥ ३८ ॥

मूलः–एहि ता भुञ्जिमो भोए माणुस्सं खु सुदुल्लहं ।
भुत्तभोगी पुणो पच्छा जिणमग्गं चरिस्समो ॥ ३८ ॥

गाथा ३८ भावार्थः–निश्चे मनुष्यनो भव दुर्लभ छे । माटे तुं आव ? पहेलां आपण वे भोग भोगवीए ! अने पछी भुक्तभोगी थइने वृद्धावस्थाए आपण वे जीनमार्ग आचरीशुं ॥ ३८ ॥

अर्थः–द०देखीने र०रहनेमीने तं०ते भ०भांगो जो० संयमनो व्यापार प० स्त्रीने परीसहे जीत्यो रा०राजेमती अ० असंभ्रांत त्रास रहित हुइ अ० आपणो पोतानो शरिर सं० वस्त्रे करी ढांक्युं तं० ते गुफा मांहि ॥३९॥

मूलः– दट्ठूण रहनेमिं तं भग्गुज्जोयपराजियं ।
राईमई असम्भन्ता अप्पाणं संवरे तहिं ॥ ३९ ॥

गाथा ३९ भावार्थः–स्त्रीने परीसहे जीतेलो ने संयम व्यापारथी भांगेलो एवा रहनेमीने देखीने राजेमती भय अने त्रास रहित थइ अने ते गुफामांही पोतानुं शरीर वस्त्रे करी ढांक्युं ॥ ३९ ॥

अर्थः–अ० हवे तेवार पछी सा० ते रा० राजेमती राजवर क० कन्या ॥ सु० निश्चल नि० अभिग्रह विशेष व्य० मुल गुणने विषे जा० जाति कु० कुल च० वळी सी० शीलने च० वळी र० राखती रक्षा करती थकी त० ते रहनेमी प्रत्ये च० बोलती हवी राजेमती साध्वी ॥ ४० ॥

करी सहित भगवंतनी महीमा करवाने वास्ते लोकांतिक मनुस्य देवता अनुक्रमे मनुष्यलोकें उतर्या ॥ २१ ॥

अर्थः–दे० देवता म० मनुष्य प० परिवर्या । सी० सीवीका र० रतनमाला तेहने विषे त० तेवार पछे स० बेठो । नि० निकलीने बा० द्वारका नगरीथी रे० रेवत पर्वतने विषे ठि० रह्या भ० भगवंत ॥२२॥

मूलः–देवमणुस्सपरिवुडो सीयारयणं तओ समरूढो ।
निक्खमिय बारगाओ रेवयंमि ट्ठिओ भगवं ॥ २२ ॥

गाथा २२ भावार्थः–देवताने मनुष्ये करी परवर्यो थको रत्ननी सीवका (पालखी) ए बेशी द्वारिका नगरीथी नीकळी रेवंत (गीरनार) पर्वते भगवंत नेमीनाथ रह्या ॥ २२ ॥

अर्थः–उ० उद्यानमांहि सं० पहुता गया । ओ० उतर्या उ० उत्तम सी० सीवीका पालखीथी । सा० एक सहस्र राजकुमार सहित । प० परिवर्या ॥ भ० हवे नि० दिक्षा लेवाने भावे घरथी निकल्या उ० थळी । चि० चित्रा नक्षत्रने जोगे चंद्रमा वर्ततो हतो तेवारे ॥ २३ ॥

मूलः–उज्जाणं संपत्तो ओइण्णो उत्तमाउ सीयाओ ।
साहस्सीइ परिवुडो अह निक्खमई उ चित्ताहिं ॥ २३ ॥

गाथा २३ भावार्थः–उद्याने पहोच्यो त्यां देवकृत शीवकाथी उतरीने, श्रीकृष्णजीना आठ पुत्रो, बळदेवजीना ७२ पुत्रो, श्रीकृष्णजीना ५६३ भाइओ, उग्रसेन राजाना आठ पुत्रो, नेमनाथना २८ भाइयो देवसेनप्रमुख १०० ने २१० यादवना पुत्रो, आठ मोटा राजा, एक अक्षोभ, बीजो तेनो पुत्र, ने त्रीजो

दु० दुर्लभछे भु० भुक्तभोगी थइने पु० तेवार प० पछी जि० जिन म० मार्ग च० आपण वे आचरशुं ॥ ३८ ॥

मूलः–एहि ता भुञ्जिमो भोए माणुस्सं खु सुदुल्लहं ।
भुत्तभोगी पुणो पच्छा जिणमग्गं चरिस्समो ॥ ३८ ॥

गाथा ३८ भावार्थः–निश्चे मनुष्यनो भव दुर्लभ छे । माटे तुं आव ? पहेलां आपण वे भोग भोगवीए ? अने पछी भुक्तभोगी थइने वृद्धावस्थाए आपण वे जीनमार्ग आचरीशुं ॥ ३८ ॥

अर्थः–द०देखीने र०रहनेमीने तं०ते भ०भांगो जो० संयमनो व्यापार प० स्त्रीने परीसहे जीत्यो रा०राजेमती अ० असंभ्रांत त्रास रहित हुइ अ० आपणो पोतानो शरिर सं० वस्त्रे करी ढांक्युं तं० ते गुफा मांहि ॥३९॥

मूलः– दट्ठूण रहनेमिं तं भग्गुज्जोयपराजियं ।
राईमई असम्भन्ता अप्पाणं संवरे तहिं ॥ ३९ ॥

गाथा ३९ भावार्थः–स्त्रीने परीसहे जीतेलो ने संयम व्यापारथी भांगेलो एवा रहनेमीने देखीने राजेमती भय अने त्रास रहित थइ अने ते गुफामांही पोतानुं शरीर वस्त्रे करी ढांक्युं ॥ ३९ ॥

अर्थः–अ० हवे तेवार पछी सा० ते रा० राजेमती राजवर क० कन्या ॥ सु० निश्चल नि० अभिग्रह

विशेष व्य० मुल गुणने विषे जा० जाति कु० कुल च० वली सी० शीलने च० वली र० राखती रक्षा करती थकी त० ते रहनेमी प्रत्ये व० बोलती हवी राजेमती माध्वी ॥ ४० ॥

तपाएकरी मु० निर्लोभ करी । व० वृद्धना म० गाना ह गाय पय ४० वस्त्र ॥ २५ ॥

मूलः—नाणेण दंसणेणं च चरित्तेण तहेव य ।
खन्तीए मुत्तीए वड्ढमाणो भवाहि य ॥ २६ ॥

गाथा २६ भावार्थः—ज्ञानेकरी, दर्शनेकरी, चारित्रेकरी, तेमज क्षमायेकरी, निर्लोभताए करी वृद्धीवंत थजे ॥२६॥

अर्थः—ए० एणीपरे ते० ते ग० वसुदेव के० कृष्ण वासुदेव द० दश दसार यादव य० प्रमुख ब० घणा ज० लोक ब० अरिष्टनेमीने वं० वांदिने नमस्कार करीने अ० पाछा वल्या वा० द्वारिका नगरी नगरी भणे आव्या ॥२७॥

मूलः—एवं ते रामकेसवा दसारा य बहू जणा ।
अरिट्ठणेमिं वन्दित्ता अभिगया बारगापुरिं ॥ २७ ॥

गाथा २७ भावार्थः—एणीपरे बलभद्र ने कृष्ण वासुदेव दश दसार प्रमुख यादव तथा घणा लोक अ० रीष्ट नेमीनाथने वांदीने द्वारका नगरीए पाछा आव्या ॥ २७ ॥

अर्थः—सो० सोमजीने ग० राजावर कं० कन्या । प० प्रवर्या लीधी सा० ने जि० जिननी उ० थळी । नी० हास्यरहित ग० वली नि० आनंदरहित हुइ । सो० सोगेकरी उ० वली स० मूर्छागी मूर्छावंत हुइ ॥ २८ ॥

मूलः—सोऊण रायकन्ना पव्वज्जं सा जिणस्स उ ।
नीहासा य निराणन्दा सोगेण उ समुत्थया ॥ २८ ॥

गाथा २८ भावार्थः—नेमीनाथ जीनेंद्र प्रवर्जा लीधी, ते राज वरकन्या (राजेमती कन्या) ए सांभ-

दु० दुर्लभछे भु० भुक्तभोगी थइने पु० तेवार प० पछी जि० जिन म० मार्ग च० आपण वे आचरशुं ॥ ३८ ॥

मूलः–एहि ता भुञ्जिमो भोए माणुस्सं खु सुदुल्लहं ।
भुत्तभोगी पुणो पच्छा जिणमग्गं चरिस्समो ॥ ३८ ॥

गाथा ३८ भावार्थः–निश्चे मनुष्यनो भव दुर्लभ छे । माटे तुं आव ? पहेलां आपण वे भोग भोगवीए ? अने पछी भुक्तभोगी थइने वृद्धावस्थाए आपण वे जीनमार्ग आचरीशुं ॥ ३८ ॥

अर्थः–द०देखीने र०रहनेमीने तं०ते भ०भांगो जो० संयमनो व्यापार प० स्त्रीने परीसहे जीत्यो रा०राजेमती अ० असंभ्रांत त्रास रहित हुइ अ० आपणो पोतानो शरिर सं० वस्त्रे करी ढांक्युं तं० ते गुफा मांहि ॥३९॥

मूलः– दट्ठूण रहनेमिं तं भग्गुज्जोयपराजियं ।
राईमई असम्भन्ता अप्पाणं संवरे तहिं ॥ ३९ ॥

गाथा ३९ भावार्थः–स्त्रीने परीसहे जीतेलो ने संयम व्यापारथी भांगेलो एवा रहनेमीने देखीने राजेमती भय अने त्रास रहित थइ अने ते गुफामांही पोतानुं शरीर वस्त्रे करी ढांक्युं ॥ ३९ ॥

अर्थः–अ० हवे तेवार पछी सा० ते रा० राजेमती राजवर क० कन्या ॥ सु० निश्चल नि० अभिग्रह विशेष व्र० मुल गुणने विषे जा० जाति कु० कुल च० वळी सी० शीलने च० वळी र० राखती रक्षा करती थकी त० ते रहनेमी प्रत्ये व० बोलती हवी राजेमती साध्वी ॥ ४० ॥

...विजयनी भय थकी कांपती ... स्तन उपर थी भुजाये मर्कट बंध करी बेठी ॥ ३५ ॥

अर्थः-अ० इये तेवार पछी । सो० ते वि० वली रा० राजपुत्र रहनेमी । स० समुद्रविजयनो अं० अंगजातक ॥ भी० बीहती प० कांपती राजेमतीने द० देखीने ॥ इ० एवा व० वचनने उ० बोल्यो ॥३६॥

मूलः-अह सो वि रायपुत्तो समुद्दविजयङ्गओ ।
भीयं पवेइयं दट्ठुं इमं वक्कं उदाहरे ॥ ३६ ॥

गाथा ३६ भावार्थः-इये तेवार पछी समुद्रविजयनो अंगजात राजपुत्र रहनेमी राजेमतीने कांपती (धुजती) देखीने एवुं वचन बोल्यो ॥ ३६ ॥

अर्थः-र० रहनेमी अ० हुंए भ० हे कल्याणकारिणी सु० हे रूपवंती चा० मनोहर भा० बोलणहारी म० मुजने भ० तुं भजे सेवे आदरे सु० हे भला शरिरनी धणीयाणी न०न ते० तुजने पी०पीडा भ० होय ॥३७॥

मूलः-रहनेमी अहं भद्दे सुरूवे चारुभासिणि ।
मम भयाहि सुयणु न ते पीला भविस्सई ॥ ३७ ॥

गाथा ३७ भावार्थः-हे भद्रे ! (कल्याणकारीणी) हे रूपवंती ? हे मनोहरनी बोलनारी ? हे भला शरीरनी धणियाणी ? तुं मुजने भज्य ! सेव्य ! आदर्य ? मारूं शरीर पण भलुं छे अने मुज थकी तुं भय मत माने ! ने मारा थकी तने पीडा नहि होय ? ॥ ३७ ॥

अर्थः-ए० आज ता० पहेला सु० आपणे वे भोगवीए भो०भोग मा० मनुष्यपणुं सु० लीधे

[illegible] ॥ ४० ॥

गाथा ४० भावार्थः-देवार पर्वी ने गजवर कन्या राजेमती पुल गुणने अभीग्रहने विषे निश्चल थकी सती गुणने प्रीतकर्नु रथन करवा थकी रहनेमी मले एम बोल्यो ॥ ४० ॥

अर्थः-ज० जो मि० तुं ले व० स्नेहरी वे० वैश्रमण देवना सरिखो । ल० लीलाएकरी न० नल कु० कुबेर देवना जो तुं होय । न० नीरि अ० पण ने० तुजने न० न इ० वांछुं ज० जो मि० तुंले स० सक्रेंद्र पु० शक्रेंद्र ॥४१॥

मूलः—जइ सि रूवेण वेसमणो ललिएण नलकूवरो ।
तहा वि ते न इच्छामि जइ सि सक्खं पुरन्दरो ॥ ४१ ॥

गाथा ४१ भावार्थः-जो तुं रूपे करी धनंद देव होय । अने जो तुं लिलाये करी नल कुबेर देवता होय, अने जो तुं साक्षात शक्रेंद्र होय तो पण तुजने न इच्छुं ॥ ४१ ॥

अर्थः-ध० धंधन करे अ० अग्नी जो० अभिपोरि । धू० धूमाडागरित । दु० दुराश्रय ने० न वांछे । इ० इच्छुं छ० भोगवे । इ० इच्छनेविषे जा० उपन्या ते सर्प । जे० अगंधन कुलना ॥ ४१अ ॥

मूलः—धक्खन्दे जलियं जोइं धूमकेउं दुरासयं ।
नेच्छन्ति वन्तयं भुत्तं कुले जाया अगन्धणे ॥४२॥ [अ]

गाथा ४१अ भावार्थः-अगंधन कुलने विषे उत्पन थयेला ते सर्पो ने इंधाडा सहित एवी भयंकर अग्नीमां विषे प्रवेश करे पण वमन किरु भोगववा नथी ॥ ४१अ ॥

मूलः—कोहं माणं निगिण्हित्ता मायं लोभं च सव्वसो ।
इन्दियाइं वसे काऊ अप्पाणं उवसंहरे ॥ ४५ ॥ [अ]

गाथा ४५ अ भावार्थः—हे रहनेमी ? क्रोध मान माया लोभने जीती पांच इंद्रियोने वश करीनें तारा आत्माने कामभोगथी पाछो वाळ ॥ ४५ अ ॥

अर्थः—ती० ते राजेमतीना सो० ते रहनेमी व० वचन सो० सांभळीने सं० साधवीना वचन । सु० भला भा० भाख्या वचन अ० अंकुशे करी ज० जेम ना० हाथी अंकुशथी आपणे पोताने स्थानके निश्चल होय तेम रहनेमीरुषीओ हाथी विषयरुप उन्मार्गथी राजेमतीरुप मावते । धर्मरुपिया स्थानके आण्यो ध० धर्मनेविषे रहनेमी सं० निश्चल स्थिर रखो ॥ ४६ ॥

मूलः—तीसे सो वयणं सोच्चा संजताए सुभासियं ।
अङ्कुसेण जहा नागो धम्मे संपडिवाइओ ॥ ४६ ॥

गाथा ४६ भावार्थः—ो रहनेमीए राजेमती साध्वीना सुभाषीत वचन सांभळवाथी जेम उन्मत हाथी उवट रस्ते जतो होय तेने महावत अंकुशथी वश करीने स्थंभने विषे बांधे, तेम रहनेमीरुषी उन्मत्त हाथी अने राजेमतीरुप महावतने भगवंतना वचनरुप अंकुशे करीने असंयमरुप उवट मार्ग जतो राखीने धर्मरुपी स्थंभने विषे लावीने बांध्यो ॥४६॥

अर्थः—म० मनगुप्त व० वचन गु० गुप्त । का० कायगुप्त जि० जितेंद्रि हुओ । सा० चारित्रने विषे
जि० जितात्मानो रा० राजेंद्र ते । ती० जावजीव लगे दृ० दृढ व० व्रति हुओ रहनेमी मुनिश्वर ॥४७॥

जाइ कुल च माल च रक्खमाणा तयं वए ॥ ४० ॥

गाथा ४० भावार्थः-नेसार पडी ने गमवर कन्या राजेमती मुख गुणने अभीग्रहने विषे निश्चल थती जाती कुलने डीघलुं रक्षण करती थकी रहनेमी प्रते एम बोली ॥ ४० ॥

अन्वयः-न० जो सि० तुं छे रू० रूपेकरी वे० वैश्रमण देवता सरिखो । ल०लीलाएकरी न०नल कू०कुबेर देवता जो तुं होय । त०तोपि अ० पण ते० तुजने न० न इ० वांछुं ज०जो सि० तुं छे स० शक्रेन्द्र पु० पुरंदर ॥४१॥

मूलः-जइ सि रूवेण वेसमणो ललिएण नलकूवरो ।
तहा वि ते न इच्छामि जइ सि सक्खं पुरन्दरो ॥ ४१ ॥

गाथा ४१ भावार्थः-जो तुं रूपे करी धनद देव होय ! अने जो तुं विलासे करी नल कुबेर देवता होय, अने जो तुं साक्षात शक्रेन्द्र होय तो पण तुजने न इच्छुं ॥ ४१ ॥

अर्थः-ध० धूंवा करे ज० जलती जो० अग्निमांहि । धू० धूमाडासहित । दु० दुराश्रय ने० न वांछे । व० वमन अ० भोगने । कु० कुलनेविषे जा० उपन्या ते सर्प । अ० अगंधन कुलना ॥ ४१अ ॥

मूलः-धक्खन्दे जलियं जोइं धूमकेउं दुरासयं ।
नेच्छन्ति वन्तयं भुत्तुं कुले जाया अगन्धणे ॥४१॥ [अ]

गाथा ४१अ भावार्थः-अगंधन कुलने विषे उपन्न थयेला जे सर्पो ते धुंवाडा सहित एवी भयंकर जाज्वल्यमान अग्निने विषे प्रवेश करे पण वमन किरा भोगववा नथी ॥ ४१अ ॥

॥ इति रहनेमिज्जं द्वाविंशं अध्ययनं सम्मत्तं ॥ २२ ॥

गाथा ४९ भावार्थः–रहनेमीए जेम विषयनी वांछा निवर्तावी पुरुषमांही उत्तम पुरुष थया तेम जे बुद्धिवंत तत्वने शासना जाण होय, ते विषयथी मन निवर्तावे ॥ ४९ ॥ एम सुधर्मस्वामी पोताना जंबू नामना शिष्यने कहेता हवा के हे जंबू ! जेम में श्री महावीरदेवस्वामीनी समीपे सांभळ्युं हतुं तेम में तुंज प्रत्ये कर्युं. इतिश्री रहनेमीनुं बावीसमुं अध्ययन संपूर्ण थयुं ॥२२॥ बावीशमा अध्ययनने विषे जेम रहनेमीए धैर्यपणुं धारण कर्युं, तेम बीजाए पण धैर्यपणुं धारण करवुं, ते धैर्यपणुं तो संशय टाळवाथी थाय, ते माटे २३ मां अध्ययनने विषे केशी गौतमे शिष्योना संशय टाळ्या ते उदाहरण कहे छे.

अर्थः–जि० रागद्वेष जीत्या भणी जिन पा० पार्श्वनाथ इ० एहवो ना० नाम छे जेहनो । अ० शक्रेंद्रादिकने पुजवा योग्य लो० लोकना पू० पूजनीक सं० तत्वनो जाण अ० आत्माछे जेहनो य० वळी स० सर्व पदार्थना जाण । ध० धर्मरुपिया । ति० तिर्थना करणहार जि० जिन केवली ॥ १ ॥

॥२३५॥

॥ २३ ॥

मूलः–जिणे पासे त्ति नामेण अरहा लोगपूइओ ।
संबुद्धप्पा य सव्वन्नू धम्मतित्थयरे जिणे ॥ १ ॥

गाथा १ भावार्थः–जेनो आत्मा सर्व पदार्थ अने तत्वनो जाणने कर्मरुपीया वैरीने जीतनार धर्मरुपि पा तीर्थना करनार ने लोकना पुजनीकने रागद्वेषना जीतनार पण सर्वज्ञ पार्श्वनाथ नामे अरिहंत ॥ १ ॥

॥२३६॥

जाइ कुलं च माल च रक्खमाणा तयं वए ॥ ४० ॥

गाथा ४० भावार्थः-नेवार पछी ते राजवर कन्या राजेमती मुळ गुणने अभीपहने विषे निश्चल थकी जाती कुळने शीयळनुं रक्षण करती थकी रहनेमी प्रत्ये एम बोली ॥ ४० ॥

अर्थः-ज० जो सि० तुं छे रू० रूपेकरी वे० वैश्रमण देवता सरिसो । ल०लीलाएकरी न०नल कू०कुबेर देवता जो तुं होय । त०तोहि अ० पण ते० तुजने न० न इ० वांछुं ज०जो सि० तुं छे स० प्रत्यक्ष पु० शक्रेंद्र ॥४१॥

मूलः-जइ सि रूवेण वेसमणो ललिएण नलकूवरो ।
तहा वि ते न इच्छामि जइ सि सक्खं पुरन्दरो ॥ ४१ ॥

गाथा ४१ भावार्थः-जो तुं रूपे करी धनंद देव होय ! अने जो तुं लिलाये करी नळ कुबेर देवता होय, अने जो तुं प्रत्यक्ष शक्रेंद्र होय तो पण तुजने न इच्छुं ॥ ४१ ॥

अर्थः-प० प्रक्षेप करे ज० बलती जो० अग्निमांहि । धू० धूमाडासहित । दु० दुरासया ने० न वांछे । व० वम्युं भु० भोगने । कु० कुलनेविषे जा० उपन्या जे सर्प । अं० अगंधन कुलना ॥ ४१अ ॥

मूलः-पक्खन्दे जलियं जोइं धूमकेउं दुरासयं ।
नेच्छन्ति वन्तयं भुत्तं कुले जाया अगन्धणे ॥४१॥ [अ]

गाथा ४१अ भावार्थः-अगंधन कुळने विषे उत्पन थयेला जे सर्पो ते धुंवाडा सहित एवी भयंकर जाज्वल्यमान अग्निने विषे प्रवेश करे पण वम्युं विष भोगववा नवांछे ॥ ४१अ ॥

गाथा ४ भावार्थः–ते सावत्थि नगरिये तिंदुक नाम उद्यानने विषे जीवरहित उपाश्रयने तृणादिकनो संथारो त्यां वासो रह्या ॥ ४ ॥

अर्थः–अ० हवे ते० तेणेज का० कालनेविषे ध० धर्मरुपिया ति० तिर्थना करणहारा जि० रागादिक जीत्या ते भणी जिन वीतराग भ० भगवंत व० वर्धमान इ० एहवुं नाम स० सर्व लो० लोक मांहि वि० प्रसिद्ध छे ॥ ५ ॥

मूलः–अह तेणेव कालेणं धम्मतित्थयरे जिणे।
भगवं वद्धमाणो त्ति सव्वलोगम्मि विस्सुए ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः–हवे तेज काळने विषे धर्मरुप तिर्थना करनार ने राग द्वेषने जीतनार ने सर्व लोक मांही प्रसिद्ध एवा भगवंत वर्द्धमानस्वामी ॥ ५ ॥

अर्थः–त० तेहनो लो० सर्व वस्तु अलोकादिकने प० दिवानी परे प्रकासना करणहारनो आ० हुओ सी० शिष्य म० महा यसवंत भ० भगवंत गो० गौतम ना० इंद्रभूति नामे वि० ज्ञान अने च० चारित्रना पा० पारगामी ॥६॥

मूलः–तस्स लोगपईवस्स आसि सीसे महायसे।
भगवं गोयमे नामं विज्जाचरणपारए ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः–लोकालोक सर्व वस्तु दीवानीपरे प्रकाशना करणहार तेवा वर्द्धमान भगवंतनो शिष्य जे ज्ञान ने चारित्रनो पारगामी ने तपस्वी महा यशवंत एवो गौतम नामे साधु हतो ॥ ६ ॥

अर्थः–चा० चार भे० भेदनाछि० जाण मू० छोडया मोक्ष अने तेहना जाण सी० शीष्यना सं० समुदाय तेणे करी स०

समुद्रापत्यना शरीरने वणी रत्ने [illegible] अ० आत्मा भ० थाजे तारो ॥ ४४ ॥

अर्थः—ग० जो ते० तुं [illegible]

मूलः—जाइं तं काहिसि भावं जा जा दिच्छसि नारिओ ।
वायाइद्धो व हडो अट्ठिअप्पा भविस्ससि ॥ ४४ ॥

गाथा ४४ भावार्थः—जे जे स्त्रीयोने तुं देखीश ? त्यां तुं जो कामभोगनी वांछारुप भाव करीश ? तो जेम समुद्रने किनारे हड नामा वृक्ष पवने हलाव्युं थकुं उखडीने समुद्रमां हेराफेरा थाय ? तेम तुं अस्थीर आत्मावंत थइश ॥ ४४ ॥

अर्थः—गो० जेम गोवाल लाकडीनो धणी पण गायनो धणी नहीं भं० भंडारी वा० वळी न० जेम न० ने द्र० द्रव्य अ० न होय धणी ठाकोर ए० एणीपरे अ० धणी नहीं तं० तु पि० पण सा० चारित्रनो धणी नही विषयना अभिलाषी चारित्रना फलनो विभागी भ० तुं होय नही ॥ ४५ ॥

मूलः—गोवालो भण्डवालो वा जहा तद्दव्वणिस्सरो ।
एवं अणिस्सरो तं पि सामण्णस्स भविस्ससि ॥ ४५ ॥

गाथा ४५ भावार्थः—जेम गोवाळीयो लाकडीनो धणी पण गायोनो धणी नहि, वळी जेम भंडारी वर्णीयोनो धणी, पण द्रव्यनो धणी नहि तेम तुं पण विषयाभिलाषी छतो चारित्रनो धणी नहि ॥ ४५ ॥

अर्थः—को० क्रोध मा० मान नि० जीतीने मा० माया लो० लोभने च० वळी स० सर्वथा इ० पांच इन्द्रियोने व० वश का० करीने अ० आपणा आत्माने उ० भोगथी संवरे ॥ ४५अ ॥

गाथा ९ भावार्थः–केशीकुमार श्रमण अने महा यशवंत गौतम ए बन्ने मन वचने कायाए गोपवता ने भली समाधीवंत थका सावर्थिये नगरिये विचरता हवा ॥ ९ ॥

अर्थः–उ० वन्दे केसी गौतमना सी० सीष्यनां सं० समुहे सहितछे सं० ते सीष्य संजतीछे त० ते तपस्वी छे। त० तिहां चि० चिंता विचारणा स० उपनी। गु० गुणवंतने ता० छकायना रपपालने ॥ १० ॥

मूलः–उभओसीससङ्घाणं संजयाणं तवस्सिणं ।
तत्थ चिन्ता समुप्पन्ना गुणवन्ताण ताइणं ॥ १० ॥

गाथा १० भावार्थः–जे गुणवंत छ कायना रक्षपाल ने संयती तपस्वी एवा बंनेना शिष्योना समुदायने त्यां सावर्थि नगरीये संशयरुप चिंता उत्पन्न थइ ॥ १० ॥

अर्थः–के० केहवो वा० वली इ० ए अम्ह संबंधिओ ध० धर्म महाव्रतादिक ॥ इ० ए गौतमना सीष्यनो ध०धर्ममहाव्रतादिक व०वली के०केहवोछे ॥ आ०आचार साधुनो वेस पमुख क्रीया तेहज ध०धर्मने विषे प० रहेवुं इ० ए अम्ह संबंधीं क्रीया वा० वली सा० बीजा यती व० संबंधी के० क्रिया केहवी छे ॥ ११॥

मूलः–केरिसो वा इमो धम्मो इमो धम्मो व केरिसो ।
आयारधम्मपणिही इमा वा सा व केरिसी ॥ ११ ॥

गाथा ११ भावार्थः–केशी ने गौतमना शिष्यो परस्पर कहेता हवा के ए महाव्रतादिकरुप धर्म अमारो केवो ? अने ए महाव्रतादिकरुप धर्म एनो केवो ? वली साधुना आचारने वेश पमुखने विषे रहेवा संबंधी अमारी

क्रिया केवी ? ने एनी क्रीया केवी ? (कारण के आदली बधी भिन्नता केम जणायछे) के जेथी ॥ ११ ॥

मूलः—मणगुत्तो वयगुत्तो कायगुत्तो जिइन्दिओ ।
सामण्णं निच्चलं फासे जावज्जीवं दढव्वओ ॥ ४७ ॥

गाथा ४७ भावार्थः—तेसारे रहनेमी मन गुप्ति वचन गुप्ति काय गुप्तिवंत ने जीतेंद्रिय थयो अने चारित्र निश्चलपणे पाळतां जावजीव लगे दृढ दृत्ती हवो ॥ ४७ ॥

अर्थः—उ० प्रधान त० तप च० आदरीने । जा० थया दो० रहनेमीराजेमती बने वि० बळी के० केवळी । स० सर्व क० कर्म ख० खपावीने । सि० मोक्ष प० पाम्या अ० प्रधान उत्तमगती ॥ ४८ ॥

मूलः—उग्गं तवं चरित्ताणं जाया दोण्णि वि केवली ।
सव्वं कम्मं खवित्ताणं सिद्धिं पत्ता अणुत्तरं ॥ ४८ ॥

गाथा ४८ भावार्थः—प्रधान (उत्तम) तप आचरीने राजेमती ने रहनेमी बंने केवळी थया अने सर्व कर्म खपावीने बंने प्रधान एवी मोक्षगति पाम्या ॥ ४८ ॥

अर्थः—ए० एम क० करे सं० तत्वना जाण होय ते पं० पंडित मुनी । प० बुद्धिवंत प० शास्त्रना जाण होय ते वि० उपनी होय जे विषयनी वांछा ते निवर्तावीने भो० भोगथी ॥ ज० जेम सो० ते रहनेमी पु० पुरुषमांहि उत्तम पुरुष तेणे मन विषयथी निवर्ताव्युं उत्तम होय ते मन निवर्तावे इ० एम बे० हुं कहुंछुं ॥४९॥

मूलः—एवं करन्ति संबुद्धा पण्डिया पवियक्खणा ।
विणियट्टन्ति भोगेसु जहा सो पुरिसोत्तमो ॥ ४९ ॥ त्ति बेमि ॥

(जेवां) अल्प मुल्यवाळां वस्त्र धारवारुप अचेलधर्म कह्यो अने पार्श्वनाथभगवए बहू मुल्य ने मान प्रमाणथी रहित एहवां वस्त्र धारवारुप सअंतरसहित सचेलधर्म कह्यो तो एकज मोक्ष पहोंचवानुं कार्य अंगीकार करीने प्रवर्ते छे तो एटलो विशेष फेर केम! एनुं शुं कारण ? ॥ १३ ॥

अर्थः–अ०हवे ते० ते गोतम केसी त० तिहां सावत्थी नगरीने विषे । सी०सीष्यना मनने विषे वि० जाणीने प० प्रकर्षे वि० वितर्क विचारणा उपनी छे ते जाणीने । स० मळवाने विषे क० किधो प० मतिमन । उ० वन्ने के० केशी गो० गोतम एकठा मळवानी मतिवंत थया वन्ने केसी गौतम ॥ १४ ॥

मूलः–अह ते तत्थ सीसाणं विन्नाय पवितकियं ।
समागमे कयमई उभओ केसिगोयमा ॥ १४ ॥

गाथा १४ भावार्थः–त्यां केशीने गौतमे पोतपोताना शिष्योनो संशयरुप अभिप्राय जाणीने वंने जणाए मळवानो विचार कर्यो ॥ १४ ॥

अर्थः–गो०गोतम प० विनयभक्ति करवाना नू० जाणेछे गौतम । सी० सीष्यनां स० समुह तथा समुदाय तेणे करी । स० परीवर्या जे० श्री महावीर देवथकी श्रीपार्श्वनाथ पहेला हुवा ते भणी वडो कु० कुल श्रीपार्श्वनाथना संतानिया केसीकुमार छे साधु अ०एम जाणता थका । ति०तिदुक व०वने आ०आव्या श्री गोतम॥१५॥

मूलः–गोयमे पडिरूवन्नू सीससङ्घसमाउले ।
जेट्ठं कुलमवेक्खन्तो तिन्दुयं वणमागओ ॥ १५ ॥

शिष्य प० महा य० यशवंत के० केशीकुमार स० श्रमण तपस्वी वि० ज्ञान भने च० चारित्रना पा० पारगामीछे॥ २ ॥

मूलः—तस्स लोगपईवस्स आसि सीसे महायसे ।
केसी कुमारसमणे विज्जाचरणपारगे ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः—लोकालोकनी सर्व वस्तु दीवानी पेरे प्रकाशना करणहार ते पार्श्वनाथ अरिहंतनो शिष्य के जे ज्ञानने चारित्रनो पारगामीने तपस्वी महायशवंत एवो केशीकुमार नामे साधु हतो ॥ २ ॥

अर्थः—ओ० अवधि ना० ज्ञाने करी सु० श्रुतज्ञान ए बे ज्ञानेकरी सु० ज्ञानवंत सी० शिष्यना स० समोह तेणे करी स० सहित परिवर्या गा० ग्रामानुग्राम मत्ये री० विचरतो थको सा० सावत्थी नामा पु० नगरीए आ० आव्याछे ॥ ३ ॥

मूलः—ओहिनाणसुए बुद्धे सीससङ्घसमाउले ।
गामाणुगामं रीयन्ते सावत्थिं पुरमागए ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः—ते केशीकुमार मुनि मतीज्ञान, श्रुतज्ञानने अवधि ज्ञानवंत यणा शिष्योना समुदाये परवर्या थका ग्रामानुं ग्राम प्रत्ये विचरता सावत्थि नगरीए आव्या ॥ ३ ॥

अर्थः—तं० तिंदुक ना० नामा उ० वन उद्यानछे तं० ते सावत्थी न० नगरिने मं० समीपे फा० फासुक जीवरहित सि० उपाश्रयने विषे सं० तृणादिक संथाराने विषे त० तिहां उद्यानने विषे वा० वासोरयाछे उ० आव्या ॥४॥

मूलः—तिन्दुयं नाम उज्जाणं तम्मी नगरमण्डले ।
फासुए सिज्जसंथारे तत्थ वासमुवागए ॥ ४ ॥

ते गौतमने विनयपणे वंदवाने अर्थे आपे ॥१७॥

अर्थः-के० केशी कु० कुमार स० श्रमण। गो० गोतम य० वली म० महा यसवंत। उ०वन्ने नि०वेठाथका सो०सोभे छे। च०चंद्रमा अने सू०सूर्य स०समान सरिखा सोभेछे चंद्रमा सूर्यसरिखी। प्प०प्रभाकांती सरिरनीजेहनीछे॥१८॥

मूलः-केसी कुमारसमणे गोयमे य महायसे ।
उभओ निसण्णा सोहन्ति चन्दसूरसमप्पभा॥ १८ ॥

गाथा १८ भावार्थः-जेओना शरीरनी कांती चंद्रमाने सूर्य सरीखी अने महायशवंत एवा केशीकुमार नामे साधुने गौतमस्वामी ए वंने वेठा थका चंद्रमाने सूर्य सरिखा शोभता हवा ॥ १८॥

अर्थः-स०एकठा मल्याछे व० घणा त० तिहां। पा० पाखंडी-अन्यदर्शनी को० कुतोहली गे० मृग सरिखा पशु अज्ञानपर पाषंडि य० वली गि० गृहस्थना च०वली ऽणे० अनेक सा०,सहस्र स० तिहां आव्याछे ॥१९॥

मूलः-समागया बहू तत्थ पासण्डा कोउगेण य ।
गिहत्थाणं च णेगाओ साहस्सीओ समागया ॥ १९ ॥

गाथा १९ भावार्थः-त्यां कुतुहळ जोवाने माटे मृग सरिखा अज्ञानी पाखंडी एकठा थया तेमज अनेक हजारो गमे ग्रहस्थो पण आव्या ॥ १९ ॥

अर्थः-दे० देवता जोतरा वैमानीक। दा० भवनपती ग० गंधर्व। ज० जक्ष र० राक्षस कि० किंनर प० [illegible] दीसे। अ० अदृश्य दिसे नहि च०वली भू०भुत आ०हूओ त०तिहां स० एकठा मळ्यो ॥२०॥

परिवर्या पक्षा गा० ग्रामानुग्राम मने वि० विचरता थका से० ते वि० पण सा० सावत्थी नगरिये आ० आव्या मुनी ॥७॥

मूलः—चारगट्ठविऊ बुद्धे मीममद्धुममाउले ।
गामाणुगामं रीयन्ते से वि सावत्थिमागए ॥ ७ ॥

गाथा ७ भावार्थः—ते गौतमस्वामी चार ज्ञानना धणे जाणवा छतांवा ते आदरसत्कारयोग्य तेना ज्ञान हता ते पण विनयना करवावाले परवर्या थका ग्रामानुग्राम प्रत्ये विचरता ते पण सावत्थि नगरिये आव्या ॥ ७ ॥

अर्थः—को० कोट्ठग ना० एहवे नामे उ० उद्यानवंत स० ते न० नगरे सावत्थिने मे० सर्वापरे फा० जीवरहित फासुक वि० संथारादि पमुख सं० तृणादिकनो संथारो त० तिहां वा० वासो रहे उ० पाम्या ॥ ८ ॥

मूलः—कोट्ठगं नाम उज्जाणं तम्मी नगरमण्डले ।
फासुए सिज्जसंथारे तत्थ वासमुवागए ॥ ८ ॥

गाथा ८ भावार्थः—ते सावत्थि नगरिये कोष्ठक नामे उद्यानने विषे जीवरहित उद्यानपणे तृणादिकनो संथारो त्यां वासो रह्या ॥ ८ ॥

अर्थः—के० केशी कु० कुमार स० श्रमण नवमी गो० गोत्र य० वली म० महा यशवंत उ० उत्तर वि० पण ना० ते सावत्थी नगरिये विषे वि० विचरता हता अ० मन वचन काया गुप्तिये विषे गुप्तते गु० भली स० समाधि सहितते ॥९॥

मूलः—केसी कुमारसमणे गोयमे य महायसे ।
उभओ वि तत्थ विहरिंसु अल्लीणसुसमाहिया ॥ ९ ॥

गाथा २२ भावार्थः–हवे केशी प्रत्ये गौतम कहेता हवा कै हे भगवंत जेम आपनी इच्छा होय तेम पुछो ? एम गौतमस्वामीए आज्ञा देवाथी ए आगळे कहेशे तेम केशीमुनी गौतम प्रत्ये कहेता हवा (अहीं भगवत शब्दथी केशीने गौतमे बोलाववाथी केशी म्होटा ने गौतम नाना छे एम केटलाक कहेछे तत्वकेवळी गम्य) ॥२२॥

अर्थः–चा० चार महाव्रतरुप इ०ए ध०धर्म जो०जेधर्म इ०ए प०पांच महाव्रतरुप । सि०सिखव्योधर्म ॥ दे०उपदेस्यो व० वर्द्धमानस्वामीए पा० श्री पार्श्वनाथ य०वळी म० महा मु० मुनीए च्यार महाव्रतरुप धर्म उपदेस्यो ॥२३॥

मूलः– चाउज्जामो इमो धम्मो जो इमो पञ्चसिक्खिओ ।
देसिओ वद्धमाणेण पासेण य महामुणी ॥ २३ ॥

गाथा२३ भावार्थः–चार महाव्रतरुप धर्म पार्श्वनाथ भगवंतेकह्यो, अने पंच महाव्रतरुप धर्म श्रीवर्धमानभगवंते कह्यो॥२३॥

अर्थः–ए० गोत्र पोहचवाने उपराजण करवानो एक सरिखो क० कार्य प०पडिवर्ज्याछे तेहने । वि० आचार मांहि विशेष फेर छे किं० किस्यो तु० वळी का० कारण छे एहवी विचारणा उपजे छे । ध० धर्म दु० बे प्रकारे छे मे० बुधीवंत । क० केम वि० विस्मय ते० तुजने न० नथी उपजतो ॥ २४ ॥

मूलः–एगकज्जपवन्नाणं विसेसे किं नु कारणं ।
धम्मे दुविहे मेहावि कहं विप्पच्चओ न ते ॥ २४ ॥

गाथा २४ भावार्थः–बंने एकज मोक्ष पहोंचवानुं कार्य अंगीकार करीने प्रवर्ते छे तो बंनेना जुदा जुदा विवर्ने जुदा जुदा आचारना प्रकारनो विशेष केवडे कारणथी छे ? अने हे मेधाविन् ? ए बे प्रकारना धर्मनेविषे

क्रिया केवी ? ने एनी क्रीया केवी ? (कारण के आटली वधी भिन्नता केम जणायछे) के जेथी ॥ ११ ॥

अर्थः-चा० च्यार जा० महाव्रत य० रुप जो० जे ध० धर्म थी पार्श्वनाथ तिर्थंकरे कह्यो जो० जे इ० ए पं० पांच महाव्रतरुप सि० सिक्षा ते दे० उपदेसीओ धर्म व० वर्द्धमान स्वामीए पा० श्री पार्श्वनाथ य० वली म० महा मु० मुनीश्वरे चार महाव्रतरुप धर्म उपदेश्यो ॥ १२ ॥

मूलः—चाउज्जामो य जो धम्मो जो इमो पञ्चसिक्खिओ ।
देसिओ वद्धमाणेण पासेण य महामुणी ॥ १२ ॥

गाथा १२ भावार्थः-चार महाव्रतरुप धर्म पार्श्वनाथ प्रभुए कह्यो; अने पांच महाव्रतरुप धर्म श्री व-र्द्धमान प्रभुए कह्यो ॥ १२ ॥

अर्थः-अ० सामान्य वस्त्र अथवा मानोपेत वस्त्ररुप अचेलक य०वली । जो० ते ध०धर्म वर्द्धमानस्वामीये उपदे-स्यो । जो०जे इ०ए पार्श्वनाथे उपदेस्यो धर्म ते सं० मूल्यथी मानथी प्रमाणथी अंतरा सहित विसेष सहित । फेर सहित उत्त० बहु मुल्यपणे करी प्रधान वस्त्र छे । ए० एक क० कार्य मोक्ष पोहोचवानो कार्य ॥ प० पडिवज्जिने मानें छे तेने । वि० विसेषे फेर किं० केम छे तु० एहवी विचारणा उपनी का०ए शुं कारण छे ॥१३॥

मूलः—अचेलओ य जो धम्मो जो इमो सन्तरुत्तरो ।
एगकज्जपवन्नाणं विसेसे किं नु कारणं ॥ १३ ॥

गाथा १३ भावार्थः-वली वर्द्धमानस्वामीए मानो पेत (मान प्रमाण सहीत) धोत्रां ने जीर्ण प्राय

भगवंते धर्म कह्यो छे ॥ २६ ॥

अर्थः–पु० पहिला तिर्थंकरना साधुना आचार दु० निरतिचारपणे दोहिलो पाली शके उ०वळी च० चरम तिर्थंकरना साधु दु० आचार दोहिलो पाळी शके क० आचार म० मध्य तिर्थंकरना साधु तु० वळी सु० अतिशे वि० निरतिचारपणे सु० सुखे पा० पाली शके ते भणी मध्य तिर्थंकरना साधुने चार महाव्रत कह्या ते माटे ॥ २७ ॥

मूलः–पुरिमाणं दुव्विसोज्झो उ चरिमाणं दुरणुपालओ ।
कप्पो मज्झिमगाणं तु सुविसोज्झो सुपालओ ॥ २७ ॥

गाथा २७ भावार्थः–प्रथम तिर्थंकरना साधुने निरतिचारपणे धर्म समजतां दोहिलो अने पाळतां सोहिलो अने छेला तिर्थंकरना साधुने धर्म समजतां सोहिलो पण निरतिचारपणे पाळतां दोहीलो अने वचला बावीस तिर्थंकरना साधुने निरतिचारपणे धर्म समजतां पण सोहीलो ने निरतिचारपणे पाळतां पण सोहीलो तेथी छेल्ला ने पहेला तिर्थंकरे पांच महाव्रत रुप धर्म कह्यो अने वचला बावीस तिर्थंकरे चार महाव्रत रुप धर्म कह्यो ॥ २७ ॥

अर्थः–सा० भली गो० हे गौतम । प०प्रज्ञा बुद्धि ते० तमारी । छि० टाल्यो मे० माहरो सं०संदेह । इ० ए पूर्वे कर्यु ते । अ०अनेरा अ० पण । सं०संशय म०माहरो तं०ते मे०मुजने क०कहो गो० हे गौतम ॥ २८॥

मूलः–साहू गोयम पन्ना ते छिन्नो मे संसओ इमो ।

॥ २४१ ॥

॥ २३ ॥

॥ २४१ ॥

गाथा १५ भावार्थः—गौतमस्वामी विनयभक्तिने अवसरना जाण तेथी महावीरस्वामीथी पार्श्वनाथ पहेला थयेल होवाथी केशीस्वामीनुं ज्येष्ठ (वडेरुं) कुळ जाणीने शिष्यना समुदाये परवर्या थका तिंदुकवननेविषे आव्या ॥१५॥

अर्थः—के० केशी कु०कुमार नामा स०श्रमण । गो०गौतमने दि० देखीने आ० आव्या । प० जेहवी सेवा करवायोग्य तेहवी प०सेवाभक्ति । स०अविरीतपणेकरी साचे मने करी सं०सेवा भणति अंगीकार करेछे ॥१६॥

मूल—केसी कुमारसमणे गोयमं दिस्समागयं ।
पडिरूवं पडिवत्तिं सम्मं संपडिवज्जई ॥ १६ ॥

गाथा १६ भावार्थः—गौतमस्वामीने दृष्टिगोचर आवता देखीने केशीकुमार नामे साधुए अविपरीतपणे साचे मनेथी यथायोग्य सेवाभक्ति करी ॥ १६ ॥

अर्थः—प० पराल त्यार पंकारनां पराल । सालिनो १ व्रीहिनो २ । कोद्रवनो ३ रा० रालनी वनस्पतिनो ४ फा० प्रासुक जीवरहित त० तिंदुक वनने विषे पं० पांचमुं कु० डाभ प्रमुख त० अनेरा पण साधु योग्यपणा थ० थळी । गो० गौतमने नि० वेसवाने अर्थे । खि० शिघ्र सं० आपेछे ॥ १७ ॥

मूलः—पलालं फासुयं तत्थ पञ्चमं कुसतणाणि य ।
गोयमस्स निसेज्जाए खिप्पं संपणामए ॥ १७ ॥

गाथा १७ भावार्थः—त्यां प्रासुक (जीवरहित १ शालीनुं २ व्रीहीनुं ३ कोद्रवा (कोदरी) नुं ४ राल नामे वनस्पतीनुं ए चार जातनुं पराळ अने पांचमुं डाभ प्रमुख अने ते सिवाय अनेरा पण साधु योग्य थणा

अर्थः-ए० मोक्ष पहोंचवानी उपराजण करवानुं एक सरिखो, क० कार्य ॥ प० पडिवर्ज्या छे तेहने । वि० विशेष आचारमांहि फेर छे किं० किस्यो का० कारण छे तु० एहवी विचारणा उपजे छे ॥ ध०धर्म दु० बे प्रकारे छे । मे० हे बुद्धिवंत क० केम वि० विस्मय ते० तुजने न० उपजतो नथी ॥ ३० ॥

मूलः-एगकज्जपवन्नाणं विसेसे किं नु कारणं ।
धम्मे दुविहे मेहावी कहं विप्पच्चओ न ते ॥ ३० ॥

गाथा ३० भावार्थः-बंने एकज मोक्ष पहोंचवानुं कार्य अंगीकार करीने प्रवर्तें छे ने बे प्रकारे यतिनो धर्म छे, तो हे बुद्धिवंत ? ए बे प्रकारना धर्मनेविषे तमने केम आश्चर्यपणुं नथी लागतुं ? ॥ ३० ॥

अर्थः-के० केशिए ए० एणे प्रकारे व० बोले छे ते बोलता प्रते तु० वली गो० गौतम इ० ए आगल कहिइये अ० तेम बोलता हवा ॥ वि० विशिष्ट ना० ज्ञान जे केवलज्ञान ते ज्ञानेकरी स० सम्यक प्रकारे साचे प्रकारे जाणीने तिर्थंकरे । ध० धर्म सा० साधवाना धर्म करवाना उपगरण वस्त्रादि इ० राखवा वांछा । साधुने वस्त्रादिक उपगरण राखवानी आज्ञा दिधी छे ॥ ३१ ॥

मूलः-केसिमेवं बयन्तं तु गोयमो इणमब्बवी
विन्नाणेण समागम्म धम्मसाहणमिच्छियं ॥ ३१ ॥

गाथा ३१ भावार्थः-एम केशी बोल्यां ते प्रत्ये गौतम कहेता हवा, विशिष्ट ज्ञान के जे केवलज्ञानेकरी कर्म ने ते जाणिने (पछि तहतीरना निश्चये पांचज ते भद्र तेथी यह मूलमार्गनां नमो चित्त रंज-

मूलः—देवदाणवगन्धव्वा जक्खरक्खसकिन्नरा ।
अदिस्साणं च भूयाणं आसी तत्थ समागमो ॥ २० ॥

गाथा २० भावार्थः—जोतिषीने वैमानिक देवताने भवनपति गंधर्व यक्ष राक्षस ने किंनर प्रमुख व्यंतर ए प्रगट देखाय छे ने अदृश्य एवा भूत ए सर्व आकाशने विषे अदृश्यपणे कौतुक देखवा साठ आव्या ॥२०॥

अर्थः—हवे केशी बोल्या पु० पुछुंछुं हुं ते०तुजने म० हे महाभाग्यवंत। के० केसी गो० गोतम प्रते अ०बोलता हुवा। त० तेवार पछे के० केसी पु०बोलेले ते बोलता तु० प्रते गो०गौतम इ० आगल कहशे तेम अ० बोलता हुवा ॥२१॥

मूलः—पुच्छामि ते महाभाग केसी गोयममब्बवी ।
तओ केसिं बुवन्तं तु गोयमो इणमब्बवी ॥ २१ ॥

गाथा २१ भावार्थः—केशी गौतम प्रत्ये बोलता हवा के हे महा भाग्यवंत ? हुं तमने पुछुंछुं ? ते वारे एवुं केशीनुं वचन सांभळीने आगळ कहीशुं ते प्रमाणे गौतम बोलता हवा ॥ २१ ॥

अर्थः—पु० पुछो तुम्हे भ० हे भगवन ज० जेम इ० इच्छा होय ते पुछो। ते० ते तुम्हारे तेम तुम्हने इच्छा उपने तेम पुछो। के० केसी प्रते गो० गौतम अ० बोलता हवा। त० तेवार पछी के० केसीए अ० गोतमे अनुज्ञा दिधे थके गो० गौतम प्रते इ० ए आगळ केहेशे तेम अ० केसीकुमार बोलता हवा ॥ २२ ॥

मूलः—पुच्छ भन्ते जहिच्छं ते केसी गोयममब्बवी ।
तओ केसी अणुन्नाए गोयमं इणमब्बवी ॥ २२ ॥

अर्थः-अ० हय भ० होय प० प्रतिज्ञा आखडि होय यतिनो वेष होय त्यां लगे एम जाणेछे जे तिर्थ-करे यतिनो आचार जेम कहोछे तेम किजे तो तुं पटतोछे। उ०वळी मो०मोक्षनो स०सदभुत साचो सा०साधन ते। ना० ज्ञान प०वळी अने दं० दरसन चे० वली। च० चारित्र ए त्रण मोक्षना साधन छे नि० निश्चे जेम भरतेश्वरादिकने यतिना वेश विना गृहस्थने वेशे ज्ञान दरशन चारित्रे करी मोक्षनुं साधन होय ॥ ३३ ॥

मूलः-अह भवे पइन्ना उ मोक्खसब्भूयसाहणा।
नाणं च दंसणं चरित्तं चेव निच्छए ॥ ३३ ॥

गाथा ३३ भावार्थः-वळी गौतम कहेता हवा हे केशीकुमार? साधुनो वेष तो अणाचार सेवतां अ-टकावनारुप व्यवहारनये मोक्षनुं साधन छे पण निश्चय नयमां तो ज्ञान दर्शन ने चारित्र ए त्रण मोक्षनां सत्य रुप साधन छे. एवी पार्श्वनाथनी ने महावीरनी प्रतिज्ञामां कांइ भिन्नता (जुदाइ) नथी तथा सरळने मज्ञावंत योग्य अने वक्रने जड योग्य वेश कहेल छे ॥ ३३ ॥

अर्थः-सा० भली गो० हे गौतम ते० तमारी प०प्रज्ञा छे। छि०छेदो टाल्यो इ० ए मे०माहारो सं० संदेह अ० अनेरो वि० पण सं० संदेह म० माहरो तं० ते म० मुजने क० कहो गो० हे गौतम ॥ ३४ ॥

मूलः-साहु गोयम पन्ना ते छिन्नो मे संसओ इमो।
अन्नो वि संसओ मज्झं तं मे कहसु गोयमा ॥ ३४ ॥

भावार्थः-तेवारे केशीस्वामी कहेता हवा के हे गौतम? भली तमारी बुद्धि? के ए मारो

तमने केम आश्चर्यनुं लगी जागतुं ! ! ॥ २४ ॥

अर्थः-न० तेवार पछे के० केमी पु० बोल्ये छे ने बोल्या पछे । तु० वली गो० गौतम इ० एम आगळ कहिशुं तेम अ० बोल्ये छे । प० बुद्धिए करी ग० विचारीने ध० धर्मनुं त० तत्त्व परमार्थ कहयो छे । त० जीवादिक तत्त्वनुं नि० निर्णय निश्चय एम बोल्या छे एहवो विचारीने भगवंते धर्म कयो ॥ २५ ॥

मूलः—नओ केसिं बुवन्तं तु गोयमो इणमब्बवी ।
पन्ना समिक्खए धम्मतत्तं तत्तविणिच्छियं ॥ २५ ॥

गाथा २५ भावार्थः-एम केशीये कयुं, तेवारे ए आगळ करीने तेम गौतम बोल्या हवा के धर्मनो तत्त्व परमार्थ केहवो ? अने जीवादिक तत्त्वनो निश्चय बुद्धिए विचारीने भगवंत एम बोल्या छे ॥ २५ ॥

अर्थः-पु० पहिल्या तिर्थंकरना साधु । उ० साध्व अने ज० जड मूर्ख उ० होय । च० वांका अने ज० मूर्ख प० बली प० छेल्ला तिर्थंकरना साधु एहवा होय म० मध्यम तिर्थंकरना साधु उ० सरळ अने प० प्रज्ञावंत आप उ० होय । ते० तेणे हेतु ध० धर्म दु० बे प्रकारे क० कयो ॥ २६ ॥

मूलः—पुरिमा उज्जुजड्डा उ वक्कजड्डा य पच्छिमा ।
मज्झिमा उज्जुपन्ना उ तेण धम्मे दुहा कए ॥ २६ ॥

गाथा २६ भावार्थः-प्रथम तिर्थंकरना साधु सरळ ने जड (मूर्ख) होय अने छेल्ला तिर्थंकरना साधु वांका ने जड होय अने बचला बावीस तिर्थंकरना साधु सरळ ने प्रज्ञा (बुद्धि) वंत होय तेथी बे प्रकारे

ने पांचने जीतवे दश जीत्या ने दशने जीतवे सर्व शत्रुने हुं जीतुं छुं ॥ ३६ ॥

अर्थः–हवे केशी गौतम प्रत्ये पुछे छे स० वेरी य०वली इ० ए के० क्यावु० कह्या ॥ के० केशी गो० गोतम प्रत्ये एम अ० बोल्या ॥ ए० तेवार पछी के० केशी व०बोले छे ते बोलता प्रत्ये तु० वली गो० गौतम इ० ए आगल कहेशे तेम अ० बोलता हुवा ॥ ३७ ॥

मूलः–सत्तू य इइ के वुत्ते केसी गोयममब्बवी ।
केसिमेवं वयन्तं तु गोयमो इणमब्बवी ॥ ३७ ॥

गाथा ३७ भावार्थः–तेवारे केशी गौतमप्रत्ये कहेता हवा के हे गौतम? ते शत्रु कीया कह्या? एम केशी बोल्या, ते प्रत्ये आगळ कहेशे तेम गौतम कहेता हवा ॥ ३७ ॥

अर्थः–ए० एक अ० आत्मा जीव अ० अण जित्यो स० वैरी सरीखो । क० कषाय ४ । इ० इंद्री पांच नोकषायादिक य०वली ते०ते वेरी समस्तने जि०जीतीने ज० जेम ना० जिन सासननो न्याय तेम न्याये करी । वि० विचरुं छुं अ० हुं मु० हे महा मुनी ॥ ३८ ॥

मूलः–एगप्प अजिए सत्तू कसाया इन्दियाणि य ।
ते जिणित्ता जहानायं विहरामि अहं मुणी ॥ ३८ ॥

गाथा ३८ भावार्थः–मननी दुष्ट प्रवर्तिरूप एक आत्मा अण जितवाथी शत्रु अने कषाय ४ ते १ क्रोध २ मान ३ माया ४ लोभ (ए चार कषायना २६ भेद थाय ते केम अनंतानुबंधी १ क्रोध २ मान ३ माया

अत्रो वि संसओ मज्झं तं मे कहसु गोयमा ॥ २८ ॥

गाथा २८ भावार्थः—त्यारे केशीस्वामी कहेता हवा के हे गौतम ! भली तमारी बुद्धि ? के ए मारो संशय निवारण कर्यो ? पण पूर्वोक्तथी अनेरो पण मुजने संशय छे, तो ते पण तमे मुने कहो. (ए प्रथम प्रश्न थयुं.) ॥ २८ ॥

अर्थः—हवे लिंगद्वार केशी गौतम प्रत्ये कहेछे ॥ अ० मानोपेत धोला वस्त्ररूप ध०धर्म्म । जो० जे अचेल ध०धर्म्म । जो० ते इ०ए पार्श्वनाथना संतानीया सं० मानोपेत त० एकज लांबो वस्त्र हेठे पहेरे उपर ओढे एक बेहुनी गरज सरे । ए मानोपेत वस्त्रनो अर्थ सं० मानोपेत रहित वस्त्रना धरणहार ते भणी अंतर सहित मानोपेत वस्त्रना धरणहार इत० बहु मूल्य वस्त्ररूप धर्म श्रीमहावीर देवना साधुने संघाते अंतर दिसे ते अंतर ॥ दे० अचेल धर्म उपदेश्यो व० श्री वर्द्धमान स्वामीए । पा० श्री पार्श्वनाथ नामे ग० बली म० महा मुनिए मानोपेत रहित बहु मूल्य धर्म उपदेश्यो ॥ २९ ॥

मूलः—अचेलगो य जो धम्मो जो इमो सन्तरुत्तरो ।
देसिओ वद्धमाणेण पासेण य महामुणी ॥ २९ ॥

गाथा २९. भावार्थः—हवे लिंग (वेश) आश्री केशीमुनि गौतमस्वामीने पुछता हवा के हे गौतम ? मानोपेत ने धोळां वस्त्ररूप अचेल धर्म श्री वर्द्धमान भगवंते कह्यो, तेनी संघाते मानोपेतरहित ने बहु मुल्यवाळां वस्त्ररूप धर्म पार्श्वनाथ महामुनिए कह्यो, तेनो केम अंतर जणाय छे ? ॥ २९ ॥

मुक्कपासो लहुभूओ कहं तं विहरसी मुणी ॥ ४० ॥

गाथा ४० भावार्थः–गौतमने केशी पुछता हवा ए लोकनेविषे घणा जीव (बंधने) करी बंधायेल देखाय छे, तो ते बंधनथी रहित वायुनी पेरे लघु (हळवा) भूत अप्रतिबंध थको हे मुनि? तुं केम विचरे छे॥४०॥

अर्थः–हवे केशी प्रत्ये गौतम कहे छे ते० ते पा० पास स० सघलाए छि० छेदीने । नि० अतिशे हं० हणीने उ० उपाय करवाथी अभ्यास करवाथी । पा० पास मु० रहित ल० वायरानीपरे लघुभूत अप्रतिबद्ध थको । केशीप्रत्ये गौतम कहे छे वि० विचरुं छुं अ० हुं मु० हे महामुनी ॥ ४१ ॥

मूलः–ते पासे सव्वसो छित्ता निहन्तूण उवायओ ।
मुक्कपासो लहुभूओ विहरामि अहं मुणी ॥ ४१ ॥

गाथा ४१ भावार्थः–केशीप्रत्ये गौतम कहेता हवा उपाये करीने ते बंधन छेदीने पास [बंधन] रहित वायुनीपेरे लघु भूत अप्रतिबंध थको हे मुनि हुं विचरु छुं ॥ ४१ ॥

अर्थः–हवे केशी पुछे छे पा० पास य० वळी इ० ए के० क्यो वु० कह्यो । के० केशी गो० गौतम प्रत्ये अ० बोलता हवा ॥ ए० तेवार पछे के० केशी व० बोले छे तु० ते बोलता प्रत्ये । गो० गौतम इ० आगल कहेशे तेम अ० बोलता हवा ॥ ४२ ॥

मूलः–पासा य इइ के वुत्ता केसी गोयममब्बवी ।
केणमेते तव्वन्ते न गोयमो इणमब्बवी ॥ ४२ ॥

गाथा ४२ भावार्थः–तेवारे केशी गौतम प्रत्ये कहेता हवा के हे गौतम ? ते बंधन कोणे ? एम केशी

नादिक प्रवर्ति निवारवाने अर्थे अने पार्श्वनाथना शिष्यो सरळ अने बुद्धिवंत तथा शरीर आच्छादन (ढांकवु) मात्र प्रयोजन जाणी किंचित् मात्रपण कदाग्रह न करे, एम ए सरळ ने प्रज्ञावंत होवाथी योग्य वस्त्रोने ए वोक्रा ने जडने योग्य वस्त्रो) ते तिर्थंकरे जाणीने धर्म साधवानां ने धर्म करवानां ए वस्त्रादिक धर्मोपकरण राखवां इछ्यां ने ते राखवानी पण आज्ञा दीधी ॥ ३१ ॥

अर्थः-प० यतिनो वेष ते ए यति छे एहवी प्रतिपत्ति च० अर्थे लो०लोकने विषे । ना०नानाविध प्रकारना उपगरण वस्त्रादिकनुं वि० मानोपेत प्रमुख विधिना उपगरणनुं करवुं । ज० संयम यात्रा निर्वाह करवाने अर्थे वस्त्रादिक उपगरण राखवानी आज्ञा तिर्थंकरे साधुने दिधी । ग० ज्ञानने अर्थे वस्त्रादिक ॥ उपगरण राखवा जो यतीनो वेश होय तो एहनो ज्ञान । आवे जे यतिने वेशे मुजने । अणाचार न करवो च० ते भणी लो० लोकने विषे लिं० यतिनो वेष धरवानो प्र० प्रयोजन छे ॥ ३२ ॥

मूलः-पव्वयत्थं च लोगस्स नाणाविहविगप्पणं ।
जत्तत्थं गहणत्थं च लोगे लिङ्गपओयणं ॥ ३२ ॥

गाथा ३२ भावार्थः-वळी यतिनो वेश होय तो लोकने प्रतित उपजे तेने अर्थे घणा प्रकारना वस्त्रादिक उपकरणनो विचार करवो अने कदाचित संयमथी चित्त विपरीत प्रवर्ते ने जो यतिनो वेश होय तो आवा यतिने वेशे मारे अनाचार न करवो एम ज्ञान उपजवाने तेमज संयम निर्वाहने अर्थे लोकने विषे यतिनो वेश धारण करवानुं प्रयोजन छे ॥ ३२ ॥

गाथा ४४ भावार्थः-तेवारे केशी कहेता हवा के हे गौतम ? भली तमारी बुद्धि ? के ए मारो संशय निवारण कर्यो, पण पुर्वोक्तथी अनेरो पण मुजने संशयछे, तो ते पण तमे मुजने कहो, (ए चोथुं प्रश्न थयुं) ॥४४॥

अर्थः-अथ केशी गौतम प्रत्ये तृष्णा रुपणी वेलनो पांचमोद्धार पुछेछे० अ० मध्य हि० हैयाने मध्य सं० उपनी । ल० वेली चि० तिष्टे गो० हे गोतम । फ० ते वेली फळे छे चि० विष भ० सरिखा फल छे । सा० ते वेलीने उ० तुमे उ० उधरि क० केणे प्रकारे ॥ ४५ ॥

अध्य० ॥ २३ ॥

मूलः-अन्तोहिययसंभूया लया चिट्ठइ गोयमा ।
फलेइ विसभक्खाणि सा उ उद्धरिया कहं ॥ ४५ ॥

गाथा ४५ भावार्थः-हवे केशी गौतम प्रत्ये कहेता हवा के हे गौतम ? हृदय मध्ये उपनी एक वेलडी रहे छे अने ते वेलीने विष सरिखां फळ लागे छे, ते वेली तेम शी रीते उपाडी नांखी ॥ ४५ ॥

अर्थः-हवे केशीप्रत्ये गौतम कहे छे । तं० ते ल० वेली स० सघळी छि० छेदिने उ० उधरीने उपाडीने । स० मूळ सहित ॥ वि० विचरुं छुं ज० जेम ना० जिनसासननुं न्याय छे तेम । मु० मुकाणो छुं हुं वि० विष भ० भक्षवाथी ॥ ४६ ॥

मूलः-तं लयं सबसो छित्ता उद्धरित्ता समूलियं ।
विहरामि जहानायं मुक्को मि विसभक्खणं ॥ ४६ ॥

संशय निवारण कर्यो, पण पुर्वोक्तथी अनेरो पण मने संशयछे तो ते पण तमे मुने कहो. (ए बीजु प्रश्न थयु) ॥३४॥

अर्थः-हे गोतम अत्ये केशी पुछे छे। हे वैरी जीतवानो द्वार केशी गोतम अत्ये पुछे छे ॥ अ० पण वैरीना स० सरम छे ॥ म० मारे नि० निष्टे छे गो० हे गोतम ते० ते वैरी य०वली ते० तुमने भं० सन्मुख ग० आवे छे ताप छे जीतवा तुम्हने ॥ क० केणे प्रकारे ते०ते वैरीने नि० जिता तु० तमे ॥३५॥

मूलः-अेगागाणं महस्साणं मज्झे चिट्ठसि गोयमा ।
ते य ते अभिगच्छन्ति कहं ते निज्जिया तुमे ॥ ३५ ॥

गाथा ३५ भावार्थः-केशीमुनि कहेता हवा के हे गौतम ? तुं अनेक हजारो वैरीना मध्ये रहे छे ने ते वैरी तने जितवाने सन्मुख आवे छे, तो तेवा वैरीने तमे केवी रीते जीत्यो. ॥ ३५ ॥

अर्थः-केशी अत्ये गोतम कहेछे ए०एक आत्मा जि०जिते शत्रु जि०जीत्या पं०पांच एक आत्मा जीव अने दश कषाय ए पांच पं०पांच जि०जीत्या जि०जिता द०दश ते एक आत्मा ४ कषाय पांच इंद्रि ए ॥१०॥ द० दश प्रकारे उ०वली तेणे वैरीने जि०जीतीने स० सर्व वैरी आत्मा कषाय ४ इंद्रि ॥ नोकषायादिक सर्व वैरीने जि० जीतुं छे अ० हुं ॥ ३६ ॥

मूलः-एगे जिए जिया पंच पंच जिए जिया दस ।
दसहा उ जिणित्ताणं सव्वसत्तू जिणामहं ॥ ३६ ॥

गाथा ३६ । भावार्थः-तेवारे गौतमस्वामी कहेता हवा के हे केशीकुमार ? एकने जीतवे पांच जीत्या

न्याये करीने विचरुंछुं ॥ ४८ ॥

अर्थः–सा० भली गो० हे गोतम प० प्रज्ञा ते० तुम्हारी । छि० छेदो टाल्यो मे० माहरो सं० संदेह इ० ए पुर्वे कह्यो ते । अ०अनेरो वि०पण सं०संदेह म०माहरो तं० ते मे०मुजने क०कहो गो० हे गौतम ॥४९॥ ॥ २३ ॥

मूलः–साहु गोयम पन्ना ते छिन्नो मे संसओ इमो ।
अन्नो वि संसओ मज्झं तं मे कहसु गोयमा ॥ ४९ ॥

गाथा ४९ भावार्थः–ते वारे केशी कहेता हवा के हे गौतम ! भली तमारी बुद्धि के ए मारो संशय निवारण कर्यो पण पुर्वोक्तथी अनेरो पण मुजने संशय छे, तो तेपण तमे मुजने कहो (ए पांचमुं प्रश्न थयुं) ॥४९॥

अर्थः–हवे छठो द्वार केशी पुछे छे सं० सम्यक प्रकारे प० प्रज्वल्यमान घोर रुद्र अ० अग्नी चि० तिष्ठे छे गो० हे गौतम जे० जे अग्नी ड० बाले स० शरीरमांहे रही थकी ॥ क० केणे प्रकारे वि० ते अग्नी ओलवी तु० तमे हे मुनी ॥ ५० ॥

मूलः–संपज्जलिया घोरा अग्गी चिट्ठइ गोयमा ।
जे डहन्ति सरीरत्था कहं विज्झाविया तुमे ॥ ५० ॥

जे डहन्ति शरीरत्था कहं विज्झाविया तुमे ॥ ५० ॥

हृदय मध्ये सम्यक् प्रकारे प्रज्व-

४ लोभ, अप्रत्याख्यानी १ क्रोध २ मान ३ माया ४ लोभ, प्रत्याख्यानी १ क्रोध २ मान ३ माया ४ लोभ, संज्वलनो १ क्रोध २ मान ३ माया ४ लोभ ए १३ भेद जाणवा) ए चार ने एक पुर्वोक्त मळी पांच अने पांच इंद्रियो, ए नव ने एक नोकषाय (तेना नव भेद, १ हास्य २ रती ३ अरती ४ भय ५ शोक ६ दुगंछा ७ स्त्रीवेद ८ पुरुष वेद ९ नपुंसक वेद, ए नव) मळी दश इत्यादिक सर्व शत्रुने जीतीने जेम जैन सासननो न्याय छे तेम न्याये करी हे मुनि ? हूं विचरुं छुं ॥ ३८ ॥

अर्थः-सा० भली हे गो० गोतम प० प्रज्ञा बुद्धि ते० तमारी ॥ छि० टाल्यो मे० माहरो सं० संदेह इ० ए ॥ अ० अनेरो वि० पण सं० संदेह म० माहरो तं० ते मे० मुजने क० कहो गो० हे गौतम ॥ ३९ ॥

मूलः-साहु गोयम पन्ना ते छिन्नो मे संसओ इमो ।
अन्नो वि संसओ मज्झं तं मे कहसु गोयमा ॥ ३९॥

गाथा ३९ भावार्थः-तेवारे केशीस्वामी कहेता हवा के हे गौतम ? भली तमारी बुद्धि ! के ए मारो संशय निवारण कर्यो, पण पुर्वोक्तथी अनेरो पण मुजने संशय छे तो ते पण तमे मुने कहो. (ए प्रश्नुं प्रश्न थयुं) ॥३९॥

अर्थः-हवे चोथो द्वार पासनो केशी पुछे छे । दी० दीसे छे ब० घणा जीव लो० लोकनेविषे ॥ पा० पाशे ब० बांध्या छे स० जीव ॥ मु० पास रहित ल० वायरानीपरे लहुभुत अप्रतिबंध थको । क० केम तं० तुं वि० विचरे छे मु० हे महा मुनिराज ॥ ४० ॥

मूलः-दीसन्ति बहवे लोए पासबद्धा सरीरिणो ।

रूपणी अग्नीने विदारी छे इ० ते । न० न ८० पाले मे० भुजने ॥ ५१ ॥

मूलः—कुसाया अग्गिणो वुत्ता सुयसीलतवो जलं ।
सुयधाराभिहया सन्ता भिन्ना हु न डहन्ति मे ॥ ५२ ॥

गाथा ५२ भावार्थः—हे केशी ! तपने तीखे दर्भो तीक्ष्ण । मेरु सरिस दर्भ । अने जे निर्दोषपणे मोटा मेघथी उपजेली एवी सिद्धांतरूपणी पाणीनी धाराए करीने सींची (छांटी) पछी इयाद शब्दो अर्थ भुजने नथी बाळती ॥ ५२ ॥

अर्थः—सा० भली गो० हे गौतम प० प्रज्ञा ते० तमारी । छि० छेदयो मे० मारुं सं० संशय इ० ए पूर्वे कयो ते । अ० अनेरो वि० पण सं० संशय म० मारो । तं० ते मे० भुजने क० कहो गो० हे गौतम ॥ ५

मूलः—साहु गोयम पन्ना ते छिन्नो मे संसओ इमो ।
अन्नो वि संसओ मज्झं तं मे कहसु गोयमा ॥ ५४ ॥

गाथा ५४ भावार्थः—तेमारे केशी कहेता हवा के हे गौतम ! भली तमारी बुद्धि छे ए मारो संशय निवारण कर्यो, पण पूर्वोक्तथी अनेरो पण भुजने संशय छे ते भुजने कहो ! (ए छट्ठं प्रश्न थयुं) ॥ ५४ ॥

अर्थः—हवे दुष्ट अश्वनुं ज्ञानमुं द्वार गौतम पछे छे अ० ए प्रत्यक्ष सा० साक्षीक भी० रौद्र । इ० दुष्ट अश्व प० गति दिखाने विषे धाय छे दोडे छे । तं० ते दुष्ट अश्वने हे गो० हे गौतम जा० तमे जाणता छो ॥

गाथा ४२ भावार्थः-पछी केशी गौतम प्रत्ये कहेता हवा के हे गौतम ? ते बंधन कीयुं ? एम केशी बोल्या ते प्रत्ये आगळ कहेशे तेम गौतम कहेता हवा ? ॥ ४२ ॥

अर्थः-रा० राग दो० द्वेषादिक आ० आदि शब्दथी मोह परिग्रह नि० तिव्र आकरा गाढा छे। ने० भार्या पुत्रादिक स्नेहरुपीया पा०पास ते भ० ते आसना उपजावणहारछे। ते० ते पास छि०छेदिने ज०जेम। ना० जिनशासननो न्याय छे तेम न्यायेकरी वि० विचरुं छुं ज० जेम पूर्वे यतिए आचार आराध्यो छे तेम हुं आचार आराधतो थको विचरुं छुं ज० जेम क० अनुक्रम ॥ ४३ ॥

मूलः-रागद्दोसादओ तिव्वा नेहपासो भयंकरो।
ते छिन्दित्ता जहानायं विहरामि जहक्कमं ॥ ४३ ॥

गाथा ४३ भावार्थः-राग द्वेष मोह परिग्रहादिकने स्त्री पुत्रादिक उपरे तिव्र [गाढा] स्नेहरुपी (पास) बंधन ते भयने आसना उपजावनार छे, एम जाणीने जेम जैन शासननो न्याय छे, ते न्याये करी जेम पुर्वे यतिए आचार आराध्या छे, तेम हुं आचार आराधतो थको विचरुं छुं ॥ ४३ ॥

अर्थः-सा० भली प० प्रज्ञाछे बुद्धिछे ते०तुमारी हे गो० गौतम छि० टाल्यो मे०माहरो सं०संदेह इ० ए पुर्वे जे कह्यो ते अ० अनेरो वि०पण सं०संदेह म० माहरो तं० ते मे०माहरो क०कहो हे गो०गौतम ॥ ४४ ॥

मूलः-साहु गोयम पन्ना ते छिन्नो मे संसओ इमो।
अन्नो वि संसओ मज्झं तं मे कहसु गोयमा ॥ ४४ ॥

केसिमेवं वयन्तं तु गोयमो इणमब्बवी ॥ ५७ ॥

गाथा ५७ भावार्थः–तेवारे केशी गौतम प्रत्ये कहेता हवा के हे गौतम ? ते घोडो कीयो कणो ? एम केशी बोल्या, ते आगळ कहेशे तेम गौतम कहेता हवा ॥ ५७ ॥

अर्थः–म० मनरुपीयो अश्व सा० साहसीक भी० रौद्र दु० दुष्ट अश्व प० सर्व दिशाने विषे धा० धावेछे दोडे छे । तं० ते दुष्ट अश्वने स० सम्यक तु० प्रकारे नि० ग्रहीने झाली राखुंछुं ध० धर्मनी सि० सिखामणेकरी क० जातीवंत अश्वनीपरे मनरुपीया दुष्ट अश्वने ग्रही राखुं छुं ॥ ५८ ॥

॥२४९॥

मूलः–मणो साहसिओ भीमो दुट्ठासो परिधावई ।
तं सम्मं तु निगिण्हामि धम्मसिक्खाइ कन्थगं ॥५८ ॥

गाथा ५८ भावार्थः–हे केशी ? साहसिक ने रौद्र ने सर्व दिशाने विशे आडोअवळो दोडे छे एवो मनरुपी दुष्ट घोडो के जेने हुं सम्यक प्रकारे धर्मनी शीखामणे करी जातिवंत घोडानीपेरे ग्रही राखुंछुं ॥५८॥

अर्थः–सा० भली गो० हे गौतम ते० तमारी प० प्रज्ञा बुद्धि । छि० टाल्यो मे० माहरो सं० संदेह इ० ए पुर्वे कह्या ते ॥ अ० अनेरो वि० पण सं० संशय म० माहरो तं० ते मे० मुजने क० कहो गो० हे गौतम ॥५९॥

॥२१॥

मूलः–साहु गोयम पन्ना ते छिन्नो मे संसओइमो ।
अन्नो वि संसओ मज्झं तं मे कहसु गोयमा ॥ ५९ ॥

॥२४९॥

अर्थः–तेवारे केशी कहेनाहवा के हे गौतम ? भली तमारी बुद्धि के ए मारो संशय नि-

अर्थः-इम केशी गौतमप्रत्ये पुछे छे ज० वली ग०पछी इ० ए। का० कइ यु० कहा। फ० कह्या गा० गौतम भ०बोलता हुवा पु० नेवार पछी के० केशी व०बोलेछे ने बोलता नु० प्रत्ये। गो० गौतम इ० ए आ-गल कहेवे तेम भ० कहे छे ॥ ४७ ॥

मूलः—अत्था य इइ का वुत्ता केसी गोयममब्बवी।
केसिमेवं बुवन्तं तु गोयमो इणमब्बवी ॥ ४७ ॥

गाथा ४७ भावार्थः-ते वारे गौतम प्रत्ये केशी कहेता हवा के हे गौतम? ते केशी कइ कही? एम केशी बोल्या, ते प्रत्ये भाषण करेवे तेम गौतम कहेता हवा ॥ ४७ ॥

अर्थः-भ० संसारनांहिने त० तृष्णाएवी ल० वेलडी यु० कही। भी० भयंकरणी भयनी देणहारी छे। भी० भयकारिणा फ० फल उ० उदय छे। त० ते वेली उ० उद्धरीने उपाडीने ज० जेम ना० जिनशा-सननो न्याय छे तेम। वि० विचर्ड छुं ज० जेम मु० मुख उपरे तेम ॥ ४८ ॥

मूलः—भवतण्हा लया वुत्ता भीमा भीमफलोदया।
तमुद्धरित्ता जहानायं विहरामि जहासुहं ॥ ४८ ॥

गाथा ४८ भावार्थः-हे मुनि? संसारने विषे तृष्णारूप वेली कही छे ने ते वेली स्वरूप थकी भयनी आपनारी छे ने तेनां भयकारी फलनो उदय छे, ते वेलीने हुं उपाडीने जेम जैनशासनो न्याय छे तेम

तेमज जे कोइ उन्मार्गे प्रवर्त्याछे ते सर्व मार्ग मारा जाण्या प्रवर्ते छे तेथी हुं भला मार्गथी नासतो नथी ॥६१॥

अर्थः–हवे केशी गौतमप्रत्ये पुछेछे। म० मार्ग य० वळी इ० ए के० कया वु० कह्या। के० केशी गो० गौतमप्रते अ० कहे बोल्या। ए० तेवार पछी के० केशी व० बोलता तु० प्रत्ये गो० गौतम इ० एम अ० बोल्या ॥६२॥

मूलः–मग्गे य इइ के वुत्ते केसी गोयममब्ववी ।
केसिमेवं वयन्तं तु गोयमो इणमब्ववी ॥ ॥ ६२ ॥

गाथा ६२ भावार्थः–तेवारे केशी गौतम प्रत्ये कहेता हवा के हे गौतम ? ते मार्ग कीयो कह्यो, एम केशी बोल्या, ते प्रत्ये आगळ कहेशे तेम गौतम कहेता हवा ॥ ६२ ॥

अर्थः–कु० कंपीलादिक मार्गना परुपणहार पा० पाखंडी। स० सघलाए उ० उन्मार्गे प० प्रवर्तेछे स० भलो मार्ग तु० वळी जि० जिन तिर्थंकरनो अ० परुप्यो। ए० ए म० मार्ग पाखंडीना मार्गथकी हि० वळी उ० प्रधान ॥६३॥

मूलः–कुप्पवयणपासण्डी सव्वे उम्मग्गपट्ठिया ।
सम्मग्गं तु जिणक्खायं एस मग्गे हि उत्तमे ॥ ६३ ॥

गाथा ६३ भावार्थः–हे केशी ? कंपीलादिक मार्गना परुपणहार एवा ३६३ पाखंडी ए सर्वे उन्मार्गे प्रवर्त्या छे अने ते पाखंडीना धर्मथी प्रधान (उत्तम) एवो तिर्थंकरनो परुपेलो भलो मार्ग छे ॥ ६३ ॥

अर्थः–सा० भव्यी गो० हे गौतम प० प्रज्ञा ते० तमारी। छि० टाल्यो मे० माहरो सं० संसय इ० ए पुर्वे कह्यो ते अ० अनेरो वि० पण सं० संसय म० माहरो नं० ते मे० मुजने क० कहो गो० हे गौतम ॥ ६४ ॥

पड़ी। गं० गृहांत गा० पाणा अ०ज पाणाणाहा उ०उत्तम पाणा तण उत्तम पाणाए॥ स०सयुध भा०युध। स०निरंतर दे०देहने। मि०पाणीए करी सिंची ओलवी थकी। नो०ने अग्नी य०बळी इ०वाळे नहि मे०मुजने ॥५१॥

मूलः—महामेहप्पसूयाओ गिज्झ वारि जलुत्तमं।
सिंचामि सययं देहं सित्ता नो य डहन्ति मे ॥ ५१ ॥

गाथा ५१ भावार्थः—हवे केशी मत्ये गौतम कहेता हवा के हे केशी? मोटा मेघ (वादळा) थी उपनेलो पाणीनो प्रवाह के जे पाणीमांही उत्तम एवा पाणीए करीने निरंतर हुं सिंचुंछुं के जेणी ने अग्नि मुजने बाळती नथी ॥५१॥

अर्थः—केशी गौतम मत्ये पुछे छे अ०अग्नी य०बळी इ०ए के०कई गु०कही ॥ के०केशी गो०गौतममत्ये अ० बोल्या ॥ ए० तेवारे के० केशी व०बोले छे ते बोल्या तु०मत्ये गो०गौतम इ० एम अ०बोल्या ॥५२॥

मूलः—अग्गी य इइ के वुत्ता केसी गोयममब्बवी।
केसिमेवं बुवन्तं तु गोयमो इणमब्बवी ॥ ५२ ॥

गाथा ५२ भावार्थः—ते वारे केशी गौतम मत्ये कहेता हवा के हे गौतम? ते अग्नी कइ? एम केशी बोल्या, ते आगळ कहेछे, तेम गौतम कहेता हवा ॥ ५२ ॥

अर्थः—क० कषाय अ० अग्नी गु० कही गु० सिद्धांत सी० शीतल त०तपगछीओ ज० पाणी सु० तिर्थंकर ए० मेघ तेथी उपनो सिद्धांत तेहनी धा०धाराए अ०छांया सं०थका। भि०सिद्धांतनी धाराए कषाय

गाथा ६६ भावार्थः–गौतम कहेता हवा के हे केशी ? प्रसंशनिक ने विस्तीर्ण एवो पाणीमांही एक मोटो द्वीप छे के जे द्वीपने विषे मोटा पाणीना वेगनुं आवबुं जबुं नथी ? ॥ ६६ ॥

अर्थः–हवे केसी पुछेछे दी० द्वीप य० वळी इ० ए के० कयो वु० कह्यो के० केसी गो० गौतम प्रते अ० बोल्या ॥ ए० तेवार पछी के० केसी व० बोलेछे ते बोलता तु० प्रते गो० गोतम इ० इम अ० बोल्या ॥६७॥

मूलः–दीवे य इइ के वुत्ते केसी गोयममब्बवी ।
केसिमेवं बयन्तं तु गोयमो इणमब्बवी ॥ ६७ ॥

गाथा ६७ भावार्थः–ते वारे केशी पुछता हवा के हे गौतम ? ते द्वीप कीयो कह्यो, एम केशी बोल्या ते प्रत्ये आगळ कहेता तेम गौतम कहेता हवा ॥६७॥

अर्थः–ज० जरा म० मरणरुपीओपाणी तेहने वे० वेगेकरी । वु० तणाता पा० जीवने ध० धर्मरुपीयो दी० द्वीप प० वाहाणनी पेठाणनीपरे आधारभूत छे य० वळी ग० श्रेय वांछे तेहने गमन करवा योग्य छे स० सरणभूत छे उ० उत्तम छे ॥ ६८ ॥

मूलः–जरामरणगे वेगे वुज्झमाणाण पाणिणं ।
धम्मो दीवो पइट्ठा य गई सरणमुत्तमं ॥ ६८ ॥

गाथा ६८ भावार्थः–हे केशी ? जरा (वृद्धावस्था) मरणरुपी पाणीना वेगे करी तणाता जीवने श्रेय वांछितने आदरवा योग्य वहाणना पेठाणनी पेरे आधारभूत एवो उत्तम धर्मरुपी द्वीप सरणभूत छे ॥६८॥

जंसि गोयम आरूढो कहं तेण न हीरसि ॥ ५५ ॥

गाथा ५५ भावार्थः-ए महा साहसिक रौद्र (भयंकर) ने दमतां दोहीलो ने सर्व दिशामां उनमार्गे दोडे छे, एवा दुष्ट घोडा उपरे तमे चढ्यायका हे गौतम ? ए घोडो तमने उनमार्गे केम नथी लइजतो ॥५५॥

अर्थः-हवे गौतम कहे छे । प० मकर्ने हा० थाको थको उन्मार्गे सन्मुख जातो थको ॥ नि० प्रही रा-ख्योछे सु० सिद्धांत रुपीणी र० । रासे करी स० बांधी राख्योछे दुष्ट अश्व ते भणी । न० न मे० माहरो दुष्ट अश्व । ग० जाय उ० उन्मार्गे । म० भलो मार्ग प० वली प० अंगीकार करे छे ॥ ५६ ॥

मूलः-पहावन्तं निगिण्हामि सुयरस्सीसमाहियं ।
न मे गच्छइ उम्मग्गं मग्गं च पडिवज्जई ॥ ५६ ॥

गाथा ५६ भावार्थः-हवे केशी प्रत्ये गौतम कहेवाहवा के हे केशी ? ते घोडो जेवारे उन्मार्गने विषे दोडे छे तेवारे श्रुत रुपणी रासडीये करी बांधीने हालो राखुंछुं के जेथी ते घोडो मुजने उन्मार्गे लइजतो नथी ने भला मार्गने विषे प्रवर्ते छे ॥ ५६ ॥

अर्थः-हवे केशी गौतम प्रत्ये पुछेछे आ० अथ य० वली इ० ते के० कयो सु० कहो । के० केशी गो० गौतम प्रते भ० बोल्या । ए० तेवार पछे के० केशी व० बोले छते तु० वली गो० गौतम इ० एम भ० कहेछे ॥५७॥

मूलः-आसे य इइ के वुत्ते केसी गोयममब्बवी ।

उ० वळी पा० पार गा० गामीणीक होय ॥ ७१ ॥

मूलः—जा उ अस्साविणी नावा न सा पारस्स गामिणी ।
जा निरस्साविणी नावा सा उ पारस्स गामिणी ॥ ७१ ॥

गाथा ७१ भावार्थः—ते वारे केशी प्रत्ये गौतम कहेता हवा के हे केशी ? जे नावमांही पाणी आवे ते नाव पार पामे नहि, (अर्थात् पाणीमां बुडे) अने जे नावमां पाणी आवतुं न होय, ते नाव न बुडे (अर्थात् नाव पार पामे) ॥ ७१ ॥

अर्थः—हवे केसी पुछेछे ना० नावा य०वळी इ० ए का०कई बु० कही ॥ के० केसी गो० गोतम प्रते । अ० बोल्या ॥ ए० ते वार पछी के० केसी व० बोलता तु० प्रते । गो० गौतम इ० एम अ० बोल्या ॥ ७२ ॥

मूलः—नावा य इइ का वुत्ता केसी गोयममब्बवी ।
केसिमेवं बयन्तं तु गोयमो इणमब्बवी ॥ ७२ ॥

गाथा ७२ भावार्थः—ते वारे केशी कहेता हवा के हे गौतम ते नाव केइ कही, एम केशी बोल्या, ते प्रत्ये आगळ कहेशे तेम गौतम कहेता हवा ॥ ७२ ॥

अर्थः—स०शरीरने आ०कहे तिर्थंकर ना०नावा त्ति० वळी । जा०जीव ते बु०कहीए । ना०नावानो पेडण हार ॥ सं० संसाररुपीयो अ० समुद्र बु० कहीए । जं०जे संसार समुद्र त० तरेछे म०मोक्षना गवेषणहार ॥७३॥

मूलः—सरीरमाहु नाव त्ति जीवो वुच्चइ नाविओ ।

वारण कर्यो ? पण पुर्वोक्तथी अनेरो पण मुजने संशय छे तो ते पण मुजने कहो (ए सातमुं प्रश्न थयुं.) ॥५९॥

अर्थः-हवे कुपंथ नीरा करवानो आठमुं द्वार केवी पुछे छे । कु० कुपंथ ग० पणा छे लो० लोकने विषे जे० जेणे कार्य करी न० भला मार्गथी भ्रष्ट थायछे ज० जीव भ० भला मार्गने विषे क० केम व० वर्त्तनो थको । तं० तुं न० न न० भला मार्गथी केम भ्रष्ट न थया गो० हे गौतम ॥ ६० ॥

मूलः-कुप्पहा बहवो लोए जेहिं नस्सन्ति जन्तुणो ।
अद्धाणे कह वट्टन्ते तं न नस्ससि गोयमा ॥ ६० ॥

गाथा ६० भावार्थः-हे गौतम ? ए लोकमांही पण कुपंथ (मार्ग) छे अने ते कुपंथे करीने जीव भला मार्ग सामुं जोता नथी ने पण जीवोनो नाश करे छे तो तुं भला मार्गने विषे केम वर्त्तें छे ? अने ते कुपंथने विषे तुं केम नथी पडतो ? ॥ ६० ॥

अर्थः-हवे गौतम कहे छे जे० जे प० कोइ एक म० मार्ग भलो ग० जायछे । ते० ते प० कोइ एक उ० उन्मार्गे प० प्रवर्त्ता छे । ते० ते स० सपक्षाए वे० जाण्या प्रवर्त्ते छे म० मुजने । तं० ते भणी न० नथी न० नासतो भला मार्गथकी भ्रष्ट थातो नथी अ० हुं मु० हे मुनी ॥ ६१ ॥

मूलः-जे य मग्गेण गच्छन्ति जे य उम्मग्गपट्ठिया ।
ते सव्वे वेइया मज्झं तं न नस्सामहं मुणी ॥ ६१ ॥

गाथा ६१ भावार्थः-तेवारे केवी गौतम प्रत्ये कहेता हवा, हे मुनि ? जे कोइ भले मार्गे जाय छे

सर्वा जीव पण अंधकारने विषे अंधनी पेरे देखे नहि तो पण जीवो अति रौद्र अंधकारने विषे रहे छे तो समस्त लोकने विषे एवा जीवोने कोण उद्योत करशे ॥ ७५ ॥

अर्थः–हवे गौतम कहेछे उ०उग्गो वि० निर्मल भा० सूर्य । स० सर्व लो० लोकने विषे प० प्रकासनो करणहार ॥ सो० ते सूर्य क० करस्ये उ० उद्योत । स० समस्त लो० लोकने विषे पा० जीवने ॥ ७६ ॥

मूलः–उग्गओ विमलो भाणू सव्वलोयपभंकरो ।
सो करिस्सइ उज्जोयं सव्वलोयंमि पाणिणं ॥ ७६ ॥

गाथा ७६ भावार्थः–ते वारे केशी प्रत्ये गौतम कहेता हवा के हे केशी निर्मळ सूर्य उग्यो ते सर्व लोकने विषे प्रकाशनो करणहार छे तो तेज सूर्य समस्त लोकने विषे जीवोने उद्योत करशे ॥ ७६ ॥

अर्थः–केसी पुछेछे भा० सूर्य ते य०वळी इ० ए के० कयो वु० कह्यो । के० केसी गो० गोतम प्रते एम भ० बोल्या । ए० तेवार पछी के० केसी य०बोलता थका तु० प्रते । गो०गोतम इ० एम अ० बोल्या ॥७७॥

मूलः–भाणू य इइ के वुत्ते केसी गोयममब्बवी ।
केसिमेवं वयन्तं तु गोयमो इणमब्बवी ॥ ७७ ॥

गाथा ७७ भावार्थः–ते वारे केशी कहेता हवा के हे गौतम ? ते सूर्य कीयो कह्यो एम केशी बोल्या, ते प्रत्ये आगळ कहेशे तेम गौतम कहेता हवा ॥ ७७ ॥

अर्थः–हवे गौतम कहेछे उ०उग्गो सं० जेहने क्षय दूभ्यो सं०संसार ते क्षीण संसारी तेम स० सर्व आणे

मूलः—साहु गोयम पन्ना ते छिन्नो मे संसओ इमो ।
अन्नो वि संसओ मज्झं तं मे कहसु गोयमा ॥ ६४ ॥

गाथा ६४ भावार्थः—तेवारे केवी कहेता हवा के हे गौतम ! भली तमारी बुद्धि के ए मारो संशय निवारण कर्यो पण पुर्वोक्तथी अनेरो पण मुजने संशय छे तो ते पण तमे मुजने कहो (ए आउमुं प्रश्न थयुं) ॥६४॥

अर्थः—हवे गौत्र पाणीना द्वार वेग निवारवानो द्वार केवी पुछेछे । म० मोटा उ० पाणीना वे० वेगेकरी । यु० तणाता होय ते पा० प्राणीने । स० सरण ते तणावानों कष्ट निवारवा समर्थ ग० श्रेय वांछे तेहने गमन करवायोग्य प० वाहणनी पइठाणनीपरे आधारभुत य० यळी दी० द्वीप कं० कयो म० मानेछे मु० हे मुनी ॥६५॥

मूलः—महाउदगवेगेण वुज्झमाणाण पाणिणं ।
सरणं गई पइट्ठा य दीवं कं मन्नसी मुणी ॥ ६५ ॥

गाथा ६५ भावार्थः—हवे गौतम स्वामी केवी कहेता हवा हेमुनि ? महा पाणीनावेगे करीने बुडता जीवने ते कष्ट निवारवा समर्थ ने श्रेय वांछित ने त्या जवा योग्य ने वहाणना पैठाणनीपेरे आधारभूत एवो कीयो द्वीप तुं माने छे ॥६५॥

अर्थः—हवे गौतम कहेछे अ० छे ए० एक म० मोटो असंखनीकपणे दी० दीप पा० पाणीमय म० मांहि म० विस्तीर्णपणे मोटो दिसेछे म० मोटो उ० पाणीनो वे० वेगछे तेहनो ग० गमन आवतुं त० ते द्विपने विषे न० नथी ॥ ६६ ॥

मूलः—अत्थि एगो महादीवो वारिमज्झे महालओ ।
महाउदगवेगस्स गई तत्थ न विज्जई ॥ ६६ ॥

खेमं सिवमणाबाहं ठाणं किं मन्नसी मुणी ॥ ८० ॥

गाथा ८० भावार्थः—हवे केशी गौतम प्रत्ये कहेता हवा के हे मुनि ? शारीरीकने मानसिक एवा वे प्रकारना दुःखे करी पीडाता जीवने व्याधिरहित जरा मर्णना उपद्रव रहित तेने स्वभाविकज पीडा रहित एवुं कीयुं स्थानक तुं माने छे ? ॥ ८० ॥

अर्थः—हवे गौतम कहे छे । अ० छे ए० एक धु० नित्य सदायछे ठा० स्थानक छे ॥ लो० लोकने अ० अग्र उपरे छे आ० तिहां चढवुं दु० दोहिलुं छे ते स्थानक पामवुं दोहिलुं छे ॥ ज० जहां न० नथी ज० जरा अने म० मरण । वा० व्याधि वे० वेदना नथी त० तेमज ॥ ८१ ॥

मूलः—अत्थि एगं धुवट्ठाणं लोगग्गंमि दुरारुहं ।
जत्थ नत्थि जरा मच्चू वेयणा वाहिणो तहा ॥ ८१ ॥

गाथा ८१ भावार्थः—तेवारे केशी प्रत्ये गौतम कहेता हवा के हे केशी ? ज्यां चढवुं दोहीलुं एवा लोकाग्रने विषे एक निश्चल स्थानक छे अने तेमज ते स्थानकने विषे जरा मरणने व्याधीनी वेदना नथी ॥८१॥

अर्थः—हवे केसी पुछेछे ठा० स्थानक य० वळी इ० ए के० कयो धु० कयो के० केसी गो० गौतम प्रते अ० बोल्या । ए० तेवार पछी के० केसी व० बोलता तु० प्रते । गो० गौतम इ० एम अ० बोल्या ॥ ८२ ॥

मूलः—ठाणे य इइ के वुत्ते केसी गोयममब्बवी ।
केसिमेवं बुवन्तं तु गोयमो इणमब्बवी ॥ ८२ ॥

गाथा ८२ भावार्थः—तेवारे केशी कहेता हवा के हे गौतम ! ते स्थानक कोंयुं कहुं, एम केशी बोल्या ते प्रत्ये आगळ कहेशे तेम गौतम कहेता हवा ॥ ८२ ॥

अर्थः—सा० भली गो० हे गोतम प० प्रज्ञा ते० तमारी । छि० टाल्यो मे० माहरो सं० संसय इ० ए पूर्वोक्त अ० अनेरो वि० पण सं० संसय म० माहरो नं० ने मे० मुजने क० कहो गो० हे गौतम ॥ ६८ ॥

मूलः—साहु गोयम पन्ना ते छिन्नो मे संसओ इमो ।
अन्नो वि संसओ मज्झं तं मे कहसु गोयमा ॥ ६९ ॥

गाथा ६९ भावार्थः—ते वारे केशी कहेता हवा के हे गौतम ! भली तमारी बुद्धि के मारो संशय निवारण कर्यो, पण पूर्वोक्तथी अनेरो पण मुजने संशय छे तो तेपण तमे मुजने कहो (ए नवमुं प्रश्न थयुं) ॥६९॥

अर्थः—हवे समुद्रनो पार पाम्या आधीदसमो द्वार केशी पुछेछे अ० समुद्रने विषे म० मोटा पाणीना प्रवाहने विषे ॥ ना० नावा वि० विशेष प० सर्वथा प्रकारे धा० धारे छे ॥ जं० जे नावाने विषे गो० हेगोतम आ० तुं चढ्योछे क० केवे प्रकारे पा० समुद्रने पारे ग० तुं जाइश ॥ ७० ॥

मूलः—अण्णवंसि महोहंसि नावा विपरिधावई ।
जंसि गोयममारूढो कहं पारं गमिस्ससि ॥ ७० ॥

गाथा ७० भावार्थः—मोटा समुद्रने विषे घणा पाणीनो प्रवाह छे अने ते मांही एक नाव दोडे छे ते नावने विषे चढ्यो थको हे गौतम ! तुं केवी रीते ए समुद्रनो पार पामे छे ? ? ॥७० ॥

अर्थः—हवे गौतम कहे छे । जा० जे मांही उ० घणी अ० पाणी आवे एहवी ना० नावा ॥ न० नहोय सा० ते नावा पा० पार गा० गामीणी ॥ जा० जे मांहि नि० पाणी आवे नही एहवी ना० नावा । सा० ते

गाथा ८४ भावार्थः–जे पामतां दोहीलुं एवुं लोकाग्रे ते सिद्धस्थानकनो शाश्वतो वास छे के जे भवरुपी ओघ प्रवाहना अंतना करणहार एवा मुनि ते स्थानकने पाम्या थका शोचे नहि ॥ ८४ ॥

अर्थः–सा० भली गो० हे गौतम प० प्रज्ञा बुद्धि ते० तमारी । छि० छेद्यो सं० संसय मे० माहरो इ० ए । न० नमस्कार थाओ ते० तमने सं० संसय टालवा भणी ॥ स० सर्व सु० सुत्रना म० मोटा अ० समुद्र सर्व सुत्रना पारगामी गौतम प्रते ॥ ८५ ॥

मूलः–साहु गोयम पन्ना ते छिन्नो मे संसओ इमो ।
नमो ते संसयातीत सवसुत्तमहोयही ॥ ८५ ॥

गाथा ८५ भावार्थः–तेवारे केशी कहेता हवा के हे गौतम ! भली तमारी बुद्धि के ए पूर्वोक्त मारो संशय निवारण कर्यो तेथी हे संशय रहित मोटा समुद्र सरीखा सर्वे सिद्धांतना पारगामी तुझने नमस्कारहो ॥८५॥

अर्थः–हवे सुत्रना कर णहारा श्री सुधर्मास्वामी कहेछे । ए० एणी तु० परे सं० संदेह छि० टाले थके । के० केसी घो० घोर रौद्र कर्म वेरीप्रते प० पराक्रमना करणहार । अ० वांदिने सि० मस्तके करीने । गो० गौतमने तु० वली म० मोटा य० जसवंतने ॥ ८६ ॥

मूलः–एवं तु संसए छिन्ने केसी घोरपरक्कमे ।
अभिवन्दित्ता सिरसा गोयमं तु महायसं ॥ ८६ ॥

गाथा ८६ भावार्थः–एवे प्रकारना करणी श्री सुधर्मास्वामी कहेछे, एणी रीते संशय टालवाथी कर्म वैरि

मणारा अग्गवा चुना जे नंगन्ति मेहाविणो ॥ ७३ ॥

गाथा ७३ भावार्थः-हे केशी? संसारनी समुद्रने अगीरकरनी नावने जीव ते नावनो खेडनार (नावीयो) कहेल छे तो जे योग्य नावनो योग साधु ते एज संसार समुद्रने तरेछे ॥ ७३ ॥

अर्थः-गा० अन्नो गो० हे गौतम प० मज्झ ने० मनमां । सं० संशय स० मारो मे० मारो सं० संशय इ० ए ॥ अ० अनेरो वि० पण सं० संशय म० मारो ने० ने मे० मुजने क० कहो गो० हे गौतम ॥ ७४ ॥

मूलः-साहु गोयम पन्ना ते छिन्नो मे संसओ इमो ।
अन्नो वि संसओ मज्झं तं मे कहसु गोयमा ॥ ७४ ॥

गाथा ७४ भावार्थः-ते वार केशी कहेता हवा के हे गौतम? भली तमारी बुद्धि के ए मारो संशय निवारण कर्यो, पण बीजोनथी अनेरो पण मुजने संशय छे. तो ते पण मने मुजने कहो, (ए इहांथी मश्र थयु) ॥७४॥

अर्थः-हवे अंतरात्म ज्ञानवानो अर्थागमनो द्वार केशी पूछेछे ॥ अं० आंतरी प्रतिं संशय रूपी देषता अंधेर अंधकार अंधारानो पेर देषवती तेमनो अंधकार । त० अनो अंधकार गो० रौद्र अंधकारने विषे वि० विटेछे पा० प्रीत । ए० एना । बं० बांध क० करवं ए० उद्योत । स० अमम्ह गो० गोतमने विषे । पा० जीवने ॥७५॥

मूलः-अन्नवंसि महोघंसि बहु विहन्ति पाणिणो ।
जं तरिस्सह उज्जोयं गोयमे तं भणाहि मे ॥ ७५ ॥

गाथा ७५ भावार्थः-हवे केशी गौतम प्रत्ये कहेता हवा के हे गौतम! आंतरी प्रतिं संशये करी दे-

अर्थः–तो० संतोषाणी प० परिषदा स० समस्त । स० मोक्ष मार्ग सेववाने स० उद्यमवंत हुवा परिषदा समस्त ॥ सं० सम्यग प्रकारे साचे मने करी सेव्या थका ते० पुर्व कह्या ते । प० उपगारना करणहार थाओ । भ० भगवंत के० केसी गो० गौतम ॥ त्ति० एम वे० हुं कहुंछुं ॥ ८९ ॥

मूलः–तोसिया परिसा सव्वा सम्मग्गं समुवट्ठिया ।
संथुया ते पसीयन्तु भयवं केसिगोयमे ॥ ८९ ॥ त्ति बेमि ॥

॥ इतिश्री केशि गोयमिज्जं त्रयोविंशं अध्ययनं सम्मत्तं ॥

गाथा ८९ भावार्थः–तेवारे समस्त परिषदा संतोषाणी ने मोक्ष मार्गने विषे सर्व उद्यमवंत थया ने पुर्वोक्त कया तेम उपकारना करणहार थाओ एम साचे मने करी परिषदाए स्तुति करीने सर्व शास्त्रना जाण केशी ने गौतमगणधर वंने प्रपन्न थया. एम सुधर्मस्वामी पोताना जंबू नामना शिष्यने कहेताहवा के हे जंबू जेम में श्री महावीरदेव स्वामीनी समीपे सांभळ्युं हतुं तेम में तुज प्रत्ये कहुं ॥ ८९ ॥ इतिश्री उतराध्ययन शास्त्रना तेवीसमा अध्ययननो भावार्थ संपूर्ण थयो. ॥ २३ ॥ ए तेवीसमां अध्ययनने विषे संशय टाळ्यो कह्यो ते प्रवचनथी संशय टाळे ते माटे आठ प्रवचन माताना चोवीसमां अध्ययननो भावार्थ कहे छे.

अर्थः–अ० आठ प० प्रवचन मा० माता स० समिती १ गु० गुप्ती २ त० तेमज ॥ पं० पांच ए० निषे प० पूर्णे स० समिती न० प्रण गु० गुप्ती आ० कही ॥ १ ॥

मूलः–अट्ठ पवयणमायाओ समिई गुत्ती तहेव य ।

जि०जिनकीओ भ०भूत गो० ने जीत क०करने उ० उद्योत स०समस्त लो०लोकने विषे पा० जीवने ॥७८॥

मूलः—उग्गओ खीणसंसारो सव्वन्नू जिण भक्खरो ।
सो करिस्सइ उज्जोयं सव्वलोयंमि पाणिणं ॥ ७८ ॥

छाया ७८ भावार्थः—हे इंद्रो! जेने संसार क्षीण थयो छे अने सर्व वस्तुनो जाणनार एवो जिन रूपीसो सूर्य उग्यो तेज समस्त लोकने विषे जीवोने उद्योत करशे ॥ ७८ ॥

अर्थः—गा० भणी गो० गौतम प्र० प्रत्ये के० कहारे । जि० टाल्यो मे० माहरो ॥ सं० संशय इ० ए दुर्जेय । अ० अनेरो वि० पण सं०संशय म० मारो तं० ते मे० मुजने क० करो गो० हे गौतम ॥ ७९ ॥

मूलः—साहु गोयम पन्ना ते छिन्नो मे संसओ इमो ।
अन्नो वि संसओ मज्झं तंपि कहसु गोयमा ॥ ७९ ॥

छाया ७९ भावार्थः—हे सारु केवल ज्ञान रूपी के हे गौतम ! भलो तमारी बुद्धि के ए मारो संशय निवारण कर्यो तेम दुर्जयकरी अनेरो पण मुजने संशय छे, ते ते पण मने मुजने कहो (एटलुं मम वचनं)॥७९॥

अर्थः—इहे स्थानक आश्री गाथानुं द्वार कहे छे गा० गाथानी मा० मात्रानी दु० दुहे करी । ब० पीछाण पा० जीवने वि० व्याप्ति सहित नि० उपदेश रहित अ० अनादिक वाग्व्यवहार एवा । ठा० स्थानक ठि० स्थित्यं म० मान छे मु० हे मुनि ॥ ८० ॥

मूलः—गाहागंधेण दुहए बद्धमाणजिणिंदं ।

समिती ने त्रण गुप्ती ए पंने मळीने अष्ट प्रवचन माता जाणवी ॥ २ ॥

अर्थः-ए० ए अ० आठ स० समीती स० संक्षेपे वि० कही। दु० वार अं० अंग जि० भगवंत अ० भाख्याना ॥ मा० समाया ज० जे आठ प्रवचन माताने विषे उ० पूरणे प० सर्व सिद्धांतसमायां ॥ ३ ॥

मूलः-एयाओ अट्ठ समिईओ समासेण वियाहिया ।
दुवालसङ्गजिणक्खायं मायं जत्थ उ पवयणं ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः-ए पांच समिती ने त्रण गुप्तीरूप अष्टप्रवचन माता संक्षेपे कही अने भगवंते द्वादशांगी कहेल ते सर्व शास्त्र ए अष्टप्रवचन माताने विषे समायां (अर्थात् ए अष्टप्रवचन माता चारित्ररूपछे अने चारित्र ते ज्ञानदर्शन विना न होय अने चारित्रथी वेगळां द्वादशांगी रूप शास्त्र न होय तेथी द्वादशांगी रूप सर्व अष्टप्रवचन माताने विषे समायां) ॥ ३ ॥

अर्थः-हवे इर्या समिती वर्णवेछे ते इर्यासमिती। आ० आलंबने १ का० काले २। म० मार्गे करी ३ ज० जतनाए करी ४ चउ० चउ० चार का० कारणे प० शुद्ध ॥ सं० साधु इ० इर्या समितीए रि० चाले ॥ ४ ॥

मूलः-आलम्बणेण कालेण मग्गेण जयणाय य ।
चउकारणपरिसुद्धं संजए इरियं रिए ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थः-हवे प्रथम इर्या समिती विस्तारे करी कहे छे. (चालती वखते मननी एकाग्रता

गाथा ८२ भावार्थः—तेवारे केशी कहेता हवा के हे गौतम ! ते स्थानक कायु कयु, एम कहा वाल्या ते प्रत्ये आगळ कहेशे तेम गौतम कहेता हवा ॥ ८२ ॥

अर्थः—नि० कर्मरुपणी अग्नी ति० वळी उलहवाथी शीतलीभूतछे मोक्ष अ० शरीरी मानसी पीडा रहित ति० वळी सि० सिद्ध क्षिहां छे लो० लोकना अ० अप उपरेछे प्र० निश्चे य० वळी खे० व्याधि रहित खि० सर्व उपद्रव्य रहित अ० स्वभाविक बाधा रहित ॥ जं० जे एहवे थानके त० तरेछे म० मोटा ऋषीश्वर ॥ ८३ ॥

मूलः—निव्वाणं ति अबाहं ति सिद्धीलोगग्गमेव य ।
खेमं सिवं अणावाहं जं तरन्ति महेसिणो ॥ ८३ ॥

गाथा ८३ भावार्थः—तेवारे केशी प्रत्ये गौतम कहेता हवा के हे केशी ? जरा मरणना उपद्रव व्याधीने स्वाभाविकज पीडा ए सर्वथी रहित ने कर्मरुप दावानळ ओलववाथी शीतळीभूत एवा लोकाग्रे सिध स्थानकने विषे मोटा ऋषि जाय छे ॥ ८३ ॥

अर्थः—तं० ते ठा० थानक सा० सास्वतो वा० वासछे लो० लोकने अ० अग्रउपरेछे । आ० पामतां दु० दोहिलो । जं० जे सं० थानकने पाम्या छता ॥ न० न सो० सोचे । भ० च्यारगतिरुप संसारनुं औषं भवाह तेना अ० अंतना करणहार मु० हे मुनी ॥ ८४ ॥

मूलः—तं ठाणं सासयंवासं लोयग्गंमि दुरारुहं ।
जं संपत्ता न सोयन्ति भवोहन्तकरा मुणी ॥ ८४ ॥

त्रथी इर्या, ३ काळथी इर्या, ४ भावथी इर्या, ए चार प्रकारे यत्ना कही. हवे गुरु कहेता हवा के हे शिष्य! ए चार प्रकारनी यत्नानो जुदो जुदो विस्तार हुं कहीश ते तुं सांभळ ॥६॥

अर्थः–द० द्रव्यथी जयणा ते च० दृष्टि करी जीवादिक द्रव्य नीरख्या निमित्त पे० जीवादिकने अवलोके जु० वळी धुसरा चार हाथ प्रमाणे अवलोके च० वळी । खि० खेत्रथी जयणा । का० कालथी जयणा ते जा० ज्यां सुधी री० दिवस चाले। य० वळी उ० उपयोग सहित चाले ते भा० भावथी जयणा कहीए ॥ ७ ॥

मूलः–दव्वओ चक्खुसा पेहे जुगमित्तं च खित्तओ ।
कालओ जाव रीइज्जा उवउत्ते य भावओ ॥ ७ ॥

गाथा ७ भावार्थः–१ द्रव्यथी यत्ना ते दृष्टीये करी जीवादिक द्रव्यने देखे, २ क्षेत्रथी यत्ना ते धुंसरा (चार हाथ) प्रमाणे मार्गने अवलोके, ३ काळथी यत्ना ते ज्यां सुधी दिवस होय त्यांसुधी चाले, ४ भावथी यत्ना ते उपयोग सहित चाले ॥ ७ ॥

अर्थः–उपयोग सहित जयणाए केम चाले ते कहेछे इ० इंद्रिय पांचना विषय विकार वि० वरजीने चे० वळी पं० पांच प्रकारनी स० सज्झाय १० ए १० बोल वरजीने त० ते इर्या शोधवाने विषे प्रवर्ते जे मु० मुनि ते शरीर एटले मुर्ति ते शरीर त० ते इर्याने पु० पुरकार आगल करीने उ० उपयोग सहित छतो रि० इर्या समिती रि० चाले ॥८॥

मूलः–इन्दियत्थे विवज्जित्ता सज्झायं चेव पञ्चहा ।
तम्मत्ती तप्पुरक्कारे उवउत्ते रियं रिए ॥ ८ ॥

गाथा ८ भावार्थः–हवे उपयोग सहित यत्नाए केम चलाय ते कहे छ, पांच इंद्रियोना विषय अने पांच

मत्थे घोर (भयंकर) पराक्रमना करनार एवा केशी मुनिए महा गुणवंत एवा गौतमने मस्तकेकरी वांदीने ॥८६॥

अर्थः-प० पांच म० महाव्रतरूप प० धर्म्म। प० केसीकुमार श्रमणे पडिवन्नो छे भा० भाव थकी ॥ पु० पथप निर्थकर भने प० छेल्ला निर्थंकरनां । म० मार्गने विषे त० तिहां उद्यानने विषे गु० गोयमा पमाडणहार एवा मार्गने विषे उद्यमवंत हुवा ॥ ८७ ॥

मूलः—पञ्चमहव्वयधम्मं पडिवज्जइ भावओ ।
पुरिमस्स पच्छिमंमि मग्गे तत्थ सुहावहे ॥ ८७ ॥

गाथा ८७ भावार्थः-मोक्षनो पमाडणहार प्रथप ने छेल्ला निर्थंकरनो पंचमहाव्रत रूप धर्मनो मार्ग ते तेज उद्यानने विषे केशीमुनिए भले भावे गौतमनी पासे अंगीकार कर्यो ॥ ८७ ॥

अर्थः-के० केशी गो० गौतम नि० सदाय । तं० ते तिंदुक नामे वनने विषे भा० हुओ स० एकठा पट्टशि । पु० सिद्धान्ते भने सी० चारित्रनो आचार स० गुणनी ऋद्धी होय तेम क० कीधो म० मोटो अ० अर्थ वि० निर्णय निश्चय पूछको शिष्य प्रमुख ॥ ८८ ॥

मूलः—केसी गोयमओ निच्चं तम्मि आसि समागमे ।
सुयसीलसमुक्करिसो महत्थत्थविणिच्छओ ॥ ८८ ॥

गाथा ८८ भावार्थः-निरंतर केशी गौतमनो तिंदुक वनने विषे समागम थयो तेथी सिद्धांत ने चारित्रना आचारना गुणनी ऋद्धि होय तेम मोटा अर्थनो निर्णय शिष्य प्रमुखने वास्ते कीधो ॥ ८८ ॥

मूलः—एयाइं अट्ठ ठाणाइं परिवज्जित्तु संजए ।
असावज्जं मियं काले भासं भासिज्ज पन्नवं ॥ १० ॥

गाथा १० भावार्थः—ए क्रोधादिक आठ स्थानकने वर्जिने कार्यने अवसरे प्रज्ञा (बुद्धि) वंत साधु थोडी अने पापरहित निर्दोष भाषा बोले, ए बीजी भाषा समिती कही ॥ १० ॥

अर्थः—हवे त्रीजी एषणासमती कहे छे ग० निर्दोष वस्तु गवेषणानेविषे एषणा १ । य० वली ग०निर्दोष वस्तु ग्रहणाने विषे एषणा २ ॥ प० निर्दोष वस्तु भोगवानेविषे । एषणा ३ य० वळी जा० जे एषणा ते । आ० आहारनेविषे १ उ० वस्त्र प्रमुख उपधीनेविषे २ से० थानकादिक पाट पाटला प्रमुखने विषे ए ३ प्रत्येक प्रत्येक ए० ए ति० त्रण गवेषणादिक एखणा । वि० वळी सो० निर्दोष करे एटले त्रिन भेद त्रिन त्रिन भेद थाय ते केम, आहारनी गवेषणा १ । आहारनी ग्रहणेषणा २ । आहारनी परिभोगेषणा ३ । एम ३ उपधीनी ६ एम ३ सेज्जानी ए ९ ॥ ११ ॥

मूलः—गवेसणाए गहणे य परिभोगेसणा य जा ।
आहारोवहिसेज्जाए एए तिन्नि वि सोहए ॥ ११ ॥

गाथा ११ भावार्थः—हवे त्रीजी एषणा समिती कहे छे, एषणा त्रण प्रकारनी ते १ निर्दोष वस्तु गवेषणा (शोधवुं ते) ने विषे एषणा, २ निर्दोष वस्तु ग्रहण करवाने विषे एषणा, ३ निर्दोष वस्तु भोगवताने विषे एषणा, ए त्रण प्रकारनी एषणा ते १ आहारने विषे, २ वस्त्र प्रमुख उपधीने विषे, ३ स्थानक पाट पाटला

पंचेव समिईओ तओ गुत्तीओ आहिया ॥ १ ॥

गाथा १ भावार्थः—आठ प्रवचन माता (चारित्रीयानी माता तथा साधुनो आचार पाळवामां निर्णयरूप माता कही, तेम माता थाळवाने सेवनी करणहारी ते तेम ए प्रवचन माताने शरणे जवाथी जीव शांति पामेछे, तेथी माता)

करी ते समितीने गुणीयल तेथी समिती पांच ने गुप्ती त्रण करीछे, ए बंने मळी अष्ट प्रवचन माता कहीछे ॥१॥

अर्थः—ए आठना नाम इ० इरिया समिती १ भा० भाषा समिती २ एषणा समिती ३ । आ० आ दान भंड मात्रनिक्षेपणा समिती ४ उ० उच्चार पासवण परिठावणीया समिती ५ इ० ए पांच समिती कही । प० मन-गुप्ती ६ व० वचनगुप्ती ७ ॥ का० कायगुप्ती ८ ए० बही अ० आठमी ॥ २ ॥

मूलः—इरियाभासेसणादाणे उच्चारे समिई इय ।

मणगुत्ती वयगुत्ती कायगुत्ती य अट्ठमा ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः—ए पांच समिती कही तेमां प्रथम १ इर्या समिती ते सम्यक प्रकारे जवा आववारूप एटले साडात्रण हाथ प्रमाणे जोइने चालवुंते, २ भाषा समिती ते विचारीने बोलवुं, ३ एषणासमिती ते शुद्ध (निर्दोष) आहार ग्रहणकर, ४ आदान समिती ते वस्त्र पात्रादिक उपकरण यत्नाए लेवा मूकवा संबंधी, ए पांच समिती. हवे त्रण गुप्ती तेमां प्रथम मनगुप्ती ते दुष्ट चिंतवणारूप व्यापारथी मनने निवर्तावुं ? ते पहेली मनोगुप्ती, २ वचनना अशुभ व्यापारथी गोपववुं ते बीजी वचनगुप्ती, ३ कायाना अशुभ कामथी निवर्तावुं ते त्रीजी कायगुप्ती

परिभोयंमि चउक्कं विसोहेज्ज जयं जई ॥ १२ ॥

गाथा १२ भावार्थः–हवे प्रथम गवेषणाने विषे आधाकर्मादिक १६ दोष दातारथकी लागे ते कहे छे, १ साधुनेज अर्थे छ काय जीवनो आरंभ करी अन्न पाणीआदिक निपजावीने आपे ते (आधाकर्मि दोष); २ जे कोई मारे घेर आवशे तेने आपीश एम गृहस्थ मनमां चिंतवीने अन्न पाणी आदिक निपजावे, एवे अवसरे साधुनो योग मळवाथी आपे ते (उद्देशीक दोष), ३ निर्दोष आहार होय तेमां सीथ (दाणा) मात्र आधाकर्मि आदिके भळे ते (पुइ कर्म दोष); ४ कांइक ते साधुने अर्थे ते कांइक पोताने अर्थे गृहस्थ रंधावे ते (मिश्रीत दोष), ५ साधुने अर्थे घणा काळ सुधी राखी मुके ते (ठवणा दोष), ६ महोत्सव जमणवारमां साधुने अर्थे आलु पालु करीने आपे ते (पाहुडीया दोष), ७ अंधारे दिवो तथा द्वार उघाडी उद्योत करी आपे ते (पांउरे दोष); ८ साधुनें वस्त्र पात्र उपाश्रादिक वेचातुं लइने आपे ते (क्रीत दोष); ९ उछीनुं लइने साधुने आपे तें (पामिच्च दोष), १० साधुने अर्थे निःरस आहार होय ते बदलीने सरस आहार आणी आपे ते (परीयटीये दोष), ११ परगामथी तथा त्रण घर उपरांतथी तथा पोताना घरादिकथी साधुने अर्थे सामो आहार आणी आपे ते (अभी हडे दोष); १२ साधुने अर्थे लेपादिकनी मुद्रा (छांदो) तथा कमाड उघाडी आपे ते (भिन्न दोष), १३ साधुने अर्थे उंचा ठामथी वानोठादिक मांडीने दुःखे उतारी आपे ते (मालोहड दोष), १४ साधुने अर्थे निर्बळ पासेथी छीनवी लइने आहारादिक वस्तु आपे ते (अछेद दोष), १५ घणानी

अर्थः-हवे आलंबणादिक चारनुं स्वरूप कहेछे त० ते चारेयहि इर्यानुं आ० आलंबन ते ना० ज्ञान
दं० समकीत च० चारित्र त० तेम ए ३ इर्या समितिनां आलंबन । ग० चली का० इर्यानो काल दि० दिन
नु० कह्यो । म० इर्यानो मार्ग ते उ० कुपंथनो । च० वर्जनुं कुपंथे इर्या सोधवा नहि ॥ ५ ॥

मूलः-तत्थ आलम्बणं नाणं दंसणं चरणं तहा ।
काले य दिवसे वुत्ते मग्गे उप्पहवज्जिए ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः-१ ज्ञान, २ दर्शन (समकीत), ३ चारित्र, ए त्रण इर्या समितिना आलंबन भणे २
इर्यानो काल ते दिवस (अर्थात् रात्रीये तो इर्यानी शुद्धि न होय), ३ कुपंथनुं वर्जनुं ए इर्यानो मार्ग (अर्थात्
उन्मार्गे जतां आत्मविराधनाने संयमविराधना थाय तेथी वर्जवो) ए इर्यना त्रण भेद थया ॥५॥

अर्थः-हवे इर्यानी जयणानां चार भेद कहेछे द० द्रव्यथी १ । खे० क्षेत्रथी बे० बली २ का० कालथी
इर्या ३ । भा० भावथी इर्या ४ त० तेमज जा० जनना च० चार प्रकारे नु० कही । तं० ते विविध प्रकारनी
जयणाने मे० मुजने कि० कहेतांएका गु० सांभळ ॥ ६ ॥

मूलः-दव्वओ खेत्तओ चेव कालओ भावओ तहा ।
जायणा चउविहा वुत्ता तं मे कित्तयओ सुण ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः-हवे इर्यानो चोथो भेद यत्ना, तेना चार भेद कहे छे, १ द्रव्यथी इर्या, २ ते

परिभोयंमि चउक्कं विसोहेज्ज जयं जई ॥ १२ ॥

गाथा १२ भावार्थः—हवे प्रथम गवेषणाने विषे आधाकर्मादिक १६ दोष दातारथकी लागे ते कहे छे, १ साधुनेज अर्थे छ कांय जीवनो आरंभ करी अन्न पाणीआदिक निपजावीने आपे ते (आधाकर्मि दोष), २ जे कोई मारे घेर आवशे तेने आपीश एम गृहस्थ मनमां चिंतवीने अन्न पाणी आदिक निपजावे, एवे अवसरे साधुनो योग मळवाथी आपे ते (उद्देशीक दोष), ३ निर्दोष आहार होय तेमां सीध (दाणा) मात्र आधाकर्मि आदिक भेळे ते (पुइ कर्म दोष), ४ कांइक ते साधुने अर्थे ने कांइक पोताने अर्थे गृहस्थ रंधावे ते (मिश्रीत दोष), ५ साधुने अर्थे घणा काळ सुधी राखी मुके ते (ठवणा दोष), ६ महोत्सव जमणवारमां साधुने अर्थे आडु पाडु करीने आपे ते (पाहुडीया दोष), ७ अंधारे दिवो तथा द्वार उघाडी उद्योत करी आपे ते (पाउर दोष), ८ साधुने वस्त्र पात्र उपाश्रादिक वेचातुं लइने आपे ते (क्रीत दोष), ९ उछीतुं लइने साधुने आपे ते (पामिच्च दोष), १० साधुने अर्थे निःरस आहार होय ते बदलीने सरस आहार आणी आपे ते (परीयटीये दोष), ११ परगामथी तथा त्रण घर उपरांतथी तथा पोताना घरादिकथी साधुने अर्थे सामो आहार आणी आपे ते (अभी हडे दोष), १२ साधुने अर्थे लेपादिकनी मुद्रा (छांदो) तथा कमाड उघाडी आपे ते (भिन्न दोष), १३ साधुने अर्थे उंचा ठामथी वाजोठादिक मांडीने दुःखे उतारी आपे ते (मालोहड दोष), १४ साधुने अर्थे निर्बळ पासेथी छीनवी लइने आहारादिक वस्तु आपे ते (अछेज दोष), १५ घणानी एक वस्तु होय ते वस्तु बीजानी रजा विना एकलो साधुने आपे ते (अणीसट्ठ दोष), १६ परेडुं आपण मांही

प्रकारना स्वाध्याय (ते १ वाचना, २ पुछना, ३ पर्यटना, ४ अणुप्पेहा, ५ धर्म कथा) एम दश बोल वर्जिने जिम इर्या शोधवाने प्रवर्ते छे, एवुं शरीर ते इर्याने आगळ करीने उपयोग सहित थको इर्यासमितीए चाले ए प्रथम इर्या समिती थई ॥ ८ ॥

अर्थः-हवे बीजी भाषासमिती कहेछे को० क्रोधनेविषे १ । मा० माननेविषे २ म० कळी । मा० मायाने विषे ३ । लो० लोभनेविषे य० कळी ४ । उ० तत्पर सावधान । हा० हास्यनेविषे भ० भयनेविषे ६ । लो० दुखरीपणानेविषे । वि० विकथानेविषे त० तेमज तत्पर च० वळी ॥ ९ ॥

मूलः-कोहे माणे य मायाए लोभे य उवउत्तया ।
हासे भए मोहरिए विकहासु तहेव च ॥ ९ ॥

गाथा ९ भावार्थः-हवे बीजी भाषा समिती कहे छे, प्रज्ञावंत साधु भाषाना समयने विषे असावद्य निःपापने कार्य योग्य आठ स्थानकने विषे उपयोगवंत थको भाषा बोले ते आठ स्थानक कहेछे, १ क्रोधने, २ मानने विषे, ३ मायाने विषे, ४ लोभने विषे, ५ हांशीने विषे, ६ भयने विषे, ७ परना अपवाद (निंदा) ने विषे, ८ विकथाने विषे एम आठ ॥ ९ ॥

अर्थः-प० ए क्रोधादिक अ० आठ ठा० थानकने । प० वर्जिने । सं० साधु अ० पापरहित मि० मर्यादाए का० अनसरे भा० निर्दोष भाषाने भा० बोले प० प्रज्ञावंत इति भाषासमिती ॥ १० ॥

(પેરીત દોષ), ૫ વસ્તુ આપવાનું જે વાસણ હોય તેમાં સચેતાદિક અયોગ્ય વસ્તુ હોય તે વસ્તુ બીજા વાસણમાં પાડીને તેજ વાસણમા પાડીને આહાર આપે તે (સાહરિત દોષ), ૬ અંધ પાંગલ્લુ વગેરે અયોગ્ય દાતારને હાથે આહાર લે તે (દાયક દોષ), ૭ સચેતાદિક મિશ્ર (કાંઇક સચેત ને કાંઇક અચેત) વસ્તુ હોય તે લે તો તે (મિશ્ર દોષ), ૮ જે સચેત વસ્તુને વિષે શસ્ત્ર પુર્ણ પ્રણમ્યું ન હોય તેવું લે તે (અપરિણય દોષ), ૯ તુર્તનું લીંપ્યું તથા દહીં છાશ ભોજનાદિક રસે હાથ ખરડેલ હોય તે વોહોરાવ્યા પછી સચેત પાણી આદિકે ધોવાથી પશ્ચાત કર્મ દોષ લાગે તે (લિપ્ત દોષ), ૧૦ અન્ન પ્રમુખ નાખતી (વેરાતી) આવે તે (છર્દીય દોષ), ૯ દશ દોષ ગ્રહણેષણાના સાધુને દાતાર ૯ વર્જે થકી લાગે. હવે બીજી પરિભોગેષણાના ૪ દોષ કહે છે, ૧ જે રસને ગૃદ્ધ પણે ગુણ ઉપજાવવાને હેતે ક્ષીર ખાંડની પેરે રસ એકઠો મેળવીએ તે (સંજોયણા દોષ), ૨ શાસ્ત્રોક્ત પ્રમાણ ઓલંઘીને અતિ માત્રાએ આહાર કરે તે (અપ્રમાણ દોષ), ૩ દાતારે સરસ આહાર પાણી દીધેલ હોય પછી જમતા તેની પ્રશંસા કરે તે ચારિત્રને દહન ભણી ઇંગાળ સરખો જાણવો તે (ઇંગાળ દોષ), ૪ દાતારે લુખો નિરસાદિક આહાર દીધેલ હોય તે જમતાં અપરખેદે તો ચારિત્રને ધુમ્ર સમાન કરે તે (ધુમ્ર દોષ) ૯ ચાર દોષ પરિભોગેષણાના જાણવા ૯ સાધુ વર્જીજ લાગે એવં ૧૬ ઉદ્ગમનના ને ૧૬ ઉત્પાદનના ને ૧૦ મિશ્રદોષ ને ૪ પરિભોગેષણાના મલી ૪૬ દોષ થયા અને ૬ કારણ વિના શરીરના વધને માટે આહાર કરે તે (કારણ દોષ) ૯ એક ગણીએ તો ૪૭ દોષ થાય, એમ ૪૭ દોષ રહિત આહાર લઇ બીજી એષણાસમિતી મુનિ આરાધે ૯ બીજી એષણા સમિતી કહી. ॥ ૧૨ ॥

ग्रहण करवो ते गवेषणा, १ निर्दोष आहार भोगववो ते परीभोगेषणा ए त्रण. हवे वस्त्रादिक उपधिनी त्रण एषणा ते
१ निर्दोष वस्त्रादिक उपधीनी गवेषणा, २ निर्दोष वस्त्रादिक ग्रहण करवा, ३ निर्दोष वस्त्रादिक उपधीनुं भोगवतुं.
हवे स्थानक पाट पाटला प्रमुखनी त्रण एषणा ते १ निर्दोष स्थानक पाट पाटला प्रमुखनी गवेषणा, २ निर्दोष स्थानक
पाट पाटला प्रमुखनुं ग्रहण करवुं, ३ निर्दोष स्थानक पाट पाटला प्रमुखनुं भोगवतुं, एम आहार उपधीने स्थान-
कादिकनी एषणाना एकेकना त्रण त्रण भेद गणतां नव भेद थया ॥ ११ ॥

ते पृथ्वी पाणी वनस्पतिआदि[illegible] होय ते (सचित्त दोष), २ सचित्त

स० समितीवंत स० सदाय इति आदान निखेवणा समिती ॥ १४ ॥

मूलः—चक्खुसा पडिलेहित्ता पमज्जेज्ज जयं जई ।
आइए निक्खिवेज्जा वा दुहओ वी समिए संया ॥ १४ ॥

गाथा १४ भावार्थः—ओघिक ने उपग्रहीक ए बे प्रकारनी उपधिने यत्नावंत यति प्रथम दृष्टिए करी जोइने पुंजिने लिये, मुके ने भोगवे, ए चोथी आदान निखेवणा समिती कही ॥१४॥

अर्थः—हवे पांचमी परिठावणिया समिती कहेछे । उ० वडीनीत १ पा० लघुनीत २ । खे० बलखो ३ सि० नासीकानो मेल ४ । ज० शरिरनो अवयवनो मेल ५ ॥ आ० आहार ६ उ० वस्त्रादिक उपधी ७ दे० शरिर ८ ॥ वा० अथवा अ० एथी अनेरु अ० पुरणे त० तेहवा परठवायोग्य तेहने परठवे ॥ १५ ॥

मूलः—उच्चारं पासवणं खेलं सिंघाणजल्लियं ।
आहारं उवहिं देहं अन्नं वावि तहाविहं ॥ १५ ॥

गाथा १५ भावार्थः—हवे पांचमी परिठावणीया समिती कहे छे, १ वडिनीति (मळ), २ लघुनीति (मुत्र), ३ बळखो, ४ नासिकानो मेल, ५ शरिरना अवयवोनो मेल, ६ आहार, ७ वस्त्रादिक उपधी, ८ शरीर ए कही ते सिवाय बीजी पण परिठववा योग वस्तुने परिठवे ॥ १५ ॥

अर्थः—हवे परिठवानी वेला कही । तिहां चउभंगी कहेछे परिठवानी वेलाए ॥ अ० कोइ मनुष्य आवतो नथी । अ०अने मेलाथी कोइ पण देखतो नथी २ । अ०आवतो ते कोइ नथी छे० पण । हो० छे सं० देखतो

पर बाळकने रमाडीने आहार ... (धाई दोष), २ लोकना मत्युत्तर गुप्त ... ल ते (दूत दोष),
३ लाभालाभ जीवनव्य मणादिक निमित्त भाखीने आहार ले ते (निमित्त दोष), ४ उग्रम जाती कुलवंतपणुं
देखाडीने आहार ले ते (आजीविका दोष), ५ दीन दयामणुं बोलीने तथा कंगाल जेवुं दर्शन देखाडी आहार
ले ते (वणी पग दोष), ६ औषध भेषजनादिक जेवुं करीने आहार ले ते (चिकित्सा दोष), ७ क्रोध करी आप
दइ बीक बतावी आहार ले ते [क्रोध दोष], ८ अभिमान करी तथा लब्धि फोरवी तथा दातारनी प्रसंशा
करी आहार ले ते [मान दोष], ९ दातारनी साथे कपट करीने रूप पवर्तादिक करी ले ते (माया दोष),
१० आहारनां गृद्धपणे अति घणो आहार ले ते [लोभ दोष], ११ दानथी पहेलां तथा पछी दातारनो कीर्ति
करे ते [पुर्वपछा वसंस्तव दोष], १२ कामण मोहनी वशीकरणादिक करीने आहार ले ते [विद्या दोष], १३
मंत्रादिक करीने आहार ले ते (मंत्र दोष), १४ अंजन नयनादिकना चुर्ण आपी आहार ले ते (चुर्ण दोष),
१५ सौभाग्य तथा दौर्भाग्य विलेपनादिक देखाडी आहार ले ते (योग दोष), १६ मांगल्य तथा विवाहना
कारण तथा गर्भपातनादिक करी आहार ले ते (मूल कर्म दोष), ए १६ उत्पादनना दोष साधु थकी त्यागे एम
१६ उद्गमनना ने १६ उत्पादनना एम ३२ प्रथम गवेषणाना जाणवा. हवे बीजी ग्रहणेषणाना १० दोष
मिश्रीत कहे छे, १ दातारने देतां देखी शंका उपजे के ए सुजतो हशे के असुजतो ए (शंकित दोष), २ सचेत
ते पृथ्वी पाणी वनस्पतिआदिक सहित होय ने अचेत ते ने वस्तुना आपणने पचखाण होय ते वस्तुथी खर-
देल होय ते (मखीत दोष), ३ सचेत उपर मुकेल होय ते (निखीत दोष), ४ सचेत वस्तुए ढांकेल होय ते

स० समितीवंत स० सदाय इति आदान निक्षेवणा समिती ॥ १४ ॥

मूलः—चक्खुसा पडिलेहित्ता पमज्जेज्ज जयं जई ।
आइए निक्खिवेज्जा वा दुहओवी समिए सया ॥ १४ ॥

गाथा १४ भावार्थः—ओधिक ने उपग्रहीक ए बे प्रकारनी उपधिने चक्षुवंत यति प्रथम दृष्टि करी जोइने पुंजिने लिये, मुके ने भोगवे, ए चोथी आदान निक्षेवणा समिती कही ॥१४॥

अर्थः—हवे पांचमी परिठावणिया समिती कहेछे । उ० वडीनीत १ पा० लघुनीत २ । खे० वलखो ३ सि० नासीकानो मेल ४ । ज० शरिरनो अवयवोनो मेल ५ ॥ आ० आहार ६ उ० वस्त्रादिक उपधी ७ दे० शरिर ८ ॥ वा० अथवा अ० एथी अनेरु अ० पुरणे त० तेहवा परठवायोग्य तेहने परठवे ॥ १५ ॥

मूलः—उच्चारं पासवणं खेलं सिंघाणजल्लियं ।
आहारं उवहिं देहं अन्नं वावि तहाविहं ॥ १५ ॥

गाथा १५ भावार्थः—हवे पांचमी परिठावणीया समिती कहे छे, १ वडिनीति (मल), २ लघुनीति (मुत्र), ३ वलखो, ४ नासिकानो मेल, ५ शरिरना अवयवोनो मेल, ६ आहार, ७ वस्त्रादिक उपधी, ८ शरीर ए कही ते सिवाय बीजी पण परिठववा योग वस्तुने परिठवे ॥ १५ ॥

अर्थः—हवे परिठवानी वेला कही । तिहां चउभंगी कहेछे परिठवानी वेलाए ॥ अ० कोइ मनुष्य आवतो नथी । अ० अने वेगलाथी कोइ पण देखतो नथी १ । अ० आवतो ने कोइ नथी चे० पण । दो० छे पण देखतो

मुनी ए ३ प्रकारे वस्त्र ए ३ उपगरण ने मु० साधु । नि० ग्रहनो थको । नि० मुंकनो थको या०
स्त्री प० पडुत्ते ने भोगवे ॥ तेहनो इ० ए वि० विधि कहे छे ॥ १२ ॥

मूलः—ओहोवहोवग्गहियं भण्डं तु दुविहं मुणी ।
गिण्हन्तो निक्खिवन्तो वा पउञ्जेज्ज इमं विहिं ॥१३॥

गाथा १३ भावार्थः—इवे ओघी आदाननिक्षेपणा समिती कहे छे, १ ओघीकने उपग्रहीक ए बे प्र-
कारनी उपधि तेमां ओघिक ते पात्रादिक उपगरण, (पात्रांतरे) २ ओघीक ते ते उपगरणनुं नाम
उपग्रहीक ते पोतानुंज करी स्थापेल होय ते वस्त्रादिक उपगरण, (पात्रांतरे) ३ ओघीक ते ते उपगरणनुं नाम
ग्रहण करवा न होय, तेमज ग्रहवाने माटे वर्तमान न होय ते ज्ञानदर्शनने संयमनी वृद्धीनो हेतु होय ते तेमकरे
ग्रहण करवा योग्य होय ते, ए बे प्रकारनां उपगरणने साधु जी रीते ग्रहण करे, मुंके ने भोगवे तेनी विधि कहेछे ॥१३॥
अर्थः—इवे ग्रहण मुंकवानी विधि कहे छे प० दृष्टि प० जोइने प० पडे पुंजे न० जननारंत न०
नखी । मा० ठीए नि० ग्रहण मुंके या० स्त्री इ० ते ओघिक उपधि १ उपग्रहीक उपधीने २ बी० पण

गाथा १७ भावार्थः–ए चार भांगामांही, १ कोइ मनुष्य आवतुं नथी तेमज कोइ देखतुं नथी ए प्रथम भांगे परिठवे (ए प्रथम भांगो वळखो नासीकानो मेल विगेरे केटलाक वोलोमां परिठववा आश्री न लेवो, पण केटलाक वडी नित्यादिक आश्री जाणवो), वाकी त्रण भांगे परिठववानो निषेध (ते पण पुर्वोक्ति प्रकारे संमजवुं), वळी २ ज्यां परिठवतां पोताना तथा परना आत्मानी घात न थाय, ३ उंची नीची भुमीरहित समी भुमी होय, ४ त्रण (घास) पत्रादिक रहित खुली भुमी होय, ५ अग्नि प्रमुखे थोडा काळथी अचेत थयेली भुमी होय (इहां घणा काळथी अचेत थयेल अवड भुमीमां कुंयुं झीडीयादीकनां नगरां होय तेथी त्यां परिठववा निषेध छे) ॥ १७ ॥

अर्थः–वि० विस्तिर्ण पोहोळी भुमी ६ दू० उंडि हेठी घणी अचित भुमि थइ होय तिहां ७ ना० वेठो रह्योछे तिहांथी डुकडो नही वेगलो परिठवे ८ वि० उंदरादिकना विल वर्जिने परठवे त० त्रस पा० प्राण वी० वीजादिक र० रहित भुमिए परठवे ए १० बोल रहित शुद्ध थंडिल ॥ उ० उचारादिकने वो० वोसरावे परठवे ॥१८॥

मूलः–वित्थिण्णे दूरमोगाढे नासन्ने विलवज्जिए ।
तसपाणबीयरहिए उच्चाराईणि वोसिरे ॥ १८ ॥

गाथा १८ भावार्थः–६ विस्तीर्ण पहोळी भुमी होय, ७ अचेतभुमी उंडी हेठे घणी होय, ८ ज्यां पोते होय त्यांथी वेगळे, ९ उंदरादिकनां विल न होय, १० त्रस प्राणी तेमज बीज प्रमुखरहित भुमी होय ए पुर्वोक्त [illegible] परिठवी वोसिरावे ॥१८॥

चिंतवे ते सत्य मनगुप्ती कहीये, २ जीवादिक पदार्थ नथी एवुं चिंतवे ते असत्य मनगुप्ती कहीये, ३ आंबादिक घणी जातिनां वृक्षो जोइने ए आंबानुं वन छे एवुं चिंतवे (एटले आंबाना वृक्षोनी अंदर बीजा खजुर खाखरा प्रमुखनां पण वृक्षो होवाथी मृषा युक्त छे तेथी) ते सत्य मृषा कहीये, आदेश निर्देशादि वचन चिंतवे एटले हे देवदत्त ? घडी लाव्य, अमुक वस्तु तोळी मापीने आणी आप, डुंगर वळे छे, नेवां चुए छें, गाम आव्युं, इत्यादि व्यवहारनी चिंतवणा ते सत्य नहि अने मृषा पण नहि ते असत्यामृषा मनगुप्ती कहीये, ए चार प्रकारनी मनगुप्ती ते मांही १ सत्य मनगुप्ती ने ४ थी असत्यामृषा मनगुप्ती साधुने आदरवा योग ने बीजी ने त्रीजी मनगुप्ती आदरवा योग्य नहि ॥ २० ॥

अर्थः-सं० मनमांहि चिंतवे जो ए मरे तो सारु ते संरंभ १ । सं० एहने कोइ मारे ए समारंभ आ० एहने हुं मारुं ए आरंभ य० वळी त० तेमहिज य० ए ३ । म० मनने विषे प० प्रवर्त्तवुं थकुं तु० पुरणे । नि० निवर्त्तावे पाछो वाळे । ज० जतनावंत ज० जती ॥ २१ ॥

मूलः-संरम्भसमारम्भे आरम्भे य तहेव य ।
मणं पवत्तमाणं तु नियत्तेज्ज जयं जई ॥ २१ ॥

गाथा २१ भावार्थः-वळी १ संरंभ, २ समारंभ, ३ आरंभथी मन निवर्त्तावे, ए मरे तो सारुं एवुं चिंतववुं ते १ संरंभ, एने कोइ मंत्रादिक जपीने मारे तो सारुं ए २ समारंभ, एने हुं मंत्रादिक जपीने मारुं एवुं चिंतववुं ते ३ आरंभ, ए प्रकारे मन प्रवर्त्तवुं होय तेने सम्यक्प्रकारे यत्नि निवर्त्तावे, ए प्रथम मन गुप्ती कही ॥ २१ ॥

स० देखे [illegible] ए चउभंगी मांहि [illegible] परठवे ते कहे छे ॥ १५ ॥

मूलः—अणावायमसंलोए अणोवाए चेव होइ संलोए ।
आवायमसंलोए आवाए चेव संलोए ॥ १६ ॥

गाथा १६ भावार्थः—हवे दश प्रकारनो थंडील ते (परिठवणा संबंधी दश बोल) कहे छे, तेमां प्रथम बोलनी चौभंगी कहे छे. परिठवतानी वेलाए १ कोइ मनुष्य आवतुं न होय तेमज अति नेगजेथी कोइ देखतुं पण न होय, २ कोइ मनुष्य आवतुं नथी पण दूरथी देखे छे, ३ कोइ मनुष्य आवे छे, पण देखतुं नथी, ४ कोइ मनुष्य आवे छे ने देखे पण छे, ए चार भागमां कीए भागे परिठवतुं ते कहे छे ॥ १६ ॥

अर्थः—अ० जिहां कोइ आवतो नथी अ० देखतो पण नथी तेम परठवे, खेल लघुनीत प्रमुख श्लेष्म प्रयोग ए भांगो न जाणवो । एतो लोक देखतां पण परठवे केटलाक बोल आश्री १ । बाकी ३ भांगा निर्दोष० वली परजीवनी तथा पोतानी अ० घात उपजे नहीं २ ॥ स० उंची नीची भुमि नहि, समी भुमिए परठवे ३ अ० प्रणा पांदडादिक तिहां न परठवे ४ ॥ यावि० अवधारणे अ० थोडो का० काल थयो छे धरतिनो कं० अचित थया हुना य० तिहां ॥ १७ ॥

मूलः—अणावायमसंलोए परस्स णुवघाइए ।
समे अज्झुसिरे यावि अचिरकालकयंमि य ॥ १७ ॥

तेवी रीते यत्नापुर्वक चालवारुप प्रथम इर्यासुमतीने विषे पेहेलुं जीवदयारुप महाव्रत समाय, २ यत्नापुर्वक जोइने चालनार बीजाने दुःखदायकरुप असत्य वचन बोले नही तेथी बीजुं महाव्रत समाय, ३ अदत्तादान (अणदीधेलुं लेवुं ते चोरी) लेवाथी परजीवने दुःख थायछे तेथी जत्नाए चालनार अदत्तादान नही लेवाथी त्रीजुं महाव्रत समाय, ४ मैथुन (स्त्री पुरुषनो संयोग) सेववाथी जीवहिंसा थायछे ते यत्नाए चालनार जीवहिंसा करे नही तेथी चोथुं महाव्रत समाय, ५ जुउ प्रपंचादीकथी मानसीक (मन संबंधी), वाचयीक (वचन संबंधी), कायीक (काया संबंधी) ए त्रण मांहीली गमे ते परजीवनी हिंसा कर्या विना परिग्रह मेळवी शकातो नथी, तेमज ग्रहण पणथइ शकतो नथी, ते हिंसा यत्नाए चालनार करे नही तेथी पांचमुं महाव्रत पण समाय, ए रीते प्रथम इर्यासुमतीने विषे पांच महाव्रत समाय छे.

हवे बीजी भाष्यासुमतीने विषे पांच महाव्रत केवी रीते समाय छे ते कहे छे, १ निर्वद्य (पापरहित) भाष्या बोलनार कोइ जीवने दुःख थाय तेवुं वचन बोले नही तेथी बीजी भाष्यासुमतीमां पेहेलुं महाव्रत समाय, २ निर्वद्य भाष्या बोलनार सत्यवक्ता होय तेथी बीजुं महाव्रत समाय, ३ निर्वद्य भाष्या बोलनार अदत्तादान लीए नही तेथी त्रीजुं महाव्रत समाय, ४ मैथुन सेवनार सावद्य (पापसहित) वचन बोलेज अने ते वचन निर्वद्यवचन बोलनार बोले नही तेमज मैथुन असत्यज छे अने ते असत्य त्यागथी ब्रह्मचर्य पण पाळे माटे चोथुं महाव्रत पण समाय, ५ जुउ प्रपंचादीक सावद्य वचन बोल्या विना परिग्रह ग्रहण थइ शकतो नथी ते सावद्य वचन निर्वद्य वचन बोलनार बोलतो नथी तेथी पांचमुं महाव्रत पण समाय, एरीरीते बीजी भाषा

ए० ए पांच समिती कथा पछी त० त्रिन ग० बली गु० गुप्ती चो० कहुं छुं । अ० अनुक्रमे ॥ १९ ॥

मूलः—एयाओ पञ्च समिईओ समासेण वियाहिया ।
एत्तो तओ य गुत्तीओ वोच्छामि अणुपुव्वसो ॥१९॥

गाथा १९ भावार्थः—ए पांच समिती अहीं संक्षेपे करी, एनो विस्तार आचारांगादिकथी छे. हवे त्रण गुप्ती अनुक्रमे कहुंछुं ॥ १९ ॥

अर्थः—प्रथम मनगुप्ती कहे छे स० सत्य मनयोग ते साची मनगुप्ती १ । ब० बेमन यो० अशुभयोग ते मृषागुप्ती य० बली स० कांइक साचो यो० कांइक मृषायोग ते सत्या मृषागुप्ती ३ । न० तेमज ग० बली च० चोथी अ० असत्य सत्य नहि अ० अमोषा मृषा नहि ते असत्या अमृषा मनगुप्ती ४ ग० बली म० मनगुप्ती च० च्यार प्रकारनी पहेली सत्य मनगुप्ति १ । असत्य अमृषा मनगुप्ती । ए चोथी गाथाने आदरवा योग्य अने विचली बे मनगुप्ती आदरवा योग्य नहि ॥ २० ॥

मूलः—सच्चा तहेव मोसा य सच्चमोसा तहेव य ।
चउत्थी असच्चमोसा य मणगुत्तीओ चउव्विहा ॥ २० ॥

गाथा २० भावार्थः—मनगुप्ती चार प्रकारे, १ सत्य मनगुप्ती, २ असत्य मनगुप्ती, ३ सत्यमृषा (मिश्र) मनगुप्ती, ४ असत्या मृषा (व्यवहार) मनगुप्ती. हवे ए लोकने विषे जीवादिक पदार्थ विद्यमान छे, एनुं मनमां

कहा (धर्म कथा करवी) ५, ए पांच प्रकारनी स्वाध्याय करवी एम २६ अने धौंसरा प्रमाणे आगळ आगळ जोइने उपयोग सहित चालवुं ए एक बोल लेवो एम २७ भांगा पेहेली इर्या सुमतीना जाणवा.

२. बीजी भाषा सुमतीना ९ भांगा कहेछे, क्रोध १, मान २, माया ३, लोभ ४, हास्य ५, भय ६, वाचाळपणुं ७, विकथा ८, अण उपयोग ९, ए नव भांगा भाष्या सुमतीना जाणवा.

३. त्रीजी एषणा सुमतीना ७ भांगा कहे छे, गवेषणाना बत्रीस दोष वर्जवा ए पहेलो भांगो १, ग्रहेषणाना १० दोष वर्जवा ए बीजो भांगो २, परिभोगेषणाना पांच दोष मांडलीया वर्जवा ए पांच भांगा, ए सर्व थइ सात भांगा एषणा सुमतीना जाणवा.

४. चोथी आदान सुमतीना बे भांगा कहे छे, अधिक उपधी ते जेहनां शास्त्रमां नाम लखेल न होय पण ते वस्तुविना मुनीने चाले नही ते गळणुं, शास्त्र तेनी बंधनदोरी विगेरे वस्तु ग्रहण करवी ते प्रथम भांगो १, बीजी उपग्रहीक ते जे वस्तुनां नाम शास्त्रमां लखेल होय ते वस्त्र पात्र वगेरे ग्रहण करवां ते बीजो भांगो २.

[इहां पाटीयारी तथा आगारी ते पाछी आपी शकाय ने पाट पाटला मकान विगेरे वस्तु ग्रहण करवी ए पहेलो भांगो १, अणआगारी ते पाछुं आपवा वगरनी वस्तु लावी ते बीजो भांगो २, एम पण केटलाक कहे छे] ए चोथी आदान निक्षेवणा सुमतीना बे भांगा जाणवा.

५. चोथी परिठवणीया सुमतीना [illegible] भांगा केने कहे छे.

अर्थः-हवे जेम मनगुप्ती करी तेमज वचनगुप्ती कहेछ । स० साचा वचनगुप्ती १ । ब० वचन मात्र गु० वचनगुप्ती २ ग० बीजी ॥ स० सत्य षो० मृषा वचनगुप्ती ३ त० तेपदिज ग० बीजी । च० चोथी अ० असत्या अ० अमृषा ग० बीजी ४ । व० वचनगुप्ती च० च्यार प्रकारे करी ॥ २२ ॥

मूलः-सच्चा तहेव मोसा य सच्चमोसा तहेव य ।
चउत्थी असच्चमोसा य वइगुत्ती चउव्विहा ॥ २२ ॥

गाथा २२ भावार्थः-हवे वीजी वचन गुप्ती कहेछे, १ सत्यवचन गुप्ती, २ असत्य वचन गुप्ती, ३ सत्या मृषा (मिश्र) वचन गुप्ती, ४ असत्या अमृषा (एटले सत्य पण नहि अने असत्य पण नहि ते व्यवहार) वचनगुप्ती ए च्यार प्रकारनी वचन गुप्ती करी ॥ २२ ॥

अर्थः-अ० वचन कहे ए परे तो साधं ? स० एटले कोइ मारे एम कहे ? आ० हुं मारूं एम कहे ? ब० बीजी ग० तेमहिज ग० बीजी ए ३ ने विषे प० वचन प्रवर्त्तनो पक्षो नु० गुरुणे नि० निषेधवे ज० जतनावंत ज० जति ॥२३॥

मूलः-संरम्भसमारम्भे आरम्भे य तहेव य ।
वयं पयत्तमाणं तु नियत्तेज्ज जयं जई ॥ २३ ॥

गाथा २३ भावार्थः-वली १ संरंभ, २ समारंभ, ने ३ आरंभथी वचन निवर्त्तावे, ए परे तो साधं एम वचनथी कहे ते १ संरंभ, एटले कोइ मंत्रादिक प्रयोगथी मारे तो साधं एम कहे ते २ समारंभ, परजीवने विनाश करवा कारण उपाडवा दुष्ट विद्या मंत्रादिकनो जाप करे तथा हुं एने मारूं एम कहे ते ३ आरंभ, ए त्रणने विषे

प्रमाणे प्रकार करतां उपर मुजब १०२३ भांगा थाय ए सर्वे अशुद्ध भांगे न परठवतां एक लेहा १०२४ | अध्य०
मां शुद्ध भांगे यत्नापूर्वक परठववुं एम पांचमी समतीना कुल १०२४ भांगा जाणवा.

हवे त्रण गुप्तीना नव भांगा कहेछे, सारंभ १, समारंभ २, आरंभ ३, ए त्रण त्रण भांगा एकेकी गुप्तीना ॥ २५ ॥
॥ २६९ ॥ गणतां त्रण गुप्तीना नव भांगा जाणवा. ए प्रमाणे आठे प्रवचन माताना सर्व थइने १०७८ भांगा जाणवा.

एम सुधर्मा स्वामी पोताना जंबू नामना शिष्यने कहेता हवा के हे जंबू? जेम में श्री महावीर देवस्वामीनी समीपे सांभल्युं हतुं तेम में तुज प्रत्ये कयुं ॥२७॥ इतिश्री आठ प्रवचन मातानुं चोविसमुं अध्ययन संपूर्ण. ॥२४॥ ए आठ प्रवचन माता कही, तेनो भाव ब्राह्मणनी समिपे मळे, ते माटेजयघोष विजयघोष ब्राह्मणनुं पचीसमुं अध्ययन कहे छे.

अर्थः-मा० ब्राह्मणना कु० कुलने विषे सं० उपन्यो ॥ आ० हुओ वि० ब्राह्मण य० महा यशवंत । जा० अविते भावयज्ञ करीने ज० महाव्रतरुप ज० यज्ञनेविषे ज० जयघोष इ० एहवे ना० नामे साधु ॥ १ ॥

मूलः-माहणकुलसंभूओ आमि विप्पो महायसो ।
जायाई जमजन्नंमि जयघोसे त्ति नामओ ॥ १ ॥

छाया १ भावार्थः-वणारसी नगरिने विषे ब्राह्मणना कुलने विषे उत्पन थयेल पैन महाव्रतरुप
यज्ञयज्ञ ने करनार महा यशवंत एवो जयघोष नामे मुनी थयो ॥ १ ॥ ॥२६९॥

वचनगुप्ती २ ग० बली ॥ म० सत्य मो० मृषा वचनगुप्ती ३ त० तेमज मो० मृषा
त्या अ० असत्या ग० बली ४ । व० वचनगुप्ती च० च्यार प्रकारे कही ॥ २२ ॥

मूलः—सच्चा तहेव मोसा य सच्चमोसा तहेव य ।
चउत्थी असच्चमोसा य वइगुत्ती चउव्विहा ॥ २२ ॥

गाथा २२ भावार्थः—हवे त्रीजी वचन गुप्ती कहेछे, १ सत्यवचन गुप्ती, २ असत्य वचन गुप्ती, ३ सत्या
मृषा (मिश्र) वचन गुप्ती, ४ असत्या अमृषा (एटले सत्य पण नहि अने असत्य पण नहि ते व्यवहार) वचनगुप्ती
ए च्यार प्रकारनी वचन गुप्ती कही ॥ २२ ॥

अर्थः—सं०वचन कहे ए मरे तो मारुं ? स०एहने कोइ मारे एम कहे २ आ०हुं मारुं एम कहे ३ प०बली
त०तेमहिज ग० बली ए ३ ने विषे प०वचन प्रवर्तनो एको तु०पुरुषे नि०निवर्तावे ज०जननान्तर ज०जाति ॥२३॥

मूलः—संरम्भसमारम्भे आरम्भे य तहेव य ।
वयं पवत्तमाणं तु नियत्तेज्ज जयं जई ॥ २३ ॥

गाथा २३ भावार्थः—बली १ संरंभ, २ समारंभ, ने ३ आरंभथी वचन निवर्तावे, ए मरे तो मारुं एम
वचनथी कहे ते १ संरंभ, एने कोइ मंत्रादिक प्रयोगथी मारे तो मारुं एम कहे ते २ समारंभ, परजीवने विनाश
करवा मारण उच्चाटन थइ रह्युं विद्या मंत्रादिकनो जाप करे तथा हुं एने मारुं एम कहे ते ३ आरंभ, ए त्रणने विषे

गाथा ४ भावार्थः–हवे तेवे प्रस्तावे वणारसी नगरीने विषे चार वेदनो जाण एवो विजयघोष नामे ब्राह्मण यज्ञ करतो हवो ॥ ४ ॥

अर्थः–अ० हवे से० ते यज्ञने विषे त० तिहां अ० जयघोष नामे अणगार । मा० मासखमणने पा० पारणे वि० विजयघोषना ज० यज्ञनेविषे ॥ भि० भिक्षाने अ० अर्थे उ० तिहां आव्यो छे ॥ ५ ॥

मूलः–अह से तत्थ अणगारे मासक्खमणपारणे ।
विजयघोसस्स जन्नंमि भिक्खट्ठा उववट्ठिए ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः–हवे ते जयघोष नामे अणगार मास खमणने पारणे त्यां विजयघोष ब्राह्मणना यज्ञना पाडाने विषे भिक्षाने अर्थे आवी उभो रह्यो ॥५॥

अर्थः–स० भिक्षाने अर्थे आव्यो तेहने त०तिहां यज्ञनोविषे सं० आव्यो छता ने जा० जागनो करणहार विजयघोष प० निषेधे छे न० न हु० निश्चे दा० दउं ते० तुजने भि० भिक्षा भि० हे भिखु तुं जा० जाचे अ० विप्र विना बीजे घरे ॥ ६ ॥

मूलः–समुवट्ठियं तहिं सन्तं जायगो पडिसेहए ।
न हु दाहामि ते भिक्खं भिक्खू जायाहि अन्नओ ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः–ते यज्ञ पाडाने विषे भिक्षाने अर्थे आवेला मुनिने देखीने यज्ञनो करणहार विजयघोष ते

अर्थः–जे० जे ते[illegible] ॥ ६ ॥

ए श्रीजी एषणा समितीने विषे ... महाव्रत केवी रीते समाय छे ते कहे छे, १ परजीवने दुःख न थाय तेवी रीते निर्दोष आहारादीक लेनार होवाथी श्रीजी एषणा समितीमां पहेलुं महाव्रत समाय, २ निर्दोष ग्रहण करनार सत्यवक्ता होय तेथी बीजुं महाव्रत समाय, ३ निर्दोष दीधेलुंज ग्रहण करनारी श्रीजुं महाव्रत समाय, ४ मैथुन सर्वथा छोड्या तेथी निर्दोष ग्रहण करनार मैथुन सेवे नहि माटे चोथुं महाव्रत समाय, ५ निर्दोष ग्रहण करनार सदोष परिग्रहने ग्रहण करता नथी तेथी पांचमुं महाव्रत समाय, एवी रीते श्रीजी एषणा समितीने विषे पांच महाव्रत समाय छे.

हवे चोथी आदान निक्षेपणा समितीने विषे पांच महाव्रत केवी रीते समायां छे ते कहे छे, १ यत्नाए लेनार मूकनार जीवहिंसा करे नही तेथी चोथी आदान निक्षेपणा समितीमां पहेलुं महाव्रत समाय, २ यत्नाए लेनार मूकनार परजीवने दुःखकर अयत्नावाळुं असत्य वचन बोले नही तेथी बीजुं महाव्रत समाय, ३ अदत्तादान लेवाथी परजीवने दुःखरूप अयत्ना थाय छे ते यत्नाए लेनार मूकनार अयत्ना करतो नथी तेथी त्रीजुं महाव्रत समाय, ४ यत्नाए लेनार मूकनार अयत्नावाळुं मैथुन सेवतो नथी तेथी चोथुं महाव्रत समाय, ५ यत्नाए लेनार मूकनार अयत्नावाळो परिग्रह ग्रहण करतो नथी तेथी पांचमुं महाव्रत समाय, एवी रीते चोथी आदान निक्षेपणा समितीने विषे पांच महाव्रत समाय.

हवे पांचमी पारिठावणीया समितीने विषे केवी रीते पांच महाव्रत समाय ते कहे छे, ? यत्नाए

मूलः—सो तत्थ एव पडिसिद्धो जायगेण महामुणी ।
न वि रुट्ठो नवि तुट्ठो उत्तमट्ठगवेसओ ॥ ९ ॥

गाथा ९ भावार्थः—ते यज्ञना करणहार विजयघोष पुर्वोक्त प्रकारे जयघोष मुनिने निषेध्यो थको मोक्षना मुखनो गवेषी एवो ते मुनि क्रोधने वशे पहोंच्यो नहीं तेमज संतोष पण न पाम्यो (अर्थात समभावे रह्यो) ॥ ९ ॥

अर्थः—हवे मुनी बोल्या । न० नही अ० अन्नने अ० अर्थे नही पा० पाणीने हे० हेते अर्थे नहि वा० अथवा न० वस्त्रादिकना नहि नि० निर्वाहने अर्थे ते विप्र प्रते उपदेश कहेता नथी वा० वली ते० ते विजयघोषने । वि० संसारथकी मुकावाने अ० अर्थे । इ० यतिए आगल कहेशे ते व० वचन अ० बोलतो हवो ॥ १० ॥

मूलः—नन्नट्ठं पाणहेउं वा नवि निव्वाहणाय वा ।
तेसिं विमोक्खनट्ठाए इणं वयणमब्बवी ॥ १० ॥

गाथा १० भावार्थः—हवे ते मुनि अन्नने अर्थे नहि, पाणीने अर्थे नहि, तेमज वस्त्रादिकना निर्वाहने अर्थे नहि, पण फक्त विजयघोषादिक ब्राह्मणने संसार थकी मुकावाने अर्थेज ए आगळ कहेशे, तेम मुनि विप्र प्रत्ये बोलतो हवो ॥ १० ॥

अर्थः—न०नथी जा० जाणतो तुं वे० वेदमांहि जे मु० प्रधान न० नथी जाणतो तुं जं० यज्ञनो जं० जे मु० उपाय न० नक्षत्रमांहि मु० प्रधान जं० जे च० ए रणे जं० जे च० पृथ्वे वा० वली ध० धर्मनो मु० उपाय तुं नथी जाणतो ॥ ११ ॥

	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
आ कोठाना आंकडा साथे गुणवा.	१०	९	८	७	६	५	४	३	२	१
आ कोठामां मळतेआंके ते मूलक संख्यांक आवे	१०	४५	१२०	२१०	२५२	२१०	१२०	४५	१०	१
आ कोठामां आपेली संख्या मूलक संख्यांनी सामनवा	अपेली नी	इसंपो नी	बीसंपो नी	चोसंपो नी	पांच सं पो नी	छ संपो नी	सात सं पो नी	आठ सं पो नी	नव सं पो नी	दस सं पो नी

आ संपोनी कादवानी समज.

उपर मुलब पंक्ति मरी प्रथम पंक्तिमां अनुक्रमे लखवा पछी बीजी पंक्तिमां तमाम अवळा आंक भरवा, पछी प्रथम पंक्तिना छेल्ला कोठामां जे आंक होय ते आंक, बीजी पंक्तिना प्रथम परमां लखवो, पछी बेला साथे ते आंक होय तेथी नमणा तरफना कोठामां जे आंक होय तेनी साथे बीजी पंक्तिना प्रथम कोठाना आंकने गुणवो, ते आंक साथे गुण्यो होय तेना माथा उपर प्रथम पंक्तिमां लखेलो ए रीते तमाम कोठा भरवानी संपोनी आवी रहे. ते प्रथमांक मांहे ते बीजी पंक्तिना बीजा कोठामां लखवो ए रीते तमाम कोठा भरवानी संपोनी आवी रहे. पाचमी गुणतीमां परठवाना दश बोल करेला छे त्यां परठवुं नही, ए दश बोलनी

अर्थः-वे० वेदमांहि जे च० पूर्ण मु० प्रधान ते मुजने वू० कहो ॥ वू० कहो ज० यज्ञनो जं० जे मु०उपाय न० नक्षत्र मांहि जे मु० प्रधान वू० कहो जं०जे च० वली ध० धर्मनो वा० अथवा मु० उपाय ॥१४॥

मूलः—वेयाणं च मुहं बूहि बूहि जन्नाण जं मुहं ।
नक्खत्ताण मुहं बूहि जं च धम्माण वा मुहं ॥ १४ ॥

गाथा १४ भावार्थः-हे मुनि ? वेदमांही मुख्य कोण ? यज्ञमांही मुख्य कोण ? नक्षत्रमांही मुख्य कोण ? अने धर्ममांही मुख्य कोण ? ते मुजने कहो ? ॥ १४ ॥

अर्थः-जे० जे स० समर्थ होय सं०संसाररुपीया समुद्रथी उ०उधरवा । प०परजीवने अने अ०आपणा आत्माने ए० ए पुर्वे कहुं ए०ते । ए० ए मे० मुजने सं० संदेहछे स०सर्व सां०हे साधु क०कहे पु० पुछ्यो छते ॥१५॥

मूलः—जे समत्था समुद्धत्तुं परमप्पाणमेव य ।
एयं मे संसयं सव्वं साहू कहसु पुच्छिओ ॥ १५ ॥

गाथा १५ भावार्थः-जे पोताना तथा परना आत्माने संसारसमुद्र थकी उद्धार करवा समर्थ कोण ? ए पुर्वोक्त सर्व मुजने संशय छे, तो हे साधु ! हुं तुजने पुछुंछुं के एनो प्रत्युत्तर शुं ! ते तुं मुजने कहे ॥१५॥

अर्थः-वेद अक्षरे प्रमाण छे ते वेद केहवा छे, धर्मध्यान तथा तपरुप अग्नि ? । कर्मरुप ईंधण ३ ।

...ग्रामे प्रति वि० विचरतो थको
...या वा० वाणारसी पु० नगरीने विषे ॥२॥

मूलः—इन्दियग्गामनिग्गाही मग्गगामी महामुणी ।
गामाणुग्गामं रीयन्तो पत्तो वाणारसिं पुरिं ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः—पांच इंद्रियोना विषयोना समुह (जथो) नय करणहार अने मोक्षमार्गने विषे चा-
लनार एवो जयघोष नामे मोटो मुनीश्वर गामानुंग्राम प्रत्ये विचरतो थको वणारसी नगरी पहोंच्यो ॥ २ ॥

अर्थः—वा० वाणारसी नगरीने व० बाहिर । उ० उद्यानने विषे । म० मनोरम एहवे नामे फा०
निर्दोष से० थानक पाठ सं० तृणादिक छे । त० तिहां वा० वास रहेवुं उ० पाम्यो ॥ ३ ॥

मूलः—वाणारसीए बहिया उज्जाणंमि मणोरमे ।
फासुए सेज्जसंथारे तत्थ वासमुवागए ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः—वणारसी नगरीनी बहार मणोरम नामे उद्यानने विषे निर्दोष स्थानक पाटपाटला
तृणादिक छे त्यां मुनि वासो रह्यो ॥ ३ ॥

अर्थः—अ० हवे ते० तेणेज फा० काले । पु० नगरीए त० तिहां मा० ब्राह्मण । वि० विनयघोष
इ० एहवे ना० नामे । ज० यज्ञ ज० करे छे वे० वेदनो जाण ॥ ४ ॥

मूलः—अह तेणेव कालेणं पुरीए तत्थ माहणे ।
विजयघोसे त्ति नामेण जन्नं जयइ वेयवी ॥ ४ ॥

थकां गुण स्तवंता थका ने नमस्कार करता चंद्रमाने सेवे छे ने प्रधान विनये करी चंद्रमाना मनना हरनार छतां सदाय रहे छे, तेम श्री आदीनाथने इंद्रादिकदेवो हाथ जोडीने सेवा करता हवा ॥ १७ ॥

अर्थः–हवे जे तारि न शके तेनो स्वरुप कहेछे अ० विम तत्वना अजाणछे ज० यज्ञना वेदना करणहार वि० तत्वना अने ज्ञानना अने मा० विमनी जे सं० संपदा तेहना अजाण गू० मोहवंत अज्ञान स० स्वाध्याय अने त० तप करवे करी अजाण भा० भस्म राखे करी च्छ० ढांकी इ० ए अ० अग्नीनी परे ए विम छे ॥ १८ ॥

मूलः–अजाणगा जन्नवाई विज्जामाहणसंपया ।
गूढा सज्झायतवसा भासच्छन्ना इवग्गिणो ॥ १८ ॥

गाथा १८ भावार्थः–हवे विम तारण करी शके नहि तेनुं स्वरुप कहेछे. जे विम पुर्वोक्त वेदनां तत्वनां अजाण छतां यज्ञना करणहार, अग्नीविद्याने ब्राह्मणनी संपदा पण जाणे नहि, मोहवंतने सझाय तप अण करवाथी गुप्त एवा विम ढांकी अग्नी सरीखा जाणवा, एटले जेम राखे करी ढांकेली अग्नी बहार शीतळ देखाय पण अंदर जाजवल्यमान होय, तेम ए ब्राह्मण बहारथी शीतळ होय पण अंदरमां कषाय अग्नीए करी मादेल छे ॥१८॥

अर्थः–हवे सुपात्रनो स्वरुप कहे छे जो० जे कोइ लो० लोकने विषे । वं० ब्राह्मण यु० कहा । अ० अग्नीनी व० परें म० पुजनीक ज०जेम अग्नी तेम । स०सदा कु०केवलज्ञानीए सं० कह्या जेहने ब्राह्मण । तं० तेहने व० अम्हे यू० कहुं मा० ब्राह्मण ॥ १९ ॥

अर्थः—जे० जे वे० वेदना वि० जाणे वि० विज्ञ होय। ज० यत्नना अ० अर्थे होय य० यत्नी जि० जे
जिंदिय जो० इंद्रियो जायना अने। अ० छ अंगना विज्ञ जाग्रनो वि० जाण होय जे० जे य० यत्नी ज० यत्न
प० पर्वे जायना पा० पारगामी जाण होय ॥ ७ ॥

मूलः—जे वेयविऊ विप्पा जन्नट्ठा य जिइन्दिया।
जोइसङ्गविऊ जे य जन्नधम्मस्स पारगा ॥ ७ ॥

गाथा ७ भावार्थः—हे मुनि ! ए अन्न तो कोने आपवानुं छे के जे विज्ञ वेदना जाण होय, यत्नना अर्थि
होय, इंद्रियजायने विज्ञना जायना छ अंगना जाण होय, तेमज धर्मनाजायना पारगामी होय ॥ ७ ॥

अर्थः—जे० जे स० समर्थ होय स० संसार समुद्रथी उ० उधरवा। प० परजीवने भणे अ० आपणा आत्माने
सारी प० यत्नी ने० जाणे अ० अन्न इ० ए हे० देवो ॥ भो० हे भि० साधु स० ए अन्न मनवांछितछे का० रसमाहितछे ॥८॥

मूलः—जे समत्था समुद्धत्तुं परमप्पाणमेव य ।
तेसिं अन्नमिणं देयं भो भिक्खू सव्वकामियं ॥ ८ ॥

गाथा ८ भावार्थः—जे पोताना तथा परना आत्माने संसारसमुद्र थकी उद्धार करवा समर्थ होय
एवा विज्ञने हे भिक्षु ! सहरस संयुक्त मनोवांछित ए अन्न आपवानुं छे. (अर्थात तमने आपवानुं नथी.) ७
थी ८ सी ए बे गाथाना अर्थनो संबंध मेगो छे ॥ ८ ॥

अर्थः—भो० हे तपोधन साधो नहिंने न० निश्चे ए० एणे प्रकारे प० निषेध्या ना० जाणे—

गाथा २१ भावार्थः—जेम जातीवंत सुवर्ण मेल रहित थइने ओप चडावेला अग्नीयें करी मेल दूर टाळे तेम तप रुपणी अग्नीये करी कर्मरुपी मेल जेणे टाळ्योछे तथा जेम सुवर्णनो मोटो अर्थछे तेम जेने सुवर्ण सरिखो मोक्षनो मोटो अर्थ छे तेमज राग द्वेषने आ लोकादिक ७ प्रकारना भयथी रहित होय तेने हुं ब्राह्मण कहुंछुं ॥ २१ ॥

अर्थः—त० तपस्वी कि० दुर्बल दं० इंद्रिनो दमणहार। अ० उपचय रहित मं० मांस सो० लोही ॥ सु० सुव्रती प० पाम्यो छे नि०स्वस्थपणुं (निर्वाण) एहवो होय। तं० तेहने व०अम्हे वू०कहिए मा०ब्राह्मण ॥२२॥

मूलः—तवस्सियं किसं दन्तं अवचियमंससोणियं ।
सुव्वयं पत्तनिव्वाणं तं वयं बूम माहणं ॥ २२ ॥

गाथा २२ भावार्थः—जे इंद्रियोने दमन करनार, ने जेनुं तपश्चर्या करवाथी लोही मांसना उपचय (पुष्ट) पणा रहित दुर्बळ शरीर थयुंछे ने जे सुव्रति जेणे चारे कषायउपसमावेला छे तेने हुं ब्राह्मण कहुंछुं ॥२२॥

अर्थः—त० त्रस पा० जीवने वि० विशेषे या० जाणीने सं० संक्षेपे य०वळी था० थावर पृथ्वीयादिक पांच जीवने जो०जे हि०हणे न०नहि ति०मन वचन कायाए करीने नव कोटिए तं०तेहने व०अम्हे मा०ब्राह्मण वू०कहिए ॥२३॥

मूलः—तसपाणे वियाणेत्ता संगहेण य थावरे ।
जो न हिंसइ तिविहेण तं वयं बूम माहणं ॥ २३ ॥

गाथा २३ भावार्थः—जीव जे त्रस (हरता फरता) ने स्थावर (स्थिर रहे ते) पृथ्वी, पाणी, अग्नि, वायु, ने

नम्मत्ताण मुहं ज च जं च ध ...ण वा मुह ॥ ?? ॥

गाथा ११ मात्रार्थः-हे विप्र ? वेदमांही मुख्य कोण? ने तुं नथी जाणतो? ने य ...ा मुख्य कोण? ने तुं नथी जाणतो? ने यज्ञमांही मुख्य कोण? ने पण तुं नथी जाणतो !!! ॥११॥

अर्थः-ते० ते ग० समर्थ होय सं० संसाररूप समुद्रथी उ० उधरवा। प० परजीवने अने भ० आपणा आत्माने ए० ए पूर्वे कहे्ल प्र० ते न० नथी ते० तुं तु० तेनुं वि० जाणतो अ० जो तुं जा० जाणेछे तो० तो तुं भ० कहे॥१२॥

मूलः—जे समत्था समुद्धत्तुं परमप्पाणमेव य ।
न ते तुमं वियाणासि अह जाणासि तो भण ॥ १२ ॥

गाथा १२ मात्रार्थः-ते पोताना तथा परना आत्माने संसारसमुद्र थकी उद्धार करवा समर्थ कोण? ने तुं नथी जाणतो! अने जो तुं जाणतो होय तो कहे ?!! ॥१२॥

अर्थः-ग० ते मुनीना सं० प्रश्नो प० उत्तर तु० कहो। अ० देवा असमर्थ छतो। न० ते यज्ञने विषे वि० विप्र। ग० शक्तिवंत सहित प० वे हाथ जो० जोडीने। तु० पूछे सं० ते ग० महा मु० मुनी प्रत्ये ॥१३॥

मूलः—तम्मत्तेवागमो सव्वं तु अवयन्तो नहिं दिओ।
सगम्मिो पञ्जली होउं पुच्छई तं महामुणिं ॥ १३ ॥

गाथा १३ मात्रार्थः-विप्रवर्य ब्राह्मण ते मुनिना प्रश्नोना उत्तर देवा असमर्थ छतो ते यज्ञ पाडामां आवेला सर्व ब्राह्मण सहित बे हाथ जोडीने ते महा मुनिने पुछता हवा ॥ १३ ॥

मूलः—पसुबन्धा सव्ववेया य जट्ठं च पावकम्मुणा ।
न तं तायन्ति दुस्सीलं कम्माणि बलवन्तिह ॥ ३० ॥

गाथा ३० भावार्थः—हे विजयघोष ? ए सर्व वेद ते पशुने बधबंधननो हेतु छे अने यज्ञ ते पापकर्मनो हेतु छे तेथी ते वेदना भणनार अने यज्ञना करनार ने ते वेद ने ते यज्ञ हिंसादिक दुष्टाचारीने त्राण शरण नहि, कारण के ते पशुबधादिक पापकर्म दुर्गतिये पहोंचाडवा समर्थ छे तेथी एवा वेद यज्ञादिक त्राणशरण न होय ने तेवा वेद यज्ञना जाणनारने सुपात्र न कहीए ॥३०॥

अर्थः—मु० मस्तक मुंडवे करी न० न होय स० श्रमण साधुपणो । न० न ओं० ॐकार भणवे करी ब० ब्राह्मण न० न होय मु० मुनी र० अटवीने वा० सेववे करी । कु० भगवा चीं० वस्त्र पहेरवे करीने न० न होय ता० तापस ॥ ३१ ॥

मूलः—नवि मुण्डिएण समणो ओंकारेण न बम्भणो ।
न मुणी रण्णवासेणं कुसचीरेण तावसो ॥ ३१ ॥

गाथा ३१ भावार्थः—वळी हे विजयघोष ! मस्तक मुंडवे करी साधु न होय ? ॐ कार भणवे करी ब्राह्मण न होय ? वनवासी वसवे करी मुनि न होय ? तेमज भगवां वस्त्र पहेरवाथी तापस न होय ॥ ३१ ॥

होय । ब० ब्राह्मण करवे करी हो० होय मा० तापस ॥ ३२ ॥

मनो परुपक्रमादि का० काउस्सग्गमा श्री रुषभदेव तथा

मूलः—अग्गिहोत्तमुहा वेया जन्नट्ठी वेयसा मुहं ।
नक्खत्ताण मुहं चन्दो धम्माण कासवो मुहं ॥ १६ ॥

गाथा १६ भावार्थः—ते चारे मुनि कहेता हवा के हे विभो ? वेदमांही मुख्य अग्निहोत्रछे, ते अग्निहोत्र केवो होय १ जीवरुप कुंड, २ तपरुपी वेदीका, ३ कर्मरुपी ईंधण, ४ ज्ञानरुपणी अग्नि, ५ नरीरुपी गोर, ६ शुभ योगरुपी चाटवो, ७ शुद्ध भावना तथा जीव दयारुप आहुती जाणवी, एवो अग्निहोत्र वेदमां मुख्यछे, अने एवो अग्निहोत्र (यज्ञ) जे वेदने विषे मुख्यछे, तेज वेद प्रमाणछे. ए संयमरुपी यज्ञ पुर्वे कर्यो, तेना अर्थि साधु ! तेन यज्ञनो प्रवर्तावणहारोछे, नक्षत्रमां चंद्रमा मुख्यछे, धर्मना परुपक्रमांही रुषभदेव तथा महावीर स्वामी मुख्यछे ॥१६॥

अर्थः—ज० जेम चं० चंद्रमाने ग० ग्रहादिक वि० ॥ विषे छे पं० हाथ जोडता छता । वं० गुणस्तवता थका न० नमस्कार करता थका । उ० प्रधान विनय करवे करी चंद्रमाना म० मनना हा० हरणहार छता विषे छे तेम रुषभदेवने पण देवता इंद्रादिक सेवा करे छे ॥ १७ ॥

मूलः—जहा चन्दं गहाईया चिट्ठन्ती पंजलीउडा ।
वन्दमाणा नमंसन्ता उत्तमं मणहारिणो ॥ १७॥

गाथा १७ भावार्थः—जेम चंद्रमाने आगे ग्रह, नक्षत्र, तारा, बे हाथ जोडीने सामा उभा रहे ने वांद-

होय तं० तेहने व० अम्हे मा० ब्राह्मण वू० कहिए ॥ ३४ ॥

मूलः–एए पउकरे बुद्धे जेहिं होइ सिणायओ ।
सव्वकम्मविनिम्मुक्कं तं वयं बूम माहणं ॥ ३४ ॥

गाथा ३४ भावार्थः–ए पूर्वोक्त अहिंसादिक धर्म सर्वज्ञ तिर्थंकर प्रगट करता हवा अने तेज धर्मे करी ते तिर्थंकर केवळी थया ने सर्व कर्म रहितनी पेरे सिद्ध (उतावळो) मोक्ष पहोंचे तेवो होय तेने हुं ब्राह्मण कहुंछुं॥३४॥

अर्थः–ए० ए पुर्वोक्त कह्या तेणे करी तेणे प्रकारे गु० अहिंसा गुणे करी स० सहित जे० जे भ० होय दि० ब्राह्मण उ० प्रधान ते० ते स० समर्थ होय उ० वळी उ० संसारथकी उधरवा । प० पर जीवने अने अ० आपणा आत्माने य० वळी ॥ ३५ ॥

मूलः–एवं गुणसमाउत्ता जे भवन्ति दिउत्तमा ।
ते समत्था उ उद्धत्तुं परमप्पाणमेव य ॥ ३५ ॥

गाथा ३५ भावार्थः–ए पुर्वोक्त प्रकारे अहिंसादिक गुणे करी सहित जे उत्तम ब्राह्मण होय ते ब्राह्मण पोताना तथा परना आत्माने संसारसमुद्र थकी उद्धार करवा समर्थ होय ॥ ३५ ॥

अर्थः–ए० एणे प्रकारे तु० पुरणे सं० संदेह छि० टालेथके । वि० विजयघोष नामा य० वळी मा० ब्राह्मण स० साने मने यतिना वचन ग्रहिने त० तेवार पछी तं० ते यतिने तु० वळी । ज० जयघोष नामे म० महा मुनिने ॥३५॥

मया कुशलसंदिष्टं तं वयं ब्रूम माहणं ॥ १९ ॥

गाथा १९ भावार्थः-हवे जे गुणवंत विप्र कारण करी पक्के तेनुं स्वरूप कहेछे. जी संचिलो निर्मळ अग्नी-ओ पेरे पूजनिक जे एह लोकने विषे ब्राह्मण केवळज्ञानीये सदाय करेल छे, तेने हुं ब्राह्मण कहुंछुं ॥ १९ ॥

अर्थः-जो० जे म० मागल्क न० न होय जा० स्वजनादिकने थानके आवीने । प० बीजे स्थानके जातोथको न० न सो० खेद करे अथवा पश्चात्तो० मनमां ग्रहतो थको न० न सो० खेद करे । र० रती पाये अ० निर्मलना व० वचनने विषे तं० तेने व० अम्हे ब्रू० कहीए मा० ब्राह्मण ॥ २० ॥

मूलः-जो न सज्जइ आगन्तुं पव्वयन्तो न सोयई ।
रमइ अज्जवयणंमि तं वयं ब्रूम माहणं ॥ २० ॥

गाथा २० भावार्थः-जे स्वजनादिकना थानके आवी आसक्त न होय अने बीजे स्थानके जातो थको अथवा मनमां ग्रहण करतो थको खेद न करे अने निर्मलना वचनने विषे रती गुणी पाये तेने हुं ब्राह्मण कहुंछुं ॥२०॥

अर्थः-जा० सुवर्ण ज० जेम नि० समाणो ओप्पो अथवा जहा० जेम सुवर्णनो जेम मोटो अर्थछे तेम जे ब्राह्मणने सुवर्ण सरिखो मोटो अर्थछे तेम नि० टाल्यो म० मेल पा० जेम अग्नीए करी सुवर्ण तेम तपे करी कर्म मेल टाल्यो छे जेणे रा० राग दो० द्वेष भ० ह्रह लोकादिक सात भय रहित तं० तेने व० अम्हे मा० ब्राह्मण ब्रू० कहिये ॥ २१ ॥

मूलः-जायरूवं जहा मिट्ठं निद्धन्तमलपावगं ।
रागदोसभयाईयं तं वयं ब्रूम माहणं ॥ २१ ॥

अर्थः–तु० तुम्हे स० समर्थ छो उ० संसारथी उधरवाने । प० परजीवने अने अ० पोताना आपणा आत्माने य० बलोत० ते भणी अ० उपगार क० करो अ० अम्हने भि० भिक्षा लेवे करी भि० हे भिक्षु तुं उ० भिक्षुमांहि उत्तम॥३९॥

मूलः–तुब्भे ममत्था उद्धर्तुं परमप्पाणमेव य ।
तमणुग्गहं करेहम्हं भिक्खेणं भिक्खु उत्तमा ॥ ३९ ॥

गाथा ३९ भावार्थः–तमेज पोताना तथा परना आत्मानो उद्धार करवा समर्थ छो ? ते माटे हे भिक्षु मांही उत्तम भिक्षु ? अमारी भिक्षा लइने अमने उपकार करो ॥ ३९ ॥

अर्थः–न० नथी क० कार्य प्रयोजन म० मुजने भि० भिक्षाए । खि० शीघ्र नि०घरथी नीकली दिक्षा लेइ दि० हे भला त्रि० मा० मा भ० भमिसमां भ० इह लोकादिक सात भय ते आवर्तननी परे आवर्तन छे जिहां एहवा भयावर्तन । घो० रौद्र सं० संसाररुपीया सा० समुद्रनेविषे ॥ ४० ॥

मूलः–न कुज्जं मज्झ भिक्खेण खिप्पं निक्खमसू दिया ।
मा भमिहिसि भयावट्टे घोरे संसारसागरे ॥ ४० ॥

गाथा ४० भावार्थः–तेवारे यती बोल्यो मारे भिक्षानुं कांइ प्रयोजन नथी, पण हे ब्राह्मण ? तुं घरथी [illegible] दीक्षा लेइ अने आ लोकादिक सात प्रकारना भयना जेने विषे आवर्तन पेठे छे एवा रौद्र [illegible]

मूलः–उच्चोयो होइ भोगेसु अभोगी नोवलिप्पई ।
[illegible] अभोगी विप्पमुच्चई ॥ ४१॥

...ी ...ी ...ी

गाथा ४३ भावार्थः-एक द्रष्टांते बुंदी मतिना धणी जे कामभोगने विषे लुब्ध होय ते पापे करीने संसार रुपणी भींतने विषे पडगी रहे अने जे कामभोगथी विरक्त होय ते मुका गोळानी पेरे संसार रुपणी भींतने विषे वळगे नहि ॥४३॥

अर्थः-ए० एणीपरे सं० ते वि० विजयघोष । ज० जयघोष नामे यतीने अ० समीपे । अ० अणगारनी पासे नि० दिक्षा लीधी । ध० ॥ अहिंसादिक धर्म्म सो० सांभळीने ते धर्म केहवो छे । अ० अणुत्तर प्रधान ॥ ४४ ॥

मूलः-एवं से विजयघोसे जयघोसस्स अन्तिए ।
अणगारस्स निक्खन्तो धम्मं सोच्चा अणुत्तरं ॥ ४४ ॥

गाथा ४४ भावार्थः-एवी रीते विजयघोष ब्राह्मण जयघोष यतीनी पासे अहिंसादीक उत्तम धर्म सांभळीने ते मुनिनी पासे दीक्षा लीधी ॥ ४४ ॥

अर्थः-ख० खपावीने पु० पुर्वला भवना जे क० कर्म तेहने सं० संजमे करीने अने त० तपे करीने य० वळी ज० जयघोष वि० विजयघोष । सि० मोक्ष प० पाम्या अ० प्रधानगति प्रते त्ति० एम वे० कहुंछुं ॥ ४५ ॥

मूलः-खवित्ता पुव्वकम्माइं संजमेण तवेण य ।
जयघोस-विजयघोसा सिद्धिं पत्ता अणुत्तरं ॥ ४५ ॥ ॥ त्ति बेमि ॥

॥ इति जन्नइज्जंपअध्ययनं अध्ययनं सम्मत्तं ॥ २५ ॥

मूलः—समयाए समणो होइ बम्भचेरेण बम्भणो ।
नाणेण उ मुणी होइ तवेण होइ तावसो ॥ ३२ ॥

गाथा ३२ भावार्थः—शत्रु मित्र उपर राग द्वेषरहित समभावे करी साधु होय ? ब्रह्मचर्य पाळवे करी ब्राह्मण होय ? ज्ञाने करी मुनि होय ? तेमज चारे भेदे तपश्चर्याये करी तापस होय ॥३२॥

अर्थः—क० ब्राह्मणनी क्रिया ब्रह्मचर्यादिक पालवे करी वं० ब्राह्मण साधु हो० होय । क० हाथमांहि शस्त्र करी इत्यादिक क्षत्रीनी करणी करी हो० होय स० स्त्री । व० क्षेत्र खेडवे करीने क० करणीए करी वैस हो० होय । क० सेवा चाकरी करवे करी होय सु० शुद्र ह० होय ॥ ३३ ॥

मूलः—कम्मुणा बम्भणो होइ कम्मुणा होइ खत्तिओ ।
वइसो कम्मुणा होइ सुद्दो हवइ कम्मुणा ॥ ३३ ॥

गाथा ३३ भावार्थः—ब्राह्मणनी ब्रह्मचर्यादिक क्रिया पाळवे करी ब्राह्मण होय, शरणागतनुं रक्षण करवा हाथमां खड्गादिक शस्त्रनी क्रियाये करी क्षत्री होय, क्षेत्र खेडवादिक क्रियाये करी वैश्य होय, तेमज सेवाचाकरी प्रमुख क्रियाये करीने शूद्र होय ॥३३॥

अर्थः—ए० एह अहिंसादिक प० प्रगट क० करता हुवां । सु० तत्वना जाण सर्वज्ञ भगवंत कहे । जे० जेणे पर्ये करी हो० होय सि० केवली स० सर्व क० कर्म रहितनी परे वि० शिघ्र सु० मोक्ष पहोंचे तेहनो

आपुच्छणा य तइया चउत्थी पडिपुच्छणा ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः–हवे दश सामाचारीनां नाम कहे छे, १ आवस्यकी नामे, २ नैषधिकी नामे, ३ आपुछणा नामे, ४ पडीपुछणा नामे ॥ २ ॥

अर्थः–प० पांचमी छं० छंदणा एहवे ना० नामे कही ॥ इ० इछाकार य० वली एहवे नामे छ० छठी कही ॥ स० सातमी मि० मिछाकार एहवे नामे उ० वली । त० तहेतनो करवो य० वली अ० आठमी ॥ ३ ॥

मूलः–पञ्चमा छन्दणा नाम इच्छाकारो य छट्ठओ ।
सत्तमो मिच्छकारो उ तहकारो य अट्ठमो ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः–५ छंदणा नामे, ६ इच्छाकार नामे, ७ मिच्छाकार नामे, ८ तहत्तीकार नामे ॥३॥

अर्थः–अ० उठी उभा थावुं च०ते न० नवमी ॥ द० दसमी उ० उवसंपदा गुरु समीपे रहेवुं ॥ ए० ए द० दस प्रकारनी सा० साधुने । सा० सामाचारी प० कही ॥ ४ ॥

मूलः–अब्भुट्ठाणं च नवमं दसमी उवसंपदा ।
एसा दसङ्गा साहूणं सामायरी पवेइया ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थः–९ अभ्युस्थान नामे, १० उपसंपदा, ए दश प्रकारनी साधुनी सामाचारी संक्षेपेकही ॥ ४ ॥

अर्थः–हवे दस सामाचारीनो अर्थ अने अवसर विस्तारे करीने कहे छे । ग० जावा उठवाना अवसरने विषे । आ० आवश्यहि एम कें० कहि आवश्यहि अवश्य कार्य छे ते माटे उठवुं । ठा० स्थानकने विषे

समुदाय तयं तं तु जयघोसं महामुणिं ॥ ३६ ॥

गाथा ३६ भावार्थः—ए प्रकारे संशय निवारण कर्याथी विजयघोष ब्राह्मणे जयघोष मुनिनां वचन सत्य मने करी हृदयने विषे धारण कर्यां, तेवार पछी ते जयघोष महामुनिने वचने ॥ ३६ ॥

अर्थः—तु० संतोषाणो य० वली वि० विजयघोष तिम । इ० ए आगल कहेशे तेम उ० बोलेछे क० ते हाथ जोडीने मा० ब्राह्मणपणो ज० जेम होय तेम यथाभूत । मु० शोभनीक मे० मुजने उ० देखाडयो उपदेश्यो प्रगटकीयो ॥३७॥

मूलः—तुट्ठे य विजयघोसे इणमुदाहु कयञ्जली ।
माहणत्तं जहाभूयं सुट्ठु मे उवदंसियं ॥ ३७ ॥

गाथा ३७ भावार्थः—विजयघोष ब्राह्मण संतोषाणो थको ते हाथ जोडीने आ प्रमाणे कहेतो हवो के हे मुनि ! जेम यथातथ्य ब्राह्मणपणुं होय ! तेम भलुं तमे मुजने कयुं ॥ ३७ ॥

अर्थः—तु० तुम्हे ज० जाणणहार ज० यज्ञना करणहार छो । तु० तुम्हे वे० वेदना वि० जाण छो । जो० ज्योतिष शास्त्रना अने अ० ✪ अंगना वि० जाण छो तु० तुम्हे । तु०तुम्हे ध०धर्मना पा०पारगामीछो ॥३८॥

मूलः—तुब्भे जइया जन्नाणं तुब्भे वेयविऊ-विऊ ।
जोइसङ्गविऊ तुब्भे तुब्भे धम्माण पारगा ॥ ३८ ॥

गाथा ३८ भावार्थः—वली तमेज यज्ञना करणहारछो ने तमेज वेदना जाण छो ने तमेज ज्योतिषशास्त्र ने ✪ अंगना जाण छो ने तमेज धर्मना पारगामी छो ॥ ३८ ॥

आपुच्छणा य तइया चउत्थी पडिपुच्छणा ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः–हवे दश सामाचारीनां नाम कहे छे, १ आवस्यकी नामे, २ नैषधिकी नामे, ३ आपुछणा नामे, ४ पडीपुछणा नामे ॥ २ ॥

अर्थः–प० पांचमी छं० छंदणा एहवे ना० नामे कही ॥ इ० इछाकार य० वली एहवे नामे छ० छठी कही ॥ स० सातमी मि० मिछाकार एहवे नामे उ० वली । त० तहेतनो करवो य० वली अ० आठमी ॥ ३ ॥

मूलः–पञ्चमा छन्दणा नाम इच्छाकारो य छट्ठओ ।
सत्तमो मिच्छकारो उ तहकारो य अट्ठमो ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः–५ छंदणा नामे, ६ इच्छाकार नामे, ७ मिच्छाकार नामे, ८ तहत्तीकार नामे ॥३॥

अर्थः–अ० उठी उभा थावुं च०ते न० नवमी ॥ द० दसमी उ० उवसंपदा गुरु समीपे रहेवुं ॥ ए० ए द० दस प्रकारनी सा० साधुने । सा० सामाचारी प० कही ॥ ४ ॥

मूलः–अब्भुट्ठाणं च नवमं दसमी उवसंपदा ।
एसा दसङ्गा साहूणं सामायरी पवेइया ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थः–९ अभ्युत्थान नामे, १० उपसंपदा, ए दश प्रकारनी साधुनी सामाचारी संक्षेपेकही ॥ ४ ॥

अर्थः–हवे दस सामाचारीनो अर्थ अने अवसर विस्तारे करीने कहे छे । ग० जावा उठवाना अवसरने विषे । आ० आवश्यहि एम कें० कहि आवश्यहि अवश्य कार्य छे ते माटे उठवुं । ठा० स्थानकने विषे

मूलः—उवलेओ होइ भोगेसु अभोगी नोवलिप्पई ।
भोगी भमइ संसारे अभोगी विप्पमुच्चई ॥ ४१॥

गाथा ४१ भावार्थः—हेविप ? भोगे करीने कर्मना लेपथी आत्मा मेलो थाय, अने भोग रहित होय, ते कर्मे करी लेपाय (खरडाय) नहीं तेथी भोगी होय ते संसारमांही परिभ्रमण करे अने भोगरहित होय ते कर्मबंधनथी मुकाय ॥४१॥

अर्थः—उ० । नीलो अने शु० सफोय० वली। दो० बे शू० नाख्या गो० गोला म० माटीना दो० वन्ने वि० पण आ० आफल्या कु० भीते । जो० जे गोलो उ० नीलो हुतो सो० ते न० तिहां भींते ल०लागेवलगे ॥ ४२ ॥

मूलः—उल्लो सुक्को य दो छूढा गोलया मट्टियामया ।
दो वि आवडिया कुड्डे जो उल्लो सो त्थ लग्गई ॥४२॥

गाथा ४२ भावार्थः—वली हे विप ? एक लीलो ने बीजो सुको एवा बे माटीना गोळा भींतने विषे अथडायाथी जे लीलो गोळो होय ते भींतने विषे वळगे (चोंटे) ॥ ४२ ॥

अर्थः—ए० एणे प्रकारे ल० वळगे दु० दुष्ट बुद्धिवंत जे० जे न० नर का० कामभोगनेविषे ला० लंपट होय तें । वि० कामभोगथी विरक्त थे उ० वळी न० कर्मे न ल० बंधाय । ज० जेम से० ते शु० सुको गो० गोलो भींते न लागे ॥४३॥

मूलः—एवं लग्गन्ति दुम्मेहा जे नरा कामलालसा ।
विरत्ता उ न लग्गन्ति जहा से सुक्कगोलए ॥ ४३ ॥

मिच्छाकारो य निन्दाए तहकारो पडिस्सुए ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः–६ छंदणा ते आहार प्रमुख वस्तु वहोरी लावीने गुरुवादिक स्वधर्मीने आमंत्रे ? एटले हे मुनि ? मारा उपर कृपा करी आपनी इच्छा होय तो आ वस्तु तमे लइ मुजने तारो ? एम कहेवुं ते, ६ इच्छाकार ते पोतानी तथा बीजानी इच्छा जणावबी एटले हे पुज्य ? जो आपनी इच्छा होय तों मारां कार्य जेवां के सुत्रादिक अर्थ रुप तेने विषे उपकार करो ? तथा अमुक कार्य हुं करुंछुं एम पोतानी इच्छा जणावबी. वळी बीजा यतिने कहेवुं के जो तमारी इच्छा होय तो अमुक करजो ! एम कहेवुं ते, ७ मिच्छकार नामे ते पोताना आत्मानी निंद्याने विषे प्रवर्ते एटले कोइ अतिचारादिक लाग्यो होय, तेवारे कहे के अरे धिकार हो ? मुजने ? के ए अकार्य में कर्युं ? ? ने ए मारुं कर्त्तव्य नहि ? ? ? एम कही ते पाप निष्फल करवा मिच्छामिदुक्कडं देवो ते, ८ तहत्तकार नामे ते गुरु जे वचन कहे ते तहत (प्रणाम) करी ते वचन सांभळीने हा स्वामी तहत एम कहे तथा हे गुरु? आपनुं वाक्य यथातथ्य छे, तो तथास्तु (तेमज हो) वळी गुरुनां वचन सांभळवाने तत्पर होय ते ॥६॥

अर्थः–अ० अति उद्यमवंत थाओ । उठी उभो थाओ गु० गुरुनी पू० पुजा भगतिने विषे अ० गुरुवादिक समीपे रहेवुं उ० सुत्रार्थरुप संपदा पामवा भणी उपसंपदा समाचारी कहिए ए० एणीपरे दु० वे पांचगुणी करी सं० सहित एटले ? ० । सा० सामाचारि प० कही ॥ ७ ॥

मूलः–अब्भुट्ठाणं गुरुपूया अच्छणे उवसंपदा ।
एवं दुपञ्चसंजुत्ता सामायारी पवेदिता ॥ ७ ॥

॥२८१॥

नामना शिष्यने कहता हवा के हे जंबू ! जम में श्री महावीरदेवस्वामीना समीप सांभल्युं हतुं तेम में तुज प्रत्ये कह्युं ॥४५॥ इतिश्री जयघोष ने विजयघोषना पचीसमा अध्ययननो भावार्थ संपुर्ण ॥२५॥ ए पचीसमा अध्ययनने विषे भाव ब्राह्मणना गुण वर्णव्या तेतो दशविधि साधुनी सामाचारीएभाव साधुपणुं होय ते माटे २६ मा अध्ययनने विषे दशविधि सामाचारी वर्णवे छे.

अर्थः–सा० सामाचारी साचे मने आचरवी ते सामाचारी प० कहशे ते सामाचारी केहवी छे ॥ स० सर्व दु० दुखनी वि० विशेषे मो० मुकावणहारी छे जं० जे सामाचारीने च० आचरीने नि० निर्ग्रंथ साधु ति० तर्या सं० संसाररुप सा० समुद्र मते ॥ १ ॥

मूलः–सामायारिं पवक्खामि सव्वदुक्खविमोक्खणिं ।
जं चरित्ताण निग्गन्था तिण्णा संसारसागरं ॥ १ ॥

गाथा १ भावार्थः–श्रुधर्मास्वामी कहेता हवा के हे जंबू ! जे सर्व दुःखथी मुकावणहारी एवी दशविधि सामाचारी कहुंछुं के जे सामाचारी साधु आचरीने संसार समुद्र तर्या ॥ १ ॥

अर्थः–हवे दस सामाचारीना नाम कहे छे प० पहेली समाचारी आ० आवस्यकी ना० एहवे नामे बि० बीजी नि० नसीहिया एहवे नामे आ० आपुछणा एहवुं नाम च० त्रीजी च० चोथी प० पडी पुछणा एहवे नामे ॥ २ ॥

मूलः–पढमा आवस्सिया नाम बिइया य निसीहिया ।

अर्थः-पु० पुछे पं० वे हाथ जोडतो थको। किं० किस्युंकार्य का० करवो म० मे इं० पडिलेहणा कीधां पछै अवसरने विषे। इ०वांछुंछुं तमारी आज्ञाए नि०आत्माने जोडवो मेरवो तेने विषे १ भं०हे पूज्य। वे०आत्मानी तथा परसाधुनी वेयावचने विषे व० अथवा स० सज्झाय करवाने विषे २ ए वे बानाने विषे आत्माने जोडवुं वांछुंछुं ॥ ९ ॥

मूलः-पुच्छिज्ज पञ्जलिउडो किं कायवं मए इह ।
इच्छं निओइउं भन्ते वेयावच्चे व सज्झाए ॥ ९ ॥

गाथा ९ भावार्थः-वे हाथ जोडीने पुछे के हे पुज्य ? पडिलेहणा कर्या पछी तमारी आज्ञाये इच्छुं छुं के हवे मारे शुं कार्य करवुं ? साधुने वेयावच्चने विषे के शास्त्रनी सज्झायने विषे ! ए वे मांहेथी शेने विषे मारा आत्माने जोडवो ? (आठमी ने नवमी गाथानो संबंध भेगो छे) ॥९॥

अर्थः-वे० वेयावचने विषे । नि० आत्माने जोडवे करी । का० वेयावच करवाने विषे अ० किलामना पेदरहित थको । सा० सज्झायने विषे वा०अथवा नि० प्रेरवे करी पेदपणा रहित सज्झाय करे । सज्झाय केहवीछे स० सर्व दु० दुपनी वि० मुंकावणहारी छे ए वेनी आज्ञा मागे ॥ १० ॥

मूलः-वेयावच्चे निउत्तेण कायवं अगिलायओ ।
सज्झाए वा निउत्तेण सव्वदुक्खविमोक्खणे ॥ १० ॥

गाथा १० भावार्थः-ते वार पछी गुरु कहे हे वत्स ? तमे वैयावच्च करो ? एम कहेतां किलामना ने खेदपणा रहित थको वैयावच्च करवा आज्ञा करे तो सर्व दुःखथी मुका-

[illegible] आवश्यकी उपाश्रयथी बा० जवाना प्रसंगने विषे आवश्यकी करवुं एटले अवश्य कार्य छे माटे आवुं, २ नैषेधिकी ते उपाश्रयने विषे आवे त्यारे निसीही करवुं एटले उपाश्रयनी बहार जे कार्य हतुं तेथी निवर्त्यो जे, ३ आपुच्छणा, जे पोताना कार्य करता थकां गुरुने पुछवुं के हे पूज्य ? हुं अमुक कार्य करुं ? ते, ४ पडिपुच्छणा, जे पोता ना-पुर्वा कार्य करवाने कालें गुरुने बीजीवार पुछवुं के हे पूज्य ? अमुक मानेनुं अमुक कार्य करुं ते ॥ ५ ॥

अर्थः-इ० गुरुवादिक सार्थपतिने आपंथी इ० आहारादिक इच्छ जा० जानिए करी इ० पुण्यनी इच्छा आवे तो करे य० यदी सा० साधवा कार्यने विषे गुरुवादिक अर्थ देवाने विषे उपगार करी नि० निश्चय करे अप्पणी पुण्य देवे करी य० यदी नि० अनिष्टादिक दोषरूप पोतानी निंदा करवाने विषे य० गुरुना वचन सांभलवाने विषे ॥ ६ ॥

मूलः—छन्दणा दव्वजाएणं इच्छाकारो य सारणे ।

देवज ए चार पोरसी मध्ये वैयावच्चादिकनो प्रयोग उपजे ते पण करे, ते नवमी गाथामां कहेल छे ॥ १२ ॥

अर्थः–हवे पोरसीनो मान कहेछे ॥ आ० आसाढ मा० मासने विषे दु० बेपगे पोरसी पहिली तथा पाछली पो० पोस मा० मासे च० चार पगे पोरसी । चि०चैत्रमासे अने आ०आसो मा०मासे । ति०त्रिनपगे ह० होय पो०पोरसी ॥१३॥

मूलः–आसाढे मासे दुपया पोसे मासे चउप्पया ।
चित्तासोएसु मासेसु तिप्पया हवइ पोरिसी ॥ १३ ॥

गाथा १३भावार्थः–हवे पोरसीनुं माप कहे छे. जमणो कान सुर्य तरफ राखीने (एटले प्रथमना बे पहोर वखते उत्तर तरफ मुख राखवुं, पाछला बे पोहोर वखते दक्षिणदिशा तरफ मुख राखवुं) जमणो पग ऊभो राखवो, ते पगना ढींचणनी ढांकणीथी कांइक निचेना भागपर (एटले अंगुठा तरफथी घुंटीनी सरहद्दपर जमीनथी ते पगना ऊभा नळा तरफ वेंहेंतथी भरतां बीजी वेंतनो छेडो होय) (त्यां) हाथनी तर्जनी आंगुली (अंगुठानी पासेनी) राखतां ज्यां ते आंगुळीनी छांया पडे, त्यां सुधी पगलां मापवाथी पोरसीना प्रमाणथी खबर पडे ते कहे छे. असाड महिने बे पगे पेहेली ने पाछली पोरसी थाय, पोस मांहने चार पगे पहेली ने पाछली पोरसी थाय, अने चैत्रने आसो महिने त्रण पगे पहेली ने पाछली पोरसी थाय.

अर्थः–अं० एक अंगुल वधे तथा घटे स० सात र० अहो रात्रिए । प० पषवाडिए च० वळी दु० बे अ० अंगुल श्रावण वदि पडवाथी पोससुद पुनम सुधी व० अंगुलादिक छायो वधे अने महावदि पडवाथी असाढसुद पुनमसुधी हा० छायाघटे चा० वळी अ० अवधारणा मा० मासे पं० पगे च०चरण अ० आंगुल ॥ १३ ॥

[illegible] आज्ञा छे। आ० गुरुने पुछे ते आपुछणा कहिये स० पोताना कार्य करवाने विषे हे पूज्य अमुको कार्य करूं ते आपुछणा ३। प० पर अनेरा साधुना कार्य करवाने विषे प० कार्य करतां थका बीजी वार ते पडिपुच्छणा गुरुने पुछीने करे ॥ ४ ॥

मूलः-गमणे आवस्सियं कुज्जा ठाणे कुज्ज निसीहियं ।
आपुच्छणा सयंकरणे परकरणे पडिपुच्छणा ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः-हवे ते दश सामाचारीनो अर्थ विस्तारीने कहे छे. १ आवस्यकी उपाश्रयथी बा-हार जवाना अवसरने विषे आवस्सही कहेवुं एटले अवश्य कार्य छे माटे जाउछुं, २ नैषधीकी ते उपाश्रयने विषे आवे त्यारे निस्सीही कहेवुं एटले उपाश्रयनी बाहार ते कार्य हतुं तेथी निवर्त्यो ते, ३ आपुछणा, ते पोताना कार्य करवा बाबते गुरुने पुछवुं के हे पूज्य ? हुं अमुक कार्य करूं ? ते, ४ पडिपुछणा, ते बीजा सा-धुना कार्य करवाने बाबते गुरुने बीजीवार पूछवुं के हे पूज्य ? अमुक मानिनुं अमुक कार्य करूं ते ॥ ५ ॥

अर्थः-इ० गुरुवादिक साधुपिने आपंती द० आहारादिक द्रव्य जा० जानिए करी इ० पुज्यनी इछा आणे तो करे प० पछी सा० साधु कार्यने विषे गुरुवादिक अर्थ देवाने विषे उपगार करी नि० निफल करे निछाशी दुष्ट होय करी प० पछी नि० अविचारादिक दोषथकी पोतानी निंदा करवाने विषे त० गुरुना वचन ग्रहण करी प० गुरुना वचन सांभळवाने विषे ॥ ६ ॥

मूलः-छन्दणा दव्वजाएणं इच्छाकारो य सारणे ।

तेमज ए चार पोरसी मध्ये वैयावच्चादिकनो प्रयोग उपजे ते पण करे, ते नवमी गाथामां कहेल छे ॥ १२ ॥

अर्थः—हवे पोरसीनो मान कहेछे ॥ आ० आसाढ मा० मासने विषे दु० बेपगे पोरसी पहिली तथा पाछली पो० पोस मा० मासे च० चार पगे पोरसी । चि० चैत्रमासे अने आ० आसो मा० मासे । ति० त्रिनपगे ह० होय पो० पोरसी ॥ १३ ॥

मूलः—आसाढे मासे दुपया पोसे मासे चउप्पया ।
चित्तासोएसु मासेसु तिप्पया हवइ पोरिसी ॥ १३ ॥

गाथा १३ भावार्थः—हवे पोरसीनुं माप कहे छे. जमणो कान सुर्य तरफ राखीने (एटले प्रथमना बे पहोर वखते उत्तर तरफ मुख राखवुं, पाछला बे पोहोर वखते दक्षिणदिशा तरफ मुख राखवुं) जमणो पग ऊभो राखवो, ते पगना ढींचणनी ढांकणीथी कांइक निचेना भागपर (एटले अंगुठा तरफथी घुंटीनी सरहदपर जमीनथी ते पगना ऊभा नळा तरफ वेंहेंतथी भरतां बीजी वेंतनो छेडो होय) (त्यां) हाथनी तर्जनी आंगुली (अंगुठानी पासेनी) राखतां ज्यां ते आंगुळीनी छांया पडे, त्यां सुधी पगलां मापवाथी पोरसीना प्रमाणथी खबर पडे ते कहे छे. असाढ महिने बे पगे पेहेली ने पाछली पोरसी थाय, पोस महिने चार पगे पहेली ने पाछली पोरसी थाय, अने चैत्रने आसो महिने त्रण पगे पहेली ने पाछली पोरसी थाय. ॥ १३ ॥

अर्थः—अं० एक अंगुल वधे तथा घटे स० सात र० अहो रात्रिए । प० पपवाडिए च० वळी दु० बे अ० अंगुल श्रावण वदि पडवाथी पोससुद पुनम सुधी व० अंगुलादिक छायो वधे अने महावदि पडवाथी असाढसुद पुनमसुधी हा० छायाघटे वा० वळी अ० अवधारणा मा० मासे पं० पगे च० [illegible]

करुं ते १० अभ्यंतरा ते सूत्रार्थ पामवा माटे गुरुआदिकनी समीपे रहेवुं तथा वीना गच्छना आचार्यनी पासे ज्ञानादिक गुण अर्थे जांबर्दीने, ते आचार्यनी पासे जइने हे स्वामिन् ? मारा गच्छनी ने मारा आचार्यनी निश्राए रहीने आपनी पासे हुं ज्ञानादिक अर्थने माटे रहुंछुं ! एम कही ज्ञानादिक अभ्यास करी अन्य गच्छमां जाव भाखुं ते प्रत्ये पोताने वपरा करवा दश सामाचारी ते निर्धारे गणधरे कही ॥७॥

अर्थः-इवे दश सामाचारिनो विस्तार सर्व कर्तव्य दिन रात्रि संबंधी वर्णवे छे दु० दिवसना पहेला पोरिसने पहेला च० चउथा भागने विषे एटले बे घडिने विषे । आ० सूर्य स० उगे छते । भं० वस्त्रादिक उपगरणने प० पडिलेहिने । वं० वांदिने प० करी त० तेवार पछे गु० गुरुने ॥ ८ ॥

मूल-पुव्विल्लंमि चउब्भाए आइच्चंमि समुट्ठिए ।
भण्डगं पडिलेहित्ता वन्दित्ता य गुरुं तओ ॥ ८ ॥

गाथा ८ भावार्थः-इवे दशमी सामाचारीनो विस्तार दिवस रात्री संबंधिनुं सर्व कर्तव्य वर्णवेछे. दिवसना चार भाग करीये, तेने चार पोरिस कहेवाय ते सांझी दिवसनो जे प्रथम पहोरछे, तेना पण चार भाग करवा, ते सांझीनो प्रथम भाग एटले १० घडीनो दिवस होय तेना चार भाग करतां आठ आठ घडीनो एकेक पहोर थायछे, तेमां जे प्रथमनो पहोर आठ घडीनोछे, तेना पण चार भाग जे बे घडीना थाय, ते चार सांझीनो प्रथम भाग सूर्योदय वेलाथी बे घडी सुधीनो ते वखते वस्त्रादिक उपगरण पडिलेहीने ते चार पछी गुरुने वंदन करीने ॥ ८ ॥

केमके ते महिने त्रीस घडीनो दिवस छे, तेना चार भाग करतां साडासात घडीनो पहोर थाय. आ गणत्रीथी कोइ कोइ महिनामां जराक फेर देखवामां आवशे एवी रीते आखा दिवसमां गमे ते वखते गणशो तो मध्यान सुधी केटली घडी दिवस चडयो ने ते पछी केटली घडी दिवस बाकी रयो तेनी खबर पडशे अने ते घडीयोना कलाक गणवा होयतो अढी घडी लेखे गणवो. पोषथी अशाड सुधी दरेक महिने बबे घडी दिवस व-धतो जाय ने अशाड-थी ते पोष सुधी दरेक महिने बबे घडी दिवस घटतो जाय, ए सुमारपर दरेक महिने केटला घडीनी पोरसी थाय, तेनुं पुरतुं ध्यान राखवुं. वळी चोथुं पोरसीनुं एवुं पण माप थाय छे के सूर्य तरफ पुंठ करी बे पग सरखा राखी उभा रहेवुं पछी ज्यां सुधी आपणी कायानी छांया पडे त्यां निशान राखी त्यां सुधी पगलां भरतां जेटलां पगलां थाय ते मांही सात उमेरतां जे संख्या थाय तेनो एकसोने वीस-पर भाग देतां जेटलाए भाग चाले तेटली घडी दिवस बे पहोर सुधी चडयो ने पहोर पछी तेटली घडी दि-वस रह्यो समजवो, इति पोरसीनुं मान संपुर्ण ॥१४॥

अर्थः—हवे जेणे मासे तिथि घटे ते कहेछे ॥ आ० आसाढनी व० वद प० पषवाडाने विषेतिथी घटे । भ० भाद्रवावदि क० कार्तिकवद य० वळी । पो० पोसवद य० वळी फा० फागणवद ॥ वा० वैसाषवदि य० वळी ॥ धो० जाणवी ओ० वीस अहो रा० रात्रि माहे एक अहो रात्रि ओछी एटले वेमासे एक तिथि घटे एम कयो ॥१५॥

मूलः—आसाढबहुलपक्खे भद्दवए कत्तिए य पोसे य ।

अर्थः-हवे ते वाना करेछे ते समुच्चय दिनना चार भागनो अधिकार कहे छे ॥ दि० दिवसनां च० चार भा० भाग कु० करे भि० साधु वि० निपुण साधु त० तेवार पछे । उ० प्रधानकारी कर्तव्यने कु० करे अथवा उत्त० आगल गुणकारी ज्ञानादिक कर्तव्यने करे। दि० दिनना च० चार भा० भागने वि० विषे ॥ ११ ॥

मूलः-दिवसस्स चउरो भागे भिक्खू कुज्जा वियक्खणो ।
तओ उत्तरगुणे कुज्जा दिणभागेसु चउसु वि ॥ ११ ॥

गाथा ११ भावार्थः-विचक्षण साधु दिवसना चार भाग करे ने ते वारं पछी आगळ गुणकारी एवा प्रधान (उत्तम) ज्ञानादिक उत्तरगुण कर्तव्य ते दिवसना चार भागने विषे करे ॥११॥

अर्थः-हवे सामान्यपणे चार पोहोरनो कर्तव्य कहेछे । प० पहिली पो० पोरसीए स० सज्झायकरे । बी० बीजी पोरसीए झा० ध्यानने झि० ध्यावे । त० त्रीजी पोरसीए भि० गोचरी करे ॥ चु० वली च० चोथी पोरसीए स० सज्झाय करे । चोथी पोरसी मध्ये वैयावच्चादिकनो प्रयोग उपजे ते भणी करे ते नवमी गाथाए कही छुकी ॥१२॥

मूलः-पढमं पोरिसि सज्झायं बीयं झाणं झियायई ।
तइयाए भिक्खायरियं पुणो चउत्थीइ सज्झायं ॥ १२ ॥

गाथा १२ भावार्थः-चार पहोरना सामान्यपणे कर्तव्य कहेछे, पहेले पहोरे शास्त्रनी सज्झाय करे, बीजे पहोरे अर्थ चिन्तनरूप ध्यान ध्याय, त्रीजी पोरसीये गोचरी करे, वली चोथी पोरसीए सज्झाय पडीलेहणा थंडीलादिक करे,

पंचांग पत्र	अषाढ १	श्रावण२	भाद्रवो३	आसो ४	का० ५	मा० ६	पोष.७	माहा८	फा. ९	चैत्र१०	वै.११	जेष्ठ१२
वद सातम	प० २३	२१	२५	२९	३१	३५	३९	३११	३७	३३	२११	२७
वद अमास	२२	२२	२६	२१०	३२	३६	३१०	३१०	३६	३२	२१०	२६
शुदि सातम	२१	२३	२७	२१	३३	३७	३११	३९	३५	३१	२९	२५
शुदि पुनम	२	२४	२८	३	३४	३८	४	३८	३४	३	२८	२४
दि. पो. पो.	अषाढ १	श्रावण२	भाद्रवो३	आसो ४	का० ५	मा० ६	पो. ७	माहा ८	फा. ९	चैत्र१०	वै.११	जेष्ठ१२
वद सातम	२९	२७	३१	३५	३९	४३	४७	४९	४३	३११	३७	३१
वद अमास	२८	२८	३२	३६	३१०	४४	४८	४८	४२	३१०	३६	३
शुदि सातम	२७	२९	३३	३७	३११	४५	४९	४७	४१	३९	३५	२११
शुदि पुनम	२६	३१०	३७	३८	४	४३	४१०	४६	४	३८	३४	२१०

मूलः—अङ्गुलं सत्तरत्तेणं पक्खेणं च दुअङ्गुलं ।
वड्ढए हायए वावि मासेणं चउरङ्गुलं ॥ १४ ॥

गाथा १४ भावार्थः—उत्तर कहा के सिवाय बीजा आठ महिनाने विषे सात रात्री दिवसे अनेक आंगु-ल ने पखवाडीये बबे आंगुल ने महिने चार चार आंगुल छांया वधे घटे. श्रावण वदि पडवाथी ने पोस सुदी पूनम सुधी छांया वधे ने माघ वदि पडवाथी ने अषाढ सुदि पूनम सुधी छांया घटे. (पोरसीना मापनी बीजी भावना सूची पिंड समाप्त छे के उपर पगनुं माप बतावेल छे तेनो अर्धो भाग वेहेलना मापवर गणवो, जेथी अषाढ महिने ने पोष पोरसीनुं मान छे, तो वेहेलथी मपायुं होय तो एक वेंते पोरसीनुं मान थाय, तेमज पोस महिने मान पोने पोरसी छे, तो ते वेहेलथी पोरसी थाय. ने बीजने भाखो महिने मध पोने पोरसी छे, तो एक वेंतने ने आंगुले पोरसी थाय बोला आठ महिनामां वेंतना मापवर सात सात मंगुलदिने वधे आंगुल, पखवाडीये एक आंगुल, ने महिने बे आंगुलनी वृद्धि गणवी-पोरसीनी छायानी बीजी भावना सूची समाप्त छे के वेंतना मान आंगुलने हिसाबे वेंतने वेंतमापवर बेतालीस आंगुल प्र-मेण होय तेटला अर्थ करवा. पछी ते अर्थ मंगुलमां पोस होय तो आठ ने बाकी रहेल मापमां सात उमेरे तो ते मंगुल थाय तेनो पडछायामापवर भाग देवो. (तेथ उदाहरण) बीजने भाखो महिने एक वेंतने ११ आंगुले पोरसी थाय, तेना अर्धा आंगुल थया. ने अडतालीस अंश तेने नवमा भाग उमेरतां १५ थाय, तेने पडछायाने बीजथा भाग देतां १५-७-१३ ने उपर कला ८ ने १६ अधिक थाय. एटले ७। घडीनी पोरसी थाय,

सीनुं माप कहेल छे ते उपर आठ आंगुळ वधारवाथी ते महिने पोणी पोरसी थाय, १ मागशर, २ पोष, ३ ने महा ए त्रण महिनामां जेटला पगनी छायाथी पोरसीनुं माप कहेल छे ते उपर दश आंगुळ वधारवाथी पोणी पोरसीनुं माप थाय, १ फागण, २ चैत्र, ३ ने वैशाख ए त्रण महिनामां जेटला पगनी छायाथी पोरसी माप कहेल ते उपर आठ आंगुळ छाया वधारवाथी ते महिने पोणी पोरसीनुं माप थाय. दरेक महिनामां जेटला जेटला पगलानी छायाथी पोरसीनुं माप कहेल छे, ते तेटला उपर कह्या मुजब आंगुळ वधारवाथी पोणी पोरसी थाय, ते पोणी पोरसीमां पात्रनी पडीलेहणा करवी, ए दिवसनुं कर्तव्य संक्षेपथी कहुं. ॥ १६ ॥

हवे हमेश केटलो दिवस वधे घटे तेनुं प्रमाण कहेछे, सात श्वासोच्छ्वासे एक थोव, सात थोवे एक लव, एवा सीतोतेर लवे बे घडी अने साडीआडत्रीश लवे एक घडी, एवा अढी लवने अर्धो थोव एटलो दिवस रात्री वधे घटे.

अर्थः-दिननो कर्तव्य संक्षेपे कह्यो, हवे रात्रिनो कर्तव्य संक्षेपे कहेछे । रा० रात्रिना ऽ० पण च० चार । भा० भाग भि० साधु कु० करे वि० विचक्षण त० तेवार पछे उ० प्रधान गु० गुणेकारी कर्तव्यने कु० करे । रा० रात्रिना च० च्यार भा० भागने वि० विषे ॥ १७ ॥

मूलः-रत्तिं पि चउरो भागे कुज्जा भिक्खू वियक्खणो ।
तओ उत्तरगुणे कुज्जा राइभागेसु चउसु वि ॥ १७ ॥

मान मासांस्तांस्ते १ शत, सानयांवे १ लव, मनोनरलव २ घडी, साडि ३८ लव १ घडि, एहवा लवदिन
मले अढी लव अधे थोर घटे वधे ए दिनमान यंत्र तथा रात्रीमान यंत्र ॥

घरीमान	अषाढ १	श्रावण २	भाद्रवो ३	आसो ४	का० ५	मा० ६	पो. ७	मा. ८	फा. ९	चैत्र १०	वै० ११	जेष्ट १२
घडी मानम	३४॥	३५॥	३३॥	३१॥	२९॥	२७॥	२५॥	२४॥	२६॥	२८॥	३०॥	३२॥
घडी अमान	३६	३६	३३	३१	२७	२७	२५	२५	२७	२९	३१	३३
थडि मानम	३५॥	३४॥	३२॥	३०॥	२८॥	२६॥	२४॥	२५॥	२७॥	२९॥	३१॥	३३॥
थडि पुनम	३६	३४	३२	३०	२८	२६	२४	२६	२८	३०	३२	३४
रात्रि घडि	अषाढ १	श्रावण २	भाद्रवो ३	आसो ४	का० ५	मा० ६	पो. ७	मा. ८	फा. ९	चैत्र १०	वै० ११	जेष्ट १२
घडि मानम	२५॥	२४॥	२६॥	२८॥	३०॥	३२॥	३४॥	३५॥	३३॥	३१॥	२९॥	२७॥
घडि अमान	२७	२५	२७	२९	३१	३३	३५	३५	३३	३१	२९	२७
थडि मानम	२४॥	२५॥	२७॥	२९॥	३१॥	३३॥	३५॥	३४॥	३२॥	३०॥	२८॥	२६॥
थडि पुनम	२४	२६	२८	३०	३२	३४	३६	३४	३२	३०	२८	२६

पुर्ण थयो, भादरवामां चौद दिवस धनिष्टा, सात दिवस शतभिखा, आठ दिवस पुर्वा भाद्रपद, एक दिवस ऊतरा भाद्रपद, ते भादरवा सुदी पुनमे होय, ए चार नक्षत्र रात्री पुर्ण करे. आसो महिनामां त्रण नक्षत्र रात्री पुर्ण करे ते चौद दिवस ऊतरा भाद्रपद, पंदर दिवस रेवती, एक दिवस अश्वनी, ते आसो सुदी पुनमे होय. कार्तक महिनामां त्रण नक्षत्र रात्री पुर्ण करे ते १४ दिवस अश्वनी, १५ दिवस भरणी, एक दिवस कृतिका, ते कार्तक सुद पुनमे होय. मागशर महिनामां त्रण नक्षत्र रात्री पुर्ण करे ते, चौद दिवस कृतिका, पंदर दिवस रोहणी, एक दिवस मृगशर, ते मागशर सुदी पुनमे होय. पोष महिनामां चार नक्षत्र रात्री पुर्ण करे ते, १४ दिवस मृगशर, आठ दिवस आर्द्रा, सात दिवस पुनर्वसु, एक दिवस पुष्प, ते पोष सुदी पुनमे होय. माह महिनामां त्रण नक्षत्र रात्री पुर्ण करे ते, १४ दिवस पुष्प, १५ दिवस अश्लेषा, एक दिवस मघा, ते महा सुदी पुनमे होय. फागण महिनामां ३ नक्षत्र रात्री पुर्ण करे ते, १४ दिवस मघा, १५ दिवस पुर्वा फाल्गुणी, १ दिवस ऊतरा फाल्गुणी, ते फागण सुदी पुनमे होय. चैत्र महिनामां त्रण नक्षत्र रात्री पुर्ण करे ते, १४ दिवस ऊतरा फाल्गुणी, १५ दिवस हस्त, एक दिवस चित्रा, ते चैत्र सुदी पुनमे होय. वैशाख महिनामां त्रण नक्षत्र रात्री पुर्ण करे ते, १४ दिवस चित्रा, १५ दिवस स्वाति, १ दिवस विशाखा ते वैशाख सुदी पुनमे होय. ज्येष्ट महिनामां त्रण नक्षत्र रात्री पुर्ण करे ते, चौद दिवस विशाखा, १५ दिवस अनुराधा, १ दिवस ज्येष्टा, ते जेठ सुदी पुनमे होय. अषाढ महिनामां त्रण नक्षत्र रात्री पुर्ण करे ते, १४ दिवस ज्येष्टा, पंदर दिवस मूल, एक दिवस पूर्वाषाढा, ते अषाढ सुदी पुनमे होय. एवी रीते दरेक महिनामां जे जे नक्षत्र रात्री पुर्ण

पर्वमान	—	अगाड़ ?	श्रावण शुक्ल	भादों कृ०	आश्विन शु०	कार्तिक कृ०	मार्गशीर्ष शु०	पौष कृ०	माघ शु०	फाल्गुन कृ०	चैत्र शु०	वैशाख कृ०	ज्येष्ठ शु०
यदि मासक्षय	३५॥	३५॥	३१॥	३०॥	२८॥	२७॥	२६॥	२५॥	२४॥	२३॥	२२॥	२१॥	२०॥
यदि अधिमास	३६॥	३६॥	३२॥	३१॥	२९॥	२८॥	२७॥	२६॥	२५॥	२४॥	२३॥	२२॥	२१॥
यदि मासक्षय	३६॥	३५	३२	३१	२९	२८	२७	२६	२५	२४	२३	२२	२१
यदि पूर्णिमा	३५	३४॥	३१	३०॥	२८॥	२७॥	२६॥	२५॥	२४॥	२३॥	२२॥	२१॥	२०॥
यदि पर्वाह	अगाड़ ?	श्रावण शुक्ल	भादों कृ०	आश्विन शु०	कार्तिक कृ०	मार्गशीर्ष शु०	पौष कृ०	माघ शु०	फाल्गुन कृ०	चैत्र शु०	वैशाख कृ०	ज्येष्ठ शु०	आषाढ़ कृ०
यदि मासक्षय	२५	२५	२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४
यदि मासक्षय	२५॥	२४॥	२३॥	२२॥	२१॥	२०॥	१९॥	१८॥	१७॥	१६॥	१५॥	१४॥	१३॥
यदि मासक्षय	२४	२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३
यदि मासक्षय	२४॥	२३॥	२२॥	२१॥	२०॥	१९॥	१८॥	१७॥	१६॥	१५॥	१४॥	१३॥	१२॥
यदि मासक्षय	२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२
यदि मासक्षय	२३॥	२२॥	२१॥	२०॥	१९॥	१८॥	१७॥	१६॥	१५॥	१४॥	१३॥	१२॥	११॥
यदि मासक्षय	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११
यदि मासक्षय	२२॥	२१॥	२०॥	१९॥	१८॥	१७॥	१६॥	१५॥	१४॥	१३॥	१२॥	११॥	१०॥
यदि मासक्षय	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११	१०
यदि मासक्षय	२१॥	२०॥	१९॥	१८॥	१७॥	१६॥	१५॥	१४॥	१३॥	१२॥	११॥	१०॥	९॥
यदि मासक्षय	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११	१०	९
यदि मासक्षय	२०॥	१९॥	१८॥	१७॥	१६॥	१५॥	१४॥	१३॥	१२॥	११॥	१०॥	९॥	८॥
यदि मासक्षय	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११	१०	९	८
यदि मासक्षय	१९॥	१८॥	१७॥	१६॥	१५॥	१४॥	१३॥	१२॥	११॥	१०॥	९॥	८॥	७॥
यदि मासक्षय	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११	१०	९	८	७
यदि मासक्षय	१८॥	१७॥	१६॥	१५॥	१४॥	१३॥	१२॥	११॥	१०॥	९॥	८॥	७॥	६॥
यदि मासक्षय	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११	१०	९	८	७	६
यदि मासक्षय	१७॥	१६॥	१५॥	१४॥	१३॥	१२॥	११॥	१०॥	९॥	८॥	७॥	६॥	५॥
यदि मासक्षय	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११	१०	९	८	७	६	५
यदि मासक्षय	१६॥	१५॥	१४॥	१३॥	१२॥	११॥	१०॥	९॥	८॥	७॥	६॥	५॥	४॥
यदि मासक्षय	१६	१५	१४	१३	१२	११	१०	९	८	७	६	५	४
यदि मासक्षय	१५॥	१४॥	१३॥	१२॥	११॥	१०॥	९॥	८॥	७॥	६॥	५॥	४॥	३॥
यदि मासक्षय	१५	१४	१३	१२	११	१०	९	८	७	६	५	४	३
यदि मासक्षय	१४॥	१३॥	१२॥	११॥	१०॥	९॥	८॥	७॥	६॥	५॥	४॥	३॥	२॥
यदि मासक्षय	१४	१३	१२	११	१०	९	८	७	६	५	४	३	२
यदि मासक्षय	१३॥	१२॥	११॥	१०॥	९॥	८॥	७॥	६॥	५॥	४॥	३॥	२॥	१॥
यदि मासक्षय	१३	१२	११	१०	९	८	७	६	५	४	३	२	१

सज्झाय करे ॥ २१ ॥

अर्थः–पो० पहिला पोहरना च० चोथा भागने विषे एटले पोण पोरसीए वं० वादिने त० तेवार पछे गु० गुरुने अ० अणनिवर्तावीने का० सज्झायना कालने। भा० पात्रादिक भाजनने प० पडिलेहे, आ मे. यम वचनछे ॥२२॥

मूलः–पोरिसीए चउब्भाए वन्दित्ताण तओ गुरुं ।
अपडिक्कमित्ता कालस्स भायणं पडिलेहए ॥ २२ ॥

गाथा २२ भावार्थः–दिवसना पहेला पहोरना चोथा भागने विषे पोंणी पोरसीए गुरुने वांदीने सज्झायना कालने अण निवर्तावीने पात्रादिक भाजनने पडीलेहे. ॥ २२ ॥

अर्थः–मु० पेहेली मोहपतीने प० पडिलेहिने प० पडिलेहे। गो० गोछाने गो० गोछो ल० ग्रथोछे अं० अंगुली जेणे साधुए ते साधु गोछो पडिलेहा पछे व० वस्त्रने प० पडिलेहे ॥ २३ ॥

मूलः–मुहपत्तिं पडिलेहित्ता पडिलेहिज्ज गोच्छगं ।
गोच्छगलइयङ्गुलिओ वत्थाइं पडिलेहए ॥ २३ ॥

गाथा २३ भावार्थः–हवे पडीलेहणनी अनुक्रमे विधि कहेछे. प्रथम मुखपती पडीलेहीने, पछी गोछाने पडीलेहे. जे साधुए आंगुलीयें गोछो ग्रह्यो छे ते साधु गोछो पडीलेहा पछी वस्त्रने पडीलेहे ॥२३॥

अर्थः–हवे वस्त्र पडिलेहवाने विधि कहेछे । उ० वस्त्र उंचा राषे थि० आकरु यइ अ० उतावलो

णवी ने ते मिलावना, १ श्रावण, २ आसो, ३ मागसर, ४ महा, ५ चैत्र, ६ जेठ ए छ महिना त्रीस दिवसना जाणवा. बधे महिने अडेक तिथि घटाडवी ॥१५॥

अर्थः इवे पोण पोरसीनी पगनी छायानो मान कहेछे। जे० जेठमासे १ आ० आसाढमासे। २ सा० श्रावण ३ ए त्रण मासो पगनी छाया पोरसी थाय ने उपर छ० छ अ० अंगुल अधिकी प० पात्रनी पडिलेहणा करवी एटले पोण पोरसी जाणवी अ० आठ अंगूल अधिकी छायाए बी० बीजी। भाद्रवो १ आसो २ कार्तिक ३ ए बीजी त्रिकने विषे पोण पोरसी पडिलेहणा ॥ त० त्रिजी त्रिक मागसर १ पोस २ माह ३ ए ३। मासने विषे द० दस अगल अर्धाकी छायाए पोण पोरसी थाय अ० आठ अंगूल अधिकी छायाए च० फागूण १। चैत्र २ वैसाष ३। ए चोथात्रिकने विषे पुण पोरसी जाणवी ॥ १६ ॥

मूलः—जेट्ठामूले आसाढसावणे छहिं अङ्गुलेहिं पडिलेहा।
अट्ठहिं बीयतयंमि तइए दस अट्ठहिं चउत्थे ॥ १६ ॥

गाथा १६ भावार्थः—इवे पोणी पोरसीना पगनी छायानुं माप कहे छे १ जेठ, २ असाढ, ३ ने श्रा-ए त्रण महिनामां जे पोरसीना पगना छांयानु माप कहेल छे तेटला पग उपर छ आंगुळ वधारवाथी ते ने पोणी पोरसी थाय, १ भादरवो, २ आसो, ३ ने कार्तिक ए त्रण महिनामां जेटला पगनी छायाथी पोर-

करे ॥ १७ ॥

पो०पोरसीए स०सज्झाय करे बि०बीजी पोरसीए झा०ध्यानने वि०ध्यावे न०त्रीजी पोरसी नि० निद्राने मो० मोकली मुके आवश्यादीए तु० वली च० चोथी पोरसीए भु० वली ऽ०पण स० सज्झाय करे ॥ १८ ॥

मूलः—पढमं पोरिसि सज्झायं बितियं झाणं झियायई ।
तइयाए निद्दमोक्खं तु चउत्थी भुज्जो वि सज्झायं ॥ १८ ॥

गाथा १८ भावार्थः—रात्रीनी पहेली पोरसीए सज्झाय करे, बीजी पोरसीए ध्यान ध्याय, त्रीजी पोरसीए निद्रा छुटी मूके, (एटले निद्रा लिए) वली चोथी पोरसीए सज्झाय करे ॥ १८ ॥

अर्थः—हवे रात्रिनी पोरसी जाणे ते कहेछे जं० जे नक्षत्र ने० पोहचाडे ज० जेकालने विषे । र० आपी रात्रीने न० नक्षत्र तं० ते नक्षत्र न० आकासना च० चउथा भागने विषे सं० आवे पामे छते पोरसी जाणवी वि० निवर्ते । स० सज्झाय थकी प०·पाउस (प्रभात) का० कालने विषे ॥ १९ ॥

मूलः—जं नेइ जया रत्तिं नक्खत्तं तंमि नभचउ०भाए ।
संपत्ते विरमेज्जा सज्झाय पओसकालम्मि ॥ १९ ॥

गाथा १९ भावार्थः—हवे रात्रीनी पोरसी जी रीते जणाय ते कहेछे, जे काळने विषे जे जे नक्षत्र आखी रात्री पुर्ण करता होय, एटले श्रावण महिनामां चार नक्षत्र रात्री पुर्ण करे ते, १४ दिवस ऊतरा पाछा, सातदिवस अभीच, आठ दिवस श्रवण, एक दिवस धनिष्ठा, ते श्रावण सुद पुनमे होय, एटले ते महिनो

प्रतिलेखणा करता अनेक प्रकारे । धु० शरिर तथा वस्त्रने हलावे धुणावे तो दोष ५ । कु० करे प० पडिलेह-णानी मर्यादाने विषे । प० प्रमाद ६, उद्धोर इत्यादिक ६ । अणुत्ताविय प्रमुख एम प्रसस्त १२ पडिलेहण करता सं० शंका उपजे छते ग० अंगुलीयादिक गणवाना उ० उपयोगने कु० करे ते दोष मननो उपयोग टले ते माटे दोष १ । ए १३ मी पडिलेहणा दोष ते माटे वरजी ॥ २७ ॥

॥ २६ ॥

मूलः—पसिढिलपलम्बलोला एगा मोसा अणेगरूवधुणा ।
कुणइ पमाणिपमायं सङ्किगणणोवगं कुज्जा ॥ २७ ॥

गाथा २७ भावार्थः—वळी त्रीजी पण सात प्रकारनी अप्रसस्त पडीलेहणा कहेछे, १९ वस्त्रने मजबुत न झाले, २० वस्त्र लांबु राखीने पडीलेहणा करे, २१ वस्त्रने धरती संघाते रगदोळे, २२ एकी वखते आगु वस्त्र दृष्टीए जुवे, २३ पडीलेहणा करतां अनेक प्रकारे शरीरने तथा वस्त्रने हलावे, २४ पांच प्रकारना प्रमादे करी पडीलेहणा करे, पुर्वे २३ मी ने २४ मी गाथामां बार प्रकारनी प्रसस्त पडीलेहणा कहीछे, ते पडीलेहणा करतां शंका उपजे तेवारे आंगुलीयादीके

अर्थः—तो० तेहन ष० वली न० नक्षत्र) ग० आकाशने च० चोथे भागे सा० सेव आवे थके पाछली पोरसी जाणवी वं० ते विरत वि० वली का० काल एटले निद्रानो काल करीए तेहने। प० पडिलेहिने मु० साधु कु० सज्झाय करे ॥२०॥

मूलः—तम्मेव य नक्खत्ते गयणचउब्भागसावसेसंमि ।
वेरत्तियं पि कालं पडिलेहित्ता मुणी कुज्जा ॥ २० ॥

गाथा २० भावार्थः—अने तेमज वली आकाशना चोथा भागने विषे जतां आवे थके रात्रीनी चोथी पोरसीनो चोथा भाग (बे घडी रही सोय ते) ना काळे ते पडीलेहीने जोइने साधु अतिक्रमण रूप सज्झाय करे, ए रात्रीनुं कर्तव्य संक्षेपे कह्युं ॥ २० ॥

अर्थः—हवे दिवसनो कर्तव्य विस्तारिने कहेछे । पु० दीवसना पोरसी च० पहिला चोथा भागने विषे पोतानी बे घडिने विषे । प० पडिलेहिने भ० वस्त्रादिक उपकरणने गु० गुरुने वं० वांदिने स० सज्झाय कु० करे ३० सर्व दुःखथी वि० मुकावे एवी सज्झाय ॥ २१ ॥

मूलः—पुव्विल्लंमि चउब्भाए पडिलेहित्ताण भण्डयं ।
गुरुं वन्दित्तु सज्झायं कुज्जा दुक्खविमोक्खणं ॥ २१ ॥

गाथा २१ भावार्थः—हवे दिवसनुं कर्तव्य विस्तारीने कहेछे. दिवसना पहेला पहोरना बेहेला चोथा भाग (सूर्योदयथी बे घडी) ने विषे वस्त्रादिक उपकरणने प्रतिलेखी (जोइ) ने तेवार पछी गुरुने वांदीने, सर्व दुःखथी मुकावनारी

देइ व पच्चक्खाणं वाएइ सयं पडिच्छइ वा ॥ २९ ॥

गाथा २९ भावार्थः-हवे पडीलेहणा करतां पांच बोल करवा नहि ते कहेछे, १ मांहो मांही परस्पर वार्ता करे, २ देश कथा प्रमुख चार विकथा करे, ३ पचखाण करावे, ४ वांचणी, पुछणा, पर्यटणा, अणुपेहा ने धर्म कथा ए पांच प्रकारे वांचणी आपे तेमज वांचणी पोतेले, ए पांच बोल जो करेतो तेने दोष कहेछे ॥२९॥

अर्थः-एम करता दोष उपजे ते कहे छे पु० पृथवीकाय १ । आ० अप्पकाय २ । ते० अग्निकाय ३ । वा० वाउकाय ४ व० वनस्पतीकाय ५ ॥ त० त्रसकाय ६ । प० पडिलेहणा प० प्रमोद करता थका । छ० छ कायनो पि० पण वि० विराधक हो० होय सदा ॥ ३० ॥

मूलः-पुढवी-आउकाए तेऊ-वाऊ-वणस्सइ-तसाणं ।
पडिलेहणापमत्तो छण्हं पि विराहओ होइ ॥ ३० ॥

गाथा ३० भावार्थः-पुर्वोक्त प्रमादथी पडीलेहणा करतो थको, १ पृथ्वीकाय, २ अपकाय, ३ तेऊकाय, ४ वायुकाय, ५ वनस्पतीकाय, ६ त्रसकाय, ए छ काय जीवनी विराधनानो करनार होय ॥ ३० ॥

अर्थः-पु० प्रथवी १ आ० अपकाय २ । ते० तेऊकाय ३ । वा० वाउकाय ४ व० वनस्पतिकाय ५ । त० त्रसकाय ६ । प० पडीलेहण आ० उपयोग संहित करतो थको । छ० छ कायना पण सं० जीवनुं रक्षण करवा आराधक हो० होय । पहले बीजी पडिलेहणा करी ॥ ३१ ॥

पछे वि० बीजी पडिलेहण जीव चढ्यो जाणतो प० वस्त्रने ओढतो पंखेरे च० हवे त० त्रीजी पडिलेहण
अणथोकेवली ६ पडिलेहणा जाणवी । ए ६ प्रसस्त पु० बली पंखेरता न उतर्यो तो प० वस्त्र पुंजे ॥ २४ ॥

मूलः—उड्ढं थिरं अतुरियं पुव्वं ता वत्थमेव पडिलेहे ।
तो विइयं पप्फोडे तइयं च पुणो पमज्जिज्ज ॥ २४ ॥

गाथा २४ भावार्थः—हवे वस्त्रनुं पडीलेहण करवानी विधि कहेछे, पचीस प्रकारनुं पडीलेहण, तेमां
१२ प्रसस्त (भली) अने १३ अप्रसस्त (भली नहि) एवी पचीस पडीलेहणाओ ते मांही प्रथम १२
प्रसस्त कहेछे, (१) वस्त्र उंचु राखे, (२) मजबूत पकडे, (३) उतावळो उतावळो न करे, (४) प्रथम छेडाथी
अंतना छेडा सुधी पडीलेहे (ए चार वार प्रथम पडीलेहणा दृष्टीए जोवानी थइ ने दृष्टीए जोया पछी जीव
चढ्यो जाणेतो), (५) वस्त्रने थोडुंक संखेरे, (ए त्रीजी संखेरवानी पडीलेहणा थइ), (६) वळी संखेरतां
न उतरे तो वस्त्रने पुंजे (ए त्रीजी पुंजवानी पडीलेहणा थइ) एवी ६ पडीलेहणा प्रसस्त जाणवी ॥ २४ ॥

अर्थः—बीजी छ पडिलेहणा प्रसस्त कहेछे । अ० वस्त्रने तथा शरिरने नचावे नही १ । अ० वस्त्रने आमले
हे २ अ० । थोडो स्यो वस्त्र अण पडिलेह्यो न राखे ३ । अमो० उंचो निचो त्रिछो धरतीए अडकाडे नही ।
पूर्व गाथा उद्देसारी कही ते । इ० आ छ कही ते प्रसस्त न० न व० जाटके (पपोडा) ।
हथेली उपरे पा० वस्त्रादिक जीवनो वि० विशेष सो० सोधन करे एटले नीव देखेतो ते ।

४ त० तेमज पा० आउखा निर्वाहने अर्थे क्षुधा वेदनी माटे ५ छ० छठुं कारण पु० वली ध० धर्म ध्याननी चि० विचारणाने अर्थे ६ ए ६ कारणे आहार करे मुनी ॥ ३३ ॥

मूलः–वेयण[1]–वेयावच्चे[2] इरियट्ठाए[3] य संजमट्ठाए[4] ।
तह पाणवत्तियाए[5] छट्ठं पुण धम्मचिन्ताए[6] ॥ ३३ ॥

गाथा ३३ भावार्थः–हवे छ कारण कहेछे, कोइक मस्तक दुःखवा प्रमुख वेदना मटाडवाने अर्थे (एटले कांइक खायतोज वेदना मटे), २ वैयावच्च करवाने अर्थे, ३ इर्या शोधवाने अर्थे (अर्थात् आहार कर्या विना आंखे अंधारा आवतां होय तेथी इर्या शोधाय नहि ते), ४ संयम पाळवाने अर्थे, ५ जीवतव्यने अर्थे (अर्थात् क्षुद्धा वेदनी मटाडवाने माटे), ६ तेमज धर्म ध्यान चींतवाने अर्थे, ए छ कारणे साधु आहार करे ॥ ३३ ॥

अर्थः–हवे छ कारणे आहार न करे ते कहे छे । नि० साधु धि० धैर्यवंत मुनी । नि० साधवी वि० पण न० आहार न क० करे छ० छ चे० अवधारणे । था० स्थानक उ० पुनः इ० एणे अ० नहीं अ० आज्ञानो उल्लघणहार से० ते हो० आज्ञानो मानणहारने ए छ कारण ॥ ३४ ॥

मूलः–निग्गन्थो धिइमन्तो निग्गन्थी वि न करेज्ज छहिं चेव ।
थाणेहि उ इमेहिं अणतिक्कमणाइ से होइ ॥ ३४ ॥

गाथा ३४ भावार्थः–धैर्यवंत एवा साधु साधवी पूर्वे कहेल्ये तेवा छ कारणे आहार नकरे तो तेथी करनी आज्ञानो लोपवण हार न होय (अर्थात् आज्ञानो

मूल:-आरभडा सम्मद्दा वज्जेयवा य मोसली तइया ।
पप्फोडणे चउत्थी विक्खित्ता वेइया छट्ठी ॥ २६ ॥

गाथा २६ भावार्थः-हवे ६ अप्रशस्त पडीलेहणा कहेछे, (१३) विपरीत तथा ऊलावळी ऊलावळी पडीलेहणा करे ते प्रथम आरभडा पडोलेहणा, १४ वस्त्रने चोळे तथा मर्दे ते बीजी सम्मदा पडीलेहणा, १५ वस्त्रने ऊंची नीची ने त्रीजी भरतीए लगाडे ते त्रीजी मोसली पडीलेहणा, १६ वस्त्रने झाटके ते चोथी पफोडणा पडीलेहणा, १७ वस्त्रने आपो पाछो विखेरी नांखे तथा अण पडीलेहा, ते पडीलेहा वस्त्रमांही मुके ते पांचमी विक्षिता पडीलेहणा, १८ पांच प्रकारनी वेदीका ते ? ऊंची वेदीका, २ नीची वेदीका, ३ त्रीजी वेदीका, ४ बे पासानी वेदीका, ५ एक वेदीका, हवे एक दींचण ऊपर बे हाथ राखीने पडीलेहणा करे ते ऊंची वेदीका, २ बने हाथ दींचणथी नीचा राखीने पडीलेहणा करे ते नीची वेदीका, ३ दींचणथी हेठे बने हाथ दींचणना बे पासाथीही राखीने पडीलेहणा करे ते त्रीजी वेदीका, ४ दींचणने बे बाहु मांही राखी ने वस्त्रनी पडीलेहणा करे ते बे पासानी वेदीका, ५ एक दींचण एक हाथ वच्चे राखीने वस्त्रनी पडीलेहणा करे ते एक वेदीका जाणवी, ए छठ्ठी वेदीका पडीलेहणा जाणवी, ए छ प्रकारनी पडीलेहणा अप्रशस्त जाणवी ॥२६॥

अर्थः-वळी अप्रशस्त कहेछे। प० वस्त्र आकरो न झाले ?॥ प० वस्त्र लाबो राखीने पडीलेहेतो दोष २। लो०वस्त्रने भुपीका लागे रोले तो दोष ३। ए०एकवार आरुं वस्त्र दृष्टी फरसी मो० जोय तो दोष ४। अ०

गाथा ३६ भावार्थः–आहार पाणी लइने विहार करे, तेवारे सर्व पात्रादिक ऊपगरण द्रष्टिये पडी लेही (जोइ) ग्रहीने उत्कृष्टो अर्ध योजन (वे गाऊ लगी आहार पाणी साथे लेइने साधु विहार करे तथा अर्ध योजन लगी गोचरिये जाय ॥ ३६ ॥

॥ २०३ ॥

अर्थः–च० चउथीए पो० पोरसीने विषे आहार कीधा पछे नि० अलगां मुकीने भा० भाजनने त० तेवारे पछे स० सझायने विषे कु० करे स० सर्व जीवादिक भा० पदार्थने विषे वि० प्रकाशनो करणहार एहवो सझाय करे॥ ३७॥

॥ २६ ॥

मूलः–चउत्थीए पोरिसीए निक्खिवित्ताण भायणं ।
सज्झायं तओ कुज्जा सव्वभावविभावणं ॥ ३७ ॥

गाथा ३७ भावार्थः–आहार कर्या पछी पोरसीने विषे पात्रादिक भाजनने अलगां बांधी मुकीने तेवार पछी सर्व जीवादिक भाव पदार्थ प्रकाश करनार एवी सझाय करे ॥ ३७ ॥

अर्थः–पो० पोरसी पाछलीना च० चोथा भाग पाछली बे घडीने विषे । वं० वांदिने त० तेवारपछी गु० गुरुने । प० निवर्त्तावीने का० सझायना कालने । से० थानक प्रमुख तु० वस्त्रादिकने प० पडिलेहे ॥३८॥

मूलः–पोरिसीए चउब्भाए वन्दित्ताण तओ गुरुं ।
पडिक्कमित्ता कालस्स सेज्जं तु पडिलेहए ॥ ३८ ॥

गाथा ३८ भावार्थः–चोथी पोरसीना चोथा भागने विषे (अर्थात् बे घडी दिवस रहे तेवारे) गुरुने वांदीने सझायना कालने निवर्त्तावीने [illegible] ॥ ३८ ॥

॥ २०३ ॥

[illegible]

[illegible]

[illegible]

अर्थः–हवे काउसग्गमांहि जे चिंतवे ते कहेछे। दे० दिवस संबंधिया चे० पूरणे अ० अतिचारने ॥ चि० चिंतवे अ० अनुक्रमे सो० ते॥ ना० प्रथम ज्ञानने विषे। जंवाइद्वंमणुप। १४ अतिचार। दं० दर्सन समकितने विषे पांच संकादिक चे० वली च० चारित्रने विषे साधुने पांच महाव्रतने २५ भावना। देसवर्तिने ज्ञानना। १४। दर्शन समकीतना ५। यार द्रतना ७५। सलेषणाना ५ ए ९९ तेहने। त० तेमहिज य० वली ए ३ ने विषे अतिचार चिंतवे एटले प्रथम आवस्यक ॥ ४० ॥

मूलः–देवसियं च अतीचारं चिन्तिज्जा अणुपुव्वसो।
नाणंमि दंसणे चेव चरित्तम्मि तहेव य ॥ ४० ॥

गाथा ४० भावार्थः–ते कायोत्सर्गने विषे दिवस संबंधी ज्ञान दर्शन चारित्रना अतिचार अनुक्रमे चिंतवे, ते एवी रीते के १४ ज्ञानना, ५ दर्शनना, चारित्रना १०६ ते २५ पांच महाव्रतनी भावनाना, २ रात्री भोजनना, ४ प्रथम इर्या समितीना, २ बीजी भाषा समितीना, ४७ त्रीजी एषणा समितीना, २ चोथी आदान समितीना, १० पांच परिठावणीया समितीना, ३ मनगुप्तीना, ३ वचन गुप्तीना, ३ काय गुप्तीना ५, संलेखणाना एम १०६ चारित्रना अने ज्ञानना १४ ने दर्शनना पांच मळी १२५ अतिचार साधु चिंतवणा करे ए प्रथम आवस्यक थयो ॥ ४० ॥

अर्थः–पा० पाछिले का० काउसग्गने विषे स्मरण करवो। दम्बैकाक्किकरी मात्रे नमोकारेणपारिया ॥२०४॥

पडिलेहणाआउत्तो छण्हं संरक्खओ होइ ॥ ३१ ॥

गाथा ३१ भावार्थः-अने ऊपयोग सहित पडीलेहणा करतो थको, १ पृथ्वीकाय, २ अपकाय (पाणी), ३ तेउकाय (अग्नि), ४ वायुकाय (वायरो), ५ वनस्पतीकाय, ६ त्रसकाय, ए छ काय जीवनुं रक्षण करवाथी आराधीक होय, ए रीत पात्रनी पडीलेहणा कही ॥ ३१ ॥

अर्थः-हवे गोचरीनो अधिकार कहे छे । त० त्रीजी पो० पोरसीने विषे । भ०भात पा० पाणीने ग० गवेषे तेवार पहेला उठ्यानी ना नहि । ए समुच्चय सामान्य मार्ग पडिलेहतो । छ० छ कारण मांहि । अ० अनेरो कोइ एक का० कारण । उपने एने आहार लेवाने उ० उठे ॥ ३२ ॥

मूलः-तइयाए पोरिसीए भत्तं पाणं गवेसए ।
छण्हं अन्नयराए कारणंमि उवट्ठिए ॥ ३२ ॥

गाथा ३२ भावार्थः-हवे गोचरीनो अधिकार कहेछे, त्रीजी पोरसीने विषे छ कारण मांहीलुं अनेरु कारण उपने थके आहार पाणीनी गवेषणा करवा ऊठे. (अहीं त्रीजी पोरसीए आहार पाणी गवेषणानुं कार्यछे, ते औधीकछे पेण कोई कारण पडेतो पहेला बीजानें चोथा पहोरनें विषे पण आहार पाणीनी गवेषणा करवाने ऊठवानी ना कही नथी) ॥ ३२ ॥

अर्थः-हवे छ कारण कहे छे वे० हवे कोइक माथा दुखवा प्रमुख वेदना मटाडवा माटे वेदना मटे १ वे० वेयावच करवाने अर्थे २ इर्या शोधवाने अ० अर्थे ३

वांदणा देइने वांदणानो स्तोत्र, १ नमोअरिहंताणं, २ करेमिभंते, ३ इच्छामिठामि, ४ तस्सउत्तरि। का० काउसग्गना ४ सूत्र भणीने काउसग्गने त० तेवारे पछे कु० करे। स० सर्व दु० दुषनो वि० मुकावणहारछे काउसग। एहवो धर्म ध्यांननो काउसग करे। एटले ५। आवस्यक थया ॥ ४२ ॥

मूलः—पडिक्कमित्तु निस्सल्लो वन्दित्ताण तओ गुरुं ।
काउस्सग्गं तओ कुज्जा सव्वदुक्खविमोक्खणं ॥ ४२ ॥

गाथा ४२ भावार्थ.—अतिचार लाग्या होय तेने मिच्छामिदुक्कडं दइने निःसल्ल थाय ने सकल जीवादिकने खमावे, ए चोथो आवस्यक थयो. तेवार पछी गुरुने वांदणा दिए, ते इच्छामिखमासमणानो पाठ वेवार कहीने पछी पांचमां आवस्यकनी आज्ञा मागीने १ नमोकार, २ करेमिभंते, ३ इच्छामी ठामि, ४ तसऊतरीनो पाठ कहीने तेवार पछी सर्व दुःखनो मुकावनार एवो कायोत्सर्ग करे, ए पांचमो आवस्यक थयो ॥४२॥

अर्थः—हवे छठो आवसक कहेछे का० काउसगने पा० पाल्योछे काउसग जेणे ते पार्या पछी लोगस्स कहे त० तेवार पछे गु० गुरुने व० वांदणा दईने इहां पचपाण करे। च० चकारथी जाणवुं, ए छठो आवस्यक जाणवो ए ६ ॥ आवस्यक कर्या पछे। साधु चोविहार कीधो होय ते फरी संभारी। अने श्रावकने जेहवी श्रधा होय तेहवा पचखाण करे। दिवस चरिमं पचखामि इत्यादिक पचखाणनो सूत्र। थु० स्तुति मं० मंगल नमोथ्थुणं पचखाण का० करीने। का० सझाय करवाना काळने सं० साचे प्रकारे पडिलेहे ॥ ४३ ॥

मूलः—पारियकाउस्सग्गो वन्दित्ताण तओ गुरुं ।

तत्कालीक मुळादिक मारणांतिक रोग उपने छते ? । उ० व्याघादिकनो उपसर्ग उपने
नेहने अर्थे ८ । न० तप करवाने हे० हेते ६ ॥ स० आउग्रो आव्यानो अवसर जाणीने शरीर वो० मूंकवाने
हो० अर्थे ६ । ए ६ कारणे आहार तजता आज्ञा छे । ते आज्ञानो भंग नहि ॥ ३४ ॥

मूल.—आयंके उवसग्गे तितिक्खया बम्भचेरगुत्तीसु ।
पाणिदया तवहेउं सरीरवोच्छेयणट्ठाए ॥ ३५ ॥

गाथा ३० भावार्थः—हवे छ कारणे साधु आहार न करे ते कहेछे, १ तत्काळ मुळादिक मणांत् रोग
उपने थके, २ व्याघ मनुष्यनो उपसर्ग उपने थके, ३ ब्रह्मचर्य पालवाने अर्थे क्षुधा प्रमा सबमे, ४ कुंथुवादिक प्रमा
माणी जीवनी उत्पत्ती जाणीने तेनी दया पाळवाने अर्थे, ५ तप करवाने अर्थे, ६ आयुष्य पुर्ण थयानो अवसर
जाणीने शरीर मूकवाने अर्थे संलेखणा करे, ए छ कारणे आहार तजवाथी निर्जराती आज्ञानो भंग नहि ॥ ३५ ॥

अर्थः—हवे गोचरी उठ्यानी विधि कहे छे ॥ अ० सर्वे भं० भंड पात्रादिक उपगरणने ग्रि० ग्रहिने ।
च० दृष्टिए करी प० पडिलेहे जोइ । प० उत्कटो जो० बे गाउ सुधी । वि० विहारने अर्थे विहार वि०
विचरे साध मृ० साधु ॥ ३६ ॥

मूलः—अवसेसं भण्डगं गिज्झ चक्खुसा पडिलेहए ।
परमद्धजोयणाओ विहारं विहरे मुणी ॥ ३६ ॥

गाथा ४५ भावार्थः–चोथी पोरसीना काळनुं पडीलेहण करीने एटले चोथी पोरसी आवी जाणीने ३२ असज्झाय टाळी असंयतिने अणजगाडतो सज्झाय करे ॥ ४५ ॥

अर्थः–पो० पाछली पोरसीनां च० चोथाभागे पाछली वे घडीए । त० तेवार पछे गु० गुरुने वं० वांदिने । प० निवर्तावीने का० ॥ सज्झायना का० कालने । तु० वली दिवसे सज्झाय करवीछे ते माटे । सज्झायना कालने प० पडीलेहे ॥ ४६ ॥

मूलः–पोरिसीए चउब्भाए वन्दिऊण तओ गुरुं ।
पडिक्कमित्तु कालस्स कालं तु पडिलेहए ॥ ४६ ॥

गाथा ४६ भावार्थः–रात्रीनी चोथी पोरसीना चोथा भागने विषे एटले वे घडी रात्री रहे तेवारे सज्झायना कालने निवर्तावीने आवश्यकना कालनुं पडीलेहण करीने (अर्थात आवश्यक करवानी वेळा थइ के केम ?) तेवार पछी गुरुने वांदीने ॥ ४६ ॥

अर्थः–पाछलीपरे गमणा गमण पडिकमीने । सामायक आवश्यकने आ० आवे छते का० काउसग । स० सर्व दु० दुपने वि० मुकावणहार काउसग आवेछते । का० काउसगने त० तेवार पछे कु० करे । स० सर्व दु० दुपनां वि० मुकावणहार काउसग करे ॥ ४७ ॥

मूलः–आगए कायवोस्सग्गे सव्वदुक्खविमोक्खणे ।

गाथा ४९ भावार्थः-ते कायोत्सर्ग पाळीने बीजा आवश्यकनी आज्ञा मागीने लोगस कहे, ए बीजो आवश्यक थयो तेवार पछी त्रीजा आवश्यकनी आज्ञा मागीने गुरुने वार आवर्तनरुप वांदणा (अर्थात बे खमासमणांदिए) ए त्रीजो आवश्यक थयो, पछी चोथा आवश्यकनी आज्ञा मागीने रात्री संबंधी ज्ञानादिक अतिचार अनुक्रमे खमाववाना पाठ मुखी आलोवे ॥ ४९ ॥

अध्य० ॥ २६ ॥

अर्थः-प० मिछामि दुक्कडं देइने नि० खमाववे करी सल्ल रहित थाय ए चोथो आवश्यक त० तेवार पछी गु० गुरुने वं० वांदीने वंदणा देइने त० तेवार पछे का० काउसग्ग कु० करे । स० सर्व दु० दुखनो वि० मुकावणहार ॥ ५० ॥

मूलः-पडिक्कमित्तु निस्सल्लो वन्दित्ताण तओ गुरुं ।
काउस्सग्गं तओ कुज्जा सव्वदुक्खविमोक्खणं ॥ ५० ॥

गाथा ५० भावार्थः-मिच्छामिदुक्कडं दइ खमाववे करी सल्ल रहित थाय, ए चोथो आवश्यक थयो, ते वार पछी गुरुने वांदणा (वे खमासमणा) दइने सर्व दुःखथी मुकावनारो एवो कायोत्सर्ग करे ॥ ५० ॥

अर्थः-किं० किस्यो त० तपने प० हुं अंगीकार करुं ॥ ए० एणीपरे त० ते काउसग्गने विषे वि०
---सग्गने तु० वली पा० पारिने लोगस्स कहे ए पांचमो आवश्यक थयो । वं०

॥ २९७

वांदणा गु० गुरुने देवने तेहनो मूल इच्छामी पमासमणो १ । अहोकायं २ कायसंफास ३ खमणिज्जो भे ४ । किलामणा ५ । ए भणता १२ । आवर्तन २५ भेद दोनयंत्रहाजयं । क्रियाकर्म बारमावर्त १२ । चउसरं ४ । तिगुप्तं २ । दुपवेसंग निग्गमणं २५ । ए बारमा समवायमां आवर्तननो विचार ते ए त्रीजो आवश्यक थयो तेवार पछी ॥ दे० दिवस संबंधि तु० वली गुरु आगले अ० अतिचारने आ० मगट आलोइ । ज्ञान दर्शन चारित्रना ज० अनुक्रमे ते साधु अने श्रावकने श्रमणसूत्र, तथा आगमे विविधे पमाड़ा सुधी ॥ ४१ ॥

मूलः—पारियकाउस्सग्गो वन्दित्ताण तओ गुरुं ।
देसियं तु अतीचारं आलोएज्ज जहक्कमं ॥ ४१ ॥

गाथा ४१ भावार्थः—कायोत्सर्ग पारीने त्रीजा आवश्यकनी आज्ञा मागीने चोवीश जीन स्तवनरूप लोगस्स कहे, ए त्रीजो आवश्यक थयो, तेवार पछी त्रीजा आवश्यकनी आज्ञा मागीने गुरुने १२ आवर्तनरूप वांदणा दिए ते इच्छामिखमासमणानो पाठ कहे, ते बार आवर्तन एवी रीते के १ अहो २ कायं ३ काय ४ जत्ताभे ५ जवणि ६ जंचभे ए ६ पदो ते बे खमासमणाना मलीने १२ पदो, ए त्रीजो आवश्यक थयो, ते बार पछी चोथा आवश्यकनी आज्ञा मागीने दिवस संबंधी ज्ञान दर्शन चारित्रना अतिचार अनुक्रमे खमावा ना पाठ सुधी मगट पणे आलोवे ॥ ४१ ॥

अर्थः—प० अतिचार लागो होय तेहनो मिच्छामी दुक्कड देवने नि० निसल्ल थाय । सकल त्रीजा-दीकने पमाडी एटले चोथो आवश्यक थयो. हवे पांचमो आवश्यक कहे न० तेवारे पछे गु० गुरुने व० वांदिने

मूलः—एसा सामायारी समासेण वियाहिया ।
जं चरित्ता बहू जीवा तिण्णा संसारसागरं ॥ ५३ ॥ त्ति बेमि ॥

॥ इति सामायारी नामा षड्विंशतितमं अध्ययनं सम्मत्तं ॥ २६ ॥

॥ २७ ॥

गाथा ५३ भावार्थः—ए प्रमाणे दशविध सामाचारि तिर्थंकरे अहीं कहि (एनो वधारे विस्तार आवस्यक शास्त्रथी जाणवो) के जे सामाचारिने आचरिने घणा जीव संसार समुद्र तरीने मुक्तिपद पाम्या, सिद्ध थया. ए प्रमाणे सुधर्मास्वामी पोताना जंबू नामना शिष्यने कहेता हवा के हे जंबू? जेम में श्री महावीर देव स्वामीनी समीपे सांभल्युं हतुं, तेम में तुंज प्रत्ये कहुं ॥ ५३ ॥ २६ मां अध्ययनने विषे दशविध समाचारी कही ते तो धुर्तपणुं छांडवाथी सामाचारी आराधे ते माटे २७ मां अध्ययनने विषे धुर्तपणुं छांडवुं ते धुर्तपणाना लक्षणवाळा एवा गर्गासुरिना शिष्यनुं उदाहरण कहेछे. ॥ २६ ॥

अर्थः—थे० धर्मने विषे स्थिर करे ते स्थिवर ग० गछनां धरणहार ते आचार्य ग० गर्गानामा आचार्य मु० साधु आ० हुओ वि०सर्व शास्त्रनेविषे विचक्षण । आ० व्याप्तछे ग० आचार्यना भा०गुणनेविषे स०समाधि संघाते प० आपणा आत्माने साथे जोडे ॥ १ ॥

मूलः—थेरे गणहरे गग्गे मुणी आसि विसारए ।
[illegible] समाहिं पडिसंधए ॥ १ ॥

उत्तरगुण ने काउस्स काल सपडिलेहए ॥ ४३ ॥

गाथा ४३ भावार्थः–कायोत्सर्ग पारीने ज्योगस्स कहोने तेवार पछी गुरुने वांदणा (ते वे खमासमणा) दइ गुरुने पंचाग नमावी यथायोग्य पचखाण करे, ए छठो आवश्यक थयो. ६ आवश्यक पूर्ण थया पछी स्तुतिमंगळ ते अरीहंत सिद्ध धर्मगुरु धर्माचार्यने एवां त्रण नमोथुणं कहे, पछी सज्झायना काळने सम्यक प्रकारे पडीलेहे (जोवे) ॥४३॥

अर्थः–हवे रात्रीनि विधि कहेछे प० पहेली पो० पोरसीए स० सज्झाय करे वि० बीजी पोरसीए झा० ध्याननेविषे ध्यावे त० त्रीजी पोरसीए नि० निद्राने मो० मूके मोकली तु० समुचय करो अथवा न करो निद्रा तु० वली स० सज्झाय करे च० चोथी पोरसीए ॥ ४४ ॥

मूलः–पढमं पोरिसि सज्झायं बितियं झाणं झियायई ।
तइयाए निद्दमोक्खं तु सज्झायं तु चउत्थिए ॥ ४४ ॥

गाथा ४४ भावार्थः–हवे रात्रीनी विधी कहेछे, रात्रीनी पहेली पोरसीए सज्झाय करे, बीजी पोरसीये ध्यान ध्याय, त्रीजी पोरसीये निद्रा मोकळी मूके, वळी चोथी पोरसीए सज्झाय करे ॥ ४४ ॥

अर्थः–केमकरे पो० पोरसीए च० चउथीए तु० वली का० काळने प० पडिलेहिने । स० सज्झायने तु० वळी करे त० तेवार पछे कु० करे ॥ अ० अण जगाडतो थको । अ० असंजतीने ॥ ४५ ॥

मूलः–पोरिसीए चउत्थीए कालं तु पडिलेहए ।
सज्झायं तु तओ कुज्जा अवोहन्तो असंजए ॥ ४५ ॥

पासे अने ते गळीया वळदने मारतां खेडतनो परोणो पण भांगे ॥ ३ ॥

अर्थः–ए० एक गळीया वळदने ड० ते खेडु करडे । पु० पुछडाने विषे । ए० एक गळीया वळदने वि० परोणांनी आरे विंधे अभि० वारंवार ॥ ए० एक गळीया वळदने भ० भांजे स० समील ए०एक गळियो वळद उ० उन्मार्गे प० जइ रहे ॥ ४ ॥

मूलः–एगं डमइ पुच्छंमि एगं विन्धइ भिक्खणं ।
एगो भञ्जइ समिलं एगो उप्पहपट्ठिओ ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थ–एकेक गळीया वळदना पुंछडाने खेडुत करडे अने एकेक गळीया वळदने परोणानी आरे करीने वारंवार विंधे, एकेक गळीयो वळद समील (धुसरुं) भांगे, अने एकेक गळीयो वळद उन्मार्गे जइ रहे ॥४॥

अर्थः–ए० एक गळीयो वळद ते प० पडे पा० एक पसवाडे एक पासाभर । नि० एक गळियो वळद वेसे नि० एक गळीयो वळद मुए । उ० कुदे उछले उ० देडकानीपरे थेकडा भरे । स० धुर्त माया सहित वा० तरुणी ग० गायने देखीने साहमो सन्मुख व० वळी जाय ॥ ५ ॥

मूल–एगो पडइ पासेणं निवेसइ निवज्जई ।
उक्कुदइ उप्फडइ सढे वालगवी वए ॥ ५ ॥

गाथा ४७ भावार्थः—तेम हेवाथी पडिक्कमी (अर्थात् प्रतिक्रमण करी) ने पछी आवश्यकनी आज्ञा मागीने पूर्वोक्त विधिये सर्व दुःखथी छूटवाना एवो कायोत्सर्ग करे ॥ ४७ ॥

अर्थः—ते कायोत्सर्गने विषे प० सत्ती ग० राशि संबंधी अ० अतिचारने चि० चिंतवे अ० अनुक्रमे । जा० ज्ञानना १४ ने विषे ४० पांच समकितना तेरने विषे प० सत्ती । च० चारित्रने विषे प० सत्ती त० तपने विषे १० । एटला बधा अतिचार चिंतवे । एटले प्रथम आवश्यक थयो ॥ ४८ ॥

मूलः—गाहगं च अईयारं चिन्तिज्ज अणुपुव्वसो ।
नाणंमि दंसणंमि य चरित्तंमि तवंमि य ॥ ४८ ॥

गाथा ४८ भावार्थः—ते कायोत्सर्ग ने विषे १४ ज्ञानना, ५ समकितना, १२५ चारित्रना, १२ तपना एम १५६ अतिचार सर्वे संबंधी अनुक्रमे चिंतवे, ए प्रथम आवश्यक थयो ॥ ४८ ॥

अर्थः—गा० गाहगम् गा० पाछिने संबंधन करिने बीजुं आवश्यक थयुं ॥ त० तेवार पछे गु० गुरुने वांदीने वांदणा देईने ए बीजो आवश्यक थयो । गा० सत्ती संबंधी दु० सत्ती अ० अतिचारने ॥ भा० गाथा ४८ मा ज्ञानादि अनुक्रमे ॥ ४८ ॥

मूलः—पारियकाउस्सग्गो वन्दिताण नओ गुरुं ।
गाहगं तु अईयारं आलोएज्ज जहक्कमं ॥

दु० दुर्बल बुद्धिना धणी अधीर्यवंत थका ॥ ८ ॥

मूलः—खलुङ्का जारिसा जोज्जा दुस्सीसा वि हु तारिसा ।
जोइया धम्मजाणम्मि भज्जन्ती धिइदुब्बला ॥ ८ ॥

गाथा ८ भावार्थः—एकेक गळीयो जोतर्यो थको गाडाने भांगे, जेवा ए गळीयावळद होय, तेवाज निषे कुशिष्य पण होय के तेने धर्म रुपीया गाडाने विषे जोडया थका क्रियानुंष्टानने विषे दुर्बळ बुद्धिना धणी अधीर्यवंत थका साचे मने प्रवत्ते नहि ॥ ८ ॥

अर्थः—इ० कहिने गा० अहंकारेकरी सहित ए० एकेक कुशिष्य । ए० एक कोइक कुशिष्य त्य० इहां र० मीठा मधुरादिक स्वादनो लंपट थको रसना स्वादना गा० अहंकार सहित होय । सा०साताना गा०अहंकार सहित होय ए० एक कोइक कुशिष्य ए० एक गु० घणा काळलगे को० कोपवंत होय ॥ ९ ॥

मूलः—इड्ढीगारविए एगे एगे त्थ रसगारवे ।
सायागारविए एगे एगे सुचिरकोहणे ॥ ९ ॥

गाथा ९ भावार्थः—एकेक कुशिष्य ऋद्धीने अहंकारे करी सहित होय, एकेक कुशिष्य मीठा मधुरादिक स्वादनो लंपट थको रसना स्वादने अहंकार सहित होय, एकेक कुशिष्य घणा काळ सुधी कोपवंत होय ॥९॥

[illegible] गुरु ॥ ५१ ॥

गाथा ५१ भावार्थः—ते कायोत्सर्ग ने विषे हुं नव अंगीकार करुं ! एम चिंतवीने कायोत्सर्ग पारीने नमस्कार करे, ए पांचमो आवश्यक थयो, तेवार पछी गुरुने वांदणा (ते खमासमणा) दिए ॥ ५१ ॥

अर्थः—ता० पार्यो छे का० काउस्सग्ग जेणे एहवो ते ॥ व० वांदणा देइने त० तेवार पछे गु० गुरुने । ए पाठना वांदणा संभार्या पण नवा न जाणवा ॥ त० पछे नवने तु०वली प० संपडीवर्ज्याने । ए छठो आवश्यक थयो । क० करे सि० सिद्धनो सं० संस्तवनो । नमोथुणं कहि एटले सवारनुं आवश्यक कर्युं ॥ ५२ ॥

मूलः—पारियकाउस्सग्गो वन्दित्ताण तओ गुरुं ।
नवं तु पडिवज्जेज्जा करिज्ज सिद्धाण संथवं ॥ ५२ ॥

गाथा ५२ भावार्थः—कायोत्सर्ग पार्योछे जेणे एवो ते गुरुने वांदणा (अहीं ५१ मी गाथा कहेलछे तेम वांदणा जाणवा) देइने पछी गुरुने पंचांग नमावी नमस्कार करीने नव अंगीकार करे, ते वार पछी सिद्धनुं संस्तव करे (अर्थात नमो अरिहंत सिद्ध ने धर्मगुरु धर्माचार्यने एवां नव नमोथुणं कहे) ए छठो आवश्यक थयो, ए प्रमाणे सवारना आवश्यकनी विधी कही ॥ ५२ ॥

अर्थः—ए० ए सा० सामाचारी स० संक्षेपे वि०करी छए आवश्यकना पूर्व आवश्यकसूत्रथी जाणवा ॥ अ० जे समाचारिने । भ० आचरिने ब० घणा जी० जीव । सि० गया सं० संसार सा० समुद्रने तरीने । मुणिवर वसहा सिद्ध गया ॥ इ० इम बे० हुं कहुं हूं ॥ ५३ ॥

पोतानो पुत्र करी मानेल ने पोतानो आत्माने गणधरी संघाते जोडेल एवा गणो नामे आचार्य हता ॥ १ ॥

अर्थः-व० जेम गाडाने विषे बलद जोतर्या थका व० भार वहता विनित वृषभ अने गाडानो खेडण-हार कं० अटवी मुखे अ० अतिक्रमे जो० संजमजोग व्यापारनेविषे व० प्रवर्तता होय जे । विनित शिष्य अने गुरु थंने । सं० संसार रूपणी अटवी । अ० अतिक्रमे उलंघे मोक्ष पहुचे ॥ २ ॥

मूलः-वहणे वहमाणस्स कन्तारं अइवत्तई ।
जोगे वहमाणस्स संसारं अइवत्तई ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः-जेम विनयवंत बलद गाडीने विषे जोतर्या थका भार वहेता गाडीवान अने बलद थंने मुखे अटवी ओलंघे तेम संयम योग व्यापारने विषे प्रवर्तता विनित शिष्य अने गुरु थंने मुखे संसार रूपणी अटवी ओलंघे ॥२॥

अर्थः-हवे अविनीतनो स्वरुप कहे छे ॥ ख०गलाया बलदने जो०जो कोइक जोडे उ०वली जो०जोतरे गाडादिकनेविषे वि० परोणे करी हणतो थको कि० दुख पामे । अ० असमाधिचित्तनुं उद्वेगपणुं । च० वली वे० वेदे । तो० परोणो से० ते रोइतनो य० वली । भ० भागे गळीया बलदने मारता ॥ ३ ॥

मूलः-खलुङ्के जो उ जोएइ विहम्माणो किलिस्सई ।
असमाहिं च वेएइ तोत्तओ से य भज्जई ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः-हवे अविनीतनुं वर्णन कहे छे, जे कोइ एक गळीया बलदने गाडादिकने विषे जोतरे तेवारे गाडीवान बलदने परोणीये करी हणतो थको असमाधी चित्तनुं उद्वेगपणुं भोगवे ने दुःखने श्रम

मूलः–न सा ममं वियाणाइ न य सा मज्झ दाहिई ।
निग्गया होहिई मन्ने साहू अन्नो त्थ वच्चउ ॥ १२ ॥

गाथा १२ भावार्थः–आचार्यना वचनने केवी रीते विनीत करे ते कहेछे, गुरु कुशिष्यने आहारपाणी प्रमुखने अर्थे मोकले तेवारे कहे के ते श्राविका मुजने जाणती नथी तेमज ओळखती पण नथी तेथी मुजने आहार पाणी प्रमुख आपशे नहि, एम हुं जाणुंछुं के ते श्राविका हमणां घर थकी बहार गइ हशे ! अथवा ए कार्यने विषे मुज थकी अनेरा साधुने मोकलो, हुं ? हुंज हुं ? बीजो कोइ साधु नथी ॥ १२ ॥

अर्थः–पे० कोइक प्रयोजने मोकल्या होय तेवारे कार्य अण निपजाव थके प० पुछ्या थका एम बोले तुम्हे अम्हने ए कार्य कीहां कहुं हतुं ॥ ते० ते कुशिष्य प० भ्रमन करे भमे स० सर्व दिशानेविषे, शा माटे स्वामणी गुरुनी पासे वेसीस तो । गुरुना कार्य करवा थास्ये ॥ गुरुना कार्य करवा रा० ते राजानी वे० वेउनी च० परे म० मानता थका प्रवर्ते ॥ क० करे भि० रिसने वशे भमुह उंची चढावे मु० मुपने विषे ॥ १३ ॥

मूलः–पेसिया पलिउंचन्ति ते परियन्ति समन्तओ ।
रायवेट्ठिं च मन्नन्ता करेन्ति भिउडिं मुहे ॥ १३ ॥

गाथा १३ भावार्थः–गुरुए कुशिष्यने कोइ प्रयोजने मोकल्यो होय, तेवारे ते कार्य अणनिपजावे थके गुरु पुछे तेवारे कहे के ए कार्य तमे मुजने क्यारे कहुं हतुं, ते कुशिष्य सर्व दिशाने विषे परिभ्रमण करे, कारण के हुं गुरु पासे वेसीश तो गुरुनां कार्य करवां पडशे, वली गुरुनां कार्य करवाने विषे राजानी वेउनी

अर्थः–मा० मायावंत मु० गलियो बलद मायाभरी प० पडे । इ० गलियो बलद कोण्यो थको ग० नाग प० पाछो । म० मृतकनीपरे चि० तिहे रहे य० वली वे० वेगेकरी उभाव्यो य० वली प० नाखे ॥ ६ ॥

मूलः–माई मुद्धेण पडइ कुद्धे गच्छे पडिणहं ।
मयलक्खेण चिट्ठई य वेगेण य पहावई ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः–एकेक कपटाइवंत बलद माया भेर पडे, एकेक गलीयो बलद कोण्यो थको पाछो जाय, एकेक गलीयो बलद मृतकनी पेरे रहे, एकेक गलीयो ऊभावली गतिये नाखे ॥ ६ ॥

अर्थः–छि० दुष्ट जातिनो बलद गलियो छि० छेदीने से० गयो दु० दुर्दांत थको भं० भांजे जु० धुसराने से० ते वि०पण गलिओ य० वली सु०सुसुयाटा फुसयाटा करीने उ०खेडूतना हाथ थकिथी उभरडीने प० नासी जाय ॥७॥

मूलः–छिन्नाले छिन्दइ सेलिं दुद्दन्तो भञ्जए जुगं ।
से वि य सुस्सुयाइत्ता उज्जहित्ता पलायए ॥ ७ ॥

गाथा ७ भावार्थः–एकेक दुष्ट जातिनो गळीयो बलद रासडीने तोडे, एकेक गळीयो बलद दुर्दांत थको धोंसरुं भांगे, एकेक गळीयो बलद शुंसवाटा फुंफाटा करीने खेडूतना हाथमांथी ऊभरडीने नासी जाय ॥७॥

अर्थः–स० गळीया बलद जा० जेवा होय जो० जोतर्या थका दु० कुशिष्य स० पण दु० निग्रे । ता० तेहवाज होय । जो० जोड्या थ० धर्मरुपीया जा० गाडानेविषे । म० सासे मने मवर्ते नहि धि० बुद्धि

तेम गर्गाचार्य कुशिष्योए करी श्रम पाम्या थका विशेषे चिंतवता हवा के ए दुष्ट शिष्य गारे आ कामना ? अने एथी मारुं कार्य शुं सरे, अने ए दुष्ट शिष्यथी मारे शुं प्रयोजन ? माटे मारो आत्मा ए दुष्ट शिष्यने संगे सिदाय छे तेथी ए कुशिष्यने हुं वोसरावीने विचरुं तो मुजने श्रेय ? ॥ १५ ॥

अर्थः–जा० जेहवा म० माहरा सी० शीष्य ता० तेहवा ग० गळीया ग० गर्दभ। ग० गलिया ग० गर्दभ सरिखा कुशिष्यने न० छांडीने। द० गर्गाचार्य दृढ आकरो प० प्रकर्षे अंगीकार करे छे त० वार भेदे तप ॥ १६ ॥

मूलः–जारिसा मम सीसाओ तारिसा गलिगद्दहा ।
गलिगद्दहे जहित्ताणं दढं पगिण्हई तवं ॥ १६ ॥

गाथा १६ भावार्थः–जेवा गळीया गधेडा तेवा मारा शिष्य छे तो गळीया गधेडा सरखा कुशिष्यने छांडीने गर्गाचार्य दृढ आकरो वारे भेदे तप अंगीकार करता हवा ॥ १६ ॥

अर्थः–मि० सुकोमल विनित म० अहंकार रहित विनित अने मार्दवपणे करी सं०सहित। गं०गंभीर सु० समाधी करी सहित छता वि० विचरे छे म० पृथ्वीए म० महांत आत्मा सी० चारित्रना गुणसहित छे ते भणी शीतलभूत अ० आत्मा छता गर्गाचार्य विचरेछे। इ०एम श्रीसुधर्मास्वामी जंबुस्वामी प्रते ने० कहेछे ॥१७॥

मूलः–मिदुमद्दवसंपन्नो गम्भीरो सुसमाहिओ ।
विहरइ महिं महप्पा सीलभूएण अप्पणा ॥ १७ ॥ त्ति बेमि ॥

॥ इति श्री खरतरगच्छीय साधुजनवल्लभ्य उपाध्याय श्री क्षमाकल्याणगणिविरचितायां श्रीउत्तराध्ययनसूत्रस्य सुखबोधिकाभिधायां वृत्तौ सप्तविंशमध्ययनं समाप्तं ॥ २७ ॥

[illegible] एग एग आमाणभीरुए ।
थद्धे एगं च अणुसासम्मी हेऊहिं कारणेहि य ॥ १० ॥

गाथा १० भावार्थः–एकेक कुशिष्य भिक्षाने विषे आळसवंत होय, एकेक कुशिष्य अहंकारवंत थको भिक्षाए भमतां अपमानथी बीहे, एकेक कुशिष्यने शिक्षामण देतां थका हेतुने कारणे करी सामुं बोले ॥ १० ॥

अर्थः–सो० ते कुशिष्य वि०वळी स० गुरु बोल्या होय तेवारे वचे भा० कोपे बोले दो० गुरुना बोल्यामांही खोट काढे दोषज । प० कहे भा० आचार्यने तु० ते व० वचन शीखामणरुप । प० विपरित करे अ०वारंवार ॥११॥

मूलः–सो वि अन्तरभासिल्लो दोसमेव पकुव्वई ।
आयरियाणं तु वयणं पडिकूलेइ अभिक्खणं ॥ ११ ॥

गाथा ११ भावार्थः–एकेक कुशिष्य गुरु बोल्या होय तेवारे वचमां बोले, एकेक कुशिष्य गुरुना बोल्या मांही दूषण प्रकाशे, एकेक कुशिष्य आचार्यना शिखामण रुप वचनने वारंवार विमिन करे ॥ ११ ॥

अर्थः–ते कुशिष्य गुरुना वचन जेम विपरित करे तेम कहे छे। गुरु कुशिष्यने असनादिकने अर्थे मोकले तेवारे कुशिष्य एम कहे न० न सा० ते श्राविका म० मुजने वि०जाणे न०नहि ओळखे नहि य० वळी । सा०ते श्राविका म० मुजने दा० देशे नहि असनादिक ॥ नि० हणां ते श्राविका घरथी गइ हो० हुस्ये म०एम हुं जाणुं छुं ॥ सा० साधु भ० मुजथकी अनेरो इहां पणी कार्ये बीजो कोइ नथी शुं हुंजहुं त्य० एवुं व० बोले ॥ १२ ॥

सिद्धगमनरुप ते यथातथ्य सिद्धगति ते, हे शिष्य ! तिर्थंकरे कहेल छे, ते तुं सांभळ, एक तो मोक्षनो मार्ग ते चार प्रकार करी सहित छे अने बीजी मोक्षनी गति तेना ज्ञान ने दर्शन ए बे लक्षण छे ॥ १ ॥

अर्थः—ना० यथातथ्य पदार्थनुं जाणपणुं ते ज्ञान च० वळी दं० यथातथ्य पदार्थनुं सदहवुं । ते दर्शन समकित । चे० वली च० विरतीनुं आचरवुं ते चारित्र जेणे नवा कर्म नावे च० वळी त० तप बार भेदे तप तापेकरी पाछल्या कर्म बळे ते तप त० तेमहिज ए० ए ४ बोलरुप म० मोक्ष मार्ग त्ति० एम प० परुप्यो । जि० तिर्थंकरे व० प्रधान दं० ज्ञान दर्शनने धणीए परुप्यो इति गाथार्थ ॥ २ ॥

अध्य

॥ २८ ॥

॥३०१॥

मूलः—नाणं च दंसणं चेव चरित्तं च तवो तहा ।
एस मग्गो त्ति पन्नत्तो जिणेहिं वरदंसिहिं ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः—मोक्षमार्गनां चार कारण कहे छे, १ ज्ञान ते यथातथ्य पदार्थनुं जाणवुं, २ दर्शन (समकीत) ते यथातथ्य पदार्थनुं यथातथ्यपणे सदहवुं, ३ चारित्र ते व्रतनुं आचरवुं, के जेणे करी नवां कर्म न आवे, ४ तप ते बार भेदरुप के जेणे करी पाछलां कर्म खपावे, ए चार कारणरुप मोक्षनो मार्ग ते प्रधान ज्ञानदर्शनना धरणहार एवा तिर्थंकरे कह्यो छे ॥ २ ॥

अर्थः—ना० ज्ञान १ च० वळी दं० दर्शन २ चे० निश्चे च० चारित्र च० वळी त० तप त० तेम । ए० ए ४ बोल रुप म० मार्गने अ० पाम्या थका । जी० जीव ग० पहुचे जाय सो० सदगति प्रते ॥ ३ ॥

॥३०२॥

मूलः—नाणं च दंसणं चेव चरित्तं च तवो तहा ।

हेतुए का० कारण वरी साहमो बोले य० वली ॥ १० ॥

मूलः–भिक्खालसिए एगे एगे ओमाणभीरुए ।
थद्धे एगं च अणुसासम्मी हेऊहिं कारणेहि य ॥ १० ॥

गाथा १० भावार्थः–एकेक कुशिष्य भिक्षाने विषे आळसवंत होय, एकेक कुशिष्य अहंकारवंत थको भिक्षाए भमतां अपमानथी बीहे, एकेक कुशिष्यने शिक्षामण देतां थका हेतुने कारणे करी सामुं बोले ॥ १० ॥

अर्थः–सो० ते कुशिष्य वि०वली अ० गुरु बोलता होय तेवारे वचे भा० कांपे बोल्ये दो० गुरुना बोल्यामांही खोट काढे दोषज । प० कहे आ० आचार्यने तु० ते व० वचन शीखामणरूप । प० विपरित करे अ०वारंवार ॥११॥

मूलः–सो वि अन्तरभासिल्लो दोसमेव पकुव्वई ।
आयरियाणं तु वयणं पडिकूलेइ अभिक्खणं ॥ ११ ॥

गाथा ११ भावार्थः–एकेक कुशिष्य गुरु बोलता होय तेवारे वचमां बोले, एकेक कुशिष्य गुरुना बोल्या मांही दुषण प्रकाशे, एकेक कुशिष्य आचार्यनां शिक्षामण रुप वचनने वारंवार विपरित करे ॥ ११ ॥

अर्थः–ते कुशिष्य गुरुना वचन जेम विपरित करे तेम कहे छे। गुरु कुशिष्यने असनादिकने अर्थे मोकले तेवारे कुशिष्य एम कहे न० न सा० ते श्राविका म० मुजने वि०जाणे न०नहि ओलखे नहि य० वली । सा०ते श्राविका म० मुजने दा० देशे नहि असनादिक ॥ नि० इमणां ते श्राविका घरथी गइ हो० हुस्ये म०एम हुं जाणुं छुं ॥ सा० साधु अ० मुजथकी अनेरो इहां एणी कार्ये बीजो कोइ नथी शुं हुंजछुं त्य० एवुं व० बोले ॥ १२ ॥

गाथा ५ भावार्थः-ए पांच प्रकारनुं ज्ञान ते छ द्रव्यने विषे, छ द्रव्यना गुणने विषे, छ द्रव्य अने छ द्रव्यना गुणने पर्यायने विषे जाणवुं ते सर्व पदार्थनुं जाणपणुं ते केवळज्ञानीए कहेल छे ॥ ५ ॥

हवे ज्ञान दर्शन चारित्र ने तप ए चारने विषे तथा जीवादिक पदार्थ जे चिंतवीये तेने विषे शास्त्र नये करी निक्षेप व्यवहारादिक पचीस बोल विचारीए. हवे ते पचीस बोल कहेछे, (१) निश्चय, (२) व्यवहार, (३) द्रव्य, (४) भाव, (५) सामान्य, (६) विशेष, (७) नाम निक्षेप, (८) स्थापना निक्षेप, (९) द्रव्य निक्षेप (१०) भाव निक्षेप, (११) द्रव्यथी, (१२) क्षेत्रथी, (१३) कालथी, (१४) भावथी, (१५) प्रत्यक्ष प्रमाण, (१६) अनुमान प्रमाण, (१७) ओपम्य प्रमाण, (१८) आगम प्रमाण, (१९) नेगमनय, (२०) संग्रहनय (२१) व्यवहारनय, (२२) ऋजुसूत्र नय, (२३) शब्दनय, (२४) समभीरुढनय, (२५) एवंभूतनय ए २५ बोल नाम मात्र कह्या.

हवे पचीस बोलनो विस्तार कहे छेः-हवे निश्चय व्यवहारनुं लक्षण कहे छे, जे पदार्थ चिंतवीये तेने विषे ते पदार्थना जे अभ्यंतर गुण अभ्यंतर रुप होय तेणे करी निश्चय नय कहीए, (उदाहरण) जेम जीव चैतन्यपंत अने ते गुण रुप छतां तदाश्रित बाह्य जे प्रवर्तन, ते शुद्ध भावव्यवहार कहीये, यथा यथा एकेंद्रिय शरीरादि वर्धन इत्यादि वचनात, २ अभ्यंतर गुण रुप विना जे बाह्य प्रवर्तन ते अशुद्ध व्यवहारनय कहीये (उदाहरण) जेम मिथ्या दृष्टि अभव्यनिन्हवादिक, समकित विना चारित्र इर्यादिक सुपति प्रवर्तन ते अशुद्ध व्यवहार कहीये, ए प्रमाणे द्रव्यव्यवहार सर्व पदार्थने विषे जाणवुं. हवे ते निश्चयने व्यवहार, ज्ञान, दर्शन, चारित्र ने तप उपर उतारे छे, १ निश्चय ज्ञान ते समकित सहित अंतरंग जीवना प्रदेशने विषे यथातथ्य श्रीवादिक पदार्थनुं जाणपणुं ते निश्चय ज्ञान जाणवुं अने ते गुण सहित यथातथ्य पदार्थनुं प्रकाशवुं ते निश्चय

पेरे थानना पक्षा अनंत तेमज रीसने वसे करी भमूह (कपाळनी भमर) उंची करे अने मोढुं चढावे ॥ १३ ॥

अर्थः-वा० ते कुशिष्यने शास्त्र भणाव्या सं० सारे मने करी प्रथा दीक्षा दिधी हुती चे० पदपुरणे ॥ भ० भातपाणीए करी पो० पोषा हता ते । जा० उपनी प० पांख तेवारे ज० जेम हं० हंस ॥ प० जाय आपणी इच्छाए दि० दिशो दि० दिश सर्व दीस जाय तेम कुशिष्य पण जाय ॥ १४ ॥

मूलः—वाइया संगहिया चेव भत्तपाणेण पोसिया ।
जायपक्खा जहा हंसा पक्कमन्ति दिसो दिसिं ॥ १४ ॥

गाथा १४ भावार्थः-ते कुशिष्यने शास्त्र भणाव्यां, सारे मने करी प्रथा दीक्षा दीधी, आहार पाणीए करी पोष्या हता, ते जेम हंसने पांख उपन्याथी आपणी इच्छाए सर्व दिशी विदीशीने विषे जाय तेम कुशिष्य पण गुरुने छोडीने स्वइच्छाए रमे ॥ १४ ॥

अर्थः-अ० हवे सा० सारथीनीपरे गणाचार्य चिंति० चिंतवे छे । ख० गलीया बलदने खेडवानी परे त० अप खेद पाम्युं कि० किम्यु करयुं म० मुजने दु० दुष्ट सी० शीष्य अ० आत्मा मे० माहरो अव० सीदाय छे ते भणी ए कुशिष्यने योगीवाहीने हुं विचरीश ते मुजने श्रेय छे ॥ १५ ॥

मूलः—अह सारही विचिन्तेइ खलुंकेहिं समागओ ।
किं मज्झ दुट्ठसीसेहिं अप्पा मे अवसीयई ॥ १५ ॥

गाथा १५ भावार्थः-हवे गलीया बलदने खेडवाथी श्रम (खेद) पाम्यो थको जेम सारथी चिंतवे

कित, ४ वेदक समकित, ५ क्षायक समकित, ए प्रमाणे नाम खाळीने कहीए, ते विशेष दर्शन कहीये, ३ समुचय चारित्र कहीए ते सामान्य चारित्र अने १ सामायक चारित्र, २ छेदोप स्थापनीय चारित्र, ३ परिहार विशुद्ध चारित्र, ४ सुक्षम संपराय चारित्र, ५ यथाक्ख्यात चारित्र, ए प्रमाणे नाम खाळीने कहीए ते विशेष चारित्र कहीए; ४ समुचय तप कहीये ते सामान्य तप, अने बार प्रकारना तपनां जुदां जुदां नाम खाळीने कहीए ते विशेष तप कहीये, ए ६ बोल थया.

हवे चार निक्षेपा कहे छेः—कोइ जीव तथा अजीवनुं नाम दिधुं ते नाम ज्ञान, नाम दर्शन, नाम चारित्र ने नाम तप जाणवो, ए प्रथम नाम निक्षेपो जाणवो अने ए चारनी स्थापना करवी ते स्थापना ज्ञान, स्थापना दर्शन, स्थापना चारित्र ने स्थापना तप जाणवो, ए बीजो स्थापना निक्षेपो जाणवो, उपयोग शुन्य ते द्रव्यज्ञान, द्रव्य दर्शन, द्रव्य चारित्र ने द्रव्य तप जाणवो तथा ए ज्ञानादिक चार जे शरीरने आश्रित जीवमांही हता, ते जीव ते शरिर थकी चव्यो, ते निर्जिव शरीर पडयुं रह्युं ते शरीर ते द्रव्यज्ञान, द्रव्यदर्शन, द्रव्य चारित्र ने द्रव्यतप कहीये, ए द्रव्य त्रीजो निक्षेपो जाणवो, अने ए ज्ञानादिक चारने विषे उपयोग सहित जीव प्रवर्ते ते भाव ज्ञान निक्षेपो, भाव दर्शन निक्षेपो, भाव चारित्र निक्षेपो, ने भाव तप निक्षेपो जाणवो, एम १० बोल थया.

हवे द्रव्य, क्षेत्र, काळ ने भाव ए चार बोल कहे छेः—पट् द्रव्यनुं यथातथ्य स्वरुपनुं जाणपणुं तथा तेवुंज तेनुं प्रकाशवुं ते द्रव्यथी ज्ञान, सर्व क्षेत्रने विषे यथातथ्यपणुं ते क्षेत्रथी ज्ञान कहीए, सर्व काळने विषे यथातथ्यनुं जाणपणुं तथा साइय अपज वसीत (जेनी आदी छे, पण अंत नथी ते सिद्ध ज्ञान ते काळथी ज्ञान कहीए. अरुपी, अरुपे, अरुवे, अस्पर्शे अथवा सर्व भाव ते सर्व पर्यवरुपी अरुपी पर्यवनुं रहस्य मांहीला

गाथा.१७ भावार्थ-सुकोमळ विनित अहंकार रहित, सौम्यता, चारित्रना ने मार्दवना (आठ मद रहितपणाना) गुणे करी सहित अने जेनो आत्मा शीतळीभूतने गंभीर ने भली समाधीवंत थका महंत आत्माना धणी गणाचार्य पृथ्वीने विषे विचरता हवा. एम सुधर्मस्वामी पोताना जंबु नामना शिष्यने कहेता हवा के हे जंबू ? जेम में श्री महावीर देवस्वामीनी समीपे सांभळ्युं हतुं तेम में तुज प्रत्ये कह्युं ॥१७॥ इतिश्री उत्तराध्ययन सूत्रना २७ मां अध्ययननो भावार्थ संपूर्ण ॥२७॥ २७ मां अध्ययनने विषे अविनयपणुं छांडवुं कहेल छे, तो ते अविनय छांडे तो तेने मोक्ष होय ते माटे २८ मां अध्ययनने विषे मोक्षमार्ग कहे छे.

अर्थ-मोक्ष० मोक्ष ते आठ कर्मनुं खपावबुं तथा सकल कर्मथी मुकावबो ते मोक्ष कहिये। म० तेहनो जे मार्ग ज्ञानादिक ४ तेणे करी ग० गति जे सिद्ध गमनरूप ते कहेता मते त० यथातथ्य सिद्धगति मते। सु० सांभळी तुं सिद्धगति केहवी छे। जि० जिन तिर्थंकर भा० भाखीछे कहिछे वली सिद्धगती केहवी छे च० चार का० कारणे सं० संयुक्त छे॥ लक्षण० एटले सिद्धगति मांहि एक ज्ञान, बीजो दर्शन छे पण चारित्र तप परं नथी बीजो ए ज्ञान अने दर्शन (समकीत) छे। ते चारित्र तपनुं लक्षणछे॥ ज्ञान अने दर्शन विना चारित्र अने तप नहि इत्यर्थ॥ मोक्षना च्यार कारण कहेछे ना० ज्ञान अने द० दर्शन ज्ञान दर्शननना धणीए परुप्यो इति गाथा अर्थ॥१॥

मूलः-मोक्खमग्गगइं तच्चं सुणेह जिणभासियं।
चउकारणसंजुत्तं नाणदंसणलक्खणं॥ १॥

गाथा १ भावार्थः-मोक्ष ने सकळ कर्मथी मुक्त थवुं तेनो जे मार्ग ते ज्ञानादिक तेणे करी गति जे

ज्ञानने विषे आगम प्रमाण जाणवुं, ए सूर्यनुं उदाहरण कह्युं. ते सिवाय बीजा पण चार प्रमाण नीपजे तेम करीए ए ज्ञाननां चार प्रमाण कह्यां.

हवे दर्शननां चार प्रमाण कहे छेः—जे प्रमाणे ज्ञाननां चार प्रमाण कहेल छे तेज प्रमाणे दर्शननां चार प्रमाण जाणवां पण एटलो फेर छे के ज्यां ज्ञानना प्रमाणमां जाणवुं लखेल छे त्यां दर्शननां चार प्रमाणमां सर्द्दहवुं केहवुं, ए चार प्रमाण दर्शनने विषे सर्द्दहवा रुप छे, ए दर्शनना चार प्रमाण कह्यां.

हवे चारित्र आश्री चार प्रमाण कहे छेः—१ समकित सहित शुद्ध इर्याादिक पांच समितियादिक ध्यानने विषे प्रत्यक्ष देखवुं ते चारित्रने विषे प्रत्यक्ष प्रमाण जाणवुं, २ अनुन्तर विमाने जे देवता उत्पन्न थयेल छे तेने अनुमाने जाणीये के ए जीव पुर्वे निश्चे चारित्रवंत हता अने चौद पुर्व मध्ये सज्झाय करता भींतने आंतरे तथा राात्रीए सांभळ्युं, तेमज साधु विना पुर्व भणी शके नहि, तथा साधु लिंगे (वेशे) भींतना अंतरने विषे यथाकृत जीन मार्ग परुपतो सांभळीने एकाएक चारित्रवंत दिशे छे ए चारित्रनुं अनुमान प्रमाण जाणवुं, ३ चारित्रवंतने मेरुनी, सूर्यनी, चंद्रनी, पृथ्वीनी, वळदनी, सिंहनी, हाथीनी इत्यादिकना उपमा दीधी ते उपमाए करी चारित्रनुं उपमा प्रमाण जाणवुं. सूयगडांग प्रमुखने विषे साधु इर्यो सहित चाले, क्षेमा करे, पांच इंद्रियो जीते इत्यादिक साधुना गुण वर्णव्या, ते गुणवंत चारित्रवंत होय, ए चारित्रने विषे आगम प्रमाण जाणवुं, ए चारित्र आश्री चार प्रमाण जाणवां.

हवे तप आश्री चार प्रमाण कहेछेः—साक्षात अणसणादिक तप करतो दीठो ते तपनुं प्रत्यक्ष प्रमाण जाणवुं. पण अणगारनी गेरे दुर्बळ शरीरना अंगोपांग देखीने अनुमान (अटकळ) करवुं जे ए तपना

एयमग्गमणुप्पत्ता जीवा गच्छन्ति सोग्गइं ॥ ३ ॥

गाथा १ भावार्थः—ज्ञान, दर्शन, चारित्र ने तप, ए चार मार्गने पाम्या थका जीव सद्गतिए जाय ॥३॥

अर्थः—त० ते च्यार बोल माहिं प० पांच प्रकारनुं ना० ज्ञान गु० श्रुतज्ञान १ श्रुतज्ञानना १४ भेद आ० मतिज्ञान २। इंद्रीओना संबंध माटे अथवा श्रुतज्ञान उपगारी माटे। मयम श्रुतज्ञान अत्र कर्युं पण पहेलो मतिज्ञान पछे श्रुतज्ञान ते मतिज्ञानना अठावीस भेद ओ० अवधि ज्ञान तु० त्रीजुं कर्युं। म० मनपर्यव ज्ञान चोथुं कर्युं ॥ च० वली के० केवल ज्ञान पांचमुं ॥ ४ ॥

मूलः—तत्थ पंचविहं नाणं सुयं आभिनिबोहियं ।
ओहिनाणं तु तइयं मणनाणं च केवलं ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थः—ए चार बोलमांही मयम जे ज्ञान ते पांच प्रकारनुं छे, १ मतिज्ञान २८ भेदे, श्रुतज्ञान १४ भेदे, ३ अवधिज्ञान ६ भेदे, मनपर्यवज्ञान २ भेदे अने पांचमुं केवळज्ञान १ भेदे ॥४॥

अर्थः—ए० ए पं० पांच प्रकारनुं ना० ज्ञान अने अण बोलनुं जाणपणुं ते ए ३ ॥ द्र० ए छ द्रव्यनुं जाणपणुं १। प० वली गु० छ द्रव्यना गुणनुं जाणपणुं य० वली। प० छ द्रव्यना गुणना पर्यवनुं य० पुरणे स० सर्व पदार्थनुं। ना० ज्ञाननो जाणपणो मा० केवलज्ञानीए दं० देख्यो अने वली कह्यो ॥ ५ ॥

मूलः—एयं पञ्चविहं नाणं दव्वाण य गुणाण य ।
पज्जवाण य सव्वेसिं नाणं नाणीहि देसियं ॥ ५ ॥

॥ २८ ॥

॥ ३०७ ॥

समकित दर्शन जाणवुं अने संकादिक पांच दोष संशयादिक रहित थको निःशंकीय निर्कांक्षीयादिक आठ बोलने विषे प्रवर्ते ते समकित दर्शननो शुद्ध भाव व्यवहारनय कहीये. ३ समकित सहित अंतरंग बार अढार पापस्थानकना अव्रतनुं पचखवुं ते निश्चय चारित्र कहीये अने ते सहित पांच महाव्रत, पांच समिति, त्रण गुप्ती प्रमुखने विषे प्रवर्तवुं ते चारित्रनो शुद्ध भाव व्यवहार नय जाणवो, ४ समकित सहित एवा चारित्रना रमने विषे विर्य सहित द्रव्य आत्मानुं तल्लीनपणुं ते चारित्र आश्रित सदा सर्वदा निर्जरा नय कहीए अने तेणे करीने सहित बार प्रकारे अणसणादिक तपने विषे एकांत निर्जराने अर्थे प्रवर्तवुं ते शुद्ध भाव व्यवहार तप जाणवो, ए प्रमाणे ज्ञान दर्शन चारित्र ने तपनो शुद्ध भाव व्यवहार ते मुक्तिनुं कारण हेतु छे अने ए चारेनो अशुद्ध द्रव्यव्यवहार ते मुक्तिनुं कारण नहि, अर्थात ते संसारनो हेतु जाणवो. ए पचीस बोल पहीया निश्चयने व्यवहार ए बे बोल थया (२)

हवे त्रीजुं द्रव्य ने चोथो भाव ए बे बोलनुं स्वरुप कहे छेः-समकित विना, शुद्ध श्रद्धा विना, मिथ्यात्वीनुं जे ज्ञान ते द्रव्यदर्शन, तेनुं चारित्र ते द्रव्यचारित्र, तेनो तप ते द्रव्यतप जाणवा, अथवा महीं लोकादिकनी कीर्तिने अर्थे जे ज्ञान, दर्शन, चारित्र ने तप ते पण जाणवो अने जीनाज्ञा शुद्ध श्रध्यासहित एकांत निर्जराने अर्थे ते भावज्ञान, भावदर्शन, भाव चारित्र ने भावतप जाणवो, एम बे बोल थया.

हवे पांचमो सामान्य ने ६ ठो विशेष ए बे बोल कहे छेः-१ समुचयज्ञान ते सामान्यज्ञान अने मतिज्ञान, २ श्रुतज्ञान, ३ अवधिज्ञान, ४ मनपर्यय ज्ञान, ५ केवळज्ञान ए प्रमाणे नाम खोळीने कहीये ते विशेष ज्ञान, २ समुचय दर्शन कहीये, ते सामान्य दर्शन, अने १ क्षयोप समकित, २ सास्वादान समकित, ३ उपशम सम-

नैगमनो व्यवहार नयने (उदाहरण) जेम कोइने कहुं के तारुं घर क्यां, ते उत्तरमां कहे मारुं घर लोकमां छे, अथवा कहुं क्षेत्रमां छे, अथवा तिर्यक् वस्तु तिर्यक् पण वर्तमान वस्तु वर्तमान कहेवुं. २.

३ व्यवहार नयवाळो सामान्य अने विशेषने माने, वर्तमान काळनी वात माने, निक्षेपा चारे माने, जेम कोइ व्यवहारमां कुशले निपुण कहे पण जेमां पांचे निक्षेपा लागे, जेम कोयलने काळी कहे पण निक्षेपामां पांचे वर्ण लागे छे, वस्त्रने धोळो कहे पण पांचे वर्ण लागेछे इत्यादि. ३.

४ ऋजुसूत्रनयवाळो सामान्य न माने अने फक्त विशेषनेज माने, वर्तमानकाळनी वात माने, चार निक्षेपामां एक भाव निक्षेप माने, एकत्व वस्तु आपणा निर्धारपणाथी आकाश कुसुमवत् माने, जेम कोइए कहुं के गो वर्ष पेट ना दुहि पद एवी इत्यादिकने न माने. ४.

५ शब्दनयवाळो सामान्य न माने, विशेषे नमाने, वर्तमानकाळनी वात माने. निक्षेपे एक भाव माने, सरखा सरखा एकार्थक शब्दो (उदाहरण) जेम शक्रेंद्र, पुरंदर, देवेंद्र, शचीपति ए सर्वने एकज माने, लिंगमां भेद नमाने ५.

६ समभिरूढनयवाळो सरखा सरखा कहेलो जुदो जुदो अर्थ ग्रहण करे, लिंगमां भेद माने, जेम शक्र सिंहासने बेठा थका ऋद्धीनी लालचि देवता मोटे आडंबरावे ते वखते शक्रेंद्र माने, वैरि देवतानुं दळ तिरस्कार ते वखते पुरंदर माने, देवताओ सभामां बेठा थका न्याय करता होय ते वखते देवेंद्र माने, देवांगनाओनी सभामां बेठा थका रमण करे ते वखते शचीपति माने इत्यादिक ६.

७ एवंभूतनयवाळो ते शब्दनो ज्यारे ते क्रियानो अनुभव करतो होय त्यारे ते शब्दने, जेम शक्रेंद्र, पुरंदर, देवेंद्र, शचीपति ए सर्व ते ते क्रिया करतां होय ते वखते ते शब्दने माने. ७.

॥ २८ ॥

परमार्थनुं पुछवुं, तेमज परमार्थनुं जाणपणुं, ते भावथी ज्ञान कहीये, २ ते षट् द्रव्यनुं यथातथ्यनुं सर्द्दवुं ते द्रव्यथी दर्शन कहीये, सर्व क्षेत्रने विषे यथातथ्य सर्द्दवुं ते क्षेत्रथी दर्शन कहीये, सर्व काळने विषे साद्य अपर्यवसीत, तथा साद्य सपज्ज वसीत (जेनी आदीने अंत छे ते पदार्थ) सर्द्दवुं ते काळथी दर्शन कहीए, भवणे, भगंये, अरसे, अरवर्णे इत्यादिक तथा सर्व भाव पर्यवनुं सर्द्दवुं ते भावथी दर्शन कहीए, ३ त्रस स्थावर जीवना आरंभथी तथा सर्व आश्रवथी निवर्तवुं ते चारित्र कहीए, सर्व क्षेत्रने विषे आरंभ आश्रवथी निवर्तवुं ते क्षेत्रथी चारित्र कहीए, अमुक काळे जाव जीव सुधी आरंभ आश्रवथी निवर्तवुं ते काळथी चारित्र कहीए, सर्व पदार्थने विषे मूर्छा भाव रहीतपणे अरणी भवर्णे इत्यादिक ते भावथी चारित्र कहीए, ४ समकित सहित बार प्रकारना तपनुं करवुं ते द्रव्यथी तप कहीए, सर्व क्षेत्रमें विषे तप करवो ते क्षेत्रथी तप कहीए, यथोचित्त काळे तप करवो ते काळथी तप कहीये, एकांत निर्जराने अर्थे तप करवो तथा अरुप भवणे इत्यादिक ते भावथी तप कहीये, एम १४ बोल थया.

हवे चार प्रमाण कहे छे:-ज्ञान छे ते द्रव्याश्रीत छे, एटले द्रव्यादिकनुं जाणपणुं यथा, एयं पंचविहं नाणं दव्वाण य गुणाण य इति वचनात ते माटे एक कांइक आश्रिने प्रत्यक्षादिक प्रमाण चिंतवीये, जेम सूर्य उग्यो ने तेनुं बिंब दीठुं जाण्युं ते उदयपणाने ए प्रत्यक्ष ज्ञान प्रमाण जाणवुं, २ वादळ मध्ये सूर्य उग्यो पण प्रत्यक्ष बिंब जाण्युं नहि तेमज दीठुं नहि, पण सूर्यनी प्रभाने अनुमाने सूर्य उग्यो जाण्यो, वळी सूर्यनो आताप देखीने सूर्य उग्यो जाण्यो ते ज्ञानने विषे अनुमान प्रमाण जाणवुं, ज्ञान सूर्य सरखुं छे तथा राता हींगळो जेवो सूर्य छे, ए ज्ञानने विषे उपमा प्रमाण जाणवुं. सूर्यनुं विमान केवुं छे तथा सूर्यनी ऋधीनुं वर्णन जाणीए, ते

३ हवे त्रीजुं पाल्लीनुं दृष्टांत कहे छे. कोइ सुतारने पाली करवानुं मन थयुं, ते वेरथी कुहाडो लइ वनमां गयो तेने कोइए पुछ्युं के तुं शुं लेवा जाय छे? त्यारे कहे के हुं पाली लेवा जाउंछुं, ज्यारे वृक्ष कापवा लाग्यो त्यारे पुछतां पाली कापुंछुं कयुं, वनथी घरे लावतां पुछतां कयुं के पाली लाव्यो छुं, घडीने तैयार करी त्यारे पुछ्युं के तें शुं घडयुं? त्यारे कहे के पाली घडी! अहीं सुधी निगम व्यवहार नयवाळानो मत जाणवो, त्यारे संग्रह नयवाळो कहे के एने पाली न कहेवाय पण पाली तो ज्यारे धान्य भराशे त्यारे कहेवाशे, त्यारे ऋजुसूत्र नयवाळो कहे के ज्यारे मन ठेकाणे राखी एक वे आदी संख्या गणाशे त्यारे पाली कहेवाशे, त्यारे शब्दादीक उपरनी त्रण नयवाळो कहे के ए गणत्रीनो उपयोग तेनेज पाली कहेवाय, ए प्रमाणे दृष्टांते करी संक्षेप मात्र सात नयनुं स्वरुप कयुं.

॥ २८ ॥ अध्य०

हवे चार निक्षेपानो अधिकार कहे छेः—चार निक्षेपानां नाम, १ नाम निक्षेपो, २ स्थापना निक्षेपो, ३ द्रव्य निक्षेपो, ४ भाव निक्षेपो एम ४ निक्षेप एटले आक्षेप करवो ते एकेक वस्तु उपर चार चार निक्षेपा उतारवा.

१ नाम निक्षेपाना त्रण भेद, १ यथातथ्य नाम, २ अयथातथ्य नाम, ३ अर्थ शुन्य नाम. यथातथ्य नाम ते जेम जीवनुं नाम जीव, हंस, चैतन्य, आत्मा इत्यादिक यथातथ्य नाम, २ अयथातथ्य नाम ते हीरालाल, माणेकलाल, मणिलाल मोतीलाल वगेरे, ३ अर्थ शुन्य नाम ते जेम खांसी, छींक, वगासु, उधरस, ओडकार, भोगणपनास जाननां वाजींत्र, पडयम प्रमुखना शब्द इत्यादिकने अर्थ शुन्य नाम कहीए.

२ स्थापना निक्षेपाना वे भेद १ सत्यभाव स्थापना, २ असत्यभाव स्थापना, १ सत्यभाव स्थापना ते जेवं नाम तेवोज आकार ते जेम चार आंखो मुखिने चार कान कोसाना इत्यादि [illegible]

प्रकार कहेवाय छे, ए लक्षण रूप अनुमान प्रमाण जाणवुं. जेम अग्नि काष्टने पाळे, तेम तप ते कर्म रूप काष्टने पाळे, ए हेतु रूपे उपमा प्रमाण जाणवुं. कनकावली प्रमुख, अनेक तपना गुण, महीमा, कीर्ति इत्यादिक आगमे रूपे वर्णव्य, ए लक्षणे रूपे आगम प्रमाण जाणवुं, ए चार प्रमाण, छद्मस्थ आश्री कहेलछे अने केवलीनेतो ज्ञानादिक सर्व पदार्थ केवलज्ञाने प्रत्यक्ष प्रमाणछे, ए चार प्रमाण कर्या, एम १८ बोल थया.

हवे ज्ञान तप कहेछेः-ज्ञान छे ते मुक्तिनुं कारणछे ते ज्ञान, मति, श्रुत, अवधि, मनपर्यव ने केवळ एवं पांच प्रकारनुंछे, ए पांच ज्ञान तेमां प्रत्यक्षने परोक्ष ए बे प्रकारेछे, तेमां प्रत्यक्षना बे भेद, इंद्रिय प्रत्यक्ष अने नोइंद्रिय प्रत्यक्ष. इंद्रिय प्रत्यक्ष पांच भेदे, ते पांचे इंद्रियोथी जाणवुं ते अने नोइंद्रिय प्रत्यक्ष त्रण भेदे, तेमां अ-वधिज्ञान, १ आनुगामी, २ आणानुगामी, ३ वर्द्धमाने, ४ हायमाने, ५ अनवस्थित, ६ अप्रतिपाति ए छ प्रकारे, मन पर्यव ने भेदे. ऋजुमती ने विपुलमती अने केवळ एक भेद जाणवुं, तेमां भव प्रत्यय ते अवधिवंतने होय अने क्षयोपशमीक ए बे भेदे, भव प्रत्यय ते नारकी देवताने होय अने क्षयोपशमीक मनुष्य अने तिर्यंचने होय, ए प्रत्यक्ष ज्ञानना भेद कह्या.

हवे परोक्ष ज्ञानना भेद कहेछेः-परोक्ष ज्ञानना बे भेद ते १ मतिज्ञान, २ श्रुतज्ञान, तेमां मतिज्ञानना बे भेद ते १ अश्रुत निश्रीत, २ श्रुत निश्रीत, तेमां अश्रुत निश्रीत मति ते औत्पातीया, विनिया, कर्मीया, पारिणामिकी ए चार प्रकारनी बुद्धि जाणवी अने श्रुत निश्रीत मति ते अग्रहादिक चार भेदे, तेमां अग्रहा ६, ईहा ६, अवाय ६, धारणा ६. एम २४ भेद ते इत्यादिक शेष भेदे सहित्यारे जाणवुं ते मतिज्ञाननो विषय जाणवो, हवे श्रुतज्ञानना चौद भेद, १ अक्षरश्रुत, २ अनक्षरश्रुत, ३ संज्ञीश्रुत, ४ असंज्ञीश्रुत, ५ सम्यक्‌श्रुत, ६ मिथ्यात्वश्रुत, ७ सादीश्रुत, ८ अनादिश्रुत, ९ गमवगीत श्रुत, १० अगमवगीत श्रुत, ११ संमीक

उग्ये स्नान करे, धोवे, देवसभामां जाय, इंद्रसभामां जाय, यक्षसभामां जाय तेने कुभावचनीय द्रव्यावस्यक कहीए. ३

४ भावनिक्षेपो ते जे जे वस्तुनो जे निजगुण तेने होय तेनुं नाम भावनिक्षेपो कहीए, जेम जीवनो निजगुण ते ज्ञानदर्शन चारित्र तपवियं उपयोग अने अजीवनो निजगुण ते वर्ण, गंध, रस स्पर्श, जेनो जे निजगुण छे ते तेनामां न होय तो ते भावनिक्षेपो शुन्य गणायछे, हवे भावनिक्षेपो आवस्यक उपर उतारेछे. भावआवस्यकना वे भेद ते १ आगमथी, २ नोआगमथी, तेमां १ आगम थकी तो शब्दादिकनो अर्थ उपयोग सहित करे, २ नोआगम थकीना त्रण भेद ते, १ लोकीक, २ लोकोतर, ३ कुभावचनी. १ लोकीक ते प्रभाते भारत सांभळे, रांध्याए रामायण सांभळे ते उपयोग सहित सांभळे तेने लोकीक भावावस्यक कहीए, २ लोकोतर भावावस्यक ते साधु साध्वी श्रावक श्राविका तदमने तदचिते तदभध्यसाए उभयकाळे प्रतिक्रमण करे तेने लोकोतर भावावस्यक कहीए. ३ कुभावचनी भावावस्यक ते चकचीरीया, चर्मखंडा, पांडुरंगा, पासंडा स्नान करे, धोवे, दातण करे, ॐकार शब्द बोलीने भोजन करे तेने कुभावचनी भावावस्यक कहीए, इति भावनिक्षेपो संपुर्ण. ए प्रमाणे सर्वे वस्तुने विषे चार चार निक्षेपा जे जेने जेवा प्रकारना लागु पडता होय तेवा त्यां उतारवा.

हवे निश्चेने व्यवहार कहे छेः—निश्चे ने व्यवहार तेमां निश्चे ते त्रिकाळ एक अवस्थाने धारण करे, व्यवहार ते जेने पळटन धर्म ते उत्पादव्यय तेनी व्यक्तपता तेने व्यवहार कहीए, जेम सुद्धो देखनामां मिलो छे ने व्यवहारमां पण मिलो कहेवाय छे, मिलो कहेवो ते व्यवहार अने निश्चेमां तो पांचे वर्ण लागे एम कोयल वगला वगेरेनां दृष्टांत जाणवां, ए प्रमाणे सर्वमां समजवुं.

हवे द्रव्यने भाव कहे छेः—द्रव्यनेभाव, द्रव्ये जीवसास्वतो छे अने भावे जीव असास्वतो छे, कोइ म-

हवे पांचमो शब्दनय, छठो समभीरूढीनय ने सातमो एवंभूतनय. ए त्रण नयवाळो समकित दृष्टिनेज ज्ञानी कहे, बाकी नाणं अन्दे आठ साकार छे, ए पांचमो, छठो, ने सातमो नय जाणवो. प्रथमनो त्रण नय वाळो नाम, स्थापना, द्रव्य ने परमार्थ विना ज्ञान कहे अने ऋजुसूत्रनय ने द्रव्यज्ञाननय निर्थक जाणे पण कहे अने उपरना त्रण नय ने नाम, स्थापना, द्रव्य निर्थक माटे ज्ञान शब्द मांही आणे नहि अने जे जे समकित सहित ज्ञान तेनेज ज्ञान कहे आवश्यकवत इति ज्ञान विषे नेगमादिक सात नय जाणवा. ए प्रमाणे दर्शनने विषे, चारित्रने विषे, तपने विषे सात नय जाणवा, एम सर्व मळीने २९ बोल थया.

पुर्वोक्त पचीस बोल अने ते सिवाय बीजा पंदर बोल कहे छे, १ अभिय, २ आधार, ३ गीणता, ४ मुक्ता, ५ आविर्भाव, ६ तिरोभाव, ७ यथावाद, ८ विधिवाद, ९ चरितानुवाद, १० हेय, ११ ज्ञेय, १२ उपादेय, १३ निमित्तकारण, १४ उपादानकारण, १५ मार्ग, एम १५.

हवे १५ मो बोल मार्गनो छे तेना दश भेदः—१ अपवादमार्ग, २ उत्सर्गमार्ग, ३ निश्चयमार्ग, ४ व्यवहारमार्ग, ५ ज्ञानमार्ग, ६ क्रियामार्ग, ७ जीनकल्पीमार्ग, ८ स्थीवर कल्पीमार्ग, ९ जैनमार्ग, १० अन्यमार्ग, ए दश मार्ग मळीने एक बोल जाणवो, पुर्वोक्त पचीस अने ए पंदर भेळवतां कुल ४० बोल मोक्षमार्गना जाणवा.

पुर्वोक्त चाळीश बोल स्पष्ट समजवा सारु विस्तार पुर्वकहे छेः—सात नय तेमां प्रथम निगम नयनुं स्वरुप कहे छे. १ निगमनयवाळो सामायने माने, विशेषने माने, भुत भविष्य ने वर्तमान ए त्रण काळनी वात माने, चार निक्षेपा माने, निगम केतां नर्यो एगम, अनेक मान उन्मान प्रमाणे करीने वस्तुने माने ते निगमनय कहीए. १.

२ संग्रह नयवाळो सामान्य अने विशेषने माने, त्रणे काळनी वात माने, निक्षेपा चारे माने, संग्रह

प्रमाण करे १. २ सेसव्वं तेना पांच भेद, १ कज्जेणं, २ कारणेणं, ३ गुणेण, ४ आसरेणं, ५ अवयवएणं. कज्जेणं ते कार्ये करी कारणने पीछाणे, १ जेम मोरने कुकुवा अवाजथी जाणे, २ हस्तीने गुलगुलाट शब्दथी जाणे, ३ घोडाने हणहणाट शब्दथी जाणे, ४ रथने घणघणाट शब्दथी जाणे इत्यादिक घणा भेद जाणवा. १. २ कारणेणं, ते कारणथी कार्यने पीछाणे, जेम सुत्रनो तांणो जोइने पट्टनुं ज्ञान करे, माटीनो पींड जोइने घटनुं ज्ञान करे, ज्ञानदर्शने करी मोक्षनुं ज्ञान करे इत्यादिक घणा भेद जाणवा २. ३ गुणेणं ते पुष्पमां सुगंधनो गुण, सुवर्णमां स्नीग्धतानो गुण, दुधमां पुष्टिनो गुण इत्यादिक घणा भेद जाणवा. ३. ४ आसरेणं तेना पांच भेद, १ धुम्रने जोइने अग्नि कहे, २ वादलांने जोइने मेघ कहे, ३ बगलाने जोइने सरोवर कहे, ४ भली क्रिया जोइने सुकुल जाणे, ५ साधुने जोइने सत्यवंत शियळवंत जाणे इत्यादिक घणा भेद जाणवा. ४. ५ अवयवएणं तेना सतर भेद, ते १ कलकी जोइने कुकुडो जाणे, २ दंतुसळ जोइने हस्ती जाणे, ३ दोपद जोइने मनुष्य जाणे, ४ चतुष्पद जोइने पशु जाणे, ५ सींगडाथी पाडो जाणे, ६ केशराथी केशरि सिंह जाणे, ७ कंचुकीथी स्त्री जाणे, ८ चुडीये करीने महीला जाणे, ९ चम्मरे करीने चम्मरी गाय जाणे, १० एक खूरीएथी घोडो खर जाणे, ११ वे खुरीथी गाय जाणे, १२ घणा पगे करीने कानखजुरो जाणे, १३ दाढाए करीने सुवर जाणे, १४ नखे करीने वाघ जाणे, १५ पांखे करीने पंखी जाणे, १६ काव्ये करीने पंडीत जाणे, १७ सीये करीने रंधायुं धान्य जाणे, एम १७ बोल. २.

३ दीट्ठीसामन्नं तेना वे भेद ते एक रुपीयो जोइने घणा रुपीयाने जाणे, अने घणा रुपीयाने जोइने एक रुपीयो जाणे, एक सोरठ देशीने जोइने घणा सोरठीने जाणे अने घणा सोरठीने जोइने एक सोरठी

वस्तु माने न्यूनाधिकने माने नहि. ७.

हवे सात नय उपर त्रण दृष्टांत कहे छेः-१ वर्मीनुं, २ प्रदेशनुं, ३ पाल्लीनुं, हवे प्रथम वर्मीनुं दृष्टांत कहे छे. १ वस्तु ने सामान्य निगमनयवाळा प्रत्ये विशेष निगमनयवाळो पुछतो हवो के तुं क्यां वसेछे, तेवारे ते कहे के लोकमां, त्यारे पुछवुं के लोक तो उर्द्ध, अधो, छीछो त्रण छे तेमां क्यां वसे छे तेवारे कहे के छीछा लोकमां, त्यारे पुछवुं के छीछामां द्वीप समुद्र घणा छे तेमां क्यां छे तेवारे कहे के जंबूद्वीपमां छुं, त्यारे पुछवुं के जंबूद्वीपमां नव क्षेत्र छे तेमां क्यां वसे छे, तेवारे कहे के भरतक्षेत्रमां छुं, त्यारे पुछवुं के भरत तो उत्तर ने दक्षिण बे छे तेमां क्यां वसे छे, तेवारे कहे के दक्षिण भरतमां छुं, तेवारे पुछवुं के दक्षिण भरतमां देश घणाछे तेमां क्यां वस छे, तेवारे कहे के मध्य देशमां छुं, त्यारे पुछवुं के मध्य देशमां नगर घणां छे तेमां क्यां वसेछे, त्यारे कहे के पाटलीपुत्रमांछुं, त्यारे पुछवुं के तेमां पाडा (मोहोला) घणा तेमां क्यां वसेछे, त्यारे कहे के देवदत्तना पाडामांछुं, तेवारे पुछवुं के तेमां घर घणांछे तेमां क्यां वसेछे त्यारे कहे के मारा रहेवाना आवास (घर) मां वसुंछुं, एवी शुद्धी निगम व्यवहारनयवालानुं वचन जाणवुं, त्यारे संग्रहनयवालो कहे के रहेवानी जग्या घणीछे तेमां क्यां वसेछे, तेवारे कहे के हुंतो मारी शय्यामां वसुंछुं, त्यारे ऋजुसूत्रनयवालो कहे के शय्यामां तो जग्या घणीछे तेमां तुं क्यां वसे छे त्यारे कहे के आकाश प्रदेश अवगाढा त्यां हुं वसुंछुं त्यारे शब्दादिक त्रण उपरना नयवाला धोया के आकाश प्रदेश तो सौने अवगाढा अने अनंते पण अवगाढा, जीवे तो शुक्ष्मनिगोदियादिक सौने अवगाढा अने अनंत हाड चर्म रोमरायादिके अवगाढा तेथी तुं क्यां वसे छे तेवारे कहे के हुं तो मारा उपयोग आत्मामां वसुंछुं ए प्रथम वर्मीनुं दृष्टांत कर्युं १. २ बीजुं प्रदेशनुं दृष्टांत अन्य प्रकारथी जाणवुं.

हवे गौणताने मुक्ता कहे छेः–१ मुक्ता ने २ गौणता, मुक्तामां कोयल काळी अने गौणतामां पांचे रंग छे, एमज मुक्तामां सुडो निलो ने गौणतामां पांचे रंग छे इत्यादि सर्वमां जाणवुं.

हवे आविर्भावने तिरोभाव कहे छेः–१ आविर्भाव ते नजीक, २ तिरोभाव ते दुर. जेम दुध मांही घी दुर ने दहीमां नजीक अने दहीमां घी दुर ने माखणमां नजीक इत्यादिक सर्वमां समजवुं.

हवे त्रण वाद कहे छेः–१ यथावाद, २ विधीवाद, ३ चरितानुवाद. यथावाद ते जे जे पदार्थ जेवे स्वरुपे होय तेवे स्वरुपे यथार्थ कहेवुं ते, विधीवाद ते जाणवा छांडवाने आदरवा योग्य वस्तुनो आदेश करवा ते, चरितानुंवाद ते कोइए जे कृत्य करेल होय ते कहीजवुं ते इत्यादिक सर्वमां जाणवुं.

हवे हेयज्ञेयने उपादेय कहे छेः–१ हेय, २ ज्ञेय, ३ उपादेय. हेय ते छांडवा योग्य वस्तु, ज्ञेय ते जाणवायोग्य वस्तु, उपादेय ते आदरवा योग्य वस्तु ए त्रणे सर्वपर उतारवा.

हवे उपादानने निमित्त कारण कहे छेः–कारण बे, १ उपादान कारण ने २ निमित्त कारण. उपादान शिष्य ने निमित्त गुरु मळे तो शिष्यनुं कार्य थाय, उपादान मातानुं ने निमित्त पितानुं मळे त्यारे पुत्र थाय. उपादान दुधने निमित्त छास मळवाथी दहीं थाय इत्यादि सर्वमां जाणवुं.

पुर्वे दश मार्गनां नाम लखेलां छे ते प्रमाणे दशे प्रकारना मार्गनो एक बोल छे. कुल मोक्षमार्गना चालीस बोलनो संक्षेपे विस्तार कहेलो छे ते प्रमाणे ज्ञानदर्शन चारित्र तपने विषे उपयोग राखीने उतारवा. इतिश्री मोक्षमार्गना चालीस बोल संपुर्णम्

अर्थः–हवे द्रव्यगुण पर्याय ने कोने कहिये । गु० चलणादिक छ गुण आ० आश्रय आधार भाजन

ने जेनुं नाम तेवो आकार न होय ते जेम कोइ पाषाण उपर तेल चढावीने कहे के ए भेरुजी छे अथवा पांच फांकरा भेगा करीने कहे के ए शीतळा माता छे इत्यादि असत्यभाव स्थापना. वळी स्थापनाना दश भेद ते १ सद्भावस्थापना, २ असद्भावस्थापना, ३ स्थापनास्थापना, ४ पोतस्थापना, ५ पुस्तस्थापना, ६ गंठीस्थापना, ७ वेढीस्थापना, ८ संघाइमस्थापना, ९ नक्षस्थापना, १० चलस्थापना ए दश प्रकारे सत्यभाव स्थापना अने ए दश प्रकारनी असत्यभावस्थापना एम वीस अनेक प्रकारनी स्थापना अने ए वीस एक प्रकारनी स्थापना अने ए वीस अनेक प्रकारनी स्थापना एम चालीस भेदस्थापनाना जाणवा.

३ द्रव्यनिक्षेपाना बे भेद १ आगमथी, २ नोआगमथी. आगमथी द्रव्य ते शब्दादिकनो अर्थ उपयोग विना करवो ते. नोआगमथीना त्रण भेद १ जाणग शरीर, २ भविय शरीर, ३ तद्व्यतिरिक्त शरीर. जाणग शरीर ते जेम कोइ श्रावक मरण प्राप्त थयो तेने देखीने कोइ कहे के ए श्रावक हतो, पोशाप्रतिक्रमणनो जाणनार हतो, यथा दृष्टांत, १ घयकुंभ आसी, २ मधुकुंभ आसी, ३ आ घीनो घडो हतो, २ आ मधुनो घडो हतो. भव्य शरीर ते कोइ श्रावकने पेट पुत्र थयो तेने देखीने कोइ कहे के ए श्रावक थशे, पोशाप्रतिक्रमणनो जाणनार थशे जेम १ घयकुंभ भविष्यइ, २ मधुकुंभ भविष्यइ, ३ आ घीनो घडो थशे, २ आ मधुनो घडो थशे. तद्व्यतिरिक्तना त्रण भेद ते १ लोकीक, २ लोकोत्तर, ३ कुप्रावचनीक, लोकीक द्रव्यावश्यक ते राइसर, तलवर, माडंबी, कोटंबी, शेठ, सत्थवाहि, दिवस उग्गे स्नान करे, हाथपग धोवे, राजसभामां जाय, इत्यादिक अवश्य करणीय करे तेने लोकीक द्रव्यावश्यक कहीए १, लोकोत्तर द्रव्यावश्यक ते जे इमे समणगुण मुक्कजोगी, छक्कायनिरणुकंपा, हयाइमे, उद्दामा गयाइमे, निरंकुसा, छक्काय निरणुकंपा, जोणमाणाए अणाणा, पडा, मडा, निपुडा, पांडुर, पालंबीया, उभयकाळ आवश्यक करति तेने लोकोत्तर द्रव्यावश्यक कहीए २, कुप्रावचनी द्रव्यावश्यक ते चक्कचिरिया, चर्मखंडा दिवस

पर्यवनो परमार्थ जाणवो) ॥ ६ ॥

अर्थः–हवे छ द्रव्यना नाम कहेछे. ध० धर्मास्तिकाय १ । अ० अधर्मास्तिकाय २ । आ० आकास्तिकाय । अस्ति ते प्रदेश अने काय ते असंख्यातादिकना समोहः ३ का० काल ४ । पु० पुद्गलास्तिकाय ५ । जं० जीवास्तिकाय ६ ए ६ मध्ये पांचमा अस्तिकाय अने काल ते अस्तिकाय नहि ॥ ए० ए छ द्रव्यरुप लो० लोक त्ति० एम । प० परुप्पो जि० तिर्थंकरे । व० प्रधान दं० दर्शनने धणीए लोक मध्ये आकासनो देस प्रदेस जाणवो । पण आकास्तिकाय न कहि । ए लोक अलोक थइने आकास्तिकाय जाणवो ॥ ७ ॥

मूलः–धम्मो अहम्मो आगासं कालो पुग्गल–जन्तवे ।
एस लोगो त्ति पन्नत्तो जिणेहिं वरदंसिहिं ॥ ७ ॥

गाथा ७ भावार्थः–हवे छ द्रव्यनां नाम कहेछे १ धर्मास्तिकाय, २ अधर्मास्तिकाय, ३ आकास्तिकाय, ४ (अहीं अस्तीकाय कहेली छे ते अस्ती एटले प्रदेश अने काय ते असंख्यातादिकनो समुह तथा लोकमांही आकास्तीकाय न कहीए कारण के लोकमांही तो आकाशनो देश प्रदेश छे पण स्कंध नथी तेथी लोकालोक वन्ने मळीने आकास्तिकाय जाणवी) हवे चोथो काळ, ५ पुद्गळास्तिकाय, ६ जीवास्तिकाय (ए छ द्रव्य मध्ये काळ वरजीने पांच अस्तीकाय छे अने काळ ने अस्तीकाय नहि तथा काय ते अस्तीकाय नहि) ए द्रव्यरुप लोक ते प्रधान ज्ञानदर्शनना धणी तिर्थंकरे परुप्पो छे ॥ ७ ॥

अर्थः–हवे द्रव्य संख्या कहेछे ध० धर्मास्तिकाय १ । अ० अधर्मास्तिकाय २ आ० आकास्ति-

थाय द्रव्ये द्रव्ये भगवन्तनो अने भावे साधुनो छे तेना उपर दृष्टांत कहे छे, कोइ भमरे काष्ठ कोतरतां करी कोणपो पण ते भमराने भावे द्रव्य करी छे तेने कोइ पंडित करानो पर्यायने देखीने करानुं ज्ञान करे ते पंडितने भाव करी छे एम सर्वमां द्रव्यभाव उतारवा.

हवे सामान्यने विशेष कहे छेः—सामान्य ने विशेष जेम सामान्य ते नर्क अने विशेषमां सात नर्कना जुदा जुदा नाम कहेवां ते. सामान्यमां द्रव्य अने विशेषमां षट्द्रव्य जुदा जुदा कहेवा. सामान्यमां जीव अने विशेषमां पांचमेनु प्रसङ्ग भेद जीवना जाणवा इत्यादि सर्वमां जाणवुं.

हवे द्रव्यक्षेत्र काळ ने भाव कहे छेः—१ द्रव्य, २ क्षेत्र, ३ काळ, ४ भाव. १ द्रव्य ते षट्द्रव्य, २ क्षेत्र ते लोकालोक, ३ काळ ते समय आवळीकादिक, ४ भावना गण भेद ते १ स्वभाव, २ गुण, ३ पर्याय. १ स्वभाव ते वस्तुनो धर्म, २ गुण ते ज्ञानादिक, ३ पर्याय ते पलटन धर्म इत्यादि सर्वमां समजवुं

हवे चार प्रमाण कहे छेः—चार प्रमाण ते १ प्रत्यक्षप्रमाण, २ अनुमानप्रमाण, ३ आगमप्रमाण, ४ औपमाप्रमाण. प्रत्यक्षप्रमाणना बे भेद, १ इंद्रियप्रत्यक्ष, २ नोइंद्रियप्रत्यक्ष. १ इंद्रिय प्रत्यक्षना पांच भेद ते १ श्रोतेंद्रिय, २ चक्षु इंद्रिय, ३ घ्राणेंद्रिय, ४ रसेंद्रिय, ५ स्पर्शेंद्रिय. २ नोइंद्रियप्रत्यक्षना बे भेद, देशप्रत्यक्ष ने सर्व प्रत्यक्ष. देश प्रत्यक्षना बे भेद ते, १ अवधीज्ञान, २ मनपर्यव ज्ञान, अने सर्व प्रत्यक्षमां एक केवळज्ञान.

२ अनुमान प्रमाणना त्रण भेद ते, १ पुर्वे, २ सेसवं, ३ दीठी सामर्थ. पुर्वे ते जेम कोइ माता-नो पुत्र बाल्यावस्थामां परदेश गयो ने युवान अवस्थामां पाछो घेर आव्यो ते माता पुत्रने केवी रीते पीछाणे, वर्णकरी, रचनाएकरी, नीके करी, मर्से करी, व्यांडने करी, दाढीए करी इत्यादिक पूर्वे अनुभवेली जाणने विचारीने

गाथा ९ भावार्थः-हवे छ द्रव्यना गुण कहे छे. धर्मास्तिकायनुं गति (चलण) लक्षण अने अधर्मास्तिकायनुं स्थिर लक्षण अने सर्व द्रव्यनुं भाजन (आधार) रूप आकाशास्तिकायनुं विकाश लक्षण ॥ ९ ॥

अर्थः-व० सीत उष्णादिकने प्रवर्तावे समयादीक ते वर्त्तना ल० लक्षण छे का० कालनुं । जी० जीवनो उ० सागार अणागार उपयोग ल० लक्षण ते जीव केम जाणीए ना० मतिज्ञानादिक आठने जाणपणे करी । दं० चक्षु दर्सनादिक चार दर्शने करी च० वळी । सु० सुख वेदवे करी य० वळी दु० दुख वेदवे करी जाणीए जीवने य० वळी ॥ १० ॥

मूलः-वत्तणालक्खणो कालो जीवो उवओगलक्खणो ।
नाणेणं दंसणेणं च सुहेण य दुहेण य ॥ १० ॥

गाथा १० भावार्थः-जे शीत (ताढ), उष्णा (ताप) दिकने प्रवर्तावे ते समयादिक ते कालनुं वर्तना लक्षण जाणवुं, हवे जीवनुं सामान्य लक्षण कहे छे, जीवनुं सागारने अणागार उपयोग लक्षण, एटले मती ज्ञानादिक ज्ञाने करी, चक्षु दर्शनादिक दर्शने, सुखवेदवे करी दुःखवेदवे करी जीव जाणीए ॥१०॥

अर्थः-ना० ५ ज्ञान ३ अज्ञान ए ८ बोल जे जाणपणो च० वळी दं० चक्षुदर्सनादिक ४। चे० पूरणे च० चारित्र १। अचारित्र २ चारित्राचारित्र ३ नोचारित्राचारित्र ४ च०वळी त०बालतप १ पंडित तप २। बाल पंडित तप ३। नोबालनो पंडित ४ त०तेमहीज । वी०बालवीर्य १। पंडीत वीर्य २। बालपंडितवीर्य ३। अवीर्या उ० उपयोग

जाणे, अथवा त्रण भेद ते, सासु कोड गावे जलां सरोवर भर्यां दीठां, वृक्ष हर्यां दीठां, धान्यना समुह दीठा, तेथी जाणे जे आ स्थळे सारी वृष्टी थएली जणाय छे १. गोचरिए गया त्यां श्रावकनां घर थोडां, गाम नानुं पण आहार पाणीनो लाभ जोइने जाणे जे वर्तमानकाळे सुकाळ वर्ते छे २. वादळ सहीत बिजळी दीठी, इंद्र धनुष्य देखे, दुंगर रलीयामणा देखे, अनुकुळ वायु जोइने कहे के भविष्यकाळमां वृष्टी सारी थशे ३. ए त्रण विधीत जोवाथी विधीतकाळ जाणे २, ३ आगम प्रमाणना त्रण भेद ते ? सुत्तागमे, २ अथागमे, ३ तदुभयागमे एम ३.

४ ओपमा प्रमाणना चार भेद ने ? छती वस्तुने छती ओपमा, २ छती वस्तुने अछती ओपमा, ३ अछती वस्तुने छती ओपमा, ४ अछती वस्तुने अछती ओपमा, एम ४. १ छती वस्तुने छती ओपमा ते जेम पद्मनाभ तिर्थंकर महावीरदेव सरिखा थाशे ने, २ छती वस्तुने अछती ओपमा ते पल्योपम सागरोपमनुं आयुष्य छतुंछे तेनी अछती ओपमा ने कोइए वाळाग्रथी कुवा भर्या नथी ने भरशे नहि ते, ३ अछती वस्तुने छती ओपमा ते जेम दुहो–नगर पान खर्यां, हरणी कुंपळीयां, मुज बिती तुज बीतसे, धीरे वापडीयां, १ पान खरंतु एम कहे, तुज नगर वनराय, अमके बिछडे कब मीळे, दूर पडेंगे जाय, २ तब तरुवर उतर दीयो, तुणो पत्र मुज वात, भव घर एसी रीतहे, एक आवत एक जात, ३ पयारे पान ने बोलीयुं, कब तरु उतर सार, वीरवखाणी ओपमा, अनुयोग सुत्र मोझार, ४ इत्यादिक अछती वस्तुने अछती ओपमा ते घोडाने सींगडां शियाळीयाना जेवां छे इत्यादिक कहेवुं ने, ए प्रमाणे चार प्रमाण सर्वमां उतारवां, एम पचवीस बोलनो विस्तार जाणवो.

हवे आधेय ने आधार कहेछे:–१ आधेय ने २ आधार, आधेय ते घटपटादिक वस्तु अने आधार ते जेने शरणे वस्तु रहे ने पृथ्वी आकाशादिक, इत्यादिक सर्वमां जाणवुं.

अंधकार, ४ रत्नादिकनो उद्योत, ५ चंद्रादिकनी प्रभाकांति, ६ छांया, ७ सूर्यादिकनो तांप, ८ काळो, ९ पीळो, १० धोळो, ११ रातो, १२ निलो ए पांचे वर्ण, १३ खाटो रस, १४ मीठो, १५ तीखो, १६ कडवो १७ कसायलो, ए पांच रस, १८ सुगंध, १९ दुर्गंध, ए बे गंध, २० हलको, २१ भारे, २२ ताढो, २३ उष्ण, २४ सरखरो, २५ सुंवाळो, २६ लुखो, २७ चोपडयो ए आठ स्पर्श जाणवा, ए २७ बोले करी पुदगळनुं लक्षण जाणवुं, ए प्रमाणे छ द्रव्यनां लक्षण कह्यां ॥१२॥

अर्थः–हवे छ द्रव्यना गुणपर्यव कहे छे ए० रुपी अरुपी द्रव्यने विषे एगत्वरुपी अरुपी पर्यवनुं मलवुं ते एगत्व कहीए च० वली पु० एकठा मल्या पछे जुदा जुदा थाय च० वळी सं० एक बेआवतअसंख्य अनंता पर्यव । सं० वाटला प्रमुप संठाण ४ ए० एहज य० वळी सं० घणा वर्णादिकना एकठा मिलवा ते संजोग सादिक सपर्यवसीया ५ । य० वळी वि० तेह वर्णादिकनो जुदो थावो ते वियोग य०वळी । प०रुपी अरुपी पर्यवनुं । तु० ए ल० लक्षण जाणवुं एटले छ द्रव्य १ गुण २ पर्यवनुं जाणपणो ते ज्ञान कहिए । एटले ज्ञाननो अधिकार कह्यो ॥१३॥

मूलः–एगत्तं च पुहत्तं च संखा संठाणमेव य ।
संजोगा य विभागा य पज्जवाणं तु लक्खणं ॥ १३ ॥

गाथा १३ भावार्थः–हवे पर्यायनुं लक्षण कहे छे, १ रुपीअरुपी पुदगळनुं एकडुं थवुं, २ एकठां मळेलां पुदगळ जुदां जुदां विखराइ जाय, ३ एक बे यावत् संख्याता असंख्याता अनंता ते संख्या जाणवी, ४ वाटला (गोळ) प्रमुप संठाण, (आकार), ५ घणां वर्णादिकने एकठे मलवुं ते संयोग, ६ वर्णादिकनुं जुदुं थवुं ते

द० द्रव्य ते धर्मास्तिकायादिक छ द्रव्य। ए० एक प्रत्येक द० द्रव्यने विषे अ० आश्रीत छे गु० गुण कहीए ते छ गुणनी जाणी अने। त्रीजो बोल जे प० पर्यव तेहनुं ल० लक्षण तु० पुरणे ॥ जुना पर्यव तथा नवा पर्यव ते द्रव्य अने गुणने विषे ए उ० बेहुने विषे अ० आश्रया। भ० होय ॥ ६ ॥

मूलः—गुणाणमासओ दव्वं एगदव्वस्सिया गुणा।
लक्खणं पज्जवाणं तु उभओ अस्सिया भवे॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः—[हवे द्रव्य, गुण ने पर्यव (पर्याय) कोहने कहीए ते कहे छे. द्रव्य, गुण ने पर्यव, द्रव्य ते गुण पर्यवनुं भाजन, गुण ते वस्तुने ओळखावनार, पर्यव ते पलटन धर्म. द्रव्य ते जीवअजीव, गुण ते ज्ञानादिक, पर्यव नाना (विविध) भेदे एक आत्मभावी, एक कर्मभावी, आत्मभावी ते ज्ञानदर्शन चारित्र, कर्मभावी ते नर नारकी मनुष्य). चलणादिक गुण ने आश्रय (आधार) धर्मास्ति प्रमुख छ द्रव्य जाणवा अने प्रत्येक प्रत्येक (जुदा जुदा) द्रव्यने आश्रया छे ते गमनादिक गुण कहीए अने पर्यव ते नवा पर्यव ने जुना पर्यव ते द्रव्य अने गुण ए बहेने आश्रया होय (हवे धर्मास्ति अधर्मास्ति ने आकाशास्तिकाय ए त्रणनुं एकठुं मळवुं ए अनादि अपर्यवसीत जाणवुं अने एकेकाना १ स्कंध, २ देश, ३ प्रदेश ए त्रण त्रण बोल गणतां नव बोल अने काळ एम दश अरुपीना पर्यव जाणवा अने जीवास्तिकाय मध्ये केवळज्ञान केवळदर्शनना पर्यव एकठा मळ्या ते सादी अपर्यवसीत जाणवा अने बीजा जीवना चार ज्ञान, त्रण अज्ञान, त्रण दर्शनना पर्यव बधे पडे अने पुद्गळास्तिकायना पण विना पर्यव मळ्ये जुदा संघाण, संयोग, विभागादिक सर्व होय ए प्रमाणे

कषायने रसे जे कर्म नवा उपराजवा ते आ० आश्रव ६ ॥ त० तेमज अविरितिने पचखे ते सं० संवर ७ तथा आश्रवना घडनाला रुंधवे करी जीवना प्रदेसथी कर्मनो नि० निर्जरवो ते निर्जरा ८। मो० जीवना प्रदेसथी सर्व कर्मनुं खपावयुं ते मोक्ष ॥९॥ सं० छता छे ए० कह्या छे त० यथातथ्य पदार्थ। न० नव ॥ १४ ॥

मूलः—जीवाजीवा य बन्धो य पुण्णं पावासवो तहा।
संवरो निज्जरा मोक्खो सन्तेए तहिया नव ॥ १४ ॥

गाथा १४ भावार्थः—हवे मुक्तिनुं बीजुं कारण दर्शन तेनो अधिकार कहे छे, १ जीव, २ अजीव, ३ पुन्य, ४ पाप, ५ आश्रव, ६ संवर, ७ निर्जरा, ८ बंध, ९ मोक्ष ए नव तत्वनां नाम जाणवां, हवे ए नवे पदार्थनां लक्षण कहे छे, १ असंख्यात प्रदेशी अरुपी सदा सउपयोगी चैतन्यलक्षण सुख दुख जाणे ने सुख भोगवे तेने जीव कहीए, २ जड लक्षण चैतन्य रहित सुख दुःख जाणे नहि ने सुख दुःख भोगवे नहि तेने अजीव कहीए ३ जीवना प्रदेशने विषे शुभ पुदगळनो बंध ते शुभ कमाणीए करी शुभ कर्मना उदये करी जेनां फळ आत्माने भोगवतां मीठां लागे तेने पुन्य कहीए, ४ जीवना प्रदेशने विषे अशुभ पुदगळनो बंध ते अशुभ कमाणीए करी अशुभ कर्मना उदये करी जेनां फळ आत्माने भोगवतां कडवां लागे तेने पाप कहीए, ५ अव्रतने अपचखाणे करी विषय कषाय सेववे करी आत्मारुप तळावने विषे इंद्रियरुप घडनाळे करी नवां कर्म उपार्जे ते आश्रव कहीए, ६ आत्मारुप तळावने विषे इंद्रियरुप घडनाळे करी नवां कर्म आवतां व्रत पचखाणरुपदांकणे करी रोकीए ते संवर कहीए, ७ जीवना प्रदेशथी कर्म पुदगळनां दळ खरवां ते निर्जरा कहीए, ८ जीवना

प्रत्येक १ ॥ द० द्रव्य १० एकेक आ० कहुं अ० अनंता ग० वली द० द्रव्य । का० कालना समयक्षेत्र मध्ये कालनो एक समय । अनंत प्रदेश पर्यंत उपरे मनतें छे ते माटे द्रव्यार्थीत काल अनंता द्रव्यार्थित कहिए । भगवतीसत्रः लोकने मध्ये काल जीव एक द्रव्य कहो ते जातिवाचक माटे पु० पुद्गल अनंता द्रव्यणी जं० द्रव्यणी जीव अनंता ॥ ८ ॥

मूलः—धम्मो अहम्मो आगासं दव्वं इक्किक्कमाहियं ।
अणन्ताणि य दव्वाणि कालो पुग्गल-जन्तवे ॥ ८ ॥

गाथा ८ भावार्थः—हवे छ द्रव्यनी संख्या कहे छे, १ धर्मास्तिकाय, २ अधर्मास्तिकाय, ३ आकाशास्तिकाय, ए त्रणनो एकेक द्रव्य छे (अर्थात धर्मास्तिकाय द्रव्यणी एक, अधर्मास्तिकाय द्रव्यणी एक, आकाशास्तिकाय द्रव्यणी एक छे) अने ४ काळ, ५ पुद्गळ, ६ जीव ए त्रणना अनंताद्रव्य छे (अर्थात द्रव्यणी काळ अनंताद्रव्य छे, कारण के समयक्षेत्र मध्ये कालनो एक समय अनंतप्रदेश पर्यंत उपरे मनतें छे ते माटे द्रव्यार्थीत काळ अनंताद्रव्य कहीए अने पुद्गळ द्रव्य अनंताछे तेमज जीव द्रव्य पण अनंतो छे) ए छ द्रव्य कह्या ॥ ८ ॥

अर्थः—हवे छ द्रव्यना गुण कहेछे ग० गतिगमनरूप ल० लक्षणछे उ० वली ध० धर्मास्तिकायना । अ० अधर्मास्तिकायना ठा० स्थिर ल० लक्षण भा० भाजन आधारछे स० सर्व जीव अजीव द० द्रव्यनुं । न० भाजन तेहनुं ल० लक्षण ते ओ० उग्रह अवकाश्य ॥ ९ ॥

मूलः—गइलक्खणो उ धम्मो अहम्मो ठाणलक्खणो ।
भायणं सव्वदव्वाणं नहं ओगाहलक्खणं ॥ ९ ॥

अभिगम-वित्थाररुई किरिया-संखेव-धम्मरुई ॥ १६ ॥

गाथा १६ भावार्थः–हवे समकित पामवाना दशभेद तथा दशप्रकारे सराग समकित तेनी दश रुची कहेछे, १ निसर्गरुची, २ उपदेशरुची, ३ आज्ञारुची, ४ सुत्ररुची, ५ बीजरुची, ६ अभीगमरुची, ७ विस्ताररुची, ८ क्रियारुची, ९ संक्षेपरुची, १० धर्मरुची ए दश प्रकारे समकित कह्युं ए प्रमाणे दश रुची संक्षेपे कही ॥ १६ ॥

अर्थः–हवे विस्तारे कहे छे, प्रथम निसर्ग रुचिनो लक्षण कहे छे। भू० छता अर्थनुं जाणपणुं एहवे ज्ञाने अ० जाण्या। जी० जीव अ० अजीव य० वली पु० पुन्य पा० पाप च० समुचय। स० जाति स्मरणादिक ज्ञाने करी आ० आश्रव सं० संवर य० शब्दथी निर्जरावंध मोस० ९। ए नव पदार्थ रो० यथातथ्य संदेह उ० पुरणे नि० निसर्ग रुचिनो धणी ॥ १७ ॥

मूलः–भूयत्थेणाहिगया जीवाजीवा य पुण्णपावं च ।
सहसम्मुइयासवसंवरो य रोएइ उ निस्सग्गो ॥ १७ ॥

गाथा १७ भावार्थः–हवे दश रुचीनो विस्तार कहेछे, तेमां प्रथम निसर्गरुचीनां लक्षण कहेछे, १ जीव, २ अजीव, ३ पुन्य, ४ पाप, ५ आश्रव, ६ संवर, ७ निर्जरा, ८ बंध, ९ मोक्ष, ए नव पदार्थना छता अर्थनुं जाणपणुं, जातिस्मरणादिक ज्ञाने करी जाणीने यथातथ्य श्रद्धे ते निसर्ग रुचीनो धणी जाणवो ॥ १७ ॥

अर्थः–जो० जे कोइ जि० वीतरागे दि० दिठा भाव। च० चारे प्रकारे द्रव्यथी १। क्षेत्रथी २ कालथी ३। भावथी ४। स० सद्दहे स० पोते जातिस्मरणादिके। अ० ए वीतरागे कह्या एमज नं० अन्यथा

मूलः—नाणं च दंसणं चेव चरित्तं च तवो तहा ।
वीरियं उवओगो य एयं जीवस्स लक्खणं ॥ ११ ॥

गाथा ११ भावार्थः—इवे विशेषे छ लक्षण करी जीव जणाय ते कहे छे. १ ज्ञान ते पांच, अने अज्ञान, ए आत्मा ज्ञानगुण करी, २ दर्शन ते चक्षु दर्शनादिक चार दर्शने करी, ३ चारित्र ते १ चारित्र, २ अचारित्र, ३ चारित्राचारित्र ४ नोचारित्र, नोअचारित्र नोचारित्राचारित्र, ए चार भेदे चारित्रे करी, ४ तप ते, १ बाह्यतप. २ आभ्यंतरतप, ३ बाह्य आभ्यंतरतप, ४ नोबाह्य नोआभ्यंतरतप, ए चार तपे करी, ५ वीर्य ते, १ बालवीर्य, २ पंडितवीर्य, ३ बाल पंडितवीर्य, ४ नोबाल नोपंडितवीर्य, ए चार वीर्ये करी, साकार ते साकार ए पे प्रकारना उपयोगे करी ए प्रमाणे छ बोलना अंतरभेदना २६ बोले करी सर्व जीवनुं लक्षण जाणवुं ॥११॥

अर्थः—इवे पुद्गलनुं लक्षण कहे छे । श० शुभ अशुभ शब्द २ । अं० अंधकार१ उ० उद्योत रत्नादिकनो १ । प० प्रभाकांति चंद्रादिकनो २ छा० छाया शीतल छायादि ६ । त० ताप सूर्यादिकनो उष्ण ताप्यो १० वा० वर्णो । ५० पांच वर्ण १० पांच रस गं० बे गंध फा० आठ फरस २७ ॥ पु० पुद्गलास्तिकायनुं पु० पुनः ल० ए २७ बोल रूप लक्षण जाणवुं । ए छ द्रव्यना लक्षण कह्या ॥ १० ॥

मूलः—सद्दन्धयार-उज्जोओ पहा छाया तवे इ वा ।
वण्णरसगन्धफासा पुग्गलाणं तु लक्खणं ॥ १२ ॥

गाथा १२ भावार्थः—इवे पुद्गलनां सत्यावीस लक्षण कहे छे. १ शुभ शब्द, २ अशुभ शब्द, ३

रुचिवंत ना० नाम जाणवो ॥ २० ॥

मूलः—रागो दोसो मोहो अन्नाणं जस्स अवगयं होइ ।
आणाए रोयन्तो सो खलु आणारुई नामं ॥ २० ॥

गाथा २० भावार्थः—हवे त्रीजी आज्ञारुची कहे छे, राग, द्वेष, मोह, मिथ्यात्वादिक जेने गएलां होय एवा पुरुषनी आज्ञाए पुर्वोक्त नव पदार्थने रुचवे सर्दहे ते पुरुष निश्चे आज्ञावंत रुचीवंत जाणवो ॥२०॥

अर्थः—हवे सुत्ररुचि कहे छे जो० जे कोइ सु० सुत्र सिद्धातने अ० भणतो थको । सु० सुत्र भणवे करी ओ० पामे उ० वळी स० समकित अ० आचारांगादिक भणवे । वा० अथवा अंगथी वाहिर उत्तराध्यनादिक भणवेकरी व० वळी । सो० ते पुरुष सु० सुत्र रु० रुचिनो धणी त्ति० वळी ना० जाणवो ॥ २१ ॥

मूलः—जो सुत्तमहिज्जन्तो सुएण ओगाहई उ सम्मत्तं ।
अङ्गेण बाहिरेण व सो सुत्तरुइ त्ति नायवो ॥ २१ ॥

गाथा २१ भावार्थः—हवे चोथी सुत्ररुची कहे छे, जे कोइ आचारंगादिक अंग अने अंग बाहीर ते उत्तराध्ययनादिक शास्त्र भणतोथको तेमज शास्त्र भणवे करी समकित पामे ते पुरुषने सुत्ररुचीनो धणी जाणवो ॥२१॥

अर्थः—हवे बीजरुचि कहे छे । ए० एक जीवादिक पदे करी तथा एक दृष्टांते एक हेतुए करी शिषामण अ० घणा । प० पद हेतु दृष्टांतादिकने विषे पया० अत्र प्रथमां छे पण सातमी वोळावीए । जो० जे प० प्रसरे विस्तरे उ० वळी स० रुचि प्रसरे यथा दृष्टांते ॥ उ० उदकने विषे ब्र० जेम ते० तेलनो बि० बिंद प्रसरे । सो० ते

वियोग ए प्रमाणे रूपीअरूपी पर्यायनुं लक्षण जाणवुं, ए द्रव्यगुण पर्यायनुं जाणपणुं ते ज्ञान कहीए,

(हवे धर्मास्तिकायादिक छ द्रव्यने विषे नित्ये ने व्यवहार केवी रीते उतारवा ते कहे छे:—१ धर्मास्तिकाय, २ अधर्मास्तिकाय, ३ लोकाकाश, ए त्रणने विषे असंख्याता प्रदेशात्मक अरूप अचैतन्यपणुं ने अवो-
काशने विषे अनंतप्रदेश ए नित्यपणुं जाणवुं अने धर्मास्तिकायने विषे गमनगुण, अधर्मास्तिकायने विषे
स्थिरगुण, आकाशनो विकाशगुण तेनुं प्रवर्तन ते व्यवहारनय जाणवो, ४ कालने विषे एक पर्यव अरूप अचै-
तन्य ए नित्यपणुं जाणवुं अने ऋतुअयन संवत्सरादिकने विषे समय आवली कालप्रमुखनुं प्रवर्तन ते व्यवहा-
रपणुं जाणवुं, ५ जीवने विषे असंख्यात प्रदेशात्मक अरूपी शुद्धाशुद्ध उपयोगरूप चैतन्यपणुं ते निश्चय जाणवुं
अने एकेंद्रियादिक पचेंद्रिय तथा शरीरी अवगाहनादिकने विषे प्रवर्तवो ते व्यवहारनय जाणवो, अकर्मकपणाथी
सिद्धने विषे व्यवहार नथी, ६ पुद्गलास्तिकायने विषे एकादिक अनंतप्रदेश अचैतन्यपणुं ते निश्चय जाणवुं
अने पांच वर्ण, बे गंध, पांच रस, आठ स्पर्श, पांच संस्थान इत्यादिकनुं प्रत्यक्ष ग्रहणरूप प्रवर्तन ते व्यवहारनय
जाणवो, एवी रीते छ द्रव्यनुं निश्चय ने व्यवहारपणुं जाणवुं, ए प्रमाणे द्रव्यमात्र सामान्य
विशेष वगेरे बीजा तेवीस तथा पंदर भेळवता आडत्रीस बोल छए द्रव्य उपर उतारवा, ए सयल मुक्तिनुं
कारण ज्ञान तेनो अधिकार संपूर्ण) ॥१३॥

अर्थ:—नी० जीव असंख्यात प्रदेशी सदा सउपयोगी ते जीव ? ॥ अ० उपयोग रहित ते अजीव २ ।
० बंधी बं० जीवना प्रदेशने विषे शुभाशुभ पुद्गलनो बंधावबो ते बंध ३ ॥ य० बंधी पु० जीवना
पुद्गलनो बंध ते पुन्य ४ । अने पा० अशुभ [illegible] बंध ते पाप ५ ।

प्रवर्ते स० सर्व न० नयनि वि० विधि करी । वि० विस्तार रु० रुचिनो धणी नि० वली ना० जाणवो ॥२४॥

मूलः–दव्वाण सव्वभावा सव्वपमाणेहि जस्स उवलद्धा ।
सव्वाहि नयविहीहिं वित्थाररुइ त्ति नायवो ॥ २४ ॥

गाथा २४ भावार्थः–हवे सातमी विस्ताररुची कहे छे, धर्मास्तीकायादिक छ द्रव्यना सर्व भाव प्रत्यक्षादीक सर्व प्रमाणे ने जाणपणे करी तथा निगमादिक सात नय (यावत पुर्वोक्त चाल्लीस बोल) नी विधिए करी जेने सिद्धांतना भाव जाण्या प्रवर्ते तेथी समकित पामे तेने विस्ताररुचीनो धणी जाणवो ॥२४॥

अर्थः–हवे क्रियारुचि कहे छे । दं० समकितने विषे । ना० ज्ञानने विषे च० चारित्रने विषे । त० तपने विषे । वि० विनयने विषे । स० सत्य प्रतिज्ञान विषे । स० समितिने विषे गु० त्रिन गुप्तीन विषे । इत्यादिक शुद्ध पदार्थने विषे जो० जेहने कि० क्रिया करवा भा० भावथी रु० रुचि सो० ते स० तिथे कि० क्रिया रु० रुचिनो धणी ना० एहवुं नाम जाणवुं ॥ २५ ॥

मूलः–दंसणनाणचरित्ते तवविणए सच्चसमिइगुत्तीसु ।
जो किरियाभावरुई सो खलु किरियारुई नाम ॥ २५ ॥

गाथा २५ भावार्थः–हवे आठमी क्रियारुची कहे छे, १ ज्ञान, २ दर्शन, ३ चारित्र, ४ तप, ५ विनय, ६ सत्यप्रतिज्ञा, ७ पांचसमिति, ८ त्रणगुप्ती इत्यादिक शुद्ध पदार्थने विषे जेने भावथी क्रिया करवा (सम्यक्त

करीए, ए नव पदार्थ यथातथ्य छे ॥ १४ ॥

अर्थः-तहि० यथातथ्य तु० भावारण भा० ए नव पदार्थनां स० स्वभावे जातिस्मरणादिक ज्ञाने तथा उ० गुरुवादिकने उपदेसे करीने । भा० अंतःकरण शुद्धभावे करी स० सद्दहना थका स० ते जीवने ॥ स० समकित तं० ते वि० एम कहुं निर्धारे ॥ १५ ॥

मूलः-तहियाणं तु भावाणं सब्भावे उवएसणं ।
भावेणं सद्दहन्तस्स सम्मत्तं तं वियाहियं ॥ १५ ॥

गाथा १५ भावार्थः-जातिस्मरणादिक ज्ञाने करी तथा गुरुवादिकना उपदेशे करी शुद्ध अंतःकरण भावे करीने ए पूर्वोक्त नवे पदार्थने यथातथ्यपणे श्रद्धतां थकां निर्धारे समकित कहुं छे ॥ १५ ॥

अर्थः-हवे दस प्रकारे सराग समकीत तेहनी दस रुची कहेछे ॥ सराग० चोथा जीवठाणाथी दशमा जीवठाणा सुधी सराग समकित होय ति० पहिली निसर्ग रु० रुची १ । उ० बीजी उपदेस रु० रुची २ भा० त्रीजी भाज्ञा रु० रुची ३ । गु० चोथी गुप्त रु० रुची ४ ॥ बी० पांचमी बीज रु० रुची ५ । ए० रुची । अ० छठी अभिगम रु० रुची ६ वि० सातमी विस्तार रुची ७ ॥ कि० क्रियारुची आठमी ८ ॥ सं० नवमी संक्षेप रु० दसमी ९ । ध० धर्म रु० रुचीए १० ए दस रुचीना नाम कह्या ॥ १६ ॥

मूलः-निसग्गुवएसरुई आणरुई सुत्तबीयरुइमेव ।

सद्दहइ जिणाभिहियं सो धम्मरुइत्ति नायव्वो ॥ २७ ॥

गाथा २७ भावार्थः—हवे दशमी धर्मरुची कहे छे. धर्मास्तीकायादिक छ द्रव्यना चलणादिक गुणने तथा अंग प्रविष्ट ने अंग वाहीर एवा श्रुत धर्म अने समकीतना स्वरुपने वळी सामायकादिक पांच चारित्रना स्वरुपने जेम तिर्थंकरे कहुं छे तेम श्रद्धे तेने धर्मरुचीनो धणी जाणवो ॥ २७ ॥

॥ २८ ॥

हवे जीवादिक नव पदार्थने विषे निश्चय अने व्यवहारनुं स्वरुप कहे छेः—१ जीव असंख्य प्रदेशात्मक उपयोगरुप चैतन्यवंतपणुं ते जीवने विषे निश्चयपणुं जाणवुं अने ते चैतन्यवंत एकेंद्रियादिक पंचेंद्रिय पर्यंत जीव देहधारी पोतपोताने शरीर अवगाहनादिकने प्रवर्तने प्रवर्तवे ते जीवने विषे व्यवहारनय जाणवो, एक सिद्धने विषे अकर्मक होवाथी व्यवहारनयथी ए जीवनुं निश्चयने व्यवहारपणुं कहुं.

२ अजीव ते (१ धर्मास्तीकाय, २ अधर्मास्तीकाय ए बेने विषे असंख्यात प्रदेश अने ३ अलोकाकाशने विषे अनंत प्रदेश ए त्रणेने विषे अरुपी अचैतन्यपणुं ते निश्चय जाणवुं, ४ पुद्गळने विषे एकादिक अनंत प्रदेश अचैतन्यपणुं, ५ काळने विषे एक पर्यवरुप अचैतन्यपणुं ए निश्चय नय जाणवो अने धर्मास्तीकायने विषे चलणगुण, अधर्मास्तीकायने विषे स्थिरगुण, आकास्तीकायने विषे विकाशगुण, पुद्गळने विषे पांच वर्ण, बे गंध, पांच रस, आठ स्पर्श, पांच संस्थान, इत्यादिकनो ग्रहणगुण, काळने विषे समयादिक पुद्गळ परावर्तन वर्तना गुणनुं प्रवर्तन प्रवर्ते ते व्यवहार नय जाणवो, (उदाहरण) जेम असंख्याते लोके अनंती रात्री गइ, जाय छे ने जाशे ए प्रवर्तन ते व्यवहार नय जाणवो). ३ जीवना प्रदेशने विषे शुभ पुद्गळनो बंध ते निश्चय पुन्य जाणवुं अने तेनो अनुभाग भोगववारुप प्रवर्तन ते व्यवहार पुन्यपणुं भोगववाने व्यवहार जाणे ते माटे.

॥ ३२० ॥

नाई । ए० एम जाणे । स० ते पुरुषने नि० निसर्ग रुचिवंत इ० एम ना० जाणवो ॥ १८ ॥

मूलः—जो जिणदिट्ठे भावे चउविहे सद्दहाइ सयमेव ।
एमेव नन्नह त्ति य निसग्गरुइ त्ति नायवो ॥ १८ ॥

गाथा १८ भावार्थः—जे वीतरागे पदार्थ दीठा ते सर्व भावने द्रव्यथी क्षेत्रथी कालथी भावथी जाति-स्वरूपादिक जाने करी यथातथ्यज छे, अन्यथा नथी एम जाणीने श्रद्धे ते निसर्ग रुचीवंत जाणवो, ए प्रथम निसर्ग रुची कही ॥ १८ ॥

अर्थः—हवे उपदेशरुचि कहे छे ए० ए कथा उ० जे चे० पूरणे भा० नव पदार्थने । उ० गुरुवादिकना उपदेश दिये अने जो० जे प० कोइ स० सद्दहे । छ० छद्मस्थ तथा जि० केवलीए उपदेस दीधे छते व० बली इ० उपदेश रुचिवंत जि० बली ना० जाणवो ॥ १९ ॥

मूलः—एए चेव उ भावे उवइट्ठे जो परेण सद्दहई ।
छउमत्थेण जिणेण व उवएसरुइ त्ति नायवो ॥ १९ ॥

गाथा १९ भावार्थः—हवे बीजी उपदेशरुची कहे छे, ए पूर्वोक्त नव पदार्थने केवली तथा छद्मस्थने गुरुवादिके उपदेश दीधे थके यथातथ्य श्रद्धे ते बीजी उपदेशरुची जाणवी ॥ १९ ॥

अर्थः—हवे आज्ञारुचि कहे छे । रा० राग दो० द्वेष मो० मुर्छा । अ० मिथ्यात्वादिक ज० जेहने अ० तथा हो० होय एवो पुरुष ते आ० आज्ञाए रो० रोचवतो सद्दहतो । सो० ते पुरुष स० निश्चे आ० आज्ञा

अर्थः–पर० जीवादिक पदार्थ समय ते परमअर्थ तेहने विषे सं० परिचय अभ्यास करे गुण स्तवन करे बीजे बोले वा० वली । सु० सुद्ध सद्दहणा छे ते सहीत भलीपरे दीठाछे प० जीवादिक पदार्थना स्वरुपने ॥ समय जेणे एहवा गुरुवादिक तेहनी से० सेवा करवी सेववा ॥ वा० अथवा बीजे बोले प्रथम समकित पामीने पछे अवि० निश्चे । वा० विणठो जे दरसन समकित ॥ जेहनो ते मिन्हवादिक तेहनी संगती वरजवी वर्जे कु० धुरथीज पोटि सद्दहणा छे जेहनी तेहनी संगती पण व० वर्जवी ॥ ए त्रण यथानख्य तेम कहे तेम करवी ए य० वली स० समकीतनी स० सद्दहणा जाणवी ॥ २८ ॥

मूलः–परमत्थसंथवो वा सुदिट्ठपरमत्थसेवणं वा वि ।
वावन्नकुदंसणवज्जणा य सम्मत्तसद्दहणा ॥ २८ ॥

गाथा २८ भावार्थः–हवे समकितनी त्रण सर्द्दहणा कहे छे, १ जीवादिक पदार्थरुप परमार्थ तेना स्वरुपनुं संस्तवपणुं तथा तेने जाणवानो अभ्यास करे, २ जेणे परमार्थ जाण्या छे तेवा आचार्यादिकनी सेवा करे, ३ प्रथम समकित पामीने पछी वमी गएलो होय ते मिन्हवादिक तथा प्रथमथीज जेनी खोटी श्रद्धाछे तेवा कुदर्शनीनी संगत वर्जे ए समकितनी त्रण सर्द्दहणा (श्रद्धा) जाणवी ॥२८॥

अर्थः–हवे समकितनो मोटाइपणो कहे छे न० नहि ॥ च० चारित्र स० समकीत वि० विना ॥ दं० समकित छे उ० अवधारणे भ० चारित्रनी भजना होय अने न होय पण ॥ स० समकित चारित्र जेने

बी० बीजरुचिनो धणी चि० वली। ना० जाणवो। एक बीजे पणां बीज नीपजे तेम बीजरुची कहीए ॥२२॥

मूलः–एगेण अणेगाइं पयाणि जो पसरई उ सम्मत्तं ।
उदए व्व तेल्लबिन्दू सो बीयरुइ त्ति नायव्वो ॥ २२ ॥

गाथा २२ भावार्थः–हवे पांचमी बीजरुची कहे छे, जेम पाणीने विषे तेलनुं बिंदु विस्तरे तथा तेम एक बीजथी घणां बीज थाय तेम एक जीवादिक पदार्थ एक दृष्टांत एक हेतु जाणवे करी घणा पदार्थ, घणां दृष्टांत ने घणा हेतुनुं जाणपणुं विस्तारवाथी समकित पामे ते बीजरुचीनो धणी जाणवो ॥२२॥

अर्थः–हवे अभिगमरुचि कहे छे सो० ते हो० होय अ० अभिगमरुचिनो धणी । सु० श्रुतज्ञान जे० जेणे अ० अर्थ थकी दि० दिठो होय ए० इग्यारे अं० अंगगादीकृकालिक। प० पइन्ना तथा उत्कालिक दि० दृष्टिवाद ते बारमो अंग ते उत्कालिक प० पूरणे ॥ २३ ॥

मूलः–सो होइ अभिगमरुई सुयनाणं जेण अत्थओ दिट्ठं ।
एक्कारस अङ्गाइं पइण्णगं दिट्ठिवाओ य ॥ २३ ॥

गाथा २३ भावार्थः–हवे छट्ठी अभीगमरुची कहेछे, आचारंगादिक अगीआर अंग ने बारमुं दृष्टीवाद अंग ते अने पइन्ना-कालीक उत्कालीकादिक सर्व सिद्धांतना अर्थ जेणे जाण्या छे तेथी समकित पामे तेने अभीगमरुचीना धणी जाणवो॥२३॥

अर्थः–हवे विस्तारुचि कहे छे ॥ द० धर्मास्तिकायादिक छ द्रव्यनां स० गुणपर्यवादिक ॥ स० सर्व प० प्रमाण ते प्रत्यक्ष प्रमाण १ ॥ अनुमान प्रमाण २। उपमा प्रमाण ३ आगम प्रमाण ४ ए ४ प्रमाणेकरी ज० जेहने। उ० जाण्या

अर्थः–पर० जीवादिक पदार्थ समय ते परमअर्थ तेहने विषे सं० परिचय अभ्यास करे गुण कित्तन करे धीजे वोले वा० वली । सु० सुद्ध सद्दहणा छे ते सहीत भलीपरे दीठाछे प० जीवादिक पदार्थना स्वरुपने ॥ समय जेणे एहवा गुरुवादिक तेहनी से० सेवा करवी सेववा ॥ वा० अथवा त्रीजे वोले प्रथम समकित पामीने पछे अवि० निथे । वा० विणठो जे दरसन समकित ॥ जेहनो ते निन्हवादिक तेहनी संगती वरजवी अने कु० धुरथीज पोटि सद्दहणा छे जेहनी तेहनी संगती पण व० वर्जवी ॥ ए त्रण यथातथ्य जेम कहे तेम करवी ए य० वली स० समकीतनी स० सदहणा जाणवी ॥ २८ ॥

मूलः–परमत्थसंथवो वा सुदिट्ठपरमत्थसेवणं वा वि ।
वावन्नकुदंसणवज्जणा य सम्मत्तसद्दहणा ॥ २८ ॥

गाथा २८ भावार्थः–हवे समकितनी त्रण सर्दहणा कहे छे, १ जीवादिक पदार्थरुप परमार्थ तेना स्वरुपनुं संस्तवपणुं तथा तेने जाणवानो अभ्यास करे, २ जेणे परमार्थ जाण्या छे तेवा आचार्यादिकनी सेवा करे, ३ प्रथम समकित पामीने पछी वमी गएलो होय ते निन्हवादिक तथा प्रथमथीज जेनी खोटी श्रद्धाछे तेवा कुदर्शनीनी संगत वर्जे ए समकितनी त्रण सर्दहणा (श्रद्धा) जाणवी ॥२८॥

अर्थः–हवे समकितनो मोटाइपणो कहे छे न० नहि ॥ च० चारित्र स० समकीत वि० विना ॥ दं० समकित छे उ० अवधारणे भ० चारित्रनी भजना होय अने न होय पण ॥ स० समकित चारित्र अने

... ...

४ ॥ उ० गुप जिनमतीनां गुण दीपावना करे ५ ॥ थि० धर्मथी पडया ने धर्मने विषे थीर करे ६ ॥ व० सा-
धर्मिकउपरीवत्सभकारी हितनो करणहार होय ७। प० वीतरागना वचन शुद्धपरुपवे करी प्रवचननो प्रभावक होय ८ ॥
ध० आठ समकितना आचार भूषण जाणवा एटले १८ गाथाए करी समकितनो अधिकार कह्यो ॥ ३१ ॥

॥ २८ ॥

मूलः–निस्सङ्किय–निकङ्किय–निव्वितिगिच्छा अमूढदिट्ठी य ।
उववूह–थिरीकरणे वच्छल्ल–पभावणे अट्ठ ॥ ३१ ॥

गाथा ३१ भावार्थः–हवे समकितना आठ आचार कहे छे, १ जीनवचनने विषे शंकारहित होय, २ अन्यदर्शनने विषे मोक्षनी साधना हशे, एवी वांछा न करे, ३ धर्मनां फळनो संशय न राखे, ४ घणा मत-
मतांतर मिथ्यात्वीनो आडंबर तथा जुदी जुदी परुपणा देखीने कियो मार्ग सत्य हशे? एम मुंझाय नहि, ५ जीनधर्म पामीने दया ब्रह्मचर्यादीक गुण आरापे छे तेहना गुणग्राम करे, ६ धर्मानुष्ठानने विषे सिदाता धर्मी पुरुषोने सहाय करे तथा धर्मथी डग्या होय तेहने धर्मने विषे स्थीर करे, ७ स्वधर्मिनी भक्ति करे तथा तेहना हितनो करनार होय, ८ स्वतिर्थनी उन्नति (उत्तेजन) करे तथा वीतरागनां वचन शुद्ध परुपे ए प्रमाणे बीजो दर्शन मोक्ष मार्ग कह्यो ॥ ३१ ॥

अर्थः–हवे त्रीजो अधिकारचारित्रनो कहेछे सा० सामाइक चारित्र अ० इहां प० प्रथम जाणवो। छे० छेदोवडावणी छ मासनी मर्यादा पुरी थइछे ते २। उ० सामाइ चारित्र समर्पे दा० थापवुं आत्मा दृढ करवो

४ जीवना प्रदेशने विषे पुर्व अव्रतने संयोगे करी संचेलां कर्म तथा वर्तमानकाळे अव्रतने संयोगे अशुभ पुद्गळनो बंध ते निश्चय पापपणुं अने तेनुं भोगववुं ने तदुप व्यवहारनुं प्रवर्तन ते व्यवहार पापपणुं. ५ अव्रतने अणपचाखवे विषय कषायने रसे करी जे कर्म पुद्गळनुं आववुं ते निश्चय आश्रवपणुं, अने अव्रतादिक विषय-कषायनुं प्रवर्तन ते व्यवहार आश्रव जाणवो. ६ अव्रतने पचाखे करी पांच आश्रव अने आश्रवनां पडनाळां रुंधे करी नवां कर्म आवे नहि ते निश्चयसंवर कहीए, अने ते संवरनुं इर्यासमितिपणे प्रवर्तन ते व्यवहारसंवर जाणवो. ७ समकितादिक गुणनी शुभ चिंतवणाए करी जीवना प्रदेशथी कर्मपुद्गळनुं खेरववुं, सकाम निर्जरानुं करवुं ते सकाम निर्जरानुं निश्चयपणुं भरतचक्रीव्रतनी पेरे अने तेथी विपरीत मिथ्यात्व वाळ अकामादिक अकाम निर्जरानुं निश्चयपणुं, ते कर्मबंधनो हेतु जाणवो अने समकित सहित तपसंयमने विषे प्रवर्तनुं, भरतचक्रीवत्, ते व्यवहार सकाम निर्जरा जाणवी, निश्चय ने व्यवहार ए बे सापेक्ष होय तेथी विपरीत ते व्यवहार अकाम निर्जरा जाणवी. ८ जीवना प्रदेशने विषे कर्मपुद्गळनो बंध तेने बंध कहीए, समुच्चय जीवआश्री शुभ अध्यवसाए करी जे शुभाशुभ बंध ते निश्चयबंध जाणवो अने समकितवंत व्रतना धणीनो शुभ अध्यवसाय ते अशुभादिक कर्मनी निर्जराए करी शेष पातळां कर्म रह्यां ते शुभ बंध पण समकितादिकनुं कर्तव्य ते बंधनो हेतु नहि अने शुभाशुभ अध्यवसायनुं प्रवर्तन तेणे करी बंधनुं व्यवहारपणुं जणाय ते लक्षण जाणवुं. ९ जीवना सर्व प्रदेशथी सर्व कर्म पुद्गळनुं मुकाववुं ते मोक्ष ने तेज सिद्धपणुं ए निश्चयमोक्ष ते सिद्ध, ते सिद्धने विषे प्रवर्तनरूप व्यवहार नथी. अकम्मस्सववहारोनविज्जइ, ए नव पदार्थनुं निश्चय व्यवहारपणुं कर्युं, ए प्रमाणे द्रव्यभाव नय निक्षेपादिक पुर्वोक्त चाळीस बोल नवे पदार्थ उपर उतारवा.

रहे त्यार पछी सेवाभक्तीना करनार चार जणा तपशा करे, ज्यारे ते तपशा करे त्यारे पुर्वे ने चार जणा तपशा करनार ते तेनी सेवाभक्ती करे अने एक वांचनाचार्य रहे, एवी रीते छ महीना सुधी तपशा पुर्ण कर्या बाद वांचनाचार्य ते तपशा करवा पेशे त्यारे आठ जणा तेनी सेवाभक्ती करे एवी रीते छ महीना सुधी वांचनाचार्य तपशा करे, ए एकंदर अठार महीना सुधीनो तप जाणवो ते त्रीजुं परिहार विशुद्ध चारित्र जाणवुं) ४ सुक्ष्म संपराय चारित्र (ते दशमे गुणठाणे सुक्ष्म लोभनो उदय तेथी चोथुं सुक्ष्म संपरायचारित्र जाणवुं ॥३२॥

अर्थः–अ० सोल कषायादिक अठावीस मोहनी कर्मनी प्रकृति सत्ता तथा उदयभाव रहित ने चारित्र ते अ० पांचमुं यथाख्यात चारित्र कहिए छ० ११ मे तथा बारमे जीव ठाणे छद्मस्थने वा० अथवा १३ मे १४ मे जीवठाणे जि० केवलीने होय ए० ए पांच चारित्र च० कर्मना समोहने रि० टाळो क० करे चा० चारित्र हो० होय एवुं आ० कह्यो तिर्थंकर देवे ॥ ३३ ॥

मूलः–अकसाय–अहक्खायं छउमत्थस्स जिणस्स वा ।
एयं चयरित्तकरं चारित्तं होइ आहियं ॥ ३३ ॥

गाथा ३३ भावार्थः–पांचमुं यथाख्यात चारित्र ते मोहनी कर्मनी अठावीस प्रकृति सत्तामां होय पण उदयभावमां न होय ते ११ मे १२ मे गुणठाणे छद्मस्थने होय तथा तेरमे गुणठाणे [illegible]
ए पुर्वोक्त पांच चारित्र कर्मना समुहने क्षय [illegible]
अर्थः–रहे तप कहेछे–

मूलः—नत्थि चरित्तं सम्मत्तविहूणं दंसणे उ भइयव्वं ।
सम्मत्तचरित्ताइं जुगवं पुव्वं च सम्मत्तं ॥ २९ ॥

गाथा २९ भावार्थः—हवे समकितनुं महत्वपणुं कहे छे, समकित विना चारित्र नहि अने ज्यां सम-
कित होय त्यां चारित्रनी भजना (अर्थात चारित्र होय अथवा न होय) समकित अने चारित्र साथे आवे
तेपण प्रथम समकित आवे ने पछी चारित्र आवे ॥२९॥

अर्थः—ना० नहि दं० समकित रहित पुरुषने ना० ज्ञान ना० ज्ञान वि० विना न० न हु० होय च० चारित्रना
गु० गुण ॥ भ० चारित्र रहित पुरुषने न० नहि मो० कर्मथी मुक्तावुं ॥ न० न होय अ० कर्म अण मुंकाणा
पुरुषने ॥ नि० मुक्तिपद नहीं ॥ ३० ॥

मूलः—नादंसणिस्स नाणं नाणेण विणा न हुन्ति चरणगुणा ।
अगुणिस्स नत्थि मोक्खो नत्थि अमोक्खस्स निव्वाणं ॥ ३० ॥

गाथा ३० भावार्थः—समकितरहितने ज्ञान न होय, अने ज्ञान विना चारित्रना गुण न होय, अने चारि-
त्रना गुण विना कर्मथी मुकावुं न होय, अने कर्मथी मुक्त नथी थया तेने निर्वाण (सिद्ध) पद नहि. ॥३०॥

अर्थः—हवे समकितना आठ आचार कहे छे ॥ नि० जिन वचनने विषे संका रहित होय॥ नि० जिन
मत अने पर मत ए बेहु सरिखा न वांछे न जाणे ॥ नि० धर्मना फलनो संदेह रहित होय अ० मतमतांतरना
आडंबर तथा ऋद्धि २ परतणा दि० देखी भमुह मुमाय नहि ॥ ग० बली किंगरे पण केहनो मारण परे हुइये एप मुह

छेदोपस्थापन । भ० होय बी० बीजो चारित्र थयो प० परिहार वि० विशुद्धनामा चारित्र त्रीजुं कोइ नव विशेषे छे जघन्यनो ओगणत्रीस वरस पछे आवे तेवारे अने उत्कृष्टो पुर्व कोडि आउषो पर्यंत रहित ते जघन्य नव पुर्वनी त्रीजी वस्तु भण्यो होय उत्कृष्टा नव पुर्व पुरां ते पण चरमतिर्थंकरने सासने होय सु० चोथो चारित्र सुक्ष्म संपराय दसमे गुणठाणे होय सुक्ष्म सातलोभसंपराय. संजल लोभनो उदय न० ते माटे सूक्ष्म संपराय कहीए न० नथी ॥ ३२ ॥

मूलः—सामाइयत्थ पढमं छेओवट्ठावणं भवे बीयं ।
परिहारविसुद्धीयं सुहुमं तह संपरायं च ॥ ३२ ॥

गाथा ३२ भावार्थः—हवे त्रीजो चारित्रमार्ग कहेछे, १ सामायक चारित्र, २ छेदोप स्थापनीय चारित्र (अतिचार सहीत तथा दीक्षा लीए त्यांथी जघन्य सात दीवसे, मध्यम चार महीने ने उत्कृष्टथी छ महीने अवश्यमेव पंच महाव्रत आरोपण करावतां तेहने विषे आत्माने स्थीर करवो तथा ए मार्गने जाव जीव सुधी आराधवो ते चारित्र पेहलाने छेदो निर्पंकरने वारे होय), ३ परिहार विशुद्ध चारित्र (ते जघन्य तो ओगणत्रीस वर्ष पछीनो अने उत्कृष्टो क्रोड पुर्वना आयुष्यवाळो अने जघन्य तो नवमा पुर्वनी त्रीजी आचार वस्तु भणेलो होय अने उत्कृष्टो नव पुर्व पुरां भण्यो होय तेवा नव जणा गुरुनी आज्ञा मागीने गच्छ बाहीर नीकळीने तपश्चर्या करवा जाय ते एवी रीते के चार जण तपस्यामां वेसे अने चार तेनी सेवामक्ती करे अने एक वाचनाचार्य । पछी कमतीमां कमती तपश्चा करे तो वर्षाऋतुमां अठम अठमनां पारणां करे अने शीत (शीयाळो) ऋतुमां छठ छठनां पारणां करे अने उष्णऋतुमां एकांतर उपवास करे, चार जणा ६ महीना सुधी तपश्चा करी

सूत्रना अर्थ चिंतवे २२ ॥ ध० धर्मकथा कहे २३ ॥ सु० सिद्धांतनी आ० आराधना करे २४ ॥ ए० एकाग्र म० शुभ मननी सं० स्थापना करे २५ ॥ सं० सत्तर भेदे संजम २६ त० तप बार भेदे २७ ॥ वो० कर्मनुं टाळवुं २८ ॥ सु० विषय सुखनो टालवो ॥ २९ ॥ अ० अप्रतिबंधपणो ३० ॥ वि० स्त्री पसुपंडग सहित स० पाटि पाटल्यादिकनो से०सेववो ३१ ॥ वि० विशेषे विषयथी निवर्ते ३२ ॥ सं० आपणो आण्यो होय जे आहार ते अने बीजा यतिए आण्यो होय ते एकठो करीने वहेंची लेइ ते संभोग कहिये संभोगनो प० पचखाण करे ॥३३॥ उ० उपधी उपगरणनो प० पचखाण करे ३४ ॥ आ० सदोष आहार लेवानो ॥ प० पचखाण करे ३५ ॥ क० कषायना प० पचखाण करे ३६ ॥ जो० अशुभ जोगनुं प० पचखाण करे ३७ ॥ स० शरिरनी ममता मुछा छांडवे करी शरीरनुं प० पचखाण करे ३८ ॥ स० कार्य कामनो करणहार सिष्य ते सखाइ राख· वाना प० पचखाण करे ३९ ॥ भ० भातपाणीनो प० पचखाण करे संथारो करे ४० ॥ स० अन्नादिका· लनो हिंस्यादिक करवानो स्वभाव छे ते स्वभावनुं प० पचखाण करे ४१ ॥ प० मायारहित यतीनुं वेश यतीने आचारे प्रवर्ते ४२ ॥ वे० गुणवंत साधुनो वैयावच करे ४३ ॥ सं० सहित होय स० ज्ञानादिक सर्व गु० गुण ४४ ॥ वी० रागद्वेष रहितपणे प्रवर्ते ॥ ४५ ॥ ख० क्षमासहित प्रवर्ते ४६ ॥ मु० लोभरहित प्रवर्ते ४७ ॥ म० अहंकार रहितपणे प्रवर्ते ॥ ४८ ॥ अ० सरलपणे प्रवर्ते ४९ ॥ भा० शुद्ध अंतःकरण ने भावसत्य ५०॥ क० पडिलेहण प्रमुख क्रिया जेणीविध करवी कहि छे तेम करे ते करणसत्य ५१ ॥ जो० मन वचन कायाना जोग व्यापार स० सरलपणे प्रवर्ते एटले शुभ योग प्रवर्ते ५२॥ म० मन गु०गुप्तपणे प्रवर्ते ५३ ॥ व० वचन

छेदोपस्थापन । भ० होय बी० बीजो चारित्र थयो प० परिहार वि० विशुद्धनामा चारित्र त्रीजुं कोइ तप विशेषे
करे जघन्यो ओगणत्रीश वरस पछे आवे तेवारे पछे उत्कृष्टो पुर्व कोडि आउषो पर्यंत रहित ने जघन नव पुर्वनी
त्रीजी वस्तु भण्यो होय उत्कृष्टा नव पुर्व पुरां ने पण चरमतिर्थंकरने सासने होय गु० चोथो चारित्र सुक्ष्म संपराय
दसमे गुणठाणे होय सुक्ष्म सांपरायं, संजव लोभनो उदय त० ते माटे सूक्ष्म संपराय कहीए च० वली ॥ ३२ ॥

मूलः—सामाइयत्थ पढमं छेओवट्ठावणं भवे बीयं ।
परिहारविसुद्धीयं सुहुमं तह संपरायं च ॥ ३२ ॥

गाथा ३२ भावार्थः—हवे बीजो चारित्रमार्ग कहेछे, १ सामायक चारित्र, २ छेदोप स्थापनीय चारित्र (अतिचार सहीत नवा दीक्षा लीए त्यांथी जघन्य सात दीवसे, मध्यम चार महीने ने उत्कृष्टथी छ महीने अवश्यमेव पंच महाव्रत आरोपण करावतां तेहने विषे आत्माने स्थीर करवो तथा ए मार्गने जाव जीव सुधी आराधवो ते चारित्र पोतानो छेदो निर्धारने वारे होय), ३ परिहार विशुद्ध चारित्र (ते जघन्य सो ओग-णत्रीश वर्ष पहीलो अने उत्कृष्टो क्रोड पुर्वना आयुष्यवाळो अने जघन्य तो नवमा पुर्वनी त्रीजी आचार वस्तु भणेलो होय अने उत्कृष्टो नव पुर्व पुरां भण्यो होय तेवा नव जणा गुरुनी आज्ञा मागीने गच्छ बाहीर नीकळीने तपश्चर्या करवा जाय ते एवीरीते के चार जण तपस्या वेगे अने चार तेनी सेवाभक्ती करे अने एक वांचना-चार्य । वली कमतीमां कमती तपस्या करे तो वर्षाकालमां अठम अठमनो पारणो करे अने शीत (शीयाळो) कालमां छठ्ठनो पारणो करे अने उष्णकालमां एकांतर उपवास करे, चार जणा छ महीना सुधी तपस्या करी

कालपडिलेहणया १५. पायच्छित्तकरणे १६, खमावयणे १७, सज्झाए १८, वायणया १९, पडिपुच्छणया २०, पडियट्टणया २१, अणुप्पेहा २२, धम्मकहा २३, सुत्तस्स आराहणया २४, एगग्गमणसंनिवेसणया २५, संजमे २६, तवे २७, वोदाणे २८, सुहसाए २९, अप्पडिबद्धया ३०. विवित्तसयणासणसेवणया ३१, विणियट्टणया ३२, संभोगपच्चक्खाणे ३३. उवहिपच्चक्खाणे ३४, आहारपच्चक्खाणे ३५, कसायपच्चक्खाणे ३६, जोगपच्चक्खाणे ३७. सरीरपच्चक्खाणे ३८, सहायपच्चक्खाणे ३९, भत्तपच्चक्खाणे ४०, सब्भावपच्चक्खाणे ४१, पडिरूवणया ४२, वेयावच्चे ४३, सव्वगुणसंपुण्णया ४४, वीयरागया ४५, खन्ती ४६, मुत्ती ४७, मद्दवे ४८, अज्जवे ४९, भावसच्चे ५०, करणसच्चे ५१, जोगसच्चे ५२, मणगुत्तया ५३. वयगुत्तया ५४. कायगुत्तया ५५, मणसमाधारणया ५६, वयसमाधारणया ५७. कायसमाधारणया ५८, नाणसंपन्नया ५९, दंसणसंपन्नया ६०, चरित्तसंपन्नया ६१. सोइन्दियनिग्गहे ६२, चक्खिन्दियनिग्गहे ६३, घाणिन्दियनिग्गहे ६४, जिब्भिन्दियनिग्गहे ६५. फासिन्दियनिग्गहे ६६, कोहविजए ६७, माणविजए ६८, मायाविजए ॥

[illegible]विजए ७१. लोभे ७२. अकम्मया ७३.

महावीर देव का० काश्यप गोत्रीए ॥ स्वयमेव ए अध्ययन प० कर्युं ॥ ज० जे अध्ययनने स० साचे मने श्र० श्रद्दीने ॥ प० प्रतिज आणीने रो० रोचवीने रो० ए अध्ययननेविषे जेम अनुष्ठानने करवा कह्या छे तेम अनुक्रमे अनुष्ठान करवानी अभिलाषा करीने फा० ते अनुष्ठान कायाए करी फरसीने तेरीने पा० पाळी ने नी० ते अनुष्ठान पार पोहचाडीने ॥ कि० ते अनुष्ठानना गुण कहिने ॥ सो० अतिचार रहित शुद्ध अनुष्ठान करीने ॥ आ० ते अनुष्ठान आराधीने ॥ आ० ते अनुष्ठान गुरु आज्ञाए अ० पाळीने ब० घणा जी० जीव ॥ सि० सर्व अर्थनी सिद्धि थावे करी सिझे ॥ बु० लोकालोकना स्वरूपनो जाण होय मु० कर्मथी मूकाय ॥ प० कर्मरूपीया दावानलने उपसमावबे करी शीतलीभूत होय ॥ स० सरिरी मानसी सर्व दु० दुःखनो अं० अंत क० करे ॥ त० ते सम्यक्त्व पराक्रम अध्ययननो अं० बळी ॥ अ० ए आगल कहेशे ते अ० अर्थ ॥ इ० एणे प्रकारे आ० कहिए ॥ तं० ७३ बोल जेमले तेम ज० कहेछे ॥ सं० वैराग्य मोक्ष पहोचवानो अभिलाष १ ॥ नि० विषय उपर अभिलाष रहित २ ॥ ध० धर्म करवाने स० श्रद्धा ३ गु० गुरु सा० साधर्मिकनी शु० भगति करवी ते ४ आ० पापनो आलावु ५ नि० आपणा आत्माना दोष आत्मा साक्षाते पापनी निंदा करे ६ ॥ ग० पापनी निंदा गुरु समीपे करे ७ ॥ सा० सामायक सावद्य पाप निवरती ८ ॥ च० चोवीस तिर्थंकरनी स्तुति करे ९ ॥ व० गुरुने वंदणा करे १० ॥ प० पापथी निवर्तवो ते पडिकमणो ११ ॥ का० काउसग्ग करे १२ ॥ प० पचखाण करे १३ ॥ थ० संध्यानो पडिक-मणुं करना पचखाण करीने पछे नमोथुणं करे ते स्तुति मंगल १४ ॥ का० स्वाध्यायनो काल प्रतिलेखे १५ ॥ पा० प्रायश्चितनो लेवो १६ ॥ ख० खमावबुं ॥ १७ ॥ स० स्वाध्यायनो करवो १८ ॥ वा० सिद्धांतनी वांचणी देवी ॥ १९ ॥ प० पृछादिकोना प्रश्न अर्थ पुछे २० ॥ प० वारंवार फेरिने सिद्धांत शुद्ध २१ ॥ अ०

कालपडिलेहणया १५, पायच्छित्तकरणे १६, खमावयणे १७, सज्झाए १८, वायणया १९, पडिपुच्छणया २०, पडियट्टणया २१, अणुप्पेहा २२, धम्मकहा २३, सुत्तस्स आराहणया २४, एगग्गमणसंनिवेसणया २५, संजमे २६, तवे २७, वोदाणे २८, सुहसाए २९, अप्पडिबद्धया ३०. विचित्तसयणासणसेवणया ३१, विणियट्टणया ३२, संभोगपच्चक्खाणे ३३, उवहिपच्चक्खाणे ३४, आहारपच्चक्खाणे ३५, कसायपच्चक्खाणे ३६, जोगपच्चक्खाणे ३७, सरीरपच्चक्खाणे ३८, सहायपच्चक्खाणे ३९, भत्तपच्चक्खाणे ४०, सब्भावपच्चक्खाणे ४१, पडिरूवणया ४२, वेयावच्चे ४३, सव्वगुणसंपुण्णया ४४, वीयरागया ४५, खन्ती ४६, मुत्ती ४७, मद्दव्वे ४८, अज्जवे ४९, भावसच्चे ५०, करणसच्चे ५१, जोगसच्चे ५२, मणगुत्तया ५३, वयगुत्तया ५४, कायगुत्तया ५५, मणसमाधारणया ५६, वयसमाधारणया ५७, कायसमाधारणया ५८, नाणसंपन्नया ५९, दंसणसंपन्नया ६०, चरित्तसंपन्नया ६१, सोइन्दियनिग्गहे ६२, चक्खिन्दियनिग्गहे ६३, घाणिन्दियनिग्गहे ६४, जिब्भिन्दियनिग्गहे ६५. फासिन्दियनिग्गहे ६६, कोहविजए ६७, माणविजए ६८, मायाविजए ६९, लोहविजए ७०, पेज्जदोसमिच्छादंसणविजए ७१, सेलेसी ७२, अकम्मया ७३,

महावीर देव का० काउस्सग्ग नामाए ॥ स्वरमय ए अध्ययन प० कहुं ॥ ज० जे अध्ययनने ग० गावे मने सा० सहहीने ॥ प० प्रीति आणीने रो० रोमराजीने गो० ए अध्ययननोविषे तेम अनुष्ठानने करवा रूपा छे तेम अनुरूपे अनुष्ठान करवानी अभिलाषा करीने का० ते अनुष्ठान कायार करी करणीने गेरीने ना० नाम ने नी० ते अनुष्ठान पार पोहचाडीने ॥ कि० ते अनुष्ठानना गुण कहिने ॥ सो० अतिचार रहित शुद्ध अनुष्ठान करीने ॥ आ० ते अनुष्ठान आचरीने ॥ आ० ते अनुष्ठान गुरु आज्ञाए ब० पालीने व० वली नी० जीव ॥ सि० सर्व अर्थनी सिद्धि थावे करी सिद्ध ॥ बु० बोधबीजना स्वरूपनो जाण होय मु० कर्मनी मुक्ति ॥ प० कर्मरूपीया दावानलने उपशमाववे करी शीतलीभूत होय ॥ स० सारीरी मानसी सर्व दु० दुःखनो भं० भंग क० करे ॥ न० ते सम्यक्त्व पराक्रम अध्ययननो णं० वली ॥ अ० ए भावज कहेने ते अ० अर्थ ॥ ए० एणे प्रकारे भा० कहिए ॥ तं० ७३ बोल जेमने तेम ज० कहेले ॥ सं० वैराग्य मोक्ष पहोचवानो अभिलाष १ ॥ नि० निश्चय इहां अभिलाष राखि २ ॥ ध० धर्म करवाने स० श्रद्धा ३ गु० गुरु सा० साधर्मिकनी शु० भणी करवी ते ४ जा० जाननो ग्रहवानु ५ नि० आपणा आत्माना दोष आत्मा साखाने पापनी निंदा करे ६ ॥ ग० पापनी निंदा गुरु साखीये करे ७ ॥ सा० सामायक सावद्य पाप निवरती ८ ॥ च० चोवीस तिर्थंकरनी स्तुति करे ९ ॥ व० गुरुने वंदना करे १० ॥ प० पापथी निवर्तवो ते पडिकमणो ११ ॥ का० काउसग्ग करे १२ ॥ प० पचखाण करे १३ ॥ थ० थोथीस तिर्थंकर-मणुं करना पचखाण करीने पछे नमोथुणं करे ते स्तुति मंगल १४ ॥ का० स्वाध्यायनो काल वतिवरते १५ ॥ पा० प्रायश्चितनो लेवो १६ ॥ ख० खमावणुं ॥ १७ ॥ स० स्वाध्यायनो करवो १८ ॥ वा० सिद्धांतनी वांचणी देवु ॥ १९ ॥ प० सुत्रादिकोना शब्द अर्थ पुछे २० ॥ प० वारंवार फेरिने सिद्धांत गणे २१ ॥ म०

गुणे (फेरवे), २२ सूत्रना अर्थ चिंतवे, २३ धर्मकथा कहे, २४ सिद्धांतनी आराधना करे, २५ एकाग्र शुभ मननी स्थापना करे, २६–१७ भेदे संजम पाळे, २७–१२ भेदे तपश्चा करे, २८ कर्मधुं टाळवुं करे, २९ विषयसुख टाळवुं करे, ३० अप्रतिबंधपणुं करे, ३१ स्त्री पशु पंडग (नपुसक) रहीत स्थानक भोगवे, ३२ विशेषे विषय थकी निवर्ते, ३३ पोतानो तथा बीजा साधुनो लावेलो ए वंने वस्त्र आहारादीक भेगो करी वेंची लीये, ते संभोग कहीए, तेहनुं पचखाण करे, ३४ ऊपगरणनां पचखाण करे, ३५ सदोष आहार लेवानां पचखाण करे, ३६ कषायना पचखाण करे, ३७ अशुभ योगना पचखाण करे, ३८ शरिर शुश्रुषा (शोभा) करवारुप शरिरनां पचखाण करे, ३९ कामनो करनार शिष्य ते सखाइयो राखवाना पचखाण करे, ४० आहार पाणीना पचखाण करे, (एटले अणसण करे,) ४१ अनादी काळनो हिंसा करवानो स्वभाव छे, ते स्वभावनां पचखाण करे, ४२ कपटाइ रहीत यतीनो वेश ने यतीने आचारे प्रवर्ते, ४३ गुणवंत साधुनी वैयावच्च करे, ४४ ज्ञानादीक सर्व गुण सहीत होय, ४५ राग द्वेष रहीतपणे प्रवर्ते, ४६ क्षमा सहीत प्रवर्ते, ४७ लोभ रहीत प्रवर्ते, ४८ अहंकार रहीतपणे प्रवर्ते, ४९ शरळ (कपटाइ रहीत) पणे प्रवर्ते, ५० शुद्ध अंतःकरण ते भाव सत्यपणे प्रवर्ते, ५१ जे जे विधीए पडिलेहणा प्रमुख क्रिया करवानी कही छे, तेमज करे ते करण सत्यपणे प्रवर्ते, ५२ मन वचन कायाना जोग व्यापार सत्यपणे प्रवर्तावे, (एटले शुभ जोगे प्रवर्ते,) ५३ पाप थकी मनने निवारीने मन गुप्तीपणे प्रवर्तावे, ५४ वचनने पाप थकी निवारीने वचन गुप्ती प्रमाणे प्रवर्तावे, ५५ कायाने पाप थकी निवारीने काया गुप्ती प्रमाणे प्रवर्तावे, ५६ मनने सत्य भावे स्थापवापणे प्रव-

वचन स० साचे भावे स्वाध्यायादिकनाप थापवापणे मनवोचे ॥ ५७ ॥ का० कायाने साचे भावे स० थाप-वानेविषे प्रवर्तावे ॥ ५८ ॥ ना० श्रुत ज्ञानादिक ज्ञानेकरी ॥ ५९ ॥ दं० सम्यक्त सं० सहितपणे करी ६०॥ च० चारित्र सं० सहितपणे ६१ ॥ सो० श्रोतेंद्रियनो नि० निग्रह ६२ ॥ च० चक्षु इंद्रियनो नि० निग्रह ६३ ॥ घा० नासिका इंद्रियनुं नि० निग्रह करो ६४ ॥ जि० जिव्हा इंद्रिय नि० निग्रह करे ॥ ६५ ॥ फा० फरस इंद्रियनुं नि० निग्रह करे ६६ ॥ को० क्रोधने वि० जीपे ६७ ॥ मा० मानने वि० जीपे ६८॥ मा० मायाने वि० जीपे ॥ ६९ ॥ लो० लोभने वि० जीपे ॥ ७० ॥ पे० राग दो० द्वेष मि० मिथ्यादर्शन ॥ वि० ए तिनने जीपे ॥ ७१ ॥ से० मन वचन कायाना जोग रुंधीने शैलेशी पडिवजे ॥ ७२ ॥ अ० कर्म रहित थइने मोक्षे पहोंचे ॥७३॥

मूलः—सुयं मे आउसं तेण भगवया एवमक्खायं। इह खलु सम्मत्तपरक्कमे नाम अज्झयणे समणेण भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइयं; जं सम्मं सद्दहित्ता पत्तइत्ता रोयइत्ता फासित्ता पालइत्ता तीरित्ता किट्टइत्ता सोहइत्ता आराहित्ता आणाए अणुपालइत्ता बहवे जीवा सिज्झन्ति बुज्झन्ति मुच्चन्ति परिनिव्वायन्ति सव्वदुक्खाणमन्तं करेन्ति। तस्स णं अयमट्ठे एवमाहिज्जइ, तं जहा, संवेगे १, निव्वेए २, धम्मसद्धा ३, गुरुसाहम्मियसुस्सूसणया ४, आलोयणया ५, निन्दणया ६, गरहणया ७, सामाइए ८, चउव्वीसत्थए ९, वन्दणे १० पडिक्कमणे ११, काउस्सग्गे १२, पच्चक्खाणे १३, थयथुईमङ्गले १४,

त्रीजे भ० भवे पु० पण ॥ न० नही अ० अतिक्रमे त्रीजे भवे मोक्ष पहोंचे निश्चे ते उपसमवालो ॥ १ ॥

मूलः—संवेगेणं भन्ते जीवे किं जणयइ ! संवेगेणं अणुत्तरं धम्मसद्धं जणयइ, अणुत्तराए धम्मसद्धाए संवेगं हव्वमागच्छइ, अणन्ताणुबन्धिकोहमाणमायालोभे खवेइ, कम्मं न बन्धइ, तप्पच्चइयं च णं मिच्छत्तविसोहिं काऊण दंसणाराहए भवइ, दंसणविसुद्धाए णं अत्थेगई तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झई, सोहीए य णं विसुद्धाए तच्चं पुणो भवग्गहणं नाइक्कमइ. ॥१॥

भावार्थ गद्यः—१ हवे ७३ बोलनो विस्तार कहे छे, १ शिष्य पुछतो हवो के हे पुज्य ? वैराग्य ते मोक्ष पामवानी अभिलाष करतो थको जीव शुं गुण उपार्जे. !!! हवे गुरु कहेता हवा के हे शिष्य ? वैराग्य ते मोक्ष पोहोंचवानी अभिलाषाए करी उत्तम धर्म करवानी श्रद्धा निपजावे अने उत्तम धर्मनी श्रद्धाए करीने शीघ्र वैराग्य आवे अने शीघ्र वैराग्य आववाथी अनंतानुबंधी (जीवंत पर्यंत रहे एवा) क्रोध, मान, माया (कपटाइ), लोभ तेहनो क्षयोपशमभाव करे अने चोथे गुणठाणे उदय आवेल होय, ते क्षय करे अने आठमे गुणठाणे उपसमावे अथवा क्षय करे तेथी अशुभ प्रकृतिरुप नवां कर्म न बांधे अने ते कर्मना क्षय निमीते मिथ्यात्वनो क्षय करीने क्षायक सम्यक्त्वनो आराधिक होय, पछी समकितनी शुद्धिए तथा अत्यंत समकित निर्मळपणे करीने क्षायकवाळो अकेक भव्य जीवतो तेहज भवे मोक्ष जाय तेवा छे, अत्यंत निर्मळ समकितनी शुद्धिए करी कदाचित तेहज भवे मोक्ष न पोहोंचे तो उपशम समकितवाळो त्रीजो भव अतिक्रमे (ओळंघे)

भावार्थ गद्यः–सुधर्मास्वामी जंबुस्वामी प्रत्ये आमंत्रण

जंबु ? श्रमण भगवंत महावीरदेवे कहेलुं ते आगळ कहीशुं ने प्रमाणे में सांभळ्युं छे, काश्यप गोत्री श्रमण भगवंत महावीरदेवे पोतेज आ जिनसासनमांविषे सम्यकत्व पराक्रमनामे अध्ययन कहुं. ते अध्ययन सांभळे मने श्रद्धिने, प्रतीत आणीने रुचवीने (ए अध्ययनने विषे जेम अनुष्ठान करवां कह्यां छे, तेम अनुष्ठाने करवानी अभिलाषाए करीने) ते अनुष्ठान (क्रिया) कायाए सेवीने, पाळीने, ने अनुष्ठान पार पोहोंचाडीने, ने अनुष्ठानना गुण कहीने, अतिचार रहित शुद्ध अनुष्ठान करीने, ते अनुष्ठान आराधीने, ने अनुष्ठान गुरुनी आज्ञाए पाळीने, घणा जीव सर्व अर्थनी सिद्धि थाये करीने सिझे, लोकालोकना स्वरुपनां जाण होय, कर्मथी मुकाय, कर्मरुपी दावानळने ओलवीने शीतलीभुत थाय, शारिरीने मानसी सर्व दुःखनो अंत करे, ते सम्यकत्व पराक्रमना आगळ कहेशे तेवा ७३ बोल जेम अनुक्रमे कहेल छे तेम कहे छे.

भावार्थ गद्यः–१ संवेग ने मोक्ष पोहोंचवानी अभिलाषा, २ विषय उपर अभिलाष रहितपणुं, ३ धर्म करवानी श्रद्धा, ४ गुरु स्वधर्मिनी सेवा भक्ति करवी, ५ पापनुं आलोवयुं (कहेवुं), ६ आपणा आत्माना दोषनी आपणा आत्मा संघातेज निंदा करवी, ७ गुरु समीपे पापनी निंदा करे, ८ सामायक ने सावद्य पापनी विरती (नियम) करे, ९ २४ तिर्थंकरनी स्तुती करे, १० गुरुने वंदणा करे, ११ पापथकी निवर्तवुं ते पडीकमणुं करे, १२ काउसग्ग करे, १३ पचखाण करे, १४ संध्यावेळाए पडिकमणुं करीने पछी नमोथुणं कहे, ते स्तुति मंगळ करे, १५ स्वाध्यायनो काळ जोतिलेखे, १६ प्रायश्चितनुं लेवुं, १७ समाववुं, १८ स्वाध्यायनुं करवुं, १९ सिद्धांतनी वांचणी दिए, २० सुत्रार्थी-दिकनां प्रश्न पुछे, २१ पारंवार [illegible]

अर्थः–ध० धर्म करवानी स० श्रद्धाए णं० करी भ० हे पुज्य जी० जीव किं० किस्यु ज० उपराजे ध० धर्म करवानी स० श्रद्धाए णं० करी सा० सातावेदनी थकी उपना सो० सुख तेहने विषे र० राग करतो थको वि० वैराग्य पामे ॥ आ० गृहस्थपणो च० णं० वली च० छांडे ॥ अ० यति णं० छतो जी० जीव ॥ सा० शारिरी मा० मानसि दु० दुख ॥ छे० छेदन खडगादिक भे० भेदन भालेकरी ॥ सं० इष्टनो विजोग अनिष्टनो संजोग ॥ सो० तेह क०करी तेणे दुपने छेदवे करी ॥ अ० सर्व पीडारहित च० वली सु० सुखने नि० पामे ॥ ३ ॥

मूलः–३ धम्मसद्धाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ ? धम्मसद्धाए णं मायासोक्खेसु रज्जमाणे विरज्जइ. आगारधम्मं च णं चयइ, अणगारिए णं जीवे सारीरमाणमाणं दुक्खाणं छेयणभेयणसंजोगाईणं वोच्छेयं करेइ अव्वाबाहं च सुहं निव्वत्तेइ. ॥ ३ ॥

भावार्थ ३ गद्यः–शिष्य पुछतो हवो के हे पुज्य ? धर्म करवानी श्रद्धाए करीनें जीव शुं फळ उपार्जे ? हवे गुरु उत्तर कहेता हवा के हे शिष्य ? धर्म करवानी श्रद्धाए करी, शाता वेदनी थकी जे उपनां सुख तेहने विषे राग करतो थको तथी वैराग्य पामे अने ते सुखथी वैराग्य पामवाथी ग्रहस्थपणुं छांडी यति थाय अने यति थवाथी शारीरिने मानसी एवां बे प्रकारना छेदन (खडगादीके) भेदन (भालादीके) दुःख अने अनिष्टनो संयोग ने इष्टनो वियोग, एवां पुर्वनां दुःखनुं छेदन करे अने नवां न बांधे, पछी ते दुःख छेदवाथी सर्व पीडा रहीत मुक्तिना सुख पामे ॥३॥

करने विषे स्थापनाएणे प्रवर्तावे, ५९ श्रुत ज्ञानादीक ज्ञाने करी सहीत होय, ६० सम्यक्त्वे करी सहीत होय, ६१ चारित्र सहित होय, ६२ श्रोतेंद्रि (कान) निग्रह करे, ६३ चक्षुरिंद्रिनो (आंखनो) निग्रह करे, ६४ घ्राणेंद्री (नासिका) नो निग्रह करे, ६५ रसेंद्री (जीभ) नो निग्रह करे, ६६ स्पर्शेंद्रीनो निग्रह करे, ६७ क्रोधने जीतवे करी, ६८ मानने जीतवे करी, ६९ कपटाइने जीतवे करी, ७० लोभने जीतवे करी, ७१ रागद्वेष अने मिथ्यात्व ए त्रणने जीतवे करी, ७२ मन वचन कायाना योगने रुंधीने शैलेशी अवस्था धारण करवे करी, ७३ कर्म रहित थइने मोक्ष पोहोंचवे करीने ए समकित पराक्रमना ७३ बोल नाम रूप संक्षेपे कह्या.

अर्थः-सं० वैराग्य मोक्षे पहोंचवानो अभिलाष तेणे करी भं० हे पुज जी० जीव कि० किस्यो गुण ज० उपजे ॥ एम शिष्ये पुछे छते हवे गुरु कहे छे ॥ सं० वैराग मोक्ष पहोंचवानी अभिलाषाए करी अ० अथान ध० धर्मनी स० श्रद्धा ज० उपजे ॥ अ० अथान ध० धर्मनी स० श्रद्धाए करीने ॥ सं० वैराग्य ह० शिघ्र आ० आवे छते ॥ अ० अनंतानुबंधीया ॥ को० क्रोध मा० मान मा० माया लो० लोभ क्ष० टाली ॥ खओप समभावेणे उदय आव्यो ते खपावी योगे जीव ठाणे तथा आठमे उपसमावे ॥ अथवा खवेइ० क्षय करे अशुभ पकृतिना नवा क० कर्म न० न ब० बांधे ॥ त० ते कर्मना क्षय निमित्त न० पं० वली मि० मिथ्यात्वनुं वि० क्षय का० करीने ॥ दं० क्षायक समकीतनुं आ० आराधक भ० होय ॥ दं० एटले सात आठ भव उलंघे नहि ॥ ए सगुण जाणवुं ॥ आगली उत्कृष्टि अने मध्यम आराधनाना फल कहेछे ॥ दं० दर्शननी वि० विशुद्धेकरी वि० अत्यंत निर्मलाए करी पं० वली ॥ अ० छे एक कोइएक भव्य जीव ॥ ते० तेणेज भ० भवे सि० मोक्ष जाय क्षायक वाल्यो ॥ सो० दर्शननी शुद्धिए करी ब०पं०वली ॥ वि० अत्यंत निर्मलाए करी कदाच तेणे भवे मोक्ष न पहोंचे ॥ त०

सेवा भक्ती करवे करी, विनय भक्ति अंगीकार करे, विनय भक्ति अंगीकार करवाथी ते जीव अति सम्यक्-त्वादीकना लाभनो विनाश करनार, एवी असातना न करे, असातना न करवाथी नारकीनी, तिर्यंचनी, मनुष्य (चंडाळादीक) नी, देवना (किल्बीषीयादीक) नी दुरगती निरंतर रुंधे अने गुरुनी किर्ती गुरुना गुणनुं दीपावधुं, गुरुनी भक्तिने गुरुनुं बहु मानपणुं करवाना गुण उपराजे, गुरुनी किर्तीए करी, गुरुना गुण दीपावबे करी गुरुनी भक्तीये करी, गुरुना गुणनुं बहु मानपणुं करवाथी ते जीव मनुष्यने देवतानी निरंतर सद्गती बांधे. अने मोक्ष सद्गतिनो मार्ग जे ज्ञान दर्शनादीक तेहने शुद्ध करे, मोक्ष सद्गतिनो मार्ग ज्ञान दर्शनादीक शुद्ध करवाथी प्रसन्त (वखाणवा लायक) विनय मुळ एवां श्रुत ज्ञानादीकनां सर्व कार्य निपजावे, पछी श्रुत ज्ञानादीक सर्व कार्य विनयवंत करे ते बीजा पण घणा जीवने विनयने विषे स्थापे. ॥ ४ ॥

अर्थः–आ० आलोयवे णं० करी । भं० हे पुज्य जी० जीव किं० किसु ज० उपराजे हवे गुरु कहेछे । आ० आलोयवे णं० करी मा० माया अने नि० नियाणो मि० मिथ्या द० दर्शन स० शल्यनीपरे ते केहवी छे ते कहेछे मो० मोक्ष म० मार्गनी वि० विघ्नना करणहार । अ० अनंत सं० संसार व० वधारणहारने । उ० उधरवा क० करे उधरवा लेइ उ० सरलपणो च० पुरणे ज० उपराजे ॥ उ० सरलपणो । प० पडिवज्यों छे य० ण० जेणे जी० जीव । अ० माया रहित इ० स्त्री वे० वेदने न० नपुंसक वे० वेद च० पुरणे न० न चं० बांधे पु० पुर्वे व० वीवेदना नपुंसकवेदना कर्म बांध्या होय च० णं० ते नि० निर्जरे ॥ ५ ॥

...पणे प्रवर्त्तावे, ५९ श्रुत ज्ञानादीक ज्ञाने करी सहीत होय,
६१ चारित्र सहित होय, ६२ श्रोतेंद्रि (कान) निग्रह करे, ६३ चक्षुरिंद्रिनो (आखनो) निग्रह करे, ६४ घ्राणेंद्री
(नासिका) नो निग्रह करे, ६५ रसेंद्री (जीभ) नो निग्रह करे, ६६ स्पर्शेंद्रीनो निग्रह करे, ६७ क्रोधने
जीतवे करी, ६८ मानने जीतवे करी, ६९ कपटाइने जीतवे करी, ७० लोभने जीतवे करी, ७१ रागद्वेष अने
मिथ्यात्व ए त्रणने जीतवे करी, ७२ मन वचन कायाना योगने रुंधीने शैलेशी अवस्था धारण करवे करी,
सर्व कर्म रहित थइने मोक्ष पहोंचवे करीने ए समकित पराक्रमना ७३ बोल नाम रूप संक्षेपे कह्या.

अर्थः—सं० वैराग्य मोक्ष पहोंचवानो अभिप्राय तेणे करी भं० हे पुत्र नी० जीव हिं० हितनो गुण न० उप-
गार ॥ एम शिष्ये पुछे छते हवे गुरु कहे छे ॥ सं० वैराग मोक्ष पहोंचवानी अभिलाषाए करी अ० प्रधान
प० धर्मनी स० श्रद्धा न० उपराजे ॥ अ० प्रधान प० धर्मनी स० श्रद्धाए करीने ॥ सं० वैराग्य ह० शिघ्र आ०
भारे उपजे ॥ अ० अनंतानुबंधीया ॥ को० क्रोध मा० मान मा० माया लो० लोभ ख० टाली ॥ खभोप
समगारोपणे उदय आव्यो ते खपावी खोये जीव थाये तथा आठमे उपसमावे ॥ अथवा खवेइ० क्षय करे अशुभ
कर्मनिरा न० कर्म न० न प० पंचे ॥ न० ते कर्मना क्षय निमित्त च० पं० वली मि० मिथ्यात्वनुं वि०
पा० करीने ॥ दं० सायक समकीतनुं आ० आराधक भ० होय ॥ दं० एटले सात आठ भव उल्लंघे नहि ॥
गुणे जाणवुं ॥ जघन्ये उत्कृष्टि भने मध्यम आराधनाना फल कहेले ॥ दं० दर्शननी वि० विशुद्धे करी वि०
न निर्मलाए करी पं० वली ॥ अ० छे एक कोइए क भव्य जीव ॥ ते० तेणेज भ० भवे सि० मोक्ष जाय सायक
॥ सो० दर्शननी शुद्धिए करी प० पं० वली ॥ वि० अत्यंत निर्मलाए करी कदाच तेणे भवे मोक्ष

मूलः–६ निन्दणयाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ ? निन्दणयाए णं पच्छाणुतावं जणयइ, पच्छाणुतावेणं विरज्जमाणे करणगुणसेढीपडिवन्ने य णं अणगारे मोहणिज्जं कम्मं उग्घाएइ ॥ ६ ॥

भावार्थः ६ गद्यः–शिष्य पुछतो हवो क हे गुरु! पोताना आत्माना दोष संघात पापनी निंदा करवे करी जीव शुं फळ उपरांजे ? ते वार गुरु कहेता हवा के हे शिष्य ? पापनी निंदाए करी अरेरे ? में ए मुंडे कृत्य कर्युं एहवो पश्चाताप थाय अने पश्चाताप करवे करी वैराग्य पामे अने वैराग्य पामनाथी पुर्वे जे करणी नथी करी, ते अपुर्व करणी गुणनी (कर्म क्षय रुपणी) क्षरुप श्रेणी अंगीकार करे अने अपुर्व करणे गुणनी श्रेणी (क्षयक श्रेणी) अंगीकार करी छे जेणे ते अणगार (साधु) दर्शन मोहनिकर्मादीक आठ कर्मने क्षयकरे ॥६॥

अर्थः–ग०पापनी निंदा गुरुनी समीपे णं०करवे भं०हे पुज्य जी०जीव कि० किस्यो ज०उपराजे । हे गुरु कहे छे ॥ ग० आपणा आत्मानो दोष पापनी निंदा गुरुनी समीपे करवे करी ॥ अ० आपणा आत्माना हिलवानो स्थानक ज० उपराजे ॥ अ० सघळे हिलवानो स्थानक ग० पामे णं०हुता जी०जीव । अ०असंस्त जी० मन वचन कायाना जोगथी नि० निवर्ते ॥ प० प्रसस्त मन वचन कायाना जोगे य० वळी प० प्रवर्ते प० प्रसस्त मन वचन कायाना जो०जोग । प० पडिवज्यो छे जेणे य० णं० वळी ॥ अ० अणगार पहले गुण जोग

अथः–नि० विषय उपर अभिलाष रहितपणे करी भ० हे भगवंत जी० जीव किं० शुं ज० उपराने एम शिष्ये पुछे छते ॥ हवे गुरु कहे छे नि० विषय उपर अभिलाष रहितपणेकरी ॥ दि० देवता मा० मनुष्य ते० तिर्यंच संबंधीना का० कामभोगनेविषे ॥ नि० निर्वेदपणो विषय उपर अरुचिपणो ह० शिघ्र आ० आवे स० सर्व वि० विषयादिक शब्दादिक विषयनेविषे वि० वैराग्य पामे स० सर्व वि० विषयने विषे वि० वैराग पामतो थको आ० आरंभ अने प० परिग्रहनुं त्याग क० करे ॥ आ० आरंभ अने प० परिग्रहनुं प० त्याग क० करतो थको ॥ सं० मिथ्यात्व संसारमांहि भमवानो म० मार्ग छो० छेदे ॥ सि० मोक्षनो म० मार्ग प० पडिवज्यो भ० होय ॥ २ ॥

मूलः–२ निव्वेदेणं भन्ते जीवे किं जणयइ ? निव्वेदेणं दिव्वमाणुसतेरिच्छिएसु कामभोगेसु निव्वेयं हव्वमागच्छइ, सव्वविसएसु विरज्जइ, सव्वविसएसु विरज्जमाणे आरम्भपरिच्चायं करेइ, आरम्भपरिच्चायं करेमाणे संसारमग्गं वोच्छिन्दइ सिद्धिमग्गपडिवन्ने भवइ. ॥ २ ॥

भावार्थ २ सहः–शिष्य पुछतो हवो के हे पुज्य ! विषय उपर अभिलाष रहितपणे करीने जीव शु फळ उपार्जे ? ?? हवे गुरु उत्तर कहेता हवा के हे शिष्य ? विषय उपर अभिलाष रहितपणे करीने देवता मनुष्य ने तिर्यंचना कामभोगनेविषे निराभिलाषपणुं शीघ्र आवे, एवा विषयने विषे निराभीलाषपणे करीने सर्व शब्दादिक विषयनेविषे वैराग्य पामे, सर्व विषयनेविषे वैराग्य पामतो थको आरंभ ने परिग्रहनो त्याग करे, आरंभ ने परिग्रह त्यागवे करीने संसारमांही परिभ्रमण करवानो मार्ग मिथ्यात्वादिकनो छे तेहने छेदे, ते छेदवाथी पछी मोक्ष मार्ग प्रतिपन्न होय ॥ २ ॥

जणयइ. अपुरेक्खारगए णं जीवे अप्पमत्तेहिंतो जोगेहिंतो निगच्छइ. पसत्थे य पडिवज्जइ, पसत्थजोगपडिवन्ने य णं अणगारे अणन्तघाइपज्जवे खवेइ ॥ ७ ॥

भावार्थः ७ गप्पः—शिष्य पुछतो हवो के हे गुरु ? गुरुनी समीपे पोताना पापनी निंदा करतो थको जीव शुं फल उपजावे ? ते वार गुरु उत्तर कहेता हवा के हे शिष्य ? आपणा आत्मारा दोषनी निंदा गुरुनी समीपे करवाथी आपणा आत्माने हीनपणानुं स्थानक उपजावे अने सगळे हीनपणा स्थानक पामे थके अप्रशस्त (अदा) मन वचन कायाना योगथी निवर्ते अने प्रशस्त (सारा) मन वचन कायाना योगे प्रवर्ते अने प्रशस्त मन वचन कायाना योग अंगीकार करेल छे, ते अणगार, अनन्त (सम्पूर्ण) ज्ञानने विनाशकारी (पहला ज्ञान दर्शन उपजतां आवरणीलना करनार) पहला जे कर्म तेहनो पुद्गलोने क्षयोपशमे ॥ ७ ॥

अर्थः—सा० सामायक करवे करी भं० हे पूज्य जी० जीव किं० किम् शुं० उपजावे हवे गुरु कहेछे। सा० सामायक करवे करी सा० सावद्य जो० जोग ने आश्रव थको। निरवद्य जोग ने संवर ति० तिसतो शुं० उपजावे॥८॥

मूल.—८ सामाइएणं भन्ते जीवे किं जणयइ ? सामाइएणं सावज्जजोगविरइं जणयइ ॥८॥

भावार्थः ८ गप्पः—शिष्य पुछता हवा के हे गुरु ? सामायक करवे करी जीव शुं फळ उपजावे ? ते वार गुरु उत्तर कहेता हवा के हे शिष्य ? सामायक करवे करी सावद्य योगनी विरती उपजावे ॥ ८ ॥

अर्थः—स० सउवीस तीर्थंकरने स० स्तवने करी भं० हे पुज्य जी० जीव किं० शुं० उपजावे ॥ हवे

जीव किं० शुं ज० उपराजे ॥ हवे गुरु उत्तर कहेछे । थ० स्तवन स्तुति मंगलेकरी । ना० ज्ञान द० दर्सन च० चारित्ररुपीओ बो० बोधिनोलाभ ज० उपराजे ॥ ना० ज्ञान दं० दर्शन च० चारित्र बो० बोधिनो ला० लाभ तेणे करी सं० सहित होय जे य० णं० वळी हे भगवान जी०जीव ॥ अ०मोक्षनी आराधना करे अथवा क० वारमे देवलोकेए ग्रैवेयक ५ अनुत्तर विमांन तेहने विषे उ०उपजवानी आ० आराधनानो आ०आराधक होय॥१४॥

मूलः–१४ थयथुइमङ्गलेणं भन्ते जीवे किं जणयइ ? थ° नाणदंसणचरित्तबोहिलाभं जणयइ, नाणदंसणचरित्तबोहिलाभसंपन्ने य णं जीवे अन्तकिरियं कप्पविमाणोववत्तिगं आराहणं आराहेइ ॥ १४ ॥

भावार्थ १४ गद्यः–शिष्य पुछतो हवो के हे पुज्य ? नमोथुणं ते स्तुति मंगळ कहीए, ते गणवाथी जीव शुं फळ उपराजे, ते वारे गुरु उत्तर कहेता हवा के हे शिष्य ? स्तुति मंगळे करीने ज्ञानदर्शन चारित्ररुप बोध बीज लाभ उपराजे ? अने ज्ञानदर्शन चारित्ररुप बोध बीज लाभ तेणे करी सहीत होय ते जीव मोक्षनी आराधना करे अथवा बार देवलोक नव ग्रैवेयक ने पांच अनुतर विमानने विषे उपजाववानी आराधना आराधे ।१४।

अर्थः–का० स्वाध्यायननो काल प० । प्रतिलेषवे णं०करी भं०हे पुज्य जी०जीव किं०किस्युं ज०उपराजे । हवे गुरु उत्तर कहेछे । का० स्वाध्यायनो काल प० प्रतिलेखवे करी । ना०ज्ञानावर्णि क०कर्मने ख०पषावे ॥१५॥

मूलः–१५ कालपडिलेहणयाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ? का° नाणावरणिज्जं कम्मं खवेइ ।१५।

भावार्थ १५ गद्यः–शिष्य पुछतो हवो के हे पुज्य ? स्वाध्यायनो काल प्रतिलेखवे करी जीव शुं फळ

अर्थः-स० पमाववे पं०करीने भ०हे पुज्य जी०जीव किं०किस्यु फल ज०उपराजे हवे गुरु उत्तर कहेछे॥ स० पमाववे करी प० चित्तनुं प्रसन्न रूप भा० अभिप्राय ज० उपराजे प० चित्तनो प्रसन्नरूप भा० अभिप्राय उ० पाम्यो थको य०वळी स०सर्व पा०प्राण भू० भूत जी० जीव स० सत्वने विषे मे० हेत चिंतव्या रुप मैत्री भा०भाव उ०उपराजे। मे०मैत्रि भा०भाव उ०पाम्यो या०छतो जी०जीव कि०किस्यु ज उपराजे हवे गुरु उत्तर कहेछे भा०भावनुं वि० विशुद्धपणो राग द्वेष रहितपणो का०करीने नि०इह लोकादि सातभय रहित भ०होय ॥१७॥

अध्य०

॥ २० ॥

मूलः-१७ खमावणयाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ ? खमावणयाए पल्हायणभावं जणयइ, पल्हायणभावमुवगए य सव्वपाणभूयजीवसत्तेसु मित्तीभावमुप्पाएइ, मित्तीभावमुवगए यावि जीवे भावविसोहिं काऊण निब्भए भवइ ॥ १७ ॥

भावार्थ १७ गद्यः-शिष्य पुछतो हवो के हे पुज्य ? कोइ जीव साथे वैरभाव होय तेने खमाववे करी जीव शुं फल उपराजे ? ते वारे गुरु कहेता हवा के हे शिष्य ? खमाववे करी चित्तनुं प्रशांत भावपणुं पामे अने चित्तनुं प्रशांतपणुं पाम्यो थको सर्व प्राणीभूत जीव सत्वने विषे हित चिंतव्या रुप भाव उपजावे अने मैत्री भाव पाम्यो थको जीव भावनुं निर्शुद्धपणुं ते राग द्वेषरहितपणुं करीने इह लोकादीक ७ भयरहीत होय ॥१७॥

अर्थः-स० स्वाध्याय करवे करी । भं० हे पुज्य जी० जीव किं० किस्युं ज० उपराजे हवे गुरु उत्तर कहेछे ॥ स० स्वाध्याय करवे करी ॥ ना० ज्ञानावरणी क० कर्म ख० पखावे ॥ १८ ॥

॥ ३३५ ॥

मूलः-१८ सज्झाएणं भन्ते जीवे किं जणयइ ? सज्झाएणं नाणावरणिज्जं कम्मं खवेइ॥१८॥

अर्थः-प० सुत्रअर्थादिक प्रश्न पुछवे णं०करी भं०हे भगवन पूज्य जी०जीव किं०शुं फल ज०उपराजे। हवे गुरु उत्तर कहेछे। प०सुत्र अर्थादिकना प्रश्न पूछवे करी सु०सुत्र अ०अर्थ त०। ते वन्हे वि० निर्मलकरी कं० संदेह टाले॥ संदेहने यो०टालवेकरी। कं०ए सुत्रअर्थ एणे प्रकारे सुत्रने भणवो के न भणवो इत्यादिक वांछारुप मोहनीकर्म मिथ्यात्व ने वो० छेदे ॥ २० ॥

मूलः२० पडिपुच्छणयाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ ? प० सुत्तत्थतदुभयाइं विसोहेइ, कङ्खामोहणिज्जं कम्मं वोच्छिन्दइ ॥ २० ॥

भावार्थ २० गद्यः-शिष्य पुछतो हवो के हे पुज्य ? सुत्र अर्थादिकनां प्रश्न पुछवे करी जीव शुं फल उपाजें ? तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा के हे शिष्य सुत्र अर्थना प्रश्न पुछवेकरी सुत्र अर्थने निर्मळ करे अने सुत्रने अर्थ माहरे भणवुं के नहि इत्यादिक वांछारुप मिथ्यात्व मोहनी कर्म तथा संसयरुप मिथ्यात्व मोहनी कर्मने छेदे (टाळे) ॥ २० ॥

अर्थः-प० वारंवार सिद्धांतने गुणवे णं०करी भं० हे पुज्य जी० जीव किं० किस्युं ज० उपराजे हवे गुरु उत्तर कहेछे प० वारंवार सिद्धांतने गुणवे करी। वं० अक्षर विसरतो होय ज० उपराजे अक्षर रांभारे वं० अक्षरनी सारणी लक्षी। तथा पदानुं सारणी ल० लक्षी च० वली उ० उपजावे ॥ २१ ॥

मूलः-२१ परियट्टणाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ ? प० वञ्जणाइं जणयइ, वञ्ज-णलद्धिं च उप्पाएइ ॥ २१ ॥

पएणसमाओ पकरेइ, आउयं च णं कम्मं सिया बन्धइ, सिया नो बन्धइ, असायावेय-णिज्जं च णं कम्मं नो भुज्जो भुज्जो उवचिणाइ, अणाइयं च णं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरन्तं संसारकन्तारं खिप्पामेव वीइवयइ ॥ २२ ॥

भावार्थ २२ गणः-शिष्य पुछतो हवो के हे पुज्य ? सुत्रना अर्थ चिंतववे करीने जीव शुं फळ उपार्जे ? गुरु उत्तर देता हवा के हे शिष्य ? सुत्रना अर्थ चिंतववे करीने आयुष्य कर्म वर्जिने पुर्वे सात कर्मनी शीथील बंधने बांधी छे ने शीथील (ढीला) बंधने करे अने जे कर्मनी घणा काळनी स्थिति छे ते थोडा काळनी स्थिती करे, वली जे कर्मनी प्रकृती तिव्र रसे बांधीछे ने मंदरसे करे अने घणां कर्मनां पुद्गल होय ते थोडां पुद्गल करे ने आयुष्य कर्म कोइ बांधे अने कोइ न बांधे (अर्थात पुर्वे कोइए आयुष्य बांधेल होय तो न बांधे ने न बांधेल होय तो बांधे), वली असाता वेदनी कर्म वारंवार न बांधे अने जेनी आदी ने अंत रहीत ने जेहनो दीर्घ (लांबो) पंथ छे एवी चार गती रुप संसार रुपणी अटवी तिव्र (उतावळो) ओळंघीने मोक्ष पामे ॥२२॥

अर्थः-प० पर्यंकथा क० करवे पं० करी भं० हे पूज्य जी० जीव कि० किशुं ज० उपराजे । हवे गुरु उत्तर कहेछे ॥

प० पर्यंकथा करवे करी नि० निर्जरा कर्म क्षय करवानी विधि ज० उपराजे ध० धर्म क० कथाए णं० करी । प० सिद्धांतनी प० प्रभावना करी प० सिद्धांतना गुण दीपावे । प० सिद्धांतना प० गुण दीपावे करी जी० जीव । आ० आदरे अने ध० कल्याणकारी ॥ क० कर्म नि० बांधी शुभ उपराजे ॥ २३ ॥

मूलः-२३ धम्मकहाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ ? ध० निज्जरं जणयइ, धम्मकहाए

उपराजे ? तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा के हे शिष्य ? स्वाध्यायनो काळ प्रतिलेखवे करी ज्ञानावर्णी कर्म खपावे ॥१५॥

अर्थः–पा० प्रायश्चित्त क० करवेकरी । एटले पापने छेदे ने प्रायश्चित्त लीधो होय तेहने करवेकरी भं० हे पूज्य जी० जीव किं० किस्यु ज० उपराजे ॥ हवे गुरु उत्तर कहेछे ॥ पा० प्रायश्चित्त करवे करी पा० पाप कर्मनी वि० विशेषे सो० शुद्धता ज० उपराजे । नि० अतिचार रहित चा० वली भ० होय ॥ स० साचे मने च० णं० वली पा० प्रायश्चित्ति प० पडि वर्जनो थको ॥ म० मोक्षनो च० वली म० मार्ग सम्यग फल च० पूरणे । म० मोक्षनो मार्ग सम्यग तेहने फ० फल प्राप्त तेहनं च० वली वि० निर्मल करे भा० आचरिनं च० पूरणे आ० चारित्रनो फ० फल च० पूरणे आ० आराधे ॥ १६ ॥

मूलः–१६ पायच्छित्तकरणेणं भन्ते जीवे किं जणयइ? पा० पायविसोहिं जणयइ, निरइयारे यावि भवइ, सम्मं च णं पायच्छित्तं पडिवज्जमाणे मग्गं च मग्गफलं च विसोहेइ, आयारफलं च आराहेइ ॥ १६ ॥

भावार्थ १६ गद्यः–शिष्य पुछतो हवो के हे पुज्य ! आगमोक्त एटले सुत्रमां कह्या प्रमाणे प्रायश्चीत लीधुं होय, तेणे करी जीव शुं फळ उपराजे, ते वारे गुरु उत्तर कहेता हवा के हे शिष्य ! आगमोक्त प्रायश्चित लेवे करी पाप कर्म क्षय करणरुप शुद्धि उपराजे ? अने अतिचार रहीत होय ने साचे मने करी प्रायश्चीत अंगीकार करतो थको मोक्षनो मार्ग सम्यकत्वने तेनुं फळ प्राप्त तेहने निर्मळ करे अने चारित्र अने चारित्रनुं फळ मोक्ष तेहने आराधे ॥ १६ ॥

अर्थः–ए० एकाग्र म० शुभ मननी सं० थापना तेणे णं० करी ॥ भं० हे पूज्य जी० जीव किं० किस्युं ज० उपराजे ॥ हवे गुरु उत्तर कहेछे ॥ ए० एकाग्र म० शुभ मननी सं० अत्र शुभयोग संवर थापना तेणे करी उन्मार्गे तणातो होय चि० चित्त तेहनो नि० रुंधवो क० करे ॥ २५ ॥

॥ १३८ ॥

मूल–२५ एगग्गमणसंनिवेसणयाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ? ए० चित्तनिरोहं करेइ ॥२५॥

भावार्थ २५ गद्यः–शिष्य पुछतो हवो के हे पूज्य? श्रुत आलंबने करीने एकाग्र शुभ मननी स्थापनाए करीने जीव शुं फळ उपार्जे? ते वारे गुरु उत्तर कहेता हवा के, हे शिष्य? श्रुत आलंबने करीने एकाग्र शुभ मननी स्थापनाए करीने जे चित्त उन्मार्गे जतुं होय तेहने रुंधे ॥२५॥

अर्थः–सं० सतरे भेदे संजमे णं० करी। भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपराजे हवे गुरु उत्तर कहेछे सं० सतरभेदे संजमे करी। अ० आश्रवनो रुंधवो ज० उपराजे ॥ २६ ॥

॥ २९ ॥

मूलः–२६ संजमए णं भन्ते जीवे किं जणयइ? स० अणण्हयत्तं जणयइ ॥ २६ ॥

भावार्थ २६ गद्यः–शिष्य पुछतो हवो के हे पूज्य? सतर भेदे संजमे करीने जीव शुं फळ उपार्जे, ते वारे गुरु उत्तर कहेता हवा के हे वत्स? सतर भेदे संयमे करीने आश्रव रहीतपणुं उपार्जे ॥२६॥

अर्थः–त० तप वारभेदे करवे णं० करी भ० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपराजे ॥ हवे गुरु उत्तर कहेछे त० तप करवे करी वो० पूर्वे बांध्याकर्म ते कर्म टालवुं ज० उपराजे ॥ २७ ॥

मूलः–२७ तवे णं भन्ते जीवे किं [illegible]

भावार्थ १८ मयः-शिष्य पुछतो हवो, के हे पुज्य ! स्वाध्याय करवे करी जीव शुं फळ उपराजे ? तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा के हे शिष्य ! स्वाध्याय करवे करी ज्ञानावर्णी कर्म खपावे ॥१८॥

अर्थः-वा० वांचणी देवेणं० करी भं० हे पूज्य जी० जीव किं० किस्युं फल ज० उपराजे हवे गुरु उत्तर करे छे ॥ वा० वांचणी देवेकरी नि० निर्जरा ज० उपराजे । सु० सिद्धांतनी अ० अण आसातनाए करी न० नवमें । सु० सिद्धांतनी अ० अणआसातनाए करी न० नवमेंतो थको । नि० तिर्थंकर गणधरना ध० आचार अ० आचरे गणधर वांचणी दीए तेम भणवा ॥ नि० सिद्धांतनी गणधरनी ध० स्वाध्यायने अ० आचरतो थको म० मोटी नि० निर्जरानो करणहार होय । भ० भवना अ० अंतनो करणहार तथा कर्मना अंतनो करणहार भ० होय ॥१९॥

मूलः-१९ वायणाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ ? वा० निज्जरं जणयइ, सुयस्स यअणासायणाए वट्टए, सुयस्स अणासायणाए वट्टमाणे तित्थधम्मं अवलम्बइ, तित्थधम्मं अवलम्बमाणे महानिज्जरे भवगहाणज्जयमाने भवइ ॥ १९ ॥

भावार्थ १९ मयः-शिष्य पुछतो हवो के हे पुज्य ? वांचणी देवे करी जीव शुं फळ उपराजे ? तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा के हे शिष्य ? वांचणी देवे करी निर्जरा उपराजे ने सिद्धांतनी अणआसातनाए प्रवर्ते अने सिद्धांतनी अणआसातनाए प्रवर्तनो थको तिर्थंकर गणधरनो धर्मश्रुत दानरुप ते आचार आचरे अथवा सिद्धांतनी स्वाध्यायने आचरे, गणधरनो धर्म श्रुत प्राप्तिरुप ते आचार आचरतो थको मोटी निर्जरानुं कारण भवना अंतनो करनार तथा कर्मना अंतनो करनार होय ॥ १९ ॥

कंपक । अं० हर्ष विषयवाद रहित वि० सोक रहित च० चारित्र मो० मोहनी क० कर्म ख० षपावे ॥ २९॥

मूलः—२९ सुहसाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ? सु° अणुस्सुयत्तं जणयइ, अणुस्सुयाए णं जीवे अणुकम्पए अणुब्भडे विगयसोगे चरित्तमोहणिज्जं कम्मं खवेइ॥२९॥

भावार्थ २९ गद्यः—शिष्य पुछतो हवो के हे पूज्य ? विषय सुखने टाळवे करी चार सुखशयाने विषे सुतां थकां जीव शुं फळ उपार्जे, तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा के हे वत्स ? विषय सुखने टाळवे करी चार सुखशयाने विषे सुतां थकां चपलपणा रहीत अणउछांछळापणुं उपार्जे अने चपलपणा रहित अणउछांछळापणे करीने ते जीव परजीवने दुःख देखीने तत्काळ कंपे, एवी अणुकंपाए करी सहित ने हर्ष विषवाद रहीत ने शोक रहीत थको चारित्र मोहनी कर्म खपावे ॥ २९ ॥

अर्थः—अ० अप्रतिबंधपणे णं० करी भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं । ज० उपराजे । हवे गुरु उत्तर कहेछे हे शिष्य ॥ अ० अप्रतिबंधपणे करी नि० स्त्रीयादिक सग रहितपणो । ज० उपराजे । नि० स्त्रीया दिक संग रहितपणो ग० पाम्यो थको जी० जीव । ए० एकलो राग द्वेष रहित ए० एकाग्र चित धर्मध्याननेविषे होय । दि० दिवस य० वळी रा० रात्रि य० वळी । अ० स्त्रीयादिकनो संजोग सर्व तजतो थको ॥ अ० अप्रतिबंधथको या० वळी वि० विचरे मुनीराज ॥ ३० ॥

मूलः—३० अप्पडिबद्धयाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ? अ° निस्सङ्गत्तं जणयइ, निस्सङ्गत्तेणं जीवे एगे एगग्गचित्ते दिया य राओ य असज्जमाणे अप्पडिबद्धे यावि विहरइ॥३०॥

उपाने । तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा के हे शिष्य ? वारंवार सिद्धांतने गुणवे करीने विसार्यो अक्षरने संभारे अने अणगुंणायेली स्खलित नथा पडानुंपारणी स्खलित उपने ॥ २१ ॥

अर्थः—अ० सूत्रना अर्थ चिंतववे णं० करी । भं० हे पूज्य जी० जीव कि० किस्युं अ० उपराने । हवे गुरु उत्तर कहेछे ॥ अ० सूत्रना अर्थ चिंतववेकरी आ० आउषा कर्मनी वज्जाने व० वर्जिने स० सात क० कर्मनी प्र० प्रकृति प० गाढे ब० बंधने करी ब० बांधेछे । सि० ते सिथल बं० बंधन योग्य बं० पहेला बांधीछे प्रकृति प० ते करे । दी० दीर्घ का० काल ठि० स्थिति जे कर्मनी प्रकृतिनीछे ते । ह० धीरा का० कालनी ठि० स्थिति प० करे । सि० शिघ्र भा० रसपणे जे कर्मनी प्रकृति बांधीछे । मं० ते मंद भा० रसपणे प० करे । व० प्रणा प० कर्मना पुद्गल दीघ ते अ० घोडा । प० पुद्गल प० करे आ० आउषा च० णं० वली क० कर्म सि० कदाचित कोइक बं० बांधे ॥ सि० कदाचित कोइ एक नो० न बं० बांधे । अ० आगामना वे० वेदनी च० णं० वली क० कर्म नो० नथी मू० वार मू० वार ब० बांधे अ० अनादिने आदि रहित च० णं० वली अ० अंत रहितछे दी० दीर्घ अ० अंतछे । चा० रयार गतीरूप । अ० अवयवछे जेनने विषे सं० एवा संसार कं० अटवीने शि० शिघ्र ए० एम वी० अतिक्रमे ॥२२॥

मूलः—२२ अणुप्पेहाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ ? अ० आउयवज्जाओ सत्तक-म्मपगडीओ धणियबन्धणबद्धाओ सिढिलबन्धणबद्धाओ पकरेइ, दीहकालट्ठिइयाओ ह-स्सकालट्ठिइयाओ पकरेइ, तिव्वाणुभावाओ मन्दाणुभावाओ पकरेइ, बहुपएसग्गाओ अ-

करी जीव शुं फळ उपार्जे ? तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा के हे वत्स ! स्त्री, पशु, नपुंसक रहीत पाट पाटलादीक सेववे करी चारित्रनुं रक्षण उपराजे अने चारित्रनी रक्षाए करीने जीव विगय प्रमुख सरसाइ रहीत आहारनो करनार होय ने निश्चळ चारित्रनो धणी होय अने निश्चे संयमने विषे रक्त, तत्पर, ने मोक्ष साधवाना अंतःकरणे करी सहीतथी आठे प्रकारे कर्मनी गांठ निर्जरे (दुर करे) ॥ ३१ ॥

अर्थः—वि० विशेषे विषय थकी निवर्तवे णं० करी । भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपराजे ॥ हवे गुरु उत्तर कहेछे ॥ वि० विशेषे विषयथकी निवर्तवे करी ॥ पा० पाप क० कर्मने अ० अणकरवे करी । अ० धर्म करवा प्रते उद्यमवंत थाय । पु० पुर्वे जे पाप कर्म ब० बांध्याछे य० वळी तेहने नि० निर्जरवापणे करे । तं० ते पाप कर्मने नि० टाळे । त० तेवार प० पछे । चा० च्यार गती सं० संसाररूपणी कं० अटवी । वी० उलंघे मोक्ष पोहचे ॥३२॥

मूलः—३२ विनियट्टयाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ ? वि० पावकम्माणं अकरणयाए अब्भुट्ठेइ, पुव्वबद्धाण य निज्जरणयाए तं नियत्तेइ, तओ पच्छा चाउरन्तं संसारकन्तारं वीइवयइ ॥३२॥

भावार्थ ३२ गद्यः—विषय पुठतो हवो के हे पुज्य ? विषयथी आत्माने विरक्त करतो थको जीव शुं फळ उपार्जे, ते वारे गुरु कहेता हवा के हे वत्स ? विषयथी निवर्तवे करी जीव पाप कर्म अणकरवे करी धर्म करवाने विषे उद्यमवंत थाय अने पुर्वे जे पापकर्म बांधेल छे, तेह निर्जरवे करी ते पाप कर्मने टाळे, ते पार पछी चार गती संसाररूपणी अटवी ओलंघीने मोक्ष पोहोंचे ॥३२॥

अर्थः—वि० अन्य विषयादिकनो संयोगनुं सर्वथा पचखाण सर्व सावद्य अकरणीकरणा माटे अने

णं पवयणं पभावेइ. पवयणपभावेणं जीवे आगमेसस्स भद्दत्ताए कम्मं निबन्धइ ॥२३॥

भावार्थ २३ गथः—शिष्य पुछतो हवो के हे पूज्य? धर्मकथा कहेवाथी जीव शुं फळ उपार्जे, ते वारे गुरु उत्तर कहेता हवा के हे शिष्य! धर्मकथा कहेवाथी कर्म क्षय करवानी विधी उपराने अने सिद्धांतनी प्रभावना करे, हवे आठ प्रभावना कहे छे, १ सिद्धांतना गुण कहेवाथी जैन धर्म दीपावे, २ धर्मकथा कहेवाथी दीपावे, ३ वादीपणाना गुणथी दीपावे, ४ निमित्तथी दीपावे, ५ तपश्चर्या करीने दीपावे, ६ कोइ विद्याथी दीपावे, ७ कोइ सिद्धिथी दीपावे, ८ कविता करीने दीपावे, ए आठ प्रकारे सिद्धांतना गुण दीपाववे करीने जीव आगले भवे कल्याणपणे कर्म बांधे, (अर्थात शुभ कर्मफळ उपार्जे) ॥२३॥

अर्थः—गु० सिद्धांतनी आ० आराधना करवे णं० करी । भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं । ज० उपराजे । हवे उत्तर कहेछे ॥ गु० सिद्धांतनी आ० आराधना करवे करी । अ० अज्ञान ख० खपावे । सं० क्लेशनो भोगवणहार न० न होय प० वळी ॥ २४ ॥

मूलः—२४ सुयस्स आराहणयाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ ? सु० अन्नाणं खवेइ, न य संकिलिस्सइ ॥२४॥

भावार्थ २४ गथः—शिष्य पुछतो हवो के हे शिष्य! सिद्धांतनी आराधना करवे करीने जीव शुं फळ उपार्जे, ते वारे गुरु उत्तर कहेता हवा के हे शिष्य! सिद्धांतनी आराधना करवे करिने अज्ञान खपावे, वळी क्लेशनो भोगवनार न होय ॥ २४ ॥

परलाभं नो तक्केइ, नो पीहेइ, नो पत्थेइ, नो अभिलसइ, परलाभं अणस्सायमाणे अतक्केमाणे अपीहमाणे अपत्थेमाणे अणभिलसमाणे दुच्चं सुहसेज्जं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ॥३३॥

भावार्थ ३३ गद्यः–शिष्य पुछतो हवो के हे पूज्य ? पोतानो लावेलो आहार, तेमज बीजा साधुनो लावेलो आहार ए बंने भेगो करीने बहेंची लीए तेहने संभोग कहीए, ते संभोगनां पचखाण करवे करी जीव शुं फळ उपार्जे ? ते वारे गुरु उत्तर कहेता हवा के हे वत्स ? संभोगना पचखाण करवे करीने जे रोगीष्ट तथा असमर्थ होय, ते बीजा साधुनो आश्रय इच्छे, ते आलंबन कहीये, ए आलंबन क्षय करे अने आलंबन रहीतने मोक्ष तथा संयमनो अर्थ छे जेहने एहवा यतिने संयमनो व्यापार होय. वळी ते पोताना लाभे करीनेज संतोष पामे ने बीजा यतिना लाभनी आशा न करे अने आशा रहीत होय, ते ए मुजने आपे एम मने करीने पण कल्पना न करे अने आपणा आत्मानी वांच्छा वचने करीने पण न वांछे, ने बीजा यतिनी पासे याचे नहि, अभीलाषा न करे, वळी बीजा यतीना लाभनी आशा अणकरतो थको, ए मुजने दिए, एम मने करी कल्पना अणकरतो थको आपणी वांच्छा अणजणावतो थको तेमज अभीलाषा अणकरतो थको बीजी सुखशया अंगीकार करीने विचरे ॥ ३३ ॥

अर्थः–उ० उपधि उपगरणनुं प० पचखाण करवे णं० करी भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपराजे हवे गुरु उत्तर कहे छे ॥ उ० उपधि उपगरणनो पचखाण करवे करी ॥ अ० स्वाध्यायादिकना व्याघात रहितपणो । ज० उपराजे ॥ नि० उपधी रहितपणे करवे णं० करी जी० जीव । नि० वस्त्रादिकनी अभिलाख

भावार्थ २७ गद्यः-शिष्य पुछतो हवो के हे पूज्य ? बारे भेदे तपश्चर्या करवे करीने जीव शुं फळ उपार्जे, तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा के हे वत्स ! बारे भेदे तपश्चर्याए करीने पूर्वे जे कर्म बांधेल होय ते कर्मने टाळे ॥ २७ ॥

अर्थः-वो० कर्मने टाळवे णं० करी । भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपराजे ॥ हवे गुरु उत्तर कहेछे । वो० कर्मने टाळवे करी अ० पापनी क्रिया रहित ज० होय । अ० पापनी क्रिया रहितपणो भ० थइने ॥ त० तेवार प० पछी सि० सर्व अर्थनी सिद्धि थाय ॥ लु० लोक अलोकना स्वरुपनो जाण होय । मु० संसार थकी मु० ॥ त० कर्मरुपीया दावानल टाळवे करी सीतली भुतथाय । स० सर्व दु० दुखनो भं० अंत क० करे ॥२८॥

मूलः-२८ वोदाणे णं भन्ते जीवे किं जणयइ ? वो अकिरियं जणयइ, अकिरियाए भावित्ता तओ पच्छा सिज्झइ बुज्झइ मुच्चइ परिनिवायइ, सवदुक्खाणमन्तं करेइ ॥ २८ ॥

भावार्थ २८ गद्यः-शिष्य पुछतो हवो के हे पूज्य ? कर्मने टाळवे करीने जीव शुं फळ उपार्जे ? तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा के हे शिष्य ? कर्मने टाळवे करीने पापनी क्रिया रहीतपणुं उपार्जे ? ने शुकल ध्यानपणुं पामे पछी पापनी क्रिया रहितपणे थइने ते वार पछी सर्व अर्थनी सिद्धी होय ? लोकालोकनुं स्वरुप जाणे ? संसारथी मुकाय ? कर्म रुप दावानळ ओलववे करीने शीतळीभुत थाय ? अने सर्व दुःखनो अंत करे ॥ २८ ॥

अर्थः-वो० विषय सुपने सा० टाळवे णं० करी भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं ॥ ज० उपराजे हवे गुरु उत्तर कहेछ वो० विषय सुपने सा० टाळवे करी । अ० चपळपणा रहित अणउतकपणो ज० उपराजे ॥ अ० चपळपणा रहित अणउतकपणो करवे णं० करी । जी० जीव । अ० परजीवने दुषी देषीने तत्काल कंपे ते अनु-

करवानी ते तेटलोने जीव आहार विना कलेश न पामे ॥ ३५ ॥

अर्थः—कषाय० कषायने प० पचखाण करवे णं० करी । भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपराजे । हवे गुरु उत्तर कहेछे । क० कषायने । प० पचखाण करवे करी । वी० रागद्वेष रहित भा० भाव ज० उपराजे । वी० रागद्वेष रहित भा० भाव प० पडिवज्यीछे वि० य० णं० वळी ते जी० जीव साधु सर्व कषायनो पचखाण छे तेहना भागनो वीतराग । स० सरिसुं सु० सुख दु० दुखने विषे भ० होय ॥ ३६ ॥

मूलः—३६ कसायपच्चक्खाणे णं भन्ते जीवे किं जणयइ? क० वीयरागभावं जणयइ, वीयरागभावपडिवन्ने वि य णं जीवे समसुहदुक्खे भवइ ॥ ३६ ॥

भावार्थ ३६ गयः—शिष्य पुछतो हवो के हे पूज्य? कषायना पचखाण करवे करी जीव शुं फळ उपार्जे, तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा के हे वत्स? कषायनां पचखाण करवे करी वीतराग भाव (राग द्वेष रहीतपणुं) पामे अने वीतराग भाव पाम्योछे ते जीव सुख दुःखने विषे समभाववाळो होय (अर्थात राग द्वेष रहीत होय) ॥ ३६ ॥

अर्थः—जो० मन वचन कायाना जोग । अशुभ योग व्यापार तेहने । प० पचखाणे णं० करी भं० हे पूज्य जी० जीव । किं० शुं ज० उपराजे । हवे उत्तर कहेछे । जो० मन वचन कायाना अशुभ जोग व्यापार तेहने प० पचखाण करी अ० अजोगीपणो ते भवे तथा परभवे ज० उपराजे । अ० मन वचन कायाना जोग अशुभ व्यापार रहित होय णं० ते जी० जीव न० नवा क० कर्म न० न बं० बांधे । पु० पुर्वे जे कर्म बं० बांध्या होय ते नि० खपावे ॥ ३७ ॥

मूलः—३७ जोगपच्चक्खाणेणं भन्ते जीवे किं जणयइ? जो० अजोगत्तं जणयइ, अ०

भावार्थ ३० गद्यः-शिष्य पुछतो हवो के हे पूज्य ! विषय तथा गृहस्थादिकना अप्रतिबंधपणे करी जीव शुं फल उपार्जे, तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा के हे वत्स ! विषय तथा गृहस्थादीकनो प्रतिबंध अण करतो थको स्त्रीयादीकना संग रहीतपणुं पामे अने स्त्रीयादीकना संग रहीतपणुं पाम्यो थको जीव एकलो राग द्वेष रहीत होय ने एकाग्र चित्त धर्म ध्यानने विषे होय अने रात्री दीवस स्त्रीयादीकनो संग रहीत सर्वथा तजनो थको प्रतिबंध रहितपणे करी विचरे ॥ ३० ॥

अर्थः-वि० स्त्री पशुपंढगरहित स० पाटि आ० पाटलादिक सेवबे णं० करी । भं० हे पूज्य जी० जीव । किं० शुं ज० उपराजे हवे उत्तर कहे छे हे शिष्य सांभल । वि० स्त्री पशुपंढग रहित स० पाटलादिक । सेवबे करी । च० चारित्र गु० रक्षा ज० उपराजे । च० चारित्रनी गु० रक्षाए य० णं० करी जी० जीव । वि० विगय रहित सरसाइ रहित ॥ आ० आहारनो करणहार होय ते द० निश्चल च० चारित्रनो धणी होय ए० निश्चे र० प्रतिबंध तत्पर संजमने विषे मो० मोक्ष साधवानो भा० अंतःकरण अभिप्राय तेणे करी प० सहित ॥ अ० आठ प्रकारना क० कर्मनी । ग० गांठने नि० क्षपावे ॥ ३१ ॥

मूलः-३१ विवित्तसयणासणयाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ ? वि० चरित्तगुत्तिं जणयइ, चरित्तगुत्ते य णं जीवे विवित्ताहारे दढचरित्ते एगन्तरए मोक्खभावपडिवन्ने अट्ठविहकम्मगण्ठिं निज्जरेइ ॥ ३१ ॥

भावार्थ ३१ गद्यः-शिष्य पुछतो हवो के हे पूज्य ! स्त्री पशु नपुंसक रहीत पाट पाटलादीक सेवबे

कर्म, जन्म, ए एकत्रीस रहितपणे करीने एकत्रीस अतिशय जाणवा ते) तुं गुणपणुं उपार्जे ते सिद्धना अतिशये करी सहीत जीव लोकाग्रे मोक्ष पाम्यो थको अतिशे सुखी थाय ॥ ३८ ॥

अर्थः–स० कार्य कामनो करणहार शिष्य ते सखाइयो राखवानो प०पचखाण करवे णं०करी ॥ भं०हे पूज्य ॥ जी० जीव किं० शुं ज० उपराजे ॥ हवे ऊत्तर कहे छे ॥ स० शिष्य सखाइयानो राखवानो पचखाण करवे करी ॥ ए० एकलापणुं ॥ ज० उपराजे ॥ ए० एकलापणो भू० पाम्यो वि० थ० णं० ते जी० जीव ॥ ए० एकलापणो भा० भावतो थको प्रवर्ते तेहने ॥ (अ० अल्प शब्द अलाप शब्द करवो न होय) अ० वचननो झघडो करवानो न होय अ० प्राण वधरूप कलह करवो न होय ॥ अ० कषाय करवो न होय ॥ अ० तुं एम करतो इत्यादिक तुकार न थाय ते जीवने ॥ सं० संजम व० घणी होय ॥ सं० संवर व० घणो होय स० समाधी व० घणी होय ॥ स० ज्ञानादिक समाधी करी या० सहित भ० होय ॥ ३९ ॥

मूलः–३९ सहायपच्चक्खाणेणं भन्ते जीवे किं जणयइ ? स० एगाभावं जणयइ, एगीभावभूए वि य णं जीवे एगग्गं भावेमाणे अप्पझंझे अप्पकलहे अप्पकसाए अप्पतुंतुमे संजमबहुले संवरबहुले समाहिए यावि भवइ ॥ ३९ ॥

भावार्थ ३९ गद्यः–शिष्य पुछतो हवो के हे पूज्य ! सखाइया (काम करनार शिष्य ते) नां पचखाण करवे करी जीव शुं फळ उपार्जे तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा के हे वत्स, सखाइयानां पचखाण करवे करी एकलापणुं उपार्जे, पछी एकलापणुं ते जीव एकाकीपणुं भावतोथको प्रवर्ते तेहने शब्द न होय, वचननो कलेश न होय प्राण वध

सार्मिक संघने संयोग ते अनर्थाद छे ॥ लौकिक अभिग्रहरूप तप निमने ने माटे साधर्मिकनो संयोगना पचखाण पण अनर्थाद माटे नहि ॥ सं० आपणो आण्यो होय ने आहार अने बीजे यतीए आहार आण्यो होय ते एकठोकरीने वैयावच्च करिये ने संयोगने प० पचखाण करवे करी भं० हे पूज्य जी० जीव हि० शुं प्र० पचखाणे ॥ इहां उत्तर कहे छे ॥ संयो० एकठा आहारनो पचखाण करवे करी ॥ आ० जे रोगीया असमर्थ होय ते माटे अनेरो आहार बीजे ने आलंबन करिए ॥ एहवा आलंबन ने प्र० पचखे ॥ नि० आलंबन रहित प० थकी ॥ स० योग तथा संजम तेहनो अर्थ छे जेहने एहवा थवाने । यो० संजमनो व्यापार । अथ शुभ योग ने थवा भ० होय ॥ स० आपणे पोताने स्व० साधे करी ॥ सं० संयोग पामे ॥ प० बीजा यतीना ॥ स्व० आपणी नो० आ० आज्ञा न करे प० बीजा यतिना स्व० साधने । नो० ए मुजने ते एम मने भ० कल्पता न करे ॥ नो० आपणा आत्मानी बीजा वचने करी बीजा यतिने पी० जणावे नहि नो० बीजा यती कहे प० जाने नहि । नो० अ० अभिप्राय न करे । प० बीजा यतीनी स्व० साधनी भ० आज्ञा अणकल्पतीपणो अ० मुजने ते एम अनेरी कल्पता अणकल्पतो थको अ० आपणी बांछा पचखाणनो थको भ० बीजा यती पंजे अणकल्पतो थको अ० अभिप्राय अणकल्पतो थको । इ० बीजी गु० गुरु से० सेजा ॥ प० भोगीवार भं० करिये वि० विधे ॥ १३ ॥

मूलः—३३ संभोगपच्चक्खाणेणं भन्ते जीवे किं जणयइ ? सं० आलम्बणाइं खवेइ, निरालम्बणस्स य आयट्ठिया जोगा भवन्ति, सएणं लाभेणं संतुस्सइ, पल्लाभं नो आसादेइ,

(स० सर्व अर्थनी सिद्धि होय वृ० लोक अलोकना स्वरूप जाणे सु० सर्व दुखथी मुकाय ॥ प० कर्म रूपीया दावानलने उपसमाववे करी शीतलीभूत थाय) ॥ स० सर्व दु० दुखनो अं० अंत क० करे ॥ ४१ ॥

॥ ३४४ ॥

मूलः—४१ सव्भावपच्चक्खाणेणं भन्ते जीवे किं जणयइ ? स० अनियट्टिं जणयइ, अनियट्टिपडिवन्ने य अणगारे चत्तारि केवलि से खवेइ, तं जहा वेयणिज्जं आउयं नामं गोयं; तओ पच्छा सव्वदुक्खाणमन्तं करेइ ॥ ४१ ॥

॥ २९ ॥

भावार्थ ४१ गद्यः—शिष्य पुछतो हवो के हे पूज्य ! जीवनो अनादी काळनो हिंसादीक १८ पाप स्थानक करवानो स्वभावछे, तेहनां पचखाण करवे करी जीव शुं फळ ऊपार्जे, तवारे गुरु ऊतर कहेता हवा के हे वत्स ? एवां स्वभावनां पचखाण सर्व त्यजी करवे करी अनुक्रमे शुक्ल ध्याननो चोथो भेद के जे जरूर मोक्ष पामेज ए ऊपार्जे अने शुक्ल ध्याननो ४ थो भेद के जे अनिवृत्ती ध्याने पहोत्यो थको ? वेदनी, २ आयुष्य, ३ नाम, ४ गोत्र ए चार कर्म क्षय करे ते चार पछी ते जीवने सर्व अर्थनी सिद्धी होय, लोका लोकनुं स्वरूप जाणे, सर्व कर्मथी मुकाय, कर्म रूपीयो दावानल ओलवी शीतळी भूत थाय अने सर्व दुःखनो अंत करे ॥ ४१ ॥

अर्थः—पदि० प्रगट व्यवहार साधुने वेषे पं० करी ॥ भं० हेपूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपराजे । हवे गुरु ऊतर कहेछे प० मायारहित सुद्ध वेष यतीपणे करी । ला० द्रव्यथी अल्प उपधी उपगरणपणो भावथी अप्रतिबंधपणो ज० उपराजे । द्रव्यथी भावथी उपगरणना भारारहित ल० हलुओ ते भू० होय पं० वळी जी० जीव अ० प्रमाद रहितने वेष था० निरतिचारपणे सूत्र यतीनो वेष होय । प० जीव दृष्टांत हेतु कपोतपक्षीनि परी

रहितपणो उ० उपधी मं० विना य० पछी । शारीरि मानसी संबंधी मं० क्लेश न० न पामे ॥ ३४ ॥

मूलः—३४ उवहीपच्चक्खाणे णं भन्ते जीवे किं जणयइ ? उ० अपलिमन्थं जणयइ, निरुवहिए णं जीवे निक्कंखी उवहिमन्तरेण य न संकिलिस्सई ॥ ३४ ॥

भावार्थ ३४ मूलः—शिष्य पुछतो हवो के हे पुज्य ? उपधी (उपगरण) नुं पचखाण करवे करीने जीव शुं फल उपार्जे ? तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा के हे वत्स ! उपधीनुं पचखाण करवे करी जीव परीषहनी मर्यादाना अभावपणो थको उपधी विना शारीरि मानसी संबंधी क्लेश न पामे ॥ ३४ ॥

अर्थः—भा० सदोष आहारने तथा चोथ छठादिक आहारने प० पचखाण करवे णं० करी । भं० हे पुज्य जी० जीव कि० किशुं ज० उपार्जे हवे गुरु उत्तर कहे छे । भा० सदोष आहार लेवानो प० पचखाण करी । जी० जीवतव्यनी । भा० वांछानो प० करवुं ते वो० छेदे । जी० जीवतव्यनी । आ० वांछानुं प० करवो ते वो० छेदीने जी० जीव । भा० आहार मं० विना सं० क्लेश न० न पामे ॥ ३५ ॥

मूलः—३५ आहारपच्चक्खाणे णं भन्ते जीवे किं जणयइ ? आ० जीवियासंसप्पओगं वोच्छिन्दइ, जीवियासंसप्पओगं वोच्छिन्दित्ता जीवे आहारमन्तरेणं न संकिलिस्सइ ॥ ३५ ॥

भावार्थ ३५ मूलः—शिष्य पुछतो हवो के हे पुज्य ! सदोष आहार लेवानां पचखाण तथा चोथ छठादिक भले आहारने पचखाण करीने जीव शुं फल उपार्जे ? तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा के हे वत्स ! सदोष आहारनां पचखाण करवे करीने जीवतव्यनी आशा वांछा करवानी ते छेदे भने जीवतव्यनी आशा वांछा

मिनीए करी सहीत होय ॥ ४२ ॥

अर्थः–वे० आचार्यादीकनिवेयावच्चकरवेकरी । भं० हे पूज्य ॥ जी० जीव किं० शुं ज० उपराजे ॥ हवेगुरु ॥ उत्तर कहेछे ॥ वे० आचार्यादिकनिवेयावच करवेकरी । ति० तिर्थंकर ना० नाम गो० गोत्र क० कर्म पणा अशुभ कर्म निर्जरे ॥ सुभ कर्म रेह तेणे तिर्थंकर नामगोत्र नि० उपराजे बांधे ॥ ४३ ॥

मूलः–४३ वेयावच्चेणं भन्ते जीवे किं जणयइ ? वे° तित्थयरनामगोत्तं कम्मं निबन्धइ ॥४३॥

भावार्थ ४३ गद्यः–शिष्य पुछतो हवो हे पूज्य ! आचार्यादीकनी वैयावच्च करवे करी जीव शुं फळ उपार्जे ! तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा हे वत्स ? आचार्यादीकनी वैयावच्च करी जीव तिर्थंकर नाम गौत्र कर्म बांधे ॥ ४३ ॥

अर्थः–स० ज्ञानादिक सर्व गु० गुण सं० सहितपणे पं० करी भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपराजे हवे गुरुकहेछे ॥ स० ज्ञानादिक सर्वगुण सं० सहितपणे करी ॥ अ० अनुक्रमे संसारमाहे वळी अण आवयुं ज० उपराजे मोक्षपहुचे । अ० संसारमांहि वळी अणआवयुं प० पाम्योथको य० पं० वळी । जी० जीव सा० सारिरी मा० मानसी ॥ दु० दुपनो भा० भोगवणहार । नो० न भ० होय ॥ ४४ ॥

मूलः–४४ सव्वगुणसंपन्नयाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ ? स° अपुणरावत्तिं जणयइ, अपुणरावत्तिं पत्तए य णं जीवे सारीरमाणसाणं दुक्खाणं नो भागी भवइ ॥ ४४ ॥

भावार्थ ४४ गद्यः–शिष्य पुजतो हवो हे पूज्य ! ज्ञानादीक सर्व गुण सहीत पणे करी जीव शुं फळ

जोगी णं जीवे नवं कम्मं न बन्धइ, पुव्ववद्धं निज्जरेइ ॥ ३७ ॥

भावार्थ ३७ गद्यः–शिष्य पुछतो हवो के हे पूज्य ? मन वचन कायाना अशुभ योगना व्यापारनां पचखाण करवे करी जीव शुं फळ उपार्जे ? तेवारे गुरु उतर कहेता हवा के हे वत्स ! मन वचन कायाना अशुभ योगना व्यापारनां पचखाण करवे करीने अजोगी (मन वचन कायाना अशुभ योगना व्यापार रहीत) पणुं उपार्जे अने अजोगीपणे जीव नवां कर्म न बांधे ने पुर्वे जे कर्म बांधेल होय ते क्षय करे ॥ ३७ ॥

अर्थः–स० शरीरनो सुश्रुषाने प० पचखाण करवे णं० करी । भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपराजे हवे गुरु उत्तर कहे छे ॥ स० शरीरनी सुश्रुषाने ॥ प० पचखाण करवे करी ॥ सि० सिद्धना अ० अतिशय तेणे भवे तथा परभवे सिद्धना गुण पामे ॥ गु० गुणपणो वर्ण ५ ॥ गंध २ रस ५ फरस ८ ॥ इत्यादि करी रहितपणो ॥ नि० निपजावे सि० सिद्धना अ० अतिशय ने गु० गुणे करी ॥ सं० सहित थ० थं० थळी जी० जीव ॥ लो० लोकाग्रे मोक्ष उ० पाम्यो छतां प० अतिशे सु० सुखी भ० होय ॥ ३८ ॥

मूलः–३८ सरीरपच्चक्खाणेणं भन्ते जीवे किं जणयइ ? उ० सिद्धातिसयगुणकित्तणं निवत्तेइ, सिद्धातिसयगुणसंपन्ने य णं जीवे लोगग्गमुवगए परमसुही भवइ ॥ ३८ ॥

भावार्थ ३८ गद्यः–शिष्य पुछतो हवो के हे पूज्य ? शरीरनी सुश्रुषा (शोभा तथा सारसंभार) नां पचखाण करवे करीने जीव शुं फळ उपार्जे ? तेवारे गुरु उतर कहेता हवा के हे वत्स ! शरीरनी सुश्रुषानां पचखाण करवे करीने सिद्धना ३१ अतिशय (पांचवर्ण, २ गंध, ५ रस, ५ संस्थान, ८ स्पर्श, ३ वेद, काया,

भावार्थ ४६ गथः-शिष्य पुछतो हवो के हे पूज्य! क्षमाए करीने जीव शुं फळ उपार्जे? तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा के हे वत्स! क्षमाए करीने परिसहने जीते ॥ ४६ ॥

अर्थः-मु० निर्लोभे णं० करी। भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपराजे हवे उत्तर कहेछे ॥ मु० निर्लोभ पणे करी अ० परिग्रह रहितपणुं ज०उपराजे। अ०परिग्रह रहित य०वळी जी० जीव। अ० द्रव्यना लो० लोभथी चोरादिके (पु० पुरुष)। अ० अणअभिलाषनीक भ० होय परिग्रह रहित देखीने चोरादिक लूंटवानो भाव न करे ॥ ४७ ॥

मूलः-४७ मुत्तीए णं भन्ते जीवे किंजणयइ? मु० अकिंचणं जणयइ, अकिंचणे य जीवे अत्थलोलाणं अपत्थणिज्जो भवइ ॥ ४७ ॥

भावार्थ ४७ गथः-शिष्य पुछतो हवो हे पूज्य? निर्लोभपणे करी जीव शुं फळ उपार्जे, तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा के हे वत्स! निर्लोभपणे करी परिग्रह रहितपणुं उपार्जे अने परिग्रह रहित जीव ते जे द्रव्यना लुब्ध चोरादिक पुरुष छे तेहने अणअभिलाषनीक होय (अर्थात परिग्रह रहित पुरुषने देखीने चोरादिक लूंटवानो भाव न करे ॥ ४७ ॥

अर्थः-अ० सरलपणे णं०करी भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपराजे। हवे गुरु कहेछे उत्तर ॥ अ० सरलपणे करी ॥ का० कायाए करी सरलपणो होय ॥ भा० भावनो अभिप्रायनो उ० सरलपणो होय। भा० भाषानो उ०सरलपणो होय अ० पर जीवने अभिप्रायनो अ० उपराजे। अ० पर जीवने अभिप्राय ॥ ३५६ ॥

संयम घणो होय, संवर घणो होय मात्र समाधी घणी होय अने ज्ञानादीक समाधीए करी सहित होय ॥ ३९ ॥

अर्थः-प० आहार पाणी भातनो प० पचखाण एटले संथारो करवे णं० करी ॥ भं० हे पूज्य जी० जीव ॥ किं० शुं ज० उपजावे ॥ हवे गुरु उत्तर कहे छे ॥ प० भातनुं पचखाण करवे करी ॥ अ० घणा प० भवना ग० गइ करवाना कर्म होय ते नि० टाले ॥ ४० ॥

मूलः-४० भत्तपच्चक्खाणेणं भन्ते जीवे किं जणयइ ? भ० अणेगाइं भवसयाइं निरुम्भइ।४०॥

भाषार्थ ४० प्रश्नः-शिष्य पुछतो हवो के हे पूज्य ! आहार पाणीनां पचखाण करवे करी जीव शुं फल उपजावे, तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा के हे वत्स ! आहार पाणीनां पचखाण करवे करी अनेक भव करवाना होय, ते नाश करी संसार अल्प करे ॥ ४० ॥

अर्थः-प० अन्नादिकानो हिंस्यादिक अढार पापस्थानक करवानो स्वभावले ॥ प० तेहना पचखाण करवे णं० करी ॥ भं० हे पूज्य ॥ जी० जीव किं० शुं ज० उपजावे ॥ हवे गुरु उत्तर कहेछे ॥ भ० जीवना स्वभावनो प० पचखाण सर्वविरती करवे करी। अ० अनुक्रमे शुक्लध्यान ने मोक्षने पाम्या विना पाछो वळे नहि एवो शुक्लध्यान ने ज० उपजावे ॥ भ० शुक्लध्याननो चोथो भेद ने ॥ प० पडिवज्जोत्ता जेणं ग० ने अ० अणगार साधु च० चार के० केवली संबंधिया क० कर्मना विघात ॥ से० ते स० स्वपावे ॥ भं० ते जेमटले तेम अनुक्रमे न० कहेछे वे० वेदनी ? ॥ आ० आयखो २ ॥ ना० नामकर्म ३ ॥ गो० गोत्रकर्म ४ ए ४ कर्म क्षय करे ॥ त० तेवार प० पछे ॥

प आठ पदनां स्थानक टाले ॥ ४९ ॥

अर्थः–भा० शुद्ध अंतःकरणे पं०करी । भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपराजे हवे गुरु उत्तर कहेछे ॥ भा० शुद्ध अंतःकरणे करी । भा० विशुद्ध अध्यवसायने ज० उपराजे भा० शुद्ध अंतःकरणने विषे व० प्रवर्तावतो थको जी० जीव अ० अरिहंतना प० परुप्या ध० धर्मने । आ० आराधवाने विषे ॥ अ० उद्यमवंत थाय ॥ अ० अरिहंतना प० परुप्या ध० धर्मनी । आ० आराधनाने विषे अ० उद्यमवंत थइने । प० पर लो० लोकने विषे ध० धर्मनो आ० आराधक भ० थाय धर्म पामे ॥ ५० ॥ ॥ २९ ॥

मूलः–५० भावमज्झेणं भन्ते जीवे किं जणयइ ? भा० भावविसोहिं जणयइ, भाव-विसोहीए वट्टमाणे जीवे अरहन्तपन्नत्तस्स धम्मस्स आराहणयाए अब्भुट्ठेइ, अरहन्तपन्न-त्तस्स धम्मस्स आराहणयाए अब्भुट्ठित्ता परलोगधम्मस्स आराहए भवइ ॥ ५० ॥

भावार्थ ५० गद्यः–शिष्य पुछतो हवो के हे पूज्य ? शुद्ध अंतःकरणे करी जीव शुं फळ उपार्जे ? तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा के हे वत्स ? शुद्ध अंतःकरणे करी विशुद्ध अध्यवसायने उपराजे ? शुद्ध अंतःक-रणने विषे प्रवर्ततो जीव अरिहंतना परुप्या धर्मनी आराधनाने विषे उद्यमवंत थाय, अरिहंतना परुप्या धर्मनी आराधनाने विषे उद्यमवंत थइने परलोकने विषे धर्मनो आराधीक थाय (अर्थात धर्म पामे) ॥ ५० ॥

अर्थः–क० प्रतिलेषणादिक जेणी विध क्रिया करवी कहिछे तेम करवे पं० करी एटले करण सत्ये करी भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपराजे । हवे उत्तर कहेछे क० ते करण सत्ये करी जी० जीव । क० ॥ ३४७ ॥

प्रसस्तभलोयतीनो वि० वेस । वि० ते निर्मल स० समकतनो धणी होय । स० सत्व बल वीर्यपणो अने । स० पांचसुमति । स० संपूर्णछे जेहनी तेभणी ॥ स० सर्व पा० माण भू० भुत जी० जीव स० सत्व । वी०पीडा न करे तेभणी विस्वास उपने तेहवो यतीनो कु० वेसछे ॥ अ० अल्प प्रतिलेषनाछे जेहने थोडा उपगरण होय तेहने थोडि प्रतिलेषणा करवी होय जि० जितेंद्रि ते वि० विस्तीर्ण स० तप अने स० समति इर्यादीके करी । स० सहित या० वली भ० होय ॥ ४२ ॥

मूलः—४२ पडिरूवयाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ ? प० लाघवियं जणयइ, लघुभूए णं जीवे अप्पमत्ते पागडलिङ्गे पसत्थलिङ्गे विसुद्धसम्मत्ते सत्तसमिइसमत्ते सव्वपाणभूयजीवसत्तसु वीससणिज्जरूवे अप्पडिलेहे जिइन्दिए विउलतवसमिइसमन्नागए यावि भवइ ॥४२॥

भावार्थ ४२ गद्यः—शिष्य पुछतो हवो के हे पूज्य ! स्थीवर कल्पीनो वसादीक प्रगट व्यवहार शुद्ध साधुना वेशे करी जीव शुं फल ऊपार्जे ! ते वारे गुरु उत्तर कहेता हवा के हे वत्स ! माया रहित शुद्ध साधुना वेशे करी द्रव्यथी अल्प उपगरणने भावथी अपतिबंधपणे ऊपार्जे, द्रव्यथी ने भावथी उपगरणना भारथी हलवो होय, ते जीव प्रमाद रहित होय, वली निश्चे व्यवहार शुद्ध यतीनो वेश होय अने जीव दयानो हेतु दृष्टोहरणादीके करी प्रसस्त यतिनो वेश ते निर्मळ सम्यक्त्वनो धणी होय ने सत्व, शूर, धैर्यपणुं, पांच समिती संपूर्ण छे जेहने तेथी सर्व प्राण भूत जीव सत्वने पीडा न करे एम विश्वासनो हेतु यतीनो वेशछे, वळी जेहने अल्प उपगरण छे, तेहने प्रतिलेखणा पण अल्प छे, जीतेंद्रीयने विस्तीर्ण तपने इर्यादीक पांच स-

जीव शुं फळ उपार्जे ? तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा, हे वत्स ? मन वचन कायाना योग सत्यपणे प्रवर्तावेकरी मन वचन कायाना योग दोष रहीत करे ॥ ५२ ॥

अर्थः–म० मन पापथी निवारीने । गु० गुप्तपणे प्रवर्तावबे णं० करी भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपराजे हवे गुरु उत्तर कहेछे ॥ म० मन पापथी निवारीने गु० गुप्तपणे प्रवर्तावबे करी जी० जीव । ए० धर्मने विषे एकाग्र चित्तपणो ज० उपराजे । ए० धर्मने विषे एकाग्र चि० चित्तपणे जी० जीव णं० वळी ॥ म० मन पापथी निवारीने गु० गुप्तपणे प्रवर्तेतो थको सं० संजमनो आ० आराधक भ० होय ॥ ५३ ॥

मूलः–५३ मणगुत्तयाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ ? म० जीवे एगग्गं जणइ, एगग्गचित्ते णं जीवे मणगुत्ते संजमाराहए भवइ ॥ ५३ ॥

भावार्थ ५३ गद्यः–शिष्य पुछतो हवो हे पूज्य ? पापथी मनने निवारीने गुप्तपणे प्रवर्तावबे करी जीव शुं फळ उपार्जे ? तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा हे वत्स ? मनने पापथी निवारी गुप्तपणे प्रवर्तावबे करी जीव धर्मने विषे एकाग्र चित्तपणुं उपराजे अने धर्मने विषे एकाग्र चित्तपणे करी जीव मन पापथी निवारीने गुप्तपणे प्रवर्ते ते थकी संजमनो आराधीक थाय ॥ ५३ ॥

अर्थः–व० वचन पापथी निवारीने गु० गुप्तपणे णं० करी । भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपराजे हवे गुरु उत्तर कहेछे ॥ व० वचन पापथी निवारीने गु० गुप्त करी नि० विकथानो अणकरणहारपणो । ज० उपराजे ॥ नि० विकथाने अणकरवे णं० करी जी० जीव । व० वचन गुप्त गु० सहित थको ॥ अ० मनना जो०

पांही अनभावनुं उपजे (अर्थात मोक्ष पामेछे) संसार मांही अणआवनुं पाम्या थकी ते जीव सारिरी मानसी दुःखनो भोगवनार न होय ॥ ४४ ॥

अर्थः-वी० रा० राग द्वेष रहितपणे णं० करी भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपजाने । हवे गुरुउत्तर कहेछे । वी० राग द्वेष रहितपणे करीने ने० पुत्रादिकने विषे स्नेह रूपीओ बं० बंधन न० लोभरूपीओ ब० बंधन प० छेदी वो० छेदे । म० मनोज्ञ अ० अमनोज्ञ । स० शब्द फ० फरस (र० रसस्वाद मधुरादि) ग० गंध गं० गंधने विषे वे० विषे वि० वैराग्य पामे राग द्वेष क्षयकरे ॥ ४५ ॥

मूलः—४५ वीयरागयाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ? वी० नेहाणुबन्धणाणि तण्हाणुबन्धणाणि य वोच्छिन्दइ, मणुन्नामणुन्नेसु सद्द-फरिस-रस-गन्धेसु चेव विरज्जइ ॥ ४५ ॥

भावार्थ ४० प्रश्नः-निश्चय गुरुनो हवो हे पूज्य? रागद्वेष रहितपणे करीने जीव शुं फळ उपजे ? ते वारे गुरु उत्तर करेछे हवो के हे वत्स ? रागद्वेष रहितपणे करीने पुत्रादिकने विषे स्नेहरूपी बंधन तेमज लोभरूपी बंधनने छेदे अने मनोज्ञ (मनने गमता) अमनोज्ञ (मनने अणगमता) एवा शब्दरूप रस गंध ने स्पर्श विषयमां रागद्वेषनो क्षय करे ॥ ४५ ॥

अर्थः-स० खंतीए णं० करी भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपजाने । हवे गुरु उत्तर कहेछे॥ स० खंतीए करी प० परिसहने जि० जीते ॥ ४६ ॥

मूलः—४६ खन्तीए णं भन्ते जीवे किं जणयइ? ख० परीसहे जिणइ ॥ ४६ ॥

जीव शुं फळ उपार्जे ? तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा, हे वत्स ? मन वचन कायाना योग सत्यपणे प्रवर्तावेकरी मन वचन कायाना योग दोष रहीत करे ॥ ५२ ॥

अर्थः–म० मन पापथी निवारीने । गु० गुप्तपणे प्रवर्तावबे णं० करी भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपराजे हवे गुरु उत्तर कहेछे ॥ म० मन पापथी निवारीने गु० गुप्तपणे प्रवर्तावबे करी जी० जीव । ए० धर्मने विषे एकाग्र चित्तपणो ज० उपराजे । ए० धर्मने विषे एकाग्र चि० चित्तपणे जी० जीव णं० वली ॥ म० मन पापथी निवारीने गु० गुप्तपणे प्रवर्तेतो थको सं० संजमनो आ० आराधक भ० होय ॥ ५३ ॥

मूलः–५३ मणगुत्तयाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ? म० जीवे एगग्गं जणइ, एगग्गचित्ते णं जीवे मणगुत्ते संजमाराहए भवइ ॥ ५३ ॥

भावार्थ ५३ गद्यः–शिष्य पुछतो हवो हे पूज्य ? पापथी मनने निवारीने गुप्तपणे प्रवर्तावबे करी जीव शुं फळ उपार्जे ? तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा हे वत्स ? मनने पापथी निवारी गुप्तपणे प्रवर्तावबे करी जीव धर्मने विषे एकाग्र चितपणुं उपराजे अने धर्मने विषे एकाग्र चित्तपणे करी जीव मन पापथी निवारीने गुप्तपणे प्रवर्ते ते थकी संजमनो आराधीक थाय ॥ ५३ ॥

अर्थः–व० वचन पापथी निवारीने गु० गुप्तपणे णं० करी । भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपराजे हवे गुरु उत्तर कहेछे ॥ व० वचन पापथी निवारीने गु० गुप्त करी नि० विकथानो अणकरणहारपणो । ज० उपराजे ॥ नि० विकथाने अणकरवे णं० करी जी० जीव । व० वचन गुप्त गु० सहित थको ॥ अ० मनना जो०

सं० । सहित णं० वली जी० जीव । ध० धर्मनो आ० आराधक भ० होय ॥ ४८ ॥

मूलः—४८ अज्जवयाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ ? अ० काउज्जुयं भावुज्जुयं भासुज्जुयं अविसंवायणं जणयइ,अविसंवायणसंपन्नयाए णं जीवे धम्मस्स आराहए भवइ ॥४८॥

भावार्थ ४८ मूलः—शिष्य पुछतो हवो के हे पूज्य! सरळपणे करी जीव शुं फळ उपार्जे! तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा के हे वत्स! सरळपणे करी कायानुं सरळपणुं होय, अभिप्रायनुं सरळपणुं होय, भाषानुं सरळपणुं होय ने पछे अणविसंवादनुं उपार्जे, पर जीवने अणविसंवादे करी जीव धर्मनो आराधक होय ॥ ४८ ॥

अर्थः—म० अहंकार रहितपणे णं० करी भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपार्जे ॥ हवे गुरु उत्तर कहेछे । म० अहंकार रहितपणे करी अ० अणउद्धतपणुं ज० उपराजे । अ० अणउद्धतपणे करी सहित जी० जीव । मि० मुधाल्हापणुं अने म० अहंकार रहितपणुं करी सं० सहितथको जाती १ । कुळ २ । बळ ३ । रूप ४ । तप ५ । लाभ ६ । श्रुत ७ । ऐश्वर्य ८ ए अ० ८ म० मदना ठा० थानक नि० टाळे ॥ ४८ ॥

मूलः—४९ मद्दवयाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ ? म० अणुस्सियत्तं जणयइ. अणुस्सियत्तेणं जीवे मिउमद्दवसंपन्ने अट्ठ मयट्ठाणाइं निट्ठावेइ ॥ ४९ ॥

भावार्थ ४९ मूलः—शिष्य पुछतो हवो के हे पूज्य! अहंकाररहितपणे करी जीव शुं फळ उपार्जे? तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा के हे वत्स! अहंकाररहितपणे करी अणउद्धतपणुं उपार्जे अने अणउद्धतपणे करी मुधाल्हापणुं होय, अहंकार रहितपणे १ जाती, २ कुळ, ३ बळ, ४ रूप, ५ तप, ६ लाभ, ७ ऐश्वर्य,

अर्थः-म० मन स० साचे भावे आ० थापवापणे णं० करी। भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं। ज० उपराजे हवे गुरु उत्तर कहेछे ॥ म० मन साचे भावे थापवापणे करी। ए० धर्मने विषे एकाग्रचित्तपणो ज० उपराजे। ए० धर्मने विषे एकाग्रचित्तपणो ज० उपराजीने ना०ज्ञानना प० पर्याय ज०उपराजे ना० ज्ञानना प० पर्याय ज०उपराजीने। स० सम्यक्त्वने। वि० विशेषे सो० शुद्ध करे। मि० मिथ्यात्वने च० पुरणे। नि० टाळे ॥ ५६ ॥

मूलः—५६ मणसमाहारणयाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ? म० एगग्गं जणयइ, एगग्गं जणइत्ता नाणपज्जवे जणयइ, नाणपज्जवे जणइत्ता सम्मत्तं विसोहेइ मिच्छत्तं च निज्जरेइ॥५६॥

भावार्थ ५६ गद्यः-शिष्य पुछतो हवो हे पूज्य? मनने सत्यभावे स्थापवे करी जीव शुं फळ उपार्जे? तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा हे वत्स? मनने सत्यभावे स्थापवे करी धर्मने विषे एकाग्र चित्तपणुं उपराजे अने धर्मने विषे एकाग्र चित्तपणुं उपराजीने ज्ञानना पर्याय उपार्जे, जे ज्ञानना पर्याय उपराजे ते सम्यक्त्वने विशेषे शुद्ध करे ने मिथ्यात्वने टाळे ॥ ५६ ॥

अर्थः-व० वचनना स्वाध्यायादिकने विषे स० साचे भावे आ० वचनने थापवे करी भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपराजे हवे गुरु उत्तर कहेछे। व० वचनना स्वाध्यायादिकने विषे स० साचे भावे वचनने आ०थापवे करी व०वचन सा०साचे भावे आ०थापवावाळा। दं०सम्यक्त्वना प०भेदनो वि०मलिनपणो टाळे व० वचनना सा० साचे भावे थापवे करी । दं० सम्यक्त्वना प० भेदनो नि० मलीनपणो टाळीने सु० सुलभ बो० बोधपणो नि० निपजावे। दु० दुर्लभ बो० बोधिपणो नि० निवर्त्तावे ॥ ५७ ॥

किया करवानी स० समर्थाई ज० उपराजे ॥ क० प्रतिलेखणादिक जेणी विधि क्रिया करवानी विधि कहिछे तेम करे ते करण सत्यने विषे व० वर्ततो जी० जीव । ज० जेम वा० वचने करी कहि आप क्रिया करतो ॥ त० ते क्रिया तेमज का० करणहार या० वली भ० होय ॥ ५१ ॥

मूलः—५१ करणसच्चेणं भन्ते जीवे किं जणयइ,? क० करणसच्चेणं जणयइ. करणसच्चे वट्टमाणे जीवे जहा वाई तहा कारी यावि भवइ ॥ ५१ ॥

भावार्थ ५१ गद्य—शिष्य पुछता हवा के पूज्य ? जेवी रीते पडीलेहणादीक क्रिया करवानी विधी कही छे, तेवी रीत करतो थको जीव शुं फळ उपार्जे ? तेवारे गुरु उत्तर कहे॥ हवा के हे वत्स ! जेवी रीते प्रतिलेखणादीक क्रिया करवानी विधी कही छे, तेवी रीत करता थको जीव क्रिया करवानी समर्थाई उपरांत अने विधीयुक्त प्रतिलेखणादीक करवाने विषे प्रवर्तातो जीव आ क्रिया आपण करवी, एम वचने करी कहे तेवीज रीते कायाए करीने क्रिया करे ॥ ५१ ॥

अर्थः—जो० मन वचन कायाना जोग स० सत्य पणे प्रवर्तावबे णं० करी । भं० हे पूज्य जी० जीव कि० शु ज० उपराजे । हवे गुरु उत्तर कहेछे । जो० मन वचन कायाना जोग स० सत्यपणे प्रवर्तावव करी । जो० मन वचन कायाना जोगने वि० दोष रहित करे ॥ ५२ ॥

मूलः—५२ जोगसच्चेणं भन्ते जीवे किं जणयइ? जो० जोगं विसोहेइ ॥५२॥

भावार्थ ५२ गद्यः—शिष्य पुछतो हवो हे पूज्य ? मन वचन कायाना योग सत्यपणे प्रवर्तावबे करी

जोग धर्म ध्यानादिकना व्यापारना सा० साधन धर्म उपरे एकाग्र चित्त करी जु० सहित या०वळी भ० होय ॥५४॥

मूलः—५४ वयगुत्तयाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ ? व° निव्वियारत्तं जणयइ, निव्वियारे णं जीवे वइगुत्ते अज्झप्पजोगसाहणजुत्ते यावि भवइ ॥ ५४ ॥

भावार्थ ५४ गद्यः—शिष्य पुछतो हवो हे पूज्य ? वचन पापथी निवारीने गुप्तपणे प्रवर्तावये करी जीव शुं फळ उपार्जे ? तेवारे गुरु उत्तर करेता हवा हे वत्स ? वचन पापथी निवारीने गुप्तपणे प्रवर्तावये करी चार विकथानुं अणकरवापणुं उपराजे, विकथाने अणकरवे करी जीव सर्व वचन गुप्ती सहीत थको मनना धर्म ध्यानादीक व्यापारना साधन धर्म उपरे एकाग्र चित्तपणेकरी सहित होय (अर्थात ध्यान धरवायोग्य साधक होय) ॥५४॥

अर्थः—का० काया गु० गुप्त णं० करी भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपराजे हवे गुरु उत्तर करेछे । का० काय गु० गुप्तपणो करी सं० संवर ज० उपराजे सं० संवर का० काया गु० गुप्ते करी सहित थको पु० पछी पा० पाप कर्म ने आश्रवाना हेतुछे नि० रुंधे क० करे ॥ ५५ ॥

मूलः—५५ कायगुत्तयाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ ? का° संवरं जणयइ, संवरेणं कायगुत्ते पुणो पावासवनिरोहं करेइ ॥ ५५ ॥

भावार्थ ५५ गद्यः—शिष्य पुछतो हवो हे पूज्य ? कायाने पापथी निवारीने गुप्तपणे प्रवर्तावये करी जीव शुं फळ उपार्जे ? तेवारे गुरु उत्तर करेता हवा हे वत्स ? कायाने पापथी निवारीने गुप्तपणे प्रवर्तावये करी संवर उपार्जे अने संवरे करी कायगुप्ती सहीत थको पाप कर्म आश्रवानो हेतु छे ते रुंधे ॥ ५५ ॥

अर्थः–म० मन स० साचे भावे आ० थापवापणे णं० करी। भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं। ज० उपराजे हवे गुरु उत्तर कहेछे ॥ म० मन साचे भावे थापवापणे करी। ए० धर्मने विषे एकाग्रचित्तपणो ज० उपराजे। ए० धर्मने विषे एकाग्रचित्तपणो ज० उपराजीने ना०ज्ञानना प० पर्याय ज०उपराजे ना० ज्ञानना प० पर्यव ज०उपराजीने। स० सम्यक्तने। वि० विशेषे सो० शुद्ध करे। मि० मिथ्यात्वने च० पुरणे। नि० टाले ॥ ५६ ॥

मूलः–५६ मणसमाहारणयाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ? म० एगग्गं जणयइ, एगग्गं जणइत्ता नाणपज्जवे जणयइ, नाणपज्जवे जणइत्ता सम्मत्तं विसोहेइ मिच्छत्तं च निज्जरेइ॥५६॥

भावार्थ ५६ गद्यः–शिष्य पुछतो हवो हे पूज्य? मनने सत्यभावे स्थापवे करी जीव शुं फळ उपार्जे? तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा हे वत्स! मनने सत्यभावे स्थापवे करी धर्मने विषे एकाग्र चित्तपणुं उपराजीने ज्ञानना पर्याय उपार्जे, जे ज्ञानना पर्याय उपराजे ते सम्यकत्वने अने धर्मने विषे एकाग्र चित्तपणुं उपराजीने ज्ञानना पर्याय उपार्जे, जे ज्ञानना पर्याय उपराजे ते सम्यकत्वने विशेषे शुद्ध करे ने मिथ्यात्वने टाळे ॥ ५६ ॥

अर्थः–व० वचनना स्वाध्यायादिकने विषे स० साचे भावे आ० वचनने थापवे करी भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपराजे हवे गुरु उत्तर कहेछे। व० वचनना स्वाध्यायादिकने विषे स० साचे भावे वचनने आ०थापवे करी व०वचन सा०साचे भावे आ०थापवावाळा। दं०सम्यक्तना प०भेदनो वि०मलिनपणो टाळे व० वचनना सा० साचे भावे थापवे करी। दं० सम्यक्तना प० भेदनो नि० मलीनपणो टाळीने सु० सुलभ बो० बोधपणो नि० निपजावे। दु०-दुर्लभ बो० बोधिपणो नि० निपजावे ॥

जोग धर्म ध्यानादिकना व्यापारनां सा० साधन धर्म उपरे एकाग्र चित्त करी जु० सहित या०वली भ० होय ॥५४॥

मूलः—५४ वयगुत्तयाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ ? व° निव्वियारत्तं जणयइ, निव्वियारे णं जीवे वइगुत्ते अज्झप्पजोगसाहणजुत्ते यावि भवइ ॥ ५४ ॥

भावार्थ ५४ गद्यः—शिष्य पुछतो हवो हे पूज्य ? वचन पापथी निवारीने गुप्तपणे प्रवर्तावये करी जीव शुं फल उपार्जे ? तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा हे वत्स ? वचन पापथी निवारीने गुप्तपणे प्रवर्तावये करी चार विकथानुं अणकरवापणुं उपराजे, विकथाने अणकरवे करी जीव सर्व वचन गुप्ती सहीत थको मनना धर्म ध्यानादीक व्यापारना साधन धर्म उपरे एकाग्र चितपणेकरी सहित होय (अर्थात ध्यान धरवायोग्य साधक होय) ॥५४॥

अर्थः—का० काया गु० गुप्त णं० करी भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपराजे हवे गुरु उत्तर कहेछे । का० काय गु० गुप्तपणो करी सं० संवर ज० उपराजे सं० संवर का० काया गु० गुप्ते करी सहित थको पु० वली पा० पाप कर्म जे आववाना हेतुछे नि० रुंधे क० करे ॥ ५५ ॥

मूलः—५५ कायगुत्तयाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ ? का° संवरं जणयइ, संवरेणं कायगुत्ते पुणो पावासवनिरोहं करेइ ॥ ५५ ॥

भावार्थ ५५ गद्यः—शिष्य पुछतो हवो हे पूज्य ? कायाने पापथी निवारीने गुप्तपणे प्रवर्तावये करी जीव शुं फल उपार्जे ? तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा हे वत्स ? कायाने पापथी निवारीने गुप्तपणे प्रवर्तावये करी संवर उपार्जे अने संवरे करी कायगुप्ती सहीत थको पाप कर्म आववानां हेतु छे ते रुंधे ॥ ५५ ॥

त्ता चत्तारि केवलिकम्मंसे खवेइ, तओ पच्छा सिज्झइ बुज्झइ मुच्चइ परिनिवायइ सव्व-दुक्खाणमन्तं करेइ ॥ ५८ ॥

भावार्थ ५८ गयः—शिष्य पुछतो हवो हे पूज्य ? कायाने साचे भावे संयमने विषे स्थापवे करी तथा कायाने मर्यादाए धरतां जीव शुं फळ उपार्जे ? तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा हे वत्स ? कायाने सत्यभावे संयमने विषे स्थापवे करी तथा कायाने मर्यादाए धरता जीव चारित्रना पर्याय निर्मळ करे, चारित्रना पर्याय निर्मळ करीने अनुक्रमे यथाख्यात चारित्रना पर्याय निर्मळ करे, यथाख्यात चारित्रना पर्याय निर्मळ करीने ? वेदनी २ आयुष्य ३ नाम ४ गौत्र ए चार कर्मना अंशने क्षय करे, तेवार पछी सर्व अर्थनी सिधी थाय, लोकालोकनुं स्वरुप जाणे, कर्मथी मुक्त थाय, कर्मरुपी दावानळ ओळवे करी शीतळीभूत थाय अने सर्व दुःखनो अंत करे ॥ ५८ ॥

अर्थः—ना० श्रुत ज्ञानादिक ज्ञाने करी । सं० सहितपणे णं० करी भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपराजे । हवे गुरु उत्तर कहेछे ॥ ना० ज्ञाने करी सं० सहितपणे करी जी० जीव स० सर्व जीवादिकना भा० भावनुं अ० अजाणपणुं ज० उपराजे ॥ ना० ज्ञान सं० सहित होय णं० जे जी० जीवते । चा० च्यार गति सं० संसार रुपणी । फं० अटवीने विषे वि० विणसे न० नहि । ज० जेष्ट सू० सुइ सं० सुत्रना दोरा सहित । कचरामांहि पटि होय । पण न० नहीं वि०विणसे सुइ जाय नहि । त० तेमज जी० जीव निश्चे स० सिद्धांतना जाणपणा सहित होय ते सं० संसारने विषे न० नही वि० विणसे जीव धर्म पामे । ? ॥ ना० ज्ञान वि० विनय त० तप च० चारित्र जो० जोग प्रधानना व्यापार सं० पावे ॥ स० आपणा स० सिद्धांतने विषे प० परपापंडियादिना स०

मूलः—५७ वयसमाहारणयाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ ? व° वयसाहारणदंसणपज्जवे विसोहेइ, वयसाहारणदंसणपज्जवे विसोहित्ता सुलहबोहियत्तं निबत्तेइ, दुल्लहबोहियत्तं निज्जरेइ ॥५७॥

भावार्थ ५७ प्रश्नः—शिष्य पूछतो हवो हे पूज्य ? वचन स्वाध्यायादीकने विषे सत्य भावे स्थापवे करी तथा वचन पर्यायए करतां जीव शुं फल उपार्जे ? तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा हे वत्स ! वचन स्वाध्यायने विषे सत्य भावे स्थापवे करी तथा वचन पर्यायए करता सम्यकत्वना पर्याय निर्मळ करे अने सम्यकत्वना निर्मळपणे करी जीव सुलभ बोधीपणुं निपजावे ने दुर्लभ बोधीपणुं टाळे ॥ ५७ ॥

अर्थः—का० कायाने स० साचेभावे संजमने विषे आ० थापवे णं० करी। भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपजावे हवे गुरु उत्तर कहेछे। का० कायाने स० साचेभावे संजमने विषे थापवे करी जी० जीव च० चारित्रना प० पर्यायने वि० निर्मळ करे। च० चारित्रना प० पर्याय वि० निर्मळ करीने। अ० अनुक्रमे यथाख्यात च० चारित्रना प०पर्याय वि० निर्मळ करे ॥ अ०यथाख्यात च०चारित्रना प०पर्यायने वि०निर्मळ करीने। च० च्यार के० केवलीना क० कर्मना विभागने स० पामे त० तेवार प० पछी सि० सर्व अर्थनी सिद्धी होय पु० संकाशांकनुं सफल जाणे मु० मुक्ति गमन। प० कर्मरूपीया दावानलने उपशमावे करी शीतली भूत थाय॥ स० सर्व दु० दुःखनो अं० अंत क० करे पोंच जाय ॥ ५८ ॥

मूलः—५८ कायसमाहारणयाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ ? का° चरित्तपज्जवे विसोहेइ चरित्तपज्जवे विसोहित्ता अहक्खायचरित्तं विसोहेइ, अहक्खायचरित्तं विसोहे-

करे ॥ प० उतकृष्टो तेणे भवे केवली थइ ज्ञान पामे थके विज्ञानने वि० उलाहवो न० न पामे (प० उतकृष्टो केवल ज्ञाननुं अ० अणउल्हावुं पामे छते) अ० प्रधान । ना० ज्ञान दं० दरसने करी ॥ अ० आपणा आत्माने सं० जोडतो थको । स० साचे भावे आपणा आत्माने भा० भावतो थको वि० विचरे ॥ ६० ॥

॥ २९ ॥

मूलः—६० दंसणसंपन्नयाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ ? दं० भवमिच्छत्तछेयणं करेइ, परं न विज्झायइ, अणुत्तरेणं नाणदंसणेणं अप्पाणं संजोएमाणे सम्मं भावेमाणे विहरइ ॥६०॥

भावार्थ ६० गद्यः—शिष्य पुछतो हवो के हे पूज्य ? दर्शन (समकित) सहितपणे करी जीव शुं फळ उपार्जे ? ते वारे गुरु उतर कहेता हवा हे वत्स ? दर्शन सहीत पणे करी भव करवानो हेतु जे मिथ्यात्व छे तेहने टाळे अने उत्कृष्टो तेहज भवे केवळ ज्ञान पामे छे, ते ज्ञाननो प्रकाश ओलववापणुं न पामे, उतकृष्टु केवळ ज्ञाननो प्रकाश अणओल्हावुं पामे छे, ते प्रधान ज्ञानदर्शने करी आपणा आत्माने जोडतो थको साचे भावे आपणा आत्माने भावतो विचरे ॥६०॥

अर्थः—च० चारित्र सं०सहित पणे णं०करी । भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपराजे ॥ हवे गुरु उतर कहेछे ॥ च०चारित्र सं०सहितपणे करी से० सेलेसीसेल कहेता पर्वत मांहि ठाकर ते मेरुपर्वत तेहनी परे निश्चल सेलेसी तेहनो भा० भाव ज० उपराजे से०सलेसीनो भाव प०पडिवज्यो छे ते य०वळी अ०अणगार मुनिराज च० च्यार के० केवलीनां क०कर्मना विभाग से० ते ख० षपावे ॥ त० तेवार प०पछे सि० सर्व अर्थनी सिद्धि होय । मु० मुक्ते मु०कर्मथी मुकाय । स० सर्व दु० दुखनो अं० अंत क० करे ॥ ६१ ॥

॥ ३५१ ॥

मूलः—५७ वयसमाहारणयाए भन्ते जीवे किं जणयइ ? व० वयसाहारणदंसणपज्जवे विसोहेइ, वयसाहारणदंसणपज्जवे विसोहित्ता सुलहबोहियत्तं निव्वत्तेइ, दुल्लहबोहियत्तं निज्जरेइ ॥५७॥

भावार्थ ५७ गद्यः—शिष्य पुछो हवो हे पूज्य ! वचन स्वाध्यायादीकने विषे सत्य भावे स्थापवे करी तथा वचन मर्यादाए वरतां जीव शुं फल उपार्जे ? तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा हे वत्स ! वचन स्वाध्यायने विषे सत्य भावे स्थापवे करी तथा वचन मर्यादाए वरता सम्यक्त्वना पर्याय निर्मळ करे अने सम्यक्त्वना निर्मळपणे करी जीव सुलभ बोधीपणुं निपजावे ने दुर्लभ बोधीपणुं टाळे ॥ ५७ ॥

अर्थः—का० कायाने स० सानेभावे संजमने विषे आ० थापवे क० करी। भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपरांते हवे गुरु उत्तर कहेछे। का० कायाने स० सानेभावे संजमने विषे थापवे करी जी० जीव च० चारित्रना प० पर्यायने वि० निर्मल करे। च० चारित्रना प० पर्याय वि० निर्मल करीने। अ० अनुक्रमे यथाख्यात च० चारित्रना प० पर्याय वि० निर्मल करे ॥ अ० यथाख्यात च० चारित्रना प० पर्यायने वि० निर्मल करीने। च० च्यार के० केवलीना क० कर्मना विभागने ख० पखावे त० तेवार प० पछी सि० सर्व अर्थनी सिद्धी होय बु० लोकालोकनुं सरुप जाणे मु० कर्मथी मुकाय। प० कर्मरुपीया दावानलने उपसमावे करी शीतली भूत थाय ॥ स० सर्व दु० दुःखनो अं० अंत क० करे मोक्ष जाय ॥ ५८ ॥

मूलः—५८ कायसमाहारणयाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ ? का० चरित्तपज्जवे विसोहेइ चरित्तपज्जवे विसोहित्ता अहक्खायचरित्तं विसोहेइ, अहक्खायचरित्तं विसोहे-

सामने वि० विपे सा० वेदणहार य० वली अ० अहीरणीक पुनरागोग्य भ० होय तेहना स्वरूपनो जाण होय ॥५०॥

मूलः—५१ नाणसंपन्नयाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ? ना० जीवे सद्भावाहिगमं जणयइ, नाणसंपन्ने णं जीवे चाउरन्ते संसारकन्तारे न विणस्सइ, जहा सूई ससुत्ता न विणस्सइ तहा जीवे ससुत्ते संसारे न विणस्सइ, नाणविणयतवचरित्तजोगे संपाउणइ ससमयपरसमयविसारए य अप्पाघायणिज्जे भवइ ॥ ५१ ॥

भावार्थ ५१ प्रश्नः—शिष्य पूछतो हवो हे पूज्य? श्रुत ज्ञानादीक ज्ञाने करी सहीतपणे जीव शुं फळ उपार्जे? तेवार गुरु उत्तर कहेता हवा हे वत्स! श्रुत ज्ञानादीक ज्ञाने करी सहीतपणे जीव सर्व जीवादीकना भावनुं जाणपणुं उपजावे अने ज्ञाने करी सहीत जे जीव होय ते चार गती संसाररुपणी अटवीने विषे परिभ्रमण करवे मुक्ति मार्गथी दूर न पडे (अर्थात मुक्ति मार्गथी विणसे नहि), जेम सुथना दोरा सहीत सुइ (सांइ) कचरा माही पडी होय ते विणसे नहि (अर्थात सुइ खोवाय नहि) तेम जीव पण सिद्धांतना ज्ञानपणा सहीत होय ते संसारने विषे विणसे नहि (अर्थात जीव धर्म पामे) अने ज्ञानथी विनय तप चारित्रना योग प्रधान व्यापार पामे, वली स्वसमय (जैन) ना सिद्धांत अने परसमय (अन्य धर्मि) ना सिद्धांत ए बेनेनो भेदकरनार होय ते तेना स्वरूपनो जाण होय ॥ ५१ ॥

अर्थः—ना० ज्ञानने सं० सहितपणे णं० करी भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपजावे हवे गुरु उत्तर कहेछे ना० ज्ञान सं० सहित पणे करी भ० भव करवानो हेतु ते मि० मिथ्यात्व तेहने छे० छेद क०

उपार्जे ? ते वारे गुरु उत्तर कहेता हवा हे वत्स ? रसेंद्रीने निग्रह करवे करी सारा माठा रसने विषे रागद्वेषनो निग्रह करवो उपार्जे ? अने ते रागद्वेषने निग्रह करवे करी जीव नवां कर्म न बांधे अने पुर्वे जे कर्म बांधेल छे ते क्षय करे ॥ ६५ ॥

अर्थः-फा० फरस इंद्रीयने नि० निग्रहकरवेकरी । भं० हेपूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपराजे हवे गुरु कहेछे ॥ फा० फरस इंद्रीयनुं निं० निग्रहकरवेकरी ॥म० मनोज्ञ अ० अमोज्ञ फा० फरसने विषे रा० राग दो० दोष एटले द्वेषनुं नि० निग्रहकरयुं ज० उपराजे त० तेरागद्वेषने च० निमित्ते । क० कर्म न० न बं० बांधे ॥ पु० पुर्वे ब० बांध्याहोयते च० पुरणे नि० पषावे ॥ ६६ ॥

मूलः–६६ फासिन्दियनिग्गहेणं भन्ते जीवे किं जणयइ ? फा० मणुन्नामणुन्नेसु फासेसु रागदोसनिग्गहं जणयइ, तप्पच्चइयं कम्मं न बन्धइ पुव्ववद्धं च निज्जरेइ ॥ ६६॥

भावार्थ ६६ गद्यः–शिष्य पुछतो हवो हे पूज्य ? स्पर्शेंद्रीय (काया) ने निग्रह करवे करी जीव शुं फळ उपार्जे ? ते वारे गुरु उत्तर कहेता हवा हे वत्स ? स्पर्शेंद्रीयने निग्रह करवे करी स्पर्शेंद्रीयने विषे रागद्वेषनो निग्रह करवो उपार्जे ? अने ते रागद्वेषनो निग्रह करवे करी जीव नवां कर्म न बांधे अने पुर्वे जे कर्म बांधेल छे ते क्षय करे ॥ ६६ ॥

अर्थः–को० क्रोधने वि० जितवेकरी भं० हेपूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपराजे ॥ हवे गुरु उत्तर कहेछे ॥ को० क्रोधने वि० जितवेकरी खं० क्षमा ज० उपराजे । को० क्रोधे करी जे कर्मने बांधीए

साक्षने वि० विषे सा० मेळवणहार य० वली अ० अहीनणीक पुनवागोग्य भ० होय तेहना स्वरूपनो जाण होय ॥५९॥

मूलः—५९ नाणसंपन्नयाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ? नाण जीवे सद्भावाहिगमं जणयइ, नाणसंपन्ने णं जीवे चाउरन्ते संसारकन्तारे न विणस्सइ, जहा सूई ससुत्ता न विणस्सइ तहा जीवे ससुत्ते संसारे न विणस्सइ, नाणविणयतवचरित्तजोगे संपाउणइ ससमयपरसमयविसारए य असंघायणिज्जे भवइ ॥ ५९ ॥

भावार्थ ५९ गद्यः—शिष्य पुछतो हवो हे पूज्य! श्रुत ज्ञानादीक ज्ञाने करी सहीतपणे जीव शुं फळ उपार्जे? तेवार गुरु उत्तर कहेता हवा हे वत्स! श्रुत ज्ञानादीक ज्ञाने करी सहीतपणे जीव सर्व जीवादीकना भावनुं जाणपणुं उपरांजे अने ज्ञाने करी सहीत जे जीव होय ते चार गती संसाररुपणी अटवीने विषे परिभ्रमण करवे मुक्ति मार्गथी दुर न पडे (अर्थात मुक्ति मार्गथी विणसे नहि), जेम सुत्रना दोरा सहीत सुइ (सोइ) कचरा मांही पडी होय ते विणसे नहि (अर्थात सुइ खोवाय नहि) तेम जीव पण सिद्धांतना जाणपणा सहीत होय ते संसारने विषे विणसे नहि (अर्थात जीव धर्म पामे), अने ज्ञानथी विनय तप चारित्रना योग्य प्रधान व्यापार पामे, वली स्वसमय (जैन) नां सिद्धांत अने परसमय (अन्य धर्मि) नां सिद्धांत ए बंनेनो मेळवनार होय ने तेनां स्वरुपनो जाण होय ॥ ५९ ॥

अर्थः—दं० दरसने सं० सहितपणे णं० करी भं० हे पूज्य जी० जीव किं० शुं न० उपराने हवे गुरु उत्तर कहेछे दं० दरसन सं० सहित पणे करी भ० भव करवानो हेतु ते मि० मिथ्यात्व तेहने छे० छेद क०

छे ते क्षय करे ॥ ६८ ॥

अर्थः–मा० मायाने वि० जितवेकरी भं० हेपूज्य जी० जीव किं० शुं ज० उपराजे हवे गुरु उत्तरं कहेछे ॥ मा० मायाने ॥ वि० जितवेकरी अ० सरल सभाव ज० उपराजे ॥ मा० मायाने करवेकरी जेकर्म बांध्याछे वे० पछे ते भोगवे तेहवा क० कर्म न० न सरलपणे व० बांधे । मायाए करीने जे कर्म्म पु० पुर्वे व० बांध्यां छे तेकर्म च० वळी नि० पपावे ॥ ६९ ॥

मूलः–६९ मायाविजएणं भन्ते जीवे किं जणयइ? मा० अज्जवं जणयइ, मायावेयणिज्जं कम्मं न बन्धइ पुव्ववद्धं च निज्जरेइ ॥ ६९ ॥

भावार्थ ६९ गद्यः–शिष्य पुछतो हवो हे पूज्य ? कपटने जीतवे करी जीव शुं फळ उपार्जे ? तेवारे गुरु उतर कहेता हवा हे वत्स ? कपटने जीतवे करी, सरळ भाव (भद्रीकपणुं) उपराजे अने कपट करवे करीने जे कर्म बांधीने पछी भोगववां पडे, तेहवां कर्म शरळपणे करी न बांधे अने पुर्वे जे कपट करीने कर्म बांधेल छे ते क्षय करे ॥ ६९ ॥

अर्थः–लो०लोभने वि०जितवेकरी भं० हेपूज्य जी० जीव किं० शुं ज०उपराजे ॥ हवेगुरु उत्तर कहेछे॥ लो० लोभने वि० जिपवेकरी सं०संतोष ज० उपराजे ॥ लो० लोभेकरीने जेकर्म बांधीने वे० पछे भोगवे तेहवा क० कर्म संतोषे न० न बं० बांधे ॥ पु०लोभेकरी जेकर्म पुर्वे व० बांध्याछे तेकर्म च०वळी नि०खपावे ॥ ७० ॥

मूलः–७० लोभविजएणं भन्ते जीवे किं जणयइ ? लो० संतोसं जणयइ, लोभवे-

मूलः—६१ चरित्तसंपन्नयाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ? च० सेलेसीभावं जणयइ. सेलेसिं पडिवन्ने य अणगारे चत्तारि केवलिकम्मंसे खवेइ, तओ पच्छा सिज्झइ बुज्झइ मुच्चइ सव्वदुक्खाणमन्तं करेइ ॥ ६१ ॥

भावार्थ ६१ मूलः—शिष्य पुछतो हवो के हे पूज्य? चारित्र सहीतपणे करी जीव शुं फल उपार्जे, ते सारे गुरु उत्तर करेछे। हवा हे वत्स? चारित्र सहीतपणे करी शैलेशी (शैल एटले पर्वत अने एशी एटले ठाकोर अर्थात पर्वतनो ठाकोर मेरु पर्वत) नी पेरे निश्चल भाव उपराजे अने जे शैलेशीनो भाव अंगीकार करेल छे ते अणगार १ वेदनी २ आयुष्य ३ नाम ४ गोत्र ए चार कर्मना अंश क्षय करे, तेवार पछी सर्व अर्थनी सिद्धी होय, लोकालोकनुं स्वरुप जाणे, कर्मथी मुकाय, कर्मरुपी दावानळ ओलवी शीतळी भूत थाय ने सर्व दुःखनो अंत करे ॥ ६१ ॥

अर्थः—सो० श्रोत्रेंद्रियनुं नि०निग्रह करवे णं०करी भं० हेपूज्य जी०जीव किं०शुं ज० उपराजे ॥ हवे गुरु उत्तर कहेछे ॥ सो० श्रोत्रेंद्रियने नि० निग्रह करवेकरी म० मनोज्ञ अ० अमनोज्ञ स० शब्दनेविषे रा० राग दो० द्वेषनुं नि० निग्रहकरतुं ज० उपराजे त० तेरागद्वेषने व० निमित्ते क० कर्म न० न बं० बांधे ॥ पु० जेकर्म पूर्वे ब० पुरणे बं० बांध्या ते नि० पखावे ॥ ६२ ॥

मूलः—६२ सोइन्दियनिग्गहेणं भन्ते जीवे किं जणयइ? सो० मणुन्नामणुन्नेसु सद्देसु रागदोसनिग्गहं जणयइ, तण्णइयं कम्मं न बन्धइ पुव्वबद्धं च निज्जरेइ ॥ ६२ ॥

नीपजावे (जावसजोगी० इहांएमं नसदहवुं जेसुभ जोगमांहि इरियावहिनो वंधपडेछे ॥ प्रकरणना मानणहार सुभ योगथी इरियावहिनो वंधसदहेछे ॥ अत्रउत्तर ॥ सुभजोग तेसंजमछे अने तपसंजमथीतो एके ॥ कर्मनीप्रकृतिन वंधाय तोस्यार्थीवंधायछे तेकहेछे ॥ तिहांवेदनी कर्मछे तेत्रण कर्मथी वळीयुंछे ॥ ते वेदनी वेदतोथको ७।८।६॥१। कर्मवांधे तेअत्रे १३ मे वेदना वेदेछे ॥ तेएक इरियावहिरूप वेदनीवांधी तेवेदना उदयमादे) जा० ज्यांलगे स० मनवचन कायाना व्यापारवंत भ० होय ॥ ता० तिहांलग इ० इर्यावही क० कर्म नि० वांधे ॥ सु० सुखकारीओ जीवसंघाते तेकर्मना फ०फरसछे तेदुःखकारीनथी ॥ दु० वेसमयनी ठि०स्थितिते तं० तेकर्म प०पहिले स०समय व०वांधे वि० बीजे स०समय तेकर्मने वे० भोगवे ॥ त० तेकर्म त्रीजे स० समय नि० पपावे ॥ तं० तेइरियाव हिकर्म व० वांध्यो हतो पु० फरस्यो उ०उदयपाम्यो ॥ वे० भोगयुं नि० तेकर्म क्षयगयुं ॥ से० तेआगमी य० वळी (कां० काले) अ० कर्मरहित चा० वळी भ० होय ॥ ७१ ॥

अध्य०

॥ २९ ॥

मूलः—७१ पिज्जदोसमिच्छादंसणविजएणं भन्ते जीवे किं जणयइ? पि० नाणदंसणचरित्ताराहणयाए अब्भुट्ठेइ अट्ठविहस्स कम्मस्स कम्मगण्ठिविमोयणयाए तप्पढ-मयाए जहाणुपुवीए अट्ठवीसविहं मोहणिज्जं कम्मं उग्घाएइ, पञ्चविहं नाणावरणिज्जं नवविहं दंसणावरणिज्जं पञ्चविहं अन्तराइयं, एए तिन्नि वि कम्मंसे जुगवं खवेइ. तओ पच्छा अणुत्तरं कसिणं पडिपुण्णं निरावरणं वितिमिरं विसुद्धं लोगालोगप्पभावं केवलव-

गंधनेविषे रा० राग दो० द्वेष नि० निग्रह करवो। ज० उपराजे त० तेरागद्वेष ध० निमित्ते च० पूरणे। क० कर्म न० न बं० बांधे ॥ पु० जेकर्म पुर्वे बं० बांध्याहोयते नि० षपावे ॥ ६४ ॥

मूलः–६४ घाणिन्दियनिग्गहेणं भन्ते जीवे किं जणयइ ? घा० मणुन्नामणुन्नेसु गन्धेसु रागदोसनिग्गहं जणयइ, तप्पच्चइयं कम्मं न बन्धइ पुव्ववद्धं च निज्जरेइ ॥ ६४ ॥

भावार्थ ६४ गद्यः–शिष्य पुछतो हवो हे पूज्य ! घ्राणेंद्री (नासिका) ने निग्रह करवे करी जीव शुं फळ उपार्जे ? ते वारे गुरु उत्तर कहेता हवा हे वत्स ! घ्राणेंद्रीने निग्रह करवे करी सारा माठा गंधने विषे राग द्वेषनो निग्रह करवो उपार्जे ? अने ते रागद्वेषने निग्रह करवे करी जीव नवां कर्म न बांधे ने पुर्वे जे कर्म बांधेल छे, ते क्षय करे ॥ ६४ ॥

अर्थः–नि० जिभेंद्रियनो नि० निग्रहकरवेकरी भं० हेपूज्य जी० जीव ! किं० शुं ज० उपराजे ॥ हवे गुरु उत्तर कहेछे ॥ नि० जिभेंद्रियनुं नि० निग्रहकरवेकरी म० मनोज्ञ ॥ अ० अमनोज्ञ र० मधुरादिक रसना स्वादने विषे। रा० राग दो० द्वेष नि० निग्रहकरवो ज० उपराजे त० तेरागद्वेष ध० निमित्ते क० कर्म न० न बं० बांधे। पु० पुर्वे जेकर्म ब० बांध्याहुवेते च० वळी नि० षपावे ॥ ६५ ॥

मूलः–६५ जिब्भिन्दियनिग्गहेणं भन्ते जीवे किं जणयइ ? जि० मणुन्नामणुन्नेसु रसेसु रागदोसनिग्गहं जणयइ, तप्पच्चइयं कम्मं न बन्धइ पुव्ववद्धं च निज्जरेइ ॥ ६५ ॥

भावार्थ ६५ गद्यः–शिष्य पुछतो हवो हे पूज्य ? रसेंद्री (जीभ) ने निग्रह करवे करी जीव शुं फळ

सेष आ० आउपो थाकतो होय तेवारे जो० मन वचन कायाना व्यापार नि० रुंधतो क० थको बंधने पपावना रह्योतो । सु० सूक्ष्म कि० मन वचन कायानां व्यापार । अ० पाछा पडवानो आचार नथी एहवुं ॥ सु० शुक्लध्यांन झा० ध्यातो थको । त० तेमाहे प० पहिलुं म० मनना जो० व्यापार नि० रुंधे ॥ व० वचननो जो० जोग व्यापार नि० रुंधिने आ० उस्वास पा० निस्वास नि० रुंधे क० रुंधीने । ई० लगारेक । पं० पांच र० नान्हा अ० अक्षर । अ इ उ रु लृ उ० उचार करता अ० थोडो काल लगे एहवी सलेसी पडिवरजी होय य० णं० ते । अ० अणगार । स० मन वचन कायाना व्यापारनीछेदाणीछे । कि० क्रिया अ० कर्मक्षय किधा विना जे ध्यांन पाछो वले नहि एहवो सु० शुकल ध्यांन झि० ध्यातो थको । वे० वेदनी आ० आउपा कर्म्म ना० नाम कर्म गो० गोत्र कर्म च० वळी । ए० ए च० च्यार क० कर्मना अंसविभाग जु० समकाले ख० पपावे ॥ (जु० समकाले ख० पपावीने । तयो० तेवारपछी ते च्यार कर्म पपावे माटे । उदारिकादिक ३ सरिर पपावे करी) ॥ ७२ ॥

मूलः–७२ अह आउयं पालइत्ता अन्तोमुहुत्तद्धावसेसाए जोगनिरोहं करेमाणे सुहुमकिरियं अप्पडिवाइं सुक्कज्झाणं झायमाणे तप्पढमयाए मणजोगं निरुम्भइ, वइजोगं निरुम्भइ, आणपाणनिरोहं करेइ, ईसि पञ्चरहस्सक्खरुच्चारणट्ठाए य णं अणगारे समुच्छिन्नकिरियं अनियट्टिसुक्कज्झाणं झियायमाणे वेयणिज्जं आउयं नामं गोत्तं च, एए चत्तारि कम्मंसे जुगवं खवेइ ॥ ७२ ॥

वे० पहले कर्म भोगवता तेहनो क० कर्म क्षयापशमी नं० ते व० जाणे ॥ गु० क्रोधेकरीने तेपूर्वे कर्म बं० बांध्याछे तेकर्म प० करी वि० पमाडे ॥ ६७ ॥

मूलः—६७ कोहविजएणं भन्ते जीवे किं जणयइ ? को० खन्तिं जणयइ, कोहवेयणिज्जं कम्मं न बन्धइ पुव्वबद्धं च निज्जरेइ ॥ ६७ ॥

भावार्थ ६७ प्रश्नः—हिव पूछयो हतो हे पूज्य ! क्रोधने जीतवे करी जीव शुं फल उपजे ? ते वारे गुरु उत्तर दीधा हता, हे वत्स ! क्रोधने जीतवे करी क्षमा उपजावे अने क्रोध करवे करी जे मोहनी कर्म बांधवू छे ? ते कर्म क्रोधरहितपणे करी न बांधे अने क्रोधे करी जे पूर्वे कर्म बांधेल छे ते कर्म क्षय करे ॥६७॥

अर्थः—भ० भावने वि० विषेकरी बं० हेतुए जी० जीव कि० शुं ज० उपजावे हेयगुण उपजा कहेजे। भा० भावने। वि० विवेकरी म० अंतःकरणपरिणतिए ज० उपजावे। भा० भावेकरी तेकर्म बांधवाने वे० पहले कर्म भोगवे तेहनो क० कर्मविपाकक्षयोपशमी न० न ब० बांधे ॥ गु० भावेकरी तेकर्म पूर्वे ब० बांध्याछे तेकर्म च० पूरणे नि० पमाडे ॥६८॥

मूलः—६८ माणविजएणं भन्ते जीवे किं जणयइ ? मा० मद्दवं जणयइ, माणवेयणिज्जं कम्मं न बन्धइ पुव्वबद्धं च निज्जरेइ ॥ ६८ ॥

भावार्थ ६८ प्रश्नः—हिव पूछयो हतो हे पूज्य ! मानने जीतवे करी जीव शुं फल उपजे ? ते वारे गुरु उत्तर दीधा हता हे वत्स ! मानने जीतवे करी मार्दवगुण उपजावे ? अने मान करीने जे कर्म बांधेल छे ते कर्म मार्दवगुण परिणतिए करी न बांधे अने मान करी पूर्वे जे कर्म बांधेल

भावार्थ ७३ गद्यः–उदारिक शरिर, तेजश शरिर, कार्मण शरिर ए सर्व छांडीने समश्रेणी पाम्यो आपणा जीवनी अवगाहनाने जेटला आकाश प्रदेश करवा जोइए तेटला उपरांत अधीका प्रदेश अणस्पर्शतो वांकी गती अणकरतो थको एके समे उंचो मोक्षने विषे ज्ञाननो उपयोगवंत सिद्ध थाय, मुक्तिपद पामे, तेहने सर्व अर्थनी सिद्धी थाय ने लोकालोकनुं स्वरुप जाणे ने कर्मथी मुक्त थाय ने कर्मरुपी दावानल ओलवीने शीतलीभुत थाय ने सर्व दुःखनो अंत करे ॥७३॥

अर्थः–हवे श्री सुधर्मा स्वामी जंबू प्रत्ये कहेछे। ए० ए ख० निश्चे स० सम्यक्त प० पराक्रमवंत ॥ अ० अध्ययननो अ० अर्थ स० समण तपस्वी। भ० भगवंत म० श्री महावीरदेवे। आ० सामान्य प्रकारे कह्यो ॥ प० स्वरुपने कहेवे करी परुप्या। प० घणा भेदने देपाडवे करी। दं० दृष्टांत कहेवे करी देपाड्यो ॥ उ० उपदेस्यो ॥ इ० श्री सुधर्मास्वामीए जंबू प्रते कहुं। हे जंबू जेम मे श्री महावीरदेव समीपे सांभल्युं होय तेम तुंज प्रते वे० कहुंछुं ॥ २९ ॥

मूलः–एस खलु सम्मत्तपरक्कमस्स अज्झयणस्स अट्ठे समणेणं भगवया महावीरेणं आघविए पन्नविए परूविए दंसिए उवदंसिए ॥ त्ति बेमि ॥

यणिज्जं कम्मं न बन्धइ पुव्ववद्धं च निज्जरेइ ॥ ७० ॥

भावार्थ ७० गद्यः-शिष्य पुछ्यो हवो हे पुज्य ? लोभने जीतवे करी जीव शुं फळ उपार्जे ? तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा हे वत्स ? लोभने जीतवे करी जीव संतोष उपराजे ? अने लोभे करी जे कर्म बांधीने पछी भोगववां पडे तेवां कर्म संतोषे करी न बांधे अने लोभे करी पुर्वे जे कर्म बांधेलछे ते क्षय करे ॥७०॥

अर्थः-पि०राग दो०द्वेष मि०मिथ्यात्व दं०दर्सन ३ ए त्रण वि०जितवेकरी भं० हेपूज्य जी० जीव किं० शुं न० उपराने ॥ हवे गुरु उत्तर कहेछे ॥ पि० राग १ दो० द्वेष २ मि० मिथ्यात्व दरसन एत्रण ३ वि० जितवे टाल्वेकरी ॥ ना० ज्ञान १ दं० दर्सन २ ॥ च० चारित्र ३ ॥ आ० आराधना करवाने अर्थे ॥ अ० उपमकरे अ०आठ प्रकारना क०कर्मथांहि ॥ क० जेकर्म पपवता दोहिला एहवा कर्मनी गं०गांठ वि० भुक्कावना ने अर्थे उपमकरे ॥ म० जेमोहनीकर्म पहेलो पपाव्योनथी ॥ तेमोहनीकर्मने ॥ ज० जेम अ० अनुक्रमे पपावानी विधीछे तेम पपावे अनंतानुबंधीया क्रोधादिकने पपावे ॥ अ० अठावीस प्रकारे मो० मोहनी क० कर्म उ० पपावे ॥ पं० पांचप्रकारे ॥ ना० ज्ञानावरणीकर्म ॥ न० नवप्रकारे दं० दर्शनावरणीकर्म ॥ पं० पांचप्रकारे ॥ अ० अंतरायकर्म ॥ ए० ए नि० त्रण अ० निश्चे ॥ क० कर्मनाभंग ॥ जु० समकालेसाथे स० पपावे ॥ त० तेवार प० पछे ॥ अ० अज्ञान (अं०अंतरहित अनंतोज्ञान) क० सर्वपदार्थनो जाणपणो ॥ प० संपूर्णज्ञान ॥ नि० आवर्णरहित ॥ वि० अज्ञानरुप अंधकार रहित ॥ वि० सर्वदोष रहित ॥ लो० लोक अलो० अलोकमांहि ॥ प० प्रकाशनो करणहार एहवो ॥ के० केवल ज्ञ० अज्ञान ना० ज्ञान दं० दरसन ॥ स० सम्यक प्रकारे ॥ उ०

रात्रीभोजनथी निवर्त्यो, एहवो जीव होय ते नवां कर्म ग्रहण करवाथी रहीत थाय ॥२॥

अर्थः-पं० पांच स० समिति सहित । ति० त्रण गु० गुप्ति सहित । अ० कषाय रहित जि० जितेंद्रि ॥ अ० त्रण गारव रहित य० वळी । नि० त्रण शल्य रहित । जी० एहवो जीव होय ते हो० थाय अ० नवाकर्म नग्रहे ॥३॥

मूलः-पञ्चसमिओ तिगुत्तो अकसाओ जिइन्दिओ ।
अगारवो य निस्सल्लो जीवो होइ अणासवो ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः-पांच समिति ने त्रण गुप्ती सहीत, कषाय रहीत, जीतेंद्री, त्रण गर्व रहीत, त्रण सल्य रहीत एहवो जीव होय ते नवां कर्म ग्रहण करवाथी रहीत थाय ॥ ३ ॥

अर्थः-ए० ए प्राण वधनी विरति प्रमुपने तु० वळी वि० विपरीत प्राणवधादिकने विषे । रा० राग दो० द्वेषे स० अतिशे उपराज्या कर्म । ख० षपावे ज० जेम भि० साधु य० वळी तं० ते मे० मुजने ए० एकाग्र म० मन थको सु० सांभल हे शिष्य मुजने कहेता थका ॥ ४ ॥

मूलः-एएसिं तु विवच्चासे रागदोससमज्जियं ।
जहा य खवई भिक्खू तं मे एगमणो सुण ॥ ४ ॥

दुसमयट्ठिइयं, तं पढममए बद्धं बिइयसमए वेइयं तइयसमए निज्जिण्णं; तं बद्धं पुट्ठं उदीरियं वेइयं निज्जिण्णं सेयाले य अकम्मं चावि भवइ ॥ ७१ ॥

भावार्थ ७१ गयः—शिष्य पुछतो हवो हे पूज्य ? राग द्वेष ने मिथ्यात्व दर्शन ए बणने, जीतवे करी जीव शुं फल उपार्जे ? तेवारे गुरु उत्तर कहेता हवा हे वत्स ! राग द्वेष ने मिथ्यात्व दर्शनने जीतवे करी ज्ञान दर्शन चारित्रनी आराधना करवाने अर्थे जीव उद्यम करे अने ते ज्ञान करणां दूहर एवा आठ प्रकारना कर्मनी गांठ भुकावाने अर्थे उद्यम करे अने जे मोहनी कर्म पहेलुं क्षय कर्युं नथी, ते मोहनी कर्मने अनुक्रमे क्षय करवानी विधी छे तेम क्षय करे, अनंतानुबंधी क्रोधादीक २८ प्रकारे मोहनी कर्म क्षय करे अने ५ प्रकारे ज्ञानावर्णि कर्म, ९ प्रकारे दर्शनावर्णी कर्म, ५ प्रकारे अंतराय कर्म ए त्रण कर्मना भंग समकाले (सा-थेज) क्षय करे, तेवार पछी प्रधान अंत रहीत सर्व पदार्थनुं जाणपणुं संपुर्ण आवरण (आडपडदो) रहीत व्याघात (विघ्न) रहीत अज्ञानरुपी अंधकार रहीत सर्व दोष रहीत ने लोकालोक प्रकाशक एहवुं केवळज्ञानने केवळ दर्शन पामे, ते केवळी ज्यां सुधी मन वचन कायाना व्यापारवंत होय, त्यांलगी इर्यावही कर्म बांधे, ते कर्मनो स्पर्श जीव संघाते सुखकारी छे पण दुःखकारी नथी, वळी ते कर्मनी बे समयनी स्थिति छे, ते पहेले समे कर्मने बांध्युं, बीजे समे ते कर्म भोगव्युं अने त्रीजे समे ते कर्म क्षय कर्युं, ते इर्यावही कर्म बांध्युं, स्पर्श्युं, उदय आव्युं ने भोगव्युं ते कर्म क्षय गयुं तेथी अनागतकाळे चोथे समे ते कर्म रहीत होय ॥ ७१ ॥

अर्थः—अ० अंतर्मुहुर्तादीक जेटलो आ० आउषो होय तेटलो पा० भोगवीने । अं० अंतर्मुहूर्त अ० काल अ०

बाहिरो छव्विहो वुत्तो एवमब्भन्तरो तवो ॥ ७ ॥

गाथा. ७ भावार्थः–ते तप बाह्यने अभ्यंतर एवा बे प्रकारनो कह्याछे, तेमां बाह्यतप ६ प्रकारे अने अभ्यंतर तप पण ६ प्रकारे कहेल छे ॥ ७ ॥

अर्थः–हवे बाह्य तपना नाम कहेछे अ० नमोकारसी आदि अणसण तप । १ । ऊ० उणोदरी तप ।२। भि० आठ प्रकारनी गोचरिनी विधि ते भिक्षाचरि ३ य०वळी । र० रस परित्याग ४ ॥ का० काया कि० कलेश तप ५ ॥ सं० इंद्रि गोपवी राषे ते संलीनता तप ६ य० वळी । व० ए छ प्रकारे बाह्य त० तप हो० होय ॥८॥

मूलः–अणसणमूणोयरिया भिक्खायरिया य रसपरिच्चाओ ।
कायकिलेसो संलीणया य बज्झो तवो होइ ॥ ८ ॥

गाथा. ८ भावार्थः–हवे ६ प्रकारना बाह्यतपनां नाम कहे छे, १ अणसण, २ उणोदरि, ३ भिक्षाचरी, ४ रस परित्याग, ५ काय कलेश, ६ संलीनता ए छ प्रकारे बाह्य तप कह्यो. ॥ ८ ॥

अर्थः–इ० थोडाकालनी मर्यादा ते नमोकारसी प्रमुष म० मरण का० काळे ते जावजीवनो अणसण य० वळी अ० अणसण दु० बे प्रकारे भ० होय । इ० थोडाकाल बे घडि आदि मर्यादा पुरी थइ पछी । सा० ते भोजननी करवानी वांछा सहित होय १ ॥ नि० भोजन करवानी वांछा रहित उ० वळी वि० ए बीजो अणसण ॥ ९ ॥

मूलः–इत्तरिय मरणकाला य अणसणा दुविहा भवे ।
इत्तरिय सावकङ्खा निरवकङ्खा उ बिइज्जिया ॥ ९ ॥

आयुष्य होय तेवारे मन वचन कायाना व्यापार रुंधतो थको मन वचन कायाना व्यापार पाछा पडवानो आचार नथी, एहवो शुक्ल ध्याननो त्रीजो भेद ध्यातो थको तेमांही प्रथम मननो व्यापार रुंधे, पछी वचननो व्यापार रुंधे, पछी कायानो व्यापार रुंधे, पछी श्वासोश्वासनुं रुंधवुं करे, पछी लगारेक, अ, इ, ऊ, ऋ, लृ, ए पांच नाना अक्षरनो उच्चार करतां जेटलो काळ थाय, एहवी शैलेशी अवस्था होय, ते अणगार (साधु) ने मन वचन कायाना व्यापारनी जेहने क्रिया छेदाणी छे, कर्म सघ कर्या विना जे जे ध्यान पाछुं वळे नहि, ते शुक्ल ध्याननो चोथो भेद ध्यातो थको १ वेदनी, २ आयुष्य, ३ नाम, ४ गोत्र, ए चार कर्मना अंश समकाळे क्षय करीने पछी [इहांनो समास आगळ ७३ मे बोले पुर्ण थशे] ॥७२॥

अर्थः—त० ते माटे ओ० उदारिक ते० तेजस स० सरिर अने क० कार्मण सरिर स० सर्वथी वि० छांडवे करी । वि० छांडवे करीने उ० ऋजुश्रेणी प० पाम्युं अ० आपणा जीवनी अवगाहनाने जेटला आकास प्र० देस फरस्या होए तेटला उपरांत अधीका आकाश प्रदेश अणफरसतो थको ग० मोक्ष जाय उ० उंचो ए० एक स० समे म० वांकीगती अणकरतो थको त० तिहा मोक्षने विषे गं० जाने । सा० ज्ञानना उ० उपयोगवंत।सि० सिद्ध थाय तेहने सर्व अर्थनी सिद्धि होय बु० बुज्झे जा० वळी अ० सर्व दुखनो अंत क० करे ॥ ७३ ॥

मूलः—७३ तओ ओरालियकम्माइं सव्वाहिं विप्पजहणाहिं विप्पजहित्ता उज्जुसेढिपत्ते अफुसमाणगई उड्ढं एगसमएणं अविग्गहेणं तत्थ गन्ता सागारोवउत्ते सिज्झइ बुज्झइ जाव अन्तं करेइ ॥ ७३ ॥

तप थाय, ३ त्रीजो घनतप ते प्रतर तपने श्रेणी गुणो करीए तेवारे घनंतप थाय, ४ वर्ग तप ते घननै घन गुणो करीए तेवारे वर्ग तप थाय ॥ १० ॥

अर्थः—न० तेवार पछी य० वली व० वर्ग व० वर्ग तप ते वर्ग वर्ग गुणो करीए तेवारे वर्ग वर्ग तप नीपजे ए पं० पांचमो वर्ग तप ५ छ० छठो प० प्रकीर्ण त० तप ते कनकावली रत्नावली प्रमुख म० मन इ० वंछीत तप चि० चिंतने विषे मोक्षनो अर्थछे तो पामीए ना० जाणवो हो० होय इ० थोडाकालनो तप छ प्रकारे ॥११॥

मूलः—तत्तो य वग्गवग्गो पञ्चमो छट्ठओ पइण्णतवो ।
मणइच्छियचित्तत्थो नायवो होइ इत्तरिओ ॥ ११ ॥

गाथा ११ भावार्थः—पांचमो वर्ग वर्ग तप ते वर्गने वर्ग गुणो करीए तेवारे वर्ग वर्ग तप थाय, ६ प्रकिर्ण तप ते पुर्वोक्त पांच तपथी जुदो पोतानी शक्तिने अनुसारे रत्नावळी कनकावळी विगेरे तप करवो ते. हवे ते पांच प्रकारना तपनुं उदाहरण कहे छे, जेम कोइए चार उपवास कर्या ते श्रेणीतप, ते श्रेणीने श्रेणी गुणो कर्यो एटले चार चोकुं १६ उपवास कर्या ते बीजो प्रतरतप जाणवो, ते प्रतरने श्रेणी गुणो कर्यो एटले सोळ चोकुं ६४ उपवास कर्या ते त्रीजो घनतप जाणवो, ते घनने घन गुणो कर्यो एटले ६४ ने ६४ गुणा करतां चारहजार ने ९६ उपवास थया ते चोथो वर्गतप जाणवो, ते वर्गने वर्ग गुणो करतां चारहजार छनुंने चारहजार छनुंए गुणतां एकक्रोड ६७ लाख सीतोतेर हजार २१६ उपवास थायते वर्ग वर्ग तप जाणवो, ६ छो प्रकिर्ण तप कनकावळी रत्नावळी

सुधर्मस्वामी पोताना जंबू नामना शिष्यने कहेताहवा हे जंबू? जेम में श्री महावीरदेव स्वामीना समीपे सांभळ्युं हतुं तेम में तुज प्रत्ये कयुं भोगणत्रीसमां अध्ययनने विषे प्रमाद छांडवो कह्यो। ते प्रमाद रहित होय तेणे तप करवो ते थकी तरतो स्वरूप त्रिसमां अध्ययनने विषे कहेछे ॥ इति श्री उत्तराध्ययनना सम्यकत्व पराक्रम नामे २९ मां अध्ययननो भावार्थ संपुर्ण ॥ २९ ॥

अर्थः-ज० जेणे उ० प्रकारे पा० पाप क० कर्म रा० राग दो० द्वेष करी जे। स० आतिशे उपराज्या कर्म त० तपारे त० तपे करी भि० साधु त० ते ए० एकाग्र म० मन छतो सु० सांभळे गुरु कहेछे ॥ १ ॥

मूलः—जहा उ पावगं कम्मं रागदोससमज्जियं।
खवेइ तवसा भिक्खू तमेगग्गमणो सुण ॥ १ ॥

गाथा १ भावार्थः—गुरु कहेता हवा हे शिष्य? रागद्वेषे करी जे अतिशे पाप कर्म उपराजेलां ते पाप कर्म जेणे प्रकारे तपे करी साधु क्षय करे ते एकाग्र चित्ते करी सांभळ ॥ १ ॥

अर्थः-हे शिष्य पा० प्राण त० तज मृ० मृषावाद। अ० अदत्त मे० मैथुन प० परिग्रह थकी वि० निवर्तो ॥ रा० रात्रि भो० भोजनथी वि० निवर्त्तो। जी० एहवो जीव होय ते हो० थाय अ० नवा कर्म ग्रहिवायी रहित ॥२॥

मूलः—पाणवहमुसावायाअदत्तमेहुणपरिग्गहा विरओ।
राईभोयणविरओ जीवो होइ अणासवो ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः—१ प्राणवध २ मृषावाद (जुठं) ३ अदत्त (अणदीधेलुं) ४ मैथुन ५ परिग्रह

ए पुर्वोक्त आम्ना प्रमाणे पांचे प्रकारना तपनी गणत्री पोतानी बुद्धिए करी लेवी. ए पुर्वोक्त थोडा काळनो तप करवाथी चित्ते विषे जे मोक्षना अर्थनी वांछा छे ते पामीए ते अणसण तपनो प्रथम भेद कह्यो॥११॥ अध्य०

अर्थः–हवे मरणकाल्नुं अणसण कहेछे जा० जे सा० ते अ० अणसण तप म० मरणने विषे दु० ॥ ३० ॥
बेहु प्रकारे सा० ते । वि० कहुं भगवंते । स० एक हाथ पगादी हलावे ते भातनुं पचखाण अ० हाथ पगादिक हलावे नहि ते पादोपगमन बीजो अणसण । का० उडवुं सुवुं इत्यादिक । कायानी चि० चेष्टा करवी अथवा न करवी प० आश्री भ० होय बे प्रकारे अणसण ॥ १२ ॥

मूलः–जा सा अणसणा मरणे दुविहा सा वियाहिया ।
सवियारमवियारा कायचिट्ठं पई भवे ॥ १२ ॥

गाथा १२ भावार्थः–हवे अणसण तपनो बीजो भेद जावजीव सुधीनो तप कहे छे, ए अणसण तप मरणने समे बे प्रकारे कहेल छे, ते प्रथम भक्त पचखाण, २ पादोपगमन, भक्त पचखाण ते हाथपगादीक हलावे पण चार आहारनां पचखाण अने पादोपगमन ते हाथपगादीक हलावे नहि, तेमज चार आहारनां पण पचखाण, ते ए प्रमाणे कायानी उडवा वेसवा रुप चेष्टा करवी अने न करवी एवो बे प्रकारनो अणसण तप जाणवो ॥१२॥

अर्थः–अ० अथवा वली बे प्रकारे मरण म० एक प० श्रमणादिक वेयावच्च करावना सहित अणसण
भ० बीजो वेयावच्च करावना रहित अणसण व० वली आ० ए बे कह्या भगवंते । नी० वाघ सिंहादिकने भये

पाणी ते उलेचवे करी न० सूर्यना तापे करी क० अनुक्रमे सो० पाणीनुं शोषण भ० होय ॥ ५ ॥

मूलः—जहा महातलायस्स सन्निरुद्धे जलागमे ।
उस्सिंचणाए तवणाए कमेणं सोसणा भवे ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः—जेम मोटा तळावने विषे नवुं पाणी आववानुं बंधाणुं होय ने घणुंबधुं पाणी होय ते उलेचवे करी तथा सूर्यना तापे करी अनुक्रमे शोषण थाय ॥ ५ ॥

अर्थः—ए० एणे तु० प्रकारे सं० साधुने अ० पण । पा० पापकर्म नि० नवा आवता रुधा एवो साधु होय तेहने । भ० भवनी को० कोडिना सं० संच्या क० कर्म । त० तपे करी नि० क्षय थाय ॥ ६ ॥

मूलः—एवं तु संजयस्सावि पावकम्मनिरासवे ।
भवकोडीसंचियं कम्मं तवसा निज्जरिज्जइ ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः—एवी रीते साधुने पण व्रते करी नवां आवतां पापकर्म रोकाएल होय, तेहने भवनी कोडीना संच्यां कर्म तपे करीने क्षय करे ॥ ६ ॥

अर्थः—सो० ते त० तप दु० बे प्रकारे वु० कह्यो भगवंते । बा० बाह्य तप अने अ० अभ्यंतर (त० तप) त० तेमज वळी । बा० बाह्य तप छ० छ प्रकारे वु० कह्यो ॥ ए० एम छ प्रकारे ॥ अ० अभ्यंतर त० तप कह्यो ॥ ७ ॥

मूलः—सो तवो दुविहो वुत्तो बाहिरब्भन्तरो तहा ।

अर्थः—जो० जेटलो त० जीवने उ०कष्टी आ० आहार जेटली भुष होय ॥ त० तेटला आहार मांहेथी
पा०णी तु०कषी जो० जे न० रहे । न० जघन्य थोडो तो ए०एक सि०सिथ्थादिक । ए०एम द० द्रव्यथी
अध्य०
३ उ० कषी भ० होय ॥ १५ ॥

॥ ३० ॥

मूलः—जो जस्स उ आहारो [illegible] ओमं तु जो करे ।
जहन्नेणेगसित्थाई एवं दव्वेण ऊ भवे ॥ १५ ॥

गाथा १५ भावार्थः—जे जीवने जेटलो आ [illegible] मांहेथी थोडामां थोडो एक सीथा (दाणा) दीक
णो ओछो आहार करे ते द्रव्यथी उणोदरी तप कहीए ॥१५॥

पदः—गा० गामने विषे । न० नगरने विषे त० तेमज रा० राजावसे ते राजधानीने विषे । नि०
जिहां वार्षीया पणा वसता होय जिहां प०कषी आ०दया सोनाना आगरादिकने विषे प०घणे दृक्षेकरी सहित
ग्राम चोतरफी प्रमुष । खे० जिहां माटीनो गढ होय जिहां । क० सामान्य नगरने विषे । दो० जलवटनो मार्ग
अने पथरटनो मार्ग पण होय ते दोय मुषने विषे । प० पाटणने विषे । मं० जेहने पासे संघले अदी अदी
कोस गाम होय मं० अविसादिक ४ वर्ण वसेछे । जिहां [illegible] कोइ एक भय उपजे तेवारे धांन प्रमुष पर्वत
उपरे चढीने लेइ जाय ते संवाहने विषे ॥ १६ ॥

[illegible] आगारे पछी ।

गाथा. ९ भावार्थः-हवे प्रथम अणसण तपनो अधिकार कहेछे, अणसण तपना बे भेद, १ एक थोडा काळनो ते नोकारसी प्रमुख तप, २ बीजो जावजीव सुधीनो तप, हवे १ थोडा काळनो अणसण तप तेना बे भेद, ते एक नोकारसी प्रमुख थोडा काळनी मर्यादा पुरी थया बाद भोजन करवानी वांछा सहीत अने बीजो जावजीव सुधीनो ते भोजन करवानी वांछा रहित तप. ॥ ९ ॥

अर्थः-जो० जे सो० ते इ० थोडाकाळनो त० तप नमोकारसी प्रमुख सो० ते तप स० संक्षेपे छ० छ प्रकारे कहेछे से० श्रेणि त० तप ते छठ अठम प्रमुख अनुक्रमे कहेता छ मास लगे करेते श्रेणितप १ प० बीजो प्रतर त० तप श्रेणी गुणे करीए तेवारे प्रतर तप थाय २ घ० त्रीजो घन तप ते पाछल्ले प्रतर तप ते श्रेणि गुणो करीए तेवारे घन तप थाय घ० वळी त० तेमज हो० होय व० चोथो वर्ग तप ते ते घनघन गुणो करीए तेवारे वर्ग तप नीपजे य० वळी ४ ॥ १० ॥

मूलः-जो सो इत्तरियतवो सो समासेण छव्विहो ।
सेढितवो पयरतवो घणो य तह होइ वग्गो य ॥ १० ॥

गाथा. १० भावार्थः-जे नोकारसी प्रमुख थोडा काळनो अणसण तप तेना ६ भेद छे, १ श्रेणीतप, २ प्रतरतप, ३ घनतप, ४ वर्गतप, ५ वर्ग वर्गतप, ६ प्रकीर्णतप एम ६, हवे प्रथम श्रेणीतप ते नोकारसी आदि दइने छठ अठम ■ मास सुधी एकज वार तप करे ते, २ प्रतरतप ते श्रेणीने श्रेणी गुणो करिये त्यारे प्रतर

विषे, १६ समाय (जीहां सरांह (धर्मशाळा) ने विषे हजारो पंथी लोको वासो रहे ते) ने विषे, १७ घोसेय (जीहां गाय प्रमुख गोकुळ होय ते) ने विषे, १८ थळि (जीहां रेतीना उंचा ढगला होय ते) ने विषे, १९ सेन्या (जीहां चतुरंगीणी सन्या ते) ने विषे, २० खंधार (कटक उतरवानां स्थानक ते) ने विषे, २१ सथे (जीहां सार्थवाहनो साथ उतरवानां स्थानक तथा जीहां हथियारादीक रहे ते) ने विषे, २२ संवट (जीहां भय माटे लोको एकठां मळीने रहे ते स्थानक) ने विषे, २३ कोटे (कोट सहीत जे गाम होय ते) ने विषे ॥१७॥

अर्थः–वा० वाडाने विषे व० वळी र० घरनी तथा चउटानी सेरिने व० विषे घ० घरने विषे वा० अथवा ए० एणे प्रकारे इ० एटलो खे० क्षेत्र तिहां ॥ क० कल्पे आहारादिक उ० वळी । ए० ए पूर्वे जे कह्या ते स्थानक आदी ओरडा प्रमुपने विषे आहार मळशे तो लेशुं । ए० एणे प्रकारे खे० पेत्रथी उणोदरी त० तप उ०वळी भ० होय ॥१८॥

मूलः–वाडेसु व रच्छासु व घरेसु वा एवमित्तियं खेत्तं ।
कप्पइ उ एवमाई एवं खेत्तेणं ऊ भवे ॥ १८ ॥

गाथा १८ भावार्थः–२४ पाडा (मोहोल्ला) ने विषे, २५ घरनी तथा चौटानी सेरीने विषे, २६ घरने विषे, २७ ओरडाने विषे, ए पुर्वोक्त क्षेत्र कह्युं ते क्षेत्रने विषे जो आहार मळशे तो लेशुं ! ! ! एहवो अभीग्रह धारे ते क्षेत्र थकी उणोदरी तप होय ॥ १८ ॥

अर्थः–पे० पेटिने आकारे चोपुणी गोचरि करे य० वळी । अ० अर्ध पेटिने आकारे गोचरि करे ते

तपनां नाम	१ श्रेणी तप	२ प्रतर तप	३ घन तप	४ वर्ग तप	५ वर्ग वर्ग तप
छठ	२	४	८	६४	२०४८
पारणा	२	४	८	६४	२०४८
उपवास दोवस	४	८	१६	१२८	४०९६
सर्व दीवस मान तथा पूर्ण मान	६ दीवस	१२ दीन	२४ दीन	१९२ दीन	६१४४ दीवस अने १७ वरस ने २४ दीन

आ अठम भक्तना यंत्रनी स्थापना छे. इने चोकडीनो यंत्र किरुगते.

तपनां नाम	१श्रेणी तप	२प्रतर तप	३ घन तप	वर्ग तप	वर्गवर्ग तप	तपनां नाम	श्रेणीत-प	प्रतरतप	घन तप	वर्ग तप	वर्गवर्ग तप
अठम	३	९	२७	२४३	१७७१४७	चोकडी	१	४	१६	१०२४	४१९४३०४
पारणां	३	९	२७	२४३	१७७१४७	पारणां	१	४	१६	१०२४	४१९४३०४
उपवासदीन	९	२७	८१	७२९	५३१४४१	उपवासदीन	४	१६	६४	४०९६	१६७७७२१६
सर्वदीवस मान	१२ दीन	३६ दीन	१०८ दीन	९७२ दीन	७०८९८८ दीन	सर्वदीनमान लगातपमान	५	२०	८०	५१२० दी.तेना १४ वर्ष २ मास २०दीन	२०९७१९२० दीवस

गाथा २० भावार्थः-दिवसना चार पोहोरनुं प्रमाण करे, एटले दीवसना चार पोहोर छे, तेमांही अमुक पोहोरे मळे तो लेवुं, एवो अभीग्रह धारी विचरे, ते काळ थकी उणोदरी तप जाणवो ॥ २० ॥

अर्थः-अ० अथवा त० त्रीजी पो० पोरसीए । ऊ० कांइक उणे थके घा० च्यार आहार ए० गवेषतो थको मवें च० पोरसीने चोथे भागे वा० अथवा पांचमे भागे उणी पोरसी ए० एणे प्रकारे का० कालथी उणोदरि तप ऊ० वळी भ० होय ॥ २१ ॥

॥ ३६४ ॥

॥ ३० ॥

मूलः-अहवा तइयाए पोरिसीए ऊणाइ घासमेसन्तो ।
चउभागूणाए वा एवं कालेण ऊ भवे ॥ २१ ॥

गाथा २१ भावार्थः-वळी त्रीजा पोहोरे उणी पोरसीए तथा चोथे पोहोरे उणी पोरसीए, अथवा पांचमे भागे उणी पोरसीए इत्यादीक मळशे, तो लेशुं! एहवो अभीग्रह धारीने विचरे,ते काळ थकी उणोदरी तप जाणवो॥२१॥

अर्थः-हवे भावथी उणोदरी तप इ० स्त्री वा० अथवा पु० पुरुष वा० अथवा ॥ अ० आभरण सहित वा० अथवा न० आभरण रहित होय वा० वि० अथवा अ० अनेरो कोइएक व० वालवय १ यौवनवय २ ॥ वृद्धावय ३ ए ३ वयमांहि कोइएक वयने विषे प्रवर्ततो आहार देशे तो लेशुं वा० अथवा । अ० अनेरो कोइएक पडोली साडि प्रमुख व० पदपूरणे व० वस्त्र सहित हुयो नेहने हाथे लेस्युं ॥ २२ ॥

मूलः-इत्थी वा पुरिसो वा अलंकिओ वा नलंकिओ वा वि ।

॥ ३६४ ॥

भा० आहार छे० न लेवो दो० बे भणगणने वि०विषे ॥ १३ ॥

मूल—अहवा सपरिकम्मा अपरिकम्मा य आहिया ।
नीहारिमनीहारी आहारच्छेओ दोसु वि ॥ १३ ॥

गाथा १३ भावार्थः—वली बीजो भणण अणशण तपना बे भेद ते एक वैयावच्च करावना सहीत तथा (पडिकमणां सहित) अने बीजो वैयावच्च करावना रहीत तथा (पडिकमणां रहित), तेना वली बे भेद ते एक नीहारी अने बीजो अनीहारी, निहारी ते ग्रामादीकने विषे भणशण करे तेनुं निहारण थाय एटले तेना शरीरने डेकाणे पाडवामा आवे अने बीजो अनिहारी ते कंदरादीकने विषे अणशण करे तेनुं निहारण न थाय एटले कलेवर त्याज नांमिराखे, ए बने भणन विषे आहारनो त्याग होय, ए प्रथम अणशण तप कह्यो ॥ १३ ॥

अर्थः—हवे उणोदरि तप कहेछे । ओ०उणोदरी तपए तेणे उणोदरी तप पं० पांच प्रकारे । त० संक्षेपे वि० कह्यो भगवंते ॥ द०द्रव्यथी १ । खे०क्षेत्रथी २ का०काळथी ३ । भा० भावथी ४ ॥ प० पर्याय थ०थकी ॥१४॥

मूलः—ओमोयरणं पञ्चहा समासेण वियाहियं ।
दव्वओ खेत्तकालेणं भावेणं पज्जवेहि य ॥ १४ ॥

गाथा १४ भावार्थः—हवे बीजो उणोदरी तप कहे छे, उदर (पेट) उणुं राखीए, तेनुं नाम उणोदरी, ए तप संक्षेपथी, ५ प्रकारे कहेल छे, १ द्रव्यथी उणोदरी, २ क्षेत्रथी उणोदरी, ३ काळथी उणोदरी, ४ भावथी उणोदरी, ५ पर्यायथी उणोदरी ॥१४॥

एएहि ओमचरओ पज्जवचरओ भवे भिक्खू ॥ २४ ॥

गाथा २४ भावार्थः–द्रव्यथी अन प्रमुखने विषे, क्षेत्रथी ग्रामादीकने विषे, कालथी पोरसी प्रमुखने विषे, भावथी स्त्री पुरुषादीकने विषे, ए चारेने विषे उणोदरी ते पर्यंत थकी उणोदरी तप कहीए, ए बीजा उणोदरी तपना पांच भेद कह्या ॥ २४ ॥

अर्थः–हवे भिक्षाचरि कहे छे अ० आठ प्रकार गो० गोचरिना ते । अ० ते अग्र प्रधान गोचरि गोय-रं० अद्धपेटादिक छ प्रकारे तेमांहि शंखावर्त्तनादि भेद संपना आवर्त्तमाहिनी पेरे पाडामांहि गोचरी करे ते मांहिलो आवर्त्तन एक भेद । बीजो भेद संपना आवर्त्तननी परे पाडा मांहिथी बाहार आवे ते २ । अने वली तु० पतंगियाना २ भेद कीजे वांकी गति चाले तथा समीगति चाले ए भेद करतां आठ भेद गोचरीना थाय त० तेमज स० सात ए० एषणा आचारंगमांहि कहि छे ते जाणवी ॥ अ० अभिग्रह य० वली जे० जे पूर्वे अभिग्रह कह्या छे तेथी वली । अ० अनेरा बीजा भि० भिक्षाचरि तप आ० भगवंते आ० कह्या ॥ २५ ॥

मूलः–अट्ठविहगोयरग्गं तु तहा सत्तेव एसणा ।
अभिग्गहा य जे अन्ने भिक्खायरियमाहिया ॥ २५ ॥

गाथा २५ भावार्थः–हवे बीजो भिक्षाचारी तप कहे छे, तेना आठ भेद ते, १ पेटीने आकारे, २ अर्ध पेटीने आकारे, ३ गोमूत्रीकने आकारे, ४ पतंगीयानी पेरे, ५ अंदर शंखा वर्त्तनी पेरे, ६ बाहीर शंखा

गाथा १६ भावार्थः–१ गामने विषे, २ नगर (जीहां कर नहि ते) ने विषे, ३ राजधानी (राजा वसे ते) ने विषे, ४ निगम (जीहां वाणीया घणा वसता होय ते) ने विषे, ५ आगर (जीहां सुवर्णादिकनी खाण होय ते) ने विषे, ६ पट्टी (घणा वृक्षे करी वींटी होय, तेमज अटवी मध्ये वसे ते चोर पट्टी ते) ने विषे, ७ खेड (जीहां धूलनो कोट होय) ने विषे, ८ कर्वट (जीहां अति लघु गाम होय ते) ने विषे, ९ द्रोण मुख (जीहां जलने स्थल ए बंने मार्ग होय ते) ने विषे, १० पाटण (जीहां सर्व दीशाथी मानस आवे ते) ने विषे, ११ मंडप (जीहांथी चारे दीशाए अढी अढी कोस लगी गाम होय ते) ने विषे, १२ संवाहण (पर्वतने मध्ये गाम होय ते) ने विषे ॥ १६ ॥

अर्थः–आ० जिहां तापसना थानक होय तिहां वि० नाम मनुष्यना स्थानकने विषे। ग० नानाना नेसडाने विषे स० पंथी लोक वासो रहे ते सराने विषे गो० जिहां गाय मनुष्यनां गोकुल रहेता होय तिहां ग० पट्टी। ग० रेतनी उंची थलीयोने विषे। से० चतुरंगीणी सेनाने विषे। ग० कटक उतरवाना ठामने विषे। स०सार्थवाहना सामने विषे। सं०भय माटे लोक एकठा मळे ते स्थानक। कोट० गढ सहित जे गाम ते जाणवो। वाडाने विषे ग० पट्टी॥ १७॥

मूलः–आसमपए विहारे सन्निवेसे समायघोसे य।
थलिसेणाखन्धारे सत्थे संवट्टकोट्टे य ॥ १७ ॥

गाथा. १७ भावार्थः–१३ आश्रम (जीहां तापसनां स्थानक होय ते) ने विषे, १४ विहार (जीहां भिक्षु वसे तथा नागकुमारना स्थानक होय ते) ने विषे, १५ सन्निवेस (जीहां यात्रीक वसे तथा नाना नेसडाने) ने

मूलः—ठाणा वीरासणाईया जीवस्स उ सुहावहा ।
उग्गा जहा धरिज्जन्ति कायकिलेसं तमाहियं ॥ २७ ॥

॥ ३० ॥

गाथा २७ भावार्थः—पांचमो कायक्लेश तप कहे छे, वीरासन (खुरसी उपर बेसे पछी खुरशी नि-सेवी लेवी तेवी आसने बेसी रहे ते), उंडासन, गुरुडासन प्रमुख आसने कायाने एक स्थानके राखवी, ए आसन राखवो अतिशे दुष्कर छे, पण ए आसन जीवने मोक्षनां सुख आपनार छे, एम जाणीने ते आसन जेवी रीते ते तेवी रीते कायाए करीने सेवीए, ए ५ मो कायक्लेश तप जाणवो ॥ २७ ॥

मूलः—एगन्तमणावाए इत्थीपसुविवज्जिए ।
सयणासणसेवणया विवित्तसयणासणं ॥ २८ ॥

गाथा २८ भावार्थः—हवे छठो संलीनता तप कहे छे, एकांत जीहा कोइ आवे नहि, तेमज स्त्री पशु नपुंसक एवो उपाश्रय एटले पाटला प्रमुख तेने ते ६ ठो संलीनता तप जाणवो ॥ २८ ॥

अर्थः—ए पूर्व कह्या ते बाह्य तप स्त्रीसं संज्ञेये वि०रहतो भगवंते । अ० अभ्यंतर त० तप

॥ ३६६ ॥

होय तिहां गोचरि करे प० पतंगीया वी० उडवानी पेरे छूटक छूटक घरे गोचरि करे च० वली ॥ सं० संपना आ० आवर्त्तननी पेरे आ० पाडामांहि गोचरि करे १ । गं० पाडा बाहिर नीकलता पण तेम गोचरि करे २ । ते संपावर्त्तन त्रीजो भेद ॥ ग० पायरो घुरीयो छेहडा लगे जइने प० पाछो वले तेवारे गोचरि करे ते ॥० छट्ठी गोचरि ए छ प्रकारनी गोचरि ते पण पेलथी उणोदरी तप ॥ १९ ॥

मूलः—पेडा य अद्धपेडा गोमुत्तिपयङ्गवीहिया चेव ।
सम्बुक्कावट्टाययगन्तुंपच्चागया छट्ठा ॥ १९ ॥

गाथा १९ भावार्थः—हवे पेलथी जे उणोदरी तप छे, तेना ६ भेद कहे छे, १ पेटीने आकारे चारे खुणे गोचरी करे, २ अर्ध पेटीने आकारे गोचरी करे, ३ रस्ते चालतां बलद मातु करे तेने आचारे आवा-पाडा घरे गोचरी करे, ४ पतंगीयो उडे तेवी रीते छूटक छूटक गोचरी करे, ५ शंखावर्तना बे भेद छे, १ शंखना आवर्त्तननी पेठे पाडामांही गोचरी करे, २ पाडामांही निकळतां पण तेम गोचरी करे, ६ पायरो छेडा सुधी जइने पाछो वळतां गोचरी करे, ए छ प्रकारे क्षेत्र थकी उणोदरी तप कहीए ॥ १९ ॥

अर्थः—दि० दिवसनी ने पो० पोरसीनुं । च० चार पोरसीनुं पि० पण उ० वली ज० जेटलो भ० होय का० काल । ए० एणे प्रकारे च० विचरतो थको स० निश्चे ॥ का० कालना प्रमाणनुं मु० उणोदरी तप जाणवो ॥ २० ॥

मूलः—दिवसस्स पोरुसीणं चउण्हं पि उ जत्तिओ भवे कालो ।
एवं चरमाणो खलु कालोमाणं मुणेयव्वं ॥ २० ॥

प्रायछित त० ते तप आ० कह्यो भगवंते ॥ ३१ ॥

मूलः–आलोयणारिहाईयं पायच्छित्तं तु दसविहं ।
जं भिक्खू वहई सम्मं पायच्छित्तं तमाहियं ॥ ३१ ॥

॥ ३० ॥

गाथा ३१ भावार्थः–गुरुनी समीपे पापने आलोवे ते प्रायश्चित १० प्रकारे तेनां नाम १ आलोयण, २ पडीकमणे, ३ मीस, ४ विवेगे, ५ विउसगे, ६ तव, ७ छेय, ८ मूल, ९ अणठ्ठिपाय, १० पारंचीए, ए दसे प्रकारनुं प्रायश्चित जे साधु साचे मने कायाए करीने सेवे ते प्रायश्चित तप जाणवो ॥ ३१ ॥

अर्थः–हवे विनय तप कहेछे अ० गुरु प्रमुप गुणवंत वडा साधु आवे तेवारे । उ० उभा थावो अ० वे हाथने जोडवा । त० तेमज आ० पाट पाटलादिक आसननो । दा० देवो गु० गुरुनी भ० भगति भा० भाव सहित सु० गुरुनो आदेस प्रमाण करे । वि० विनय तप ए० ए वि० कह्यो भगवंते ॥ ३२ ॥

मूलः–अब्भुट्ठाणं अञ्जलिकरणं तहेवासणदायणं ।
गुरुभत्तिभावसुस्सूसा विणओ एस वियाहिओ ॥ ३२ ॥

गाथा ३२ भावार्थः–हवे बीजो विनय तप कहे छे, १ गुरु वडेरा आवे तेहवारे सामे जावुं, २ वे हाथनुं जोडवुं, ३ मथएणं वंदामीनुं कहेवुं, ४ पोतानुं आसन छोडीने गुरुने आपवुं, ५ गुरुनी भक्तिनुं करवुं, ६ अंतरंग प्रीतीथी गुरुनो आदेश (हुकम) इच्छवो इत्यादिक ४५ प्रकारनो विनय तप जाणवो ॥ ३२ ॥

योवनावस्थावाळो, अथवा वृद्धावस्थावाळो, अथवा नाना प्रकार रूपादिके करी सहीत होय ॥२२॥

अर्थः-अ०कोएक रोग हर्ष सहित इत्यादिक अवस्था जाणे एक वि०भेद। अमुकादि अवस्था सहित हुस्ये तेहने दीधे लेशुं ॥ ते० काले तथा गौरवर्ण दातार देते तो लेशुं नहितर नहि लेशुं इत्यादिक भा०भावना अ०अभिग्रह करतो थको उ०वली ॥ ए०एणीपरे च०विचरता प्रतिलाभे स०निर्जरा। भा०भावथी उणोदरी तप मु०जाणवो॥२३॥

मूलः-अन्नेण विसेसेणं वण्णेणं भावमणुमुयन्ते उ।
एवं चरमाणो खलु भावोमाणं मुणेयव्वं ॥ २३ ॥

गाथा २३ भावार्थः-रोग रहीत अथवा हर्ष सहीत इत्यादीक अमुक अवस्थाए होय अथवा काळा वर्णवाळो, अथवा गोरा वर्णवाळो इत्यादीक वर्णवाळो होय, ए पुर्वोक्त प्रमाणे होय, तेहवो दातार आपशे तो लेशुं !!! एहवो अभीग्रह धारी मनमें ते भाव थकी उणोदरी तप कहीए ॥ २३ ॥

अर्थः-द० द्रव्यथी अशनादिकने विषे खे० क्षेत्रथी गामादिकने विषे का० कालथी पोरसी प्रमुख भा० भावथी स्त्री पुरुष आभरणादिक सहित तथा रहित इत्यादिक भावने विषे व० वळी आ० कथा उ० वळी जे०जे भा० भाव। ए० एणीपरे द्रव्य क्षेत्र काल भावादिक सर्वने आ० उणोदरीपणे च० चालतो थको। प० भाव उणोदरीने विषे व० जाणवो भ० होय वि० साधु ॥ २४ ॥

मूलः-दंते खेत्ते काले भावम्मि य आहिया उ जे भावा।

अर्थः–हवे ध्यान कहेछे । अ० आर्त्तध्यान रु० हिंस्या करवानो रुद्रध्यानने व० वर्जिने झा० ध्यान ध्याय सु० दृढचित्त थको समाधिवंत ध० धर्म ध्याननो ध्यावो सु० सुक्ल झा० ध्यान । झा० ए बे ध्यान ध्याया तं० ते तु० पूरणे वु० तिर्थंकर एम व० कहे ॥ ३५ ॥

॥ १६८ ॥

मूलः–अट्टरुद्दाणि वज्जित्ता झाएज्जा सुसमाहिए ।
धम्मसुक्काइं झाणाइं झाणं तं तु बुहा वए ॥ ३५ ॥

॥ १० ॥

गाथा ३५ भावार्थः–हवे पांचमो ध्यान तप कहे छे, आर्तध्यान ने रौद्र ध्यान वर्जिने दृढ चित्ते समाधीवंत थको धर्मध्यान ने शुक्ल ध्यान ध्याय एम तिर्थंकरे कर्तुं ॥ ३५ ॥

अर्थः–हवे काउसग तप कहेछे । स० सुवाने विषे आ० बेसवाने विषे ठा० उभा रहेवाने वा० विषे जे० जे उ० वली भि० साधु न० न वा० हालवुं चालवुं नकरे । का० कायानुं वि० वोसरावुं काउसगनो करवो छ० छठ्ठो सो० ते अभ्यंतर तप प० कह्यो भगवंते ॥ ३६ ॥

मूलः–सयणासणठाणे वा जे उ भिक्खू न वावरे ।
कायस्स विउस्सग्गो छट्ठो सो परिकित्तिओ ॥ ३६ ॥

गाथा ३६ भावार्थः–हवे ६ ठो कायोत्सर्ग तप कहे छे, सुवाने विषे, बेसवाने विषे, उभा रहेवाने विषे,

१ उत्क्षिप्त, २ अल्प लेपिता, ५ उद्गृहीता, ६ प्रगृहीता, ७ उज्झित धर्मा ए ७ भेद एहनो विशेष स्वरूपतो आचारांग सूत्रथी जाणवो तेमज १ द्रव्यथी, २ क्षेत्रथी, ३ कालथी, ४ भावथी, ए चार प्रकारनो अभिग्रह जाणवो तेमां द्रव्यथी ते अमुक वस्तु, २ क्षेत्रथी ते घर प्रमुखने विषे, ३ कालथी ते भिक्षाचर्या प्रमुख निर्ग गये थके, ४ भावथी ते रुदन करतो होय, अथवा हसतो होय, इत्यादिक ए प्रमाणे त्रीजा पण अभिग्रह भिक्षाचारी तपने विषे तीर्थंकरे कहेलछे, ए त्रीजो भिक्षाचारी तप जाणवो. ॥ २५ ॥

अर्थ –हवे रस परित्याग तप कहे छे । खी० दुग्ध ? द० दधि ? । त० घी ३ भा० भाजि शब्दथी सर्व विगय । प० सरस पा० पाणी भो० भोजन ॥ प० ए वर्जवुं र० सरस आहार तु० यती भ० भगवंते कहुं र० रस वि० परित्याग तप ॥ २६ ॥

मूलः–खीरदहिसप्पिमाई पणीयं पाणभोयणं ।
परिवज्जणं रसाणं तु भणियं रसविवज्जणं ॥ २६ ॥

गाथा २६ भावार्थः–हवे त्रीजो रस परित्याग तप कहेछे, १ दूध, २ दहीं, ३ घी, ४ तेल, ५ गळपण ए पांच मांहीली विगयनो त्याग तथा सरस आहार पाणीनुं वर्जवुं, एत्रीजो रस परित्यागतप श्रीतिर्थंकरे कहेलछे ॥२६॥

अर्थः–हवे कायक्लेश तप कहे छे ठा० काया एक ठाम राखवी खी० वीरासण प्रमुख । खी० जीवने उ० यती गु० मोक्ष गुणनां आपणहार । उ० ए अतिदुष्कर । ज० जेम करवुं छे तेम ध० कायाए करी सेवाए का० कायक्लेश त० ते तप आ० कहुं भगवंते ॥ २७ ॥

अर्थः–हवे ध्यांन कहेछे। अ० आर्त्तध्यांन रु० हिंस्या करवानो रुद्रध्याननें व० वर्जिने झा० ध्यांन ध्याय हु० दृढचित्त थको समाधिवंत ध० धर्म ध्याननो ध्यायो सु० शुक्ल झा० ध्यांन। झा० ए बे ध्यांन ध्याया तं० ते हु० पूरणे जु० तिर्थंकर एम व० कहे ॥ ३५ ॥

॥ ३० ॥

मूलः–अट्टरुद्दाणि वज्जित्ता झाएज्जा सुसमाहिए।
धम्मसुक्काइं झाणाइं झाणं तं तु बुहा वए ॥ ३५ ॥

गाथा ३५ भावार्थः–हवे पांचमो ध्यान तप कहे छे, आर्तध्यान ने रौद्र ध्यान वर्जिने द्रढ चित्ते समाधीवंत थको धर्मध्यान ने शुकल ध्यान ध्याय एम तिर्थंकरे कहुं ॥ ३५ ॥

अर्थः–हवे काउसग तप कहेछे। स० सुवाने विषे आ० बेसवाने विषे ठा० उभा रहेवाने वा० विषे जे० जे उ० वळी भि० साधु न० न वा० हालवुं चालवुं नकरे। का० कायानुं वि० वोसरावुं काउसगनो करवो छ० छठो सो० ते अभ्यंतर तप प० कह्यो भगवंते ॥ ३६ ॥

मूलः–सयणासणठाणे वा जे उ भिक्खू न वावरे।
कायस्स विउस्सग्गो छट्ठो सो परिकित्तिओ ॥ ३६ ॥

गाथा ३६ भावार्थः–हवे ६ ठो कायोत्सर्ग तप कहे छे, सुवाने विषे, बेसवाने विषे, उभा रहेवाने विषे, कायानुं हलावबुं, चलावबुं जे साधु न करे (अर्थात अमुक वखत सुधी कायाने वोसीरावबुं) ते ६ ठो का-

मूलः—एसो बाहिरगतवो समासेण वियाहिओ ।
अब्भिन्तरो तवो एत्तो वुच्छामि अणुपुव्वसो ॥ २८ ॥

गाथा २९ भावार्थः—गुरु कहेता हवा हे शिष्य ! ए ६ प्रकारे बाह्यतप संक्षेपे श्री भगवंते कह्यो, हवे ६ प्रकारे अभ्यंतर तप अनुक्रमे हुं कहुं छुं ते तुं सांभळ ! ! ! ॥ २९ ॥

अर्थः—पा० पाप आलोइने तप पडिवजे ते प्रायश्चित्त तप १ ॥ वि० गुणवंत वडानो विनय करवो २ वे० आचार्यादीकनुं वेयावच्च करवुं ३ त० तेमज स० सज्झायनुं करवुं ४ ॥ झाणं० धर्म ध्यानादिकनो ध्यावो ५ ॥ च० वळी वि० काउसग्गनो करवो ६ । ए० ए अ० अभ्यंतर त० तप कह्यो भगवंते ॥ ३० ॥

मूलः—पायच्छित्तं विणओ वेयावच्चं तहेव सज्झाओ ।
झाणं च विओसग्गो एसो अब्भिन्तरो तवो ॥ ३० ॥

गाथा ३० भावार्थः—१ प्रायश्चित, २ विनय, ३ वैयावच्च, ४ स्वाध्याय, ५ ध्यान, ६ कायोत्सर्ग ए ६ प्रकारे अभ्यंतर तप नाम मात्र कह्यो ॥ ३० ॥

अर्थः—आ० गुरुनी समीपे लेवो पापनो आलेववो रि० योग्य छे । आ० ए आदीछे ॥ पा० प्रायच्छित्त तु० वळी द० दस प्रकारे (आलोयणा १ । पडिक्कमणो २ । तदुभय ३ विवेय ४ मुसगो ५ तप ६ छेय ७ मूल ८ अणवठप्पा ९, पारंचिएचेव १०) । जं० जे भि० साधु व० कायाए करी सेवे स० साचे मने । पा०

गाथा १ भावार्थः-गुरु कहेता हवा हे शिष्य ! हुं चारित्रनी विधि कहीश !!! जे चारित्र जीवने सुख आपनार छे अने ते चारित्रने आचरीने घणा जीव संसाररुपी समुद्र तर्या !!! ॥ १ ॥

अर्थः-ए० एक बोलथी वि० विरती कु०करे तेवारे ॥ ए०एक बोलने य०विषे प० प्रवर्तावो ते किया बोल । अ० असंयमथी नि० निवर्तवुं च०वळी सं० संजमने य०विषे प० प्रवर्तवुं ॥ २ ॥

मूलः-एगओ विरइं कुज्जा एगओ य पवत्तणं ।
असंजमे नियत्तिं च संजमे य पवत्तणं ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः-एक बोलथी निवर्ते अने एक बोलनेविषे प्रवर्ते? ते असंयमथी निवर्तवुं अने संयमने विषे प्रवर्तवुं॥२॥

अर्थः-रा० राग अने दो० द्वेष य० पूरणे दो० ए बे पा० मेलाछे । पा० पांप क० कर्म मिथ्यात्वादिकना । प० प्रवर्तनहार तेहने जे० जे भि० साधु । रु० अलगा करे नि० सदाय से० ते न० न अ०रहे मं० संसारमांहि भमे नही ॥ ३ ॥

मूलः-रागदोसे य दो पावे पावकम्मपवत्तणे ।
जे भिक्खू रुभए निच्चं से न अच्छइ मण्डले ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः-जे पाप कर्मना मूळ अने मिथ्यात्वादिकना प्रवर्तावणहार अने पापकर्मने उपार्जन

वे० वेयावच्च करणो न० ते तप आ० कयो भगवंते ॥ ३३ ॥

मूलः—आयरियमाईण वेयावच्चम्मि दसविहे ।
आसेवणं जहाथामं वेयावच्चं तमाहियं ॥ ३३ ॥

गाथा ३३ भावार्थः—हवे त्रीजो वैयावच्च तप कहे छे, १ आचार्य, २ उपाध्याय, ३ स्थीवर, ४ तपस्वी, ५ रोगीष्ट, ६ तेडाले, ७ स्वधर्मि, ८ कुल (एक गुरुना शिष्य होय ते), ९ गण (एक गच्छना मुनी होय ते), १० संघ, ए दसे प्रकारे वैयावच्च पोतानो शक्तिने अनुसारे करवी ते त्रीजो वैयावच्च तप जाणवो ॥ ३३ ॥

अर्थः—हवे सज्झाय तप कहेछे वा० गुरु समीपे वांचणी लेवी । पु० संदेह उपने पुछवो वे० पदपूरणे दे० । त० ए स्वाध्याय पं० पांच प्रकारे भ० होय ॥ ३४ ॥

मूलः—वायणा पुच्छणा चेव तहेव परियट्टना ।
अणुपेहा धम्मकहा सज्झाओ पन्नहा भवे ॥ ३४ ॥

गाथा ३४ भावार्थः—हवे चोथो स्वाध्याय तप कहे छे, १ गुरुनी समीपे वांचणी लेवी, २ संसय पडतां पुछवुं, ३ वारंवार भावनुं गणवुं, ४ सुत्रादीकनां अर्थनुं चिंतववुं, ५ धर्मोपदेशनुं देवुं, ए पांच प्रकारे ४ थो स्वाध्याय तप जाणवो ॥ ३४ ॥

व्रण प्रकारना उपसर्ग जे साधु समभावे खमे ते संसारमांही न भमे ॥ ५ ॥

अर्थः–वि० राजकथादिक विकथा चार प्रकारे । क० कषाय स० आहारादिक च्यार संज्ञा । झा० आर्त्तध्यांन अने रौद्र ध्यांन व० वे ध्यांन त० तेमज । जे० जे भि० साधु व० वर्जे नि० सदाय से० ते न० न अ० रहे मं० संसारमांहि भमे नही ॥ ६ ॥

मूलः–विगहाकसायसन्नाणं झाणाणं वहुयं तहा ।
जे भिक्खू वज्जए निच्चं से न अच्छइ मण्डले ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः–चार विकथा ते, १ स्त्रीकथा, २ भक्तकथा, ३ देशकथा, ४ राजकथा, ए अकेको विकथाना चार चार भेद, १ क्रोध, २ मान, ३ माया, ४ लोभ, चार संज्ञा ते १ आहार संज्ञा, २ भय संज्ञा, ३ मैथुन संज्ञा, ४ परिग्रह संज्ञा, वे प्रकारना ध्यान ते आर्तध्यान ने रौद्रध्यान ए पूर्वोक्तने जे साधु सदाय वर्जे ? ते संसारमांही न भमे ॥ ६ ॥

अर्थः–व० पांच महाव्रतने विषे इ० इंद्रिय पांच अ० अर्थ शब्दादिकने विषे स० पांच सुमतिने विषे कि० कायथादिक पांच क्रियाने य०विषे । जे०जे भि०साधु पांच महाव्रत पांच सुमति पालवाने विषे ज०उद्यम करे अनेपांच इंद्रिना विषे । पांच क्रिया छांडवाने विषे उद्यम करे । नि०सदाय से०ते न०न अ०रहे मं०संसारमांहि भमे नही॥७॥

मूलः–वएसु इन्दियत्थेसु समिईसु किरियासु य ।
जे भिक्खू जयई निच्चं से न अच्छइ मण्डले ॥ ७ ॥

मूलः—दुवे दवे तु दुविहे जे सम्मं आयरे मुनी ।
सो सिद्धं सव्वसंसार विप्पमुच्चइ पण्डिओ ॥ ३७ ॥ त्ति बेमि ॥

॥ इति श्री उत्तराध्ययनना [illegible] अध्ययनं सम्पूर्णं ॥ ३० ॥

[illegible] ए प्रकारे बाह्य ने ६ प्रकारे अभ्यंतर तप कर्यो, ते वे प्रकारनो तप [illegible] ए पूर्वे कह्यो ॥ ३७ ॥ इतिश्री उत्तराध्ययनना [illegible] अध्ययननो भावार्थ संपूर्ण ॥ ३० ॥ ए ३०मां अध्ययनने विषे [illegible] अधिकार कह्यो, ते सर्वनो चारित्रवंत होय तेणे करे तेथी ३१मां अध्ययनने विषे चारित्रनो अधिकार कहेशे.

अर्थः—च० चारित्रनो वि० विधि प० वीरनुं गुरु मित्र वचे करेजे। जी० जीवने उ० बली मु० सुगम। सा० समुद्र ॥ १ ॥

हवार ३० मे च० चारित्रने आदरीने प० वली जी० जीव। ति० तर्यो सं० संसार रूपीणा सा० समुद्र ॥ १ ॥

मूलः—चरणविहिं पवक्खामि जीवस्स उ सुहावहं ।
जं चरित्ता बहू जीवा तिण्णा संसारसागरं ॥ १ ॥

अर्थः–पि० संसठादिक आहार ग० ग्रहवाना । सात भेदछे प० प्रतिज्ञाने विषे । भ० भयना ठा० स्थानक स० सातने विषे । जे० जे भि० साधु ज० संसठादिक सात अभिग्रहने विषे उद्यम करे सात भय छांडवाने विषे उद्यम करे नि० सदाय ॥ से० ते न० न अ० रहे मं० संसारमांहि भमे नहि ॥ ९ ॥

मूलः–पिण्डोग्गहपडिमासु भयट्ठाणेसु सत्तसु ।
जे भिक्खू जयई निच्चं से न अच्छइ मण्डले ॥ ९ ॥

गाथा ९ भावार्थः–पींड (आहार) ग्रहण प्रतीमाना सात भेद ते, १ संसठ, २ असंसठ, ३ उद्धड, ४ अल्पलेपीका, ५ उदग्रहीत, ६ प्रग्रहीत, ७ उझीतधर्म्मा, सात भयना नाम ते, १ इहलोक भय, २ परलोक भय, ३ आदान भय, ४ अकस्मात भय, ५ आजीवीका भय, ६ मर्ण भय, ७ अपयश भय, ए पुर्वोक्तनेविषे जे साधु सदाय यत्नपणे प्रवर्ते ते संसारमांहो न भमे ॥ ९ ॥

अर्थः–म० जाति मदादिक आठ मदनेविषे व० ब्रह्मचर्यनी नववाडनेविषे । भि० क्षमादिक यतिनो ध० धर्म्म द० दस प्रकार तेहनेविषे । जे० जे भि० साधु ज० आठ मद छांडवानेविषे । नववाड सेववाने विषे । दस विधयति धर्म पालवाने विषे उद्यमकरे नि० सदाए । से० ते न० न अ० रहे मं० संसारमांहि भमेनहि ॥१०॥

मूलः–मएसु बम्भगुत्तीसु भिक्खुधम्मंमि दसविहे ।
जे भिक्खू जयई निच्चं से न अच्छइ मण्डले ॥ १० ॥

अर्थः-ए० ए प्र० नव तु० पूरवे द्वि० जे वे भेद छे नवारे आचरव। छ प्रकारे अभ्यंतर तप ए वे भेदे कर्म जे० ते दोष। ग० गाये मने करी आ० आचरे करे मु० साधु। सो० ते नि० निग्रंथ स० सर्व सं० संसार भावातीत गतिनो वि० विशेष मु० मुक्ति। पं० पंडित साधु। इ० इम वे० हुं कहुंछुं॥ ३७॥

मूलः-एवं तवं तु दुविहं जे सम्मं आयरे मुणी।
सो खिप्पं सव्वसंसार विप्पमुच्चइ पण्डिओ॥ ३७॥ त्ति बेमि॥

॥ इति श्री सभिक्षुकं त्रिंशं अध्ययनं सम्पूर्णं॥ ३०॥

गाथा ३७ भावार्थः-ए पूर्वोक्त बे प्रकारे बाह्य ने छ प्रकारे अभ्यंतर तप कर्यो, ते बे प्रकारनो तप जे साधु साधवी आचरे, ते पंडित साधु संसारनी जीत पूरक थाय एम सुधर्मस्वामी पोताना जंबू नामना शिष्यने कहेता हवा के हे जंबू! जेम मे श्री महावीर देव स्वामीनी सभीपे सांभळ्युं हतुं, तेम मे तुज प्रत्ये कयुं॥ ३७॥ इतिश्री उत्तराध्ययनना भाषामां अध्ययननो भावार्थ संपूर्ण॥३०॥ ए ३०मा अध्ययनने विषे तपनो चरित्राचार कह्यो, हवे तपनो चारित्राचार होय तेवडे बीजी ३१मा अध्ययनने विषे चारित्रनो अधिकार कहेछे.

अर्थः-च० चारित्रनो वि० विधि प० कहीश गुरु शिष्य प्रत्ये करेछे। जी० जीवे उ० उत्तरो गु० गुणना आधारभूत जे० जे चरणविधिने आदरीने व० तरी जी० जीव। वि० सर्व सं० संसार कांतार सा० समुद्र॥१॥

मूलः-चरणविहिं पवक्खामि जीवस्स उ सुहावहं।
जं चरित्ता बहू जीवा तिण्णा संसारसागरं॥ १॥

त्रीनुं प्रमाण करे ए पांच वोल पाळे, ६ सर्वथा ब्रह्मचर्य पाळे, ७ सचेतनो आहार न करे, ८ पोते आरंभ न करे, ९ अनेरा पासे आरंभ करावे नहि, १० आरंभ करीन आपे ते ले नहि, ११ चोटली राखी मस्तक डाढी मुंछनो लोच करी पोतानी ज्ञातीमां गौचरी करे, सर्व मुनीनो आचार राखे ए श्रावकनी ११ पडीमा अंगीकार करे. वार भिक्षुनी प्रतिमा ते, १ एक पग उंवरा वाहीर ने एक पग उंवरा मांही राखीने आपे तथा आहार पाणीनी अखंड धाराथी आपे ते एक दात कहीए, २ महिने एक दात आहारनी ने एक दात पाणीनी एम अनुक्रमे सातमे महीने सात दात अन्न पाणीनी समजवी, ८ मी ९ मी ने १० मी ए त्रण प्रतिमा सात सात अहोरात्रीनी एकांतर चोवीहार उपवास करे अने दिवसे ग्रामनी वाहीर सुर्यनी आतापना लीए अने रात्रीए त्रण त्रण आसनवाळे, ८ मीमां १ चता सुवे, २ एक पासाभर सुवे, ३ पलांठी वाळी चार पोहोर रात्री बेठी रहे, ९ मीमां १ डंडासण, २ लगडासण, ३ उकुडु आसने बेसे, १० मीमां १ गोहीयासण, २ वीरासण, ३ अंबखुजी आसण, ११ मी प्रतिमा छठभक्त चोवीहारो उपवास करे, बीजे उपवासे ग्रामनी वाहार एक अहोरात्रीनो कायोत्सर्ग करे, १२ मी प्रतिमाए अठमभक्त चोवीहारो उपवास करे, ३ जे उपवासे एक मसाण भुमिकाए एक पुदगळपर दृष्टि राखी आंखना मटकारा रहित एक रात्रीनो कायोत्सर्ग करे, आठमी प्रतिमाथी मांडीने बारमी प्रतिमा सुधी देवता मनुष्य ने तिर्यंचना उपसर्ग खमे ए १२ मुनीनी प्रतिमा जाणवी, ए पूर्वोक्त प्रतिमाने विषे जे साधु सदाय यत्नवंत होय ते संसार मांही न भमे ॥ ११ ॥

अर्थः–कि० १३ प्रकारनी क्रियानेविषे भू० एकेंद्रियादिक १४ प्रकारना जीवनेविषे । प० १५ जातिना परमाधामीने य० विषे जे० जे भि० साधु ज० चउद प्रकारना जीवनी रक्षाकरवानेविषे उद्यमकरे । १५

जे० जे भि० साधु र० भलगा रहे नि० सदाय से० ते न० ने अ० रहे मं० संसारमांहि भमे नहि ॥ ४ ॥

मूलः—दण्डाणं गारवाणं च सल्लाणं च तियं तियं ।
जे भिक्खू रुम्भए निच्चं से न अच्छइ मण्डले ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थः—३ दंड ते, १ मनदंड, २ वचनदंड, ३ कायदंड, ३ गर्व ते, १ ऋद्धिगर्व, २ रसगर्व, ३ शातागर्व, ३ शल्य ते, १ माया (कपटाइ) शल्य, २ निधान (धर्म कमाणीनुं फल मागी लेवुं ते) शल्य, ३ मिथ्यात्वदर्शन शल्य एहने जे साधु सदाय छांडे ते संसारमांही न भमे ॥ ४ ॥

भावार्थः—दि० देवताना कीधा ब०बली जे०जे उ०उपसर्ग त०तेम ते०तिर्यंचना कीधा उपसर्ग मा०मनुष्यना कीधा उपसर्ग ॥ जे० जे भि० साधु त० सहे स०समभावे से० ते न०न अ०रहे मं०संसारमांहि भमे नहि॥५॥

मूलः—दिव्वे य जे उवसग्गे तहा तेरिच्छमाणुसे ।
जे भिक्खू सहई सम्मं से न अच्छइ मण्डले ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः—अण प्रकारना उपसर्ग ते १ देवता संबंधी उपसर्ग, २ मनुष्य संबंधी उपसर्ग, ३ तिर्यंच संबंधी उपसर्ग. इवे देवता संबंधी उपसर्ग ते चार प्रकारे, १ हास्य, २ द्वेष, ३ परिक्षा, ४ अनेक प्रकारे वैरभाव. मनुष्य संबंधी चार प्रकारे उपसर्ग, १ हास्य, २ द्वेष, ३ परिक्षा, ४ कुशील निमित्ते, बळी उपलक्षणथी, ४ प्रकारे ते आत्मसमुत्था, १ पगन, २ पगन, ३ स्तंभन, ४ संश्लेषन. इवे तिर्यंच संबंधी उपसर्ग चार प्रकारे ते १ भय, २ द्वेष, ३ भक्ष पाणी निमित्ते, ४ पोताना संतान पाळवा निमित्ते ए पूर्वोक्त

मूलः—गाहासोलसएहिं तहा अस्संजममम्मि य ।
जे भिक्खू जयई निचं से न अच्छइ मण्डले ॥ १३ ॥

गाथा १३ भावार्थः—सुयगडांग सुत्रना प्रथम श्रुत खंधना १६ अध्ययन ते, १ स्वसमय परसमय नामे, २ वैताळीय नामे, ३ उपसर्ग नामे, ४ स्त्रीप्रज्ञा नामे, ५ नर्क विभुती नामे, ६ वीरस्तुति नामे, ७ कुशील प्रभासी नामे, ८ सकाम अकामविर्य नामे, ९ धर्म नामे, १० समाधी नामे, ११ मोक्षमार्ग नामे, १२ समोसर्ण नामे, १३ यथातथ्य नामे, १४ ग्रंथ नामे, १५ यमतथी नामे, १६ गाहा नामे, ए १६ ने यथा-तथ्य सर्दहे, १७ प्रकारना असंयम ते, १ पृथ्वी, २ पाणी, ३ अग्नी, ४ वायु, ५ वनस्पती, ६ बेइंद्री, ७ तेइंद्री, ८ चौइंद्री, ९ पचेंद्री, १० अजीव, ए १० नी दया पाळे अने ११ अपेहा, १२ अउपेहा, १३ परि-ठावणीया, १४ अपमंजणा, १५ मन, १६ वचन, १७ काया ए १७ प्रकारनो असंयम तथा पाठांतरे पांच इंद्रीयो पांच आश्रव ते, १ मिथ्यात्व, २ अव्रत, ३ कषाय, ४ प्रमाद, ५ अशुभ योग ए दशने ११ मुं क्रोध, १२ मान, १३ माया, १४ लोभ, १५ मन, १६ वचन, १७ काया, ए प्रकारे असंयमने छांडवो, ए पुर्वोक्तने विषे जे साधु सदाय यत्नावंत होय ते संसारमांही न भमे. ॥ १३ ॥

अर्थः—मनेकरी उदारिक मनुष्य तिर्यंच संबंधीया विषय सेवे नहि अनेरा पासे सेवरावे नहि । सेव-ताने भलुं जाणे नहि ३ । एम वचने करी ३ प्रकारे । ३ । एम कायाए करी त्रण प्रकारे एम ९ प्रकारे । एम वैक्रिय देवता संबंधीया नव भेद नवे दु अढार । ए १८ प्रकार बंभ ब्रह्मचर्यनेविषे । ना० सूत्रना १९ अ० अ-

गाथा ७ भावार्थः-पंच महाव्रत ते, १ जीवदया व्रत, २ सत्यव्रत, ३ दत्तव्रत, ४ ब्रह्मचर्यव्रत, ५ अपरिग्रह व्रत, ए पांच महाव्रत पाळे. १ शब्द, २ रूप, ३ गंध, ४ रस, ५ स्पर्श ए पांच इंद्रियोना विषयने वर्जे अने १ इर्या, २ भाषा ३ एषणा, ४ आदान, ५ परिष्ठापणीया, ए पांच समिती पाळे अने १ काया, २ अधीकरणकी, ३ पाउसीया, ४ पारितापणीया, ५ प्राणीवाह ए पांच क्रियाने वर्जे ए पूर्वोक्त प्रमाणे जे साधु यत्नापूर्वक वर्ते ते संसारमांही न भमे ॥७॥

अर्थः-ले० ए लेश्याने विषे छ० छ का० कायने विषे छ० छ आ० आहार लेवाना का० कारण वेयण वेयावच्च इत्यादिकने विषे जे० जे वि० साधु ज० जतना नि० सहाय करे कृष्ण नीलकापोत ३ लेश्या छांडवाने विषे उपयोग करे। तेजु १ पद्म २। शुक्ल ३। ए ३ लेश्या आदरवानो उपयोग करे सहाय राखवाने विषे छ कारणे आहार करवानो उपयोग करे सं० ते न० न अ० रहे सं० संसारमांहि भमे नहि ॥ ८ ॥

मूलः-लेसासु छसु कायेसु छक्के आहारकारणे।
जे भिक्खू जयई निच्चं से न अच्छइ मण्डले ॥ ८ ॥

गाथा ८ भावार्थः-६ लेश्या ते १ कृष्ण, २ नील, ३ कापुत, ४ तेजु, ५ पद्म, ६ शुक्ल, ए छ लेश्या मांही प्रथमनी त्रण दुष्ट लेश्या वर्जे। अने पाछी त्रण लेश्याए प्रवर्ते, ६ कायना नाम, १ पृथ्वी, २ पाणी, ३ तेज, ४ वायु, ५ वनस्पती, ६ त्रस, ए छ कायना जीवनी दया पाळे, छ कारणे आहार करे ते, १ वेदना, २ वैयावच्च, ३ इर्याने अर्थे, ४ संयमने अर्थे, ५ प्राण निभावाने अर्थे, ६ धर्मचिंताने अर्थे, ए पूर्वोक्तने विषे जे यति सहाय यत्नपूर्वक वर्ते ते संसारमांही न भमे ॥ ८ ॥

होर रात्री गया पछी मोटे मोटे शब्दे बोले, १६ मोटो क्लेश करे, १७ झंझ वचननो क्लेश करे, १८ पोताने तथा परने असमाधी उपजावे, १९ प्रभातथी ते संध्या सुधी लावीने खाखा करे, ए २० असमाधीनां स्थानक पर्जे, ए पुर्वोक्तने विषे जे साधु समुदाय यत्नवंत होय, ते संसारमांही न भमे । १४ ॥

अर्थः–ए० चारित्रने कारण करे ते एकवीस । १० सबला दोपने विषे ॥ बा० बावीस प०परीसहनेविषे जे०जे भि०साधु ज०एकवीस सबला दोप छांडवानेविषे । बावीस परीसह सहवाने विषे उद्यम करे । नि०सदाय सं० ते न० न अ० रहे । मं० संसारमांहि भमे नहि ॥ १५ ॥

मूलः–एगवीसाए सबले बावीसाए परीसहे ।
जे भिक्खू जयई निचं से न अच्छइ मण्डले ॥ १५ ॥

गाथा १५ भावार्थः–२१ सबळा दोप ते, १ हस्तकर्म (हाथरस) करे, २ मैथुन सेवे, ३ रात्रीभोजन करे, ४ आधाकर्मि आहार भोगवे, ५ राज्यपींड भोगवे, ६ कृतगड १, पामीचं २, अछेजं ३, अणीसीधं ४, अभीहडं ५, ए पांच प्रकारना दोप सहीत आहार भोगवे, ७ वारंवार पचखाण करीने भांगे, ८ छ मासमांही वगर कारणे दोळुं (गच्छ) वदले, ९ एक महीनामां उदक (पाणी) ना त्रण लेप लगाडे (अर्थात् त्रण नदी उतरे, १० एक मास मांही त्रण मायाना स्थानक सेवे, ११ सेजांतरनो आहार भोगवे, १२ आकुटीने प्राणातीपात करे, १३ आकुटीने जुठुं बोले, १४ आकुटीने अदत्तादान लीए, १५ सचेत पृथ्वी उपरे सुवे बेसे, १६ सचेतरजे खरडेल पाट पाटला उपरे सुवे बेसे उठे, १७ सळी गयेला पाटपाठला उपर सुवे बेसे उठे,

लाभ मद, ८ ऐश्वर्य (वकुराइ) मद, ए आठ मदने वर्जे, १ स्त्री, पशु, नपुंसक रहित स्थानक भोगवे, २ स्त्रीनी कथा न करे, ३ स्त्रीनी साथे एक आसनपर न बेसे, ४ स्त्रीना अंगोपांग न निरखे, ५ भींतने आंतरे स्त्रीना विषययुक्त वाक्य न सांभळे, ६ स्त्रीनी पुर्वक्रीडा न संभारे, ७ हमेंश सरस आहार न करे, ८ मर्यादा उपरांत आहार न करे, ९ विभुषा न करे, ए नव वाडे ब्रह्मचर्य पाळे, १ क्षमा, २ निर्लोभता, ३ निष्कपटाइपणुं, ४ अष्टमद रहित, ५ द्रव्ये ने भावे इलवापणुं, ६ सत्य वचन, ७ संचर प्रकारनो संयम, ८ बार भेदे तप, ९ ज्ञानवंत, १० ब्रह्मचर्य ए दश मुनीना धर्म पाळे, ए पुर्वोक्त प्रमाणे जे सदाय पाळे ते संसारमांही न भमे ॥ १० ॥

अर्थः-उ० श्रावकनी प० इग्यार प्रतिज्ञानेविषे । भि० भिक्षुनी बार प० प्रतिज्ञाने ग० विषे । जे० जे भि० साधु न० श्रावकनी ११ प्रतिज्ञा जाणवानेविषे भिक्षुनी प्रतिज्ञा पालवानेविषे उद्यम करे नि० सदाय । से० ते न० न अ० रहे मं० संसारमांहे भमे नही ॥ ११ ॥

मूलः-उवासगाणं पडिमासु भिक्खूणं पडिमासु य।
जे भिक्खू जयई निच्चं से न अच्छइ मण्डले ॥ ११ ॥

गाथा ११ भावार्थः-११ श्रावकनी प्रतिमा ते, १ समकित निर्मळ पाळे ने कोइने मजरो करे नही, २ व्रत निर्मळ पाळे, ३ बखतो बखत सामायक देसावगासीक शुद्ध करे, ४ बे आठमनो अकेक अने १४ पोसो छठ पोसो ए रीते एक मासना ६ पोसा करे, ५ पांच बोल पाळे, १ पोषध दिवसे चार पोहोर रात्रीनो कायोत्सर्ग करे, २ स्नान न करे, ३ रात्री भोजन न करे, ४ काछडी नं वाळे, ५ दिवसे ब्रह्मचर्य पाळे ने रा-

५ भाषा नामे, ६ आर्द्र कुमारनुं, ७ उदगपेढाळ पुत्रनुं ए सर्व मळी २३ अध्ययनने श्रद्धे चोवीस तीर्थंकरना देव ते चोवीस तिर्थंकर जाणवा तथा १० भुवनपती, ८ वाणव्यंतर, ९ जोतीषी, १ वैमानीक ए २४ जातीना देवताने श्रद्धे ए पुर्वोक्तने विषे जे साधु सदाय यत्नवंत होय ते संसारने विषे न भमे ॥ १६ ॥

अर्थः–५० पांच महाव्रतनी पचवीस भा० भावनाने विषे। उ० छत्रीस उद्देसा द० दसा श्रुत स्कंधना दस उद्देसा बृहत्कल्पना छ उद्देसा। व्यवहार सुत्रना दस उद्देसाने विषे जे०जे भि०साधु पचवीस भावना सभी आराधवाने विषे ॥ छवीस उद्देसा समा सदहवाने विषे ज०उद्यम करे नि० सदाय। से० ते न० न अ० रहे मं० संसार मांही भमे नहि ॥ १७ ॥

मूलः–पणवीसभावणेहिं उद्देसेसु दसाइणं।
जे भिक्खू जयई निच्चं से न अच्छइ मण्डले ॥ १७ ॥

गाथा १७ भावार्थः–पंचमहाव्रतनी २५ भावना तेमां अकेका महाव्रतनी पांच पांच भावना ते १ इर्या, २ मन, ३ वचन, ४ एषणा, ५ आदान भंडमत्त निक्षेवणा, ६ विचारीने बोलवुं. ७ क्रोधे करी जुठुं बोलवुं नहि, क्षमा करवी, ८ लोभथी जुठुं बोलवुं नहि, संतोष राखवो, ९ भयथी जुठुं बोलवुं नहि, धीरज राखवी, १० हांशी कुतुहळथी जुठुं बोलवुं नहि, मौन्य रहेवुं, ११–१८ जातीनां स्थानक निर्दोष याचीने भोगववां, १२ वणकाष्टकांकरो प्रमुख दीन दीन प्रत्ये याचीने भोगवबुं, १३ छकाय जीवनी हिंसा थाय तेम स्थानक समारवुं नहि, १४ देवनुं, गुरुनुं, इंद्रनुं, राजानुं, गाथापतीनुं, सेजातरनुं, जीवनुं अदत्तादान लेवुं नहि, १५ गुरुनी,

नंबर	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८
मास	१	१	१	१	१	२	२	२	२	२	३	३	३	३	३	३	३	३	४	४	४	४	४	४	४	५	५	६
दीन	०	५	१०	१५	२०	२५	०	५	१०	१५	२०	२५	०	५	१०	१५	२०	२५	०	५	१०	१५	२०	२५	२७	०	२७	०

॥ ३७६ ॥ ॥ ३१ ॥

ए २८ प्रकारनुं प्रायश्चीत सम्यक प्रकारे आराधे ए पुर्वोक्तने विषे जे साधु सदाय यत्नवंत होय, ते संसार मांही न भमे ॥ १८ ॥

अर्थः–पा० ओगणत्रीस २९. पाप आश्रवाना सु० शास्त्र निमित्तादिक । प० तेहना प्रसंगने विषे ॥ मो० मोहनीना ठा० ३० स्थानकने चे०य०विषे । जे०जे भि०साधु ज० २९ पाप शास्त्र भने ३० मोहनीना स्थानक छांडवाने विषे उद्यम करे नि० सदाय । से० ते न० न अ०रहे सं० संसारमांही भमे नहि ॥ १९ ॥

मूलः–पावसुयपसङ्गेसु मोहट्ठाणेसु चेव य ।
जे भिक्खू जयई निच्चं से न अच्छइ मण्डले ॥ १९ ॥

गाथा १९ भावार्थः–२९ प्रकारनां पाप सुत्रनां नाम कहेछे, १ भुमी कंपनामे शास्त्र, २ उत्पात नामे शास्त्र, ३ स्वप्न नामे शास्त्र, ४ अंतलीख नामे शास्त्र (उल्कापातनुं जाणपणुं), ५ अंग नामे शास्त्र (अंग स्फुरणनुं जाणपणुं), ६ स्वर नामे शास्त्र (स्वरनुं जाणपणुं), ७ व्यंजन नामे शास्त्र (तल मसादीकनुं जाणपणुं), ८ लक्षण नामे शास्त्र (स्त्री पुरुषनां लक्षणनुं जाणपणुं) ए ८ सुत्रना, ८ अर्थना, ८ वार्तानां ए

॥ ३७६ ॥

ज्ञानना अध्ययन तथा गरहवाने विषे । असमाधिना थानक छांडवाने विषे उद्यम करे । नि० सदाय से० ने न० न अ० रहे पं० संसारमांही पमे नहि ॥ १४ ॥

मूलः—बम्भम्मि नायज्झयणेसु ठाणेसु असमाहिए ।
जे भिक्खू जयई निचं से न अच्छइ मण्डले ॥ १४ ॥

गाथा १४ भावार्थः—उदारिक शरिर संबंधी अने वैक्रीय शरिर संबंधी मैथुन नवे नवे कोटीए सेवतुं नहि, ए अढार प्रकारनुं ब्रह्मचर्य जेने अने १९ ज्ञातासूत्रना प्रथम श्रुत स्कंधना अध्ययन. १ मेघकुमारनुं, २ धनाना दृष्टांत, ३ मोरना दृष्टांत, ४ कछवानुं, ५ शैलकनुं दृष्टांत, ६ तुंबडीनुं, ७ रोहीणीनुं, ८ मल्लीनाथनुं, ९ जीनरक्षने जीनपालनुं, १० चंद्रमानुं, ११ दावद्रव दृष्टांत, १२ सुबुद्धि प्रधाननुं, १३ नंदमणीयारनुं, १४ तेतलीपुत्रनुं, १५ नंदीफलनुं, १६ द्रौपदीनुं, १७ आकीर्ण जातीना घोडानुं, १८ सुषमादारीकानुं, १९ पुंडरीक पुंडरीकनुं ए १९ ने अर्थे, बीजा असमाधीना स्थानक ने, १ उतावलो उतावलो चाले, २ वगर पुंजे चाले, ३ धांधक पुंजे ने धांधक पग मांडे, ४ अगीक पाटपाटला भोगवे, ५ वडेराना गामुं बोले, ६ स्थाविरनो घात चिंतवे, ७ सर्व जीवोनो घात चींतवे, ८ क्षण क्षण मनो क्रोध करे, ९ पलना अवर्णवाद बोले, १० वारंवार निश्चेकारी भाषा बोले, ११ अधो वचन करे, १२ जुनो कलेश उपशमावो होय ते फरी उदीरे, १३ अकाले स्वाध्याय करे, १४ सचित्तरजे सहितपगादिक खरडेल होय, तेने रजर पुंजे मुके लेगे उठे, १५ पो-

महर्धिक देवता थयेला छे तेहना अवर्णवाद बोले, ३० चारजातीना देवना आवना नथी अने कहे मारी पासे देवता आवेछे ए ३० काम करवाथी ७० क्रोडा क्रोडी सागरोपम सुधी रखळवानुं महामोहनी कर्म बांधे, एम जाणी ए ३० महामोहनी स्थानकने वर्जे ए पुर्वोक्तने विषे जे साधु सदाय यत्नवंत होय ते संसार मांही न भमे ॥२१॥

॥३७७॥ ॥ ३१ ॥

अर्थः–सि० सिद्ध मोक्षपद पाम्यां ते आदिनुं पहिलुं जे समय ते सिद्धादिक गुण ३१ तेहनेविषे जो० मन वचन कायाना जोग व्यापार तेहना ३२ जोग आलोयणादिक तेहने विषे । ते० तेत्रीस आ० आसातनाने य० विषे जे० जे भि० साधु ज० सिद्धना ३१ गुण कहेवाने विषे उद्यम करे । मन वचन कायाना ३२ जोग व्यापार रुडा प्रवर्तावाने विषे उद्यम करे ॥ तेत्रीस आसातना छांडवाने विषे उद्यम करे नि० सदाय । से० ते साधु न० न अ० रहे मं० संसारमांही भमे नहि ॥ २० ॥

मूलः–सिद्धाइगुण–जोगेसु तेत्तीसासायणासु य ।
जे भिक्खू जयई निच्चं से न अच्छइ मण्डले ॥ २० ॥

गाथा. २० भावार्थः–सिद्ध भगवंतना ३१ गुण तेनां नाम, १ प्रकारे ज्ञानावर्णि कर्म क्षय कर्यो, २ प्रकारे दर्शनावर्णि कर्म क्षय कर्यो, २ प्रकारे वेदनी कर्म क्षय कर्यो, २ प्रकारे मोहनी कर्म क्षय कर्यो, ४ प्रकारे आयुष्य कर्म क्षय कर्यो, २ प्रकारे नाम कर्म क्षय कर्यो, २ प्रकारे गोत्र कर्म क्षय कर्यो, ५ प्रकारे अंतराय कर्म क्षय कर्यो, ए एकत्रीस सिद्ध भगवंतजीना गुणने श्रद्धे, ३२ प्रकारना जोग संग्रह तेना नाम, १ जे अति-चारादीक दोष लागेलो होय तेनी गुरुवादीकनी पासे आलोचना करे, २ गुरुनी पासे आलोचना करेली होय

॥ ३७७ ॥

१८ मूल १, कंद २, स्कंध ३, छाल ४, प्रवाल ५, पत्र ६, पुष्प ७, फळ ८, बीज ९, हरी ए १० प्रकारनी सचेत वनस्पती भोगवे, १९ एक वस्त्र मांही १० उदक लेप लगाडे (अर्थात १० नदी उतरे), २० १ वस्त्र मांहे १० मायानां स्थानक सेवे, २१ काच अथवा वासण सचेत वस्तुथी खरडेल होय तेथी लीप ए २१ सबला दोष थके, २२ परीसहनां नाम १ क्षुधानो, २ तृषानो, ३ टाढनो, ४ तापनो, ५ डांस मच्छरना, ६ अचेलनो, ७ अरतीनो, ८ स्त्रीनो, ९ चालवानो, १० बेसवानो, ११ स्थानकनो, १२ आक्रोस थवानो, १३ वधनो, १४ याचवानो, १५ अलाभनो, १६ रोगनो, १७ घण स्पर्शनो, १८ जळ मेलनो, १९ सत्कार सन्माननो, २० गर्वनो, २१ अज्ञाननो, २२ दर्शननो, ए २२ परीसह सहन करवा, ए पुर्वोक्तने विषे जे साधु सदाय यत्नवंत होय ते संसारमांही न भमे ॥ १५ ॥

अर्थः जे० जेणे अध्ययन सू० सूयगडांग सूत्रना बे श्रुतस्कंधना ० २३ उपर एक अधीकुं करे तो २४ होय तो सु० २४ प्रथम श्रुतस्कंध, आठ अध्ययन, पांच ज्योतिषी देवतानी कए २४ देवतानी जाती अथवा २४ तिर्थंकरे क० जे० जे नि० साधु अ० उपन्न करे नि० सदाय सं० जे न० नही अ० रहे सं० संसार मांही भमे नही ॥१६॥

मूलः—तेवीसाइ सूयगडे रूवाहिएमु सुरेसु य ।
जे भिक्खु जयई निच्चं से न अच्छइ मण्डले ॥ १६ ॥

भा० १६ आर्याः—सूयगडांगसूत्रना प्रथम श्रुत स्कंधना १६ अध्ययन पुर्वे कहेल, बीजी वीजा श्रुत स्कंधना सात अध्ययन छे, १ पुंडरीकी नामे, २ क्रीया नामे, ३ आहार पद्य नामे, ४ प्रत्याख्यान क्रीया नामे

स्थानकमां आवे, तेवारे गुरुनी पहेला शिष्य इर्यावही पडीकमे, १२ कोइ अन्य पुरुष प्रश्नादीक पुछवा आव्यो होय ते गुरुनेज बोलावबा योग्य छे, अने शिष्य बोलावे, १३ रात्रीए गुरु पुछे कोण सुता छे ने कोण जागे छे, तेवखते शिष्य जागतो थको बोले नहि, १४ शिष्य चार प्रकारना आहार व्होरीलावेल होय ते पहेला नाना साधुनी पासे आलोयणा करे अने पछी गुरु पासे आलोयणा करे, १५ तेमज ते आहार प्रथम नाना साधुने देखाडे, पछी गुरुने देखाडे, १६ ते आहार पहेला नाना साधुने आमंत्रे, पछी गुरुने आमंत्रे, १७ ते आहार गुरुने पुछ्या विना जे जे इच्छे तेने काढी आपे, १८ गुरु अने शिष्य बंने जणा बेशीने एक पात्रा मांही आहार पाणी करतां गुरुनी आज्ञा विना पोतानी इच्छा मुजब आहार करी जाय, १९ गुरु शिष्यने बोलावे ते वखते सांभळीने बोले नहि, २० गुरु शिष्यने बोलावे अने तिहांज बेठो थको उत्तर आपे, २१ गुरु शिष्य ने बोलावे, अने शुं कहोछो, शुं कहोछो, एम कहे, २२ गुरुने तुं तुं करे, २३ गुरु शीखामण आपे तेवारे सामुं बोले, २४ गुरु कहे वृद्ध रोगी तपस्वी विगेरनी वैयावच्चकरो तो नफो थशे, तेवारे शिष्य कहे, तमेज करो, तमने शुं ? नफो नहि थाय, २५ गुरु धर्मकथा कहेतां कोइ गाथा पदादीक भुले तेवारे गुरुने खिष्ट करवाने कहे एमनथी एम छे, एम कहे, २६ गुरु धर्मकथा कहेतां कहे ए अमुक बोल विचारीने कहेशुं, तेवारे शिष्य कहे शुं ? ते अर्थ तमने सांभळतो नथी ! ! ! एम कहे, २७ गुरु धर्मकथा कहेतां होय तेवारे अरती वेदे, २८ गुरु धर्मकथा कहे तेवारे मखदा मांही भेद पाडे, २९ गुरु धर्मकथा कहेता होय तेवारे धर्मकथानो रस छेदे, (अर्थात क्यां सुधी व्याख्यान करशो, गोचरीनुं अमुर थायछे), ३० गुरु धर्मकथा कही रह्या पछी ते मखदा मांहीथी कोइ गयुं नहोय, पछी ते मखदा मांही जे गुरुए व्याख्यान करेल होय, तेहन अध्ययनादीक वधारे मेळ मेळवीने

वृद्धनी, रोगीनी, तपसीनी, नवदीक्षीत शिष्यनी वैयावच्च करवी, १६ स्त्री, पशु, नपुंसक रहीत स्थानक भोगववुं, १७ स्त्रीनी कथा करवी नहि, १८ स्त्रीना अंगोपांग निरखवां नहि, १९ पुर्वना काम-भोग संभारवा नहि, २० दीन दीन मत्ये सरस आहार करवो नहि, २१ शब्द, २२ रुप, २३ गंध, २४ रस, २५ स्पर्श ए पांच सारा उपर राग करवो नहि अने नठारा उपर द्वेष करवो नहि, ए २५ भावना पाळवी, २६ उद्देशा ते, १० दशाश्रुत स्कंध सुत्रना, ६ बृहत कल्पसुत्रना, १० व्यवहार सुत्रना ए २६ उद्देशा काळे भणवाने तेहनी शीखामणे चालवुं, ए पुर्वोक्तने विषे जे साधु सदाय यत्नवंत होय, ते संसारने विषे न भमे ॥१७॥

अर्थः-अ० अणगारना गु०सत्तावीस गुणने विषे च० वळी आचारंगना बे सुत्र स्कंधना २५ अध्ययनने जेम निसीथना ३ । एम २८ अध्यपने जेम आचार प०कल्पोले त०तेम य०वळी जे० जे भि० साधु ज० आराधवाने विषे उद्यम करे नि० सदाय से० ते न० न अ० रहे मं० संसार मांहि भमे नहि ॥ १८ ॥

मूल-:अणगारगुणेहिं च पकप्पम्मि तहेव य ।
जे भिक्खु जयई निच्चं से न अच्छइ मण्डले ॥ १८ ॥

गाथा १८ भावार्थः-साधुना २७ गुण ते, ५ पांच महाव्रत पाळे, पांच इंद्रीयो निग्रह करे, ४ कषाय वर्जे एम, १४ अने १५ भाव सत्य, १६ करण सत्य, १७ जोग सत्य, १८ क्षेमावंत, १९ वैराग्यवंत, २० मन समधारणवंत, २१ वचन समधारणवंत, २२ काया समधारणवंत, २३ ज्ञान संपन्न, २४ दर्शन संपन्न, २५ चारित्र संपन्न, २६ वेदनी अहीयासीया, २७ मारणांति अहियासीया ए मुनीना २७ गुण धारण करे.

संपूर्ण ॥ ३१ ॥ एं ३१ मां अध्ययनने विषे चारित्र पांळवानुं कर्युं, ते चारित्र तो अप्रमादी होय ते पाळे, तेथी ३२ मां अध्ययनने विषे प्रमादनां स्थानक कहीने ते प्रमादन छांडवानुं कहेछे, ते प्रमाद ससारमांही परीभ्रमण करावतो संसार कहेवो छे ते कहे छे

अर्थः—अचन्त० अनादि का० कालनुंछे स० मिथ्यात्वादि मूलेकरी सहितछे ॥ स० सर्व च्यार गतिरुप ॥ दु० दुषमय संसारछे तेहना उ० पूरणे जो० जे प० (मोक्ष) मुकाववो । तं० ते मुकाववो भा० कहेता मे० मुजने प० प्रतिपूर्ण चि० चित्त थको हे शिष्य तुं । मु० मांभलो ते मुकाववो कहेवांछे ॥ ए० एकांत हि० हितकारीछे वली । हि० मोक्ष तेहज अ० अर्थ छे जेहने विषे ॥ १ ॥

मूलः—अचन्तकालस्स समूलगस्स सवस्स दुक्खस्स उ जो पमोक्खो ।
तं भासओ मे पडिपुण्णचित्ता सुणेह एगन्तहियं हियत्थं ॥ १ ॥

गाथा १ भावार्थः—गुरु कहेता हवा हे विषयथी खंडीत थएला ने प्रतिपुर्ण चितवाळा शिष्य ? जे अनादी काळनो ने अव्रतादीक मुळे करी सहीत एवा संसारना सर्व दुःखथी मुक्त थवानो ऊपाय अने जे हितकारी एवो मोक्षनो अर्थ हुं तुजने कहीश ? ते एकाग्र चित्ते करीने तुं सांभळ ? ॥ १ ॥

अर्थः—ना० ज्ञानते स० सर्व मति श्रुतादि ॥ प० निर्मल करवे करी अ० मति अज्ञानने मो० मिथ्यात मोहनीयने वि० विशेषे करजवे करी । रा० रागने दो० द्वेषने य० वली सं० सम्यग प्रकारे ख० पपावे करी ॥ ए० एकांत मो० मुक्ते स० पामे सघ ते केहवो छे मो० मोक्षरुप ॥ २ ॥

२४ भेद अने २५ विकथानुं कथन, २६ मंत्रनी रोहीयादीक विद्यानुं कथन, २७ सर्प वींछी प्रमुखना मंत्रनुं कथन, २८ वमी करणनुं कथन, २९ अन्य तिर्थिना आचारनुं कथन ए २९ पाप सूत्र तथा (पाठांतरे) २९ प्रकारना पाप सूत्रना नाम कहेछे, २४ मो पुर्वोक्त अने २५ गंधर्व शास्त्र, २६ नाटक शास्त्र, २७ वास्तु शास्त्र, २८ वैद्यक शास्त्र, २९ धनुर्वेद शास्त्र ए २९ पाप सूत्रने वांचे भणे नहि, ३० महामोहनी बांधवानां स्थानक कहेछे, १ त्रस जीवने पाणीमांही बोळीने मारे, २ त्रसजीवना श्वासोश्वास रुंधीने मारे, ३ त्रस जीवने धुंमाडो करी अकळावीने मारे, ४ त्रस जीवने मस्तकने विषे गीलांटीने मारे, ५ त्रस जीवना मस्तकने विषे शीर्षवेष्टीने मारे, ६ गांढा गुंगाने लाकडीए तथा पाटीयादीके मारतो आप ने हस्तो जाय, ७ अणचार सेवीने डंके, ८ चोरे अणाचार सेवीने पारकाने माथे नांखे, ९ सभा मध्ये बेसी जाणीने मीश्र भाषा बोले, १० भोगीना भोग हरे (आ शब्दनो अर्थ गुरु गमथी धारवा जेवो छे), ११ बाल ब्रह्मचारी नथी ने बाळ ब्रह्मचारी नाम धरावे, १२ ब्रह्मचारी नथी ब्रह्मचारी नाम धरावे, १३ क्षेत्रनुं धन चोरे, १४ पंच मळीने वहेरो एगोठलो छे अने पछी तेहना पंचने दुःखदीये, १५ विश्वासघात करी स्त्री पुत्रादीकने परस्पर मारे, १६ एक देशना राजाने मारे, १७ घणा देशना राजाने मारे, १८ साधुने संयमथी भ्रष्ट करे, १९ तिर्थंकरना अवर्णवाद बोले, २० तिर्थंकरना मार्गना अवर्णवाद बोले, २१ आचार्य उपाध्यायना अवर्णवाद बोले, २२ आचार्य उपाध्यायनो विनय वैयावच्च न करे, २३ बहु श्रुती नथी ने बहु श्रुतीनामगावे, २४ तपस्वी नथी ने तपस्वी नाम धरावे, २५ ईद्र योगी नथीनो विनय वैयावच्च न करे, २६ चार तिर्थमांही भेद पाडे, २७ जोनिपनि-षिध वशीकरणादीक भोगे, २८ देवता मनुष्य तिर्यंचना अनेक काम भोग इच्छे, २९ तप संयम पाळीने थोडा

॥ ५७९, ॥

॥ ५७९ ॥

ते बीजाने करेवुं नहि, ३ कष्ट विपत्ती आवेतोपण धर्मने विषे निश्चळ रहेवुं, ४ इहलोकने परलोकना सुखनी वांछा रहीत तप करवो, ५ आसेवणा ने ग्रहणा ए बे शीक्षाए प्रवर्तवुं, ६ शरिरनी विभुषा न करवी, ७ अज्ञाती कुळनी गोचरी करवी, ८ छानो तप करवो पण कोइने कहेवुं नहि ने लोभ रहित प्रवर्तवुं, ९ परिसह आववाथी शुभ ममाणे सहवो ने क्षमा सहीत प्रवर्तवुं, १० सरळ भाव सहीत प्रवर्तवुं, ११ संयम सहीत प्रवर्तवुं, १२ समकित सहीत प्रवर्तवुं, १३ चित्तनी समाधी सहीत प्रवर्तवुं, १४ पांच प्रकारना आचार सहीत प्रवर्तवुं, १५ विनय सहीत प्रवर्तवुं, १६ तप विर्ष सहीत प्रवर्तवुं, १७ वैराग्य सहीत प्रवर्तवुं, १८ आत्माने निध्याननी पेरेराख्यो, १९ पासथाना भाव रहीत प्रवर्तवुं, २० संवरद्वार करवो, २१ पोताना आत्माना अवगुण राखवा, २२ सर्व काम भोगथी निवर्तवुं, २३ दीन दीन प्रत्ये व्रत पचखाणनो वधारो करवो, २४ उपधी अहंकारनुं छांडवुं ने कायोत्सर्गनुं करवुं, २५ पांच प्रमादने छांडवा, २६ थोडुं बोलवुं ने काळे काळ क्रिया करवी, २७ धर्मध्यान ने शुक्ल ध्यान सहीत प्रवर्तवुं, २८ शुभ योग सहीत प्रवर्तवुं, २९ मारणांती वेदना आव्येथके मन डेकाणे राखवुं, ३० सर्व कर्मनो संग छांडवो, ३१ आलोयणा करी निंदी निसल्ल थवुं, ३२ संलेखणा करीने संथारो करवो ए ३२ जोग संग्रह अंगीकार करवा. हवे गुरुनी ३३ आसातना कहे छे, तेनां नाम १ गुरुनी आगळ चाले, २ गुरुने पाछळ अडीने चाले, ३ गुरुने बे पडखे अडीने चाले, ४ गुरुनी आगळ अडीने उभो रहे, ५ गुरुनी पाछळ अडीने उभो रहे, ६ गुरुने बे पडखे अडीने उभो रहे, ७ गुरुने आगळ अडीने बेशे, ८ गुरुने पाछळ अडीने बेशे, ९ गुरुने बे पडखे अडीने बेशे, १० गुरु शिष्य बेहु निहार भुमीए गयेल होय, तिहां गुरुना पहेला शिष्य हस्त पाणी लीए, (ए अर्थ गुरु गमथी धारवो), ११ गुरु अने शिष्य बेहु बाहीर जइ

। इ० वांछे पण वि० स्त्रीपशु पंडग रहित जो० ते पण रहिवा योग्य ॥ स० चारित्रनी समाधीना लेणहार स० साधु त० तपसी ॥ ४ ॥

मूलः—आहारमिच्छे मियमेसणिज्जं सहायमिच्छे निउणत्थबुद्धिं ।
निकेयमिच्छेज्ज विवेगजोगं समाहिकामे समणे तवस्सी ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थः—जे ज्ञान दर्शन चारित्रनी समाधीना इछनार तपस्वी एवा साधुने जो आहारनी इच्छा थाय तो मर्यादा पुर्वक ४७ दोष रहित आहार वांछे, जो शिष्यनी इच्छा थाय तो भला जीवादीक नव तत्वना अर्थने विषे जेहनी बुद्धि छे, तेहवा शिष्यने वांछे, जो ऊपाश्रयनी इच्छा थायतो स्त्री, पशु, नपुंशक रहीत एवा उपाश्रयने वांछे ॥ ४ ॥

अर्थः—न० न वा० कदाचित ल०पामे नि०भला विवेकवंत स०सिष्यने न पामे ॥ वा०अथवा गु०गुण कारी अ०अधिक । गु० गुणेकरी स० सरिपो वा० अथवा ते पोते ए०एकलो वि०पण ॥ पा०पापकर्म वि० विशेषे वं०वर्जतो थको ॥ वि० विचरे का० कामनेविषे अ० असावधांन थको प्रवर्ते ॥ ५ ॥

मूलः—न वा लभेज्जा निउणं सहायं गुणाहियं वा गुणओ समं वा ।
एगो वि पावाइ विवज्जयन्तो विहरेज्ज कामेसु असज्जमाणो ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः—पोतानकी ज्ञानादीक गुणे करी अधीको तथा बराबर एवो भलो शिष्य कदाचित न पामेतो शिष्य विना एकलो पण पापकारी अनुष्ठान वर्जतो कामभोगने विषे प्रतिबंध अणकरतोथको संयमने विषे विचरे ॥५॥

कहे, ३१ गुरुना सहज संयोगने पोतेज्ञानी छतां पण कर्म विना बीजे गुरुने उगार समर्प्या जाय, ३२ गुरुना सहज संयोग उपर उभो रहे, वेगे, गुरु, ३३ गुरु पासे इच्छे ते भावे तेवे तथा उगार मागवे गुरु, वेगे, उभो रहे तो आज्ञाना ए ३३ प्रकारे गुरुनी आशातना टाळवी, ए पूर्वोक्ते विधे ते साधु सहज पत्तबंध होयने संसार पारी न पामे ॥ २० ॥

अर्थः-इ० एणे प्रकारे ए० ए पूर्वोक्त कथा न० ज्ञानदर्शने विषे। जे० जे भि० साधु न० सद्दहवा त्यजवा पालवानेविषे उद्यम करे स० सहाय ने ति० छांद्या सं० जे ग० नरकादिक च्यार गतीरूप सर्व सं० संसार थकी वि० मुक्त थाय विशेषे। पं० पंडित साधु इ० इति गुरुसंबंधी जंबू बीजे कहे छे ॥ हे जंबू जेम मे भी महावीर देवने समीपे सांभल्युं हतुं ॥ तेम हुं तुज प्रत्ये कहुं छुं ॥ २१ ॥

मूलः-इय एएसु ठाणेसु जे भिक्खू जयई सया।
खिप्पं सो सव्वसंसारा विप्पमुच्चइ पण्डिओ ॥ २१ ॥ ॥ त्ति बेमि ॥

॥ इति श्री चरणविधी एकवीसं अध्ययनं सम्पूर्णं ॥ २१ ॥

गाथा २१ भावार्थः-ए पूर्वोक्त १ बीजी ने ३३ बोल गुरुनी आशातना जोग जाणे, छांडवा जोग छांडे, आदरवा जोग आदरे, एवी रीते जे साधु सहज पत्तबंध होय ते पंडित उगारहो संसार थकी मुक्त थाय, एम सुधर्मा स्वामी पोताना जंबू नामना शिष्यने कहेता हवा हे जंबू! जेम मे श्री महावीरदेव स्वामीनी समीपे सांभल्युं हतुं तेम मे तुज प्रत्ये कयुं ॥ २१ ॥ इति श्री उत्तराध्ययन सूत्रना ३१ मां अध्ययननो भावार्थ

स्व क । इ० वांछे पण वि० स्त्रीपशु पंडग रहित जो० ते पण रहिवा योग्य ॥ स० चारित्रनी समाधीना का० वांछणहार स० साधु त० तपसी ॥ ४ ॥

मूलः—आहारमिच्छे मियमेसणिज्जं सहायमिच्छे निउणत्थबुद्धिं ।
निकेयमिच्छेज्ज विवेगजोगं समाहिकामे समणे तवस्सी ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थः—जे ज्ञान दर्शन चारित्रनी समाधीना इछनार तपस्वी एवा साधुने जो आहारनी इच्छा थाय तो मर्यादा पुर्वक ४७ दोष रहित आहार वांछे, जो शिष्यनी इच्छा थाय तो भला जीवादीक नव तत्वना अर्थने विषे जेहनी बुद्धि छे, तेहवा शिष्यने वांछे, जो ऊपाश्रयनी इच्छा थायतो स्त्री, पशु, नपुंसक रहीत एवा उपाश्रयने वांछे ॥ ४ ॥

अर्थः—न० न वा० कदाचित ल०पामे नि०भला विवेकवंत स०सिष्यने न पामे ॥ वा० अथवा गु०गुण कारी अ०अधिक । गु० गुणेकरी स० सरिषो वा० अथवा ते पोते ए०एकलो वि०पण ॥ पा०पापकर्म । वि० विशेषे वं०वर्जतो थको ॥ वि० विचरे का० कामनेविषे अ० असावधांन थको न वर्तें ॥ ५ ॥

मूलः—न वा लभेज्जा निउणं सहायं गुणाहियं वा गुणओ समं वा ।
एगो वि पावाइ विवज्जयन्तो विहरेज्ज कामेसु असज्जमाणो ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः—पोताथकी ज्ञानादीक गुणे करी अधीको तथा बराबर एवो भलो शिष्य कदाचित न पामेतो शिष्य विना एकलो पण पापकारी अनुष्ठान वर्जतो कामभोगने विषे प्रतिबंध अणकरतोथको संयमने विषे विचरे ॥५॥

मूलः—नाणस्स सव्वस्स पगासणाए अन्नाणमोहस्स विवज्जणाए।
रागस्स दोसस्स य संखएणं एगन्तसोक्खं समुवेइ मोक्खं ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः—सर्वी ज्ञानादीक सर्व ज्ञानने निर्मळ करवे करी, अज्ञानादीक अने दर्शन मोहनीने वर्जवे करी, साचे मने करी, राग द्वेषने क्षय करीने सम्यक प्रकारे एकांत निराबाध मोक्षनुं शाश्वतुं सुख पामे॥२॥

अर्थः—त० ते मोक्ष पामवानो ए० ए म० मार्ग गु० गुरु वि० ज्ञानादि गुणे करी वडा सेहवानी से० सेवा भक्ति करवी वि० विशेषे व०वर्जना करवी बा० अज्ञानीनी दू० दूरथकी ए० एकांत थानके स० सज्झायनी नि० सेवना करवी ध० धन्यो सु० सूत्र अने अ०अर्थनी सं० सम्यग प्रकारे चिं० चिंतवना करवी पि० चित्तनुं एकाग्रपणुं करवुं ध० धन्य ए मोक्ष पामवानो अर्थि साधु ॥ २ ॥

मूलः—तस्सेस मग्गो गुरुविद्धसेवा विवज्जणा बालजणस्स दूरा।
सज्झायएगन्तनिसेवणा य सुत्तत्थसंचिन्तणया धिई य ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः—ते मोक्ष पामवाने माटे ज्ञानादीक गुणे करी सहीत एवा गुरुनी सेवा करवी अने पासत्थादीकनी अने अज्ञानीनी संगत दूरथी वर्जवी, एकांत स्थानके ज्ञायनी स्वाध्याय करवी अने साचे मने करी एकाग्र चित्ते सूत्र सुधार्थनी चिंतवणा करवी ॥ २ ॥

अर्थः—आ० आहार इ० वांछे पण मि० मर्यादाए ते पण ए० एषणीकने। ग० शिष्यादिक सहायने इ० वांछे पण नि० भव्य मोक्ष पामवाना अ० अर्थने विषे ॥ पु० पुष्टि जेहने। नि० रेहवाना

रागस्स दोसस्स य संखए एगन्तसोक्खं समुवेइ मोक्खं ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः-मनी ज्ञानादीक सर्व ज्ञानने निर्मळ करवे करी, अज्ञानादीक अने दर्शन मोहनीने वर्जवे करी, साचे मने करी, राग द्वेषने क्षय करीने सम्यक प्रकारे एकांत निराबाध मोक्षनुं सास्वतुं सुख पामे॥२॥

अर्थः-त० ते मोक्ष पामवानो ए० ए म० मार्ग गु० गुरु नि० ज्ञानादि गुणे करी बडा तेहवानी से० सेवा भक्ति करवी वि० विशेषे व०वर्जना करवी बा० अज्ञानीनी दू० दूरथकी ए० एकांत थानके स० सझायनी नि० सेवना करवी य० वली गु० सूत्र अने अ०अर्थनी सं० सम्यग प्रकारे चिं० चिंतवना करवी धि० चितनुं एकाग्रपणुं करवुं य० वली ए मोक्ष पामवानो अर्थि साधु ॥ ३ ॥

मूलः-तस्सेस मग्गो गुरुविद्धसेवा विवज्जणा बालजणस्स दूरा ।
सज्झायएगन्तनिसेवणा य सुत्तत्थसंचिन्तणया धिई य ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः-ते मोक्ष पामवाने माटे ज्ञानादीक गुणे करी सहीत एवा गुरुनी सेवा करवी अने पासथादीकनी अने अज्ञानीनी संगत दूरथी वर्जवी, एकांत स्थानके शास्त्रनी स्वाध्याय करवी अने साचे मने करी एकाग्र चित्ते सूत्र सुत्रार्थनी चिंतवणा करवी ॥ ३ ॥

अर्थः-भा० आहार इ० वांछे पण मि० मर्यादाए ते पण ए० एषणीकने । व० सिष्यादिक सहा० इयाने इ० वांछे पण नि० भला मोक्ष पामवाना अ० अर्थने विषे ॥ धु० धुरीजे जेहने । नि० रेहवानो

...र० सी पशु पंढग रहित सै० थानक आ० पाटपाटलादिक ॥ जं० सेवणहारने ॥ ओ० थोडा अ० आहारना करणहारने । इं० इंद्रियना द० दमणहारने ॥ न० न रा० राग स० वैरी प० पराभव न करे चि० पुर्वोक्त साधुना चित्तने प० दुर कीधो टाल्यो वा० रोग इ० जेम ओ० ओषधी करी तेम ते रोग वलतो देहने पराभवे नहि ॥ १२ ॥

मूलः—विवित्तसेज्जासणजन्तियाणं ओमासणाणं दमिइन्दियाणं ।
न रागसत्तू धरिसेइ चित्तं पराइओ वाहिरिवोसहेहिं ॥ १२ ॥

गाथा १२ भावार्थः—जेम व्याधिए करी पीडीत होय, तेहने औषधे करी रोगनो पराभव न होय, तेम जे स्त्री पशु नपुंसक रहीत स्थानक भोगवनार उणोदरीना करनार, पांच इंद्रीयोने दमनार, एवा साधुने राग रुपीयो शत्रु पराभव करे नहि ॥ १२ ॥

अर्थः—ज० जेम वि० विलाडाना व० वसवाना स्थानकने । मू० समीपे । न० न मू० उंदरने व० ते रहेवानी जग्या प० भली नहि । ए० एणे दृष्टांते इ० स्त्रीने नि० रहेवाना घरने प० गांहि । न० न बं० ब्रह्मचारीने व० जुगतो भलो नहि । नि० निवास रहेवो ॥ १३ ॥

मूलः—जहा विरालावसहस्स मूले न मूसगाणं वसही पसत्था ।
एमेव इत्थीनिलयस्स मज्झे न बम्भयारिस्स खमो निवासो ॥ १३ ॥

गाथा १३ भावार्थः—जेम बीलाडाना स्थानक समीपे उंदरने ते [illegible]

भा०-भव च० थवा अ० इहांथी प्र० उपना व० पंखीया ॥ अं० इंडुं व०पंखीथी प्र०उपनुं ज० जेम य० पूरणे ॥ ए० एमज। मो० मोह उत्पनवानुं भा०थानक खु० निचे त० तृष्णाने तिर्थंकर कहे। मो० मोहनी प्र० थकी त० तृष्णा उपनवानो भा० थानकने। व० तिर्थंकर कहे ॥ ६ ॥

मूलः—जहा य अण्डप्पभवा बलागा अण्डं बलागप्पभवं जहा य।
एमेव मोहायतणं खु तण्हा मोहं च तण्हायतणं वयन्ति ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः-हवे मोहनीनी उत्पती केवी रीते थायछे ते कहेछे, जेम इंडांथी पंखी उत्पन थाय अने पंखी थकी इंडुं उत्पन थाय तेवीज रीते मोह उत्पन थवानुं स्थानक थनारीकनी तृष्णा अने तृष्णा उत्पन थवानुं स्थानक मोह छे, एम तिर्थंकरे कहेल छे ॥ ६ ॥

अर्थः-रा० माया लोभ ते राग प० बली दो० क्रोध मान ते द्वेष वि० ए बे निचे य० पुरणे ॥ क० कर्मनां बी० बीजछे क० कर्मने प० पुनः मो० मोहथकी प्र० उपनुं व० तिर्थंकरे कयुं ॥ क० कर्म प० पुनः जा० जन्म म० मरणनुं मू० मूल दु० दुंखने प० बली जा० जन्म म० मरणने व० कहे तिर्थंकर ॥ ७ ॥

मूलः—रागो य दोसो वि य कम्मबीयं कम्मं च मोहप्पभवं वयन्ति।
कम्मं च जाइमरणस्स मूलं दुक्खं च जाईमरणं वयन्ति ॥ ७ ॥

गाथा ७ भावार्थः-राग अने द्वेष ए बे कर्मनां बीजछे अने कर्म ते मोहनी थकी उत्पन थायछे अने जन्म मरणनुं मुल ते कर्मछे, अने दुःख उत्पन थवानो हेतु जन्म मरणछे एम तिर्थंकरे कहेलछे ॥ ७ ॥

वाना आ० धर्म ज्ञा० ध्यानने जु० जोग्य छे । स० सदा हि० हितनुं कारण छे । अदर्शनादिक पांच बोल प० ब्रह्मचर्यने विषे र० रानो छे ते पुरुषने ॥ १५ ॥

मूल–अदंसणं चेव अपत्थणं च अचिन्तणं चेव अकित्तणं च ।
इत्थीजणस्सारियझाणजुग्गं हियं सया बम्भचेरे रयाणं ॥ १५ ॥

गाथा १५ भावार्थः–जेहने धर्म ध्यानादीक हेतकारीछे, तेमज जे सदाय ब्रह्मचर्यने विषे रक्तछे, ते स्त्रीनुं दर्शन जोवे नहि, स्त्रीनी वांछा न करे, स्त्रीनुं रुप दीठुं होय ते मनमांही चिंतवे नहि, स्त्रीना गुणनी कीर्ति न करे ॥१५॥

अर्थः–का० जो कदाचित तु० निर्द्धारवाने अर्थे । वि० विभूषासहित । दे० देवांगनाए । न० अशक्य चा० संजमथी मनने काम खो० थोभावनाने ति० त्रण गुप्ति सहित एहवा साधुछे । त० तोहि वि० पण ए०एकांत हि० हितनुं कारण ति० वली । न० जाणीने । वि० स्त्रीयादिक रहित वा० थानक मु० साधुने प० प्रशस्त चारुं ॥१६॥

मूलः–कामं तु देवीहि विभूसियाहिं न चाइया खोभइउं तिगुत्ता ।
तहा वि एगन्तहियं ति नच्चा विवित्तवासो मुणिणं पसत्थो ॥ १६ ॥

गाथा १६ भावार्थः–मनने विषे अभीलाष उपजावे एहवी देवांगना अलंकार सहीत होय ते पण जे त्रण गुप्तीए करीने सहीत एहवा साधुने संयम थकी क्षोभवी न शके ??? एहवा धैर्य वृतिना धणी मुनी होय तोपण स्त्री पशु नपुंशक रहीत स्थानकने विषे रहेवुं श्रेय छे ॥ १६ ॥

अर्थः–मो० मोक्षना अ० वांछणहार उ० पण मा० मनुष्यने पण । सं० संसारना परिभ्रमणथी ॥

अर्थः-ज० जेम य० वली अं० इंडाथी प्र० उपजे व० पंखीया ॥ अं० इंडुं व० पंखीथी प्र० उपजे ज० जेम य० पूरवे ॥ प्र० एमज । मो० मोह उत्पत्तिनुं भा० थानक खु० निश्चे त० तृष्णाने तिर्थंकर कहे । मो० मोहनी च० वली त० तृष्णा उत्पत्तिनो भा० थानकने । व० तिर्थंकर कहे ॥ ६ ॥

मूलः-जहा य अण्डप्पभवा बलागा अण्डं बलागप्पभवं जहा य ।
एमेव मोहायतणं खु तण्हा मोहं च तण्हायतणं वयन्ति ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः-एवे मोहनीनी उत्पत्ती केवी रीते थायछे ते कहेछे, जेम इंडाथी पंखी उत्पन्न थाय अने पंखी थकी इंडुं उत्पन्न थाय तेवीज रीते मोह उत्पन्न थवानुं स्थानक थनादीकनी तृष्णा अने तृष्णा उत्पन्न थवानुं स्थानक मोह छे, एम तिर्थंकरे कहेल छे ॥ ६ ॥

अर्थः-रा० माया लोभ ने राग य० वली दो० क्रोध मान ने द्वेष वि० ए बे निश्चे य० पुरवे ॥ क० कर्मनां बी० बीजछे क० कर्मने च० पुनः मो० मोहथकी प्र० उपजे व० तिर्थंकरे कहुं ॥ क० कर्म च० पुनः जा० जन्म म० मरणनुं मू० मूल दु० दुःखने च० वली जा० जन्म म० मरणने व० कहे तिर्थंकर ॥ ७ ॥

मूलः-रागो य दोसो वि य कम्मबीयं कम्मं च मोहप्पभवं वयन्ति ।
कम्मं च जाइमरणस्स मूलं दुक्खं च जाईमरणं वयन्ति ॥ ७ ॥

गाथा ७ भावार्थः-राग अने द्वेष ए बे कर्मनां बीजछे अने कर्म ने मोहनी थकी उत्पन्न थायछे अने जन्म मरणनुं मुल ते कर्मछे, अने दुःख उत्पन्न थवानो हेतु जन्म मरणछे एम तिर्थंकरे कहेलछे ॥ ७ ॥

सर्वने लो० लोकने । स० देवतासहित लोकने जं० जे का० काया संबंधी शरिरी दुख मां० मानसी च० वली किं० थोडुं ॥ तं० ते दुखनां अं० अंतने ग० पामे वी० वीतराग ॥ १९ ॥

मूलः—कामाणुगिद्धिप्पभवं खु दुक्खं सव्वस्स लोगस्स सदेवगस्स ।
जं काइयं माणसियं च किंचि तस्सन्तगं गच्छइ वीयरागो ॥ १९ ॥

गाथा १९ भावार्थः—देवता सहीत सर्व लोकने जे कायानुं दुःख ते रागादीक अने मानसीक एवा बे प्रकारनुं थोडुंपण जे दुःख उत्पन थयुं ते निश्चे निरंतर काम भोगनी वांच्छा थकीज ते दुःखनो अंत वीतराग पामे ॥ १९ ॥

अर्थः—ज० जेम य० निर्द्धार किं० किंपाग वृक्षनां फ० फळ ॥ म० रमणीक तेणे करी ॥ र० रसेकरीने व० वर्णे करी य० गंधे करीने एहवा फल भु० भोगवता थका ते० विपाकना अवस्थाने पाम्या थका ॥ ए० टले प० प्रगम्या थका जी० जीवतव्यनो आउखो खु० विनाश पामे छते ते किंपाग नामा फल मर्ण्यात दुखना देणहार होय ॥ ए० ए उपमा कां० काम्भोग भोगव्याना वि० फलने विषे जाणवी ॥ २० ॥

मूलः—जहा य किंपागफला मणोरमा रसेण वण्णेण य भुज्जमाणा ।
ते खुड्डए जीविय पच्चमाणा एओवमा कामगुणा विवागे ॥ २० ॥

गाथा २० भावार्थः—जेम किंपाक वृक्षनां फळ (एक जातना झेरी वृक्षनां फळ) स्वादे करी तथा वर्णे करी खातां भोगवतां थकां मनने रमणीकले पण भोगव्यां बे घडी पछी सोपक्रमीनुं आयुष्य त्रोडे (अर्थात

न० मनुष्यने ॥ कामे करी दि० दीपता पुरुषने च० वली का० कंदर्पने स० साहमा अ० आवी पीडा उपजावे । सा० स्वाद कारिया फ० फलडे जेहना एहवा दु० दुष्टने ज० जेम प० पंखी साहमा आवी पीडा उपजावे व० तेम ॥१०॥

मूलः—रसा पगामं न निसेवियव्वा पायं रसा दित्तिकरा नराणं ।
दित्तं च कामा समभिद्दवन्ति दुमं जहा साउफलं व पक्खी ॥ १० ॥

गाथा १० भावार्थः—१ दुध, २ दहीं, ३ घी, ४ प्रमुख विगय मनुष्यने कंदर्पने वधारनार ने उन्मादना करनारछे, एम जाणीने ए विगय ने घणो सरस आहार न सेववो कारण के दुष्टने जेम मधुरां फल होय तो पंखी सामां आवीने पीडा उपजावे, तेम घणो सरस आहार सेववाथी उन्मादवंत जीवने कंदर्प सामो आवीने पीडा उपजावे ॥१०॥

अर्थः—ज० जेम द्र० दवनी अ० अग्नी ते दावानल ते किहां । प० घणा । इ० इंधणा काष्टछे जेहने विषे एहवा व० वननेविषे दावानल केहवो छे ॥ स० सहित भा० वायरे करी ते न०न उ० उपसमीने उ० उल्हाय नहि ॥ ए० एणीपरे इ० इंद्रिना विकाररुप अ० अग्नीने दावानल ते किहां वि० वली प० घणा रसनो भो० जमणहारने । ब० ब्रह्मचारि ते । न० न हि० होय हितने अर्थे क० कदाचित कोइ ब्रह्मचारीने पण ॥ ११ ॥

मूलः—जहा दवग्गी पउरिन्धणे वणे समारुओ नोवसमं उवेइ ।
एविन्दियग्गी वि पगामभोइणो न बम्भयारिस्स हियाय कस्सइ ॥ ११ ॥

गाथा ११ भावार्थः—जेम वनने विषे लाकडां घणां होय त्यां दवनी अग्नी लागे ते वायुथी सहीत होय, ते थोडी वेलाए ओलाय नहि, तेम इंद्री रुपी अग्नी घणो सरस आहार भोगवतां ब्रह्मचारीने तेमज कोइने हीतकारी न होय ॥११॥

गाथा २२ भावार्थः–हवे प्रथम चक्षु इंद्रीनुं व्याख्यान १३ काव्येकरीने कहेछे,स्त्रीयादीकनां रुप चक्षुने ग्रहवा योग्यछे तेमांही जे मनोज्ञ (मनने गमतुं) रुपछे ते रागनो हेतुछे अने अमनोज्ञ (मनने नहिं गमतुं रुप) ते द्वेषनो हेतु छे, तेथी जे मनोज्ञ अमनोज्ञ ए बंनेने विषे राग द्वेष न करे, तेहज वीतराग जाणवा, एम तिर्थंकरे कहेल छे॥२२॥

अर्थः–रु० रुपने च० नेत्र ग० ग्रहवायोग्य व० कहे तिर्थंकर ॥ च० (चक्षु) नेत्रने रु० रुप ग० ग्रहवा-योग्य छे ॥ व० कहे तिर्थंकर रा० रागना हे० हेतुने स० मनोज्ञरुपने आ० तिर्थंकर कहे ॥ दो० दोसना हे० हेतुने अ० अमनोज्ञ रुपने ॥ आ० तिर्थंकर कहे ॥ २३ ॥

मूलः–रूवस्स चक्खुं गहणं वयन्ति चक्खुस्स रूवं गहणं वयन्ति ।
रागस्स हेउं समणुन्नमाहु दोसस्स हेउं अमणुन्नमाहु ॥ २३ ॥

गाथा २३ भावार्थः–रुपने चक्षु ग्रहनार छे अने चक्षुने रुप ग्रहवा योग्य छे, तेमांही जे मनोज्ञरुप ते रागनो हेतु छे अने जे अमनोज्ञ रुप छे ते द्वेषनो हेतु छे, एम तिर्थंकरे कहेल छे ॥ २३ ॥

अर्थः–रु० मनोज्ञ रुपने विषे जो० जे गि० मुर्छाने उ० पामे ति० तिव्र ॥ अ० अकाले पा० पामे से० ते जीव वि० मरणने ॥ रा० रागे करी पीडयो से० ते ज० जेम वा० वळी प० पतंग ॥ आ० दीनो देखवाने विषे ॥ लो० लोलपी थको ॥ स० पामे म० मरणने ॥ २४ ॥

मूलः–रूवेसु जो गिद्धिमुवेइ तिव्वं अकालियं पावइ से विणासं ।
रागाउरे से जह वा पयङ्गे आलोयलोले समुवेइ मच्चुं ॥ २४ ॥

ने परमांही स्त्री रहे त्यां ब्रह्मचारीने रहेवुं युक्त (भलुं) नहि ॥ १३ ॥

अर्थः-म० साधु त० तपसी होय ते इ० स्त्रीना सात थाना चिं० पोताना चित्तने विषे नि० थापीने राखीने अथवा द० देखीने न० न च० चिंतवे अध्यवसायनाजे ॥ एहवा जे ए सात थानां एम चिंतवे नहि । तंत्राकिन न थाय ते सात कया । रु० स्त्रीना रुप शरिरनो आकार १ । ला० लावण्य ते बोलवानी चतुराइ २ । वि० विलास ते वस्त्रादिक पहेरवानी रचना ३ । हा० हसवो तेहनी ४ । जं० मधुरु वणवणा पि० मीठा वचननुं बोलवुं ५ इ० अंगोपांगनुं गोपववुं ६ ॥ पे० वांकि नजर जोवी ७ ॥ वा० अथवा ए सात थाना चितमांहि राखे नही ॥१४॥

मूलः-न रूवलावण्णविलासहासं न जंपियं इंङ्गियपेहियं वा ।
इत्थीण चित्तंमि निवेसइत्ता दट्ठुं ववस्से समणे तवस्सी ॥ १४ ॥

गाथा १४ भावार्थः-रुप, लावण्यना बोलवानी चतुराइ, वस्त्रादीकनी शोभा, भोगनी लीला, हसवुं, वणवणा वचननुं बोलवुं, अंगोपांगनुं मोडवुं, कटाक्षे (आडी नजरे) जोवुं, ए पुर्वोक्त स्त्रीनां एटलां थानां देखीने साधु तपस्वी तेना उपर राग न धरे, आपणा चित्तने विषे स्थापे नहि तेमज इंद्रीयोना विषय न चिंतवे, तथा अहो सुंदर ! इत्यादीक वचन पण न बोले ॥ १४ ॥

अर्थः-पुरुष तेहने विषे । इ० स्त्री ज० जनने अद० सराग बुद्धि करी अदरसन १ च० समुचे ए० अवधारणे अ० स्त्रीने सराग अभार्थवो २ च० चकारथी स्त्रीनी अभिलाष अणकरवी ३ स्त्रीने सरागे रुपादिकनुं अ० अणचिंतवुं ४ । च० समुचे ए० निश्चे अ० सरागी नाम लइने गुण किर्तननुं अणकरवुं ५ च० पदपुरणे पांच

गाथा २६ भावार्थः–जे एकांत मनोज्ञरूपने विषे रक्त छे, ते जीव अमनोज्ञ रूपने विषे द्वेषभाव करे, ते अज्ञानी दुःख संवंधीनी पीडा पामे, एम जाणी द्वेषरुप कचरे करी वीतरागी मुनी न लेपाय ॥ २६ ॥

अर्थः–रु० रुडा रूपने विषे अ० केडे प्रवर्ते एहवा आ० आज्ञाने विषे ग० प्रवर्तनो य० जे जी० जीव ॥ च० त्रस अ० थावर हिं० हणे कहेवाने ॥ अ० अनेक प्रकारना जीवने ॥ चि० ते अनेक प्रकारने शस्त्रे करी ते० ते त्रस थावर जीवने प० परितापनाउपजावे वा० वाल अज्ञानी ॥ पी० पीडा उपजावे वाल केहेवा छे अ० आत्मानो अर्थ गु० भारे छे जेहने कि० किलिष्ट मेला परिणाम सहीत छे ॥ २७ ॥

मूलः–रूवाणुगासाणुगए य जीवे चराचरे हिंसइ णेगरूवे ।
चित्तेहि ते परितावेइ वाले पीलेइ अत्तट्ठगुरू किलिट्ठे ॥ २७ ॥

गाथा २७ भावार्थः–जेहने मनोज्ञरुप मेळववा रुप पोताना आत्मानोज अर्थ मोटो छे, ते मनोज्ञ रुपना रागने परीणामे पीडयो थको मनोज्ञ रुपनी केडे प्रवर्ते, ते मनोज्ञरुपनी आशाए प्रवर्ततो मनोज्ञरुप मेळववाने माटे ते अज्ञानी जीव घणा प्रकारना त्रसने स्थावर जीवने हणे अने घणा प्रकारना शस्त्रेकरी पर जीवने पीडा उपजावे॥२७॥

अर्थः–रु० रुडा रूपने विषे वा० राग छते प० मुर्छा उपजावे करी रूपवंत वस्तुने ॥ उ० उपजावाने विषे र० एटले चोरादिकना भयथी राखवाने पोतानां तथा परनां प्रयोजनने ॥ सं० सम्यक प्रकारे अर्थ आववाने विषे व० विणासे थए विनाश छते ॥ वि० वियोग थये छते य० वली क० किहां थकी सु० सुखदाइ से० ते रूपनो रागी । सं० मनोज्ञ रूप भोगववाने का० काले य० पुनः अ० लपति अणपामे छते ते भोगववा

मूलः–रूवाणुवाए ण परिग्गहेण उप्पायणे रक्खणसन्निओगे ।

भी० बीजे तेहने ५० धर्मने विषे ति० त्रणे तेहने विषे एवा० तेहनुं दु० दोहिलुं न० अ० नथी. लो० लोकने विषे ॥ ज० जेवी इ० सीझो मुझना दोहिली सी० ते हुइशे। मा० अज्ञानीना म० मनने हरनारी ए० लोकने विषे जेवी सी मुक्ता दोहिलीछे ॥१७॥

मूलः—मोक्खाभिकङ्खस्स उ माणवस्स संसारभीरुस्स ठियस्स धम्मे ।
नेयारिसं दुत्तरमत्थि लोए जहित्थिओ बालमणोहराओ ॥ १७ ॥

गाथा १७ भावार्थः—जे मोक्षना वांछनार मनुष्य, जे चार गती रूप संसारथी डरनार, जे धर्मने विषे निश्चल रहेला मनुष्यने जे अज्ञानीना मनने हरनारी ए लोकने विषे जेवी स्त्री मुक्ता दोहलीछे, तेवुं बीजुं कांइपण दोहिलुं नथि ॥ १७ ॥

अर्थः—ए० ए स्त्री संबंधी ग० पूर्ण सं० संगने म० दुरंती निवारीने जे भवने तेहने ॥ मु० मोहिला उतरवा प० दुरले ए० निश्चे म० होय से० एटला संग पदार्थ ने मुंकवा सोहिला । ज० जेम म० मोटा सा० समुद्रने उ० उतरीने जे नीकल्या तेहने । न० नदि म० होय ग० गंगानदी म० सरिखी । अ०पण उतरवा सोहिली॥१८॥

मूलः—गुणे य मूले समइक्कमित्ता सुउत्तरा चेव भवन्ति सेसा ।
जहा महासागरमुत्तरित्ता नई भवे अवि गङ्गासमाणा ॥ १८ ॥

गाथा १८ भावार्थः—ए स्त्री संबंधीनो संग निवार्यो पछी शेष बनादीक्षनो संबंध मुक्ता सोहीलोछे जेम सर्वमूरण समुद्र तर्या पछी गंगा सरीखी मोटी नदी पण तरवा सोहीलीछे ॥ १८ ॥

अर्थः—का० कामभोगने विषे अ० अभिलाषनारो । प० उपनो गु० एगन दु० दुरंत कोहने । स०

अर्थः-त० तृष्णाए करी अ० पराभव्यो एहवो जे जीव ॥ अ० चोरीनो करणहार ते कहेवो छे ॥ रु० रुपने देखवाने विषे अ० असंतोषी छे ॥ प० रुपवंत परिग्रह मेळववाने विषे असंतोषी य० पुनः मा० माया सहित मु० मृषावाद ॥ व० वाधे प्रवर्ते लो० लोभना दो० दोष ॥ त० तिहां मृषावाद बोले छते अ० पण । दु० दुख थकी न० न वि० मुकाय से० ते ॥ ३० ॥

मूलः-तण्हाभिभूयस्स अदत्तहारिणो रूवे अतित्तस्स परिग्गहे य ।
मायामुसं वड्ढइ लोभदोसा तत्थावि दुक्खा न विमुच्चई से ॥ ३० ॥

गाथा ३० भावार्थः-रुपवंत परीग्रह मेळववाने विषे असंतोषी जीव तृष्णाए करी पराभव्यो थको रुपवंत वस्तुनी चोरीनो करनार तेहने कोई पुछेके अमुक रुपवंत वस्तु तमे लीधी छे? ते वारे कपट सहीत जूठुं बोले तेमज पछी जूठुं बोलवाथी ते जीव ते दुःखथी न मुकाय ॥ ३० ॥

अर्थः-मो० मृषावाद बोलतो थको पं० पश्चाताप करे ॥ य० पुरणे पु० पहेलुं ओ० पुर्णे य० वली पण ॥ प० मृषा बोलवाना का० अवसरने विषे य० पण दु० दुखी होय मृषा बोल्याथी पुरुं न पडे ते माटे ॥ दु० दोहिलो दुखनो अंत आवे जेहने एहवो दुखी होय ॥ ए० एणीपरे अ० अदत्तने स० लेतो थको ॥ रु० रुपने विषे अ० अतृप्तो थको ॥ दु० अतिशे दुखीओ होय अ० स्वजनादिकनी ते नेआरहित होय ॥ ३१ ॥

मूलः-मोसस्स पच्छा य पुरत्थओ य पओगकाले य दुही दुरन्ते ।
एवं अदत्ताणि समाययन्तो रूवे अतित्तो दुहिओ अणिस्सो ॥ ३१ ॥

आयुष्य दुष्कार्या मरण पामे) ए औपमां कामभोग भोगव्याना विपाक (फळ) ने विषे समजवी, जेम कामभोग भोगवतां जीवने रमणीकजे पण तेनां पाप फळनो उदय थशे ते भोगवतां बहु दुष्करछे ॥ २० ॥

अर्थः-जे० जे इं० इंद्रियना वि० विषय म० मनोज्ञ ते न० न ते० इंद्रियना विषय विषे भा० मनने नि० करे ॥ क० क्यारे पण ॥ न० न य० वळी अ० अमनोज्ञने विषे म० मनने पण न० न कु० करे ॥ स० समाधीनो का० चांछणहार स० साधु त० तपस्वी ॥ २१ ॥

मूलः-जे इन्दियाण विसया मणुन्ना न तेसु भावं निसिरे कयाइ ।
न यामणुन्नेसु मणं न कुज्जा समाहिकामे समणे तवस्सी ॥ २१ ॥

गाथा २१ भावार्थः- जे समाधीनो चांछनार तपस्वी साधु ते पांच इंद्रीयोना मनोज्ञ विषयने विषे कोंयारे पण मनने प्रवर्तावे नहि अने अमनोज्ञ विषयोने विषे द्वेष न करे ॥ २१ ॥

अर्थः-हवे चक्षु इन्द्रिनो अधिकार तेर काव्येकरी कहे छे। च० नेत्रने रू०रूप ग० ग्रहणयोग्य छे व० तिर्थंकर एम कहे तं० ते कर्मभूमं रा० राग उपजावना हे० हेतु छे तु० पुणे म० मनोज्ञरूप ते आ० तिर्थंकर कहे। तं० ते दो० द्वेष उपजवाना हे० हेतु छे अ० अमनोज्ञ रूप ते आ० तिर्थंकर कहे स० सरीखो पदले राग द्वेष रहित य० वळी जो० जे कोइ ते० ते बेहुने विषे स० ते वी० वीत रा० राग कहीए ॥ २२ ॥

मूलः-चक्खुस्स रूवं गहणं वयन्ति तं रागहेउं तु मणुन्नमाहु ।
तं दोसहेउं अमणुन्नमाहु समो य जो तेसु स वीयरागो ॥ २२ ॥

मूलः–एमेव रूवम्मि गओ पओसं उवेइ दुक्खोहपरंपराओ ।
पदुट्ठचित्तो य चिणाइ कम्मं जं से पुणो होइ दुहं विवागे ॥ ३३ ॥

॥ ३८८ ॥

गाथा ३३ भावार्थः–एवी रीते मुंडा रुपने विषे द्वेष भावे पोहोत्यो थको जीव दुःखना समुह (जथ्था) नी श्रेणी पामे, वळी द्वेषे करी दुष्ट चितनो धणी कर्म बांधे पछी ते कर्म ते जीवने इहलोक तथा परलोकने विषे दुःखकारी होय ॥ ३३ ॥

॥ ३२ ॥

अर्थः–ए० मनोज्ञ रुपने विषे वि० रागरहित म० मनुष्य वि० शोकरहित ॥ ए० ए पूर्वोक्त कही ते दु० दुखनो उ० समोहनी प० श्रेणीएं करी ॥ न० न लि० लिपाय भ० संसार म० मांहि वि० पण सं० रहेतो छतो ज० पाणीए करी वा० जेम पो० कमलनुं प० पत्र पांदडुं न लिपाय तेम ॥ ३४ ॥

मूलः–रूवे विरत्तो मणुओ विसोगो एएण दुक्खोहपरंपरेण ।
न लिप्पए भवमज्झे वि सन्तो जलेण वा पोक्खरिणीपलासं ॥ ३४ ॥

गाथा ३४ भावार्थः–मनोज्ञ रुपने विषे विरक्त मनुष्य शोक रहीत थाय अने पूर्व कही ते दुःखना समुहनी श्रेणीए करी संसार मांही रहेतो थको पण पाणी मांही कमळना पत्रनी पेरे न लेपाय (ए प्रथम चक्षु इंद्रीनुं व्यान १३ काव्ये करीने कहुं) ॥ ३४ ॥

अर्थः–हवे श्रोतेंद्रिना तेर काव्य कहेछे ॥ स० शब्द व० तिर्यंकर कहे कर्णसुखं शब्द केहवाछे शब्द सो० कानने योग्य छे ॥ म० अहवा तं० ते म० मनोज्ञ शब्दने आ० तिर्यंकर कहे कर्णसुखं मधुरं शब्द रा० राग

॥ ३८८ ॥

गाथा २४ भावार्थः-जेम दावानल पोतां द्वेषए जनारा मुखरूप- ए रागणी पमाडीया ,-ं पामे तेमज कोइ रुपने विषे तिव्र मुर्छावंत होय ते जीव अकाळे मर्ण पामे ॥ २४ ॥

अर्थः-जे० जे ग० वली अ० पण मादुं रुप देखीने दो० द्वेषने ॥ स० पामे ति० तीव्र । तं० ते तग० अवसरने विषे से० ते उ० पुरणे उ० पामे दु० दुख । दु० दुर्दंत दो० दोषे करी । सं० पोताने कीधे जं० जीव । न० न किं० थोडुं रु० रुप अ० नथी अपराध करतो ॥ से० ते पुरुषने ॥२५॥

मूलः-जे यावि दोसं समुवेइ तिव्वं तंसि क्खणे से उ उवेइ दुक्खं ।
दुद्दन्तदोसेण सएण जन्तू न किंचि रूवं अवरुज्झई से ॥ २५ ॥

गाथा २५ भावार्थः-जे कोइ अमनोज्ञरुप देखीने तिव्र द्वेष पामे, ते जीव ते अवसरने विषे दुःख पामे, दमतां दोहीला एवा द्वेषरुप दुर्दांत दोषे करीने जीव पोतेज दुःखी थाय छे, पण ते जीवने रुप किंचित मात्र अपराध नथी करतुं ? ? ? ॥ २५ ॥

अर्थः-ए० एकांत पण रा० रातो जे रु० रुडा रु० रुपने विषे ॥ अ०नहीं तेहवुं रुडुं मनोहररुप सा० तेहवुं भूंडुं अमनोहर रुप एटले भुंडा रुपने विषे से० ते कु० करे प० द्वेष ॥ दु०दुख संघातिनी सं० पीडा उ० पामीए ॥ बा० बाल अज्ञानी ॥ न० न लि०लेपाय ते० तेणे राग द्वेषे करी मु०साधु ॥ वि०राग रहित॥२६॥

मूलः-एगन्तरत्ते रुइरंसि रूवे अतालिसे से कुणई पओसं ।
दुक्खस्स संपीलमुवेइ बाले न लिप्पई तेण मुणी विरागो ॥ २६ ॥

से० ते जीव वि० मरणने ॥ रा० रागेकरी आ० पीडयो ह० हरण हरणीओ व० जेम हरण केहवो छे मि० पशुछे व० वली मु० अज्ञानी छे स० शब्दनेविषे ॥ अ० अत्तो थको स० पामे म० मरणने ॥ ३७ ॥

मूलः—सद्देसु जो गिद्धिमुवेइ तिव्वं अकालियं पावइ से विणासं ।
रागाउरे हरिणमिगे व मुद्धे सद्दे अतित्ते समुवेइ मच्चुं ॥ ३७ ॥

गाथा ३७ भावार्थः—जेम मधुर शब्द सांभळवाना लुब्धपणाए रागथी मृग (हरण) मर्ण पामे तेम जे कोइ शब्दने विषे तिव्र मुर्छावंत होय ते अकाळे मर्ण पामे ॥ ३७ ॥

अर्थः—जे० जे य० वली अ० पण खोटो शब्द सांभळीने दो० द्वेषने सं० पामे ति० तिव्र ॥ तं० ते स० अवसरने विषे से० ते उ० पूर्ण उ० पांमे दु० दुखने दु० दुर्दंतने दो० दोषे करी स० पोताने कीधे जं० जीव । न० न किं० थोडुं पण स० शब्द अ० नथी अपराध करतो से० ते पुरुषने ॥ ३८ ॥

मूलः—जे यावि दोसं समुवेइ तिव्वं तंसि क्खणे से उ उवेइ दुक्खं ।
दुद्दन्तदोसेण सएण जन्तू न किंचि सद्दं अवरुज्झई से ॥ ३८ ॥

गाथा ३८ भावार्थः—जे कोइ अमनोज्ञ शब्द सांभळीने तिव्र द्वेष पामे ते जीव ते अवसरने विषे दुःख पामे वळी दमतां दोहीला एवा द्वेष रुप दुर्दांत दोषे करी ते जीव पोतेज दुःखी थायछे पण ते जीवने शब्द किंचित मात्र अपराध नथी करतो ॥ ३८ ॥

अर्थः— ए० एकांत घणो र० रातो रु० रुडा स० शब्दने विषे ॥ अ० नहि जेवो रुडो सब्द ता० तेहवोए

[illegible]

-ए विओगे य कहं सुहं मे संयोगकाले य अतित्तरूवे ॥ २८ ॥

[illegible] संस्कृत छाया:-एतस्मिन् वियोगे च कथं सुखं मे संयोगकाले च अतितृप्तरूपे ॥ २८ ॥

[illegible] शब्दार्थ:-एए-एतस्मिन् इस विओगे-वियोग य-और कहं-कथं कैसे सुहं-सुखं सुख मे-मम मुझे संयोगकाले-संयोग काल य-और अतितृप्तरूपे-अतितृप्तरूपे अतृप्त स्वरूप ॥ २८ ॥

[illegible] अन्वयार्थ:-एए-एतस्मिन् इस विओगे-वियोग य-और कहं-कथं कैसे मे-मम मुझे सुहं-सुखं सुख संयोगकाले-संयोग काल य-और अतितृप्तरूपे-अतितृप्तरूपे अतृप्त स्वरूप ॥ २८ ॥

[illegible] भावार्थ:-एए-एतस्मिन् इस विओगे-वियोग य-और कहं-कथं कैसे मे-मम मुझे सुहं-सुखं सुख संयोगकाले-संयोग काल य-और अतितृप्तरूपे-अतितृप्तरूपे अतृप्त स्वरूप ॥ २८ ॥

मूलः-एए अतित्ते य परिग्गहे य सत्तोवसत्तो न उवेइ तुट्ठिं ।

अतुट्ठिदोसेण दुही परस्स लोभाविले आययई अदत्तं ॥ २९ ॥

[illegible] संस्कृत छाया:-एतस्मिन् अतितृप्ते च परिग्रहे च सक्तोपसक्तो न उपैति तुष्टिम् । अतुष्टिदोषेण दुःखी परस्य लोभाविल आददाति अदत्तम् ॥ २९ ॥

[illegible] शब्दार्थ:-एए-एतस्मिन् इस अतित्ते-अतितृप्ते अतृप्त य-और परिग्गहे-परिग्रहे परिग्रह में सत्तोवसत्तो-सक्तोपसक्तो आसक्त न उवेइ-न उपैति नहीं पाता तुट्ठिं-तुष्टिम् संतोष । अतुट्ठिदोसेण-अतुष्टिदोषेण असंतोष के दोष से दुही-दुःखी दुखी परस्स-परस्य दूसरे लोभाविले-लोभाविल लोभ से आययई-आददाति ग्रहण करता अदत्तं-अदत्तम् बिना दी हुई ॥ २९ ॥

[illegible] भावार्थ:-एए-एतस्मिन् इस अतित्ते-अतितृप्ते अतृप्त य-और परिग्गहे-परिग्रहे परिग्रह में सत्तोवसत्तो-सक्तोपसक्तो आसक्त न उवेइ-न उपैति नहीं पाता तुट्ठिं-तुष्टिम् संतोष । अतुट्ठिदोसेण-अतुष्टिदोषेण असंतोष के दोष से दुही-दुःखी दुखी परस्स-परस्य दूसरे लोभाविले-लोभाविल लोभ से आययई-आददाति ग्रहण करता अदत्तं-अदत्तम् बिना दी हुई ॥ २९ ॥

पर जीवने पीडा ऊपजावे. ॥ ४० ॥

अर्थः-स० रुडा शब्दने विषे वा० राग छते प० मुर्छा उपजावे करी रुडा सद्दने उ० उपजाववाने विषे ॥ र० ते वली चोरादिकना भयथकी राखवाने विषे । पोताना त्था परना प्रयोजने सं० सम्यग प्रकारे अर्थ आववाने विषे ॥ व० विनास थइ विणठे छते वि० वियोग थए छते य० वली । क० किहांथकी सु० सुष होय से० तेने ॥ सं० मनोज्ञ शब्द भोगववाना का० कालने विषे य० पुनः ॥ अ० तृप्ति अण पांमे छने दुषी ए ६ बोले करी सुष न पांमे ॥ ४१ ॥

मूलः-सद्दाणुवाएण परिग्गहेण उप्पायणे रक्खणसन्निओगे ।
वए विओगे य कहं सुहं से संभोगकाले य अतित्तलाभे ॥ ४१ ॥

गाथा ४१ भावार्थः-मनोज्ञ शब्दने रागे करी मनोज्ञ शब्दने ग्रहण करवानी मुर्छाथी मधुर शब्द रुप परीग्रह सम्यक प्रकारे पोताने तथा पारकाने अर्थे आववाना प्रयोजनने माटे ऊपजे ? पछी चोरादीकथी रक्षण करवाने प्रवर्ते, कदाचित ते मनोज्ञ शब्दनो विनाश अथवा वियोग थये थके ते मनोज्ञ शब्दने भोगववाना अवसरने विषे ते जीवने किहां थकी सुख होय ! ! ! (अर्थात नज होय.) ॥ ४१ ॥

अर्थः-स० मनोज्ञ सद्दने विषे अ० असंतोषी छतो य० वली ॥ प० मनोज्ञ वीणादिक शब्दने य० विषे ॥ स० आसक्त उ० अत्यंत आसक्त छतो न० न उ० पामे तु० संतोष ॥ अ० असंतोषने दो० दोषे करी दु० ते जीव दुषी ॥ प० पारका वीणादिकना वचन सांभलीने ॥ लो० लोभे करी आ० मेलो दुष्टचित थको आ० ले

गाथा ३१ भावार्थः-जूठुं बोल्या पछी पश्चाताप करे तेमज पहेलो पण एवी चिंता करेके ए रुपवंत स्त्रीना धणी आगल जूठुं केवी रीते बोलुं तथा पहने केवी रीते छेतरुं ? ? ? वली जुठुं बोलताना अवसरे एम पण जाणे के रखे ? कोइ मने जुठा बोल्यो जाणे ? एवी रीते रुपवंत वस्तु अण दीधेली लेनार असंतोषी जीव दुःखीयो होय, पछी ते दुःखनो अंत दोहीलो पामे अने एवी चोरीना करनार अन्यायीनो कोइ सगाइयो न थाय ॥ ३१ ॥

अर्थः-रु० मनोज्ञ रुपने विषे ॥ अ० रातो जे न० नरने ए० एम ॥ क० किहां थकी सु० सुख हो० होय ॥ क० किनारे पण ॥ किं० थोडुं ॥ त० तिहां मनोहर रुपने उ० भोगववाने वि० विषे कि० क्लेस अने दु० दुखने पामे ॥ नि० उपजावे ज० जे रुपने ॥ क० निपीने ॥ दु० दुखने ॥ ३२ ॥

मूलः-रूवाणुरत्तस्स नरस्स एवं कत्तो सुहं होज्ज कयाइ किंचि ।
तत्थोवभोगे वि किलेसदुक्खं निवत्तई जस्स कएण दुक्खं ॥ ३२ ॥

गाथा ३२ भावार्थः-एवी रीते मनोज्ञ रुपनो रक्त छे ते जीवने केवी रीते कीहां थकी थोडुंए सुख होय ? (अर्थात न ज होय) तोपण मनोज्ञ रुपवंत स्त्रीयादीकने भोगववाने विषे क्लेश ने दुःख पामेछे तेमज मनोज्ञ रुप भोगववाने माटे आत्माने कष्ट ऊपजें ॥ ३२ ॥

अर्थः-ए० एणीपरे रु० मुंदा रुपने विषे ग० पडतो थको प० द्वेषने उ० पामे वली दु० दुखना उ० समोहनी प० थ्रेणीने पामे ॥ प० पकरें दु० दुष्ट चि० चित्त थको य० पुरणे चि० चयि क० कर्मज जं० जे कर्म से० ते जीव पु० बन्धी हो० होय दु० दुखनो हेतु ॥ वि० भोगववाना अवसरने विषे ॥ ३३ ॥

अर्थः–मो० मृषा बोल्या प० पश्चात्ताप करे एम मनोज्ञ गीतादीक सांभलवानो लोभी जीव य० वली ॥ पु० पेहली पण एहवी चिंता करे गीत गायछे तेहना य० वली ॥ प० मृषा बोलवाने का० अवसरे ते एम जाणे रूप कोइ मुजने जुठा बोल्यो जाणे य० तेमणी दु० दुषी होय । दु० जे दुषनुं अ० अंत दोहिलुं पामे ए० एणी परे अ० अदत्तने स० लेनो थको । स० मनोज्ञ सब्दने विषे अ० असंतोषी थयो दु० दुषी होय अ० अन्याय माटे तेहनुं उपराणुं कोइ न करे ॥ ४४ ॥

मूलः–मोसस्स पच्छा य पुरत्थओ य पओगकाले य दुही दुरन्ते ।
एवं अदत्ताणि समाययन्तो सद्दे अतित्तो दुहिओ अणिस्सो ॥ ४४ ॥

गाथा ४४ भावार्थः–जुठुं बोल्या पछी पश्चाताप करे, तेमज पहेलो पण एहवी चिंता करे के ए मधुर शब्दना मालीकनी पासे हुं केवी रीते बोलुं तथा तेहने केवी रीते छेतरुं, वली जुठुं बोलवाना अवसरने विषे एम जाणे के रखे? कोइ मने जुठा बोल्यो जाणे ? एहवी रीते मधुर शब्दवाळी वस्तु अणदीधेली लेनार असंतोषी जीव दुःखीयो होय, पछी ते दुःखनो अंत दोहीलो पामे अने एवी मधुर शब्दनी चोरी करनारनो कोइ सखाइयो न थाय ॥ ४४ ॥

अर्थः–स० मनोज्ञ सब्द गीतादिकने । अ० जे रक्तछे न० नर ते मनुष्यने ए० एणे प्रकारे क० किहांथकी । सु० सुष हो० होय क० किहांथकी कि० थोडुंए । त० त्यां मनोज्ञ शब्द उ० उपभोग आववाने वि० पण कि० क्लेस दु० दुष पामे । नि० दुष निपजावे ज० जे मनोज्ञ शब्द भोग आववाने क० काजे दु० दुष ॥ ४५ ॥

मूलः–सद्दाणुरत्तस्स नरस्स एवं कत्तो सुहं होज्ज कयाइ किंचि ।

उपजवानो हे० हेतु छे तु० पुनः नं० ते अ० अमनोज्ञ शब्दोने आ० निर्धरे कहे दो० द्वेष उपजावानो हे० हेतु छे ॥ स०मरिनो राग द्वेष राहेत य० वली जो० जे कोइ ते०ते बेहुने विषे स० ते वी० वीतराग कहीए ॥३५॥

मूलः—सोयस्स सद्दं गहणं वयन्ति तं रागहेउं तु मणुन्नमाहु ।
तं दोसहेउं अमणुन्नमाहु समो य जो तेसु स वीयरागो ॥ ३५ ॥

गाथा १५ भावार्थः—हवे बीजी श्रोत्रेंद्रीनुं ध्यान १३ काव्ये करीने कहे छे. कानने शब्द ग्रहवा योग्य छे ते माटी जे मनोज्ञ शब्द छे ते रागनो हेतु छे अने अमनोज्ञ शब्द ते द्वेषनो हेतु छे, तेथी जे मनोज्ञ अमनोज्ञ ए बंने शब्दने विषे राग द्वेष न करे तेहज वीतराग जाणवा एम तिर्थंकरे कहेल छे ॥ ३५ ॥

अर्थः—सो० कान य० तिर्थंकर कहे कर्णमुलं शब्दं स० शब्दने ग० ग्रहवा योग्य स० शब्द सो० श्रोत्रेंद्रि कानने ग० ग्रहणहार छे व० कहे तिर्थंकर ॥ रा० रागनो हे० हेतुने स० मनोज्ञ शब्दने आ० तिर्थंकर कहे दो० द्वेषना हे० हेतुने अ० अमनोज्ञ शब्दने आ० तिर्थंकर कहे ॥ ३६ ॥

मूलः—सद्दस्स सोयं गहणं वयन्ति सोयस्स सद्दं गहणं वयन्ति ।
रागस्स हेउं समणुन्नमाहु दोसस्स हेउं अमणुन्नमाहु ॥ ३६ ॥

गाथा ३६ भावार्थः—कान शब्दने ग्रहनार छे, कानने शब्द ग्रहवा योग्य छे ते माटी जे मनोज्ञ शब्द छे ते रागनो हेतु छे अने जे अमनोज्ञ शब्द छे ते द्वेषनो हेतु छे, एम तिर्थंकरे कहेल छे ॥ ३६ ॥

अर्थः—म० मनोज्ञ शब्दने विषे जो० जे गि० मुर्ज्ञाने उ० पामे ॥ ति० तिव्र अ० अकाळे पा० पामे

पोक्खरिणीपत्तासं ॥ ४७ ॥

श्रोतेंद्रीतुं ध्यान १३ काव्ये करीने कहुं) ॥ ४७ ॥

अर्थः—धा० नासिकाने गं० सुगंध कस्तुरी प्रमुख ग० ग्रहवा योग्य छे व० एम निर्धकर कहे । नं० ते सुगंध रा० रागनुं हे० हेतुने तु० वली । म० जे मनोज्ञ गंधछे । आ० निर्धकर कहे ॥ न० ते गंध दो० द्वेषनो हे० हेतुछे अ० जे अमनोज्ञ कहे आ० निर्धकर कहे स० सरिषो भाव राग द्वेष रहित होय य० वली ॥ जो० जे कोइ ते० ते भली पांडुआ गंधने विषे स० ते वी० वीतराग कहीए ।' ४८ ॥

॥ ३९२ ॥

॥ ३२ ॥

मूलः—घाणस्स गन्धं गहणं वयन्ति तं रागहेउं तु मणुन्नमाहु ।
तं दोसहेउं अमणुन्नमाहु समो य जो तेसु स वीयरागो ॥ ४८ ॥

गाथा ४८ भावार्थः—हवे त्रीजी घ्राणेंद्रीतुं ध्यान १३ काव्ये करीने कहे छे, नासीकाने कस्तुरी प्रमुख गंध ग्रहवा योग्य छे, ते मांही जे मनोज्ञ गंध ते रागनो हेतु छे अने जे अमनोज्ञ गंध ते द्वेषनो हेतु छे तेथी जे मनोज्ञ अमनोज्ञ ए बंने गंधने विषे राग द्वेष न करे तेज वीतराग जाणवा एम निर्धकरे कहेल छे. ॥ ४८ ॥

अर्थः—घा० नडागंध पांडूआगंधने । या० नासिकाते ग० ग्रहण हारछे । व० एम कहे निर्धकर या० नासिकाने गं० गंध ग० ग्रहवा योग्य व० निर्धकर कहे । रा० रागनुं हे० हेतुछे स० मनोज्ञ आ० निर्धकर कहे

भूंडा शब्दने विषे मे० ते कु० करे प० द्वेषने । दु० दुष्परंपरीनां सं० पीडाने उ० पामे वा० अज्ञानि ॥ ने० न वि० विराग न परहाप ने० नेणे राग द्वेष करी मु० साधु वि० राग रहित होय ने ॥ ३९ ॥

मूलः—गुणउ रसेसु कइरंमि सद्दे अतालिसे से कुणई पओसं ।
दुक्खस्स संपीलमुवेइ बाले न लिप्पई तेण मुणी विरागो ॥ ३९ ॥

गाथा ३९ भावार्थः—जे एवा। मनोज्ञ शब्दने विषे रक्त छे ने जीव अमनोज्ञ शब्दने विषे द्वेष भाव करे ते अज्ञानी दुःख संपरंपरीनां पीडा पामे एम जाणी द्वेष रुप कषाय करी वीतरागी मुनी न लेपाय ॥३९॥

अर्थः—ग० रूडा शब्दने अ० केवे प्रसंगे पड्या आ० आसाने विषे ॥ ग० प्रवर्तना जे ग० पूर्वे जी० जीव ॥ प० प्रसंग अने अ० आवरने हिं० हणे ने केहना जीवने हणे ॥ अ० अनेक प्रकारना जीवने वि० अनेक प्रकारने दंडे करी ने० ते त्रसस्थावर जीवने प० परितापना उपजावे वा० अज्ञानी । पी० पीडा उपजावे कर्मबंध पामे । अ० आत्मानो अर्थी । गु० मारुंछे जेहनो । कि० केवा परिणाम सहित छे ॥४०॥

मूलः—सद्दाणुगासागुगए य जीवे चराचरे हिंसइ णेगरूवे ।
चित्तेहि ते परितावेइ बाले पीलेइ अत्तट्ठगुरू किलिट्ठे ॥ ४० ॥

गाथा ४० भावार्थः—जेहने मनोज्ञ शब्द सांभलवा पर पोताना आत्मानोज अर्थ थोडो छे ते मनोज्ञ शब्दने परिणामे पीडयो थको मनोज्ञ शब्दने विषे प्रवर्ते, ते मनोज्ञ शब्दनी आशाए प्रवर्तनो मनोज्ञ शब्द सांभलवाने माटे ते अज्ञानी जीव त्रसा प्रकारना त्रसने स्थावर जीवने हणे अने त्रसा प्रकारना शस्त्रे करी

मूलः—जं यावि दोसं समुवेइ तिव्वं तंसि क्खणे से उ उवेइ दुक्खं ।
दुद्दन्तदोसेण सएण जन्तू न किंचि गन्धं अवरुज्झई से ॥ ५१ ॥

गाथा ५१ भावार्थः—जे कोइ अमनोज्ञ गंधने विषे तिव्र द्वेष पामे, ते जीव ते अवसरने विषे दुःख पामे अने दुष्टता दोषीला एवा द्वेष रुप दुर्दांत मोटा दोषे करी ते जीव पोतेज दुःखी थायछे, पण ते जीवने गंध किंचित मात्र अपराध नथी करतो ॥ ५१ ॥

अध्य० ॥ ३२ ॥

अर्थः—ए० यगो र० रक्तछे जे जीव रु० मनोज्ञ रुडा गं० गंधने विषे ॥ अ० ए सरिपो बीजो कोइ भूंडो गंधछे नहि से० ते कु० करे प० एहवो द्वेष भाव । दु० दुष संबंधनी सं० पीडा उ० पामे वा० पाल अज्ञानी । न०न लि०लिपाय न परडाय ते० तेणे द्वेषरुपीया कचरे करी मु० साधु वि० राग रहित होय ते ॥५२॥

मूलः—एगन्तरत्ते रुइरंसि गन्धे अतालिसे से कुणई पओसं ।
दुक्खस्स संपीलमुवेइ बाले न लिप्पई तेण मुणी विरागो ॥ ५२ ॥

गाथा ५२ भावार्थः—जे एकांत मनोज्ञ गंधने विषे रक्त छे, ते जीव अमनोज्ञ गंधने विषे द्वेष भाव करे, ते अज्ञानी दुःख संबंधीनी पीडा पामे, एम जाणी द्वेषरुप कचरे करी वीतरागी मुनी न लेपाय ॥५२॥

अर्थः—गं० मनोज्ञ गंधने अ० केडे प्रवर्ते । आ० मनोज्ञ गंधनी आसाए ग० प्रवर्ते य०वळी जी० जीव ॥ च०

अ० वीणादिक पारकी वस्तु अणदीधी ले ॥ ४२ ॥

मूलः—सद्दे अतित्ते य परिग्गहे य सत्तोवसत्तो न उवेइ तुट्ठिं ।
अतुट्ठिदोसेण दुही परस्स लोभाविले आययई अदत्तं ॥ ४२ ॥

गाथा ४२ भावार्थः—मनोज्ञ शब्दने विषे असंतोषी थको मधुर शब्द रूप परीग्रहने विषे लुब्ध तथा अत्यंत लुब्धपंत ते संतोष न पामे तथा मधुर शब्दना लोभे करी जेहनुं चित मेलुं थएल छे, ते जीव असंतोषने दोषे करी पारकी मधुर शब्दवाळी वस्तु देखीने ते वस्तुना मालीकनी रजा सिवाय अणदीधेली लीए ॥ ४२ ॥

अर्थः—न० तृष्णाएकरी अ० पराभव्यो होय तेहने अ० चोरीना करणहारने ॥ स० शब्दने विषे अ० असंतोषीने प० परिग्रह मेळववाने विषे असंतोषीने य० वळी । मा० माया सहित मु० मुषावादनो बोलवुं व० वाधे मृषा बोलवाने विषे । लो० लोभना दो० दोषथकी लोभी चोरी करे पछे कोइ पूछेतो माया सहित मृषा बोले त० तिहांपणि मृषा बोलते छते अ० पण दु० दुःखथकी न० न वि० मुकाय से० ते जीव ॥ ४३ ॥

मूलः—तण्हाभिभूयस्स अदत्तहारिणो सद्दे अतित्तस्स परिग्गहे य ।
मायामुसं वड्ढइ लोभदोसा तत्थावि दुक्खा न विमुच्चई से ॥ ४३ ॥

गाथा ४३ भावार्थः—मधुर शब्द रूप परीग्रह मेळववाने विषे असंतोषी जीव तृष्णाए करी पराभव्यो थको मधुर शब्दनी चोरीनो करनार तेहने कोइ पुछे, अमुक मधुर शब्दवाळी वस्तु तमे लीधी छे, ते वारे कपट सहीत जुठुं बोले, तेमज पछी जुठुं बोलवाथी ते जीव ते दुःखथी न मुंकाय ॥ ४३ ॥

तत्थोवभोगे वि किलेसदुक्खं निवत्तई जस्स कएण दुक्खं ॥ ४५ ॥

गाथा ४५ भावार्थः–एवी रीते मनोज्ञ शब्दनो रक्त छे ते जीवने केवी रीते किहां थकी थोडुंए सुख होय ? (अर्थात न ज होय) तोपण मनोज्ञ शब्दने भोगववाने विषे क्लेशने दुःख पामे छे तेमज मनोज्ञ शब्द भोगववाने माटे आत्माने कष्ट ऊपार्जे छे ॥ ४५ ॥

अर्थः–ए० एणीपरे स० शुंडा शब्दने विषे ग० पहोतो थको प० द्वेषभावे ॥ उ० पामे दु० दुपना उ० समुहनी प० श्रेणी ॥ प० पकरशे दु० द्वेषकरी दुष्ट चि० चितनो धणी य० वली नि० बांधे क० कर्म जं० जे कर्म से० ते जीवने पु० वली हो० होय दु० दुपकारीया वि० विपाक इह लोक परलोकने विषे ॥ ४६ ॥

मूलः–एमेव सद्दम्मि गओ पओसं उवेइ दुक्खोहपरंपराओ ।
पदुट्ठचित्तो य चिणाइ कम्मं जं से पुणो होइ दुहं विवागे ॥ ४६ ॥

गाथा४६ भावार्थः–एवी रीते शुंडा शब्दने विषे द्वेष भावे पोहोत्यो थको जीव दुःखना समुहनी श्रेणी पामे, वली द्वेषे करी दुष्ट चितनो धणी कर्म बांधे, पछी ते कर्म ते जीवने इहलोक तथा परलोकने विषे दुःखकारी होय ॥४६॥

अर्थः–स० मनोज्ञ सब्दने विषे वि० राग रहित थको म० मनुष्य वि० सोक रहित । ए० एणे पूर्वे कहि ते दु० दुपना उ० समोहनी प० श्रेणी करी न० न लि० लिपाय न परडाय भ० संसार म० मांहि वि० पण सं० छतो जं० जेम पाणीए करी चा० वली पो० कमलनुं प० पानडुं लिपाय नहि तेम विरक्त मनुष्य न लिपाय ॥४७॥

मूलः–सद्दे विरत्तो मणुओ विसोगो एएण दुक्खोहपरंपरेण ।

करवाने विषे प्रवर्ते, कदाचित ते मनोज्ञ गंधनो विनाश अथवा वियोग थए थके ते मनोज्ञ गंधने भोगवताना अवसरने विषे ते जीवने कीहां थकी सुख होय ? (अर्थात न ज होय) ॥ ५४ ॥

अर्थः–गं०मनोज्ञ गंधने विषे अ०असंतोषीयको य०वली प०परिग्रह सुगंध द्रव्यनो संग्रह करवानेविषे य० वली स० आशक्त उ० अत्यंत आशक्त थको न० न उ०पामे तु० संतोषने ॥ अ० असंतोषने दो० दोषेकरी दु० ते जीव दुखि होय ॥ प० पारका सुगंध द्रव्य देखिने । लो० लोभेकरी आ० मेलो दुष्ट चित्त थको आ० लीए पारका सुगंध अ० अणदिधा ग्रहे अदत्त ले ॥ ५५ ॥

मूलः–गन्धे अतित्ते य परिग्गहे य सत्तोवसत्तो न उवेइ तुट्ठिं ।
अतुट्ठिदोसेण दुही परस्स लोभाविले आययई अदत्तं ॥ ५५ ॥

गाथा ५५ भावार्थः–मनोज्ञ गंधने विषे असंतोषी थको सुगंध परिग्रहने विषे लुब्ध तथा अत्यंत लुब्धयंत ते संतोष न पामे, पछी सुगंधना लोभे करी जेहनुं चित मेलुं थएल छे ते जीव असंतोषना दोषे करी पारकी सुगंधी वस्तु देखीने तेहनी चोरी करे. ॥ ५५ ॥

दो० द्वेषनो हे० हेतुछे अ० जे अमनोज्ञ गंधछे ते । आ० एम कहे तिर्थंकर ॥ ४९ ॥

मूलः—गन्धस्स घाणं गहणं वयन्ति घाणस्स गन्धं गहणं वयन्ति ।
रागस्स हेउं समणुन्नमाहु दोसस्स हेउं अमणुन्नमाहु ॥ ४९ ॥

गाथा ४९ भावार्थः—गंधने नासीका ग्रहनार छे अने नासिकाने गंध ग्रहवा योग्य छे ते माटी जे मनोज्ञ गंध छे, ते रागनो हेतु छे, अने जे अमनोज्ञ गंध छे, ते द्वेषनो हेतु छे, एम तिर्थंकरे कहेल छे ॥४९॥

अर्थः—गं० मनोज्ञ गंधने विषे जो० जे कोइ गि० मूर्छा उ० पामे ति० तिव्र । अ० अकाले पा० पामे से० ते वि० मरण। रा० रागे आ० पीडोओ० उपजीना मनूखना गं० गंधने विषे गि० गृध्न थनो । स० सर्प वि० बिलथकी वि० जेम नि० निकल्यो थको दुप पामे कडा गंध माटे ॥ ५० ॥

मूलः—गन्धेसु जो गिद्धिमुवेइ तिव्वं अकालियं पावइ से विणासं ।
रागाउरे ओसहगन्धगिद्धे सप्पे बिलाओ विव निक्खमन्ते ॥ ५० ॥

गाथा ५० भावार्थः—जेम औषधीना गंधने जडी मनुष्य तेहना कडा गंधने विषे रागथी लुब्ध थएलो बिलथी निकल्यो थको सर्प दुःख पामे, तेम जे कोइ मनोज्ञ गंधने विषे तिव्र मुर्छावंत होय ते जीव अकाळे मर्ण पामे ॥ ५० ॥

अर्थः—जं० जेम ते पांढ्या गंध पामीने ग० वळी अ० पण दो० द्वेषभाव स० पामे ति० आकरो॥ तं० ते स० अवसरने विषे से० ते उ० वळी उ० पामे दु० दुप दु० दुर्दंत मोटा । दो० दोष स० आपणे कीधे जं० जीव ॥ न० न किं० थोडोए गं० गंध अ० अपराध करतो नथी से० ते जीवने ॥ ५१ ॥

अ० अर्थे गु० मोटो जाणे ते परिणाम ए० पाड्या थका ॥ ५२ ॥

मूलः–गन्धाणुगासाणुगए य जीवे चराचरे हिंसइ णेगरूवे ।
चित्तेहि ते परितावेइ बाले पीलेइ अत्तट्ठगुरू किलिट्ठे ॥ ५३ ॥

गाथा ५३ भावार्थः–जेहने मनोज्ञ गंध मेलवा रूप पोताना आत्मानो अर्थ मोटो छे, ते मनोज्ञ गंधना रागने परीणामे पीडयो थको मनोज्ञ गंधनी कांक्षे अर्थात् ते मनोज्ञ गंधनी आशाए अनर्थनो मनोज्ञ गंध मेळववाने माटे ते अज्ञानी पणा प्रकारना त्रसने स्थावर जीवने हणे भने पणा प्रकारना शस्त्रे करी पर जीवने पीडा उपजावे ॥५३॥

अर्थः–गं० मनोज्ञ गंधने वा०राग करीने प० मनोज्ञ गंध ग्रहण करवानी मूर्छा उपने तेणे करी ॥ उ० सुगंध द्रव्य कस्तुरी प्रमुख उपजावाने विषे र०कस्तुरी प्रमुख सुगंध चोरना भयथकी राखवाने विषे स०आपणा तथा पारका प्रयोजने उपराने लेवारे सुगंध । द्रव्य भोग आवे तेम प्रवर्तावाने विषे । य० सुगंध द्रव्यनो विनास हूए थके । वि०सुगंध द्रव्यनो वियोग हुएथके य०थकी ॥ क०किहां थकी सु०सुख होय से० ते जीवने ॥ सं०ते मनोज्ञ गंध भोगववाना का० काळने विषे य०थकी । अ०अत्यंतोपीडुप किहांथकि सुख होय ते जीवने ॥५४॥

मूलः–गन्धाणुरायाएण परिग्गहेण उप्पायणे रक्खणसन्निओगे ।
वए विओगे य कहं सुहं से संभोगकाले य अतित्तलाभे ॥ ५४ ॥

गाथा ५४ भावार्थः–मनोज्ञ गंधने रागे करी मनोज्ञ गंध ग्रहण करवानी मुर्छाथी सुगंध रूप परीग्रह

कोइ मने जुठा बोलो जाणे, एवी रीते सुगंध वस्तु अणइच्छतां ने
दुःखनो अंत दोहीलो पामे अने एवा चोरीना करनार अन्यादनो कोइ मनाइयो ने
॥ ३९५ ॥

अर्थः—गं० मनोज्ञ गंधने विषे अ० रक्त छे न० जे मनुष्यने ए०एवे प्रकारे । क०किलेसदुक्ख । पु० पुण
हो०होय क०किलेस पण किं० शोकुंए ॥ न०तिहां सुगंध मनोज्ञ । उ०भोगववाने विषे कि० पण । कि० केवा
दुः दुख पामे । नि० नीपजावे ज० जे मनोज्ञ गंध भोगववाने क० काले । दु० दुख विसतारे ॥ ५८ ॥

मूलः—गन्धाणुरत्तस्स नरस्स एवं कत्तो सुहं होज्ज कयाइ किंचि ।
तत्थोवभोगे वि किलेसदुक्खं निव्वत्तई जस्स कएण दुक्खं ॥ ५९ ॥

गाथा ५८ भावार्थः—एवी रीते मनोज्ञ गंधनो रक्त छे, ते मोरने केवो रीते क्यां थकी सोहेज सुख
होय (अर्थात नज होय) तोपण मनोज्ञ गंधने भोगववाने विषे केवले दुःख पामे छे, जेमज मनोज्ञ गंध भोग-
ववाने आत्माने कष्ट उपार्जे छे ॥ ५९ ॥

अर्थः—ए० एणीपरे गं० भूंडा गंधने विषे । ग०एहवो थको प० देखमाने उ०एवे दु०दुखना उ०हदाने
प० श्रेणी ॥ प० प्रकरणे दु० द्वेषेकरी दुष्ट वि० विषनो धणी य०थको वि०वांके दु०दुख जेहने दर लिजे तेहने
पु० वली हो० होय दु० दुष्टेकरी वि० विपाक दुष्टोक परलोकने विषे ॥ ५० ॥

मूलः—एमेव गन्धम्मि गओ पओसं उवेइ दुक्खोहपरंपराओ ।
पदुट्ठचित्तो य चिणाइ कम्मं जं से पुणो होइ दुहं विवागे ॥ ६० ॥

अ० अर्थ गु० मोटो लाभ ते परिणामे कि० पीडयो थको ॥ ५३ ॥

मूलः–गन्धाणुरागसाणुगए य जीवे चराचरे हिंसइ णेगरूवे ।
चित्तेहि ते परितावेइ बाले पीलेइ अत्तट्ठगुरू किलिट्ठे ॥ ५३ ॥

गाथा ५३ भावार्थः–जेहने मनोज्ञ गंध मेळववा रूप पोताना आत्मानोज अर्थ मोटो छे, ते मनोज्ञ गंधना रागने परिणामे पीडयो थको मनोज्ञ गंधनी कोडे मवर्ते ते मनोज्ञ गंधनी आशाए मवर्तेतो मनोज्ञ गंध मेळववाने माटे ते अज्ञानी घणा प्रकारना त्रसने स्थावर जीवने हणे अने घणा प्रकारना शस्त्रे करी पर जीवने पीडा उपजावे ॥५३॥

अर्थः–गं० मनोज्ञ गंधने वा०रागे करीने प० मनोज्ञ गंध ग्रहण करवानी मूर्छा उपजे तेणे करी ॥ उ० सुगंध द्रव्य कस्तूरी मधुप उपजाववाने विषे र०कस्तूरी मधुप सुगंध चोरना भयथकी राखवाने विषे स०आपणा तथा पारका प्रयोजने उपराजे तेवारे सुगंध । द्रव्य जेम भोग आवे तेम प्रवर्तावाने विषे । व० सुगंध द्रव्यनो विनास हुए थके । वि०सुगंध द्रव्यनो वियोग हुएथके य०वली ॥ क०किहां थकी सु०सुख होय से० ते जीवने ॥ सं०ते मनोज्ञ गंध भोगववाना का० काळने विषे य०वली । अ०असंतोषीहुए किहांथकि सुख होय ने जीवने ॥५४॥

मूलः–गन्धाणुवाएण परिग्गहेण उप्पायणे रक्खणसन्निओगे ।
वए विओगे य कहं सुहं से संभोगकाले य अतित्तलाभे ॥ ५४ ॥

गाथा ५४ भावार्थः–मनोज्ञ गंधने रागे करी मनोज्ञ गंध ग्रहण करवानी मुर्छाथी सुगंध रूप परीग्रह सम्यक प्रकारे पोताने अने पारकाने अर्थ आववाना प्रयोजनने माटे ऊपार्जे, पछी तेनुं चोरादीकथी रक्षण

मूलः—जीहाए रसं गहणं वयन्ति तं रागहेउं तु मणुन्नमाहु ।
तं दोसहेउं अमणुन्नमाहु समो य जो तेसु स वीयरागो ॥ ६१ ॥

गाथा ६१ भावार्थः—इस ४ थी रसेंद्री (जीभ) नुं ज्ञान १३ काळे करीने कहेछे, जीभने तीखा मधुरादीक रसनो स्वाद ग्रहवा योग्यछे तेमांही जे मनोज्ञ रसछे, ते रागनो हेतुछे अने जे अमनोज्ञ रसछे, ते द्वेषनो हेतुछे, तेथी जे मनोज्ञ अमनोज्ञ ए बंने रसने विषे राग द्वेष न करे, तेहज वीतराग जाणवा, एम तिर्थंकरे कहेल छे ॥ ६१ ॥

अर्थः—र० रुडा पाडुवा रसना स्वादने जो० जोभ ते ग० ग्रहणहार छे व० एम कहे तिर्थंकर ॥ जी० जीभने रुडा पाडुवा र० रसनो स्वाद ग० ग्रहनायोग्यछे व० एम कहे तिर्थंकर ॥ रा० रागना हे० हेतु छे स० जे मनोज्ञ रसना स्वाद छे ते आ० एम कहे तिर्थंकर महाराज ॥ ६२ ॥

मूलः—रसस्स जीहं गहणं वयन्ति जीहाए रसं गहणं वयन्ति ।
रागस्स हेउं समणुन्नमाहु दोसस्स हेउं अमणुन्नमाहु ॥ ६२ ॥

गाथा ६२ भावार्थः—रसने जीभ ग्रहनार छे अने जीभने रस ग्रहवा योग्य छे, ते मांही जे मनोज्ञ रस छे, ते रागनो हेतु छे अने जे अमनोज्ञ रस छे, ते द्वेषनो हेतु छे, एम तिर्थंकरे कहेल छे ॥ ६२ ॥

अर्थः—र० तीखादीक रुडा रसना स्वादने विषे जो० जे कोइ ॥ गि० मूर्छाने व० पामे ति० तिव्र ॥

अ० पण दु० दुःखथकी न० न वि० मुकाय से० ते जीव ॥ ५६ ॥

मूलः—तण्हाभिभूयस्स अदत्तहारिणो गन्धे अतित्तस्स परिग्गहे य ।
मायामुसं वड्ढइ लोभदोसा तत्थावि दुक्खा न विमुच्चई से ॥ ५६ ॥

गाथा ५६ भावार्थः—सुगंध लेवाने विषे असंतोषी जीव तृष्णाए करी पराभव्यो थको सुगंध वस्तुनो चोरीनो करनार तेहने कोइ पुछे के अमुक सुगंध वस्तु तमे लीधी छे, ? ते वारे कपट सहीत जुठुं बोले, तेमज पछी जुठुं बोलवाथी ते जीव ते दुःखथी न मुंकाय ॥ ५६ ॥

अर्थः—मो० मृषावाद बोल्या प० पछे पश्चाताप करे सुगंध वासना लेवानो लोभी जीव य० वली पु० पेहेलो पण एवी चिंता करे ॥ ए सुगंध द्रव्यना धणी आगळ मृषा केम बोलशुं एहने केम वंचशुं य० वली । प० मृषा बोलवाने का० अवसरे ते एम जाणे जे रखे कोइ मुजने जुठा बोलो जाणे ते धणी ते य० वली । दु० दुःखी होय दु० दुरनो अ० अंत दोहिलो पामे ए० एणीपरे सुगंध द्रव्यनो अ० अदत्तने स० लेतो थको । गं० सुगंध द्रव्यने विषे । अ० असंतोषी थको दु० दुःखी होय अ० अन्याय माटे तेहनो कोइ उपराणुं करे नहि ॥५७ ॥

मूल—मोसस्स पच्छा य पुरत्थओ य पओगकाले य दुही दुरन्ते ।
एवं अदत्ताणि समाययन्तो गन्धे अतित्तो दुहिओ अणिस्सो ॥ ५७ ॥

गाथा ५७ भावार्थः—जुठुं बोल्या पछी पश्चाताप करे, तेमज पहेलो पण एवी चिंता करेके ए सुगंधना धणी पासे केवी रीते जुठुं बोलुं तथा एहने केवी रीते लेतरुं, वली जुठुं बोलवाना अवसरे एम जाणे के रखे ?

न लि० लिप्यते नकारात्त ते० तेने द्वेषनी करनारी गु० जेसाधु । वि० रागरहित होयते ॥ ६५ ॥

मूलः—एगन्तरत्ते रुइरंसि रूवे अतालिसे मे कुणई पओसं ।
दुक्खस्स संपीलमुवेइ बाले न लिप्पई तेण मुणी विरागो ॥ ६५ ॥

गाथा ६५ भावार्थः—जे एकांत मनोज्ञ रूपने विषे रक्त छे, ते जीव अमनोज्ञ रूपने विषे द्वेषभाव करे, ते अज्ञानी दुःख संपीडानी पीडा पामे, एम जाणी द्वेषथी करीने करी वीतरागी मुनी न लेपाय ॥ ६५ ॥

अर्थः—ए० एका रूपना रक्तने त० केरो मनोज्ञ । आ० एवा रूपनाविषयिकनी आसाए ग० प्रवर्ते य० वळी॥ जी० जेजीव च० वसनारो ॥ अ० सारु जीवन हि० हणे ॥ अ० घणा प्रकारना जीवने ॥ वि० घणाप्रकारना सत्वेकरी ते० ते प० दुःखउपजावे वा० आर्त्तनादकरे । पा० परजीवने पीडा उपजावे॥ अ० आपणा आत्माने अ० अर्थे गु० मोटोजाणे ॥ कि० मेलवे नानाविधने परिणामे पीडबोधको ॥ ६६ ॥

मूलः—रसाणुगासाणुगए य जीवे चराचरे हिंसइ णेगरूवे ।
चित्तेहि ते परितावेइ बाले पीलेइ अत्तट्ठगुरू किलिट्ठे ॥ ६६ ॥

गाथा६६ भावार्थः—जेने मनोज्ञ रस मेळवनारा पोताना आत्मानो अर्थ मोटोछे, ते मनोज्ञ रसना रागने परीणामे पीडयो थको मनोज्ञ रसने हेते करीने, ते मनोज्ञ रसनी आशाए करीने मनोज्ञ रस मेळववाने माटे ते अज्ञानी जीव घणा प्रकारना चराचर जीवने हणे छे घणा प्रकारना जीवने परितापने पीडा उपजावे ॥६६॥

अर्थः—ए० मनोज्ञ रसना

अ० पण दु० दुःखथकी न० न वि० मुकाय से० ते जीव ॥ ५६ ॥

मूलः—तण्हाभिभूयस्स अदत्तहारिणो गन्धे अतित्तस्स परिग्गहे य ।
मायामुसं वड्ढइ लोभदोसा तत्थावि दुक्खा न विमुच्चई से ॥ ५६ ॥

गाथा ५६ भावार्थः—सुगंध मेळववाने विषे असंतोषी जीव तृष्णाए करी पराभव्यो थको सुगंध वस्तुनी चोरीनो करनार तेहने कोइ पूछे के अमुक सुगंध वस्तु तमे लीधी छे, ? ते वार कपट सहीत जुठुं बोले, तेमज पछी जुठुं बोलवाथी ते जीव ते दुःखथी न मूंकाय ॥ ५६ ॥

अर्थः—मो० मृषावाद बोल्या प० पछे पश्चाताप करे सुगंध वासना लेवानो लोभी जीव ग० वळी पु० पेहेलो पण एवी चिंता करे ॥ ए सुगंध द्रव्यना धणी आगळ मृषा केम बोलशुं एहने केम वंचशुं ग० वळी । प० मृषा बोलवाने का० अवसरे ते एम जाणे जे रखे कोइ मुजने जुठा बोलो जाणे ते भणी ते ग० वळी । दु० दुखी होय दु० दुखनो अ० अंत दोहिलो पामे ए० एणीपरे सुगंध द्रव्यनो अ० अदत्तने स० लेतो थको । गं० सुगंध द्रव्यने विषे । अ० असंतोषी थको दु० दुखी होय अ० अन्याय माटे तेहनो कोइ उपराणुं करे नहि ॥५७ ॥

मूल—मोसस्स पच्छा य पुरत्थओ य पओगकाले य दुही दुरन्ते ।
एवं अदत्ताणि समाययन्तो गन्धे अतित्तो दुहिओ अणिस्सो ॥ ५७ ॥

गाथा ५७ भावार्थः—जुठुं बोल्या पछी पश्चाताप करे, तेमज पहेलो पण एवी चिंता करीके ए सुगंधना धणी पासे केवी रीते जुठुं बोलुं तथा एहने केवी रीते छेतरुं, वळी जुठुं बोलवाना अवसरे एम जाणे के रखे ?

अतुट्ठिदोसेण दुही परस्स लोभाविले आययई अदत्तं ॥ ६८ ॥

गाथा ६८ भावार्थः–मनोज्ञ रसने विषे असंतोषी थको मनोज्ञ रसवाळा परिग्रहने विषे लुब्ध तथा अत्यंत लुब्धवंत ते संतोष न पामे, पछी मनोज्ञ रसना लोभे करी जेवुं चित्त मेलुं थयुं छे, ते जीव असंतोषपने दोषे करी पारकी मनोज्ञ रसवाळी वस्तु देखीने तेहनी चोरी करे ॥ ६८ ॥

अर्थः–त० षट्रसना लोभे करी अ० पराभव्यो दोष तेहने अ० चोरीना करनारने । र० षट्रसने विषे । अ० असंतोषिने प० षट्रसना परिवह । मेलववाने विषे असंतोषिने व० वल्यो ॥ मा० माया मृ० मृषावादनुं वोलवुं व० वाधे तथा मृषावाद बोलवाने विषे लो० लोभना दो० दोष थकी चोरी चोरी करे । पछे कोइ पूछे तेवारे माया सहित मृषा बोले त० तिहां मृषावाद बोले दुने अ० पण । दु० दुरन्तकी त० न दि० मुक्ताय ते० ते रसादिकनो लोलपी जीव ॥ ६९ ॥

मूलः–तण्हाभिभूयस्स अदत्तहारिणो फरुसस्स अलिअस्स परिग्गहे य ।
मायामुसं वड्ढइ लोभदोसा तत्थावि दुक्खा न विमुच्चई से ॥ ६९ ॥

गाथा ६९ भावार्थः–मनोज्ञ रसवाळो परिग्रह मेलववाने विषे असंतोषी तीव्र तृष्णा करी पराभव्यो थको मनोज्ञ रसवाळी वस्तुनी चोरीनो करनार तेहने कोइ पूछे के अमुक मनोज्ञ रसवाळी वस्तु तमे लीधी छे ! ते वारे कपट सहीत जुठुं बोले, तेमज पछी जुठुं बोलवाथी ते जीव ते दुष्कर्मथी न मुकाय ? ? ? ॥६९॥

अर्थः–मा० मृषावाद बोल्या । प० पछे पश्चात्ताप करे रसलोलपी जीव त०

गाथा ५९ भावार्थः-एवी रीते गंधने विषे द्वेषभावे पोहोंचेलो थको जीव दुःखना समुहनी श्रेणी पामे, वली द्वेषे करी दृढ चिक्कण कर्म बांधे, पछी ते कर्मने जोगवते इहलोक तथा परलोकने विषे दुःखकारी होय ॥५९॥

अर्थः-मं० मनोज्ञ गंधने विषे वि० रागरहित थको म० मनुज्ञ वि० शोकरहित होय । ए० ए पूर्वे कही दृ० दृष्टना उ०मनोहरी प० श्रेणी न० न वि०विलास न अनुभवे भ०संसार म०मांहे सं०लतो वि० पण ज० जेम पाणीए वा० करी पो० कमलनुं ॥ प० पानदं नालिप्पाय तेम विरक्त मनुष्य नलिप्पाय ॥ ६० ॥

मूलः-गन्धे विरत्तो मणुओ विसोगो एएण दुक्खोहपरंपरेण ।
न लिप्पए भवमज्झे वि सन्तो । जलेण वा पोक्खरिणीपलासं ॥ ६० ॥

गाथा ६० भावार्थः-मनोज्ञ गंधने विषे विरक्त मनुष्य शोकरहित थाय अने ते दुःखना समुहनी श्रेणीए करी संसारमांही रहेलो थको पण पाणीमांही कमलना पत्रनी पेरे न लेपाय, (ए त्रीजी घ्राणेंद्रीनुं ध्यान १२ काव्ये करीने कह्युं ॥ ६० ॥

अर्थः-हवे जीभेंद्रिनी बेर काव्य कहे छे ॥ जी० जीभने र० विषे मधुरादिक रसना स्वाद ते ग० ग्रहवा योग्य छे व० एम कहे तिर्थंकर ॥ तं०ते तिक्तादिक रसना स्वाद रा०रागनो हे०हेतु छे तु०वली म० जे मनोज्ञ रसना स्वाद छे ते आ० एम कहे तिर्थंकर ॥ तं० ते रसना स्वाद दो० द्वेषनुं हे० हेतु छे अ० जे अमनोज्ञ आ० एम कहे तिर्थंकर ॥ स० समो सरीखो भाव रागद्वेष रहित होय प०वली जो०ने कोइ ते०ते भला पाडुवा रसना स्वादने विषे स० ते बी० वीतराग कहीए ॥ ६१ ॥

गाथा ७१ भावार्थः–एवी रीते मनोज्ञ रसनो रक्त छे ते जीवने केवी रीते कीहां थकी थोडुंए सुख होय ? (अर्थात न ज होय) तो पण मनोज्ञ रसवाळी वस्तु भोगववाने विषे क्लेशने दुःख पामे छे, तेमज मनोज्ञ रस भोगववाने माटे आत्माने कष्ट ऊपजें छे ॥ ७१ ॥

अर्थः–ए० एणीपरे र० भूंडा पटरसना स्वादने विषे ग० पहोच्यो थको प० द्वेषभाव उ० पामे दु० दुपना उ०समूहनी प० श्रेणीने ॥ प०प्रकरशे दु०द्वेषे करी चि०चितनो धणी य०वळी चि०बांधे क०कर्म । जं० जे से० ते जीवने पु० वळी हो० होय दु० दुपकारीया वि० विपाक इहलोक परलोकने विषे ॥ ७२ ॥

॥ ३२ ॥

मूलः–एमेव रसम्मि गओ पओसं उवेइ दुक्खोहपरंपराओ ।
पदुट्ठचित्तो य चिणाइ कम्मं जं से पुणो होइ दुहं विवागे ॥ ७२ ॥

गाथा ७२ भावार्थः–एवी रीते भुंडा रसने विषे द्वेष भावे पोहोच्यो थको जीव दुःखना समुहनी श्रेणीपामे, वळी द्वेषे करी दुष्ट चितनो धणी कर्म बांधे, पछी ते कर्म ते जीवने इहलोक तथा परलोकने विषे दुःखकारी होय ॥७२॥

अर्थः–र०पटरसना मनोज्ञ स्वादने विषे । वि०राग रहित म०मनुष्य वि०शोक रहित होय ते ए०ए पूर्वे कहिते दु० दुपना उ०समोहनी प० श्रेणिकरी । न० न लि०लिपाय । न परडाय । भ०संसार म०मांहि वि०पण सं०छतो ज०जेम पाणीए करी वा०वळी पो०कमलनुं प०पानदुं लिपाय नहि तम विरक्त मनुष्यलिपायनही॥७३॥

मूलः–एसे विरत्तो मणुओ विसोगो एएण दुक्खोहपरंपरेण ।

स० कपो ॥ ८० मा० मी स० मेव ज्ञा० मांस लो० भोगवनुं गि० वृद्ध दुख पामे ॥ ६३ ॥

मूलः—जेणु जो गिद्धिमुवेइ तिव्वं अकालियं पावइ से विणासं ।
रागाउरे वडिसविभिन्नकाए मच्छे जहा आमिसभोगगिद्धे ॥ ६३ ॥

छाया ६३ भाषार्थः—जेम मांस लोभवाला मुखपणाए गले पीरवो थको लोढाना कंटि काया विंधाणी मरण पामे, तेम जे कोइ स्त्रीना रूपमां गृद्ध मूर्छावंत होय, ते जीव अकाले मरण पामे ॥६३॥

अर्थः—जे० जेणु कहतां स्त्रीमां स० इहजाणी ज० जेओ त० पण इ० इणप्रकार ज० पामे नि० नित्र ॥ तं० ते स्वाद भोगवनाना स० आपणे मे० मेलवने उ० पीवे उ० पामे दु० दुख ॥ दु० दुर्दांत दो० दोषेकरी ॥ स० आपणा आत्माने वीर्य ज० जीवत० वांछे० ते दुःख० कहीए छुगडिक रमना करवे अ० अनराव कानो नथी ॥ से० ते जीवने ॥६४॥

मूलः—जो चक्खु लोले मनुवेइ तिव्वं तंसि कप्पे से उ उवेइ दुक्खं ।
दुहन्तदोसेण सएण जन्तू न किंचि रूवं अवरज्झई से ॥ ६४ ॥

छाया ६४ भाषार्थः—जे कोइ अतीव रूप जोवाने विषे द्वेष पाम, ते जीव ते अवसरने विष दुःख पामे, वली दुष्ट दोषना एना द्वेषना दुष्ट होय तेणे ते जीव पोताना दुःखने पामे छे, पण ते जीवने रूप किंचित मात्र अपराध नथी करतो ॥ ६४ ॥

अर्थः—जे० जेणु ज० जाणे जेणे त० [illegible] स० एनाथी अवसरे विषे । अ० ए नारीए कोइ भूंडोस्वाद नथी । से० ते जीव दु० कोइ प० पड़ [illegible] । दु० दुष्टपणाथी दो० दोषना उ० पामे ॥ ना० अज्ञानी । न०

मूलः—फासस्स कायं गहणं वयन्ति कायस्स फासं गहणं वयन्ति।
रागस्स हेउं समणुन्नमाहु दोसस्स हेउं अमणुन्नमाहु ॥ ७५ ॥

गाथा ७५ भावार्थः—स्पर्शने काया ग्रहनार छे अने कायाने स्पर्श ग्रहवा योग्य छे, ते माटी जे मनोज्ञ स्पर्श छे, ते रागनो हेतु छे अने जे अमनोज्ञ स्पर्श छे, ते द्वेषनो हेतु छे, एम तिर्थंकरे कहेल छे ॥ ७५ ॥

अर्थः—फा० ताढा उन्हादिक फरसने विषे जो० जे कोइ गि० मुर्छाने उ० पामे ति० तिव्र । अ० अकाले पा० पामे से०ते वि० मरणने । रा० रागेकरी आ०पाडयो सो०शीतल ज०पाणीने विषे अ०रोगवतो ॥ गा० ग्राहनामा जलचर जीव तेणे गि०ग्रह्यो म० पाडो वि० जेम व० अटवी मांहि मरण पामे ॥ ७६ ॥

मूल—फासेसु जो गिद्धिमुवेइ तिव्वं अकालियं पावइ से विणासं ।
रागाउरे सीयजलावसन्ने गाहगिहीए महिसे विवन्ने ॥ ७६ ॥

गाथा ७६ भावार्थः—जेम शीतल (ढाढा) पाणीना लुब्धपणाए पाडो पाणीने विषे पेठो तथा पछी रहेवाथी तिहां ग्रहनामा जळचर जीव आवीने ते पाडाने ग्रह्याथी अटवीने विषे ते पाडो मर्ण पामे, तेम जे कोइ मनोज्ञ स्पर्शने विषे तिव्र मुर्छावंत होय, ते जीव अकाळे मर्ण पामे ॥ ७६ ॥

अर्थः—जे०जे कोइ या०वळी दो०पाडुया फरस जाणीने द्वेषभाव रा०पामे गि०तिव्र ने०ते फरस भोगवाना स० अवसरने विषे ॥ से० ते उ० वळी उ०पामे दु०दुप । दु० दुर्दीत दो० दोष करी स०आपणे कीधे ज०जीव न० न किं०थोडुंए ॥ फा० फरस अ० अपराध करतो नथी । से० ते जीतने ॥ ७७ ॥

करी ॥ ३० विगादिक रसनी स्वादराग्गी वस्तु उपरागवाने विषे । ४० चौरादिकना गरणथकी रागवा-ने विषे । ५० विगादि रसना स्वाद भोगवता पहेले पछी नवगोवाने विषे ॥ ६० मनोज्ञ रसना स्वादनुं विनाश हुए थके ॥ ७० मनोज्ञ रसना स्वादनो विनाश हुएथके ८० पछी ॥ ९० किंपाकनी । १०० फलोदय से० ते जीवने सं० मनोज्ञ रसना स्वादयोग आवता । ११० काल्ने विषे ५० थकी । १२० अंतगोगी हुए तेने किंपाकी फलोदय ॥६७॥

मूलः—रसागुवाएण परिग्गहेण उप्पायणे रक्खणसन्निओगे ।
वए विओगे य कहं सुहं से संभोगकाले य अतित्तलाभे ॥ ६७ ॥

गाथा ६७ भावार्थः—मनोज्ञ रसने गणे रागे करी मनोज्ञ रसने पाम्या पछी तेनी मूर्छाथी मनोज्ञ रसनी वस्तुनो परिग्रह थवाथी पोताने मले आवीने तेनी रक्षानो तथा उपयोग माटे ऊभाजे, पछी तेनुं चोरादिकथी रक्षण करवाने विषे थवे, तथापि ते मनोज्ञ रसवाली वस्तुनो विनाश थया वियोग थए थके ते मनोज्ञ रस भोगववाना समयने विषे ते जीवने दीठां थकी पण होय. (अतीव नज होय ??? ॥ ६७ ॥

अर्थः—१० मनोज्ञ रसना स्वादने विषे २० अनुरागीपणे थकी ॥ ३० विगा परिग्रहादिक रसना परिग्रह मेलव-वाने ४० विषे ॥ ५० आसक्त ॥ ६० अत्यंत मूर्छा पामता ७० थ ८० पामे तु० पोताने । ९० अतृप्तपणे हो० होवे थकी । ११० ते जीव दुखी होय । १२० पाछा रसना स्वाद लेवाने ॥ १३० सेवे थकी १४० मेलो दुष्ट चित्तथकी । १५० लोभ १६० पामीने पाछा पहेला स्वाद ॥ ६८ ॥

मूलः—सो अविओगे य परिग्गहे य सत्तोवसन्नो न उवेइ तुट्ठिं ।

पीडा उपजावे । अ० आपणा आत्मानो जे अ० अर्थ । गु० ते मोटो जाणे ते । परजीवने पीडा उपजावे । कि० किलेस सहित रागादिकने परिणामे पीडयो थको ॥ ७९ ॥

मूलः—फासाणुगासाणुगए य जीवे चराचरे हिंसइ णेगरूवे ।
चित्तेहि ते परितावेइ बाले पीलेइ अत्तट्ठगुरू किलिट्ठे ॥ ७९ ॥

गाथा ७९ भावार्थः—जेहने मनोज्ञ स्पर्श मेळववा रूप पोताना आत्मानो अर्थ मोटोछे, ते मनोज्ञ स्पर्शना रागने परीणामे पीटयो थको मनोज्ञ स्पर्शनी कोंड प्रवर्ते, ते मनोज्ञ स्पर्शनी आशाये प्रवर्तनो, मनोज्ञ स्पर्श भेळववाने माटे ते अज्ञानी जीव घणा प्रकारना त्रसने स्थावर जीवने रूपे अने घणा प्रकारना अनेकरी परजीवने पीडा उपजावे ॥७९॥

अर्थः—फा० मनोज्ञ फरसने वा०रागे करी प० रूडा फरसने ग्रहण करवानी बुद्धी उपने तेणे करी ॥ उ०त्तम फरस उपरजवाने विषे र० चोरादिकना भयथकी राखवाने विषे स० रूडा फरस भोग आववा पणे प्रवर्तावयाने विषे । व० रूडा फरसनुं विनाश होय थके । वि०रूडा फरसनो वियोग हुए थके य० वळी ॥ क० किहांथी सु० सुख होय से० ते जीवने सं० रूडा फरस भोग आववाना का० काळ अवसरन विषे य० वळी॥ अ० असंतोषी हुते किहांथी सुख होय ॥ ८० ॥

मूलः—फासाणुवाएण परिग्गहेण उप्पायणे रक्खणसन्निओगे ।
वए विओगे य कहं सुहं से संभोगकाले य अतित्तलाभे ॥ ८० ॥

गाथा ८० भावार्थः—मनोज्ञ स्पर्शने रागे करी मनोज्ञ स्पर्शने ग्रहण करवानी बुद्धीथी, मनोज्ञ स्पर्श थय

चिंता करे ए पटरसना धणी आगले मृषा केम बोलवुं पहले केम चिंतवुं न० आवी ॥ प० मृषावाद बोलवानो का० अवसरे ते एम जाणे जे एणे कोइ मुनने जुठा बोल्यो जाणे य० यक्षी दु० दुष्टी । दु० होय ते दुष्टनो अ० अंत दोहिलो पामे ए० एणीपरे अ० पटरसादि अदत्तने । स० लेतो थको । र० मनोज्ञ पटरसने विषे । अ० असंतोषी थको दु० दुष्टी होय अ० अन्याय माठे तेहनुं कोइ उपराणुं न करे ॥ ७० ॥

मूलः—मोसस्स पच्छा य पुरत्थओ य पओगकाले य दुही दुरन्ते ।
एवं अदत्ताणि समाययन्तो रसे अतित्तो दुहिओ अणिस्सो ॥ ७० ॥

गाथा ७० भावार्थः—जुठुं बोल्या पछी पश्चात्ताप करे, तेमज पहेलो पण ए॥ चिंता करे के मनोज्ञ रसवाळी वस्तुना धणी आगळ जुठुं केवी रीते बोलुं, तथा पहले केवी रीते छेतरुं ? ? ? एवी जुठुं बोलवाना अवसरे एम जाणे के सर्व कोइ मने जुठा बोलो जाणे । एवी रीते मनोज्ञ रसवाळी वस्तु अजदीवेली लेनार असंतोषी जीव दुःखीयो होय, पछी ते दुःखनो अंत दोहीलो पामे अने एवा चोरीना करनार अन्यायनो कोइ सगाइयो न थाय ॥ ७० ॥

अर्थः—र० मनोज्ञ पटरसना स्वादनो जे अ०नुरागे ॥ न० ते मनुष्यने ए० एणे प्रकारे । क० हिंसादिकी मु० मुख हो० होय क० वचनादिक कि० बोलुं ॥ त०तिहां मनोज्ञ पटरसना स्वादने विषे । उ०भोगवावे वि० विषे कि० क्लेश ॥ दु०दुःखीते नि० ॥ निपजावे ज०ते मनोज्ञ पटरसना स्वादनुं सुख आपवाने क०वास्ते दु०दुःख ॥७१॥

थकी लोभी पारका रुडा फरसनी चोरी करे ॥ पछे कोइ पुछेनो माया सहित मृषा बोले ॥ त० तिहांपण मृषा बोले छते अ० पण दु० दुष्टथकी न० न वि० मुक्काय ते० ते रुडा फरसनी चोरीनो करणहार जीव ॥ ८२ ॥

मूलः—तण्हाभिभूयस्स अदत्तहारिणो फासे अतित्तस्स परिग्गहे य ।
मायामुसं वड्ढइ लोभदोसा तत्थावि दुक्खा न विमुच्चई से ॥ ८२ ॥

गाथा ८२ भावार्थः—रुडा स्पर्श रुप परीग्रह मेलवबाने विषे असंतोषी जीव तृष्णाए करी पराभव्यो थको मनोज्ञ स्पर्श वस्तुनी चोरीनो करनार, तेहने कोइ पुछेके अमुक रुडा स्पर्शवाळी वस्तु तमे लीधी छे ! ते वारे कपट सहीत जुठुं बोले, तेवज पछी जुठुं बोलवाथी ते जीव ते दुःखथी न मुक्काय ॥ ८२ ॥

अर्थः—मो० मृषा बोलवा थका प० पछे पश्चाताप करे रुडा फरस भोगवबानो लोभी जीव य० वळी । पु० पहेलीपण एहवी चिंता करे ए रुडा फरसना धणी आगे मृषा केम बोलीशुं ॥ एहने केम वंचशुं य० वळी । प० मृषा बोलवाने का० काले अवसरे ते एम जाणे रखे कोइ मुजने जुठ बोल्यो जाणे ते भणी य० वळी दु० दुषी होय । दु० ते दुषनो अ० अंत दोहिलो पामे ॥ ए० एणीपरे पारका रुडा फरसनो अ० अदत्त स० लेनार थको ॥ फा० रुडा फरसने विषे । अ० असंतोषी थको दु० दुषी होय । अ० अन्याय माठे नेहनुं उपराणुं कोइ न करे ॥८३॥

मूलः—मोसस्स पच्छा य पुरत्थओ य पओगकाले य दुही दुरन्ते ।
एवं अदत्ताणि समाययन्तो फासे अतित्तो दुहिओ अणिस्सो ॥ ८३ ॥

गाथा ८३ भावार्थः—जुठं बोल्या पछी पश्चाताप करे, तेमज पहेलां पण एवी चिंता करेके ए रुडा स्पर्शना धणी

गाथा ७३ भावार्थः—मनोज्ञ रसने विषे विरक्त मनुष्य शोक रहीत थाय अने पुर्वे कही ते दुःखना समुहनी श्रेणीए करी संसार मांही रहेतो थको पण पाणीमांही कमळना पत्रनी पेरे न लेपाय. (ए चोथी रसेंद्रीनुं ध्यान १३ काव्ये करीने कर्युं ॥ ७३ ॥

अर्थः—हवे फरसेंद्रीनो अधिकार तेर काव्येकरी कहेछे का० कायाने । फा० लाढा उन्हादिक फरस । ग० ग्रहवा योग्यछे । व० एम कहे तिर्थंकर । त० जो रा० रागनो हे० हेतु छे तु० थको । म० मनोज्ञ फरसछे ते । आ० एम कहे तिर्थंकर तं० ते फरस दो० द्वेषनुं हे० हेतुछे । अ० जे फरस अमनोज्ञछे । आ० कहे तिर्थंकर । स० समो सरिषो भाव राग द्वेष रहित व० थको जो० जे कोइ । ते० ते भला पाडुपा फरसने विषे । स० ते वी० वीतराग कहिए ॥७४॥

मूलः—कायस्स फासं गहणं वयन्ति तं रागहेउं तु मणुन्नमाहु ।
तं दोसहेउं अमणुन्नमाहु समो य जो तेसु स वीयरागो ॥ ७४ ॥

गाथा ७४ भावार्थः—हवे, ५ मी स्पर्शेंद्रीनुं ध्यान १३ काव्येकरीने कहेछे, लाढा उन्हादीक स्पर्श कायाने ग्रहवा योग्य छे, ते मांही जे मनोज्ञ स्पर्श छे, ते रागनो हेतु छे अने जे अमनोज्ञ स्पर्शछे ते द्वेषनो हेतु छे तेथी जे मनोज्ञ अमनोज्ञ ए बंने स्पर्शने विषे राग द्वेष न करे तेहज वीतराग जाणवा एम तिर्थंकर कहेल छे ॥ ७४ ॥

अर्थः—का० फरस लाढा उन्हादिकने का० काया ते ग० ग्रहणहारछे व० एम कहे तिर्थंकर ॥ का० कायाने फा० फरस ग० ग्रहवा योग्यछे व० एम कहे तिर्थंकर ।

पदुट्ठचित्तो य चिणाइ कम्मं जं से पुणो होइ दुहं विवागे ॥ ८५ ॥

गाथा ८५ भावार्थः–एवी रीते शुंडा स्पर्शने विषे द्वेष भावे पोहोचो थको जीव दुःखना समुहनी श्रेणी पामे, वळी द्वेषे करी दुष्ट चिननो धणी कर्म बांधे पछी ते कर्म ते जीवने इहलोक तथा परलोकने विषे दुःखकारी होय ? ॥८५॥

अर्थः–फा० ताद्या शुंआलादिक फरसने विषे वि० रागरहित कह्यो म० मनुष्य वि० शोकरहित होय ॥ ए० ए पुर्वे कही ते दु० दुखना उ०समुहनी प० श्रेणीए करी ॥ न० न लि० लिपाय न खरडाय भ० संसार म० मांहि वि० पण सं० छतो ॥ ज० जेम पाणीए करीने वा० वळी॥ पो० कमलनुं प० पानडुं न लिपाय तेम विरक्त मनुष्य न लिपाय ॥ ८६ ॥

मूलः–फासे विरत्तो मणुओ विसोगो एएण दुक्खोहपरंपरेण ।
न लिप्पए भवमज्झे वि सन्तो जलेण वा पोक्खरिणीपलासं ॥ ८६ ॥

गाथा ८६ भावार्थः–मनोज्ञ स्पर्शने विषे विरक्त मनुष्य शोक रहीत थाय अने पुर्वे कही ते दुःखना समुहनी श्रेणीए करी संसार मांहो रहेतो थको पण पाणीमांही कमळना पत्रनी पेरे न लेपाय, (ए पांचमी स्पर्शेंद्रीनुं ध्यान १३ काव्ये करीने कयुं ॥ ८६ ॥

अर्थः–हवे मनना तेर काव्य कहे छे ॥ म० मनने भा० जीवनुं परिणाम ग० ग्रहवा योग्य छे । व० एम तिर्थंकर कहे तं० ते रा०रागना हे०हेतु छे तु०वळी म०मनोज्ञ भाव छे आ० एम कहे तिर्थंकर तं०ते भाव दो० द्वेषनुं हे० हेतु छे अ० ने अमनोज्ञ भाव छे आ० एम कहे तिर्थंकर ॥ स० समोहरणीए आव रागद्वेषरहित

मूलः—जे यावि दोसं समुवेइ तिव्वं तंसि क्खणे से उ उवेइ दुक्खं ।
दुइन्तदोसेण सएण जन्तू न किंचि सम्मं अवरज्झइ से ॥ ७७ ॥

गाथा ७७ भावार्थः—जे कोइ अमनोज्ञ स्पर्शने विषे तिव्र द्वेष पामे, ते जीव अवसरने विषे दुःख पामे, दमतां दोहिला एवा द्वेषना दुष्ट दोषे करी ते जीव पोताज दुःखी थाय छे, पण ते जीवने स्पर्श किंचित् मात्र अपराध नथी करतो ॥ ७७ ॥

अर्थः—ए० एणी ए० अवसरे जे जीव । क० दुःखा या० यावत्कादिक करवाने विषे ॥ अ० अरिसो बीजो कोइ पुंडो फरसने नहि ते० ते जीव कृ० करी । प० पत्तो द्वेषभाव ॥ दु० दुष्ट संबंधीया सं० पीडा उ० पणि या० यावत् अज्ञानि । न० न हि० विषय न पण्डित ते० तेने विषय संबंधी करवो करी सु० सारु हि० मन गहिव संग ते ॥७८॥

मूलः—एगन्तरत्ते रुइरंसि फासे अतालिसे से कुणई पओसं ।
दुक्खस्स संपीलमुवेइ बाले न लिप्पई तेण मुणी विरागो ॥ ७८ ॥

गाथा ७८ भावार्थः—जे एकांत मनोज्ञ स्पर्शने विषे रक्त छे, ते जीव अमनोज्ञ स्पर्शने विषे द्वेष पामे, ते अज्ञानी दुःख संबंधी पीडा पामे, एम ज्ञानीने द्वेष न होवे करी वीतरागी मुनी न लेपाय ॥ ७८ ॥

अर्थः—ए० एणी ए० अवसरे जे० जेहने एगं० एकांत रत्तो० रक्तपणा आवतां रु० रुची जी० जीव ॥ ए० एम जीव अने अ० अमनोज्ञ जीव हि० हीन अ० पणा आवतां जीवने । हि० पण अतालिसा एवो फरीने ते० ते फरस योगवतो एवो जीवने प० पद जीवने दुः दुःखने का० आपनो आश्रीने ॥ पी० पर जीवने

क०हाथणी कागलनी ढुंढी ते म०मार्गने विषे। अ०अपहर्युं ते मार्गने विषे चाल्यो व०जेम ना०नाग केहेता हाथी॥८९॥

मूलः—भावेसु जो गिद्धिमुवेइ तिव्वं अकालियं पावइ से विणासं।
रागाउरे कामगुणेसु गिद्धे करेणुमग्गावहिए व नागे ॥ ८९॥

गाथा ८९ भावार्थः—जे रूप प्रमुख देखीने काम भोगने विषे लुब्ध रागथी पीडयो थको कागलनी हाथणी खाडानी ऊपर होय तीहां हाथी तेने मळवानी आशाए चालतो ते खाडामां पडे अथवा ते मार्गने विषे पकडायो थको ते हाथी दुःखी थाय, तेम जे कोइ भावने विषे तिव्र मुर्छावंत होय, ते जीव अकाळे मर्ण पामे ॥ ८९ ॥

अर्थः—जे० जे कोइ य० वळी अ०पण॥ दो० पाडुओ भाव जाणीने द्वेषभाव॥ स० पामे ति०तिव्र॥ तं० ते भाव प्रवर्तवाना॥ स० अवसरने विषे से० ते जीव उ० वळी उ० पामे दु० दुख॥ दु० दुर्दंत दो० दोषकरी स० आपणे क्षीबे जं० जीव॥ न० न किं० थोडुं भा० परिणामे करी जे चिंतव्या पदार्थ ते भाव अ० अपराध करतो नथी से० ते जीवने॥ ९०॥

मूलः—जे यावि दोसं समुवेइ तिव्वं तंसि क्खणे से उ उवेइ दुक्खं।
दुद्दन्तदोसेण सएण जन्तू न किंचि भावं अवरुज्झई से॥ ९०॥

गाथा ९० भावार्थः—जे कोइ अमनोज्ञ भाव देखीने तिव्र द्वेष पामे, ते जीव ते अवसरने विषे दुःख पामे, वळी दमतां दोहीलां एवा द्वेषरूप दुर्दांत दोषे करी ते जीव पोतेज दुःखी थाय छे पण ते जीवने भाव

परीग्रह सम्यक प्रकारे पोताने अने पारकाने अर्थे आरंभ प्रयोजन थकी उपार्जे, पछी तेनुं चोरारीकर्मी रक्षण करवाने विषे मरतो, रौद्रध्यान ते मनोज्ञ स्त्रीनो परिग्रह [illegible] ते मनोज्ञ स्त्री भोगववाना अवसरने विषे ते जीवने [illegible] नुगदोष, (अर्थात न न होय) ॥ ८० ॥

अर्थः-फा० रक्षा करवाने विषे अ० असंतोषीने ग० थकी प० रक्षा करवाना परिग्रह मेळववाने विषे य० थकी रा० मात्सर्य उ० अत्यंत मात्सर्य थकी लो० न उ० पामे तु० संतोष ॥ अ० असंतोषीने दो० दोषे करी दु० ते जीव दुखी होय ॥ प० पारका रक्षा करण हेतीन । लो० लोभे करी आ० मेल्यो दुष्ट चित्त थको आ० लीए ॥ अ० रक्षा सुरक्षा अजरिया अत्त ॥ ८१ ॥

मूलः—कोवे अतित्ते य परिग्गहे य सत्तोवमत्तो न उवेइ तुट्ठिं ।
अतुट्ठिदोसेण दुही परस्स लोभाविले आययई अदत्तं ॥ ८१ ॥

गाथा ८१ भावार्थः-मनोज्ञ स्त्रीने विषे असंतोषी थको मनोज्ञ स्त्री रूप परीग्रहने विषे लुब्ध तथा अत्यंत लुब्धपंत ते संतोष न पामे, पछी रक्षा करवा लोभे करी जेनुं चित्त मेलुं थयेल छे ते जीव असंतोषने दोषे करी पारका रक्षा करवा हेतीने तेहनी चोरी करे ॥ ८१ ॥

अर्थः-त० लोभे करी अ० पराभव्यो होय तेणे । प० पारका रक्षा करवानी चोरीना करणहारने फा० रक्षा करवाने विषे अ० असंतोषी मुसाना रक्षा करवाने प० परिग्रह मेळववाने विषे असंतोषीने य० थकी । मा०माया सहित मु० मृषावादनुं बोलवुं न० थाये अथवा मृषा बोलवाने विषे प्रवर्ते ॥ लो० लोभना दो० दोष-

गाथा ९२ भावार्थः–जेहने मनोज्ञ भाव मेळववा रुप पोताना आत्मानोज अर्थ मोटो छे, ते मनोज्ञ रागने परीणामे पीडयो थको मनोज्ञ भोंवनी केडे प्रवर्तें, ते मनोज्ञ भावनी आशाए प्रवर्ततो मनोज्ञ भाव मेळववाने माटे ते अज्ञानी जीव घणा त्रसने स्थावर जीवने हणे अने घणा प्रकारना शस्त्रे करी पर जीवने पीडा ऊपजावे ॥ ९२ ॥

अर्थः–भा०रुडा उत्तम रुध्यादिकने रांगे वा०करी ॥ प०रडा भावने ग्रहण करवाने मुर्छा उपजे तेणेकरी ॥ उ० नवा भाव उपरानवाने विषे ॥ र० चोरादिकना भयथी राखवाने विषे ॥ सं० रुडा भाव भोग आवव-वापणे प्रवर्तवे करीने ॥ व०रुडा भावनो विनाश होय वि०रुडा भावनो वियोग होवे थके य०वळी॥ क० किहां थकी सुं० सुख से० ते जीवने ॥ सं० रुडा भाव भोग आववाना का० कालने विषे य० वळी अ० असंतोष हुए किहां थकी सुख होय ॥ ९३ ॥

मूलः–भावाणुवाएण परिग्गहेण उप्पायणे रक्खण सन्निओगे ।
वए विओगे य कहं सुहं से संभोगकाले य अतित्तलाभे ॥ ९३ ॥

गाथा ९३ भावार्थः–मनोज्ञ भावने रागे करी मनोज्ञ भावने ग्रहण करवानी मुर्छाथी मनोज्ञ भावरुप परीग्रह सम्यक प्रकारे पोताने अने पारकाने अर्थे आववाना प्रयोजन माटे ऊपार्जे ? पछी तेनुं चोरादीकथी रक्षण करवाने विषे प्रवर्ते कदाचित ते मनोज्ञ भावनो विनाश अथवा वियोग थए थके ते मनोज्ञ भाव भोगववाना अवसरने विषे ते जीवने किहां थकी

गाथा ९५ भावार्थः–मनोज्ञ भावनो परीग्रह मेळववाने विषे असंतोषी जीव तृष्णाए पराभव्यो थको मनोज्ञ भाववाळी वस्तुनी चोरीनो करनार तेहने कोइ पुछे के अमुक मनोज्ञ भावनी वस्तु तमे लीधी छे ! ने वारे कपट सहीत जुठुं बोले, तेमज पछी जुठुं बोलवाथी ते जीव ते दुःखथी न मुंकाय ॥ ९५ ॥

अर्थः–मो० मृषावाद बोल्या प० पश्चाताप करे य०वळी पु०पहेलुंपण एवी चिंताकरे ए भागल मृषा केम बोलशुं । एहने केम वंचशुं य०वळी । प०मृषा बोलवाने का०अवसरे ते एम जाणे रखे कोइ मुजने जुठाबोल्यो जाणे ते भणी य०वळी । दु०दुषी होय । दु०जे दुषनो अ०अंत दोहिलो पामे । ए०एणीपरे अ०अदत्त न०लेनो थको भा० भावने विषे अ० असंतोषी थको दु० दुषी होय ॥ अ० अन्याय माटे तेहनुं कोइ उपराणुं न करे ॥ ९६ ॥

मूलः–मोसस्स पच्छा य पुरत्थओ य पओगकाले य दुही दुरन्ते ।
एवं अदत्ताणि समाययन्तो भावे अतित्तो दुहिओ अणिस्सो ॥ ९६ ॥

गाथा ९६ भावार्थः–जुठुं बोल्या पछी पश्चाताप करे, तेमज पहेलो पण एवी चिंता करेके ए रुडा भाववाळी वस्तुना धणी आगळ जुठुं केवी रीते बोलुं? तथा एहने केवीरीते छेतरुं, वळी जुठुं बोलवाना अवसरे एम जाणेके रखे ? कोइ मने जुठुं बोलो जाणे, एवीरीते मनोज्ञ भाववाळी वस्तु अण दीधेली लेनार असंतोषी जीव दुखीयो होय, पछी ते दुःखनो अंत दोहीलो पामे अने एवा चोरीना करनार अन्यायनो कोइ सखाइयो न थाय ॥ ९६ ॥

होय ग०कही॥ जो० जे कोइ दे० ते मन्ना पाडुआ भावनेविषे स० ते वी० वीतराग कहिए ॥ ८७ ॥

मूलः—मणस्स भावं गहणं वयन्ति तं रागहेउं तु मणुन्नमाहु ।
तं दोसहेउं अमणुन्नमाहु समो य जो तेसु स वीयरागो ॥ ८७ ॥

गाथा ८७ भावार्थः—इहें मननी १२ काव्य कहे छे, मनने भाव (आज्ञा) ग्रहवा योग्य छे, ते मांही जे मनोज्ञ भाव छे, ते रागनो हेतु छे अने अमनोज्ञ भाव छे, ते द्वेषनो हेतु छे तेथी जे मनोज्ञ अमनोज्ञ ए बेंने भावने विषे राग द्वेष न करे, तेहज वीतराग जाणवा, एम तिर्थंकरे कहेल छे ॥ ८७ ॥

अर्थः—म० मन ने भा० भावने ॥ ग० ग्रहवा योग्य छे ॥ व० एम कहे तिर्थंकर ॥ भा० भावने म० मनने ग० ग्रहणहार ॥ व० एम कहे तिर्थंकर देव ॥ रा० रागनो हे० हेतु छे स० जे मनोज्ञ भाव छे॥ आ० एम कहे तिर्थंकर ॥ दो० द्वेषनो हे० हेतु छे ॥ अ० जे अमनोज्ञ भाव छे ते ॥ आ० एम कहे तिर्थंकर ॥८८॥

मूलः—भावस्स मणं गहणं वयन्ति मणस्स भावं गहणं वयन्ति ।
रागस्स हेउं समणुन्नमाहु दोसस्स हेउं अमणुन्नमाहु ॥ ८८ ॥

गाथा ८८ भावार्थः—भावने मन ग्रहणहार छे अने मनने भाव ग्रहवा योग्य छे ते मांही जे मनोज्ञ भाव छे, ते रागनो हेतु छे अने जे अमनोज्ञ भाव छे, ते द्वेषनो हेतु छे, एम तिर्थंकरे कहेल छे ॥ ८८ ॥

अर्थः—भा० भावने विषे जो० जे कोइ णि० एकांते उ० पामे नि०नित्र ॥ अ० अकाले पा०पामे से० ते वीर ॥ वि०मरणने ॥ रा०रागेकरी आ० पीडयो का०ए बहुल द्वेषने वशमोगने विषे णि०एह थको ॥

लोकने विषे दुःखकारी होय ॥ ९८ ॥

अर्थः—भा० भावने विषे वि० राग रहित थको म० मनुष्य वि० शोक रहित थको ॥ ए० ए पूर्वे कह्या ते । दु०दुषना उ०समोहनी प०श्रेणीए करी । न०न लि०लिपाय न पण्डाय सं०संसार म०माहे लि०पण सं० छतो । ज० जेम पाणीए वा०करीने पो० कमलनुं प०पानदं लिपाय नहि तेम विरक्त मनुष्य लिपाय नहि ॥९९॥

मूलः—भावे विरत्तो मणुओ विमोगो एएण दुक्खोहपरंपरेण ।
न लिप्पए भवमज्झे वि सन्तो जलेण वा पोक्खरिणीपलासं ॥ ९९ ॥

गाथा ९९ भावार्थः—मनोज्ञ भाववाळी वस्तुने विषे विरक्त मनुष्य शोक रहित थाय अमे पूर्वे कही ते दुःखना समुहनी श्रेणीए करी संसारमांही रहेतो थको पण पाणीमांही कमलना पत्रनी पेरे न लेपाय, (मनना भाव ऊपर तेर काव्य कही) ॥ ९९ ॥

अर्थः—ए० एणीपरे पांच इंद्रि छठो मन एहनो अधिकार पूरो थयो । दु० पांचे इंद्रियना अ० अर्थ जे पुरुष । सद्द १ । रूप । २ । गंध । ३ रस ४ । फरस ५ । अ० अने जे संकल्प विकल्पना हेतु ते ते ब० बली । म० मनना । दु० दुषना हे० हेतुछे । म० मनुष्यने केहेवा मनुष्यने । रा० राग द्वेषिया पदुषने । ते० तेइंद्रियादिकना अर्थ चे० पुरणे थो० थोडाए पण वि० अर्थ क० विकारे पण दु० दुषने वीतरागने किं० थोडुंए दु० दुषने क० करे ॥ १०० ॥

मूलः—एविन्दियत्था य मणस्स अत्था दुक्खस्स हेउं मणुयस्स रागिणो ।

किंचित मात्र अपराध नथी करतो ? ॥ ९० ॥

अर्थः-ए० यजुं र० रक्त छे जे जीवने रु० रुडा भा० भावने विषे ॥ अ०ए सरिखो बीजो कोइ भुंडो भाव छे नहि ॥ से० ते जीव कु० करी प० एवो द्वेषभाव ॥ दु० दुख संबंधीनी सं० पीडा उ० पामे बा० बाल अज्ञानी अविवेकी ॥ न० न लि०लिपाय न खरडाय ते० तेणे रागद्वेष रूपीया कचरे करी मु० जे साधु वि० रागरहित होय ते न लिपाय ॥ ९१ ॥

मूलः-एगन्तरत्ते रुइरंसि भावे अतालिसे से कुणई पओसं ।
दुक्खस्स संपीलमुवेइ बाले न लिप्पई तेण मुणी विरागो ॥ ९१ ॥

गाथा ९१ भावार्थः-जे एकांत मनोज्ञ भावने विषे रक्त छे ते जीव अमनोज्ञ भावने विषे द्वेष भाव करे ते अज्ञानी दुःख संबंधीनी पीडा पामे, एम जाणी द्वेषरूप कचरे करी वीतराग मुनी न लेपाय ॥ ९१ ॥

अर्थः-भा० भावकेरे विषे ॥ अ०रुडा भावनी आ०आज्ञाए ग०वर्तें ग०वळी जी० जीव ॥ च०त्रस जीव अने अ० थावर जीवने हिं०हणे अ० घणां प्रकारना जीवने ॥ वि०घणा प्रकारने शस्त्रेकरी ते०ते भावनो अर्थि जीव ॥ प०परजीवने दुख उपजावे बा०अज्ञानी ॥ पी०परजीवने पीडा उपजावे अ०आपणा आत्मानो अ० अर्थ जे गु०मोटो जाणे ते परजीवने पीडा उपजावे कि०क्लिेस सहित रागादिकने परिणामे करी पीडयोथको॥९२॥

मूलः-भावाणुगासाणुगए य जीवे चराचरे हिंसइ णेगरूवे ।
चित्तेहि ते परितावेइ बाले पीलेइ अत्तट्ठगुरू किलिट्ठे ॥ ९२ ॥

द० दुगुंछा ने० अरतीने ६ र० रतिने ७ । च० चक्षी । हा० हासने ८ भ० भयने ९ सो० शोकनो
१० पु० पुरुषनो वेद विकार ॥ ११ ॥ इ० स्त्रीना वेद विकारने १२ ॥ न० नपुंसकना वेद विकारने १३ ।
ए० विविध प्रकारनो ष० हर्ष विषवादिकने १४ । ए १४ ने मोहना विकारथी पामे॥ १०२ ॥

॥ ३२ ॥

मूलः—कोहं च माणं च तहेव मायं लोहं दुगुच्छं अरइं रइं च ।
हासं भयं सोगपुमित्थिवेयं नपुंसवेयं विविहे य भावे ॥ १०२ ॥

छाया १०२ भावार्थः—वली मोहनी कर्म थकी जीव १४ बोल पामे छे, ते कहे छे, १ क्रोध, २ मान,
३ माया, ४ लोभ, ५ दुगुंछा, ६ अरती, ७ रती, ८ हांसी, ९ भय, १० शोक, ११ पुरुष वेदनो उदय,
१२ स्त्री वेदनो उदय, १३ नपुंसक वेदनो उदय, १४ तेमज विविध प्रकारना हर्ष विषवादादीक ॥ १०२ ॥

अथ - अ० एम० ए० एपूर्वोक्त राग द्वेष तेथकीने विकारकारि अ० अनेक प्रकारना दुष पामे कोणपामे ॥ ए०
एटला पदार्थना दुष पामे का० काम गुणने विषे म० आसक्त होयते य० वली ए० ए राग द्वेषादिकथी ष्प०
अनना अ० अजा. जीवा । वि० दुर्गति पोहचाडे एहवा व्यसनादिक विशेषे ते पामे ते आसक्त केहेवो होय ॥ का०
कामगुणो उपरि.जे ॥ दा० दित होय॥ ह० लजामणो होय॥ व० नेहने देखीने द्वेष उपजे एहवो होय॥१०३॥

मूलः—आवज्जई एवमणेगरूवे एवंविहे कामगुणेसु मत्तो ।
भेत्र य एयप्पभवे विसेसे कारुण्णदीणे हरिमे वइस्से ॥ १०३ ॥

छाया १०३ भावार्थः—ते काम भोगने विषे आसक्त होय, ते पूर्वोक्त राग द्वेषने विकारे करी एहवा

॥ ४०८ ॥

अर्थः-भा० रुडा भावने विषे अ० असंतोषी थको य०वली प०रुडी वस्तुनुं परिग्रह मेलवाने विषे ॥ य०वली स०आसक्त उ०अत्यंत आसक्त थको जीव न०न उ०पामे तु० संतोष ॥ अ०असंतोषने दो०दोषेकरी दु० ते जीव दुखी होय प० पारका भोगने देखीने ॥ लो० लोभे करी आ० मेल्यो दुष्ट चित्त थको ॥ भा० लीए अ० अदत्त अण दीधो ॥ ९४ ॥

मूलः-भावे अतित्ते य परिग्गहे य सत्तोवसत्तो न उवेइ तुट्ठिं ।
अतुट्ठिदोसेण दुही परस्स लोभाविले आययई अदत्तं ॥ ९४ ॥

गाथा ९४ भावार्थः-मनोज्ञ भावने विषे असंतोषी थको मनोज्ञ भाव रूप परीग्रहने विषे मुख्य तथा अत्यंत मुख्यपणे ते संतोष न पामे, वली मनोज्ञ भावना लोभे करी जेहनुं चित्त मेलुं थयेलछे ते जीव असंतोषने दोषेकरी रुडा भाववाळी वस्तु देखीने तेनी चोरी करे ॥ ९४ ॥

अर्थः-त० लोभे करी अ० पराभव्यो होय तेहने । अ० चोरीना करणहारने । भा०भावने विषे अ० असंतोषीने प०परिग्रह मेलववानेविषे असंतोषीने य०वली मा०माया सहित मृ०मृषावादनुं बोलवुं प०पाछे अपरा बोलवाने विषे मर्कटे । लो० लोभना दो०दोषथकी लोभी चोरी करे पछे कोइ पुछे तो माया सहित मृषा बोले । स० तिहां अ०पण मृषावाद बोले छते । दु०दुखथकी न० न वि०मुकाय से० ते चोरीनो करणहार जीव ॥९५॥

मूलः-तण्हाभिभूयस्स अदत्तहारिणो भावे अतित्तस्स परिग्गहे य ।
मायामुसं वड्ढइ लोभदोसा तत्थावि दुक्खा न विमुच्चई से ॥ ९५ ॥

सुखनो ए० गवेषी ॥ दु० दुख वि० टाळवाने अ० अर्थे त० ते हिंसादिकने अर्थे टाळवा ॥ ते हिंसादिकने निमित्ते ॥ उ० उद्यमवंत होय य० वळी ॥ रा० रागद्वेष पक्षो ॥ १०५ ॥

मूलः—तओ से जायन्ति पओयणाइं निमज्जिउं मोहमहण्णवम्मि ।
सुहेसिणो दुक्खविणोयणट्ठा तप्पच्चयं उज्जमए य रागी ॥ १०५ ॥

गाथा १०५ भावार्थः—ते इंद्रीयारुपी चोरने वसे पडया पछी तेहने विषय सेववाने माटे हिंसादीक करवाहुं प्रयोजन ऊपजें, तेमज मोहरुपी मोटा समुद्रने विषे पोताना आत्माने बुडाडवा, संसारना सुखनो गवेषी दुःख टाळवाने अर्थे राग द्वेषथी हिंसादीक निमित्तने विषे ऊद्यमवंत थाय ॥ १०५ ॥

अर्थः—वि० विषयथी निवर्त्या जीवने य० वळी इं० नेटला प्रकारना इंद्रियना अ० अर्थ स० शब्दादिक ता० तेटला प्र० प्रकारना न० न त० ते स० सर्वे नि० पण म० रुडा शब्दादिकने विषे रागपणाने वा० अथवा नि० निपजावे नहि ज० शुंढा शब्दादिकने विषे द्वेषपणाने वा० पण ॥ १०६ ॥

मूलः—विरज्जमाणस्स य इन्दियत्था सद्दाइया तावइयप्पगारा ।
न तस्स सव्वे वि मणुन्नयं वा निवत्तयन्ती अमणुन्नयं वा ॥ १०६ ॥

गाथा १०६ भावार्थः—जे विषयथी विरक्त थाय, ते नेटला प्र
सर्व रुडा शब्दादीकने विषे रागपणुं अने शुंढा शब्दादीक
अर्थः—प्र० पणे प्रकारे जाणवा

वर्णी कर्मने क्षय करे, वली जे कर्म अंतरायने करे, तेवुं अंतराय कर्म क्षय करे ॥ १०८ ॥

अर्थः-स० सर्व पदार्थने ॥ त०तेवार पछेजा०जाणे पा० देखे य०वली ॥ अ०मोहनीय कर्मरहित हो० होय ॥ नि० अंतराय कर्मरहित थको ॥ अ० आश्रवरहित छे झा०सकल ध्याने करी अने स० समाधिए करी जु० सहित थको आ० आउखाने स० क्षय छते मो०मोक्षने उ०पामे मु०आठ कर्म रहित निर्मल थको ॥१०९॥

मूलः-सव्वं तओ जाणइ पासए य अमोहणे होइ निरन्तराए।
अणासवे झाणसमाहिजुत्ते आउक्खए मोक्खमुवेइ सुद्धे ॥ १०९ ॥

गाथा १०९ भावार्थः-मोहनीने अंतराय कर्मने आश्रय रहीत थको तेवार पछी सर्व पदार्थ जाणे देखे ने शुक्ल ध्याने ने समाधीएकरी सहीत थको आयुष्य क्षय थए थके आठ कर्म रहीत निर्मळ थको मोक्षने पामे ॥१०९॥

अर्थः-सो० ते मोक्षनो पामणहार जीव। त० ते स० सर्व दु० दुखथी मु० मुकाणो जं० जे दुख वा० पीडा उपजावे छे एहवा दुखथी मुकाणो वली केहवो छे ॥ स० निरंतर जं० जीवने ए० ए प्रत्यक्ष दी० लांबी स्थितिना कर्म रुप आ० रोग तेह वि० विशेषे ते मु०मुकाणा छे प० प्रशंसा करवायोग्य छे ॥ तो० तेवार पछी हो० होय अ० अत्यंत पणुं सु०सुखी सिद्ध थाय क० कीधा सर्व कार्य जेणे ॥ ११० ॥

मूलः-सो तस्स सव्वस्स दुहस्स मुक्को जं बाहई सययं जन्तुमेयं।
दीहामयं विप्पमुक्को पसत्थो तो होइ अच्चन्तसुही कयत्थो ॥ ११० ॥

गाथा ११० भावार्थः-जे लांबी स्थितिना कर्म रुप रोगथी तेमज जे ए प्रत्यक्ष निरंतर जीवने दुःख

तं चेव थोवं पि कयाइ दुक्खं न वीयरागस्स करेन्ति किंचि ॥ १०० ॥

गाथा १०० भावार्थः-इंद्रीयोना अर्थ, शब्द, रुप, गंध, रस, स्पर्श छे अने मनना अर्थ, जे विषय स्मरण रुप ते जीव एहना रागने द्वेषने विषे मर्ने, तेहने दुःखनो हेतु थाय, पण इंद्रीना ने मनना अर्थ जे वीतराग छे, तेहने केवारे थोडुंए पण दुःख न करे ॥ १०० ॥

अर्थः-न० न का० कामभोग जे स० समता भावने उ०पामे । न० न य०अने अ०पण भो०कामभोग वि० विकार उ० उपजावे तो कोण उपजावे जे० जे जीव त० ते पाडूआ शब्दादिक उपरे रा० द्वेषी य० पुनः प०रुडा शब्दादिक उपर रागी य० पुरुष सो० ते द्वेषि रागी जीव ते० ते पांच इंद्रियादिकना विषयने विषे मो० रागद्वेष रुप मोह थकी वि० विकारने उ० पामे ॥ १०१ ॥

मूलः-न कामभोगा समयं उवेन्ति न यावि भोगा विगइं उवेन्ति ।
जे तप्पओसी य परिग्गही य सो तेसु मोहा विगइं उवेइ ॥ १०१ ॥

गाथा १०१ भावार्थः-काम भोग भोगवता राग द्वेष रहीतपणुं जीव न पामे, तेमज संतोष पण आवे नहि, वळी काम भोग विषय विकारने ऊपजावता नथी (अर्थात पांच इंद्रीयोने मनवछेयीज विषयनी ऊत्पती थाय छे) अने राग द्वेष सहीत होय, ते जीव भुंडा काम भोग ऊपर द्वेष करे अने रुडा काम भोग ऊपर राग धरीने ग्रहण करे, ते राग द्वेष सहीत जीव पाच इंद्रीयोना विषय विकार मोहनी कर्म थकी पामेछे ॥१०१॥

अर्थः-को० क्रोधने १ । च० वली मा० मानने २ च० वळी त० तेमज मा० मायाने ३ ॥ लो० लोभने ४

मूलः–अट्ठ कम्माइं वोच्छामि आणुपुव्वि जहाक्कमं ।
जेहिं बद्धो अयं जीवो संसारे परिवट्टई ॥ १ ॥

गाथा १ भावार्थः–सुधर्मा स्वामी कहेता हवा हे जंबू? जे कर्मना बंधणे करी बंधाएलो जीव ए संसारने विषे भमे छे, ते आठ कर्म हुं अनुक्रमे कहीश, ते तुं सांभळ ? ॥ १ ॥

॥ ४११ ॥

॥ ३३ ॥

अर्थः–हवे आठ कर्मना नाम कहेछे ना०ज्ञानने आ०आवरी जेम सुर्यनी कांतिने वादल ढांके तेम ज्ञानावरणी कर्म ।१। दं० दरशन केहेता देखवो जेहने । आ० आवरे ढांके त० तेम ते दर्शनावरणी कर्मने पोलीयानी उपमा तथा जेम पाटो वांध्यो तेम २ । वे० वेदनी कर्मने मधु खरडया खडगनी उपमाए३ । न०तेम मो० मोहनी कर्मने मद्य पीधानी उपमा ४ । आ० आउखा क०कर्मने हेडीनी उपमा ५ । ना० नेमहिज ग०वळी ॥२॥

मूलः–नाणस्सावरणिज्जं दंसणावरणं तहा ।
वेयणिज्जं तहा मोहं आउकम्मं तहेव य ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः–हवे आठ कर्मनां नाम कहे छे, १ ज्ञानावर्णी कर्म, ते जेम सुर्यनी कांतिने वादळां ढांके तेम ज्ञानने आछादं (ढांके) ए ज्ञानावर्णी कर्मे अनंत ज्ञाने गुण रोक्यो छे, २ दर्शनावर्णी कर्म, दर्शन एटले देखवुं तेहने ढांके ते दर्शनावर्णी कर्म राजाना पोळीया समान छे, तेणे अनंत दर्शन गुण रोक्यो छे, ३ वेदनी कर्म ते मध तथा अफीण खरडया खडग समान तेणे अनंत अव्याबाध आत्मीक सुख गुण रोक्यो छे, ४ मोहनी [illegible] पीधानी ओपमाए करीछे, तेणे क्षायक समकी[illegible] ५ आउष्य

॥ ४१२ ॥

यना प्रकारना दुःख पामे, तेमज वली विषय थकी क्रोधादिक न थकी दुरगति पडवा रूप दुःख ऊत्पन थाय, ते दुःख ने जीव पामे, वली विषयि जीव दयामणो (ओसीयाळो) देखाय, तेमज दीन (गरीब) पणुं पामे अने अकार्य करीने लोकोमां लजावुं पडे ने सर्व लोकने अप्रतिकारी होय ने तेहने देखीने द्वेष भाव ऊपजे ॥१०३॥

अर्थः-क०आचारने ॥ न०न ई०वांछे ॥ म०शिष्यादिने ॥ नि०वांछनीय को एटले सेवा करावना शिष्यने वांछे पण आचार पाळवो न वांछे ॥ प०चारित्र लेई नव किया पछे ॥ अ०खरेखरो खेद पामतो छतो तथा ॥ पश्चाताप करे करी ॥ न०नाश्यो अ० अभाव ने कर्ये निर्जरा तेह न वांछे ॥ ए०एहवा प्रकारना वि०विकारने ॥ अ०अविय अणाणरहित तेहने प०तेहवा एवा विकारने ॥ आ०पामे इ०इंद्रिय रूपिया चो०चोरने व०वसे पडयोपक्को॥१०४॥

मूलः-कयं न इच्छिज्ज सहायलिच्छू पच्छाणुतावेण तवणभावं ।
एवं विआरे अमियप्पयारे आवज्जई इन्दियचोरवस्से ॥ १०४ ॥

गाथा १०४ भावार्थः-पोताने सेवा करावने पारे शिष्यने इच्छे, पण आचार पाळवो न इच्छे, चारित्र लइने नव कर्यां पछी खोखर खेद पामतो छतो पश्चाताप करे, नव करवो न वांछे, पण तपना प्रभाव कर्मने निर्जराने नही जोइए तथा नवमा चक्रवर्तीऋद्धिनी पण तथा आमोसही प्रमुख लब्धी वांछे, एवी पेरे अपार रहित तेहना भेद ते एहवा विकारने ने जीव इंद्रीयोरूपी चोरने वसे पडयो थको पामे ॥ १०४ ॥

अर्थः-प० इंद्रिये वश पड्या पछे से० तेहने आ० उपजे प० इंद्रियादिक प्रयोजन विषय सेववाना ॥ नि० धुडावाने वांछे पोताना आत्माने मो० मोहगर्भित प० मोटा अ० समुद्रने विषे ॥ सु० संसारना

ज्ञानावर्णी, २ श्रुत ज्ञानावर्णी, ३ अवधिज्ञानावर्णी, ४ मन पर्यव ज्ञानावर्णी, ५ केवल ज्ञानावर्णी एपांच हवे ज्ञानावर्णी कर्म छ प्रकारे बांधे ते १ ज्ञानीनुं भुंडुं बोले, २ ज्ञानीनो उपकार ओळवे, ३ ज्ञाननी तथा ज्ञानीनी आसातना करे, ४ ज्ञाननी अंतराय पाडे, ५ ज्ञानी उपर तथा ज्ञानपर द्वेषकरे, ६ ज्ञानी साथे खोटा झगडा विवादकरे, ए छ प्रकारे बांधे ते पुर्वोक्त पांच प्रकारे भोगवे ॥ ४ ॥

अर्थः–नि० सुखे जागे ते निंद्रा १ ॥ त०तेमज प०ऊभा वेठा निंद्रा आवे ते प्रचला २ ॥ नि०दुखे जागे जगाडे ते निद्रानिद्रा ३। प०वाटे चालतां निद्रा आवे ते प्रचला प्रचला ४ य०वली ॥ त० तेवार पछी य० वली थी०च्यारथी अधिकी निद्रा होय ते थीणगिद्धी निद्रा उ०वली। प०पांच प्रकारनी निद्रा हो०होय ना०जाणवी॥५॥

मूलः–निद्दा तहेव पयला निद्दानिद्दा पयलपयला य।
तत्तो य थीणगिद्धी उ पञ्चमा होइ नायवा ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः–२ दर्शनावर्णी कर्म ते नव प्रकारे, १ निंद्रा ते सुखे जागे, २ निंद्रा निंद्रा ते दुःखे जागे, ३ प्रचला ते ऊभा वेठा निंद्रा आवे, ४ प्रचला प्रचलाते रस्ते चालतां निंद्रा आवे, ५ पांचमी थीणगधी निंद्रा ते पुर्वोक्त चारथी अधीकी होय तथा ते निंद्रावस्थाए अर्ध वासुदेवनुं बळ होय ते ॥ ५ ॥

अर्थः–च० चक्षुने देखवानुं आवरण ते चक्षुदर्शनावरणी ६ ॥ अ० कानेकरी शब्द सांभळवाथी जाणे एम बीजी इंद्रिये करी जाणवुं ते आवरण होय ते अचक्षुदर्शनावरणी ७। ओ० अवधिज्ञाने करी देखवुं आवरण होय ते अवधि दरसनावरणी ८॥ दं०दरसन देखवुं के०केवलज्ञाने देखवानुं य०वली आ०आवरी होय ते

॥ सुं० सम्यक प्रकारे ॥ सं० सावधान छे मुंडा अध्यवसाय छांडि भला अध्यवसाय प्रवर्ते ते पुरुषने स० समताएणुं उ० उपजे अ० ते समताथकी वली ॥ अ० जीवादिक पदार्थने ॥ चिं० चिंतवता ॥ त० ते से० ते पुरुषने ॥ प० दिन पामे का० कामगुणने विषे ॥ त० तृष्णा हीणी पाडे ॥ १०७ ॥

मूलः—एवं ससंकप्पविकप्पणासुं संजायई समयमुवट्ठियस्स ।
अत्थे असंकप्पयओ तओ से पहीयए कामगुणेसु तण्हा ॥ १०७ ॥

गाथा १०७ भावार्थः—एवी रीते ज्ञान बुद्धीए करी पोताना अध्यवसायनी विचारणाने विषे सावधान छे ते मुंडा अध्यवसाय छांडीने भला अध्यवसाए प्रवर्ते, ते पुरुषने समताएणुं उपजे, वली जीवादीक पदार्थने चिंतवतां ते समताए करी ते पुरुष काम भोगनी तृष्णा हीणी पाडे ॥ १०७ ॥

अर्थः—त० ते तृष्णानो खपावणहार वी०वीतराग थाय क०कीधाछे स०सर्व कि०कार्य जेणे ख०खपावीने ना० ज्ञानावरणी कर्मने ख० क्षणमात्र मांहे ग० तेमहिज जं० जे कर्म चक्षु दं०दर्शनादिक ॥ आ०आवरेछे एटले दर्शनावरणी कर्मने ॥ जं०जे कर्म त०वली अं० अंतरायने प०करेछे ए॥ क०एहवा अंतराय कर्मने खपावे॥१०८॥

मूलः—स वीयरागो कयसव्वकिच्चो खवेइ नाणावरणं खणेणं ।
तहेव जं दंसणमावरेइ जं चन्तरायं पकरेइ कम्मं ॥ १०८ ॥

गाथा १०८ भावार्थः—ते तृष्णानो खपावणहार वीतराग थाय, जेणे सर्व सिद्धीरूप कार्य करेल छे, ते जीव क्षीण मात्र मांही ज्ञानावणी कर्म क्षय करे, तेमज जे कर्म चक्षुदर्शनादीकने आवरे (घेरे) छे, ते दर्शना

संवंधी सुख, ८ काया संवंधी सुख ए आठ भेद जाणवा, ते शाता वेदनी कर्म थका प्राणी भूत जीव सत्वने झुरण पीटण शोक नहि करावनारी तेमज सर्वने शाता ऊपजावनारी जीव शातावेदनी कर्म बांधे, २ अशाता-वेदनी कर्म तेना आठ भेद ते १ अनीष्ट शब्द, २ अनीष्टरूप, ३ अनीष्ट गंध, ४ अनीष्ट रस, ५ अनीष्ट स्पर्श, ६ मन संबंधी दुःख, ७ वचन संबंधी दुख, ८ काया संबंधी दुख ए आठ भेद जाणवा, ते अशाता वेदनी कर्म ते थका प्राणी भूतजीव सत्वने झुरण पीटण शोक करावनारी तेमज सर्वने अशाता ऊपजावनारी जीव अशाता वेदनी कर्म बांधे॥ ७॥

अर्थः–मो० मोहनी कर्म बि०पण दु० बे भेदे जाणवो । दं० दर्शन मोहनी १ । च०चारित्र मोहनी २ त० तेमज ॥ दं०दर्सन मोहनी ति०त्रण प्रकार नु०कहुं भगवंते च०चारित्र मोहनी कर्म दु०बे प्रकारे भ०होय ॥८॥

मूलः–मोहणिज्जं पि दुविहं दंसणे चरणे तहा ।
दंसणे तिविहं वुत्तं चरणे दुविहं भवे ॥ ८ ॥

गाथा ८ भावार्थः–४ थुं मोहनी कर्म बे प्रकारे छे, १ दर्शन न इजी, २ चारित्र मोहनी तेमां दर्शन-मोहनी ते ३ प्रकारे अने चारीत्र मोहनी ते बे प्रकारे जाणवी ॥ ८ ॥

अर्थः–स० समयक्त वेदनी १ चे० पुरण मि० मिथ्यात्व वेदनी २ सम्य० समकित साहमो थयो मि० नथी मिथ्यात्व मांहे रस जीतनो ॥ एहवी अंतराले सम्य आगे वर्यो छे एटले मिथ्यात्वनो रस उगाड्यो अने समकित साहमो थयो पण समकित मांहि आवी जायो नथी त्यांसुधि छे । तेहने सम्य मिथ्यात्वेद । स०

करवा योग्य होय, तेमज जेणे सर्व आत्महितार्थनां कार्य सीद्ध कर्यां छे, तेहना सिद्ध अत्यंत सुखी थाय ? ॥११०॥

ए पूर्वे कह्यो ते मार्ग ॥ वि० कह्यो तिर्थंकरे नं० जे मोक्षनो मार्ग स० पामीने ॥ स० पण्डा जीव ॥ कं० अनु० करे अ० अत्यंत सु० सुखिया भ० होय ॥ इ० एम बे० हुं कहुं छुं ॥ १११ ॥

अर्थः—अ० अनादि का० काळनुं प० उपन्युं ने ए० ए । स० सर्व दु० दुख तेहने प० मुकावानो प०

मूलः—अणाइकालप्पभवस्स एसो सव्वस्स दुक्खस्स पमोक्खमग्गो ।
वियाहिओ जं समुविच्च सत्ता कमेण अच्चन्तसुही भवन्ति ॥१११॥ त्ति बेमि॥

॥ इति श्री प्रमादट्ठाणं द्वात्रिंशं अध्ययनं सम्पूर्णं ॥ ३२ ॥

गाथा १११ भावार्थः—जे अनादीकाळथी ऊत्पन्न थयेलुं, एवा सर्व दुःखथी मुकावानो ए पूर्वोक्त मार्ग तिर्थंकरे कह्यो, जे मोक्ष मार्ग पामीने पण्डा जीव भवुको अर्थात् सुखिया होय एम गुरुमुखे स्वामी पोताना जंबू नामना शिष्यने कहेता हवा हे जंबू ! जेम में श्री महावीरस्वामीनी समीपे सांभळ्युं हतुं, तेम ते तुंने मल्ये कहुं ॥ १११ ॥ इति श्री उत्तराध्ययन सूत्रना ३२ मां अध्ययननो भावार्थ संपूर्ण ॥३२॥ ए ३२ मां अध्ययनने विषे प्रमादनां स्थानक कह्यां, तेमथी थती जीव कर्म बांधे, ते थकी ३३मां अध्ययनमां आठ कर्मनी प्रकृति कहेछे.

अर्थः—अ० अठ क०कर्म बो०जंबूस्वामी प्रते । श्रीसुधर्मास्वामी कहेछे ते कहीयुं । आ०अनुक्रमे । ज०जेम आठ कर्म अनुक्रमे करीयुं ॥ जे०जेणे कर्मे करी । बं०बंधाणो अ०ए जी०जीव सं०संसारने विषे प०परिभ्रमण

संबंधी सुख, ८ काया संबंधी सुख ए आठ भेद जाणवा, ते शाता वेदनी कर्म घणा प्राणी भूत जीव सत्वने दुरण पीटण शोक नहि करावबाथी तेमज सर्वने शाता ऊपजाववाथी जीव शातावेदनी कर्म बांधे, २ असाता-वेदनी कर्म तेना आठ भेद ते ? अनीष्ट शब्द, २ अनीष्टरुप, ३ अनीष्ट गंध, ४ अनीष्ट रस, ५ अनीष्ट स्पर्श, ६ मन संबंधी दुःख, ७ वचन संबंधी दुख, ८ काया संबंधी दुख ए आठ भेद जाणवा, ते अशाता वेदनी कर्म ते घणा प्राणी भूत जीव सत्वने दुरण पीटण शोक करावबाथी तेमज सर्वने असाता ऊपजाववाथी जीव अशाता वेदनी कर्म बांधे॥७॥

अर्थः—मो० मोहनी कर्म बि०पण दु० बे भेदे जाणवो । दं० दरसन मोहनी १ । च०चारित्र मोहनी २ त० तेमज ॥ दं०दर्सन मोहनी ति०त्रण प्रकारे वु०कहुं भगवंते च०चारित्र मोहनी कर्म दु०बे प्रकारे भ०होय ॥८॥

मूलः—मोहणिज्जं पि दुविहं दंसणे चरणे तहा ।
दंसणे तिविहं वुत्तं चरणे दुविहं भवे ॥ ८ ॥

गाथा ८ भावार्थः—४ थुं मोहनी कर्म बे प्रकारे ते, १ दर्शन मोहनी, २ चारित्र मोहनी तेमां दर्शन-मोहनी ते ३ प्रकारे अने चारीत्र मोहनी ते बे प्रकारे जाणवी ॥ ८ ॥

अर्थः—स० समयक्त वेदनी १ बे० पुरणे मि० मिथ्यात्ववेदनी २ समा० समकित साहमो थयो मि० नथी मिथ्यात्व माहे रस जीलनो ॥ एहवी अंतराले मध्य भागे प्रवर्ते छे एटले मिथ्यात्वथी रस उपाडयो अने समकित साहमो थयो पण समकित पांहि आवी अजयो नथी वचमांज छे । तेहने समा मिथ्यात्ववेद । स० समयक्त वेदनी मि० मिथ्यात्व वेदनी कही ३ प० एम ए० वली ॥ ए० ए कर्म कहि ते । ति० त्रण प०

कर्म ते राजानी हेड समान छे, तेणे अक्षय स्थीती गुण रोक्यो छे ॥ २ ॥

अर्थः–ना० नाम क०कर्मने चितारानी उपमा छ। च० पुर्णे ॥ गो० गोत्र कर्मने कुभारनी उपमा च० पुरणे ॥ अ० अंतराय कर्मने भंडारीनी उपमा ८ । त० तेमज य०वळी । ए० एम एणीपरे । ए० ए समुदाए क० कर्म ॥ अ० आठ कर्म उ० वळी सं० संक्षेपथी जाणवा ॥ ३ ॥

मूलः–नामकम्मं च गोत्तं च अन्तरायं तहेव य ।
एवमेयाइ कम्माइं अट्ठेव उ समासओ ॥ ३ ॥

गाथा. ३ भावार्थः–६ नाम कर्म ते चितारा समान छे, तेणे अमुर्ति गुण रोक्यो छे, ७ गोत्र कर्म ते कुभार समान छे, तेणे अगुरु लघुगुण रोक्यो छे, ८ अंतराय कर्म ते राजाना भंडारी समान छे, तेणे अनंत आत्मशक्ति गुण रोक्यो छे, ए प्रमाणे कर्मनी प्रकृति आठ संक्षेपे कही ॥ ३ ॥

अर्थः–ए मुळ प्रकृति कही हवे उत्तर प्रकृति कहे छे ॥ ना० ज्ञानावरणी कर्म पं० पांच प्रकारे॥ सु०सिद्धांत भणवानुं जे आवरण होय ते श्रुत ज्ञानावरणी १ ॥ आ०मति ज्ञानने आवरे तेमति ज्ञानावरणी २ ओ० अवधि ज्ञानावरणी ३ च० ॥ वळी त० त्रीजो म० मनपर्यव ज्ञानावरणी ४ च० पुरणे के०केवल ज्ञानावरणी ५ ॥४॥

मूलः–नाणावरणं पंचविहं सुयं आभिणिबोहियं ।
ओहिनाणं च तइयं मणनाणं च केवलं ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थः–हवे आठ कर्मनी उत्तर प्रकृति कहे छे, १ ज्ञानावर्णी कर्म ते पांच प्रकारे, १ मती

मूलः—चरित्तमोहणं कम्मं दुविहं तं वियाहियं ।
कसायमोहणिज्जं तु अकसायं तहेव य ॥ १० ॥

गाथा, १० भावार्थः—चारीत्र मोहनी कर्म बे प्रकारे भगवंते कहेल छे, ते कषाय वेदनी कर्म अने नोकषाय वेदनी कर्म ए बे ॥ १० ॥

अर्थः—सो० क्रोधना च्यार भेद। अनंतानुबंधी १ । अप्रत्याणानीओ २ । प्रत्याणानीओ ३ । संजलनो ४ । एम माननां ४ एम मायाना ४। एम लोभना ४ । एम सोल भे०भेद । क०कर्म तु०पुरुषे क०कषाय थकी जेह उपनो ते नोकषाय मोहनी कर्म। स०सात प्रकारे पण होय हास्य १ रति २ । अरति ३ भय ४ शोक ५ दुगंछा ६ वेदत्रण ७ ए सात प्रकारे न०अथवा नव भेद कीजे तो पुरुष वेद १। नपुसक वेद २ स्त्री वेद ३ एम करता नव भेद थाय वा०वळी । क० कर्म नो० ए नवनोकषायथी उपनी त्रण दर्सन मोहनी ३ । सोल कषाय। १३ नोकषाय नव ९ । ए २८ मोहनीना भेद ॥ ११ ॥

मूलः—सोलसविहभेएणं कम्मं तु कसायजं ।
सत्तविह नवविहं वा कम्मं नोकसायजं ॥ ११ ॥

गाथा ११ भावार्थः—हवे कषाय वेदनी कर्मना १६ भेद ते, अनंतानुबंधी क्रोध, २ मान, ३ माया, ४ लोभ, अप्रत्याख्यानी १ क्रोध, २ मान, ३ माया, ४ लोभ, [illegible]

केवल दरसनावरणी ॥ ए० एणे प्रकारे नु० नुरण न० नव प्रकार ना० नामथी वे० दर्शनावरणीय ॥ ६ ॥

मूलः—चक्खुमचक्खूओहिस्स दंसणे केवले य आवरणे ।
एवं तु नवविगप्पं नायव्वं दंसणावरणं ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः—१ चक्षुदर्शनावरणीने चक्षुए देखवानुं आवर्ण, २ अचक्षु दर्शनावरणी ते बीजी चार इंद्रीयोनुं आवर्ण, ३ अवधी दर्शनावरणी ते अवधी ज्ञाने करी देखवानुं आवर्ण, ४ केवल दर्शनावरणी ते केवल ज्ञाने करी देखवानुं आवर्ण, ५ पांचमुं दर्शनावरणी कर्म ९ प्रकारे जाणवुं, ते दर्शनावरणी कर्म ९ प्रकारे बांधे ते १ दर्शनीनुं छेदं बोले, २ दर्शनीनो उपकार भोळवे, ३ दर्शनीनी आशातना करे, ४ दर्शनी अंतराय पाडे, ५ दर्शनी उपर द्वेष करे, ६ दर्शनी साथे खोटा लगडा विवाद करे, ए ९ प्रकारे बांधे पूर्वोक्त नव प्रकारे भोगवे ॥ ५ ॥

अर्थः—वे० वेदनी कर्म पि० पण ब० बंधी दु० बे प्रकारे । सा० साता वेदनी कर्म अने बीजुं अ० असाता वेदनी कर्म च० पुरणे आ० कहुं भगवंते । सा० साता वेदनी कर्मना व० गणा (आठ) भे० भेद जाणवा । ए० एणीपरे अ० असाता वेदनीना वि० पण आठ प्रकार जाणवा । ३ ॥ ७ ॥

मूलः—वेयणियं पि य दुविहं सायमसायं च आहियं ।
सायस्स उ बहू भेया एमेव असायस्स वि ॥ ७ ॥

गाथा ७ भावार्थः—वेदनी कर्म बे प्रकारे, १ सातावेदनी कर्म, २ असाता वेदनी कर्म, तेमां सातावेदनी कर्म तेना आठ भेद ते १ इष्ट शब्द, २ इष्ट रूप, ३ इष्टगंध, ४ इष्टरस, ५ इष्ट स्पर्श, ६ मन संबंधी सुख, ७ वचन

४ अकाम निर्जराथी, ए आयुष्य कर्म जाणवुं ॥ १२ ॥

अर्थः–ना० नाम क० कर्म दु० बे प्रकारे कह्यो । सु० शुभनाम कर्म अ० अशुभ नाम कर्म च० पुरणे आ० कहुं भगवंते ॥ सु० शुभ नाम कर्मना उ० वळी ब० घणा भे० भेद छे ॥ ए० एमज अ० अशुभ नाम कर्मना वि० पण घणा भेद छे ॥ १३ ॥

मूलः–नामकम्मं दुविहं सुहमसुहं च आहियं ।
सुभस्स उ बहू भेया एमेव असुभस्स वि ॥ १३ ॥

गाथा १३ भावार्थः–नाम कर्मना बे भेद ते शुभ नाम कर्म, २ अशुभ नाम कर्म; १ शुभ नाम कर्म, ते चार प्रकारे बांधे ते, १ कायानी सरळता, २ भाषानी सरळता, ३ भावनी सरळता, ४ विसंवादे करी शुभ नाम कर्मना घणांज भेद छे, तेमज अशुभ नाम कर्मना पण घणा भेद छे ॥ १३ ॥

अर्थः–गो० गोत्र क० कर्म दु० बे प्रकारे उ० उंच गोत्र क्षत्रियादिक नी०नीच गोत्र चंडालादिक च० पुर्णे आ० कहुं ॥ भगवंते उ० उंच गोत्र अ० आठ प्रकारे हो० होय ते कहे छे ॥ उच्च० उंची जाती १ उंचकुल २ उंचबल ३ उंचरुप ४ । उंचतप । ५ उंच सिद्धांतनो सांभलवो ६ । उंच लाभोदय ७ उंच ठकुराई ८ । एम आठ मद जाणवा ॥ ए०एणे प्रकारे नी० नीच गोत्र पि०पण आठ प्रकारे आ०कह्यो भगवंते ॥१४॥

मूलः–गोयं कम्मं दुविहं उच्चं नीयं च आहियं ।
उच्चं अट्ठविहं होइ एवं नीयं पि आहियं ॥ १४ ॥

प्रकृतिः ॥ मो० मोहनी कर्मनी । दं० दर्शन ॥ ९ ॥

मूलः—सम्मत्तं चेव मिच्छत्तं सम्मामिच्छत्तमेव य ।
एयाओ तिन्नि पयडीओ मोहणिज्जस्स दंसणे ॥ ९ ॥

गाथा ९ भावार्थः—इवे दर्शन मोहनीना त्रण भेद ते १ समकित मोहनी, २ मिथ्यात्व मोहनी, ३ मिश्र मोहनी, तेमां समकित ते मिथ्यात्वनां पुद्गळ ते अशुद्ध पुद्गळ छे ते पुद्गळ अत्यंत विशुद्ध थाय, ते वारे सम्यक्त्व करीने, ज्यारे सम्यक्त्वने मिथ्यात्व प्रकृति ग्रहे ते वारे समकितना अतिचार लागे तेवारे मिथ्यात्व थाय ते, ज्यारे समकितनी प्रकृतिने विषे मुंझाय अथवा ऊलसीकादीकने मुंझरे तेहने समकित मोहनी कहीए, मिथ्यात्व मोहनी ते समकितना अभाव मिथ्यात्वनां अशुद्ध दळीयां रूप तेथी अनंतरने विषे तत्वनी रुची अने तत्वने विषे अतत्वनी रुची ते मिथ्यात्व कहीए तेहने विषे मुंझरे तेहने मिथ्यात्व मोहनी कहीए. मिश्र मोहनी ते शुद्ध अशुद्ध दळीयां रूप तेथी जैनधर्म ऊपर राग नहि तेम द्वेष पण नहि, तेमज बीजा धर्म उपर पण राग नहि तेम द्वेष पण नहि, एहवो स्वभाव होय तेहने मिश्र मोहनी कहीए, तेहनी अंतर मुहूर्तनी स्थीतीछे, (उदाहरण) चंद्रकाळा वादळथी घेराएला समान मिथ्यात्वमोहनी, काळाने धोळा वादळांथी घेराएला चंद्रसमान मिश्रमोहनी, धोळा वादळांथी घेराएला वादळाना समान समकित मोहनी ए दर्शनमोहनीनी त्रण प्रकृति जाणवी॥९॥

अर्थः—च० चारित्र मो० मोहनी क० कर्म । दु० बे प्रकारे तं० पुरुषे वि० कहुं भगवंते । क० कषाय मोहनी ज्जं० मोहनी कर्म नु० नवी अ० कषाय त० तेमहिज ग० वळी ॥ १० ॥

कर्म संक्षेपे भगवंते कहेलछे, ते पुर्वोक्त पांच प्रकारे अंतराय पाडवाथी एज पांच प्रकारे अंतराय पणे उदय आवे॥१५॥

अर्थः–ए० ए मु० मूल प० प्रकृति । उ० वली उत्तर प्रकृति सरवाले थइने एकसो छहोतेर थाय ॥ १७६ य० वली । आ० कही हवे द्रव्यथी । प० कर्मना पुदगल जीव केटला बांधे अने पुदगल केटला प्रदेशनो खंध कहीए । ते प्रमाणे खे० ते पुदगल कोण खेत्रना केटली दिशाना आव्या होय ॥ ते ग्रहीने कर्म पण बांधे ॥ का० वली कर्मनी केटला कालनी स्थिति होय य०वळी ॥ भा० अथवा वली भाव ते कर्म पुदगल बांध्या छे ते भोगवावानी वेला केटलाएक उदय आव्या ४ ए ४ बोल च०वली उ०आगल कहुं ते सु०सांभल ॥ गाथा सोळमी विशेष अर्थः–एआओ मूल पयडीओ० मुल प्रकृति आठ कही । उत्तराओ य० वली उत्तर प्रकृति सरवाले थइने ॥ एकसोने छहोतेर थाय १७६ ते आहिया० कहि ॥ हवे द्रव्यथी पएसग्गं० कर्मना पुदगल जीव केटला बांधे ॥ अने पुदगल केटला प्रदेशना खंध कहिए तेह प्रमाण कहिशुं ? ॥ खे० पुदगल कोण खेत्र ॥ केटली दिसीना होय ॥ ते ग्रहिने कर्मपणे बांधे २ ॥ काले य० वली ते कर्मनी केटला कालनी स्थिति कही ३ ॥ भावं च० अथवा वली भाव ते कर्मना पुदगल बांध्या छे ॥ ते भोगववानो वली उदय आवे ४ ॥ ए ४ बोलनो उ०उत्तर आगल कहुं ते तुं सु० सांभल ॥ १६ ॥

मूलः–एयाओ मूलपयडीओ उत्तराओ य आहिया ।

वेद, पुरुष वेद, नपुंसक वेद, ए नव भेद जाणवा, १६ कषाय अने नव नोकषाय, ए २५ भेद चारित्र मोहनीना अने दर्शन मोहनीना पुर्वोक्त त्रण भेद मळी कुल २८ भेद चोथा मोहनी कर्मना जाणवा ॥ ११ ॥

अर्थः-हवे आउषा कर्म कहे छे ने० नारकीनो आउषो । १ तिर्यंचनुं आउषो २ । म० मनुषनो आउषो त० तेमज य० वळी ॥ दे० देवतानो आ० आउषो ४ च० चोथुं च्यार प्रकारे तु० पुरणे । आ० आउषा क० कर्म च० चार प्रकारे कह्यो भगवंते ॥ १२ ॥

मूलः-नेरइयतिरिक्खाउं मणुस्साउं तहेव य ।
देवाउयं चउत्थं तु आउं कम्मं चउव्विहं ॥ १२ ॥

गाथा, १२ भावार्थः-हवे पांचमुं आयुष्य कर्म कहे छे, आयुष्य कर्मना चार भेद ते १ नारकीनुं आयुष्य, २ तिर्यंचनुं आयुष्य, ३ मनुष्यनुं आयुष्य, ४ देवतानुं आयुष्य, ए चार तेमां नारकीनुं आयुष्य चार प्रकारे बांधे ते, १ महाआरंभ करवाथी, २ महा परीग्रहथी, ३ मांस मदीरा भक्षण करवाथी, ४ पंचेंद्री जीवनो वध करवाथी; तिर्यंचनुं आयुष्य चार प्रकारे बांधे ते, १ कपट करवाथी, २ गाढुं कपट करवाथी, ३ जुठुं बोलवाथी, ४ जुठां तोल माप राखवाथी तथा खोटा लेख पत्रादीक लखवाथी; मनुष्यनुं आयुष्य चार प्रकारे बांधे ते, १ भद्रीक प्रकृतिथी, २प्रकृतिनो विनयवंत होवाथी, ३ परजीवनी दयावंत ४ मत्सर भाव रहीत; तेनुं आयुष्य चार प्रकारे बांधे ते, १ सराग संयमथी, २ संयमा संयमथी, ३ बाळ (अज्ञान) तपश्चर्याथी,

अर्थः-हवे खेत्रथी कहेछे स०सर्व जी० जीवना कं०कर्म बांधवाना पुदगंल तु०वली ॥ सं०ग्रहण करवाने विषे प्रवर्ते छे ॥ छ० पूर्व पश्चिम दक्षिण उत्तर ॥ उर्द्ध दिसे हेठि दिसे ॥ छ दि०दिशीने विषे जे पुदगलछे ते कर्म बांधवाने काने ग्रहण करे स० सघला जीवना प० प्रदेशने वि० विषे ॥ स० सर्व कर्मना पुदगल स० आपणा बना सघलाए प्रदेश संघाते ॥ ब० कर्मना बांध्या हुआ । जेम दुध मांहि पाणी भेलुं थाय । तेम बांध्या पछे उत्कृष्टी स्थिति केटली होय ते कहे छे ॥ १८ ॥

अः

॥ १

मूलः-सव्वजीवाण कम्मं तु संगहे छद्दिसागयं ।
सव्वेसु वि पएसेसु सव्वं सव्वेण बद्धगं ॥ १८ ॥

गाथा १८ भावार्थः-सर्व जीव कर्म बांधवाने माटे जे जे पुदगळ ग्रहण करवाने विषे प्रवर्ते छे, ते पुर्व, पश्चीम, ऊतर, दक्षीण, ऊंचीने, नीची ए ६ दीशीने विषे पुदगळ छे, ते पुदगळ कर्म बांधवा सारु ग्रहण करे छे, ते सर्व कर्मना पुदगळ सर्व जीवने पोत पोताना जीवना सर्व आत्म प्रदेश संघाते कर्मनो बंध होय ॥१८॥

अर्थः-उ० समुद्र स० सरिखुं ना० नाम सागरोपम । ती० त्रीस को० कोडाकोडी सागरोपमनी स्थिति । उ० उत्कृष्टि ठि० स्थिति हो० होय ॥ अ० अंतरमुहुर्त ज० जघन्य स्थिति जाणवी ॥ १९ ॥

मूलः-उदहीसरिसनामाण तीसई कोडिकोडीओ ।
उक्कोसिया ठिई होइ अन्तोमुहुत्तं जहन्निया ॥

गाथा १४ भावार्थः—गोत्रकर्म बे प्रकारे ने क्षत्रीयादीकनुं ऊंचगोत्र अने चंडाळादीकनुं नीचगोत्र तेमां नीच गोत्र कर्म आठ प्रकारे बांधे ने, १ जातीनो मद, २ कुळनो मद, ३ बळनो मद, ४ रूपनो मद, ५ तपनो मद, ६ श्रुतनो मद, ७ लाभनो मद, ८ ऐश्वर्यनो मद ए आठ मद करवावी नीचगोत्र कर्म जीव बांधेछे, तेथी १ जातीनो हीण, २ कुळनो हीण, ३ बळनो हीण, ४ रूपनो हीण, ५ तपनो हीण, ६ श्रुतनो हीण ■, लाभनो हीण, ८ ऐश्वर्यनो हीण ए आठ प्रकारे भोगवे छे, ऊंच गोत्र कर्म आठ प्रकारे बांधे ते पूर्वोक्त आठ प्रकारना मद नहि करवाथी बांधे ने आठ प्रकारे भोगवे छे, १ जातीभलुं, २ कुळभलुं, ३ बळभलुं, ४ रूपभलुं ५ तप भलुं, ६ श्रुतभलुं ७ लाभ भलो, ८ ऐश्वर्य भलो, ए प्रमाणे गोत्र कर्म जाणवुं ॥ १४ ॥

अर्थः—दा० दानने विषे दा० लाभने विषे य० वळी भो० पुष्पादिक ने एकवार भोगवीए तेहने विषे प० परी उ० वस्त्रादिक वारंवारने विषे ॥ वी० वइर्यलब्धिने विषे । त० तेमादिन । पं० ए पांचे प्रकारे अ० अंतराय कर्म । स० संक्षेपे वि० कहुं भगवंत महावीर देवे ॥ १५ ॥

मूल—दाणे लाभे य भोगे य उवभोगे वीरिए तहा ।
पंचविहमन्तरायं समासेण वियाहियं ॥ १५ ॥

गाथा १५ भावार्थः—अंतराय कर्म पांच प्रकारे ने, १ दानने विषे अंतराय, २ लाभने विषे, ३ भोग (एक वार भोगववायी आवे ते अन्न प्रमुख) ने विषे अंतराय, ४ उपभोग (एनीए वस्तु वारंवार भोगववायी आवे ते स्त्री पुत्रादि वस्त्र प्रमुख) ने विषे अंतराय, ५ वळ वीर्यने विषे अंतराय, ए पांच प्रकारे अंतराय

अर्थः-हवे खेत्रथी कहेछे स०सर्व जी० जीवना क०कर्म बांधवाना पुद्गल तु०वली ॥ सं०ग्रहण करवाने विषे प्रवर्ते छे ॥ छ० पूर्व पश्चिम दक्षिण उत्तर ॥ ऊर्द्ध दिसे हेठि दिसे ॥ छ दि०दिशीने विषे जे पुद्गलछे ते कर्म बांधवाने काने ग्रहण करे स० सघला जीवना प० प्रदेशने वि० विषे ॥ स० सर्व कर्मना पुद्गल स० आपणा जीवना सघलाए प्रदेश संघाते ॥ बं० कर्मना बांध्या हुआ । जेम दुध मांहि पाणी भेलुं थाय । तेम बांध्या पछे उत्कृष्टी स्थिति जेटली होय ते कहे छे ॥ १८ ॥

मूलः-सव्वजीवाण कम्मं तु संगहे छद्दिसागयं ।
सव्वेसु वि पएसेसु सव्वं सव्वेण बद्धगं ॥ १८ ॥

गाथा १८ भावार्थः-सर्व जीव कर्म बांधवाने माटे जे जे पुद्गळ ग्रहण करवाने विषे प्रवर्ते छे, ते पुर्व, पश्चीम, ऊतर, दक्षीण, ऊंचीने, नीची ए ६ दीशीने विषे पुद्गळ छे, ते पुद्गळ कर्म बांधवा सारु ग्रहण करे छे, ते सर्व कर्मना पुद्गळ सर्व जीवने पोत पोताना जीवना सर्व आत्म प्रदेश संघाते कर्मनो बंध होय ॥१८॥

अर्थः-उ० समुद्र स० सरिखुं ना० नाम सागरोपम । ती० त्रीस को० कोडाकोडी सागरोपमनी स्थिति । उ० उत्कृष्टि ठि० स्थिति हो० होय ॥ अ० अंतरमुहुर्त ज० जघन्य स्थिति जाणवी ॥ १९ ॥

मूलः-उदहीसरिसनामाण तीसई कोडिकोडीओ ।

गाथा १४ भावार्थः—गोत्रकर्म बे प्रकारे ते स्त्रीयादीकनुं ऊंचगोत्र अने चंडाळादीकनुं नीचगोत्र तेमां नीच गोत्र कर्म आठ प्रकारे बांधे ते, १ जातीनो मद, २ कुळनो मद, ३ बळनो मद, ४ रूपनो मद, ५ तपनो मद, ६ श्रुतनो मद, ७ लाभनो मद, ८ ठकुराइनो मद ए आठ मद करवाथी नीचगोत्र कर्म जीव बांधेछे, तेथी १ जातीनो हीण, २ कुळनो हीण, ३ बळनो हीण, ४ रूपनो हीण, ५ तपनो हीण, ६ श्रुतनो हीण ७, लाभनो हीण, ८ ठकुराइनो हीण ए आठ प्रकारे भोगवे छे, ऊंच गोत्र कर्म आठ प्रकारे बांधे ते पूर्वोक्त आठ प्रकारना मद नहि करवाथी बांधे ते आठ प्रकारे भोगवे ते, १ जातीभलुं, २ कुळभलुं, ३ बळभलुं, ४ रूपभलुं ५ तप भलुं, ६ श्रुतभलुं ७ लाभ भलो, ८ ठकुराइ भली, ए प्रमाणे गोत्र कर्म जाणवुं ॥ १४ ॥

अर्थः—दा० दानने विषे ला० लाभने विषे य० बळी भो० पुष्पादिक जे एकवार भोगवीए तेहने विषे प० बळी उ० स्त्रीयादिक उपभोगने विषे ॥ वी० बळवीर्यने विषे । त० तेमज । प० ए पांचे प्रकारे अ० अंतराय कर्म । स० संक्षेपे वि० कहुं भगवंत महावीर देवे ॥ १५ ॥

मूल—दाणे लाभे य भोगे य उवभोगे वीरिए तहा ।
पञ्चविहमन्तरायं समासेण वियाहियं ॥ १५ ॥

गाथा १५ भावार्थः—अंतराय कर्म पांच प्रकारे ते, १ दानने विषे अंतराय, २ लाभने विषे, ३ भोग (एक वार भोगवायो आवे ते अन्न वस्त्र) ने विषे अंतराय, ४ उपभोग (वारंवार भोगवायो आवे ते स्त्री प्रमुख) ने विषे अंतराय, ५ बळ वीर्यने विषे अंतराय, ए पांच प्रकारे अंतराय

मोहनिज्जस्स उक्कोसा अन्तोमुहुत्तं जहन्निया ॥ २१ ॥

गाथा २१ भावार्थः–मोहनी कर्मनी स्थिति जघन्य अंतरमुहुर्तनी ने ऊत्कृष्टी ७० क्रोडा क्रोडी सागरोपमनी जाणवी ॥ २१ ॥

अर्थः–ते० तेत्रीस सा० सागरोपमनी स्थिति । उ० उत्कृष्टि स्थिति वि० कही भगवंते ठि० स्थिति उ० वली आ० आउषा कर्मनी अं० अंतर्मुहुर्तनी ज० जघन्य स्थिति जाणवी ॥ २२ ॥

मूलः–तेत्तीससागरोवमा उक्कोसेण वियाहिया ।
ठिई उ आउकम्मस्स अन्तोमुहुत्तं जहन्निया ॥ २२ ॥

गाथा २२ भावार्थः–आयुष्य कर्मनी स्थिति जघन्य अंतर मुहुर्तनी अने ऊत्कृष्टी ३३ सागरोपमनी जाणवी ॥२२॥

अर्थः–उ० समुद्र स० सरिषो ना० नांम सागरोपम वी० वीस को० कोडाकोडि । ना० नामकर्म अने गो० गोत्र कर्मनी उ० उत्कृष्टि स्थिति । अ० आठ मु० मुहुर्तनी ज० जघन्य स्थिति जाणवी ॥ २३ ॥

मूलः–उदहीसरिसनामाण वीसई कोडिकोडीओ ।
नामगोत्ताणं उक्कोसा अट्ठ मुहुत्ता जहन्निया ॥ २३ ॥

गाथा २३ भावार्थः–नाम कर्म अने गोत्र कर्मनी स्थिति जघन्य अंतरमुहुर्तनी अने ऊत्कृष्टी वीस क्रोडा क्रोडी सागरोपमनी ए काळथी बंध जाणवो ॥ २३ ॥

अर्थः–हवे भावथी कहे छे । वि० सर्व सिद्धने अ० अनंतमे भा० भागे जेटला अनंता थाय । तेटला

पुद्गळ जीव केटलां बांधे अने ते पुद्गळ केटला प्रदेशना स्कंध होय ते, २ क्षेत्रथी कीधुं सेवन केटली दीशाना पुद्गळ आव्यां होय ते ग्रहीने कर्म पणे बांधे, ३ कालथी ते कर्मनी केटला कालनी स्थीती होय, ४ भावथी ने कर्मनां पुद्गळ बांध्या छे, ते भोगववानी वेळाए केटला उदय आवे, गुरु कहेता हवा हे शिष्य ! ए चारेनो खुलासो हुं तुंजने आगळ करीश ते तुं सांभळ ? ॥ १६ ॥

अर्थः-हवे द्रव्यथकी कहे छे ॥ सव्वेसि० सघळा आठ चेव० पुरणे ॥ कम्माणं० कर्मना पएसग्गं० पुद्गळ ॥ एक समे बांधे छते ॥ अणंतगं० अनंता अनंत प्रत्येक २ ॥ कर्मना पुद्गळ बांधे छे ते एक स्कंध अनंता ॥ केटला गण्ठिय सत्ता० ॥ अभव्य जीवथी ॥ अइयं० अनंत गुणे अधिका भने ॥ अंतोसिद्धाण० सिद्धने अनंतमे भागे ॥ ओहियं० एम कयुं ॥ एटले कर्मना पुद्गळ ॥ अनंता बांधे ॥ द्रव्यथी कयुं ॥ १७ ॥

मूलः-सव्वेसिं चेव कम्माणं पएसग्गमणन्तगं ।
गण्ठियसत्ताईयं अन्तो सिद्धाण आहियं ॥ १७ ॥

गाथा १७ भावार्थः-सघळां आठ कर्मनां पुद्गळ एक समे बांधे थके ते आठे कर्मनां जुदां जुदां अनंता अनंता पुद्गळ बांधे ते दरेक कर्मनां अनंता अनंता पुद्गळ एकत्र मळे, तेहनुं नाम अनंत प्रदेशी स्कंध जाणवो, एहवा दरेक कर्मना अनंता स्कंध बांधे, ते स्कंध अभव्य जीवथी अनंत गुणा अधीक छे अने सिद्ध भगवंतने अनंतमे भागे थाय, एटला कर्मना पुद्गळनां स्कंध जीव बांधे, एम तिर्थंकरे कयुं, ए द्रव्यथी बंध जाणवो॥१७॥

मोहनिज्जस्स उक्कोसा अन्तोमुहुत्तं जहन्निया ॥ २१ ॥

गाथा २१ भावार्थः–मोहनी कर्मनी स्थिति जघन्य अंतरमुहुर्तनी ने उत्कृष्टी ७० क्रोडा क्रोडी सागरोपमनी जाणवी ॥ २१ ॥

अर्थः–ते० तेत्रीस सा० सागरोपमनी स्थिति । उ० उत्कृष्टि स्थिति वि० कही भगवंते ठि० स्थिति उ० वळी आ० आउषा कर्मनी अं० अंतर्मुहुर्तनी ज० जघन्य स्थिति जाणवी ॥ २२ ॥

मूलः–तेत्तीससागरोवमा उक्कोसेण वियाहिया ।
ठिई उ आउकम्मस्स अन्तोमुहुत्तं जहन्निया ॥ २२ ॥

गाथा २२ भावार्थः–आयुष्य कर्मनी स्थिति जघन्य अंतर मुहुर्तनी अने उत्कृष्टी ३३ सागरोपमनी जाणवी ॥२२॥

अर्थः–उ० समुद्र स० सरिपो ना० नांम सागरोपम वी० वीस को० क्रोडाक्रोडि । ना० नामकर्म अने गो० गोत्र कर्मनी उ० उत्कृष्टि स्थिति । अ० आठ मु० मुहुर्तनी ज० जघन्य स्थिति जाणवी ॥ २३ ॥

मूलः–उदहीसरिसनामाण वीसई कोडिकोडीओ ।
नामगोत्ताणं उक्कोसा अट्ठ मुहुत्ता जहन्निया ॥ २३ ॥

गाथा २३ भावार्थः–नाम कर्म अने गोत्र कर्मनी स्थिति जघन्य अंतरमुहुर्तनी अने उत्कृष्टी वीस क्रोडा क्रोडी सागरोपमनी ए काळथी बंध जाणवो ॥ २३ ॥

अर्थः–हवे भावथी कहे छे । सि० सर्व सिद्धने अ० अनंतमे भा० भागे जेटला अनंता थाय । तेटला

ए कर्मने सं० बांधे नहि चे० पुरणे ॥ ख० कर्म खपावावाने य० विषे ज० उद्यम करे वु० तत्वना जाण ॥ इ०
एम वे० हुं कहुं छुं ॥ २५ ॥

मूलः—तम्हा एएसि कम्माणं अणुभागा वियाणिया ।
एएसि संवरे चेव खवणे य जए बुहो ॥ २५ ॥ त्ति बेमि ॥

॥ इति श्री कर्मप्रयडीनामा त्रयस्त्रिंश अध्ययनं सम्पत्तं ॥ ३३ ॥

गाथा २५ भावार्थः—तेथी तत्वनो जाण होय ते ए पुर्वोक्त आठ प्रकारना रस रूप जाणीने ए कर्मने
बांधे नहि अने पुर्वे बांधेलां होय ते क्षय करवाने विषे उद्यम करे, एम सुधर्मा स्वामी पोताना जंबू नामना
शिष्यने कहेता हवा हे जंबू? जेम में श्री महावीरदेव स्वामीनी समीपे सांभळ्युं हतुं तेम में तुंज प्रत्ये कर्युं ॥२५॥
इति श्री उतराध्ययन सुत्रना ३३ मां अध्ययननो भावार्थ संपूर्ण ॥ ३३ ॥ तेत्रीसमां अध्ययनने विषे कर्मनी
प्रकृति कही ते कर्म लेश्याथकी बंधाय ते भणी ३४ मां अध्ययन विषे छ लेश्या कहे छे.

अर्थः—ले० लेस्यानामा अ० अध्ययन प० कहिशुं अ० अनुक्रमे ज० जेम क० अनुक्रमे कहिशुं ॥ छ०
छए पि० पण क० कर्म ले० लेश्या कर्मनिस्थिति निपजावे ते भणीकर्म लेश्या कहिये। अ० ते लेश्यानारस सु०
सांभलो मे० मुजने कहेता थका ॥ १ ॥

मूलः—लेसज्झयणं पवक्खामि अणुपुव्विं जहक्कमं ।

अनंता कर्म पुद्गल स्कंध ग० वली । अ० भोगववानां एक समे इ० हाय एटला भोगवे छे जेवारे पुछे तेवारे समुचे हवे ते पंच जेटले परमाणुं ए थाय ते मांन कहे छे उ० वली । स० सर्व भोगववानां पुद्गल पंथने वि० विषे प० जुदा जुदा परमाणुयानुं प्रमाण गणीए ते सर्व । स० सर्व जी० जीवथी अ० अधिका अधिका अनंत गुणे अधिका थाय जे भणी वर्तमानकाले । अनुभागे भोगववा योग्य अनंत प्रदेशी स्कंध अनंता भोगवे छे ते एकेका स्कंधने विषे अनंता अनंत परमाणु छे तेमाटे ते परमाणु सर्व जीवथी अनंत गुणा अधिका छे एटले अनंता अनंता परमाणुं भोगवीने निर्जरे छे ए ४ ए चोथो बोलभावनो जाणवो ॥ २४ ॥

मूलःसिद्धाणणन्तभागो य अणुभागा हवन्ति उ ।
सव्वेसु वि पएसग्गं सव्वजीवे अइज्झियं ॥ २४ ॥

गाथा २४ भावार्थः-हवे भावथी बंध कहे छे, जेवारे पुजीए त्यारे समुचे सर्व सिद्धने अनंतमे भागे जेटला अनंता थाय तेटला अनंता कर्मनां पुद्गलनां स्कंध भोगववाना एक समे होय, एटले एटलां पुद्गळ भोगवे छे. (हवे तेने जेटला परमाणुं थाय, ते मान कहे छे) भोगववानां सर्व पुद्गलना स्कंधना जुदा जुदा परमाणु गणीए तो सर्व जीवथी अनंत गुणा अधीक थाय, कारण के वर्तमान काळे अनुभागे भोगववा योग्य अनंत प्रदेशी स्कंध अनंता भोगवे छे, ते अकेका स्कंधने विषे अनंता अनंता परमाणु छे ते माटे ते परमाणुं सर्व जीवथी अनंत गुणे अधीकाछे, एटला अनंता परमाणुं भोगवीने निर्जरेछे, ए चोथो बोल भाव-

अर्थः-स० ते भणी ए० ए पूर्वे कह्या ते क० आठ कर्म ॥

ए कर्मने सं० बांधे नहि पे० पुरणे ॥ स० कर्म खपाववाने य० विषे ज० उद्यम करे वु० तत्वना जाण ॥ इ० एम वे० हुं कहुं छुं ॥ २५ ॥

मूलः—तम्हा एएसि कम्माणं अणुभागा वियाणिया ।
एएसि संवरे चेव खवणे य जए बुहो ॥ २५ ॥ त्ति बेमि ॥

॥ इति श्री कम्मप्पयडीनामा त्रयस्त्रिंशं अध्ययनं सम्मत्तं ॥ ३३ ॥

गाथा २५ भावार्थः—तेथी तत्वनो जाण होय ते ए पुर्वोक्त आठ प्रकारना रस रुप जाणीने ए कर्मने बांधे नहि अने पुर्वे बांधेलां होय ते क्षय करवाने विषे उद्यम करे, एम सुधर्मा स्वामी पोताना जंबू नामना शिष्यने कहेता हवा हे जंबू? जेम में श्री महावीरदेव स्वामीनी समीपे सांभलयुं हतुं तेम में तुंज प्रत्ये कहुं ॥२५॥

इति श्री उत्तराध्ययन सुत्रना ३३ मां अध्ययननो भावार्थ संपूर्ण ॥ ३३ ॥ तेत्रीसमां अध्ययनने विषे कर्मनी प्रकृति कही ते कर्म लेश्याथकी बंधाय ते भणी ३४ मां अध्ययन विषे छ लेश्या कहे छे.

अर्थः—ले० लेश्यानामा अ० अध्ययन प० कहिशुं अ० अनुक्रमे ज० जेम क० अनुक्रमे कहिशुं ॥ छ० एए पि० पण क० कर्म ले० लेश्या कर्मनिस्थिति निपजावे ते भणीकर्म लेश्याकहिये। अ० ते लेश्यानारस सु० सांभलो मे० मुजने कहेता थका ॥ १ ॥

मूलः—लेसज्झयणं पवक्खामि अणुपुव्विं जहक्कमं ।
छण्हं पि कम्मलेसाणं [illegible] मे ॥ १ ॥

विषे प० जुदा जुदा परमाणुयानुं प्रमाण गणीए ते सर्व । स० सर्व जी० जीवथी अ० अधिका अधिका अनंत गुणे अधिका थाय जे भणी वर्तमानकाले । अनुभागे भोगववा योग्य अनंत प्रदेशी स्कंध अनंता भोगवे छे ते एकेका स्कंधने विषे अनंता अनंत परमाणु छे तेमाटे ते परमाणु सर्व जीवथी अनंत गुणा अधिका छे एटले अनंता अनंता परमाणुं भोगवीने निर्जरे छे ए ४ ए चोथो बोलभावनो जाणवो ॥ २४ ॥

मूलःसिद्धाणणन्तभागो य अणुभागा हवन्ति उ ।
सव्वेसु वि पएसग्गं समजीवे अइज्झियं ॥ २४ ॥

गाथा २४ भावार्थः-हवे भावथी बंध कहे छे, जेवारे पुद्गीए त्यारे समुचे सर्व सिद्धने अनंतमे भागे जेटला अनंता थाय तेटला अनंता कर्मनां पुद्गलनां स्कंध भोगववाना एक समे होय, एटले एटला पुद्गल भोगवे छे. (हवे क्षेत्रे जेटला परमाणुं थाय, ते मान कहे छे) भोगववानां सर्व पुद्गलना स्कंधना जुदा जुदा परमाणु गणीए तो सर्व जीवथी अनंत गुणा अधीक थाय, कारण के वर्तमान काले अनुभागे भोगववा योग्य अनंत प्रदेशी स्कंध अनंता भोगवे छे, ते अकेका स्कंधने विषे अनंता अनंता परमाणु छे ते माटे ते परमाणुं सर्व जीवथी अनंत गुणे अधीकाछे, एटला अनंता परमाणुं भोगवीने निर्जरेछे, ए चोथो बोल भावनो जाणवो ॥२४॥

क्र०-त० ते भणी ए० ए पूर्वे कह्या ते क० आठ कर्म ॥ अ० रस रुप भोग वि० जाणीने ॥

४ ॥ प० पद्मलेस्या ५ ॥ त० तेमज । य० वळी शु० शुक्ललेस्या ६ ॥ य० वळी छ० छठीकही भगवंते य० वळी ना० लेस्यानानाम तु० पुरणे ज० जेमछे तेम अनुक्रमे कया ॥ ३ ॥

मूलः—किण्हा नीला काऊ य तेऊ पम्हा तहेव य ।
सुक्कलेसा य छट्ठा य नामाइं तु जहक्कमं ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः—हवे लेस्यानां नाम कहे छे, १ कृष्ण लेस्या, २ नील लेस्या, ३ कापुत लेस्या, ४ तेजु लेस्या, ५ पद्म लेस्या, ६ शुक्ल लेस्या, ए ६ लेस्यानां नाम अनुक्रमे जाणवां, ए प्रथम बोल थयो ॥३॥

अर्थः—हवे बीजुंलेस्यानो वर्ण कहेछे जी० मेघपाणी सहित वादळा होय नि० चोपडां दिसे ते सं० सरिपा ॥ ग० पाडाना सिंगसरिपा अ० अरिठा स० सरिपा ॥ खं० गाडानां उंगणना मेलसरिपी । अ० काजळ सरिपी न० आंखनी कीकी नि० सरिपी । कि० कृष्ण ले० लेस्या उ० वळी व० वर्णयकी एहवी काळी जाणवी ॥४॥

मूलः—जीमूयनिद्धसंकासा गवलरिट्ठगसन्निभा ।
खञ्जणनयणनिभा किण्हलेसा उ वण्णओ ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थः—हवे लेस्याना वर्ण कहे छे, जेवुं पाणी सहीत वादळ होय, जेवां पाडानां शींगडां होय, जेवुं अरीठुं होय, जेवुं गाडानुं खंजन (मळी) होय, जेवुं काजळ होय, जेवी आंखनी कीकी होय, एहवो कृष्ण लेस्यानो काळो वर्ण जाणवो ॥ ४ ॥

अर्थः—नी० नीललेश्या जेहवी । अ० अशोकनामा वृक्षहोयते सं० सरिपी ॥ चा० चासपक्षी नि० पिछास०सरिपी

अनंता कर्म पुद्गल खंध ग्र० वळी । अ० भोगववानां एक समे ह० होय एटला भोगवे छे जेवारे पुछे तेवारे समुचे हवे ते पंच जेटले परमाणुं ए थाय ते मांन कहे छे उ० वळी । स० सर्व भोगववानां पुद्गल पंधने वि० विषे प० जुदा जुदा परमाणुपानुं प्रमाण गणीए ते सर्व । स० सर्व जी० जीवथी अ० अधिका अधिका अनंत गुणे अधिका थाय जे भणी वर्तमानकाले । अनुभागे भोगववा योग्य अनंत प्रदेशी खंध अनंता भोगवे छे ते एकेका खंधने विषे अनंता अनंत परमाणु छे तेमाटे ते परमाणु सर्व जीवथी अनंत गुणा अधिका छे एटले अनंता अनंता परमाणुं भोगवीने निर्जरे छे ए ४ ए चोथो बोलभावनो जाणवो ॥ २४ ॥

मूलःसिद्धाणणन्तभागो य अणुभागा हवन्ति उ ।
सव्वेसु वि पएसग्गं सवजीवे अइज्झियं ॥ २४ ॥

गाथा २४ भावार्थः-हवे भावथी बंध कहे छे, जेवारे पुजीए त्यारे समुचे सर्व सिद्धने अनंतमे भागे जेटला अनंता थाय तेटला अनंता कर्मनां पुद्गलनां खंध भोगववाना एक समे होय, एटले एटला पुद्गल भोगवे छे. (हवे क्षेत्रे जेटला परमाणुं थाय, ते मान कहे छे) भोगववानां सर्व पुद्गलना खंधना जुदा जुदा परमाणु गणीए तो सर्व जीवथी अनंत गुणा अधीक थाय, कारण के वर्तमान काळे अनुभागे भोगववा योग्य अनंत प्रदेशी खंध अनंता भोगवे छे, ते अकेका खंधने विषे अनंता अनंता परमाणु छे ते माटे ते परमाणुं सर्व जीवथी अनंत गुणे अधीकाछे, एटला अनंता परमाणुं भोगवीने निर्जरेछे, ए चोथो बोल भावनो जाणवो ॥२४॥

अर्थः-स० ते भणी ए० ए पूर्वे कह्या ते क० आठ कर्म ॥ अ० रस रुप भोग वि० जाणीने ॥ ए०

४ ॥ प० पद्मलेस्या ५ ॥ त० तेमज । य० वळी शु० शुक्ललेस्या ६ ॥ य० वळी छ० छठीकही भगवंते य० वळी ना० लेस्यानानाम तु० पुरणे ज० जेमछे तेम अनुक्रमे कया ॥ ३ ॥

मूलः—किण्हा नीला काऊ य तेऊ पम्हा तहेव य ।
सुक्कलेसा य छट्ठा य नामाइं तु जहक्कमं ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः—हवे लेस्यानां नाम कहे छे, १ कृष्ण लेस्या, २ नील लेस्या, ३ कापुत लेस्या, ४ तेजु लेस्या, ५ पद्म लेस्या, ६ शुक्ल लेस्या, ए ६ लेस्यानां नाम अनुक्रमे जाणवां, ए प्रथम बोल थयो ॥३॥

अर्थः—हवे बीजुंलेस्यानो वर्ण कहेछे जी० मेघपाणी सहित वादला होय नि० चोपडां दिसे ते सं० सरिपा ॥ ग० पाडाना सिंगसरिपा अ० अरिठा स० सरिपा ॥ खं० गांडानां उंगणना मेलसरिपी । अ० काजल सरिपी न० आंखनी कीकी नि० सरिपी । कि० कृष्ण ले० लेस्या उ० वळी व० वर्णथकी एहवी काली जाणवी ॥४॥

मूलः—जीमूयनिद्धसंकासा गवलरिट्ठगसन्निभा ।
खञ्जणनयणनिभा किण्हलेसा उ वण्णओ ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थः—हवे लेस्याना वर्ण कहे छे, जेवुं पाणी सहीत वादळ होय, जेवां पाडानां शींगडां होय, जेवुं अरीठुं होय, जेवुं गाडानुं खंजन (मळी) होय, जेवुं काजळ होय, जेवी आंखनी कीकी होय, एहवो कृष्ण लेस्यानो काळो वर्ण जाणवो ॥ ४ ॥

अर्थः—नी० नीललेश्या जेहवी । भ० अशोकनामा वृक्षहोयते सं० सरिपी ॥ चा० चासपक्षी नि० पिछास०सरिपी

गाथा १ भावार्थः-गुरु कहेता हता हे शिष्य ! लेश्या अध्ययन जेम छे तेम हुं अनुक्रमे कहीश ते तुं सांभळ ? ते ज प्रधानी लेश्या छे, कर्मनी स्थिति निवारे छे, तेथी कर्म लेश्या ए कही, ते लेश्यानो रस सांभळ ! ! ! ॥ १ ॥

अर्थः-का० लेश्यानानाय १ व० लेश्याना वर्ण २ र० तिसादिलेश्यानोरस ३ ग० लेश्यानो गंध ४ फा० लेश्यानोस्परस ५ प० लेश्याना परिणाम ६ ल० लेश्याना लक्षण ७ ठा० लेश्याना थानक ८ ठि० लेश्यानि स्थिति । ९ ग० भूंडिलेश्याने दुर्गती गइ लेश्याये सुगतिहोय । १० च० पूरणे आ० आभवनुं अंतर मुहुर्त आगमी भावनुं होय तेवारे ते० लेश्याना ॥ ११ बोल नुं० पूरणे गु० सांभलि हेशिष्य मे० गुरु कहे छे सुजने करेता थका ॥ २ ॥

मूलः-नामाइं वण्णरसगन्धफासपरिणामलक्खणं ।
ठाणं ठिई गई चाउं लेसाणं तु सुणेह मे ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः-हवे लेश्याना ११ बोल कहे छे १ नाम, २ वर्ण, ३ गंध, ४ रस, ५ स्पर्श, ६ परिणाम ७ लक्षण, ८ स्थानक, ९ स्थिति, १० गती, ११ चवन एटले आभवनुं अंतर मुहुर्तनुं आयुष्य बाकी रहे त्यारे आगला भवनी लेश्या प्रगटे, एम ११ बोल संक्षेपे कह्या, गुरु कहेता हता हे शिष्य ? ए ११ बोल विस्तार पूर्वक कहीश ? ते तुं सांभळ ? ॥ २ ॥

अर्थः-कृ० कृष्णलेश्या १ ॥ नी० नीललेश्या २ ॥ का० कापोतलेश्या ३ ते०तेजु

४ ॥ प० पद्मलेस्या ५ ॥ त० तेमज । य० वळी सु० शुक्ललेस्या ६ ॥ य० वळी छ० छठीकही भगवंते य० वळी ना० लेश्यानानाम तु० पुरणे ज० जेमछे तेम अनुक्रमे कथा ॥ ३ ॥

मूलः—किण्हा नीला काऊ य तेऊ पम्हा तहेव य ।
सुक्कलेसा य छट्ठा य नामाइं तु जहक्कमं ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः—हवे लेस्यानां नाम कहे छे, १ कृष्ण लेस्या, २ नील लेस्या, ३ कापुत लेस्या, ४ तेजु लेस्या, ५ पद्म लेस्या, ६ शुक्ल लेस्या, ए ६ लेस्यानां नाम अनुक्रमे जाणवां, ए प्रथम बोल थयो ॥३॥

अर्थः—हवे बीजुंलेस्यानो वर्ण कहेछे जी० मेघपाणी सहित वादला होय नि० चोपडां दिसे ते सं० सरिपा ॥ ग० पाडाना सिंगसरिपा अ० अरिठा स० सरिपा ॥ खं० गांडानां उंगणना मेलसरिपी । अ० काजल सरिपी न० आंखनी कीकी नि० सरिपी । कि० कृष्ण ले० लेस्या उ० वळी व० वर्णथकी एहवी काली जाणवी ॥४॥

मूलः—जीमूयनिद्धसंकासा गवलरिट्ठगसन्निभा ।
खञ्जणनयणनिभा किण्हलेसा उ वण्णओ ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थः—हवे लेस्याना वर्ण कहे छे, जेवुं पाणी सहीत वादळ होय, जेवां पाडानां शींगडां होय, जेवुं अरीठुं होय, जेवुं गाडानुं खंजन (मळी) होय, जेवुं काजळ होय, जेवी आंखनी कीकी होय, एहवो कृष्ण लेस्यानो काळो वर्ण जाणवो ॥ ४ ॥

अर्थः—नी० नीललेश्या जेहवी । अ० अशोकनामा वृक्षहोयते सं० सरिपी ॥ चा० चासपक्षी पि० पिछास०सरिपी

गाथा १ भावार्थः-गुरु कहेता हवा हे शिष्य ! लेश्या अध्ययन जेम छे तेम हुं अनुक्रमे कहीश ते तुं सांभळ ! ते ६ प्रकारनी लेश्या छे, कर्मनी स्थिति निमाडे छे, तेथी कर्म लेश्या ए कही, ते लेश्यानो रस सांभळ ! ! ! ॥ १ ॥

अर्थः-ना० लेश्यानानाम १ व० लेश्याना वर्ण २ र० तिणादिलेश्यानोरस ३ ग० लेश्यानो गंध ४ फा० लेश्यानोफरस ५ प० लेश्याना परिणाम ६ ल० लेश्याना लक्षण ७ ठा० लेश्याना थानक ८ ठि० लेश्यानि स्थिति । ९ ग० भूंडिलेश्याये दुर्गती गइ लेश्याये सुगतिहोय । १० च० पूरणे भा० आभवनुं अंतर मुहुर्त आउषो थाकतुं होय तेवारे ले० लेश्याना ॥ ११ बोल तुं० पूरणे सु० सांभलि हेशिष्य गे० गुरु कहे छे सुनने कहेता थका ॥ २ ॥

मूलः-नामाइं वण्णरसगन्धफासपरिणामलक्खणं ।
ठाणं ठिई गई चाउं लेसाणं तु सुणेह मे ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः-हवे लेश्याना ११ बोल कहे छे १ नाम, २ वर्ण, ३ गंध, ४ रस, ५ स्पर्श, ६ परिणाम ७ लक्षण, ८ स्थानक, ९ स्थिति, १० गती, ११ चवन पछले आभवनुं अंतर मुहुर्तनुं आयुष्य बाकी रहे त्यारे आगला भवनी लेश्या परिणमे, एम ११ बोल संक्षेपे कह्या, गुरु कहेता हवा हे शिष्य ! ए ११ बोल विस्तार पूर्वक कहीश ? ते तुं सांभळ ? ॥ २ ॥

अर्थः-क० कृष्णलेश्या १ ॥ नी० नीललेश्या २ ॥ का० कापोतलेश्या ३ य०चळी ॥ ते० तेजुलेश्या

४ ॥ प० पद्मलेस्या ५ ॥ त० तेमज । य० वळी सु० शुक्लेस्या ६ ॥ य० वळी छ० छठीकही भगवंते य० वळी ना० लेश्यानानाम तु० पुरणे ज० जेमछे तेम अनुक्रमे कह्या ॥ ३ ॥

मूलः—किण्हा नीला काऊ य तेऊ पम्हा तहेव य ।
सुक्कलेसा य छट्ठा य नामाइं तु जहक्कमं ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः—हवे लेस्यानां नाम कहे छे, १ कृष्ण लेस्या, २ नील लेस्या, ३ कापुत लेस्या, ४ तेजु लेस्या, ५ पद्म लेस्या, ६ शुक्ल लेस्या, ए ६ लेश्यानां नाम अनुक्रमे जाणवां, ए प्रथम बोल थयो ॥३॥

अर्थः—हवे बीजुंलेस्यानो वर्ण कहेछे जी० मेघपाणी सहित वादला होय नि० चोपडां दिसे ते सं० सरिपा ॥ ग० पाडाना सिंगसरिपा अ० अरिठा स० सरिपा ॥ खं० गांडानां उंगणना मेलसरिपी । अ० काजल सरिपी न० आंखनी कीकी नि० सरिपी । कि० कृष्ण ले० लेस्या उ० वळी व० वर्णथकी एहवी काली जाणवी ॥४॥

मूलः—जीमूयनिद्धसंकासा गवलरिट्ठगसन्निभा ।
खञ्जणनयणनिभा किण्हलेसा उ वण्णओ ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थः—हवे लेस्याना वर्ण कहे छे, जेवुं पाणी सहीत वादळ होय, जेवां पाडानां शींगडां होय, जेवुं अरीठुं होय, जेवुं गाडानुं खंजन (मळी) होय, जेवुं काजळ होय, जेवी आंखनी कीकी होय, एहवो कृष्ण लेस्यानो काळो वर्ण जाणवो ॥ ४ ॥

अर्थः—नी० नीललेश्या जेहवी । अ० अशोकनामा वृक्षहोयते सं० सरिपी ॥ चा० चासपती पि० पिछास०सरिपी

वे० वैडूर्यस्य जेह वि० गोवडं हिंमे सं० तेमरिषुं ॥ नी० नीलवे० जेहवा उ० वली व० वर्णथकी नीलवर्णा ॥५॥

मूलः—नीलासोगसंकासा चासपिच्छसमप्पभा ।
वेरुलियनिद्धसंकासा नीललेसा उ वण्णओ ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः—जेवो निर्मो अशोक वृक्ष होय, जेवडी मुडानी पांख होय, जेवुं वैडूर्य रत्न चोपडयुं होय, तेवडो तीव्र नीलवानो लीलो वर्ण जाणवो ॥ ५ ॥

अर्थः—व० अतसीनो पु० फूल सं० मारिषी को० कोयडानी छ० पांख स० सरिषी पा० पारेवानी गी० कांठ वि० सरिषी ॥ वा० कागोर वे० जेहवानो उ० वली व० वर्णथकी कांइकवानी कांइकवानी ॥ ६ ॥

मूलः—अयसीपुप्फसंकासा कोइलच्छदसन्निभा ।
पारेवयगीवनिभा काओलेसा उ वण्णओ ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः—जेवडो अतसीना फूल होय, जेवडी कोयडानी पांख होय ? जेवडी पारेवानी ग्रीवा (कोट) होय, तेवडो कांइक कालोने कांइक रातो एवडो काबुत वेरवानो वर्ण जाणवो ॥ ६ ॥

अर्थः—हि० हिंगलो पा० कोइक धातु विशेष सं० तेमरिषी । व० वनस्पति आ० मुर्ख स० सरिषी । सु० पुरावा पु० मुख सरिषी व० डोक वि० सरिषी वे० जेवु वे० जेहवा उ० वली व० वर्ण थकी रातो जाणवो ॥७॥

मूलः—हिंगुलुयाइसंकासा तरुणाइच्चसन्निभा ।
सुयतुण्डपईवनिभा तेओलेसा उ वण्णओ ॥ ७ ॥

४ ॥ प० पद्मलेस्या ५ ॥ त० तेमज । य० वळी सु० शुक्लेस्या ६ ॥ य० वळी छ० छठीकही भगवंते य० वळी ना० लेस्यानानाम तु० पुरणे ज० जेमछे तेम अनुक्रमे कया ॥ ३ ॥

मूलः–किण्हा नीला काऊ य तेऊ पम्हा तहेव य ।
सुक्कलेसा य छट्ठा य नामाइं तु जहक्कमं ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः–हवे लेस्यानां नाम कहे छे, १ कृष्ण लेस्या, २ नील लेस्या, ३ कापुत लेस्या, ४ तेजु लेस्या, ५ पद्म लेस्या, ६ शुक्ल लेस्या, ए ६ लेस्यानां नाम अनुक्रमे जाणवां, ए प्रथम बोल थयो ॥३॥

अर्थः–हवे बीजुंलेस्यानो वर्ण कहेछे जी० मेघपाणी सहित वादला होय नि० चोपडां दिसे ते सं० सरिपा ॥ ग० पाडाना सिंगसरिपा अ० अरिठा स० सरिपा ॥ खं० गांडानां उंगणना मेलसरिपी । अ० काजल सरिपी न० आंखनी कीकी नि० सरिपी । कि० कृष्ण ले० लेस्या उ० वळी व० वर्णथकी एहवी काली जाणवी ॥४॥

मूलः–जीमूयनिद्धसंकासा गवलरिट्ठगसन्निभा ।
खञ्जणनयणनिभा किण्हलेसा उ वण्णओ ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थः–हवे लेस्याना वर्ण कहे छे, जेवुं पाणी सहीत वादळ होय, जेवां पाडानां शींगडां होय, जेवुं अरीठुं होय, जेवुं गाडानुं खंजन (मळी) होय, जेवुं काजळ होय, जेवी आंखनी कीकी होय, एहवो कृष्ण लेस्यानो काळो वर्ण जाणवो ॥ ४ ॥

अर्थः–नी० नीललेस्या जेहवी । अ० अशोकनामा वनस्पतीयते सं० सरिपी ॥ चा० चासपक्षी पि० पिछास०सरिपी

वे० वैडूर्यरत्न जेहवी नि० चोपडुं दिसे सं० ते सरिखुं ॥ नी०नीज ले०लेश्या उ०वली व०वर्णथकी नालीजाणवी ॥५॥

मूलः—नीलासोगसंकासा चासपिच्छसमप्पभा ।
वेरुलियनिद्धसंकासा नीललेसा उ वण्णओ ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः—जेवो निलो अशोक वृक्ष होय, जेहवी शुद्धानी पांख होय, जेवुं वैडूर्य रत्न चोपडयुं देखाय, तेहवो नील लेश्यानो नीलो वर्ण जाणवो ॥ ५ ॥

अर्थः—भ० अलसीनो पु० फूल सं० सारिखी को० कोयलनी छ० पांख स० सरिखी पा० पारेवानी ग्री० कोट नि० सरिखी ॥ का० कापोत ले० लेश्यानो उ० वली व० वर्णथकी कोइकाली कोइकराती ॥ ६ ॥

मूलः—अयसीपुप्फसंकासा कोइलच्छदसन्निभा ।
पारेवयगीवनिभा काओलेसा उ वण्णओ ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः—जेहवां अलसीना पुष्प होय, जेहवी कोयलनी पांख होय ? जेहवी पारेवानी ग्रीवा (कोट) होय, तेहवो कोइक काळोने कोइक रातो एहवो कापुत लेश्यानो वर्ण जाणवो ॥ ६ ॥

अर्थः—हि० हिंगलो धा० कोइक धातु विशेष सं० तेसरिखी । त० उगता आ० सूर्य स० सरिखी । शु० शुद्धाना मु०मुख सरीखी प० दीवा नि०सरीखी ते० तेजु ले०लेश्या उ०वली व०वर्ण थकी राती जाणवी ॥७॥

मूलः—हिंगुलधाउसंकासा तरुणाइच्चसन्निभा ।
सुगतुण्डपईवनिभा तेओलेसा उ वण्णओ ॥

४ ॥ प० पद्मलेस्या ५ ॥ त० तेमज । य० वळी सु० शुक्ललेस्या ६ ॥ य० वळी छ० छठीकही भगवंते य० वळी ना० लेस्यानानाम तु० पुरणे ज० जेमछे तेम अनुक्रमे कह्या ॥ ३ ॥

मूलः–किण्हा नीला काऊ य तेऊ पम्हा तहेव य ।
सुक्कलेसा य छट्ठा य नामाइं तु जहक्कमं ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः–हवे लेस्यानां नाम कहे छे, १ कृष्ण लेस्या, २ नील लेस्या, ३ कापुत लेस्या, ४ तेजु लेस्या, ५ पद्म लेस्या, ६ शुक्ल लेस्था, ए ६ लेस्यानां नाम अनुक्रमे जाणवां, ए प्रथम बोल थयो ॥३॥

अर्थः–हवे बीजुंलेस्यानो वर्ण कहेछे जी० मेघपाणी सहित वादला होय नि० चोपडां दिसे ते सं० सरिपा ॥ ग० पाडाना सिंगसरिपा अ० अरिठा स० सरिपा ॥ खं० गांडानां उंगणना मेलसरिपी । अ० काजल सरिपी न० आंखनी कीकी नि० सरिपी । कि० कृष्ण ले० लेस्या उ० वळी व० वर्णथकी एहवी काली जाणवी ॥४॥

मूलः–जीमूयनिद्धसंकासा गवलरिट्ठगसन्निभा ।
खञ्जणनयणनिभा किण्हलेसा उ वण्णओ ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थः–हवे लेस्याना वर्ण कहे छे, जेवुं पाणी सहीत वादळ होय, जेवां पाडानां शींगडां होय, जेवुं अरीठुं होय, जेवुं गाडानुं खंजन (मळी) होय, जेवुं काजळ होय, जेवी आंखनी कीकी होय, एहवो कृष्ण लेस्यानो काळो वर्ण जाणवो ॥ ४ ॥

अर्थः–नी० नीललेश्या जेहवी । अ० अशोकनामा वृक्षहोयते सं० सरिपी ॥ चा० चासपक्षी पि० पिलास०सरिपी

वे० वैडूर्यरत्न जेहवी नि० चोपडुं दिसे सं० ते सरिषुं ॥ नी० नीज ले० लेश्या उ० बली व० वर्णथकी नीली जाणवी ॥५॥

मूलः—नीलासोगसंकासा चासपिच्छसमप्पभा ।
वेरुलियनिद्धसंकासा नीललेसा उ वण्णओ ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः—जेवो निलो अशोक वृक्ष होय, जेहवी शुडानी पांख होय, जेवुं वैडूर्य रत्न चोपड्युं देखाय, तेहवो नील लेश्यानो लीलो वर्ण जाणवो ॥ ५ ॥

अर्थः—अ० अशोकतीनां पु० फूल सं० सरिषी को० कोयलनी छ० पांख स० सरिषी पा० पारेवानी ग्री० कोट नि० सरिषी ॥ का० कापोत ले० लेश्यानो उ० बली व० वर्णथकी कांइकाली कांइकराती ॥ ६ ॥

मूलः—अयसीपुप्फसंकासा कोइलच्छदसन्निभा ।
पारेवयगीवनिभा काओलेसा उ वण्णओ ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः—जेवां अलसीना पुष्प होय, जेहवी कोयलनी पांख होय ? जेहवी पारेवानी ग्रीवा (कोट) होय, तेहवो कांइक काळोने कांइक रातो एहवो कापुत लेश्यानो वर्ण जाणवो ॥ ६ ॥

अर्थः—हि० हिंगलो धा० कोइक धातु विशेष सं० तेसरिषी । त० उगता आ० सूर्य स० सरिषी । शु० शुडाना तु०मुख सरीषी प० दीवा नि०सरीषी ते० तेजु ले०लेश्या उ०बली व०वर्ण थकी राती जाणवी ॥७॥

मूलः—हिङ्गुलधाउसंकासा तरुणाइच्चसन्निभा ।
सुगतुण्डपईवनिभा तेओलेसा उ वण्णओ ॥

४ ॥ प० पद्मलेश्या ५ ॥ त० तेमज । य० वळी शु० शुक्ललेश्या ६ ॥ य० वळी छ० छहीएही भगवंते प० वळी ना० लेश्यानानाम तु० पुरणे ज० जेमछे तेम अनुक्रमे कह्या ॥ ३ ॥

मूलः–किण्हा नीला काऊ य तेऊ पम्हा तहेव य ।
सुक्कलेसा य छट्ठा य नामाइं तु जहक्कमं ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः–हवे लेश्यानां नाम कहे छे, १ कृष्ण लेश्या, २ नील लेश्या, ३ कापुत लेश्या, ४ तेजु लेश्या, ५ पद्म लेश्या, ६ शुक्ल लेश्या, ए ६ लेश्यानां नाम अनुक्रमे जाणवां, ए प्रथम बोल थयो ॥३॥

अर्थः–हवे बीजुंलेश्यानो वर्ण कहेछे जी० मेघपाणी सहित वादळा होय ति० चोपडां दिसे ते सं० सरिपा ॥ ग० पाडाना सिंगसरिषा अ० अरिठा स० सरिषा ॥ खं० गांडानां उंगनना मेलसरिषी । अ० काजळ सरिषी न० आंखनी कीकी सरिषी । कि० कृष्ण ले० लेश्या उ० वळी व० वर्णथकी एहवी काळी जाणवी ॥४॥

मूलः–जीमूयनिद्धसंकासा गवलरिट्ठगसन्निभा ।
खञ्जणनयणनिभा किण्हलेसा उ वण्णओ ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थः–हवे लेश्याना वर्ण कहे छे, जेवुं पाणी सहीत वादळ होय, जेवां पाडानां शींगडां होय, जेवुं अरीठुं होय, जेवुं गाडानुं खंजन (मळी) होय, जेवुं काजळ होय, जेवी आंखनी कीकी होय, एहवो कृष्ण लेश्यानो काळो वर्ण जाणवो ॥ ४ ॥

अर्थः–नी० नीललेश्या जेहवी । अ० अशोकनामा वृक्षहोयते सं० सरिषी ॥ चा० चासपक्षी पि० पिछात० सरिषी

वे० वैडूर्यरत्न जेहवी नि० चोखडुं दिसे सं० ते सरिखुं ॥ नी० नीज ले० लेश्या उ० बली व० वर्णथकी नीली जाणवी ॥५॥

मूलः—नीलासोगसंकासा चासपिच्छसमप्पभा ।
वेरुलियनिद्धसंकासा नीललेसा उ वण्णओ ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः—जेवो निर्ध्य अशोक वृक्ष होय, जेहवी सुडानी पांख होय, जेवुं वैडूर्य रत्न चोपडयुं देखाय, तेवो नील लेश्यानो त्रीजो वर्ण जाणवो ॥ ५ ॥

अर्थः—व० अलसीनां पु० फूल सं० सरिसी को० कोयलनी छ० पांख स० सरिसी पा० पारेवानी गी० ग्रीव नि० सरिसी ॥ का० कालोर ले० लेश्यानो उ० बली व० वर्णथकी कांइकसाली कांइकराती ॥ ६ ॥

मूलः—अयसीपुप्फसंकासा कोइलच्छदसन्निभा ।
पारेवयगीवनिभा काओलेसा उ वण्णओ ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः—जेहवां अलसीना फूल होय, जेहवी कोयलनी पांख होय ? जेहवी पारेवानी ग्रीवा (पोट) होय, तेहवो कांइक काशोने कांइक रातो एहवो काउल लेश्यानो वर्ण जाणवो ॥ ६ ॥

अर्थः—हि० हिंगलो पा० कोइक धातु सिंदूर सं० तेमसिरी । व० उगता आ० सूर्य स० सरिसी । सु० सुडाना पु० फूल सरिसी व० शोभा नि० सरीसी ते० तेजु ले० लेश्या उ० बली व० वर्ण थकी राती जाणवी ॥७॥

मूलः—हिंगुलुयाउसंकासा तरुणाइच्चसन्निभा ।
सुयतुण्डपईनिभा तेओलेसा उ वण्णओ ॥ ७ ॥

४ ॥ प० पद्मलेश्या ५ ॥ त० तेमज । य० वली शु० शुक्लेश्या ६ ॥ य० वली छ० छहीकही भगवंते य० वली ना० लेश्यानानाम तु० पुरणे ज० जेमछे तेम अनुक्रमे कया ॥ ३ ॥

मूलः–किण्हा नीला काऊ य तेऊ पम्हा तहेव य ।
सुक्कलेसा य छट्ठा य नामाइं तु जहक्कमं ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः–हवे लेश्यानां नाम कहे छे, १ कृष्ण लेश्या, २ नील लेश्या, ३ कापुत लेश्या, ४ तेजु लेश्या, ५ पद्म लेश्या, ६ शुक्ल लेश्या, ए ६ लेश्यानां नाम अनुक्रमे जाणवां, ए प्रथम बोल कयो ॥३॥

अर्थः–हवे बीजुंलेश्यानो वर्ण कहेछे जी० मेघपाणी सहित वादला होय नि० चोपडां दिसे ते सं० सरिषा ॥ ग० पाडाना सिंगसरिषा अ० अरिठा स० सरिषा ॥ खं० गांडानां उंगणना मेलमखिषी । अ० काजल सरिषी न० आंखनी कीकी नि० सरिषी । कि० कृष्ण ले० लेश्या उ० बडी व० वर्णथकी एहवी काली जाणवी ॥४॥

मूलः–जीमूयनिद्धसंकासा गवलरिट्ठगसन्निभा ।
खञ्जणनयणनिभा किण्हलेसा उ वण्णओ ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थः–हवे लेश्याना वर्ण कहे छे, जेवुं पाणी सहीत वादळ होय, जेवां पाडानां शींगडां होय, जेवुं अरीठुं होय, जेवुं गाडानुं खंजन (मळी) होय, जेवुं काजळ होय, जेवी आंखनी कीकी होय, एहवो कृष्ण लेश्यानो काळो वर्ण जाणवो ॥ ४ ॥

अर्थः–नी० नीललेश्या जेहवी । अ० अशोकनामा वृक्षादोयंत सं० सरिषी ॥ चा० चासपंखी नि० पिछास० सरिषी

वेरुलियनिद्धसंकासा नीललेसा उ वण्णओ ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः—जेवो निलो अशोक वृक्ष होय, जेहवी सुडानी पांख होय, जेवुं वैडूर्य रत्न चोपडयुं देखाय, तेहवो नील लेश्यानो लीलो वर्ण जाणवो ॥ ५ ॥

अर्थः—भ० अलसीनां पु० फूल सं० सरिषी को० कोयलनी छ० पांख स० सरिषी पा० पारेवानी ग्री० कोट नि० सरिषी ॥ का० कापोत ले० लेश्यानो उ० वली व० वर्णथकी कांइकाळी कांइकराती ॥ ६ ॥

मूलः—अयसीपुप्फसंकासा कोइलच्छदसन्निभा ।
पारेवयगीवनिभा काओलेसा उ वण्णओ ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः—जेहवां अलसीना पुष्प होय, जेहवी कोयलनी पांख होय ? जेहवी पारेवानी ग्रीवा (कोट) होय, तेहवो कांइक काळोने कांइक रातो एहवो कापुत लेश्यानो वर्ण जाणवो ॥ ६ ॥

अर्थः—हि० हिंगलो धा० कोइक धातु विशेष सं० तेसरिषी । त० उगता आ० सूर्य स० सरिषी । सु० सुडाना तु०मुख सरीषी प० दीवा नि०सरीषी ते० तेजु ले०लेश्या उ०वली व०वर्ण थकी राती जाणवी ॥७॥

मूलः—हिङ्गुलधाउसंकासा तरुणाइच्चसन्निभा ।
सुगतुण्डपईवनिभा तेओलेसा उ वण्णओ ॥ ७ ॥

गाथा ७ भावार्थः–जेहवो दीवलानो वर्ण होय, जेहवो उगवो सुर्य होय, जेहवुं सुडानुं मुल होय, जेहवी दीवानी शिषा होय, तेहवो तेजु लेश्यानो रानो वर्ण जाणवो ॥ ७ ॥

अर्थः–ह० हरियालना भे० कटका। सं० सरिषी। ह० इन्द्रगो भे० कटका स० सरिषी। म० मग नामा वनस्पति अ० बीजी वनस्पति जाति तेहना कु० फूल नि० सरिषी॥ प० पद्मलेश्या उ० त्रीजी व० वर्ण थकी पीली जाणवी॥८॥

मूलः–हरियालभेदसंकासा हलिद्राभयसमप्पभा ।
सणासणकुसुमनिभा पम्हलेसा उ वण्णओ ॥ ८ ॥

गाथा ८ भावार्थः–जेहवो हडतालना कटकानो रंग होय, जेहवो इन्द्रगोना कटकानो रंग होय, जेहवो सणनामा वनस्पतीना पुष्पनो तथा बीजनो रंग होय तेहवो पद्म लेश्यानो पीलो रंग जाणवो ॥ ८ ॥

अर्थः–सं० संप अने अ० अंकनामा रतन कु० मचकुंद वनस्पतिना फुल सं० सरिषी। खी० दुधनी पू० धारा स० सरिषी प्र० प्रभा ॥ र० रुपाना हा० हार। सं० सरिषी सु० शुक्ल ले० लेश्या उ० त्रीजी व० वर्ण थकी उत्तमी जाणवी॥९॥

मूलः–सद्धक्कुन्दसंकासा खीरपूरसमप्पभा ।
रयणहारसंकासा सुक्कलेसा उ वण्णओ ॥ ९ ॥

गाथा ९ भावार्थः–जेहवो शंखनो रंग होय, जेहवो अंक नामे रत्ननो रंग होय, जेहवो मचकुंद वनस्पतीना पुष्पनो रंग होय, जेहवी दूधनी धारानो रंग होय, जेहवो रुपानो हार होय, तेहवो शुक्ल लेश्यानो ऊजवळ वर्ण जाणवो, ए लेश्यानो रंगनो त्रीजो बोल थयो ॥ ९ ॥

नि० चोपडुं दिसे सं० तेसरिखुं ॥ नी० नीललेश्या उ० त्रीजी व० वर्णथकी नीली जाणवी ॥५॥

मूलः—नीलासोगसंकासा चासपिच्छसमप्पभा ।
वेरुलियनिद्धसंकासा नीललेसा उ वण्णओ ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः—जेवो निलो अशोक वृक्ष होय, जेहवी सुडानी पांख होय, जेवुं वैडूर्य रत्न चोपडयुं देखाय, तेहवो नील लेश्यानो लीलो वर्ण जाणवो ॥ ५ ॥

अर्थः—भ० अळसीनां पु० फूल सं० सरिखी को० कोयलानी छ० पांख स० सरिखी पा० पारेवानी ग्री० कोट नि० सरिखी ॥ का० कापोत ले० लेश्यानो उ० बली व० वर्णथकी कांइकाली कांइकराती ॥ ६ ॥

मूलः—अयसीपुप्फसंकासा कोइलच्छदसन्निभा ।
पारेवयगीवनिभा काओलेसा उ वण्णओ ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः—जेहवां अळसीना पुष्प होय, जेहवी कोयलानी पांख होय ? जेहवी पारेवानी ग्रीवा (कोट) होय, तेहवो कांइक काळोने कांइक रातो एहवो कापुत लेश्यानो वर्ण जाणवो ॥ ६ ॥

अर्थः—हि० हिंगलो धा० कोइक धातु विशेष सं० तेसरिखी । त० उगता आ० सूर्य स० सरिखी । सु० सुडाना तु० मुख सरीखी प० दीवा नि० सरीखी ते० तेजु ले० लेश्या उ० बली व० वर्ण थकी राती जाणवी ॥७॥

मूलः—हिङ्गुलधाउसंकासा तरुणाइच्चसन्निभा ।
सुगतुण्डपईवनिभा तेओलेसा उ वण्णओ ॥ ७ ॥

तीखो स्वाद नील लेस्याना रसनो जाणवो ॥ ११ ॥

अर्थः–ज० जेम त० काचा अं० आंवाना र० रसनोस्वाद ॥ तु० तुवर नामा वनस्पतिनुं काचु फल जेहवुं कसाएलुं होय तेहवोस्वाद क० काचा कोठना फलनो वा०वळी जा० जेहवो रि०स्वाद होय ए० एहथकि वि०पण अ०अनंतगुणो र० रसनोस्वाद अति कसाएलो उ०वळी॥ का० कापोत लेशानो ना०जाणवो ॥१२॥

मूलः–जह तरुणअम्बगरसो तुवरकविट्ठस्स वावि जारिसओ।
एत्तो वि अणन्तगुणो रसो उ काऊए नायव्वो ॥ १२ ॥

गाथा १२ भावार्थः–जेहवो काचा आंवानो रसनो स्वाद होय, जेहवो तुंवरनामे वनस्पतीना फळना रसनो स्वाद होय, जेहवो काचा कोठना रसनो स्वाद होय, ए थकी पण अनंत गुणो कसाएलो (तुरो) स्वाद काप्युत लेस्याना रसनो जाणवो ॥ १२ ॥

अर्थः–ज० जेम प० पाकां अ० आंवाना र०रसनोस्वाद । प०पाका क०कोठनाफळनो वा० पण जा० जेहवो रि० स्वादहोय ॥ ए० एहथकी वि० पण अ० अनंतगुणो जाणवो । र० स्वाद कांइक पाटो कांइक मीठो उ० वळी ते० तेजोलेस्यानो ना० जाणवो ॥ १३ ॥

मूलः–जह परिणियम्बगरसो पक्ककविट्ठस्स वावि जारिसओ।
एत्तो वि अणन्तगुणो रसो उ तेओए नायव्वो ॥ १३ ॥

गाथा १३ भावार्थः–जेहवो पाका आंवां (केरी) ना रसनो स्वाद होय, जेहवो पाका कोठना फळना रसनो स्वाद

नीलासोगसंकासा चासपिच्छसमप्पभा ।
वेरुलियनिद्धसंकासा नीललेसा उ वण्णओ ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः—जेवो निलो अशोक वृक्ष होय, जेवी पुडानी पांख होय, जेवुं वैडूर्य रत्न होयछे
तेवाज, तेवो नील देखावनो त्रीजो वर्ण जाणवो ॥ ५ ॥

अर्थः—अ० अशोकनां पु० फूल सं० सरिखी को० कोयलनी छ० पांख स० सरिखी पा० पारेवानी ग्री०
कांठ नि० सरिखी ॥ का० कापोत ले० लेश्यानो उ० बजी व० वर्णयकी कांइकसाली कांइकसाली ॥ ६ ॥

अयसीपुप्फसंकासा कोइलच्छदसन्निभा ।
पारेवयगीवनिभा काओलेसा उ वण्णओ ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः—जेवां अळशीना फूल होय, जेवी कोयलनी पांख होय ? जेवी पारेवानी
ग्रीवा (कोट) होय, तेवो कांइक काळोने कांइक रातो एवो कापुत लेश्यानो वर्ण जाणवो ॥ ६ ॥

अर्थः—हि० हिंगळो धा० गेरुक धातु सिंग सं० सेमलिनी । त० उगता आ० सुर्य स० सरिखी । शु०
पुरताना पु० फूल सरीखी प० शंखा नि० सरीखी ते० तेजु ले० लेश्या उ० बजी व० वर्ण थकी रातो जाणवो ॥७॥

हिंगुलधाउसंकासा तरुणाइच्चसन्निभा ।
सुयतुण्डपईवनिभा तेओलेसा उ वण्णओ ॥ ७ ॥

जाणवो, ए लेस्याना रसना स्वादनो त्रीजो बोल थयो ॥ १५ ॥

अर्थः–हवे लेस्याना गंध कहेछे ज० जेम गो० गायना म०मडादुं गं० गंधपाडुओहोय ॥ सु० कुतराना म० मडानो व०वळी ज० जेम अ० सर्पना म० मडानो पाडुओ गंधहोय ॥ ए०एहथकी वि०पण अ०अनंतगुणो

भुंडोगंध॥ले०लेस्या अ०अप्रसस्त ३। कृष्ण १ । नील २। कापोत ३ । एत्रण लेस्यानो भूंडो गंध जाणवो॥१६॥

मूलः–जह गोमडस्स गन्धो सुणगमडस्स व जहा अहिमडस्स ।
एत्तो वि अणन्तगुणो लेसाणं अप्पसत्थाणं ॥ १६ ॥

गाथा १६ भावार्थः–हवे लेस्याना गंधनो चोथो बोल कहे छे, जेहवो गायना मडदानो गंध होय, जेहवो कुतराना मडदानो गंध होय, जेहवो सर्पना मडदानो गंध होय, ए थकी पण अनंत गुणो भुंडो गंध कृष्ण नील ने कापुत ए त्रणे लेस्यानो जाणवो ॥ १६ ॥

अर्थः–ज० जेम सु०सुगंध कु०केवडादिकना फुलनो गं० गंध ॥ गं० सुगंध वा०वास पि०पीसतावाटतां जेहवो गंधहोय ॥ ए० एहथकी वि०पण अ० अनंतगुण सुगंध होय ॥ पं० प्रसस्त ले० लेस्या ति० त्रणनीते ॥ तेजु १ पद्म २ शुक्ल ३ एनोसुगंध पि० वळी ॥ १७ ॥

मूलः–जह सुरहिकुसुमगन्धो गन्धवासाण पिस्समाणाणं ।
एत्तो वि अणन्तगुणो पसत्थलेसाण तिण्हं पि ॥ १७ ॥

गाथा १७ भावार्थः–जेहवो केवडा गुण

वे० वैडूर्यरत्न जेहवी नि० चोपडयुं दिसे सं० ने सरिखुं ॥ नी० नील ले० लेश्या उ० बली व० वर्णथकी नीली जाणवी ॥५॥

मूलः—नीलासोगसंकासा चासपिच्छसमप्पभा ।
वेरुलियनिद्धसंकासा नीललेसा उ वण्णओ ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः—जेनो निद्धो अशोक वृक्ष होय, जेहवी सुडानी पांख होय, जेवुं वैडूर्य रत्न चोपडयुं देखाय, तेहवो नील लेश्यानो नीलो वर्ण जाणवो ॥ ५ ॥

अर्थः—अ० अळसीनां पु० फूल सं० सरिखी को० कोयलानी छ० पांख स० सरिखी पा० पारेवानी ग्री० कोट नि० सरिखी ॥ का० कालोत ले० लेश्यानो उ० बली व० वर्णथकी कांइकाली कांइकराती ॥ ६ ॥

मूलः—अयसीपुप्फसंकासा कोइलच्छदसन्निभा ।
पारेवयगीवनिभा काओलेसा उ वण्णओ ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः—जेहवां अळसीना पुष्प होय, जेहवी कोयलानी पांख होय ? जेहवी पारेवानी ग्रीवा (कोट) होय, तेहवो कांइक काळोने कांइक रातो एहवो कापुत लेश्यानो वर्ण जाणवो ॥ ६ ॥

अर्थः—हि० हिंगलो धा० कोइक धातु विशेष सं० सरिखी । त० उगता आ० सूर्य स० सरिखी । सु० सुडाना मु० मुख सरीखी प० दीवा नि० सरीखी ते० तेजु ले० लेश्या उ० बली व० वर्ण थकी राती जाणवी ॥७॥

मूलः—हिङ्गुलधाउसंकासा तरुणाइच्चसन्निभा ।
सुगतुण्डपईवनिभा तेओलेसा उ वण्णओ ॥ ७ ॥

जेहवो सरसंवना पुष्पनो स्पर्श होय, ते थकी पण अनंत गुणो सुंडाळो तेजु, पद्म, शुक्ल ए त्रण लेश्यानो स्पर्श जाणवो, ए लेश्यानो स्पर्शनो पांचमो बोल थयो ॥ १९ ॥

अर्थः-ति० त्रणप्रकारे तेजघन १ मध्यम २ उत्कृष्टो ३ व० वळी । नव० जघन्यना । त्रण प्रकार जघन्य ॥ १ मध्यम् २ उत्कृष्टो ३ । एम एकेकाना त्रण भेदकरता वि० नवभेद थाय वा० वळी ॥ स० एम सतावीस वि० भेदथाय ए० एम करता एकासी भेदपण थाय वा० वळी । दु० वेसे ते० त्रेतालीस भेदपण थाय वा० वळी ले० लेश्यानाए हो० होय प० एटला परिणाम ॥ २० ॥

मूलः-तिविहो व नवविहो वा सत्तावीसइविहेकसीओ वा ।
दुसओ तेयालो वा लेसाणं होइ परिणामो ॥ २० ॥

गाथा २० भावार्थः-हवे लेश्यानां प्रणामनो ६ ठो बोल कहे छे, लेश्या त्रण प्रकारे प्रणमे ते १ जघन्य, २ मध्यम, ३ उत्कृष्ट, लेश्या नव प्रकारे प्रणमे ते, १ जघन्यनो जघन्य, २ जघन्यनो मध्यम, ३ जघन्यनो उत्कृष्ट; मध्यमना त्रण भेद ते, ४ मध्यमनो जघन्य, ५ मध्यमनो मध्यम, ६ मध्यमनो उत्कृष्ट; उत्कृष्टना त्रण भेद ते, ७ उत्कृष्टनो जघन्य, ८ उत्कृष्टनो मध्यम, ९ उत्कृष्टनो उत्कृष्ट एम ९. एवी रीते लेश्या २७ प्रकारे प्रणमे ते पूर्व नव भेद कहेला छे ते एकेकाना १ जघन्य, २ मध्यम, ३ उत्कृष्ट एवा त्रण त्रण भेद करतां नवे त्रीए सतावीस भेद थाय ए २७ भेद थाय तेना जघन्य, मध्यम ने उत्कृष्ट एवा त्रण त्रण भेद करतां २७×३=८१ भेद थाय; ते ८१ भेद तेना जघन्य, मध्यमने उत्कृष्ट एवा त्रण त्रण भेद करतां ८१×३=२४३ भेद थाय,

अर्थः-हवे लेश्यानो स्वाद कहेछे ॥ ज० जेम क० कडुआ तुं० तुंबडानो र० रसनोस्वाद । नि० नीब-नारसनो स्वाद क० कडुआ रो० रोहिणीनो वृक्ष र० रसनो स्वाद ना० घणी । ए० एहथकी वि० पण अ० अनंतगुणो कडवो र० रसनो स्वाद य० घणी कि० कृष्णलेश्यानो अतिकडवो ना० जाणवो ॥ १० ॥

मूलः-जह कडुगतुम्बगरसो निम्बरसो कडुगरोहिणिरसो वा ।
एत्तो वि अणन्तगुणो रसो य किण्हाए नायव्वो ॥ १० ॥

गाथा १० भावार्थः-हवे लेश्याना रसना स्वादनो त्रीजो बोल कहे छे, जेहवो कडवा तुंबडाना रसनो स्वाद होय, जेहवो कडवा लींबडानां रसनो स्वाद होय, जेहवो रोहीणा नामा वनस्पतीना रसनो स्वाद होय ए थकी पण अनंत गुणो कडवो कृष्ण लेश्याना रसनो स्वाद जाणवो ॥ १० ॥

अर्थः-ज०जेम ति०त्रिकटु सुंठ पीपरी मरी ए त्रणना ध०घणी र०रसनो स्वाद । नि० तिणो ज०जेम ह०हस्ती पि० पीपरनो स्वादहोय बा०घणी । ए० एहथकी वि० पण अ० अनंतगुणो ॥ र० अति तिणोस्वाद उ० घणी नी० नीललेश्यानो ना० जाणवो ॥ ११ ॥

मूलः-जह तिगडुयस्स य रसो तिक्खो जह हत्थिपिप्पलीए वा ।
एत्तो वि अणन्तगुणो रसो उ नीलाए नायव्वो ॥ ११ ॥

गाथा ११ भावार्थः-जेहवो त्रीगट सुंठना रसनो स्वाद होय, जेहवो पीपरना रसनो स्वाद होय, जेहवो काळा मरीनां रसनो स्वाद होय, जेहवो हस्ती पीपरना रसनो स्वाद होय, ए थकी पण अनंत गुणो

एयजोगसमाउत्तो किण्हलेसं तु परिणमे ॥ २२ ॥

गाथा २२ भावार्थः–इहलोक परलोकनां दुःखनी शंका रहीत निष्वंश प्रणामी जीव हणतां सुग रहित अतींद्री एहवा पाप व्यापारे करी सहीत होय ते कृष्ण लेश्याने प्रणामे करी प्रणमे ॥ २२ ॥

अर्थः–हवे नील लेश्यानुं लक्षण कहेछे ॥ ई० इर्षा परजीव गुणनुं असदहवुं अ० घणो कदाग्रह । अ० तपरहित । अ० भली विचाररहित मा० परजीवने वंचवानी माया ॥ अ० अनाचार प्रवर्तवा निरलजपणुं ॥ गि० विषयनो लंपट। प० द्वेषभावसहित प०वळी स० धुर्त्त प० आठ मदनो करणहार ॥ २० स्वादनो लो० लंपट । सा० सातानो ग० गवेषणहार ॥ २३ ॥

मूलः–ईसा अमरिस अतवो अविज्जमाया अहीरिया ।
गिद्धी पओसे य सढे पमत्ते रसलोलुए सायगवेसए य ॥ २३ ॥

गाथा २३ भावार्थः–हवे बीजो नील लेश्यानुं लक्षण कहेछे, इर्षावंत, घणो कदाग्रही, तप रहीत, भली विचाररहित, परजीवने ठेवरवानी कपटाइ सहीत, अनाचार प्रवर्तनां निर्लजपणुं, विषयनो लंपट, द्वेषभावसहित पुर्त, आठ प्रकारना मदनो करनार, घनोज स्वादनो लंपट, शातानो गवेखनार (शोधनार) ॥ २३ ॥

अर्थः–आ० आरंभ थकी अ० निवर्त्तनो नथी ॥ खु० सर्व जीवने अहितकारी सा० अणविमास्यानां कार्यनो करणहार न० ते मनुष्य प० एहवा जो० जोगना व्यापारे करी ॥ स० सहित होय ते जीव ॥ नी० ते नील ले० लेश्याए प० पामे प० परिणामे परिणमे ॥ २४ ॥

[illegible] एवा तेजु लेश्याना रसनो स्वाद जाणवो ॥ १३ ॥

अर्थः-र० मरान वा० मदना ए० जेहवो र० स्वाद होय । वि० पण वि० प्रकारना व० वली ना० भागवना ना० जेहवो होय वि० स्वाद । प० मापीए जेहनीआयुंमर ने मयनुंनीपनो मे० मरणाद इहांनुं नीपनुं जे र० एहवो र० स्वादहोय ए० एह थकी प० पण पद्मलेश्यानो प० अनंतगुणोकडो स्वादजाणवो ॥ १४ ॥

मूलः-चरयाऊगी एव रसो विविहाण व आसवाण जारिसओ ।
महुमेरयस्स व रसो एत्तो पम्हाए परएणं ॥ १४ ॥

गाथा १४ भावार्थः-जेहवो उत्तम चारुणीना रसनो स्वाद होय, जेहवो विविध प्रकारना आसवनारस-नो स्वाद होय, ए थकी पण अनंत गुणो स्वाद पद्म लेश्याना रसनो जाणवो ॥ १४ ॥

अर्थः-च० खजुरनो अने मु० द्राक्षनो र० जेहवो स्वाद होय ॥ खी० दूधनो र० जेहवो स्वादहोय । खं० खांडनो स० साकरनो स्वाद जेहवो र० स्वाद होय वा०वली ॥ ए०एह वि०थकी अ० अनंतगुणो ॥ र० पीजंरस्वाद होय उ०वली सु० शुक्ललेश्यानो ना० जाणवो ॥ १५ ॥

मूलः-खज्जूरमुद्दियरसो खीररसो खण्डसक्करसो वा ।
एत्तो वि अणन्तगुणो रसो उ सुक्काए नायवो ॥ १५ ॥

गाथा १५ भावार्थः-जेहवो खजुरनो स्वाद होय, जेहवो द्राक्षनो स्वाद होय, जेहवो दूधनो स्वाद होय, जेहवो खांड साकरनो स्वाद होय, ए थकी पण अनंत गुणो मीठो स्वाद शुक्ल लेश्याना रसनो स्वाद

गाथा २६ भावार्थः–जे वचने करी परजीव उंचो ऊछळे, एटले माथे चढ्को उठे तेवां वचननो बोल नार, दुष्टवचनो बोलनार, चोरीनो करनार, अनेराजीवनी सुख संपती देखी शके नहि, एहवा पाप व्यापारे करी सहीत होय, ते कापुत लेस्याने प्रणामे करी प्रणमे ॥ २६ ॥

अर्थः–हवे तेजु लेस्यानो लक्षण कहेछे नी०मन वचन कायाए ॥ करी नीचीवर्ति मानरहित ॥ अ० चपलपणा रहित ॥ अ० मायारहित ॥ अ० कुतुहलपणा रहित ॥ वि०विनित होय वि०विनय करवाने विषे दं०इंद्रियनो दमणहार ॥ जो०स्वाध्यायादिकने व्यापारे करी सहित होय उ०सिद्धांत भणता जे तप करवोछे ते तपवंत होय॥२७॥

मूलः–नीयावत्ती अचवले अमाई अकुतूहले ।
विणीयविणए दन्ते जोगवं उवहाणवं ॥ २७ ॥

गाथा २७ भावार्थः–हवे चोथो तेजु लेस्यानां लक्षण कहे छे, मन वचन, कायाए करी मान रहीत, चपळपणा रहीत, कुतुहळ रहीत, कपटाइ रहीत, विनित होय, गुरुनी भक्ति करनार, इंद्रीनो दमणहार स्वाध्यायादीकना व्यापारे करी सहीत होय, सिद्धांत भणतां जे तप करवानो कह्यो छे, ते तपवंत होय॥२७॥

अर्थः–पि० धर्म जेहने वल्लभ छे ॥ द० धर्मने विषे निश्चल होय ॥ व० पापथी ॥ भी० वीहे हि० हितनो वांछणहार मोक्षनो वांछणहार ॥ ए० एहवो जो० धर्मने व्यापारे स० सहित होय ने जीव ॥ ते० ते तेजु लेस्याने तु० पुरणे पं० परिणामे परिणमे ॥ २८ ॥

मूलः–पियधम्मे दढधम्मे वज्जभीरू हिएसए ।

पण अनंत गुणो भलो गंध तेजु पद्म शुक्ल ए त्रण लेश्यानो जाणवो, ए लेश्यानां गंधनो चोथो बोल थयो ॥१७॥

अर्थः-ज० जेम क० करवतनो फा०फरस असुहामणोहोय। गा०गायबलदनी जि०जिभनोजेहवो कठिणफरसहोय ग०घळी ॥ सा० सागना प० पत्रनापानडा जेहवो फरसहोय ॥ ए० एहथकी वि०पण अ० अनंतगुणो कठिण फरस। ले० त्रण लेश्या अ० अप्रसस्थनो। कृष्ण १। नील २। कापोत ३ ॥ १८ ॥

मूलः-जह करगयस्स फासो गोजिब्भाए य सागपत्ताणं।
एत्तो वि अणन्तगुणो लेसाणं अप्पसत्थाणं ॥ १८ ॥

गाथा १८ भावार्थः-हवे लेश्याना स्पर्शनो पांचमो बोल कहे छे, जेहवो करवतनो स्पर्श होय, जेहवो गाय अने बळदनी जीभनो स्पर्श होय, जेहवो शागटशना पत्रनो स्पर्श होय, ए थकी पण अनंत गुणो फर्कश स्पर्श कृष्ण नील कापुत ए त्रण लेश्यानो जाणवो ॥ १८ ॥

अर्थः-ज० जेम चू० चूरनामा वनस्पतीना फलनुं अतिसुहालो व०वळी फा०फरसहोय न०मापणनुं फरस व०घळी स०तरिसनामा वृक्षना कु० फुलनो जेहवो फरसहोय। ए० एहथकी वि०पण अ० अनंतगुणो सुहालो फरस प० प्रसस्थभली ले० लेश्या ति० त्रणनो वि०पण ॥ १९ ॥

मूलः-जह चूरस्स व फासो नवणीयस्स व सरीसकुसुमाणं।
एत्तो वि अणन्तगुणो पसत्थलेसाण तिण्हं पि ॥ १९॥

गाथा १९ भावार्थः-जेहवो चुरनामे वनस्पतीना फळनो स्पर्श होय, जेहवो मांखणनो स्पर्श होय,

गाथा ३० भावार्थः-थोडुं बोलनार, ऊपशांतवेद, जितेंद्री, एहवा भला व्यापारे करी सहीत होय ते पद्म लेश्याने प्रणामे करी प्रणमे ॥ ३० ॥

अर्थः-हवे शुकल लेश्याना लक्षण कहेछे अ०आर्तध्यानने अने रु० रौद्र ध्याननेव० वरजे । ध० धर्म ध्यान अने सु० शुक्लध्याननेझा० ध्याय । प० रागद्वेष थकी उपसव्यां छे ॥ चि० चित्त जेहनो ॥ दं० दम्यो छे आत्मा जेणे ॥ स० पांच सुमतिवंत ॥ गु० गुप्तो व०वळी गु० त्रण गुप्तिने विषे ॥ ३१ ॥

मूलः-अट्टरुद्दाणि वज्जित्ता धम्मसुक्काइ झायए ।
पसन्तचित्ते दन्तप्पा समिए गुत्ते य गुत्तिसु ॥ ३१ ॥

गाथा ३१ भावार्थः-हवे शुकल लेश्यानां लक्षण कहे छे, आर्तध्यानने रौद्रध्यान वर्जिने धर्मध्यानने शुक्लध्यान ध्याय, जेहनुं चित्त राग द्वेषथी ऊपशांत थएल छे, जेणे पोतानो आत्मा दम्यो छे, पांच सुमतीवंत, त्रण गुप्तीवंत ॥ ३१ ॥

अर्थः-स० सराग सहित होय वा० अथवा वी०वीतराग होय । उ० रागद्वेष उपसम्या छे जेणे जि० जितेंद्रि ॥ ए० एहवा जो० मुणने व्यापारे स० सहित ॥ सु० शुक्ल ले० लेश्याने तु० पुरणे प० परिणामे करी परिणमे ॥ ३२ ॥

मूल-सरागे वीयरागे वा उवसन्ते जिइन्दिए ।
एयजोगसमाउत्तो सुक्कलेसं तु परिणमे ॥ ३२ ॥

एटलो ६ लेश्याना प्रणाम जाणवा, ए ६ लेश्याना प्रणामनो ६ ठो बोल थयो ॥ २० ॥

अर्थः-हवे लेश्याना लक्षण कहेछे ॥ प्रथम कृष्ण लेश्याना लक्षण कहेछे । प० पांच आ० आश्रवनो प०सेवनहार ति० त्रण मन वचन कायाएकारी । अ० अगुप्त मोकल्यो छ० छकायने विषे अ० अविरति घातनो करणहार य० वळी ॥ ति० तिव्रपणे आ० आरंभने प० परिणामे करीसहित । सु० सर्वजीवने अहितनो करणहार सा० जीवघात करवाने विषे साहसीक न० मनुष्य ॥ २१ ॥

मूलः-पञ्चासवप्पवत्तो तिहिं अगुत्तो छसुं अविरओ य ।
तिव्वारम्भपरिणओ खुद्दो साहसिओ नरो ॥ २१ ॥

गाथा २१ भावार्थः-हवे लेश्यानां लक्षणनो ७ मो बोल कहे छे, तेमां प्रथम कृष्ण लेश्यानां लक्षण कहे छे, पांच आश्रवनो सेवनार, त्रण अगुप्ती ते मन वचन कायाना योग मोकळा मूंके, ६ कायने विषे अविरति एटले ६ कायना जीवोनी घातनो करनार, आरंभने विषे तिव्र प्रणामे करी सहीत, सर्व जीवने अहितकारी, जीवघात करवाने विषे साहसीक ॥ २१ ॥

अर्थः-नि० इहलोकपर लोकना दुरतनी संकारहित निर्द्धंस प० परिणामछे तेहनुं । नि० जीव दयना गुणरहित । अ० अनिवेंद्रि । प० पापूर्वे कयाते जो० मनवचन कायाना तेणे पाप जो० व्यापारे करी स० सहित थको कि० कृष्ण ले० लेश्यानुं तु० पुरणे प० परिणामेकरी परिणमे ॥ २२ ॥

मूलः-निद्धन्धसपरिणामो निस्संसो अजिइन्दिओ ।

कृष्ण ले० लेश्यानी स्थिति ॥ ३४ ॥

मूलः—मुहुत्तद्धं तु जहन्ना तेत्तीसा सागरा मुहुत्तहिया ।
उक्कोसा होइ ठिई नायव्वा किण्हलेसाए ॥ ३४ ॥

गाथा ३४ भावार्थः—हवे लेश्यानी स्थितिनो नवमो बोल कहे छे, कृष्ण लेश्यानी स्थिति जघन्य अं-
तर मुहुर्तनी अने उत्कृष्टी ३३ सागरोपम अने उपर अंतर मुहुर्त अधीक जाणवी ॥ ३४ ॥

अर्थः—मु० अंतर मुहुर्त अ० काळ तु० पुरणे ॥ ज० जघन्य ॥ द० दश उ० सागरोपम प० अने एक पल्योपमने
अ० असंख्यातमो भागे अ० अधिक उ० उत्कृष्टि हो० होय ठि० स्थिति जा० जाणवी नी० नीळ ले० लेश्यानी ॥ ३५ ॥

मूलः—मुहुत्तद्धं तु जहन्ना दस उदही पलियमसंखभागमब्भहिया ।
उक्कोसा होइ ठिई नायव्वा नीललेसाए ॥ ३५ ॥

गाथा ३५ भावार्थः—नील लेश्यानी स्थिति जघन्य अंतर मुहुर्तनी उत्कृष्टी १० सागरोपम अने उपर
एक पल्यनो असंख्यातमो भाग अधीक जाणवी ॥ ३५ ॥

अर्थः—मु० अंतर मुहुर्त अ० काळ तु० पुरणे न० जघन्य स्थिति ॥ ति० त्रण सागरोपम प० पल्यो-
पमने अ० असंख्यातमे भागे अ० अधिक ॥ उ० उत्कृष्टि हो० होय ठि० स्थिति ॥ जा० जाणवी का०
कापोत लेश्यानी ॥ ३६ ॥

मूलः—मुहुत्तद्धं तु जहन्ना तिण्णुदही पलियमसंखभागमब्भहिया

मूलः-आरम्भाओ अविरओ खुद्दोसाहस्सिओनरो ।
एयजोगसमाउत्तो नीललेसं तु परिणमे ॥ २४ ॥

गाथा २४ भावार्थः-आरंभथी निवर्त्यो नथी, सर्व जीवने अहेतकारी, अगविचारता कार्यनो करनार, एवा पाप व्यापारे करी सहीत होय, ते नील लेश्याने प्रणामे प्रणमे ॥ २४ ॥

अर्थः-हवे कापोत लेश्यानां लक्षण कहे छे व०वांकुं बोल्यो नं०वांकाकार्यनो स०करणहार ॥ नि०निवड माया सहित अ० सरलपणा रहित ॥ प० आपणा दोष ढांके उ०कपटेकरी सहित ॥ मि०मिथ्यादृष्टि अ०अनार्य॥२५॥

मूलः-वंके वंकसमायारे नियडिल्ले अणुज्जुए ।
पलिउंचगओवहिए मिच्छदिट्ठी अणारिए ॥ २५ ॥

गाथा २५ भावार्थः-हवे त्रीजी कापुत लेश्यानां लक्षण कहेछे, वांकुं बोले, वांका कार्यनो करनार, निवड (मजबुत) कपटाइ सहीत,सरळपणा रहीत, पोताना दोष ढांके, कपटाइएकरी सहीत, मिथ्यात्वदृष्टी, अनार्य॥२५॥

अर्थः-व०जे वचनथी पर जीव उद्वेग पामे ॥ मार्म चाडको उंडे तेहवा वचननो बोलणहार ॥ दु०दुष्ट वचननो बोल्णहार प०वळी ॥ ते०चोरीनो करणहार या०य०वळी म० अनेरानी संपदा देखी न खमे न शके ॥ए०एहवो जो० पाप व्यापारे करी स०सहित होय ते जीव का०कापोत लेश्याने तु०पुरण ॥ प० परिणामे करी परिणमे॥२६॥

मूलः-उप्फासगदुट्ठवाई य तेण यावि य मच्छरी ।
एयजोगसमाउत्तो काऊलेसं तु परिणमे ॥ २६ ॥

उपर अंतर मुहुर्त अधीक जाणवी ॥ ३८ ॥

अर्थः–सु० एक अंतरमुहुर्त अ० काळ तु० पुरणे ज०जघन्य स्थिति । ते०तेत्रिस सा०सागरोपम उपर सु०अंतरमुहुर्त अ० अधिक ॥ उ० उत्कृष्टि । हो० होय ठि० स्थिति ना० ते जाणवी सु० शुक्ल लेस्यानी स्थिति जाणवी ॥ ३९ ॥

मूलः–मुहुत्तद्धं तु जइन्ना तेत्तीसं सागरा मुहुत्तहिया ।
उक्कोसा होइ ठिई नायव्वा सुक्कलेसाए ॥ ३९ ॥

गाथा ३९ भावार्थः–शुक्ल लेस्यानी स्थिति जघन्य अंतर मुहुर्तनी अने उत्कृष्टी ३३ सागरोपम अने उपर अंतर मुहुर्त अधीक जाणवी ॥ ३९ ॥

अर्थः–ए० ए ख० निश्चे ले० लेस्यानी ॥ ओ० समुचय ठि०स्थिति व० कही हो० होय ॥ च०च्यारे वि०वळी ग०गतिने विषे ॥ ए० ए आगळ कहेशे ॥ ले० लेस्यानी ठि० स्थिति तु०वळी वो०हुं कहीश ॥४०॥

मूलः–एसा खलु लेसाणं ओहेण ठिई वण्णिया होइ ।
चउसु वि गईसु एत्तो लेसाण ठिइं तु वोच्छामि ॥४०॥

गाथा ४० भावार्थः–ए समुचे लेस्यानी स्थिति कही, हवे चार गतीने विषे लेस्यानी स्थिति

एयजोगसमाउत्तो तेऊलेसं तु परिणमे ॥ २८ ॥

गाथा २८ भावार्थः-जेहने धर्म प्रीय छे, धर्मने विषे निश्चळ छे, पापथकी डरे, मोक्षनो वांछनार, एहवा धर्मना व्यापारे करी सहित होय, ते तेजु लेश्याने प्रणामे करी प्रणमे ॥ २८ ॥

अर्थः-हवे पद्म लेश्यानुं लक्षण कहे छेप० पातळो थोडो छे जेहने को० क्रोध मा० मान य० वळी मा० माया लो० लोभ य०वळी प० पातळो थोडोछे जेहने ॥ प० रागद्वेष थकी उपसम्युं छे चि० चित्त जेहनुं ॥ दं० दम्योछे आत्मा जेणे॥जो० मन वचन कायाना जोग वश छे जेहना उ० सिद्धांत भणवा जे॥तप करयोछे ते तपवंत छे॥२९॥

मूलः-पयणुकोहमाणे य मायालोभे य पयणुए ।
पसन्तचित्ते दन्तप्पा जोगवं उवहाणवं ॥ २९ ॥

गाथा २९ भावार्थः-हवे पद्म लेश्यानां लक्षण कहेछे, जेहने क्रोध, मान, माया ने लोभ पातळा छे, जेहनुं चित्त राग द्वेषथी प्रशांत थएल छे, जेणे पोतानो आत्मा दम्यो छे, जेहने मन वचन कायानो योग वश छे, सिद्धांत भणवा तप करवानो कहेल छे, ते तपनो करनार होय ॥ २९ ॥

अर्थः-त० तेम प० थोडा वचननो बोलणहार य०वळी ॥ उ० उपशांत थयो चीतस्यो जि० जितेंद्रि ॥ ए० एहवो जो० धर्मने व्यापारे करी स० सहित होय ते जीव ॥ प० पद्म लेश्याने तु० पुरणे॥प० परिणामे परिणमे ॥३०॥

मूलः-तहा पयणुवाई य उवसन्ते जिइन्दिए ।
एयजोगसमाउत्तो पम्हलेसं तु परिणमे ॥ ३० ॥

तेत्तीससागरोउ उक्कोसा होइ किण्हाए ॥ ४३ ॥

गाथा ४३ भावार्थः–कृष्ण लेश्यानी स्थिति जघन्य १० सागरोपम अने उपर पल्यनो असंख्यातमो भाग अधीक अने उत्कृष्टी ३३ सागरोपमनी जाणवी ॥ ४३ ॥

अर्थः–ए० ए ने० नारकी सघलाओनी ॥ ले० लेश्यानी ठि०स्थिति उ० पुरणे व० कही हो०होय ॥ ते० तेवार प० पछी वो० हुं कहिश । ति० तिर्यंचनी म० मनुष्यनी दे० देवतानी लेश्यानी स्थिति ॥ ४४ ॥

मूलः–एसा नेरइयाणं लेसाण ठिई उ वण्णिया होइ ।
तेण परं वोच्छामी तिरियमणुस्साण देवाणं ॥ ४४ ॥

गाथा ४४ भावार्थः–ए सर्व नारकीनी लेश्यानी स्थिति कही, हवे तिर्यंच मनुष्यने देवतानी लेश्यानी स्थिति कहीशुं ॥ ४४ ॥

अर्थः–अ० अंतरमुहुर्त अ० काल । ले० लेश्यानी ठि०स्थिति ज०जे । ज०जे पृथ्वीकायादिकने विषे । जा० जे कृष्ण लेश्यानी । ति० तिर्यंच अने न० समुछिम अने गर्भज मनुष्यादिकनी अंतरमुहुर्त वा०पुरणे उ० वर्जिने के० केवलीने जे केवल शुक्ल ले०लेश्या होय ते वरजीने स्थिति जाणवी ॥ ४५ ॥

मूलः–अन्तोमुहुत्तमद्धं लेसाण जहिं जहिं जाउ ।
तिरियाण नराणं वा वज्जित्ता केवलं लेसं ॥ ४५ ॥

गाथा ४५ भावार्थः–पृथ्वी, पाणी, अग्नी, वायु, वनस्पती, बेइंद्री, तेइंद्री, चौरेंद्री, संज्ञी ने असंज्ञी

॥ ३४ ॥

॥ ४३० ॥

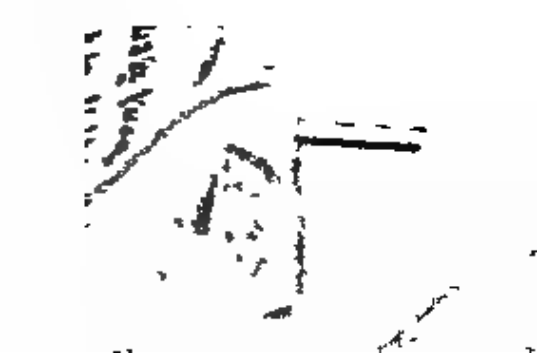

प० पल्यनुं अ० असंख्यातमा भागनी इ० ए ॥ उ०उत्कृष्टि स्थिति हो० होय कि० कृष्ण लेस्यानी ॥ ४८ ॥

मूलः—दस वाससहस्साइं किण्हाए ठिई जहन्निया होइ ।
पलियमसंखिज्ज इमो उक्कोसो होइ किण्हाए ॥ ४८ ॥

गाथा ४८ भावार्थः—कृष्ण लेस्यानी स्थिति जघन्य १० हजार वर्षनी अने उत्कृष्टी पल्यनां असंख्यातमो भाग जाणवी ॥ ४८ ॥

अर्थः—जा० जे कि०कृष्ण लेस्यानी ठि०स्थिति स्व० निश्चे। उ०उत्कृष्टि सा०ते उ०वली स०एक समय अ०अधिक एटली स्थिति ज०जघन्य नी०नील लेस्यानी। प० पल्यनो अ०असंख्यातमो भाग ते जघन्यस्थिति उपर अधिकुं जाणवुं च० पुरणे उ० उत्कृष्टि स्थिति ॥ ४९ ॥

मूलः—जा किण्हाए ठिई खलु उक्कोसा सा उ समयमब्भहिया।
जहन्नेणं नीलाए पलियमसंखं च उक्कोसा ॥ ४९ ॥

गाथा ४९ भावार्थः—कृष्ण लेस्यानी उत्कृष्टी स्थिति होय, ते उपरांत एक समय अधीक एटली नील लेस्यानी, जघन्य स्थिति पल्यनो असंख्यातमो भाग अधीक जाणवी । ४९ ॥

अर्थः—जा० जे नी०नील लेस्यानी ठि०स्थिति स्व०निश्चे जाणवी । उ०उत्कृष्टि सा० ते उ०वली स० एक समय अ०अधिक एटली स्थिति ज० जघन्य । का० कापोत लेस्यानी जाणवी ॥ प०पल्यनो अ०असंख्यातमो भाग ते जघन्य स्थिति उपरे अधिकी जाणवी । च० पुरणे उ० उत्कृष्टि स्थिति ॥ ५० ॥

उक्कोसा होइ ठिई नायव्वा काउलेसाए ॥ ३६ ॥

गाथा ३६ भावार्थः—कापुत लेश्यानी स्थिति जघन्य अंतर मुहूर्तनी अने उत्कृष्टी त्रण सागरोपम अने उपर पल्यने असंख्यातमे भाग अधीक जाणवी ॥ ३६ ॥

अर्थः—मु० अंतर मुहूर्त अ० काळ ॥ तु० पुरणे ज०जघन्य स्थिति ॥ हो०वे उ०सागरोपम प० पल्यने अ०असंख्यातमे भागे अ० अधिक ॥ उ० उत्कृष्टि हो० होय ठि० स्थिति ना० ते जाणवी ते० तेजु ले-श्यानी स्थिति ॥ ३७ ॥

मूलः—मुहुत्तद्धं तु जहन्ना दोण्णुदही पलियमसंखभागमब्भहिया
उक्कोसा होइ ठिई नायव्वा तेउलेसाए ॥ ३७ ॥

गाथा ३७ भावार्थः—तेजु लेश्यानी स्थिति जघन्य अंतर मुहूर्तनी अने उत्कृष्टी बे सागरोपम अने उ-पर पल्यने असंख्यातमे भाग अधीक जाणवी ॥ ३७ ॥

अर्थः—मु० अंतर मुहूर्त अ०काळ तु०पुरणे ज०जघन्य स्थिति । द०दश सा०सागरोपमे हो०होय प० पछी मु०अंतरमुहूर्त अ० अधिक उ० उत्कृष्ट हो० होय ठि० स्थिति ना० ते जाणवी प०पद्मलेश्यानी॥३८॥

मूलः—मुहुत्तद्धं तु जहन्ना दस होन्ति य सागरा मुहुत्तहिया।
उक्कोसा होइ ठिई नायव्वा पम्हलेसाए ॥ ३८ ॥

गाथा ३८ भावार्थः—पद्म लेश्यानी स्थिति जघन्य अंतर मुहूर्तनी अने उत्कृष्टी १० सागरोपम अने

॥ ति० त्रण उ० सागरोपमनी प० उपर पल्यनुं ॥ अ० असंख्यातमो भाग च० पुरणे ॥ उ० उत्कृष्टि ॥४१॥

मूलः—दस वाससहस्साइं काऊए ठिई जहन्निया होइ ।
तिण्णुदही पलिओवम असङ्खभागं च उक्कोसा ॥ ४१ ॥

गाथा ४१ भावार्थः—हवे नर्क गतीनी लेस्यानी स्थिति कहे छे, काउत लेस्यानी स्थिति जघन्य १० हजार वर्षने उत्कृष्ट ३ सागरोपम अने उपर पल्यनो असंख्यातमो भाग अधीक जाणवो ॥ ४१ ॥

अर्थः—ति० त्रण सागरोपम अने प० पल्यनुं ॥ अ० असंख्यातमो भाग ज० जघन्य ॥ नी० नील लेस्यानी ठि० स्थिति द० दस उ० सागरोपमनी ॥ प० पल्यनुं अ० असंख्यातमो भाग च० पुरणे ॥ उ० उत्कृष्टि स्थिति नील लेस्यानी ॥ ४२ ॥

मूलः—तिण्णुदही पलिओवम संखभागो जहन्नेण नीलठिई ।
दसउदही पलिओवम असङ्खभागं च उक्कोसा ॥ ४२ ॥

गाथा ४२ भावार्थः—नील लेस्यानी स्थिति जघन्य त्रण सागरोपम अने उपर पल्यनो असंख्यातमो भाग अधीकने उत्कृष्टी दश सागरोपम अने उपर पल्यनो असंख्यातमो भाग अधीक जाणवी ॥ ४२ ॥

अर्थः—द० दस उ०सागरोपम अने प० पल्यनो ॥ अ० असंख्यातमो भाग ज० जघन्य हो० होय ते० तेत्रीस सा० सागरोपम अने ॥ उ० उत्कृष्टि स्थिति हो० होय कि० कृष्ण लेस्यानी ॥ ४३ ॥

मूलः—दसउदही पलिओवम असङ्खभागं जहन्निया होइ ।

गाथा ५६ भावार्थ –हवे जे लेश्याए जे गतीमां उपजे ते १० मो बोल कहेछे, कृष्ण, नीलने काउत ए अध्य०
ण अधर्म लेश्याए करी जीव दुर्गतिए उपजे ॥ ५६ ॥
अर्थः–ते० तेजो लेश्या । प० पद्मलेश्या । सु० शुक्ल लेश्या । ति० त्रण वि०पण ए०ए घ० धर्मनी ले० लेश्या ॥ ३४ ।
कही । ए०एणी ति०त्रिग वि०पण लेश्यार जी०जीव ॥ सु० देवलोक मनुष्यादिक सदगति मांहे उ० उपजे॥५७॥

मूलः–तेऊ पम्हा सुक्का तिन्नि वि एयाओ धम्मल्लाओ ।
एयाहि तिहि वि जीवो सुग्गइं उववज्जइ ॥ ५७ ॥

गाथा ५७ भावार्थः–तेजु, पद्म ने शुक्ल ए त्रण धर्म लेश्याए करी जीव सदगतिए ऊपजे, ए लेश्या-
नो १० मो बोल थयो ॥ ५७ ॥
अर्थः–हवे मरण वेला आगली भवनी लेश्या आवे तेवारे । ले० लेश्या स० सयली प० पहेला
स० समयने विषे प० लेश्या परिणमति वेला तु०वली ॥ म०नथी हु०वली क०कोइ जीवने विषे उ०उपजतो।
प० परभवने विषे अ० होय जी० कोइ जीवने ॥ ५८ ॥

मूलः–लेसाहिं सवाहिं पढमे समयम्मि परिणयाहिं तु ।
न ह कस्सइ उववाओ परभवे अत्थि जीवस्स ॥ ५८ ॥

तिर्यंचपंचेंद्री, देवकीने कोड पुर्व देवे अणाहारी शुक्ल लेश्या होय तेथी केवली वर्जिने गुमुक्षिणने गर्भज मनुष्य ए सर्वने विषे कृष्णादीक ६ लेश्या पोतपोतानी जेटली जेटली लेश्या लाभे ते सर्वनी लेश्यानी स्थिति जघन्य अंतर मुहूर्तनी जाणवी ॥ ४५ ॥

अर्थः-मु० अंतरमुहूर्त ज०काळमु०पुरवे। ज०जघन स्थिति। उ०उत्कृष्टि हो०होय। पु०पूर्वकोटिनी। न० नव व० वर्षे उ० उणी। ना०जाणवी शु० केवलज्ञानवंतनी शुक्ल ले०लेश्यानी स्थिति जाणवी ॥४६॥

मूलः-मुहुत्तद्धं तु जहन्ना उक्कोसा होइ पुवकोडीओ ।
नवहिं वरिसेहि ऊणा नायव्वा सुक्कलेसाए ॥ ४६ ॥

गाथा ४६ भावार्थः-शुक्ल लेश्यानी स्थिति जघन्य अंतर मुहूर्तनी अने उत्कृष्टी क्रोड पुर्वमां ९ वरस ऊणी ए केवली आश्री समजवी ॥ ४६ ॥

अर्थः-ए० ए तिर्यंच अने न० मनुष्यनी ले० लेश्यानी ठि०स्थिति उ०घणी व० कही हो०होय॥ ले० लेश्या प० पद्मी । हो० कहिए ॥ ले० लेश्यानी ठि० स्थिति उ० घणी दे० देवता सरखानी ॥ ४७ ॥

मूलः-एमा तिरियनराणं लेसाए ठिई उ वण्णिया होइ ।
तेण परं वोच्छामी लेसाण ठिई उ देवाणं ॥ ४७ ॥

गाथा ४७ भावार्थः-ए तिर्यंच अने मनुष्यनी स्थिति कही, हवे देवतानी लेश्यानी स्थिति कहीशुं ॥४७॥

अर्थः-ए० एम पा० उपर व० सदृश्यनी। कि०कृष्ण लेश्यानी ठि० स्थिति ज०जघन्य। हो० होय।

अने वि०ते जाणीने ॥ अ० तुष्ण १ नीच २ कषायो ३ थ ४ ३ ६ ६ ६

मूलः—जा नीलए ठिई खलु उक्कोसा सा उ समयमब्भहिया।
जहन्नेणं काऊए पलियमसंखं च उक्कोसा ॥ ५० ॥

गाथा ५० भावार्थः—जेटली नील लेश्यानी उत्कृष्टी स्थिति होय, ते उपरांत एक समय अधीक ए-टली कापुत लेश्यानी, जघन्य स्थिति पल्यनो असंख्यातमो भाग अधीक जाणवी ॥ ५० ॥

अर्थः—ते० तेवार प०पछे घो० इं कहुंछुं ॥ ने० तेजु ले०लेश्यानी ज० जेम ॥ गु० देवताना गा०समुहने छे तेम कहिवुं शिष्य प्रते गुरु कहे छे भ० भवनपती । वा०वाणव्यंतर । जो० ज्योतिषी वे० वैमानीक च०चारे प्र ४ जातिना देवतानी लेश्यानी स्थिति आगळ कहेशे ॥ ५१ ॥

मूलः—तेण परं वोच्छामी तेऊलेसा जहा सुरगणं।
भवणवइवाणमन्तरजोइसवेमाणियाणं च ॥ ५१ ॥

गाथा ५१ भावार्थः—तेवार पछी गुरु कहेता हवा हे शिष्य ! भवनपती, वाणव्यंतर, ज्योतिषी, वैमानिक ए चार जातीना देवताने विषे तेजु लेश्या छे, तेहनी स्थिति हुं आगळ कहीश ॥ ५१ ॥

अर्थः—प० पल्योपम एक ज० जघन्य ॥ उ० उत्कृष्टि स्थिति सा० सागरोपम दु० बे भ०झाझेरां । प० पल्यनो अ० असंख्यातमो भाग अधिक । हो० होय भा० भाग ते० तेजु लेश्यानी ॥ ५२ ॥

मूलः—पलिओवमं जहन्नं उक्कोसा सागराओ दुन्नहिया।
पलियमसंखेज्जेणं होइ भागेण तेऊए ॥ ५२ ॥

पासी वस्तुनुं गृद्धपणुं ए बे प्रकारनो परीग्रह एटलावानां साधु सर्वथा प्रकारे वर्जे ॥ ३ ॥

अर्थः-म० मनोहर चि०चित्रामण सहित घर ॥ म० गुंथी फुल अने धू० अगरादिकने धुपे करी वा० वासुं सुगंध कीधुं जे घर स० कमाड सहित होय । प० श्वेत वस्त्रे करी विशुपीत उपाश्रय अथवा बहु मुल्य सहित जे चंद्रवा सहित जे घर होय तेहवा थानकने विषे ॥ ग० मने करीने वि०वळी न० न वांछे एहवो घर रहेवाने मळे तो रुडु मने करी एम प० चिंतवे नहि ॥ ४ ॥

मूलः-मणोहरं चित्तहरं मल्लधूवेण वासियं ।
सकवाडं पण्डुरुल्लोवं मणसा वि न पत्थए ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थः-चित्रामण सहित तथा गुथेला पुष्पे करी अगरादीकना धुपे करी सुगंधवंत कीधुं होय, तेमज कमाड सहीत होय, श्वेत वस्त्रे करी विशुपीत करेलुं होय, चंद्रवादीक सहीत होय, एहवुं मनोहर घर तथा उपाश्रय रहेवाने माटे मळेतो मने करीने पण तेहने विषे रहेवानुं नवांछे, (अर्थात एहवा चीत्रामण सहीत ने सुगंधीवाळा मनोहर घर तथा उपाश्रयने विषे रहेवानी मनाइ करेल छे, पण इहां वीशुं कांइ समजवुं नहि) कारणके एहनो खुलासो ५ मी गाथामां जुवो ॥ ४ ॥

अर्थः-इ० पांच इंद्रि उ०वळी नि० साधुने ॥ ता० पूर्वे कह्यो तेहवा ॥ उ० उपाश्रयने दु० दोहिलो नि० इंद्रियने निवारवा का० काम संबंधिया । रा० रागनुं वि० वधारणहार ते उपाश्रय ॥ ५ ॥

मूलः-इन्दियाणि उ चित्तस्स तारिसम्मि उवस्सए ।

गाथा ५४ भावार्थः—तेजुलेश्यानी उत्कृष्टी स्थिति होय तेथी एक समय अधीक पद्म लेश्यानी जघन्य स्थिति जाणवी अने पद्म लेश्यानी उत्कृष्टी दश सागरोपम अने एक मुहुर्त अधीक स्थिति जाणवी ॥ ५४ ॥

अर्थः—जा०जे प०पद्म लेश्यानी वि०स्थिति ख०निश्चे जाणवी उ०उत्कृष्टी सा०ते उ०वली स०एक समयनी अ० अधिक। ज०ते जघन्य मु०शुक्ल लेश्यानो स्थिति। ते०तेत्रीस सागरोपम। मु०एक मुहुर्तनी अ०अधिक उत्कृष्टि॥५५॥

मूलः—जा पम्हाए ठिई खलु उक्कोसा सा उ समयमब्भहिया।
जहन्नेणं सुक्काए तेत्तीस मुहुत्तमब्भहिया ॥ ५५ ॥

गाथा ५५ भावार्थः—जे पद्मलेश्यानी उत्कृष्टी स्थिति होय ते उपरांत एक समय अधीक शुक्ललेश्यानी जघन्य स्थिति जाणवी अने शुक्ललेश्यानी उत्कृष्टी स्थिति ३३ सागरोपम अने १ मुहुर्त अधीक जाणवी (नारकीने ३३ सागर उपर अंतर मुहुर्त अधीक नहि अने देवताने पद्मलेश्यानी स्थिति १० सागर अंतर मुहुर्त अधीक अने शुक्ललेश्यानी ३३ सागर अंतर मुहुर्त अधीक गणीए, केमके पाछला भवना अंतर मुहुर्त गणीये तो नारकी अने देवता ए बंनेने अंतर मुहुर्त अधीक जोइए. ए लेश्यानी स्थितिनो नवमो बोल थयो ॥५५॥

अर्थः—तेणी लेश्याए जे गति मांहे उपजे ते कहेछे। क०कृष्ण, नी०नील का० कापोत ति०त्रण वि० पण। ए०ए अ०अधर्म ले०लेश्या जाणवी। ए०एणी ति० त्रण वि०पण जी०जीवो। दु०दुर्गतीमांहे उ०उपजे॥५६॥

मूलः—किण्हा नीला काऊ तिन्नि वि एयाओ अहम्मलेसाओ।
एयाहि तिहि वि जीवो दुग्गइं उववज्जइ ॥ ५६ ॥

गाथा ७ भावार्थः–मोक्षनो अर्थ होय ते साधुने जीव रहीत पोताना आत्माने तथा परजीवने पीडा रहीत स्त्रीए करी उपद्रव रहीत, पुर्वोक्त कह्या तेहवा उपाश्रयने विषे रहेवुं कल्पे ॥ ७ ॥

अर्थः–न० न स० स्वयमेव पोते गि० घर कु० साधु करे । नो० नहि वि० वळी अ० अनेरा पासे का० घर साधु करावे । गि० इंट प्रमुख करावता इत्यादिक क० कार्यना स० समारंभने विषे ॥ भू० एकेंद्रियादि जीवनो दि० दिसे छे व० वध ॥ ८ ॥

मूलः–न सयं गिहाइ कुविज्ज नो वि अन्नेहि कारए ।
गिहकम्मसमारम्भे भूयाणं दिस्सए वहो ॥ ८ ॥

गाथा ८ भावार्थः–घर करावताने विषे एकेंद्रियादीक जीवनो वध रुप समारंभ दीसे छे तेथी साधु पोते घर करे नहि तेमज बीजा पासे पण साधु घर कराये नहि ॥ ८ ॥

अर्थः–त० बेद्रियादिक त्रसनुं था० पांच थावर पृथ्वीयादिनुं च० वळी । गु० गुरुय नाना मरिरना धनी या० वादर मोटा जीवनो वध होय य० वळी ॥ त० ते माटे गि० घरना स० समारंभने आरंभने । सं० साधु प० परिहरे वर्जे सर्वथा ॥ ९ ॥

मूलः–तसाणं थावराणं च सुहुमाणं बादराण य ।
तम्हा गिहसमारम्भं संजओ परिवज्जए ॥ ९ ॥

गाथा ९ भावार्थः–घर करतां बे इंद्रीयादीक त्रस जीवनो अने पृथ्वी प्रमुख पांच स्थावरनो सुक्ष्म ते

अर्थः–ले०लेस्या स०सघल्याने ॥ च० पुरणे परण वेलाए छेला स०समयने विषे ॥ प०लेस्या पारणमान वखाए तु० वळी ॥ न०नथी हु०वळी क०कोइ जीवने विषे उ०उपजवो ॥ प०परभवने विषे हो०होय जी०जीवने॥५९॥

मूलः–लेसाहिं सवाहिं चरिमे समयम्मि परिणयाहिं तु ।
न हु कस्सइ उववाओ परभवे होइ जीवस्स ॥ ५९ ॥

गाथा ५९ भावार्थः–मर्ण वेलाए सघळी लेस्या आगला भवनी आवे तेवारे छेला समयने विषे लेस्या प्रणमती वेलाए कोइ जीवने परभवने विषे ऊपजवानुं नथी (अर्थात मर्णाते लेस्या प्रणमे तेना पेला ने छेला समयने विषे कोइ जीव परभवने विषे ऊपजे नहि) ॥ ५९ ॥

अर्थः–अं० अंतर मु० मुहुर्त ग०गये थके ॥ अं०अंतरमुहुर्त स०शेष याकतु होय तेवारे चे० पुरणे ॥ ले०लेस्या परभवनी ॥ प० परिणमने थके ॥ जी० जीव ग०जाय ॥ प० परलोके एटले मध्य समयने विषे काळ करे ॥६०॥

मूलः–अन्तमुहुत्तम्मि गए अन्तमुहुत्तम्मि सेसए चेव ।
लेसाहि परिणयाहिं जीवा गच्छन्ति परलोयं ॥ ६० ॥

गाथा ६० भावार्थः–मर्णाते आगला भवनी लेस्या प्रणम्या पछी अंतर मुहुर्त जाय अने अंतरमुहुर्त याकी रहे तेवारे जीव परलोकने विषे जाय, अर्थात पेलो समय वर्जिने वचला समयने विषे ते जीव परलोकने विषे जाय छे, ए लेस्यानो ११ मो बोल थयो ॥ ६० ॥

अर्थः–त० ते माटे ए० ए ॥ ले० लेस्या आ० जे भूंडि लेस्याए दुरगतिए जाय तेहना अनुभाग रुप

हम्मन्ति भत्तपाणेसु तम्हा भिक्खू न पयावए ॥ ११ ॥

गाथा ११ भावार्थः–रांधे रंधावे ते पाणीनी नेश्राए वे इंद्रीयादीक जीव, धान (अनाज) नी नेश्राए धनेरा प्रमुख जीव, पृथ्वीनी नेश्राए वस जीव अने काष्टनी नेश्राए घुणा प्रमुख जीव होय तेहने हणे, तेथी साधु पोते रांधे नहि, रंधावे नहि अने बीजो कोइ रांधतो होय तेने भलु पण न जाणे ॥ ११ ॥

अर्थः–वि० घोडा थकी घणी होय ॥ स० सर्व दिसीने विषे धा० शस्त्रनी धारानी परे ॥ व० घणा पा० जीवने वि० विनाशनो करणहार ॥ न० नथी जो० अग्नी स० सरीपो स० शस्त्र बीजो कोइ ॥ त० ते भणी जो० अग्नि न० न दी० प्रजाले ॥ १२ ॥

मूल–विसप्पे सव्वओ-धारे बहू पाणे विणासणे।
नत्थि जोइसमे सत्थे तम्हा जोइं न दीवए ॥ १२ ॥

गाथा १२ भावार्थः–घोडाथी घणी थाय अने सर्व दीशीने विषे शस्त्रनी धारानी पेरे घणा जीवनो विनास करनारी अने एहना सरीखुं बीजुं कोइ शस्त्र नथी एहवी अग्नी साधु प्रजाळे नहि, बीजानी पासे प्रजळावे नहि, बीजो कोइ प्रजाळतो होय, तेने भलुं पण न जाणे ॥ १२ ॥

अर्थः–दि० रुडुं जा० सुवर्ण च० पुर्वे । म० मनेकरी वि० पण न० न प० वांछे ॥ स० सरिखुं ले० पाषाण अने कं० सुवर्ण वि० एहनो जे साधु ॥ वि० निवर्त्यो क० मोल्य लेवाथी वि० वेचवाथकी ॥ १३ ॥

मूलः–हिरण्णं जायरूवं च मणसा वि न पत्थए ।

जमायरन्तो भिक्खू दुक्खाणन्तकरे भवे ॥ १ ॥

गाथा १ भावार्थः—गुरु करेता हवा हे शिष्य ? जे मोक्ष नो मार्ग निर्धारे देखाडयो छे ते हुं कहीश, ते तुं एकाग्र चित्ते करी सांभळ?? ? के जे मोक्ष मार्ग आचरतो थको साधु दुःखना अंतनो करनार होय !!! ॥१॥

अर्थः-गि० परवाम ने सर्व परिग्रहादिक प० छोडीने ॥ प० दिक्षा अ०लेइने मु०साधु ॥ इ०ए आगळ कहेशे ते सं० स्त्रीयादिक संग ने संसारनो हेतु छे॥ वि०एम जाणीने जे०जे संग करे स०बंधायले मा०मनुष्यादिक॥२॥

मूलः—गिहवासं परिच्चज्ज पवज्जामस्सिए मुणी ।
इमे सङ्गे वियाणिज्जा जेहिं सज्जन्ति माणवा ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः—साधु परव्यापार छांडी दीक्षा लइने माता पीता स्त्रीयादीकनो संग ते संसारनो हेतु जाणेके जेहना संगे करी मनुष्यादीक बंधाय छे, ते आगळ कहीश ॥ २ ॥

अर्थः—ते इम कहे छे न० नेमहित्र हिं० जीववध अ० मृषावाद ॥ चो० चोरिनुं करवुं ॥ अ० मैथुनतनो करवो मे० सेवनुं ॥ इ० अणगम्या वस्तुनी वांछा ते इच्छा का०काम कहेशुं च०पुरुषे लो० पामी वस्तुनुं ग्रहणपणुं एटले ए बे परिग्रह कह्यो ॥ च० पुरुषे सं० साधु ५० एटला वाना सर्वथा करने मुनि ॥ ३ ॥

मूलः—तहेव हिंसं अलियं चोज्जं अबम्भसेवणं ।
इच्छा कामं च लोभं च संजओ परिवज्जए ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः—१ जीववध, २ मृषावाद (जुठु), ३ चोरी, ४ मैथुन, ५ अनगमी वस्तुनी वांछा,

गाथा १५ भावार्थः–जेहनी भीक्षा मागवे करी आजीवीका छे तेहना साधुए याचीने लेवुं पण वेचातुं न लेवुं कारणके वेचातुं लेवुं ने वेचवुंए मोटो दोषछे तेथी भीक्षानी आजीवीका तेहज सुखकारी छे ॥१५॥

अर्थः–स० सामुदाणि भिक्षा लेइने पण उ०थो ते थोडो लीए ए०एम आहारने गवेखे ज० जेम। सु० सिद्धांत मांहि कुल आहार लेवो कह्यो छे ॥ अ० कुल आश्री दुगंछनिक कुल वर्जिने शेष अनिंदनीक कुले आहार ते पण मांस मदिरादिक निंदनीक आहार वरजीने शेष अनिंदनीक आहार लीए पारकी निंदा रहित ॥ ला० आहार लाधे थके अने अ० अण लाधे पण ॥ सं० संतोषी थको पि० आहार लेवाने अर्थे च० विचरे मु० साधु ॥ १६ ॥

मूलः–समुयाणं उञ्छमेसिज्जा जहासुत्तमणिन्दियं ।
लाभालाभम्मि संतुट्ठे पिण्डवायं चरे मुणी ॥ १६ ॥

गाथा १६ भावार्थः–दुगंछणी कुल वर्जिने सामुदाणी ऊंच (क्षत्री प्रमुख) नीच, ने मध्यम(वणीकादीक) ना घरने विषे मांस मदिरादीक निंदनीक आहार वर्जीने थोडो थोडो आहार गवेषी (शोधी) पछी जेम शास्त्रमां कहेल छे तेम ग्रहे आहार लाध्ये अणलाध्ये थके पण संतोषि थको आहार लेवाने अर्थे साधु विचरे ॥१६॥

अर्थः–अ० रुडा अनादिकने विषे लोलपिपणा रहित न० न र० घीनेविषे गि० मूद्ध न थाय॥ जि० रुडा आहारने विषे मुर्छारहित ॥ न० न र०स्वादने अर्थे ॥ मु० अन्नादिक न मोटा मु०साधु ॥ १७ ॥

॥ ३५ ॥

॥ ४३८ ॥

दुक्खाइं निवारेउं कामरागविवड्ढणे ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः—पुर्वोक्त एहवा उपाश्रय तथा घरने विषे रहेनारी साधुने पांच इंद्रीना विषय निवारवा दोहीला छे, कारणके एहवुं घर तथा उपाश्रय काम (विषय) संबंधी रागने वधारनार छे ॥ ५ ॥

अर्थः—सु० श्मशानने विषे । सु० सुना आ० घरने विषे ना० वली । रु० वृक्षने समीपे वृक्षने हेठे व० वली ॥ ए० पुकलो राग द्वेष रहित थको । प० स्त्री पशु नपुंसक रहित गृहस्थनां घरथकी भलो होय उपाश्रय । प० गृहस्थने अर्थे नीपनावेलो एहवा उपाश्रयने वा० विषे वा० रहेनो त० तिहां स्मशानादिकने विषे अ० रहेवानी रुचि करे मन करे ॥६॥

मूलः—सुसाणे सुन्नगारे वा रुक्खमूले व एगओ ।
पइरिक्के परकडे वा वासं तत्थाभिरोयए ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः—स्मशानने विषे, सुना घरने विषे, वृक्षने हेठे, गृहस्थे पोताने अर्थे निपनावेल होय तेहने विषे स्त्री पशु नपुंसक रहीत एहवा उपाश्रयने विषे साधु राग द्वेष रहीत थको मने करीने रहेवानी रुची करे ॥६॥

अर्थः—फा० फासुक जीव रहित अ० आबाधा रहित । आपणा आत्माने अने पर जीवने । इ० स्त्रीए करी अ० उपद्रव्य रहित । त० ते स्मशानादिक पुर्वे कह्या तेहवा उपाश्रयने विषे सं० कल्पे वा० रहेवो भि० साधु प० मोक्षना अर्थि सं० साधु तेहने ॥ ७ ॥

मूलः—फासुयम्मि अणाबाहे इत्थीहिं अणभिद्दुए ।
तत्थ संकप्पए वासं भिक्खू परमसंजए ॥ ७ ॥

अर्थः-सु० शुक्लध्यान झि० ध्याय । अ० नियाणा रहित ॥ अ० धन रहित । ममताने अभावे का० काया वो० वोसिरावीने अप्रतिबंध विहारे । वि० विचरे जा० जिहां लगे का० मरणनो प० प्रस्ताव आवे तिहां लगे ॥१९॥

मूलः-सुक्कज्झाणं झियाएज्जा अणियाणे अकिंचणे ।
वोसट्ठकाए विहरेज्जा जाव कालस्स पज्जओ ॥१९॥

गाथा १९ भावार्थः-शुक्ल ध्यान ध्याय अने नियाणा रहीत तेमज धन रहीत अने ममताने अभावे काया वोसिरावीने मर्णनो अवसर आवे त्यां सुधी अप्रतिबंधपणे साधु विचरे ॥ १९ ॥

अर्थः-नि० संलेषणा करवे करी छांडिने आ० आहार ॥ का० मरणनो अवसर उ० आवे थके ॥ ज० छांडीने मा० मनुपना वो० सरिरने ॥ प० समर्थायनो धणी ॥ दु० दुषथी पमु० मुकाय ॥ २० ॥

मूलः-निज्जूहिऊण आहारं कालधम्मे उवट्ठिए ।
जहिऊण माणुसं बोन्दिं पहू दुक्खे पमुच्चई ॥ २० ॥

गाथा २० भावार्थः-संलेखणा करवे करी चार आहार तजीने मर्णनो अवसर आवे थके मनुष्यनुं शरीर छांडीने विशिष्ट (भली) समर्थाइनो धणी साधु दुःख थकी मुकाय ॥ २० ॥

अर्थः-नि० ममता रहित नि० अहंकार रहित ॥ वी० राग द्वेष रहित । अ० कर्म आश्रवा थकी रहित । सं० पाम्यो थको के० केवल ना० ज्ञान । सा० साश्वतो प० ठरयो विलम्यो कषाय पषावा थकी शितलीभूत थयो । इ० इम पूं ये० कहेई के तेनु सूत्र मूल ॥ २१ ॥

नाना शरीरना धणी जीवनो तेमज बादर ते मोटा शरीरना धणी जीवनो वध थाय तेवी साधु परनो समारंभ वर्जे, ए साधुने स्थानकमां रहेवानी स्थिति कही ॥ ९ ॥

अर्थः-हवे साधुने आहार लेवानी विधि कहे छे ॥ त० तेमज भ० भात पा० पाणीने विषे । प० पोते पचवाने विषे । प० अनेरा पासे पण पचावावाने विषे य० पळी ॥ पा० बेंद्रियादिक भू० पृथ्वीयादिकनी द० दयाने अ० अर्थे ॥ न० नहीं प० पोते रांधे न० न पं० अनेरा पासे रंधावे नहि मुनी साधु ॥ १० ॥

मूलः-तहेव भत्तपाणेसु पयणे पयावणेसु य ।
पाणभूयदयट्ठाए न पये न पयावये ॥ १० ॥

गाथा १० भावार्थः-हवे साधुने आहार लेवानी विधी कहे छे, तेमज पळी आहारने विषे पोते रांधवाने वास्ते बीजानी पासे रंधावडावाने विषे जाणवुं, पृथ्वीयादीक पांच स्थावर जीवनी अने बेइंद्रीयादीक त्रस जीवनी दयाने अर्थे साधु पोते रांधे नहि अने बीजानी पासे रंधावे नहि ॥ १० ॥

अर्थः-ज० पाणीनी नेश्राए बेंद्रियादिक जीव होय । घ० घांनणी नि० नेश्राये जी० जीव । पु० पृथ्वीनी नेश्राए बेंद्रियादिक त्रस जीव होय का० काष्ट नि०नेश्राए घुणा प्रमुख जीव होय ॥ इ० इणाम भ० भात पा० पाणीने विषे ॥ न० नही प० पोते रांधे नहि अनेरा पासे रंधावे नहि अनेरो कोइक रांधतो होय तेहने अनुमोदे नहि त० ते भणी भि० साधु मुनि ॥ ११ ॥

मूलः-जलधन्ननिस्सिया जीवा पुढवीकायनिस्सिया ।

अर्थः–जी० जीव अने चे० पुरणे अ० अजीव य०वळी । ए० ए लो० लोक ॥ वि० कह्यो भगवंते ॥
अ० अजीवनो । दे० एकदेस आ० आकासछे ते । अ० अलोक से० तेहने वि० कह्यो तिर्थंकरे ॥ २ ॥

मूलः–जीवा चेव अजीवा य एस लोए वियाहिए ।
अजीवदेसमागासे अलोगे से वियाहिए ॥ २ ॥

गाथा २ भावार्थः–जेमां जीव अने अजीव ए बे होय तेहने भगवंते लोक कह्यो छे अने अजीवनो एक देश आकाश रुपे छे, तेहने तिर्थंकरे अलोक कह्यो छे ॥ २ ॥

अर्थः–द० द्रव्य थकी एटला भेद खे० पेत्रथकी जे एटलो आकाश अवगाह्यो छे । चे० पुरणे ॥ का० कालथी जेहने जेटली स्थिति भा० भावथकी एहना एटला पर्याय छे त० तेमज । प० परुपणा ने० तेहनी भ० होय । जी० जीव एकेंद्रियादिक अ० अजीव धर्मास्तिकायादिकनी परुपणा य० वळी ॥ ३ ॥

मूलः–दव्वओ खेत्तओ चेव कालओ भावओ तहा ।
परूवणा तेसि भवे जीवाणमजीवाण य ॥ ३ ॥

गाथा ३ भावार्थः–जीव अने अजीव ए बंनेनी १ द्रव्यथी, २ क्षेत्रथी, ३ कालथी, ४ भावथी, ए चारे प्रकारे परुपणा होय ॥ ३ ॥

अर्थः–हवे अजीवना द्रव्यथी भेद कहेछे रु०रुपी अजीव चे०अने । अ०अरुपी य०वळी अ० अजीव । दु० बे भेद भ०होय । ज०अरुपी अजीव द०दस प्रकारे नृ०कह्या तिर्थंकरे । रु०रुपी य०पण च०च्यार भेदे कह्या तिर्थंकरे ॥४॥

गाथा १३ भावार्थः—जेहने पाषाण अने सुवर्ण सरीखुं छे, एटलो जे साधु ते वेचातुं लेवाथी ने वेचवाथी निवर्त्यो ते रुपुने सुवर्ण समुच अर्थ परिग्रह मने करीने पण जाणे छे ॥ १३ ॥

अर्थः—कि० क्रियाणुं लेवो थको क० क्रियाणानो लेणहार हो० होय ॥ वि० क्रियाणादिक वेचतो थको व० वणीयो वा० वाणीओ होय ॥ क० क्रियाणादिक लेवा वि० वेचवाने विषे ॥ व० वर्ततो थको ॥ भि० साधु न० न भ० होय ता० तेहवो होय ते ॥ १४ ॥

मूलः—किणन्तो कइओ होइ विक्किणन्तो य वाणिओ ।
कयविक्कयम्मि वट्टन्तो भिक्खू न भवइ तारिसो ॥ १४ ॥

गाथा १४ भावार्थः—क्रियाणुं (वस्तु) लेनार ग्राहक होय अने क्रियाणुं वेचनार ते वाणीओ होय तेथी क्रियाणादीक लेवा वेचवाने विषे मनमें तहवो होतो सुशोक्त भाव साधु न होय ॥ १४ ॥

अर्थः—भि० जाचीने लेवुं न० न के०मोल्ल वेचातुं न लेवो । वि० वणीए भि०भिक्षाने मागवेकरी व० आजीविका छे जेहने ॥ क० मोले वेचातुं लेवुं ते अने वि० वेचवाने विषे म०मोटो छे दो० दोष ॥ भि० भिक्षा व० आजीविका ते सु० सुखकारी छे ॥ १५ ॥

मूलः—भिक्खियव्वं न केयव्वं भिक्खुणा भिक्खवत्तिणा ।
कयविक्कओ महादोसो भिक्खवत्ती सुहावहा ॥ १५ ॥

देश। ३ प०पछी आ०कहो तिर्थंकरे। भ० काल ते स०समयादिक चे०पुरणे। अ०अरुपी द० दस प्रकारे भ० होय॥६॥

मूलः—आगासे तस्स देसे य तप्पएसे य आहिए।
अद्धासमए चेव अरूवी दसहा भवे ॥ ६ ॥

गाथा ६ भावार्थः—आकास्तिकायने विकाश गुण रुप तेहना त्रण भेद ते आकाशनो ७ स्वंध, ८ देश, ९ प्रदेश, १० समय काळ ए १० भेदे अरुपी अजीव तिर्थंकरे कहेल छे, ए अरुपी अजीवनी द्रव्यथी परुपणा कही ॥६॥

अर्थः—हवे पेत्रथी बीजो पोलें कहेछे ध०धर्मास्तिकाय १। अ०अधर्मास्तिकाय २ दो०ए बे चे० पुरणे। लो० लोक जेवडा मि० प्रमाणे छे वि० कह्या तिर्थंकरे। लो० लोक अने। अ० अलोकने य०विषे। आ० आकास्तिकाय जाणवो। स० समय स० मनुष क्षे० क्षेत्रने प्रमाणेछे पिस्तालिसलाप जोजन प्रमाणे एवडो मोटोछे॥७॥

मूल—धम्माधम्मे दो चेव लोगमित्ता वियाहिया।
लोगालोगे य आगासे समए समयखेत्तिए ॥ ७ ॥

गाथा ७ भावार्थः—हवे अरुपी अजीवनी क्षेत्रथी परुपणा कहे छे, धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, ए बे लोक जेवटा प्रमाणे ने लोकालोक प्रमाणे आकास्तिकाय अने मनुष्य क्षेत्र प्रमाणे एटले ४५ लाख जोजन प्रमाणे समय काळ तिर्थंकरे कयो छे, ए क्षेत्रथी अरुपी अजीवनी परुपणा करी ॥ ७ ॥

अर्थः—हवे त्रीजे पोले कालथी कहे छे। प० धर्मास्तिकाय १। अधर्मास्तिकाय २। आ० आकास्तिकाय ३। वि० भाव वि० पण ए० ए अ० अनादि कालनाछे। अ० छेल्लो तेहनो नणी चे० निचे स० सर्व

मूलः—अलोले न रसे गिद्धे जिब्भादन्ते अमुच्छिए ।
न रसट्ठाए भुञ्जिज्जा भवगट्ठाए महामुणी ॥ १७ ॥

गाथा १७ भावार्थः—हवे साधुने आहार करवानी विधी कहे छे, जे मोटो मुनी सरस आहार मळवाथी तेहने लुब्ध न थाय, तेमज सरस आहार नहि मळवाथी तेनी वांच्छा न करे, वळी जीभनो दमणहार (वश करनार) रुडा आहारने विषे मुर्छा रहित आहार करे ते स्वादने अर्थे नहि, तेमज धातु पधारवाने अर्थे नहि, पण फक्त संयम निर्वाह करवानेज अर्थे आहार करे ॥ १७ ॥

अर्थः—अ० चंदनादिके करी पूजवो र० मांडणुं करवुं चे० पुरवुं । वं० वांदवुं तथा गुण कित्तनवुं करवुं ॥ पू० वस्त्रादिके करी पूंजवो त० तेम । इ० लक्ष्मीनि रुपि स० अनादिक देवे करी सत्कार ॥ स० उभो-थावो सन्मान । म० एतलावाना मने करी वि० पण न० न प० वांछे नहि ॥ १८ ॥

मूलः—अच्चणं रयणं चेव वन्दणं पूयणं तहा ।
इड्ढीसक्कारसम्माणं मणसा वि न पत्थए ॥ १८ ॥

गाथा १८ भावार्थः—चंदनादीके अथवा पुष्पादीके पुजन, साथीयादीके आसन (बेठक) नी रचना, वंदन गुण कीर्तन स्तुत्यादीके अथवा तुजने नमस्कारहो ! ! ! इत्यादीक वचन रुप पूजन तेमज अनादीक तथा धनादीक आपवे सत्कार वळी लक्ष्मीनी ऋद्धि अने सन्मान ने उभाथवा रुप एटला वानो मांहरे होय तो सारुं एम मने करीने पण साधु न वांछे ॥ १८ ॥

धर्मास्तिकायादीक दरेकनो वर्ण नथी, गंध नथी, रस नथी, स्पर्श नथीए भावथी अरुपी अजीवनी परुपणा कही, ए पुर्वोक्त प्रमाणे अरुपी अजीवना १० भेद कह्या, (१ धर्मास्ति, २ अधर्मास्ति, ३ आकास्ति, ४ समयकाळ ए चारेना ऊपरथी, १ द्रव्यथी, २ क्षेत्रथी, ३ काळथी, ४ भावथी, ५ गुणथी ए पांच नोल ऊतारतां ४×५=२० भेद अने १० पुर्वोक्त मळी ३० भेद अरुपी अजीवना जाणवा ॥ ९ ॥

अर्थः–खं० पुद्गळनो पंध १ य० वळी खं० ते खंधनुं थोडुंइ विभाग ते दे० देस २ य० वळी । त० ते परमाणुओ खंध संघाते लागु छे निहां लगे तेहने प्रदेस कहिये य० वळी । त० तेमज य० वळी । प० परमणुंआते खंधथकी अळगा छे एकला वेना थाय एहवा य० वळी वो० जाणवा । रु० रुपि वि० पण अजीव पुद्गल च० च्यार प्रकारे जाणवा ॥ १० ॥

मूलः–खन्धा य खन्धदेसा य तप्पएसा य तहेव य ।
परमाणुणो य बोद्धवा रूविणो वि चउविहा ॥ १० ॥

गाथा १० भावार्थः–हवे रुपी अजीवना चार भेद तेमां प्रथम द्रव्यथी रुपीना भेद कहे छे, १ पुद्गळास्तिकायनो स्कंध, २ तेहनो थोडोश्यो भाग ते देश, ३ परमाणुओ स्कंध संघाते लाग्यो होय, तीहां लगी तेहने प्रदेश कहीए, ४ स्कंधथी जुदो थाय ते वारे तेहने परमाणुंओ कहीए, परमाणुं एटले एकला ते न थाय, ए रुपी अजीवना चार भेद जाणवा ॥ १० ॥

अर्थः–प० ए परमाणुंआने एकठा मेळवानो पण स्वभाव छे, य० वळे

मूलः–निम्ममे निरहंकार वीयरागा अणासवा ।
संपत्तो केवलं नाणं सासयं परिणिव्वुए ॥ २१ ॥ त्ति बेमि ॥

॥ इति श्री अणगारज्जयणं नामं पञ्चत्रिंसं अध्ययनं सम्पूर्णं ॥ ३५ ॥

गाथा २१ भावार्थः–ममता रहीत, अहंकार रहीत, राग द्वेष रहीत, कर्म आवता थकी रहीत कर्म क्षय करी केवळज्ञान पाम्यो थको शास्वतो शीतळो भुत थाय अर्थात मुक्ति पद पामे, एम सुधर्मा स्वामी पोताना जंबू नामना शिष्यने कहेता हवा हे जंबू ! जेम मे श्री महावीरदेव स्वामीनी सपीपे सांभळ्युं हतुं, तेम में तुज मल्ये कयुं ॥ २१ ॥ इति श्री उत्तराध्ययन सुत्रना ३५ मां अध्ययननो भावार्थ संपूर्ण ॥३५॥ ए ३५ मां अध्ययनने विषे अणगारनो मार्ग कह्यो, ते अणगारतो जीव अजीवना जाणपणायी होय तेथी ३६ मां अध्ययनने विषे जीव अजीवना भेद कहे छे.

अर्थः–जी० जीव । अ० काष्टादिक अजीव तेहनां । वि० भेद जुदा जुदा कहे छे ॥ सु० सांभल अहो शिष्य मे०मुजने कहेतांथका गुरु कहेछे ए०एकाग्र म०मनथकी ॥ जं०जे जीवादीक ना० जाणीने भि०साधु श्रमण ॥ स० साचे मने करी ज० उद्यम करे सं० संजमने विषे ॥ १ ॥

मूलः–जीवाजीवविभत्तिं सुणेह मे एगमणा इओ ।
जं जाणिऊण भिक्खू सम्मं जयइ संजमे ॥ १ ॥

गाथा १ भावार्थः–गुरु कहेता हवा हे शिष्य ? जीव अने अजीवना जुदा जुदा भेद हुं कहीश ? ? ? ते तुं एकाग्र चित्ते करी सांभळ ? ? ? के जे जीवादीक जाणीने साधु साचे मने करीने संयमने विषे उद्यम करे ? ? ? ॥ १॥

खंधादिक पुदगलना वु० सिष्य प्रते गुरु कहेछे कहिसुं च० चार वि० प्रकारे ॥ १२ ॥

मूलः—सुहुमा सव्वलोगम्मि लोगदेसे य बायरा ।
इत्तो कालविभागं तु तेसिं वुच्छं चउव्विहं ॥ १२ ॥

गाथा १२ भावार्थः—सुक्ष्म सर्व लोकने विषे रहेल छे अने लोकना देशने विषे बादर रया छे, ए रुपी अजीवना क्षेत्र थकी भेद कया, हवे रुपी अजीवना कालथकी भेद कहेछे, गुरु कहेता हवा हे शिष्य ! ने स्कंधादीक पुदगलना काळ (स्थिति) थी चार प्रकारे विभाग कहीशुं ॥ १२ ॥

अर्थः—सं० छता प० आश्री ते० ते पुदगल अ० अनादिकाळना छे ॥ अ० ते पुदगल आगले अनंता काल लगे होशे ते भणी अंतरहित छे वि० य० वळी ॥ ठि० स्थिति प० आश्री सा० आदि सहितछे ॥ स० काल स्थितिनो छेडो आवे ते भणी अंतसहित छे वि० य० वळी ॥ १३ ॥

मूलः—संतइं पप्पते नाई अपज्जवसिया वि य ।
ठिइं पडुच्च साईया सपज्जवसिया वि य ॥ १३ ॥

गाथा १३ भावार्थः—ते पुदगळ छतां आश्री अनादी काळनाछे, ते पुदगळ आगळ अनंत काळ लगी हशे तेथी अंत रहीतछे अने स्थिति आश्री आदी सहीतछे ने ते काळनी स्थितिनो छेडो आवे तेथी अंत सहीतछे ॥१३॥

अर्थः—अ० असंष्याता काळ उ० एक ठामे रहेवा आश्री पुदगलनी उत्कृष्टि स्थिति ॥ ए० एक स० समय ज० जघन स्थिति कही भगवंते ॥ अ० अजीव य० वळी रू० जे रुपी पुदगल तेहनी ॥ ठि०

मूलः–रूविणो चेवरूवी य अजीवा दुविहा भने ।
अरूवी दसहा वुत्ता रूविणो य चउविहा ॥ ४ ॥

गाथा ४ भावार्थः–हवे प्रथम अजीवना द्रव्यथी भेद कहे छे, अजीवना बे भेद ते रूपी अजीवने अ-रूपी अजीव तेमां अरूपी अजीव १० प्रकारे अने रूपी अजीव ४ प्रकारे तिर्थंकरे कहेल छे ॥ ४ ॥

अर्थः–हवे पहेला दस प्रकारे अजीव अरूपीना भेद कहे छे ॥ ध० चालवानो स्वभावछे ते भणी धर्म १ । अ०प्रदेशना समूह छे तेहनो स्कंध त०ते धर्मास्तिकायनो देश २ । त०ते धर्म्मास्तिकायनो प्रदेश ३ । ग०चली आ० कह्यो तिर्थंकरे ॥ अ० स्थिर रहेवानो स्वभाव छे ते भणी अधर्मास्तिकाय कहेतां प्रदेशना समुह छे । तेहनो स्कंध १। त० ते अधर्मास्तिकायनो थोडोसो विभाग होय ते दे० देश २ ग०चली । त०ते अधर्मास्तिकायनो प्रदेस ३ ग० चली । आ० कह्यो तिर्थंकर देवे ॥ ५ ॥

मूलः–धम्मत्थिकाए तद्देसे तप्पएसे य आहिए ।
अहम्मे तस्स देसे य तप्पएसे य आहिए ॥ ५ ॥

गाथा ५ भावार्थः–धर्मास्तिकायनो चलण सहाय गुण तेहना ३ भेद ते, संपूर्ण धर्मास्तिकाय होय ते १ स्कंध, २ तेनो थोडोस्यो विभाग होय ते देश, ३ अने देशनो थोडोशो विभाग ते प्रदेश, अधर्मास्तिकाय ते स्थिर सहाय गुण रुप तेहना त्रण भेद ते, ४ अधर्मास्तिकायनो स्कंध, ५ देश, ६ प्रदेश तिर्थंकरे कहेल छे ॥५॥

अर्थः–आ० आकाशनो पंध १ ॥ त०आकाशनो थोडो विभाग ते दे०देस २ ग०चली॥ त०ते आकाशनो प्र-

वर्णादिकना प० पंच प्रकारे ॥ १६ ॥

मूलः–वण्णओ गन्धओ चेव रसओ फासओ तहा ।
संठाणओ य विन्नेओ परिणामो तेसि पञ्चहा ॥१६॥

गाथा १६ भावार्थ.–हवे भावथी अजीव रूपी पुद्गलना भेद कहे छे, ते पुद्गल पांच प्रकारे प्रणम्या छे ते १ वर्ण थकी, २ गंध थकी, ३ रस थकी, ४ स्पर्श थकी, ५ संस्थान थकी, एम पांच ॥ १६ ॥

अर्थः–व० वर्ण थकी प० वर्णने परिणामे परिणम्याछे जे पुद्गल जे० जे उ० वली । पं० पांच प्रकारे ते० ते वर्णना पुद्गल प० कह्या तिर्थंकरे कि० काला नी० नीला लो० राता ह० पीला सु० धोला त० तेमज ॥१७॥

मूलः–वण्णओ परिणया जे उ पञ्चहा ते पकित्तिया ।
किण्हा नीला लोहिया हलिद्दा सुक्किला तहा ॥१७॥

गाथा १७ भावार्थ.–जे पुद्गल वर्णने प्रणामे प्रणम्या छे ते पांच प्रकारे छे, १ काळा, २ निला, ३ राता, ४ पीळा, ५ धोळा ए पांच प्रकारना पुद्गल तिर्थंकरे कह्या छे ॥ १७ ॥

अर्थः–गं० गंधथी गंधने प० परिणामे परिणम्या जे० जे उ० वळी ॥ दु० बे भेद ते० ते वि० कह्या तिर्थंकरे ॥ सु० सुगंधपणे प० परिणम्या छे पुद्गल दु० दुर्गंधपणे परिणम्या छे पुद्गल त० तेमज य० वळी ॥ १८ ॥

मूलः–गन्धओ परिणया जे उ दुविहा ते वियाहिया ।
सुब्भिगन्धपरिणामो दुब्भिगन्धो तहेव य ॥ १८ ॥

काल लगी होय तु० वली वि० सास्वता कह्या तिर्थंकरे ॥ ८ ॥

मूलः–धम्मात्थिअम्मागासा तिन्नि वि एए अणाइया ।
अपज्जवसिया चेव सव्वद्धं तु वियाहिया ॥ ८ ॥

गाथा ८ भावार्थः–धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय ए त्रणे अनादी काळना छे अने तेहनो अंत पण नथी ने सर्वकाळ लगी शाश्वता होय एम तिर्थंकरे कह्युं छे ॥ ८ ॥

अर्थः–स० समय काल वि० पण स० निरंतर छता प० आश्री ॥ ए० धर्मास्तिकायनीपरे आदि अंत रहितछे ए० एम निश्चे वि० कह्यो तिर्थंकरे ॥ आ० कोइ कार्य करवा मांडिए तेवारे ॥ प० ते कार्य आश्री जोता काल आ० आदि स० सहितछे ॥ स० ते कार्य पुरु थाय तेवारे काळ अंत सहित वि० ग० पणछे ३ । भावथकी अरूपी अजीवना चार भेद कह्या, हवे सघळा द्रव्यथी रूपी अजीवना चारे भेद कहेछे ॥ ९ ॥

मूलः–समए वि सन्तइं पप्प एवमेव वियाहिए ।
आएसं पप्प साईए सपज्जवसिए वि य ॥ ९ ॥

गाथा ९ भावार्थः–समयकाळ पण् निरंतर छता आश्री अधर्मास्तिकायादीकनी पेरे आदी अंत रहीत छे, पण कोइ कार्य करवा मांडे तें वारे ते कार्य आश्री जोतां काळ आदी सहीत छे अने ते कार्य पुरु थाय से वारे ते कार्य आश्रीकाळ अंत सहीत पण छे, ए काळथी अरुपी अजीवनी परुपणा कही, हवे भावथी

अर्थः–सी०टाढा चंदननी परे ॥ उ०उन्हा अग्निनी परे य०वळी ॥ नि०चोपडा घीनीपरे य० वळी त० तेम लु० लुखा राखनीपरे य०वळी आ० कह्या तिर्थंकरे इ०एणी प्रकारे फा०फरसपणे प०परिणम्या ए०ए ॥ पु०एकठा मळे अने जुदा जुदा पण थाय पुराय गळे तेमणी । स० सम्यक प्रकारे आ० कह्या भगवंते ॥ २१ ॥

॥ ३६ ॥

मूलः–सीया उण्हा य निद्धा य तहा लुक्खा य आहिया ।
इय फासपरिणया एए पुग्गला समुदाहिया ॥ २१ ॥

गाथा २१ भावार्थः–५ टाढा ते चंदनादीकनी पेरे, ६ ऊष्ण अग्नीनी परे, ७ चोपडया घीनी पेरे, ८ लुखा राखनी पेरे, ए आठ स्पर्श पणे पुद्गळ प्रणम्या छे, पुद्गळ एटले जुदा जुदा पण थाय, भेगा थाय, गळे, तेथी पुद्गळ कहीए एम सम्यक प्रकारे तिर्थंकरे कर्युं छे ॥ २१ ॥

अर्थः–सं० संस्थान आकारपणे प० परीणाम्याछे जे० जे पुद्गल उ० वळी । पं० पांच प्रकारे ते० ते संस्थान आकार प० कह्या भगवंते । प०परिमंडल संस्थानते चुडिने आकारे ॥ य०वळी व०वाटलो संस्थान लाडवाने आकारे य०वळी तं० त्रिपुणीयो सिंघोडाने आकारे । च० चउपुणा चउरंसाने आकारे आ० लांबा लाकडाने आकारे ॥ २२ ॥

मूलः–संठाणओ परिणया जे उ पञ्चहा ते पकित्तिया ।
परिमण्डला य वट्टा य तंसा चउरंसमायया ॥ २२ ॥

गाथा२२ भावार्थः–जे पुद्गळ संस्थान (आकार) पणे प्रणम्याछे ते पांच प्रकारे तिर्थंकरे कह्याछे, १ परीमंडळ संस्थान ते चुडीने आकारे, २ वाटलुं संस्थान ते लाडवाने आकारे, ३ त्रीखुणा सीघोडाने आकारे, ४ चोरस सं-

॥ ४४५ ॥

तेणे करी एकठा मले तेवारे ॥ खं० पंध कहिये य० वली प० पुद्गल जुदा जुदा रहे ते परमाणुंआ ॥ हवे क्षेत्रथी कहेवो छे ॥ लो० लोकना ए० एक दे० देसने विषे परमाणुंआ रह्या छे । लो० आपा लोकने विषे तथा लोकना देसने विषे पुद्गलनो पंध रह्यो छे य० वली भ० भजना ते० ते खंधना अने परमाणुभाने उ० वली खे० क्षेत्र आश्री भजना कहेता एक आकाश प्रदेश पंध होय ॥ अने परमाणुभो एक आकाश प्रदेशे रहे ते भणी भजना कही ॥ ११ ॥

मूलः-एगत्तेण पुहुत्तेण खन्धा य परमाणुणो ।
लोएगदेसे लोए य भइयव्वा ते उ खेत्तओ ॥ ११ ॥

गाथा ११ भावार्थः-परमाणुंआने एकठा मळवानो स्वभाव छे, तेमज जुदा जुदा थवानो पण स्वभाव छे, ज्यारे एकठा मळे तेवारे स्कंध कहीए अने ज्यारे जुदा जुदा थाय त्यारे परमाणुंआ कहीए, ए रुपी अजीवना द्रव्यथी भेद कह्या, हवे रुपी अजीवना क्षेत्रथी भेद कहे छे, लोकना एक देशने विषे परमाणुंआ रह्या छे अने आखा लोकने विषे तथा लोकना देशने विषे पुद्गलना स्कंध रह्या छे, ते स्कंध अने परमाणुभाने क्षेत्र आश्री भजना जाणवी एटले एक आकाश प्रदेशे स्कंध होय अथवा न होय अने परमाणुं ओतो एक आकाश प्रदेशे पण रहे तेथी भजना कहीये ॥ ११ ॥

अर्थः-सु० सूक्ष्म परमाणुआ स० सर्व लो० लोक मांहे लो०लोकना दे० एक देसने विषे पुद्गल य० वली । बा० बादर । इ० ए कह्या पछे का० कालनी मर्यादा स्थिति वि० विभाग सु० वली । ते० ते

गाथा २४. भावार्थः–जे पुद्गळ वर्णे लीलो होय तेह मांहीं बे गंध, पांच रस, आठ स्पर्श, पांच संस्थान ए २० बोलनी भजना जाणवी ॥ २४ ॥

अर्थः–व० वर्ण थकी लो० रातो जे० जे पुद्गल भ० होय से० ते मांहे उ० वळी ॥ भ० भजना गं० बे गंधनी होय। र० तिपादिक पांच रसनी भजना होय ॥ फा० आठ फरसनी पण भजनां होय चे० पुर्णे । भ० भजना सं० संस्थाननी वि० य० पण ॥ २५ ॥

मूलः–वण्णओ जे भवे लोहिए भइए से उ गन्धओ ।
रसओ फासओ चेव भइए संठाणओ विय ॥ २५ ॥

गाथा २५ भावार्थः–जे पुद्गळ वर्ण थकी रातां होय तेह मांहो २ गंध, ५ रस, ८ स्पर्श, ५ संस्थान ए २० बोलनी भजना जाणवी ॥ २५ ॥

अर्थः–व० वर्ण थकी जे० जे भ० होय पी० पीळा जे पुद्गल ते मांहे । भ० भजना होय से० ते उ० वळी गं० बेगंधनी । र० रस पांचनी फा० आठ फरसनी चे० पुरणे । भ० भजना होय सं० संस्थाननी वि० पण ॥ २६ ॥

मूलः–वण्णओ जे भवे पीए भइए से उ गन्धओ ।
रसओ फासओ चेव भइए संठाणओ विय ॥ २६ ॥

गाथा २६ भावार्थः–जे पुद्गळ वर्ण थकी पीळां होय तेमांहो २ गंध, ५ रस, ८ स्पर्श, ५ संस्थान, ए २० बोलनी भजना जाणवी ॥ २६ ॥

स्थिति ए० एहनी वि० निर्णय भाखागजे कही ॥ १४ ॥

मूलः—असंखकालमुक्कोसं एक्को समओ जहन्नयं ।
अजीवाण य रूवीण ठिई एसा वियाहिया ॥ १४ ॥

गाथा १४ भावार्थः—ते पुद्गल एक देशाण रहेवा आथी तेहनी स्थिति जघन्य एक समयनी अने उत्कृष्टी असंख्याता कालनी ए प्रमाणे अजीव रूपी पुद्गलनी स्थिति निर्णयरे कही छे ॥ १४ ॥

अर्थः—अ० अनंता का० कालनुं उ० उत्कृष्टुं आंतरुं पडे जिहां इतुं पुद्गल त्यांथी बीजे ठामे जाय तेवार पछी पुद्गल पुद्गलने एकठा मलवा आथी ॥ ज० एक स० समय ज० जघन्य आंतरुं ॥ अ० अजीव पुद्गल प० बली रू० रूपीनुं ॥ भ० आंतरुं अनंता कालनुं वि० कहु निर्णयरे ॥ १५ ॥

मूलः—अणन्तकालमुक्कोसमेक्को समओ जहन्नयं ।
अजीवाण य रूवीण अन्तरेयं वियाहियं ॥ १५ ॥

गाथा १५ भावार्थः—पुद्गल जीहां होय तीहांथी कोइ पुद्गल बीजे देशाणे जाय, तेवार पछी ते पुद्गल पुद्गलने एकठा मलवा आथी आंतरु पडे तो जघन्य एक समयनुं ने उत्कृष्टु अनंता कालनुं, ए प्रमाणे अजीव रूपी पुद्गलनुं आंतरु निर्णयरे कयुं, ए काळ थकी अजीव रूपी पुद्गलना भेद कह्या ॥ १५ ॥

अर्थः—व० वर्णथकी पुद्गल परिणम्या छे ग० एम गंधथकी बे० बली। र० तिखादिक रसथकी ॥ फा० फरस थकी ग० लेप। सं० संस्थान थकी ग० एम वि० जाणवा पुद्गल परिणम्याछे। प० पुद्गल परिणामे ते० जे

मूलः–गन्धओ जे भवे दुब्भी भइए से उ वण्णओ ।
रसओ फासओ चेव भइए संठाणओ विय ॥ २९ ॥

गाथा २९ भावार्थः–जे पुद्गळ गंध थकी दुर्गंध होय तेह मांही, ५ वर्ण, ५ रस, ८ स्पर्श, ५ संस्थान, ए २३ बोलनी भजना जाणवी ॥ २९ ॥

अर्थः–र० रसथकी ति० तिखी सुठनीपरे होय जे० जे पुद्गल ते मांहे उ० वळी ॥ भ० भजना होय से० ते उ० वळी व० पांच वर्णनी होय ॥ गं० बे गंधनी भजना होय ॥ फा० आठ फरसनी भजना होय चे० पुरणे ॥ भ० भजनां सं० संस्थाननी वि० पण ॥ ३० ॥

मूलः–रसओ तित्तए जे उ भइए से उ वण्णओ ।
गन्धओ फासओ चेव भइए संठाणओ विय ॥३०॥

गाथा ३० भावार्थः–जे पुद्गळ रस थकी तीखां होय, तेह मांही पांच वर्ण, बे गंध, ८ स्पर्श, पांच संस्थान, ए २० बोलनी भजना जाणवी ॥ ३० ॥

अर्थः–र० रसथकी क० कसायलो जे० जे पुद्गल होय ते मांहे उ० वळी ॥ भ० भजना से० ते उ० वळी व० पांच वर्णनी होय ॥ गं० बे गंधनी भजना होय फा० आठं फरसनी भजना होय चे० पुरणे भ० भजना सं० संस्थाननी वि०पण ॥ ३१ ॥

गाथा १८ भावार्थ.—जे पुद्गळ गंध प्रणम्या छे ते बे प्रकार छे ते १ सुगंध पणे, २ दुर्गंध पणे, ए बे गंधना पुद्गळ तिर्थंकरे कह्या छे ॥ १८ ॥

अर्थः—र० रसथकी तिखादिक रसपणे प०परिणम्याछे पुद्गल जे०जे उ०वळी॥ पं०पांच प्रकारे ते०तेरम प०कह्या तिर्थंकरे। ति०तिखा १। क०कडुया २। क० कसायला ३। अ०खाटा ४। म०मीठा ५॥ त० तेमज ॥१९॥

मूलः—रसओ परिणया जे उ पंचहा ते पकित्तिया ।
तित्तकडुयकसाया अम्बिला महुरा तहा ॥ १९ ॥

गाथा १९ भावार्थ.—जे पुद्गळ रसपणे प्रणम्या छे ते पांच प्रकारे, १ तीखा रसपणे, २ कडवा रस पणे, ३ कसायला रसपणे, ४ खाटा रसपणे, ५ मीठा रसपणे, ए पांच रसना पुद्गळ तिर्थंकरे कह्या छे ॥१९॥

अर्थः—फा० फासथकी फरसने प० परिणामे परिणम्याछे जे०जे पुद्गल उ० वळी। अ०आठ प्रकारे [illegible] कह्या तिर्थंकरे। ग०ख० खरखरा पाषाणनी परे म० मुद्दाळां माखणनी परे चे० पुरणे ग०भारे [illegible] आकडानी परे त० तेमज ॥ २० ॥

मूलः—फासओ परिणया जे उ अट्ठहा ते पकित्तिया ।
[illegible] गरुया लहुया तहा ॥ २० ॥

[illegible] ते [illegible] छे ते ८ प्रकारे तिर्थंकरे कह्या छे, १ खरखरा [illegible], ५ [illegible] ७ भारे ते [illegible] परे, ७ हळवा ते आकडानी परे ॥२०॥

संस्थान ए वीस बोलनी भजना जाणवी ॥ ३३ ॥

अर्थः-र० रसथकी म० मीठामांहि जे० जे पुद्गल होय ते मांहि ॥ उ० वळी भ० भजना होय से० ते पांच उ०वळी व०वर्णनी ॥ गं० बे गंधमांहि कोइक गंध होय ते भणी बे गंधनी भजना ॥ फा० फरस आठनी चे० पुरणे भ० भजना होय सं० संस्थाननी वि० पण ॥ ३४ ॥

मूलः-रसओ महुरए जे उ भइए से उ वण्णओ ।
गन्धओ फासओ चेव भइए संठाणओ विय ॥ ३४ ॥

गाथा ३४ भावार्थः-जे पुद्गळ रस थकी मीठां होय तेह मांही पांच वर्ण, बे गंध, आठ स्पर्श, पांच संस्थान ए २० बोलनी भजना जाणवी ॥ ३४ ॥

अर्थः-फा०फरसथकी फ०पाखणनीपरे कठीन खरखरो जे०जे उ०वळी । भ० भजना से०ते उ०वळी व०पांचवर्णनी। गं० बे गंधनी भजना र० पांच रसनी होय चे०पुरणे ॥ भ०भजना होय सं०पांच संस्थाननी वि०पण ॥३५॥

मूलः-फासओ कक्खडे जे उ भइए से उ वण्णओ ।
गन्धओ रसओ चेव भइए संठाणओ विय ॥ ३५ ॥

गाथा ३५ भावार्थः-जे पुद्गळ स्पर्श थकी खरखरां होय तेहमांही पांच वर्ण, बे गंध, पांच रस, पांच संस्थान ए १७ तथा (८ स्पर्श) ए २३ बोलनी भजना जाणवी ॥ ३५ ॥

अर्थः-फा०फरस थकी म० सुंहाळो माखण सरिखो जे०जे पुद्गळ होय तेमांहे उ०वळी ॥ भ०भजना होय

स्थान ने चउरंसाने आकारे, ५ आयत संस्थान ने लांबी लाकडीने आकारे ए पांच संस्थान जाणवां ॥ २२ ॥

अर्थः—व० वर्ण थकी जे० जे भ० होय कि० काळो पुद्गल ते लहे ॥ भ० भजना से० ते उ० वळी गं० बेगंधनी सुगंध होय अने दुर्गंध पण होय । र० तिक्तादिक पांच रस मांहे कोइक तिक्तादिक रस होय फा० आठ फरसनी चे० पुरणे भ० भजना होय काळा वर्ण पासे जघन्य ४ ने गं १ रस १ फरस २ एम ४ । संठाण नहि ते परमाणुया आश्री । उत्कृष्टा २० भाव लाभे ते बादर अनंत प्रदेशी स्कंध आश्री ॥ भ० भजना होय सं० संस्थान पांचनी वि० य० पण ॥२३॥

मूलः—वण्णओ जे भवे किण्हे भइए से उ गन्धओ ।
रसओ फासओ चेव भइए संठाणओ विय ॥ २३ ॥

गाथा २३ भावार्थः—जे पुद्गल वर्ण थकी काळा होय तेह मांही बे गंध, पांच रस, आठ स्पर्श, पांच संस्थान ए २० बोलनी भजना (होय अथवा न होय ते) जाणवी, ए बादर अनंता प्रदेशीया स्कंध आश्री २० बोल जाणवा अने काळा वर्ण पासे जघन्य ४ बोल लाभे ते एक गं १, एक रस, बे स्पर्श, संस्थान नहि ए परमाणुआ आश्री जाणवुं ॥२३॥

अर्थः—व० वर्ण थकी जे० जे पुद्गल भ० होय नी० नीलो ते लहे । भ० भजना होय से० ते उ० वळी गं० बे गंधनी सुगंध होय दुर्गंध पण होय र० रस पांच मांहे एक तिक्तादिक रस होय ते भणी पांच रसनी भजना होय ॥ फा० आठ फरसनी भजना चे० पुरणे भ० भजना होय सं० संस्थान पांचनी वि० य० पण ॥ २४ ॥

मूलः—वण्णओ जे भवे नीले भइए से उ गन्धओ ।
रसओ फासओ चेव भइए संठाणओ विय ॥ २४ ॥

गन्धओ रसओ चेव भइए संठाणओ विय ॥ ३८ ॥

गाथा ३८ भावार्थः–जे पुदगळ स्पर्शथकी हलकां होय ते मांही पांच वर्ण, वे गंध, पांच रस, पांच संस्थान ए १७ ने (छ स्पर्श) ए २३ बोलनी भजना जाणवी ॥ ३८ ॥

अर्थः–फा० फरसथकी सी० टाढां कमल सरिखा जे० जे पुदगल उ० वळी ॥ भ० भजना से० ते उ० वळी व० पांच वर्णना । गं० वे गंधनी र० पांच रसनी चे० पुरणे । भ० भजना होय सं० संस्थाननी वि० पण ॥३९॥

मूलः–फासओ सीयए जे उ भइए से उ वण्णओ ।
गन्धओ रसओ चेव भइए संठाणओ विय ॥ ३९ ॥

गाथा ३९ भावार्थः–जे पुदगळ स्पर्श थकी टाढां होय तेह मांही पांच वर्ण, वे गंध, पांच रस, पांच संस्थान (छ स्पर्श) ए २३ बोलनी भजना जाणवी ॥ ३९ ॥

अर्थः–फा० फरसथकी उ० उन्हा अग्नि सरिखा जे० जे पुदगल होय ते मांहि उ० वळी ॥ भ० भजना होय से० ते उ० वळी व० पांच वरणनी गं० वे गंधनी भजना होय र० पांच रसनी भजना होय चे० वळी भ० भजना होय सं० संस्थाननी वि० पण ॥ ४० ॥

मूलः–फासओ उण्हए जे उ भइए से उ वण्णओ ।
गन्धओ रसओ चेव भइए संठाणओ विय ॥ ४० ॥

गाथा ४० भावार्थः–जे पुदगल स्पर्श थकी [illegible]

अर्थः-व० वर्णथकी शु० धोळा जे० जे पुद्गल भ० होय। भ० भजना होय से० ते उ० वळी ग० बे गंधनी। र० रसनी पांचनी फा० आठ फरसनी चे० पुरणे। भ० भजना। सं० संस्थाननी वि० पण ॥२७॥

मूलः-वण्णओ जे भवे सुक्किले भइए से उ गन्धओ ।
रसओ फासओ चेव भइए संठाणओ विय ॥ २७ ॥

गाथा २७ भावार्थः-जे पुद्गळ वर्ण थकी धोळां होय तेह मांही २ गंध, ५ रस, ८ स्पर्श, ५ सं स्थान, ए २० बोलनी भजना जाणवी [ए पूर्वोक्त पांचे वर्णना १०० बोल जाणवा] ॥ २७ ॥

अर्थः-गं० गंधथकी जे० जे पुद्गल होय। सु० सुगंध मांहि भ० होय भ०भजना होय से० ते उ०वळी व०पांच वर्णनी र०रस पांचनी पण भजना फा०आठ फरसनी भजना होय चे०पुरणे ॥ भ०भजना होय सं०संस्थाननी वि०पण॥२८॥

मूलः-गन्धओ जे भवे सुब्भी भइए से उ वण्णओ ।
रसओ फासओ चेव भइए संठाणओ विय ॥ २८ ॥

गाथा २८ भावार्थः-जे पुद्गळ गंध थकी सुगंध होय तेह मांही, ५ वर्ण, ५ रस, ८ स्पर्श, ५ संस्थान, ए २३ बोलनी भजना जाणवी ॥ २८ ॥

अर्थः-गं० गंधथकी जे० जे पुद्गल भ० होय ॥ दु० दुर्भिगंध मांहि होय भ० भजना ॥ से० ते उ० वळी व० वर्ण पांचनी ॥ र० तिक्तादिक रस पांचनी ॥ फा० आठ फरसनी भजना होय चे० पुरणे ॥ भ० भजना होय सं० संस्थाननी वि० पण ॥ २९ ॥

अर्थः–प० परिमंडल चुडिनी परे सं० संस्थान छे जेहनो पुद्गल ते पुद्गल मांहि । भ० भजना होय से० ते उ० वळी व० पांच वर्णनी । गं० बे गंधनी र० पांच रसनी भजना चे० पुरणे । भ० भजना होय से० ते फा० आठ फरसनी वि० पण ॥ ४३ ॥

मूलः–परिमण्डलसंठाणे भइए से उ वण्णओ ।
गन्धओ रसओ चेव भइए से फासओ विय ॥४३॥

गाथा ४३ भावार्थः–जे पुद्गळ परीमंडळ संस्थाने होय तेह मांही पांच वर्ण, बे गंध, पांच रस, ८ स्पर्श ए २० बोलनी भजना जाणवी ॥ ४३ ॥

अर्थः–सं० संस्थान थकी भ०होय ॥ व० वाटला लाडुवा सरिखो ॥ भ० भजना होय पांच वर्णनी से०ते उ० वळी व० पांच वर्णनी ॥ गं० बे गंधनी । र० पांच रसनी चे० पुरणे । भ०भजना होय से०ते फा०आठ फरसनी वि०पण ॥४४॥

मूलः–संठाणओ भवे वट्टे भइए से उ वण्णओ ।
गन्धओ रसओ चेव भइए से फासओ विय ॥४४॥

गाथा ४४ भावार्थः–जे पुद्गळ वाटला संस्थानने होय तेहमांही पांच वर्ण, बेगंध, पांच रस, ८ स्पर्श ए २० बोलनी भजना जाणवी ॥ ४४ ॥

अर्थः–सं० संस्थान थकी भ० होय तं० सींघोडा सरिखा ॥ भ० भजना होय से० ते व०पांच वर्णनी

गन्धओ फासओ चेव भइए संठाणओ विय ॥३१॥

गाथा ३१ भावार्थः—जे पुद्गल रस थकी कटवां होय तेह मांही पांच वर्ण, बे गंध, आठ स्पर्श, पांच संस्थान, ए २० बोलनी भजना जाणवी ॥ ३१ ॥

अर्थः—र० रसथकी क० कषायडुं जे० जे पुद्गल होय ते मांहे उ० वली ॥ भ० भजना होय से० ते उ० वली व० पांच वर्णनी गं० बे गंध मांहे कोइक गंध होय ते मणी बे गंधनी भजना ॥ फा० फरस आठनी से० पुण्णे ॥ भ० भजना होय सं० संस्थाननी ति० पण ॥ ३२ ॥

मूलः—रसओ कसाए जे उ भइए से उ वण्णओ ।
गन्धओ फासओ चेव भइए संठाणओ विय ॥३२॥

गाथा ३२ भावार्थः—जे पुद्गल रस थकी कषायलां होय तेह मांही पांच वर्ण, बे गंध, आठ स्पर्श, पांच संस्थान, ए बीस बोलनी भजना जाणवी ॥ ३२ ॥

अर्थः—र० रसथकी भ० खाटां जे० जे पुद्गल उ० वली ॥ भ० भजना होय से० ते उ० वली व० पांच वर्णनी ॥ गं० बे गंधनी फा० आठ फरसनी से० पुण्णे भ० भजना सं० संस्थाननी ति० पण ॥ ३३ ॥

मूलः—रसओ अम्बिले जे उ भइए से उ वण्णओ ।
गन्धओ फासओ चेव भइए संठाणओ विय ॥३३॥

गाथा ३३ भावार्थः—जे पुद्गल रस थकी खाटां होय तेह मांही पांच वर्ण, बे गंध, आठ स्पर्श, पांच

हर्षे एक काल वर्णना यंत्राणि लिख्यते

| | | |

से०ते उ०वळी व०वर्ण पांचनी गं०बे गंधनी र०पांच रसनी चे०पुरणे भ०भजना होय सं०संस्थाननी वि०पण॥३६॥

मूलः–फासओ मउए जे उ भइए से उ वण्णओ ।
गन्धओ रसओ चेव भइए संठाणओ विय ॥ ३६ ॥

गाथा ३६ भावार्थः–जे पुद्गळ स्पर्शथकी सुंवाळा होय, तेह मांही पांच वर्ण, बे गंध, पांच रस, पांच संस्थान ए १७ तथा (छ स्पर्श) एम २३ बोलनी भजना जाणवी ॥ ३६ ॥

अर्थः–फा०फरस थकी मु०जे भारे लोह सरिखो जे०जे पुद्गल होय ते मांहे उ०वळी । भ०भजना होय से०ते उ०वळी व० पांच वर्णनी गं० बे गंधनी र० पांच रसनी चे० पुरणे ॥ भ० भजना होय सं० पांच संस्थाननी वि०पण ॥ ३७॥

मूलः–फासओ गुरुए जे उ भइए से उ वण्णओ ।
गन्धओ रसओ चेव भइए संठाणओ विय ॥ ३७ ॥

गाथा ३७ भावार्थः–जे पुद्गळ स्पर्शथकी भारे होय तेह मांही पांच वर्ण, बे गंध, पांच रस, पांच संस्थान एम १७ तथा (छ स्पर्श) ए २३ बोलनी भजना जाणवी ॥ ३७ ॥

अर्थः–फा० फरस थकी ल० हलुवा आकडुल सरिखा जे० जे पुद्गल ते मांहि उ० वळी ॥ भ० भजना होय से० ते उ० वळी व० पांच वर्णनी ॥ गं० बे गंधनी र० पांच रसनी चे० पुरणे । भ० भजना होय ॥ सं० पांच संस्थाननी वि० पण ॥ ३८ ॥

मूलः–फासओ लहुए जे उ भइए से उ वण्णओ ।

संस्थान (छ स्पर्श) ए २३ बोलनी भजना जाणवी ॥ ४० ॥

अर्थः-फा० फरसथकी नि० चोपड्यां सरिखा जे० जे पुद्गळ ते मांही उ० वळी भ० भजना होय से० ते उ० वळी व० पांच वर्णनी गं० बे गंधनी चे० वळी र० पांच रसनी भ० भजना होय सं० संस्थाननी नि० पण ॥ ४१ ॥

मूलः—फासओ निद्धए जे उ भइए से उ वण्णओ ।
गन्धओ रसओ चेव भइए संठाणओ विय ॥ ४१ ॥

गाथा ४१ भावार्थः-जे पुद्गळ स्पर्श थकी चोपड्यां होय तेह मांही पांच वर्ण, बे गंध, पांच रस, पांच संस्थान (छ स्पर्श) ए २३ बोलनी भजना जाणवी ॥ ४१ ॥

अर्थः-फा० फरस थकी जे लु० पुद्गल लुखा रूक्ष सरिखा होय ते मांहि जे० जे उ० वळी ॥ भ० भजना होय से० ते उ० वळी व० वर्ण पांचनी ॥ गं० बे गंधनी भजना होय र० पांच रसनी भजना होय चे० पुणे ॥ भ० भजना होय सं० संस्थाननी वि० पण ॥ ४२ ॥

मूलः—फासओ लुक्खए जे उ भइए से उ वण्णओ ।
गन्धओ रसओ चेव भइए संठाणओ विय ॥ ४२ ॥

गाथा ४२ भावार्थः-जे पुद्गळ स्पर्शथकी लुखां होय तेह मांही पांच वर्ण, बे गंध, पांच रस, पांच संस्थान (छ स्पर्श) ए २३ बोलनी भजना जाणवी (जे स्पर्श होय ते अने तेनो प्रतिपक्षी ए बे स्पर्श वर्जिने बीजा ६-६ स्पर्श गणतां २१ बोल थाय, एम दरेक स्पर्शमां २३, २१ बोल गणतां २३×८=१८४ बोल स्पर्शना जाणवा) ॥ ४२ ॥

मूलः—संठाणओ भवे तंसे भइए से उ वण्णओ ।
गन्धओ रसओ चेव भइए स फासओ विय ॥४५॥

गाथा४५भावार्थः जेपुद्गळ त्रंस संस्थाने होय तेहमांही पांच वर्ण, बेगंध, पांचरस, ८स्पर्श ए२० बोलनीभजनाजाणवी।४५।
अर्थः—सं० संस्थानथकी भ० होय च० चौरसने आकारे चौरसछे जेपुद्गळ तेमांहे भ० भजनाहोय से० ते उ० वळी व० पांच वर्णनी गं० बेगंधनी भजनाहोय र० पांचरसनी भजनाहोय चे० वळी प० भजना से० ते फा० आठफरसनी वि० पण॥४६॥

मूलः—संठाणओ भवे चउरंसे भइए मे उ वण्णओ ।
गन्धओ रसओ चेव भइए से फासओ विय ॥ ४६ ॥

गाथा४६भावार्थः जेपुद्गळ चोरस संस्थानेहोय तेहमांही पांच वर्ण, बेगंध, पांचरस, ८स्पर्श ए२० बोलनीभजनाजाणवी।४६।
अर्थः—जे० जे पुद्गल आ० लाकडीनीपरे त्रांवा सं० संस्थानपरे परिणम्याछे ते मांहे ॥ भ० भजना से० ते उ० वळी व० पांच वर्णनी गं० बे गंधनी र० रसथकी चे० पुरणे भ० भजना होय से० ते फा० आठ फरसनी वि० पण ॥४७॥

मूलः—जे आययसंठाणे भइए मे उ वण्णओ ।
गन्धओ रसओ चेव भइए से फासओ विय ॥ ४७ ॥

गाथा ४७ भावार्थः—जे पुद्गळ आयत संस्थाने होय तेहमांही पांच वर्ण, बे गंध, पांच रस, ८ स्पर्श ए २० बोलनी भजना जाणवी (ए पूर्वोक्त पांच संस्थानना मळीने १०० भेद जाणवा, ए १०० वर्णना, १०० रसना, ४६ गंधना, १८४ स्पर्शना, १०० संस्थानना, ए सर्वे मळी ५३० भेद रूपी अजीवना स्थूळ थकी कह्या, बाकीतो एक गुण द्विगुण आदिक गणतां तो अनंता भांगा थाय ॥ ४७ ॥

कोठामां ३ ने बदले ४ नो आंक लखवो तेथी तेना पण ४०० भांगा थाय, तेमज धोळा वर्णना ४०० भांगा थाय, पण एटलो फेर के वर्णना कोठामां ४ ने बदले ५ नो आंक लखवो तो तेना पण ४०० भांगा थाय, ए पांचे वर्णना भांगा मळी २००० थाय, एक काळा वर्णना ४०० भांगाना यंत्रनुं उदाहरण बताव्युं छे, ए आम्नाथी पोतानी बुद्धिए आगळ बीजां पण भांगा वधाराय, एज आम्ना प्रमाणे गंध, रस, स्पर्श, संस्थानना पण भांगा थाय, पण एटलो फेर के वर्णना कोठामां जेना भांगा काढवा होय तेनो आंक लखवो, बीजी उपर प्रमाणे आम्नाथी भांगा वधारता जवुं, ए वर्णादीकनां भांगा पन्नवणा सुत्रना पेहेला पदने विषे तिर्थंकरे कह्या छे.

अर्थः-ए० ए पुर्वे कह्यो ते अ० अजीव वि० विचारणा पण । स० संक्षेपे वि० कही इ० ए छए अजीवनी विचारणा कह्या पछी हवे । जी० जीवनी वि० विचारणा वु० शिष्य प्रत्ये गुरु कहेछे हुं कहीश अ० अनुक्रमे ॥४८॥

मूलः-एसा अजीवविभत्ती समासेण वियाहिया ।
इत्तो जीवविभत्तिं वुच्छामि अणुपुव्वसो ॥ ४८ ॥

गाथा ४८ भावार्थः-गुरु कहेता हवा हे शिष्य ? ए पुर्वोक्त अरुपी अजीवना ३० भेद अने रुपी अजीवना ५३० भेद कुल ५६० भेद रुप अजीवनी संक्षेपे विचारणा कही, हवे जीवनी विचारणा हुं अनुक्रमे कहीश ??? ॥४८॥

अर्थः-सं० एकेंद्रियादिक संसारीक जीव य० वळी सि० अने बीजा सिद्धना जीव य० वळी ॥ दु० बे प्रकारे जी० जीव वि० कथा तिर्थंकर गणधराने । सि० सिद्ध अ० घणे प्रकारे नु० कथा तिर्थंकरे । तं० ते सिद्धना अनेक भेद शिष्य प्रत्ये गुरु कहे छे । मे० मुजने कि० कहेता थका । सु० सांभळो ॥ ४९ ॥

अवगाहनाना सिद्ध थाय । म० मध्यम अवगाहनाना सिद्ध थाय ते आदि देइने य० वली । उ० उंचा पर्वत उपरे मरीने सिद्ध थाय ॥ अ० खाड प्रमुख मांहि मरीने सिद्ध थाय य० वली ॥ ति० तिरछे लोके होय त्यांथी मरीने सिद्ध थाय च० वली ॥ समु० बे समुद्र लवण अने काळोदधि ए बे समुद्रमांहि कोइक देवनादिके नाख्यो होय तिहांथी मरीने सिद्ध थाय । ज० नादि प्रमुख बीजा पाणीमांहि मरीने सिद्ध थाय य० वली ॥ ५१ ॥

मूलः—उक्कोसोगाहणाए य जहन्नमज्झिमाए य ।
उड्ढं अहे य तिरियं च समुद्दम्मि जलम्मि य ॥ ५१ ॥

गाथा ५१ भावार्थः—जघन्य बे हाथनी अवगाहना (शरीरनी उंचाइ) वाळा सिद्ध थाय, मध्यम अवगाहनावाळा सिद्ध थाय, तेमज उत्कृष्टी ५०० धनुषनी अवगाहनावाळा सिद्ध थाय, उंचा पर्वत उपरे मरीने सिद्ध थाय, निचा खाड प्रमुखमांही मरीने सिद्ध थाय, त्रीछा लोकमांही मरीने सिद्ध थाय, कोइक देवनाए लवण समुद्रने काळोदधी समुद्र ए बे समुद्र मांही नांखेल होय, ते तिहां मरीने सिद्ध थाय, नदी प्रमुख बीजा पाणी मांही मरीने सिद्ध थाय ॥ ५१ ॥

अर्थः—द्० दश जीवना य० वली न० पुरुष नपुंसकने विषे उत्कृष्टा एक समय सिद्ध थाय ॥ वी० उत्कृष्टा वीस जीव । इ० त्रीने विषे सिद्ध थाय य० वली । पु० पुरुषने विषे उत्कृष्टा सिद्धे तो य० वली । अ० एकसो उपरी आठ सिद्धे सिद्ध थाय । स० उत्कृष्टा समय ए० एके सि० सिद्धे ॥ ५२ ॥

मूलः—दस य नपुंसगसु वीसं इत्थियासु य ।

३५७	१	२	४	८	२	३६८	१	२	५	२	४	३७९	१	२	५	४	४	३९०	१	२	५	७	४	६			
३५८	१	२	४	८	३	३६९	१	२	५	२	४	३८०	१	२	५	४	५	३९१	१	२	५	७	५	१			
३५९	१	२	४	८	४	३७०	१	२	५	२	५	३८१	१	२	५	५	१	३९२	१	२	५	७	५	२			
३६०	१	२	४	८	५	३७१	१	२	५	३	१	३८२	१	२	५	५	२	३९३	१	२	५	७	५	३			
३६१	१	२	५	१	१	३७२	१	२	५	३	२	३८३	१	२	५	५	३	३९४	१	२	५	७	५	४			
३६२	१	२	५	१	२	३७३	१	२	५	३	३	३८४	१	२	५	५	४	३९५	१	२	५	७	५	५			
३६३	१	२	५	१	३	३७४	१	२	५	३	४	३८५	१	२	५	५	५	३९६	१	२	५	८	५	१			
३६४	१	२	५	१	४	३७५	१	२	५	३	५	३८६	१	२	५	६	१	३९७	१	२	५	८	५	२			
३६५	१	२	५	१	५	३७६	१	२	५	४	१	३८७	१	२	५	६	२	१९८	१	२	५	८	५	३			
३६६	१	२	५	२	१	३७७	१	२	५	४	२	३८८	१	२	५	६	३	३९९	१	२	५	८	५	४			
३६७	१	२	५	२	२	३७८	१	२	५	४	३	३८९	१	२	५	६	४	४००	१	२	५	८	५	५			

ए कुल्ल वर्णना ४०० भांगा थया, ते ४०० भांगा शुधी काळोज वर्ण होय, ए वर्णना यंत्रमां वर्ण ४०० थी फरे, गंध २०० थी फरे, रस ४० थी फरे, स्पर्श पांच पांचथी फरे, संस्थान एकेकथी फरे, जुओ यंत्रमां, ए आम्ना प्रमाणे काळा वर्णना ४०० भांगा थया, एमज निला वर्णना ४०० भांगा थया पण एटलो फेर के वर्णना कोठामां एकडाने बदले २ नो आंक लखवो तेथीतेना पण ४०० भांगा थाय, तेवीज रीते राता वर्णना ४०० भांगा थाय, पंण एटलो फेर के वर्णना कोठामां २ ना आंकने बदले ३ नो आंक लखवो तेथी तेना पण ४०० भांगा थाय, एमज पीळा वर्णना ४०० भांगा थाय, पण एटलो फेरके वर्णना

चत्तारि जहन्नाए मज्झे अट्ठुत्तरं सयं ॥ ५४ ॥

गाथा ५४ भावार्थः–जघन्य बे हाथनी अवगाहनावाळा एक समय साथे उत्कृष्टा चार जीव सिद्ध थाय, जन मध्यनीपेरे मध्यम अवगाहनावाळा एक समय उत्कृष्टा १०८ जीव सिद्ध थाय, उत्कृष्टी ५०० धनु- ॥ ३६ ॥
पनी अवगाहनावाळा एक समय उत्कृष्टा बे जीव सिद्ध थाय ॥ ५४ ॥

॥ ४५६ ॥

अर्थः–च० च्यार उ० मेरु पर्वतनी चुलिकादिक उर्द्ध लो० लोकने विषे उत्कृष्टा एक समय सिझे य० वळी ॥ दु० बे जीव स० समुद्रने विषे ॥ उत्कृष्टा एक समये बे सिझे त० त्रण जीव ज० नदि प्रमुखना पाणीमां उत्कृष्टा एक समये सिझे । वी० वीस जीव अ० खाड प्रमुख अधोलोकने विषे उत्कृष्टा । एक समये सिझे त० तेमज य० वळी स० एकसो च० अने । अ० उपर आठ ति० त्रीछा लो० लोकने विषे उत्कृष्टा ॥ स०समय ए० एक सि० सिझे ॥ ध्रु० निश्चे ॥ ५५ ॥

मूलः–चउरुड्ढलोए य दुवे समुद्दे तओ जले वीसमहे तहेव य।
सयं च अट्ठुत्तरं तिरियलोए समएणेगेण सिज्झई धुवम् ॥५५॥

गाथा ५५ भावार्थः–मेरु पर्वतनी चुलिकादीक उर्द्ध (उंचा) लोकने विषे एक समय उत्कृष्टा चार जीव सिद्ध थाय, समुद्रने विषे एक समय उत्कृष्टा बे जीव सिद्ध थाय, नदी प्रमुख बीजा पाणीमांही उत्कृष्टा ३ जीव सिद्ध थाय, खाट प्रमुख अधो (नीचा) लोकने विषे एक समय उत्कृष्टा २० जीव सिद्ध थाय, ॥ ४५६ ॥

मूल–संसारत्था य सिद्धा य दुविहा जीवा वियाहिया ।
सिद्धा णेगविहा वुत्ता तं मे कित्तयओ सुण ॥ ४९ ॥

गाथा ४९ भावार्थः–जीव बे प्रकारे ने एक कर्मसहित ने एकेंद्रियादिक संसारी जीव, बीजा कर्मरहित ने सिद्धना जीव, ए बे प्रकारना जीव निर्मळे कह्या छे, गुरु कहेता हवा हे शिष्य! ए बे प्रकारना जीव ने पाछी सिद्धना जीव घणे प्रकारे निर्मळे कह्या छे, ते हुं तुजने कहुं छुं ते तुं सांभळ!!? ॥ ४९ ॥

अर्थः–१० स्त्री मरीने सिद्ध थाय पु० पुरुष मरीने सि० सिद्ध थाय य० वळी । न० तेमज पुरुष य० वळी न० नपुंसक मरीने सिद्ध थाय । स० स्वलिंगे ने यतिने वेषे लिंगे सिद्ध थाय। अ० अन्नेरे संन्यासीने लिं० वेषे सिद्ध थाय य० वळी । गि० गृहस्थने लिं० वेषे मरीने सिद्ध थाय त० तेमज थाय य० वळी ॥ ५० ॥

मूलः–इत्थी पुरिससिद्धा य तहेव य नपुंसगा ।
सलिंगे अन्नलिंगे य गिहिलिंगे तहेव य ॥ ५० ॥

गाथा ५० भावार्थः–१ स्त्री मरीने सिद्ध थाय, २ पुरुष मरीने सिद्ध थाय, ३ नपुंसक मरीने सिद्ध थाय, तेमज ४ स्वलिंगे सिद्ध ते साधुने वेषे सिद्ध थाय, ५ अन्यलिंगे सिद्ध ते सन्यासी प्रमुखना अनेरे वेषे सिद्ध थाय, तेमज ६ गृहस्थलिंगे ते गृहस्थने वेषे सिद्ध थाय (इहां अन्यलिंगे ने गृहस्थलिंगे सिद्ध थाय, पण अन्यपणाने गृहस्थी सिद्ध न थाय एम समजवुं) ॥ ५० ॥

अर्थः–उ० उत्कृष्टी उ० पांचसे धनुषनी अवगाहनाना सिद्ध थाय य० वळी । ज० जघन्य बे हाथनी

चत्तारि जहन्नाए मज्झे अट्ठुत्तरं सयं ॥ ५४ ॥

गाथा ५४ भावार्थः–जघन्य बे हाथनी अवगाहनावाळा एक समय साथे उत्कृष्टा चार जीव सिद्ध थाय, जघ मध्यनीपेरे मध्यम अवगाहनावाळा एक समय उत्कृष्टा १०८ जीव सिद्ध थाय, उत्कृष्टी ५०० धनुषनी अवगाहनावाळा एक समय उत्कृष्टा बे जीव सिद्ध थाय ॥ ५४ ॥

अर्थः–च० च्यार उ० मेरु पर्वतनी चुलिकादिक उर्द्ध लो० लोकने विषे उत्कृष्टा एक समय सिझे य० वळी ॥ दु० बे जीव स० समुद्रने विषे ॥ उत्कृष्टा एक समये बे सिझे त० त्रण जीव ज० नादि प्रमुखना पाणीमां उत्कृष्टा एक समये सिझे । वी० वीस जीव अ० खाड प्रमुख अधोलोकने विषे उत्कृष्टा । एक समये सिझे त० तेमज य० वळी स० एकसो च० अने । अ० उपर आठ ति० त्रीछा लो० लोकने विषे उत्कृष्टा ॥ स०समय ए० एक सि० सिझे ॥ ध्रु० निश्चे ॥ ५५ ॥

मूलः–चउरुड्ढलोए य दुवे समुद्दे तओ जले वीसमहे तहेव य।
सयं च अट्ठुत्तरं तिरियलोए समएणेगेण सिज्झई धुवम् ॥५५॥

गाथा ५५ भावार्थः–मेरु पर्वतनी चुलिकादीक उर्द्ध (उंचा) लोकने विषे एक समय उत्कृष्टा चार जीव सिद्ध थाय, समुद्रने विषे एक समय उत्कृष्टा बे जीव सिद्ध थाय, नदी प्रमुख बीजा पाणीमांही उत्कृष्टा ३ जीव सिद्ध थाय, खाड प्रमुख अधो (नीचा) लोकने विषे एक समय उत्कृष्टा २० जीव सिद्ध थाय, त्रीछालोकने विषे एक समय उत्कृष्टा १०८ जीव सिद्ध थाय ॥ ५५ ॥

मूल–संसारत्था य सिद्धा य दुविहा जीवा वियाहिया ।
सिद्धा णेगविहा वुत्ता तं मे कित्तयओ सुण ॥ ४९ ॥

गाथा ४९ भावार्थः–जीव बे प्रकारे ते एक कर्मसहित ते एकेंद्रियादिक संसारी जीव, बीजा कर्मरहित ते सिद्धना जीव, ए बे प्रकारना जीव जिनेश्वरे कह्या छे, गुरु कहेता हवा हे शिष्य! ए बे प्रकारना जीव ते मांही सिद्धना जीव घणे प्रकारे जिनेश्वरे कह्या छे, ते हुं तुजने कहुं छुं ते तुं सांभळ!!? ॥ ४९ ॥

अर्थः–इ० स्त्री मरीने सिद्ध थाय पु० पुरुष मरीने सि० सिद्ध थाय य० वळी । त० तेमज पुरुष य० वळी न० नपुंसक मरीने सिद्ध थाय । स० स्वलिंगे ते यतिने वेषे लिंगे सिद्ध थाय । अ० अन्येरे संन्यासीने लिं० वेषे सिद्ध थाय य० वळी । गि० गृहस्थने लिं० वेषे मरीने सिद्ध थाय त० तेमज थाय ग० वळी ॥ ५० ॥

मूलः–इत्थी पुरिससिद्धा य तहेव य नपुंसगा ।
सलिङ्गे अन्नलिङ्गे य गिहिलिङ्गे तहेव य ॥ ५० ॥

गाथा ५० भावार्थः–१ स्त्री मरीने सिद्ध थाय, २ पुरुष मरीने सिद्ध थाय, ३ नपुंसक मरीने सिद्ध थाय, तेमज ४ स्वलिंगे सिद्ध ते साधुने वेशे सिद्ध थाय, ५ अन्यलिंगे सिद्ध ते सन्यासी प्रमुखना अनेरे वेशे सिद्ध थाय, तेमज ६ ग्रहस्थलिंगे ते ग्रहस्थने वेशे सिद्ध थाय (इहां अन्यलिंगे ने ग्रहस्थलिंगे सिद्ध थाय, पण अन्यमतीने ग्रहस्थी सिद्ध न थाय एम समजवुं) ॥ ५० ॥

अर्थः–उ० उत्कृष्टी उ० पांचसे धनुषनी अवगाहनाना सिद्ध थाय ग० वळी । ज० जघन्य बे हाथनी

मूलः—बारसहिं जोयणेहिं सव्वट्ठस्सुवरिं भवे ।
ईसिपब्भारनामा उ पुढवी छत्तसंठिया ॥ ५८ ॥

गाथा ५८ भावार्थः—सर्वार्थसिद्ध विमानथकी बार योजन उपर ईसीपभारा नामे मुक्तिसिला छे, ते पृथ्वी चता छत्रने आकारे छे ॥ ५८ ॥

अर्थः—प० पीस्तालीस स० लाख जो० योजननी तु० वली ॥ आ० लांबी छे । ता० तेटलीज वे० पुरणे वि० पहोळी पीस्तालीस लाख योजन प्रमाणे छे ॥ ति० तेहनी त्रिगुणी सा० झाझेरी प० परधी छे ॥ ५९ ॥

मूलः—पणयालसयसहस्सा जोयणाणं तु आयया ।
तावइयं चेव वित्थिण्णा तिगुणो साहियपरिओ ॥ ५९ ॥

गाथा ५९ भावार्थः—ते सिद्धसिला ४५ लाख योजननी लांबी ने पीस्तालीस लाख योजननी पहोळी छे, तेहनी त्रीगुणी झाझेरी परीधी (चक्रावो) छे ॥ ५९ ॥

अर्थः—अ० ते सिद्धसिला आठ जो० योजन बा० जाडी छे सा० ते सिद्धसिला म० मध्यभागे आठ योजननी लांबी पहोळी खेत्रलगे आठ योजन जाडी वि० कही तिर्यकरे प० पछे थोडी हाणी पामती पातळी थाती च० छेहडे । म० मांखीनी प० पांख थकी त० पातळी जाणवी ॥ ६० ॥

मूलः—अट्ठजोयणबाहुल्ला सा मज्झम्मि वियाहिया ।
परिहायन्ती चरिमन्ते मच्छियपत्ताउ तणुयरी ॥ ६० ॥

पुरिसेसु य अट्ठसयं समएणेगेण सिज्झई ॥ ५२ ॥

गाथा ५२ भावार्थः-पुरुष नपुंसक (इहां जन्म नपुंसक समजवा नहि पण फक्त नपुंसक समजवा) ने वेदे, एक समय १० जीव सिद्ध थाय, स्त्रीने वेदे एक समय उत्कृष्टा २० जीव सिद्ध थाय, पुरुषने वेदे एक समय उत्कृष्टा १०८ जीव सिद्ध थाय ॥ ५२ ॥

अर्थः-स० स्वयंबुद्ध उ० बुद्धी बो० प्रत्येक लिं० लिंगने विषे एक समये सिज्झे अ० अन्यासी समुच्चय अन्य लिंगने विषे उत्कृष्टा द० दश जीव एकसमये सिज्झे ग० बुद्धी स० स्वलिं० लिंङ्गे गृहीने लिंगे अ० एकसो उत्तर आठ उत्कृष्टा एक समये सिज्झे स० समय ए० एके सि० सिज्झे ॥ ५३ ॥

मूलः-चत्तारि य गिहलिंङ्गे अन्नलिंङ्गे दसेव य ।
सलिंङ्गेण अट्ठसयं समएणेगेण सिज्झई ॥ ५३ ॥

गाथा ५३ भावार्थः-गृहस्थने वेषे एक समय उत्कृष्टा चार जीव सिद्ध थाय, अन्यलिंगने वेषे एक समय उत्कृष्टा १० जीव सिद्ध थाय, स्वलिंगे एक समय उत्कृष्टा १०८ जीव सिद्ध थाय ॥ ५३ ॥

अर्थः-उ० उत्कृष्टी ओगणे पचासनी उ० अवगाहनाना जीव ब० बत्रीश । सि० उत्कृष्टा सिद्धे जो जु० थाय एक समय दु० बे जीव सिद्ध । च० चार जीव ज० जघन्य बेहोतणी अवगाहनाना जीव उत्कृष्टा एक समय सिद्धे (अ० जघन्या) ब० बावीसाये अवगाहनाना जीव अ० उत्कृष्टा एकसो आठ सीझे ॥ ५४ ॥

मूलः-उड्ढलोगाहणाए य सिज्झन्ते जुगवं दुवे ।

उंचा छे अने ते सिद्धने उपरज अलोकछे, तेथी सिद्ध सिलाथी एक जोजन उंचो लोकनो अंत कह्यो ॥ ६२ ॥

अर्थः—जो० एक योजन प्रमाणना चालीसे उछेद कोशथाय एहवो जोयणनो उ० वळी जो० जे त० तिहां सिद्धसिलाछे को० एटली ओगणचालीससहे अने नवाणुं गाउ हेठी मुकीए । पछी तें उ० उपरलो जे कोस । भ० होय त० ते को० एक कोसना छ० छठ्ठा भागने विषे । सि० सिद्धनी उ० अवगाहना एटली प्रमाणे भ० होय ॥ ६३ ॥

मूलः—जोयणस्स उ जो तत्थ कोसो उवरिमो भवे ।
तस्स कोसस्स छब्भाए सिद्धाणोगाहणा भवे ॥ ६३ ॥

गाथा ६३ भावार्थः—एक प्रमाणांगुलना जोजनना, चार हजार उत्सेधांगुल कोश थाय, (हवे प्रमाण जोजन ने उत्सेध कोशनुं मान कहेछे, तेमां प्रथम प्रमाणांगुलनुं मान कहेछे, भरतादीक चक्रवर्तिनुं कांगणी रत्न होय, चार मधुर त्रीफळे एक श्वेत सरसव थाय, १६ सरसवे एक अडद थाय, २ अडदे एक गुजा (चणोठी) थाय, ५ गुंजाए एक मासो थाय, १६ मासे एक सोनैयो थाय, एवा ८ सोनैया भारनुं कांगणी रत्न होय, तेहने छतळां आठ सुगां होय, चार हांसळे, सोनीनी अहीरणने (एरण) संठाणे (आकारेछे), ते कांगणी रत्ननी अकेकी हांश उत्सेधांगुलनी पहोळी छे अने जे उत्सेधांगुळ ते समण भगवंत श्री महावीरनुं अर्ध अंगुळ थाय, तेहने १०० गुणुं करीए तेवारे एक प्रमाणांगुळ थाय, एटले महावीर स्वामीना पांचसे आत्म आंगुळे एक प्रमाणांगुळ थाय, एहवा ६ प्रमाणांगुळे एक पग थाय, चार अंगुळे एक वेंत थाय, २४ अंगुळे एक हाथ थाय, ४८ अंगुळे एक कुखी थाय, ९६ अंगुळे

अर्थः–क० किहां प० इणाणा उपर जाता खल्याणा सि० सिद्ध । क० किहां सि० सिद्ध प० रह्याछे ॥ क० अने किहां बो० शरीर च० छांडिने । क० किहां ग० जइने सि० सिझे ॥ ५६ ॥

मूलः–कहिं पडिहया सिद्धा कहिं सिद्धा पइट्ठिया ।
कहिं बोन्दि चइत्ताणं कत्थ गन्तूण सिज्झई ॥ ॥ ५६ ॥

गाथा ५६ भावार्थः–उपर जतां सिद्ध किहां खल्याणा (अटक्या) छे, सिद्ध किहां रह्या छे, किहां शरीर छांडीने कीहां जइने सिद्ध थाय ॥ ५६ ॥

अर्थः–आ० अलोकने विषे प० खल्याणा उपर जाता सि० सिद्धा लो० लोकना अग्र मस्तकने विषे प्र० वळी प० रह्याछे सिद्ध इ० इहां तिरछालोकने विषे बो० मनुष्य संबंधी शरीर च० छांडीने ॥ त० तिहां आगळ ग० जाइने सि० सिद्ध थाय ॥ ५७ ॥

मूलः–आलोए पडिहया सिद्धा लोयग्गे य पइट्ठिया ।
इहं बोन्दि चइत्ताणं तत्थ गन्तूण सिज्झई ॥ ५७ ॥

गाथा ५७ भावार्थः–उपर जतां अलोकने विषे सिद्ध खल्याणा छे, लोकाग्रना मस्तकने विषे सिद्ध रह्या छे, इहां मनुष्यलोकने विषे मनुष्य संबंधीयुं शरीर छांडीने तिहां लोकाग्रे जइन सिद्ध थाय ॥ ५७ ॥

अर्थः–बा० बार जो० जोजन ॥ स० सर्वार्थसिद्ध विमानथकी उ० उपर भ० छे ॥ ई० ईसीपभारा ना० नामे सिद्धसिला छे उ० वळी ॥ पु० ते पृथ्वी छ० छत्रने सं० आकारे ॥ ५८ ॥

आंगुळ थाय, ६ अंगुळे एक पग थाय, चार अंगुळे एक वेंत थाय, २४ अंगुळे एक हाथ थाय, ४८ अंगुळे एक कुंक्षी थाय, ९६ अंगुळे एक धनुष्य थाय, २००० धनुष्ये एक गाउ थाय, ४ गाउए एक जोजन थाय, ए उत्सेधांगुळना चार हजार कोश थाय, तेवारे प्रमाणांगुळनो जोजन थाय) एहवा सिद्ध सिला थकी त्रण हजार ९९९ कोश हेठा मुक्या पछी उपरनो जे एक कोश रह्यो तेहना ६ भाग करीये, तेवारे ३३३ धनुष्यने ३२ आंगुळ थाय, पहली सिद्ध भगवंतनी अवगाहना होय अने एक कोशना जे ६ भाग करेला छे, ते ६ भाग मांही सर्वथी उपरनो छेलो ६ ठो भाग ३३३ धनुष्यने ३२ आंगुळनो छे, तिहां सिद्ध भगवंत रह्याछे ॥६३॥

अर्थः–त० त्यां मोक्षने विषे सि० सिद्धछे । म० मोटा भा० भाग्यवंत अतिघणी शक्तिना धणी । लो० लोकना अ० अग्रनेविषे प० ठि० रह्या छे । भ० संसार मांहे नारकी प्रमुखना भवथी मु० मुंकाणाथका सि० मोक्षरुपिणी व० प्रधान ग० गति ग० पहोच्या छे ॥ ६४ ॥

मूलः–तत्थ सिद्धा महाभागा लोगग्गम्मि पइट्ठिया ।
भवपपञ्चओ मुक्का सिद्धिं वरगइं गया ॥ ६४ ॥

गाथा ६४ भावार्थः–तिहां मोक्षने विषे महा भाग्यवंत ने अती शक्तिना धणी सिद्ध छे ते लोकाग्रने विषे रह्याछे अने तेसिद्ध नारकी प्रमुखना भवना विस्तारथी मुंकाणाथका मोक्ष रुपणी प्रधान गतिए पहोच्याछे॥६४॥

अर्थः-क० कहां प० इणाणा उपरे जाना खलाणा सि० सिद्ध । क० कहां सि० सिद्ध प० रहाछे ॥ क० अने कहां बो० शरीर च० छांडिने । क० कहां ग० जइने नि० सिझे ॥ ५६ ॥

मूलः-कहिं पडिहया सिद्धा कहिं सिद्धा पइट्ठिया ।
कहिं बोन्दिं चइत्ताणं कत्थ गन्तूण सिज्झई ॥ ॥ ५६ ॥

गाथा ५६ भावार्थः-उपर जनां सिद्ध कहां खलाणा (अटक्या) छे, सिद्ध कहां रह्या छे, कहां शरीर छांडीने कीहां जइने सिद्ध थाय ॥ ५६ ॥

अर्थः-आ० अलोकने विषे प० खलाणा उपर जाना सि० सिद्धा लो० लोकना अग्र मस्तकने विषे प्र० वळी प० रहाछे सिद्ध इ० इहां निरलालोकने विषे बो० मनुष्य संबंधी शरीर च० छांडीने ॥ त० तिहां आगळ ग० जाइने सि० सिद्ध थाय ॥ ५७ ॥

मूलः-आलोए पडिहया सिद्धा लोयग्गे य पइट्ठिया ।
इहं बोन्दिं चइत्ताणं तत्थ गन्तूण सिज्झई ॥ ५७ ॥

गाथा ५७ भावार्थः-उपर जनां अलोकने विषे सिद्ध खलाणा छे, लोकाग्रना मस्तकने विषे सिद्ध रह्या छे, इहां श्रीआलोकने विषे मनुष्य संबंधीयुं शरीर छांडीने तिहां लोकाग्रे जइन सिद्ध थाय ॥ ५७ ॥

अर्थः-बा० बार जो० जोजन ॥ स० सर्वार्थसिद्ध विमानथकी उ० उपर भ० छे ॥ ई० ईसीपभारा ना० नामे सिद्धसिला छे उ० वळी ॥ पु० ते पृथ्वी छ० छत्रने सं० आकारे ॥ ५८ ॥

गाथा ६७ भावार्थः–ते सिद्ध भगवंत अरुपी छे ने आंतरा रहीत जीवना प्रदेश छे, केवळ ज्ञानने केवळ दर्शन सहीत छे अथवा केवळ ज्ञानने केवळ दर्शननीज जेहनी संज्ञा छे अने जे सुखनी उपमा नथी एवुं अतुल्य सुख सिद्ध पाम्या छे ॥ ६७ ॥

अर्थः–लो० लोकना ए० एक दे० देस विभागने विषे ते० ते सिद्ध स० सर्व छे ॥ ना० केवलज्ञान अने दं० केवलदर्शन जेहने सं० संज्ञा छे जेने ॥ सं० संसारनो पा० पार पाम्या नि० संसार छेद्यो छे जेणे। सि० मोक्षरुपिणी व० प्रधान । ग० गति ग० पहोता कर्म क्षय करीने ॥ ६८ ॥

मूलः–लोगेगदेसे ते सव्वे नाणदंसणसन्निया ।
संसारपारनित्थिण्णा सिद्धिं वरगइं गया ॥ ६८ ॥

गाथा ६८ भावार्थः–लोकना एक देश (विभाग) ने विषे सिद्ध रया छे अने केवळ ज्ञानने केवळ दर्शननीज जेहने संज्ञा छे, जे संसारनो पार पाम्या छे ने जेणे संसारने छेद्यो छे ने कर्म क्षय करीने मोक्षरुपणी प्रधान गतीये पहोच्या छे, ए प्रथम सिद्धना जीवनुं स्वरुप कह्युं ॥ ६८ ॥

अर्थः–हवे संसारीक जीवनुं स्वरुप कहे छे ॥ सं० संसारमांहि स्थिना छे संसारिक उ० वळी जे० जे जी० जीव । दु० बे प्रकारे ते० ते वि० कह्या तिर्थंकरे ॥ त० त्रस थ० अने था० थावर जीव ने० वळी था० थावर जीव ति० त्रण प्रकारे । त० ते त्रस थावर माहे ॥ ६९ ॥

मूलः–संसारत्था उ जे जीवा दुविहा ते वियाहिया ।

गाथा ६० भावार्थः–ते सिद्धशिला मध्य भागे आठ योजननी जाडीछे, तेहां मध्य भागे आठ योजननी लांबी अने आठ योजननी पहोळीछे, पछी थोडी थोडी हाणी पामती पातळी थती छेडे मांखीनी पांख करतां पण पातळीछे ॥६०॥

अर्थः–अ० अर्जुननामा घोळा सु० सुवर्ण म० मय ॥ सा० ते पु० पृथ्वी नि० निर्मळी छे स० स्वभावे उ० विनाशपा छ० छत्रने । सं० आकारे छे ग० वळी ॥ भ० कही जि० जिनेश्वर महाराजे ॥ ६१ ॥

मूलः–अज्जुणसुवण्णगमई सा पुढवी निम्मला सहावेण ।
उत्ताणगछत्तगसंठिया य भणिया जिणवरेहिं ॥ ६१ ॥

गाथा ६१ भावार्थः–ते पृथ्वी स्वभावेज अर्जुन नामे घोळा सुवर्णमय निर्मळ छे, अने छत्रा (छत्रा) छत्रने आकारे जिनेश्वरे कही छे ॥ ६१ ॥

अर्थः–सं० शंख अने अ० अंकनामा रत्न कु० मचकुंद फूल सं० सरिखी । प० घोळी ॥ नि० निर्मळ सु० भली छे । सी० छे जो० एक योजन प्रमाणे त० तिहांथी सिद्धशिलाथी । लो० लोकनो । अ० अंत छेहडो उ० पछी जि० कह्यो जिनेश्वर ॥ ६२ ॥

मूलः–सङ्खङ्ककुन्दसंकासा पण्डुरा निम्मला सुहा ।
सीयाए जोयणे तत्तो लोयन्तो उ वियाहिओ ॥ ६२ ॥

गाथा ६२ भावार्थः–ते सिद्ध शिला, शंख, अंक नामे रत्न अने मचकुंदना फूल सरीखी भली निर्मळी घोळी छे, तेसिद्ध शिलाथी एक जोजन प्रमाणे लोकनो छेडो जिनेश्वरे कह्योछे, (अर्थात सिद्ध शिलाथी एक जोजन प्रमाणे सिद्ध

वळी वे भेद ते, एक पर्याप्ताने बीजा अपर्याप्ता एम वे प्रकारे तिर्यंकरे कह्या छे ॥ ७१ ॥

अर्थः–बा०बादर जे०जे उ०वळी प०पर्याप्ता पृथ्वीकाय ॥ दु०बेप्रकारे ते० ते वि० कह्या तिर्यंकरे ॥ स० सुद्धाळी पृथ्वी स्व० अने कठिन पृथ्वी य०वळी बो० जाणवी ॥ स० सुद्धाळी पृथ्वी स० सात प्रकारे त० तिहां ॥७२॥

मूलः–बायरा जे उ पज्जत्ता दुविहा ते वियाहिया ।
सण्हा खरा य बोद्धव्वा सण्हा सत्तविहा तहिं ॥ ७२ ॥

गाथा ७२ भावार्थः–जे बादर पर्याप्ता पृथ्वीकाय ते बे प्रकारे तिर्यंकरे कही छे, ते सुद्धाळी पृथ्वी ने बीजी कठण पृथ्वी जाणवी, ते मांही सुद्धाळी पृथ्वी सात प्रकारे ॥ ७२ ॥

अर्थः–का० काळी १ नी० नीळी २ य० वळी रु० राती माटी ३ य० वळी ॥ ह० पीळी ४ ॥ सु० उजळी ५ ॥ त० तेमज ॥ प० पांडुर वर्ण गोपीचंदन सरखी ते ६ । प० अति झीणी रेती जे सचित्त म० माटी होय ७ ॥ स्व० कठिन पृथ्वी छ० छत्रीस प्रकारे वि० कही तिर्यंकरे ॥ ७३ ॥

मूलः–किण्हा नीला य रुहिरा य हालिद्दा सुक्किला तहा ।
पण्डुपणगमट्टिया खरा छत्तीसईविहा ॥ ७३ ॥

गाथा ७३ भावार्थः–१ काळी, २ लीली, ३ राती, ४ पीळी, ५ धोळी, ६ पांडुरवर्णे ते गोरे चंदनवर्णे ७, अती झीणी रेती, जे सचित्त होय ते, एकसात प्रकारनी सुंवाळी पृथ्वी कही अने कठण पृथ्वी ३६ छत्रीसे प्रकारे छे ॥७३॥

अर्थः–पृ० कृष्णी पृथ्वी स्वाभावी माटी १ स० नीली स० [illegible]

गाउए ? जोजन थाय, ए प्रमाणांगुळना जोजननुं मान कर्युः हवे उत्सेधांगुळना कोजनुं मान कहे छे, अनंता सूक्ष्म परमाणुंआ भेळा करिये तेवारे एक व्यवहारी परमाणुं थाय तथा जाळीने लिये रथा सूर्यना किरण तेमां रहा जे व्यवहारी परमाणुं ते तरवार प्रमुख शस्त्रनी निशग धाराए करी छेदाय भेदाय नहि तथा अग्निमांही थइने जाय, पण बळे नहि तथा पुष्करावर्त महा मोटा मेघ मांही थइने जाय पण पलळे नहि, तथा महागंगा नदीनो प्रवाह उंचो चुल हेमवंत पर्वतथी पडे छे ते प्रवाह साइपो चालयो जाय, पण खळाय नहि, घात पामे नहि तथा पाणीना आवर्तन तथा बिंदुआ मांही रहे पण तीहां सडी गळीने पाणी थाय नहि, ते अति निशण शस्त्रे करीने देवतानी शक्तिए छेदतां भेदतां एक खंडनो बीजो खंड थाय तेने केवळ ज्ञानी परमाणुं कहेछे, एहवा अनंता व्यवहारी परमाणुं एकठा थाय, तेवारे एक उष्ण सक्षिणो (उष्णतानो बारीक रजकण) थाय, आठ उष्णसक्षिणे एक शणसक्षिणो (ठंढकनानो बारीक रजकण) थाय, आठ शण सक्षिणेएक ऊर्द्ध रेणु (रज) थाय, आठ ऊर्द्धरेणुए एक त्रण रेणुं ते इद्रीयादीक त्रस जीवने चालतां रज उडे ते थाय, आठ त्रस रेणुए एक रथ रेणुं ते रथादीक हिंडतां रज उडे ते थाय, आठ रथ रेणुए देवकुरु उत्तरकुरु जुगळीया मनुष्यना एक वाळाग्रनुं जाडपणुं थाय, देवकुरु, उत्तरकुरुना आठ वाळाये एक हरीवास, रम्यक वास क्षेत्रना जुगळीयाना वाळाग्रनुं जाडपणुं थाय, हेमवय, एरण्यवय क्षेत्रना युगळीयाना आठ वाळाग्रे पुर्व पश्चिम महाविदेहना मनुष्यना एक वाळाग्रनुं जाडपणुं थाय, पुर्व पश्चिम महाविदेहना आठ वाळाग्रे भरत इरवतना मनुष्यना एक वाळाग्रनुं जाणपणुं थाय, एहवा आठ वाळाग्रे एक लिख थाय, आठ लिखे एक जुं थाय, आठ जुंए एक जवमध्य थाय, आठ जवमध्ये एक

अर्थः–गो० गोमेज्ज रत्न २३ य० वळी ॥ रु० रुजक रत्ननी जाति २४ ॥ अं० अंक रत्न २५ । फ० फटिकरत्न २६ य० वळी ॥ लो० लोहिताक्ष रत्ननी जाति २७ य० वळी ॥ म० मरकत रत्न २८ ॥ म० मसारगल्ल रत्न २९ ॥ भु० भुजमोचक रत्न ३० ॥ इ० इंद्र नील रत्ननी जाति ३१ य० वळी ॥ ७६ ॥

मूलः–गोमेज्जए य रुयगे अङ्के फलगे य लोहियक्खे य ।
मरगय-मसारगल्ले भुयमोयग-इन्दनीले य ॥ ७६ ॥

गाथा ७६ भावार्थः–२३ गोमिज रत्न, २४ रुजक रत्न, २५ अंक रत्न, २६ फटक रत्न, २७ लोहीताक्ष रत्न, २८ मरतक रत्न, २९ मसारगळ रत्न, ३० भुजमोचक रत्न, ३१ इद्रनील रत्न ॥ ७६ ॥

अर्थः–चं० चंदन रत्न ३२ ॥ गे० गेरुक रत्न ३३ । हं० हंसगर्भ नामे रत्न ३४ । पु० पुलक रत्न ३५ । सो० सोगंधिक रत्न ३६ य० वळी । चो० जाणवा चं० चंद्रप्रभानामा रत्न ३७ । वेरु० वैडूर्यनामा रत्न ३८ । ज० जलकांतनामा रत्न ३९ । सू० सुर्यकांत रत्न ४० य० वळी ॥ ७७ ॥

मूलः–चन्दण-गेरुय-हंसगब्भ पुलए सोगन्धिए य बोद्धव्वे ।
चन्दप्पहवेरुलिए जलकन्ते सूरकन्ते य ॥ ७७ ॥

गाथा ७७ भावार्थः–३२ चंदन रत्न, ३३ गैरक रत्न, ३४ हंसगर्भ रत्न, ३५ पुलक रत्न, ३६ सौगंधीक रत्न, ३७ चंद्रप्रभ रत्न, ३८ वैडूर्य रत्न, ३९ जळकांत रत्न, ४० सौर्यकांती रत्न ॥ ७७ ॥

अर्थः–ए० ए गर्व स०स्वरनामा पु०भेदोना भेद जाणवा । भे० भेद छ० छत्रीस भेद

य० वली सि० मोक्ष रूपणी उ० अवगाहना सिद्धनी भ० होय ॥ ६५ ॥

मूलः—उस्सेहो जस्स जो होइ भवम्मि चरिमम्मि उ ।
तिभागहीणो तत्तो य सिद्धाणोगाहणा भवे ॥ ६५ ॥

गाथा ६५ भावार्थः—छेला मनुष्यना भवने विषे जेटली शरीरनी उंचाइ होय तेहना त्रण भाग करीए ते मांहिना एक भाग वर्जिने बे भाग जेटली सिद्ध भगवंतनी अवगाहना होय ॥ ६५ ॥

अर्थः—ए० एक कोइक सिद्ध सा० आदिसहितछे । अ० छेडारहितछे वि० य० वली ॥ पु० घणा समस्त आश्री जोइए तो अ० अनादिकालना छे अ० छेडो पण नथी वि० य० वली ॥ ६६ ॥

मूलः—एगत्तेण साईया अपज्जवसिया वि य ।
पुहुत्तेण अणाइया अपज्जवसिया वि य ॥ ६६ ॥

गाथा ६६ भावार्थः—एक सिद्ध आश्री आदी सहीतछे ने अंत रहीतछे ने घणा सिद्ध आश्री आदीअंत रहीतछे ॥६६॥

अर्थः—अ० सिद्ध अरूपीछे जी० आंतरारहित जीवना प्रदेशछे घ० घणापणे । ना० केवलज्ञान अने दं० केवलदर्शन तेह स० सहित । अथवा तेहज ज्ञान दर्शननी संज्ञा छे जेहने ॥ अ० अतुल सु० सुख सं० पाम्या छे उ० उपमा ज० जे सुखनी न० नथी जगतमां कोइ पण उ० वली ॥ ६७ ॥

मूलः—अरूविणो जीवघणा नाणदंसणसन्निया ।
अतुलं सुहसंपत्ता उवमा जस्स नत्थि उ ॥ ६७ ॥

मूलः–संतइं पप्प नाईया अपज्जवसिया वि य ।
ठिइं पडुच्च साईया सपज्जवसिया वि य ॥ ८० ॥

गाथा ८० भावार्थः–एक मुख्य बादर पृथ्वीकायना जीव छतां आश्री अनादी काळना छे, तेनो अंत पण नथी अने आयुष्य आश्री आदी सहित तेमज अंत सहित पण छे ए प्रथम भेद कह्यो ॥ ८० ॥

अर्थः–बा० बावीस स० सहस्र । बा० वरस उ० उत्कृष्टी स्थिति भ० होय । आ० आउखानी ठि० स्थिति पु० पृथ्वीकायनी । अं० अंतरमुहुर्त ज० जघन स्थिति जाणवी ॥ ८१ ॥

मूलः–बावीससहस्साइं वासाणुक्कोसिया भवे ।
आउठिई पुढवीणं अन्तोमुहुत्तं जहन्निया ॥ ८१ ॥

गाथा ८१ भावार्थः–बादर पृथ्वीकायनी स्थिति जघन्य अंतर मुहुर्तनी अने उत्कृष्टी २२००० हजार वर्षनी जाणवी, ए भव स्थितिनो बीजो भेद कह्यो ॥ ८१ ॥

अर्थः–अ० असंख्यातो का०काल । उ० उत्कृष्टी ॥ अ० अंतरमुहुर्त ज० जघन्य स्थिति का० काय ठि० स्थिति पु० पृथ्वीना जीव तं० पृथ्वीना भव नीरंतर करे ते का० पृथ्वीकाय तु० वळी अ० मुकाय नहि ॥८२॥

मूलः–असंखकालमुक्कोसं अन्तोमुहुत्तं जहन्नगं ।
कायठिई पुढवीणं तं कायं तु अमुञ्चओ ॥ ८२ ॥

तसा य थावरा चेव थावरा तिविहा तहिं ॥ ६९ ॥

गाथा ६९. भावार्थः-हवे संसारी जीवनुं स्वरूप कहे छे, संसार मांही रह्या, ते संसारी जीव बे प्रकारे निश्चयें रह्या छे. ते एक त्रस जीवने बीजा स्थावर जीव तेमांही जे स्थावर जीव ते त्रण प्रकारे छे ॥ ६९ ॥

अर्थः-हवे थावरना त्रण प्रकार कहे छे ॥ पृ० पृथ्वी आ० अपकाय जी० जीव ग० वली । ते०तेयज ग० वली व० वनस्पतिना जीव ॥ इ० एहवा ए था० थावर जीव ति० त्रण प्रकारे ॥ ते० तेहना भे० भेद सु० सांभलो ॥ जे० मुजने कहेता थका ॥ ७० ॥

मूलः-पुढवी आउजीवा य तहेव य वणस्सई ।
इच्चेए थावरा तिविहा तेसिं भेए सुणेह मे ॥ ७० ॥

गाथा ७०. भावार्थः-१ पृथ्वी काय, २ अपकाय, ३ वनस्पती काय, ए त्रण प्रकारे स्थावर जीवकाया, गुरु कहेता हवा हे शिष्य ? ए त्रणना भेद हुं तुजने कहुं छं, तेहं सांभल ! ! ! ॥ ७० ॥

अर्थः-हवे द्रव्यथी पृथ्वीना भेद कहेछे दु० बे प्रकारे उ० वली पु० पृथ्वीना जी० जीव ॥ ए० एहवा भणे । था० थावर ग० तेयज ॥ प० एक पर्याप्ता ॥ अ० बीजा अपर्याप्ता ॥ ए० ए दु० बे प्रकारे सु०कथा तिर्थंकर गणधरादि ॥७१॥

मूलः-दुविहा उ पुढवीजीवा सुहुमा बायरा तहा ।
पज्जत्तमपज्जत्ता एवमेए दुहा पुणो ॥ ७१ ॥

गाथा ७१. भावार्थः-हवे पृथ्वीना द्रव्यथी भेद कहे छे, पृथ्वीना जीव बे प्रकारे, ते सूक्ष्मने बादर, तेना

मूलः–संतइं पप्प नाईया अपज्जवसिया वि य ।
ठिइं पडुच्च साईया सपज्जवसिया वि य ॥ ८० ॥

गाथा ८० भावार्थः–एक सुक्ष्म बादर पृथ्वीकायना जीव छतां आश्री अनादी काळना छे, तेनो अंत पण नथी अने आयुष्य आश्री आदी सहित तेमज अंत सहित पण छे ए प्रथम भेद कह्यो ॥ ८० ॥

अर्थः–बा० बावीस स० सहस्र । बा० वरस उ० उत्कृष्टी स्थिति भ० होय । आ० आउखानी ठि० स्थिति पु० पृथ्वीकायनी । अं० अंतरमुहुर्त ज० जघन स्थिति जाणवी ॥ ८१ ॥

मूलः–बावीससहस्साइं वासाणुक्कोसिया भवे ।
आउठिई पुढवीणं अन्तोमुहुत्तं जहन्निया ॥ ८१ ॥

गाथा ८१ भावार्थः–बादर पृथ्वीकायनी स्थिति जघन्य अंतर मुहुर्तनी अने उत्कृष्टी २२००० हजार वर्षनी जाणवी, ए भव स्थितिनो बीजो भेद कह्यो ॥ ८१ ॥

अर्थः–अ० असंख्यातो का०काळ । उ० उत्कृष्टी ॥ अ० अंतरमुहुर्त ज० जघन्य स्थिति का० काय ठि० स्थिति पु० पृथ्वीना जीव तं० पृथ्वीना भव नीरंतर करे ते का० पृथ्वीकाय तु० वळी अ० मुकाय नहि ॥८२॥

मूलः–असंखकालमुक्कोसं अन्तोमुहुत्तं जहन्नगं ।
कायठिई पुढवीणं तं कायं तु अमुञ्चओ ॥ ८२ ॥

अर्थः—बा० बादर जे० जे उ० वली प० पर्याप्ता ॥ दु० बे प्रकारे ते० ते बादर वनस्पतीना जीव वि० कह्या भगवंते ॥ सा० अनंता जीव ते साधारण स० शरीरवंत छे एक शरिरमांहि अनंता जीव रहेछे य० वली प० बीजा प्रत्येक ॥ शरीवंत जीव छे य० वली त० तेमज य० वली ॥ ९४ ॥

मूलः—बायरा जे उ पज्जत्ता दुविहा ते वियाहिया ।
साहारणसरीरा य पत्तेगा य तहेव य ॥ ९४ ॥

गाथा ९४ भावार्थः—जे बादर पर्याप्ता वनस्पतीना जीव ते बे प्रकारे, ते एक साधारण शरीरवाळा अने बीजा प्रत्येक शरीर वाळा, साधारण शरीर वाळा ते ऐकेक शरीरे अनंता जीव होय ते, बीजा प्रत्येक शरीर वाळा ते एकेके शरीरे अकेको जीव होय ते, ए बे भेद जाणवा ॥ ९४ ॥

अर्थः—प० प्रत्येक जुदा जुदा स० शरीरना धणी ॥ अणे० घणे प्रकारे ते० ते प० कह्याछे रु० आंबादिक १ ॥ गु० रिंगणी प्रमुख २ य० वली गु० वनमालति प्रमुख ३ य० वली ल० चंपकलतादिक ४ ॥ व० तुवडी प्रमुख वली ५ त० त्रणा ६ त० तेमज ॥ ९५ ॥

मूलः—पत्तेगसरीराओ णेगहा ते पकित्तिया ।
रुक्खा गुच्छा य गुम्मा य लया वल्ली तणा तहा ॥ ९५ ॥

गाथा ९५ भावार्थः—प्रत्येक ते जुदा शरीरना धणी जीव घणे प्रकारे कह्याछे, १ रुखना बे भेद ते एक बीयाने, २ [illegible] बीया ते जे फलमां घणांज बीया होय

मूलः—एए खरपुढवीए भेया छत्तीसमाहिया ।
एगविहमनाणत्ता सुहुमा तत्थ वियाहिया ॥ ७८ ॥

गाथा ७८ भावार्थः—ए सर्व ३६ भेद कठण पृथ्वीना तिर्थंकरे कह्या छे अने सुक्ष्म पृथ्वीना जीवते एकज भेदे छे, तेनो बीजो भेद नथी, ए सुक्ष्म पृथ्वीना जीव ते, ए पृथ्वीना पुर्वोक्त भेद मांहीन तिर्थंकरे कह्या छे, ए रीते पृथ्वीना भेद कह्या ॥ ७८ ॥

अर्थः—हवे तेमनी कहेछे सु० सुक्ष्म पृथ्वीकायना जीव । स० सर्व लो० लोकना मांहे व्यापी रह्याछे । लो० लोकना ए० एक देशविभागे प० वली । बा० बादर पृथ्वीकायना जीवछे । इ० सुक्ष्म बादर पृथ्वीकायना भेद कह्या पछी का० हवे कालना वि० भेद कहेछे तु० वली । ते० ते कालना भेद तु० कहियुं च० चार प्रकारे ॥ ७९ ॥

मूलः—सुहुमा सव्वलोगम्मि लोगदेसे य बायरा ।
इत्तो कालविभागं तु तेसिं वुच्छं चउव्विहं ॥ ७९ ॥

गाथा ७९ भावार्थः—सुक्ष्म पृथ्वीकायना जीव सर्व लोकमांही व्यापी रह्याछे अने बादर पृथ्वीकायना जीव ते लोकना एक देशने विषेछे, ए रीतथी सुक्ष्म ने बादर पृथ्वीकायना भेद कह्या, हवे कालना भेद चार प्रकारे कहेछे ॥७९॥

अर्थः—सं० सुक्ष्म बादर पृथ्वीकायना जीवतना प० आश्री । अ० अनादिकालनाछे । अ० छेदडो नथी वि० य० वली वि० भावना प० आश्री सा० आदिसहितछे ॥ स० आरम्भनो छेडो आवेते भणी अंतसहितछे वि० य० वली ॥८०॥

लसण कं० कांदा ए वे कंदमुळनी जाति य०वळी कं०कन्दली ए पण कंदमुल य०वळी कु०कुडव ए कंदमुल ॥९८॥

मूलः–हरिली सिरिली सस्सिरिली जावई केयकन्दली ।
पलण्डुलसणकन्दे य कन्दली य कुडुवए ॥ ९८ ॥

गाथा ९८ भावार्थः–हीरली, सीरली, सीसरली ए त्रणे कंदमुळनी जाती, जावय, केइ कंदली, पलंडु, लसण, कांदा (डुंगळी), कंदळी अने कुडव ॥ ९८ ॥

अर्थः–लो० लोहिणी थी० ए पण कंदमुलनी जाति । तु० एपण कंदमुल य० वळी त०तेमज य० वळी क० कृष्णकंद य० वळी व० वज्रकंद ए य० पण कंदमुल कं० कंदमुल मू० सूरण त० तेमज ॥ ९९ ॥

मूलः–लोहिणीहूय थीहूय तुहगा य तहेव य ।
कण्हे य वज्जकन्दे य कन्दे सूरणए तहा ॥ ९९ ॥

गाथा ९९ भावार्थः–लोहिणी, डुंगथी नामे कंद, कुहगायनामेकंद तेमज कृष्ण कंद, वज्रकंद, सुरणकंद ॥९९॥

अर्थः–अ० अश्वकर्ण ए पण कंदमुल य० वळी वो० जाणवो ॥ सी० सीहकर्णि ए पण कंदमुल त० तेमज य०वळी मुसु० ए पण कंदमुल य०वळी ह०नीली हलदर पण कंदमुल य० वळी ॥ णे० घणे प्रकारे ए० ए आदि देइने ॥१००॥

मूलः–अस्सकण्णी य वोधवा सीहकण्णी तहेव य ।
मुसुण्ढी य हलिद्दा य णेगहा एवमायओ ॥ १०० ॥

गाथा १०० भावार्थः–अश्वकर्णि नामे कंद, सिंहकर्णि नामे कंद, मूसली नामे कंद, लीलीहलदर कंद

करे, पृथ्वीकायमांथी मरीने पछी पृथ्वीकायमांहीज उपज्ये ते पृथ्वीनो [illegible] उत्कृष्टी असंख्याता काळनी (अर्थात ए पृथ्वीकायनी काया नमुंके तो एटला काळ सुधी रहे एनीनो भेद कह्यो॥८२॥

अर्थः-अ० अनंता का० काळनुं आंतरुं पडे पृथ्वीनुं भव पामवाथी उ० उत्कृष्टो ॥ अं० अंतरमुहुर्त ज० जघन्य आंतरुं ॥ वि० छांडियके ॥ स० पोतानी पृथ्वी का० काया ॥ पु० पृथ्वीना जी० जीवने अ० पृथ्वीनो भव पामवो उत्कृष्टो अनंतकालनुं आंतरु पडे ॥ ८२ ॥

मूलः-अणन्तकालमुक्कोसं अन्तोमुहुत्तं जहन्नगं ।
विजढंमि सए काए पुढविजीवाण अन्तरं ॥ ८३ ॥

गाथा ८३ भावार्थः-पोतानी पृथ्वीकायनी काया छांडये थके फरी पृथ्वीनो भव पामवा आश्री आंतरु पडे तो जघन्य अंतरमुहुर्त अने उत्कृष्टुं अनंता काळनुं ए कालथी चोथो भेद कह्यो ॥ ८३ ॥

अर्थः-हवे भावथी कहे छे ॥ ए० ए पृथ्वीकायना जीव व० वर्णथकी वे० पुरणे गं० गंधथकी र० रसथकी फा० फरसथकी । सं० संस्थानना दे० भेदथकी वा० पण । वि० भेदना स० सहस्र होय ॥८४॥

मूलः-एएसिं वण्णओ चेव गन्धओ रसफासओ ।
संठाणदेसओ वावि विहाणाइं सहस्ससो ॥ ८४ ॥

गाथा ८४ भावार्थः-हवे भावथी कहे छे, ए पृथ्वीकाय जीवना वर्ण थकी, गंध थकी, रस थकी, स्पर्श थकी, संस्थान थकी हजारो भेद पाय ए पृथ्वीकायनुं स्वरूप कह्युं ॥ ८४ ॥

पण छे, ए त्रीजो भेद कह्यो ॥ १०२ ॥

अर्थः-द० दस चे० पुर्ण स० सहस्र । वा० वरस । उ० उतकृष्टि स्थिति (भ० होय) । प० लीलफुल निगोदिया व० वनस्पति कायनुं आ० आउषुं । अ० अतर मुहुर्त ज० जघन्य स्थिति जाणवी ॥ १०३ ॥

मूलः-दस चेव सहस्साइं वासाणुक्कोसिया पणगाणं ।
वणस्सईणं आउं अन्तोमुहुत्तं जहन्निया ॥ १०३ ॥

गाथा १०३ भावार्थः-तेनी भवस्थिति जघन्य अंतरमुहुर्त ने उत्कृष्टि १०००० हजार वर्षनी होय ॥१०३॥

अर्थः-अ० अनंतो काल उ० उतकृष्टि स्थिति ॥ अंतो० अंतर मुहुर्त ज० जघन्य आंतरु जाणवुं काय०एकाय ठि० स्थिति प० लीलफुल निगोदियादिक अनंत कायनी । तं०ते का० अनंतकायने तु०वळी अ० अणमुकतोयको ॥१०४॥

मूलः-अणन्तकालमुक्कोसं अन्तोमुहुत्तं जहन्नगं ।
कायट्ठिई पणगाणं तं कायं तु अमुञ्चओ ॥ १०४ ॥

गाथा १०४ भावार्थः-तेनी कायस्थिति जघन्य अंतरमुहुर्तनी अने उत्कृष्टी अनंताकाळनी होय, ए नीलफुल निगोदियादिक अनंतकायना जीव अनंतकायनी काया न मुके तो एटला काळ सुधी तिहांज रहे, ए त्रीजो भेद कह्यो ॥ १०४ ॥

अर्थः-अ० असंख्याता कालनुं उ० उतकृष्टुं आंतरु जाणवुं । अ० अंतरमुहुर्त । ज० जघन्य आंतरु जाणवुं ॥ वि० छांडिने स० पोताना का० वनस्पतीकायनी काया । प० नीलफुल प्रमुख अनंत काय जी०

दे० एक विभागने विषे छे य० वळी । वा० बादर अपकायना जीव ॥ ८७ ॥

मूलः—एगविहमणाणत्ता सुहुमा तत्थ वियाहिया ।
सुहुमा सव्वलोगम्मि लोगदेसे य बायरा ॥ ८७ ॥

गाथा ८७ भावार्थः—सूक्ष्म अपकायनो एकज भेद छे पण घणा प्रकारे नथी ते अपकायना भेद मांहीज तिर्थंकरे कहेल छे, ए द्रव्यना अपकायथी भेद कह्या, हवे क्षेत्रथी कहेछे, सूक्ष्म अपकायना जीव सर्व लोक माही व्यापी रह्या छे अने लोकना एक देशने विषे बादर अपकायना जीव कह्या छे ए क्षेत्रथी कह्युं ॥ ८७ ॥

अर्थः—हवे अपकाय कालथी कहे छे । सं० छता प० आश्री अ० अनादिकाळनाछे अपकायना जीव ॥ अ० छेहडो पण नथी ए अपकायनुं वि० य० वळी ठि० स्थिति प० आश्री सां० आदिसहित छे । स० स्थितिनो छेहडो आवे ते भणी अंतसहित वि० य० पण छे ॥ ८८ ॥

मूलः—सन्तइं पप्प नाईया अपज्जवसिया वि य ।
ठिइं पडुच्च साईया सपज्जवसिया वि य ॥८८॥

गाथा ८८ भावार्थः—हवे काळथी अपकाय चार प्रकारे कहे छे, छतां आश्री अनादी काळना अपकायना जीव छे तेनो अंत नथी, स्थिति आश्री आदी सहीतछे, तेमज अंत सहीत पणछे, ए प्रथम भेद कह्यो ॥८८॥

अर्थः—स० सात स० सहस्र ॥ वा० वरस । उ० उत्कृष्टि भ० होय । आ० आउखानी ठि० स्थिति

इत्तो उ तसे तिविहे वुच्छामि अणुपुव्वसो ॥ १०७ ॥

गाथा १०७ भावार्थः-ए पूर्वोक्त त्रण प्रकारे स्थावर जीव संक्षेपे कह्या, ए स्थावर जीव कह्या पछी हवे त्रस जीव त्रण प्रकारे अनुक्रमे कहीयुं ??? ॥ १०७ ॥

अर्थः-ते० तेउकाय वा० वाउकाय य० वली वो० जाणवा ॥ ओ० मोटा य० वली त० त्रस वेंद्रियादिक त० तेमज ॥ इ० ए पूर्वे कह्या ते । त० त्रसजीव । ति० त्रण प्रकारे ॥ ते० तेहना भे० भेद मु० सांभळ हे शिष्य । मे० मुजने कहेता थका ॥ १०८ ॥

मूलः-तेऊ वाऊ य बोधवा ओराला य तसा तहा ।
इच्चेए तसा तिविहा तेसिं भेए सुणेह मे ॥ १०८ ॥

गाथा १०८ भावार्थः-१ तेउकाय, २ वाउकाय, ३ तेमज मोटा त्रस जीव वेइंद्रियादिक ते त्रण प्रकारे त्रस जीव कह्या, हवे गुरु कहेता हवा हे शिष्य ! तेहना भेद हुं कहीश, ते तुं सांभळ ??? ॥ १०८ ॥

अर्थः-हवे तेउकाय द्रव्यथी कहे छे । दु० बे प्रकारे ते० तेउकायना जी० जीव उ० वळी । सु० सूक्ष्म अने वा० बादर त० तेमजवळी ॥ प० पर्याप्ता अने अ० अपर्याप्ता । ए० एम ए० ए दु० बे प्रकारे पु० वळीकह्या ॥१०९॥

मूलः-दुविहा तेऊजीवा उ सुहुमा बायरा तहा ।
पज्जत्तमपज्जत्ता एवमेए दुहा पुणो ॥ १०९ ॥

अर्थः-व० नाळीएरी प्रमुख ७ ॥ प० सेलडी वांस प्रमुख ८ ॥ कु० भूइफोडा प्रमुख ९ ॥ ज० कमळ प्रमुख १० ओ० शालि प्रमुख धान ११ त० तेमज ॥ ह० हरिकाय बो० जाणवा प० प्रत्येक वनस्पती-कायना जीव इ० ए आ० कह्या भगवंते ॥ ९६ ॥

मूल-वलया पवगा कुहणा जलरुहा ओसही तहा ।
हरियकाया बोद्धव्वा पत्तेया इइ आहिया ॥ ९६ ॥

गाथा ९६ भावार्थः-७ नाळीयेरी प्रमुख, ८ सेलडी वांस प्रमुख, ९ भुंई फोडा प्रमुख, १० कमळ प्रमुख, ११ शाळी (डांगर) प्रमुख, १२ हरिकाय औषधी प्रमुख ए प्रत्येक वनस्पतीना जीव जाणवा एम तिर्थंकरे कहेलछे ॥९६॥

अर्थः-सा० अनंता जीवते एक शरीरमांहि रहेछे ते साधारण ॥ स० शरीरवंत जीव अनंतकायने ॥ अणे० अणेमकारे ते० ते प० कह्या भगवंते ॥ आ० आलु कंदमुळनी जाती मू० मुळो चे० पुरणे । सि० आदु त० तेमज य० यली ॥९७॥

मूलः-साहारणसरीराओ णेगहा ते पकित्तिया ।
आलुए मूलए चेव सिङ्गवेरे तहेव य ॥ ९७ ॥

गाथा ९७ भावार्थः-एक शरीर मांही अनंता जीव रह्या छे ते साधारण शरीरवंत जीव अनंतकाय ते अणे प्रकारे कहेल छे, आलुकंद कंदमुळनी जाती, तेमज मुळा, आदु ॥ ९७ ॥

अर्थः-ह० हिरिली सि० सिरिली स० सथीरीली ए त्रण कंदमुल जा० जाणवा के० केयकंदली । प० पंलडु ल०

इत्तो उ तसे तिविहे वुच्छामि अणुपुव्वसो ॥ १०७ ॥

गाथा १०७ भावार्थः-ए पूर्वोक्त त्रण प्रकारे स्थावर जीव संक्षेप कह्या, ए स्थावर जीव कह्या पछी हवे त्रस जीव त्रण प्रकारे अनुक्रमे कहीयुं ? ? ? ॥ १०७ ॥

अर्थः-ते० तेउकाय वा० वाउकाय य० वली वो० जाणवा ॥ ओ० मोटा य० वली त० त्रस वेंद्रिया-दिक त० तेमज ॥ इ० ए पूर्वे कह्या ते । त० त्रसजीव । ति० त्रण प्रकारे ॥ ते० तेहना भे० भेद सु० सांभळ हे शिष्य । मे० मुजने कहेता थका ॥ १०८ ॥

मूलः-तेऊ वाऊ य बोधवा ओराला य तसा तहा ।

इच्चेए तसा तिविहा तेसिं भेए सुणेह मे ॥ १०८ ॥

गाथा १०८ भावार्थः-१ तेउकाय, २ वाउकाय, ३ तेमज मोटा त्रस जीव वेइंद्रियादिक ते त्रण प्रकारे त्रस जीव कह्या, हवे गुरु कहेता हवा हे शिष्य ! तेहना भेद हुं कहीश, ते तुं सांभळ ? ? ? ॥ १०८ ॥

अर्थः-हवे तेउकाय द्रव्यथी कहे छे । दु० बे प्रकारे ते० तेउकायना जी० जीव उ० वळी । सु० सूक्ष्म अने वा० बादर त० तेमजवली ॥ प० पर्याप्ता अने अ० अपर्याप्ता । ए० एम ए० ए दु० बे प्रकारे पु० वळीकह्या ॥१०९॥

मूलः-दुविहा तेऊजीवा उ सुहुमा बायरा तहा ।

पज्जत्तमपज्जत्ता एवमेए दुहा पुणो ॥ १०९ ॥

गाथा १०९ भावार्थः-एवे तेउकाय द्रव्यथी कहे छे, तेउकायना जीव बे प्रकारे ते सूक्ष्म ने बादर

ए सरवे फंद मुळनी जाती छे, पुर्वोक्त इत्यादीक अणा प्रकारनी साधारण वनस्पती तिर्थंकरे कही छे ॥१००॥

अर्थः-ए० एकज प्रकारे । अ० घणे प्रकारे नथी ॥ सु० सुक्ष्म त० तिहां वि० कह्या भगवंते ॥ हवे वनस्पतीकाय क्षेत्रथी कहे छे । सु० सुक्ष्म स० सर्व लो० लोकने विषे व्यापी रह्या छे । लो० लोकने दे०एक भागे य० वळी बा० बादर वनस्पति ॥ १०१ ॥

मूलः-एगविहमणाणत्ता सुहुमा तत्थ वियाहिया ।
सुहुमा सव्वलोगम्मि लोगदेसे य बायरा ॥ १०१ ॥

गाथा१०१भावार्थः-हवे वनस्पती क्षेत्रथकी कहेछे, सुक्ष्म वनस्पती सर्व लोकने विषे व्यापी रहीछे, सुक्ष्म वनस्पतीनो एकज भेद कह्योछे, पण घणा भेद नथी अने बादर वनस्पती लोकना एक देशने विषेछे, ए क्षेत्रथी कही ॥१०१॥

अर्थः-हवे वनस्पती कालथी कहे छे सं० ए वनस्पती छता प० आश्री अ० अनादिकालनी छे॥ अ० छेहडो पण नथी वि० य० ॥ वळी ठि० भवस्थिति कायस्थिति । प० आश्री सा० आदि सहितछे स० स्थिति पुरी थाय तेवारे छेहडा सहित छे वि० य० वळी ॥ १०२ ॥

मूलः-संतइं पप्प नाईया अपज्जवसिया वि य ।
ठिइं पडुच्च साईया सपज्जवसिया वि य ॥ १०२ ॥

गाथा १०२ भावार्थः-हवे कालथी चार प्रकारे कहे छे, ए वनस्पती काय छतां आश्री अनादी कालनी छे, तेनो अंत नथी, ए प्रथम भेद कह्यो, भवस्थीती ने काय स्थीती आश्री आदी सहीत छे, तेमज अंत सहीत

इत्तो उ तसे तिविहे वुच्छामि अणुपुव्वसो ॥ १०७ ॥

गाथा १०७ भावार्थः-ए पुर्वोक्त त्रण प्रकारे स्थावर जीव संक्षेप कया, ए स्थावर जीव कया पछी

हवे त्रस जीव त्रण प्रकारे अनुक्रमे कहीशुं ? ? ? ॥ १०७ ॥

अर्थः-ते० तेउकाय वा० वाउकाय य० वळी बे० जाणवा ॥ ओ० मोटा य० वळी त० त्रस बेंद्रिया-

दिक त० तेमज ॥ इ० ए पुर्वे कया ते । त० त्रसजीव । ति० त्रण प्रकारे ॥ ते० तेहना भे० भेद मु० सांभळ

हे शिष्य । मे० मुजने कहेता थका ॥ १०८ ॥

मूलः-तेऊ वाऊ य बोधवा ओराला य तसा तहा ।

इच्चेए तसा तिविहा तेसिं भेए सुणेह मे ॥ १०८ ॥

गाथा १०८ भावार्थः-१ तेउकाय, २ वाउकाय, ३ तेमज मोटा त्रस जीव बेइंद्रियादिक ते त्रण प्रकारे

त्रस जीव कया, हवे गुरु कहेता हवा हे शिष्य ! तेहना भेद हुं कहीश, ते तुं सांभळ ? ? ? ॥ १०८ ॥

अर्थः-हवे तेउकाय द्रव्यथी कहे छे । दु० बे प्रकारे ते० तेउकायना जी० जीव उ० वळी । सु० सुक्ष्म अने

वा० बादर त० तेमजवळी ॥ प० पर्याप्ता अने अ० अपर्याप्ता । ए० एम ए० ए दु० बे प्रकारे पु० वळीकया ॥१०९॥

मूलः-दुविहा तेऊजीवा उ सुहुमा बायरा तहा ।

पज्जत्तमपज्जत्ता एवमेए दुहा पुणो ॥ १०९ ॥

गाथा १०९ भावार्थः-हवे तेउकाय द्रव्यथी कहे छे, तेउकायना जीव बे प्रकारे ते सुक्ष्म ने बादर

तेहना पण बे भेद अपर्याप्ता ने पर्याप्ता ॥ १०९ ॥

अर्थः–बा० बादर तेउकायना जीव जे० जे उ० वली प० पर्याप्ता। अणे० घणे प्रकारे ने० ने वि० कह्या भगवंते इ० घरता जाज्वल्यमान अंगारा मु० अग्नी सहितनाम्हापोडडा राख सहित भ० स्फोट थयुं होय तेमांहिले जे अग्नी छे ते अग्नी अ० मूलथकी सरखी होय ने झाल जा० मूलथकी घुटनि झाल त० तेमज प० वली ॥११०॥

मूलः–बायरा जे उ पज्जत्ता णेगहा ते वियाहिया ।
इङ्गले मुम्मुरे अगणी अचिजाला तहेव य ॥ ११० ॥

गाथा ११० भावार्थः–जे बादर तेउकाय पर्याप्ता ते घणे प्रकारे कहेल छे, घरना जाज्वल्यमान अंगारा, राख सहित अग्नीना खोडडा, स्फोडाने तपायुं होय ते मांही अग्नि होय ते, मूलथी सरखी होय ते झाळ, तेमज मूलथकी घुटनी झाळ ॥ ११० ॥

अर्थः–उ० उल्कापातनी अग्नी । वि० विजलीनी अग्नी प० पण घो० जाणवी अणे० घणे प्रकारे ए० ए आ० आदि । ए० एकज वि० प्रकारे अ० बीजो प्रकार नथी । सु० सूक्ष्म ते अग्नीकायनुं । त० तिहां वि० कह्या तिर्यंचरे जीव सूक्ष्म तेउकायना ॥ १११ ॥

मूलः–उक्को विज्जू य बोधवा णेगहा एवमायओ ।
णेगविहमणाणत्ता सुहुमा तत्थ वियाहिया ॥ १११ ॥

गाथा १११ भावार्थः–उल्कापातनी अग्नी, विजळीनी अग्नी, इत्यादिक घणा प्रकारनी बादरअग्नी

वे। अर्थः-हवे तेउकाय क्षेत्रथी कहे छे सु० सूक्ष्म तेउकायना जीव स० सर्वलोकमां व्यापी रया छे। योजने दे० एक देशने य० विषे। वा० बादर तेउकाय छे। इ० ए हवे कया पछे का० कालनो। वि० दिर्ग तु० वली ते० ते अग्नीनो। चु० हुं कहिश च० च्यार प्रकारे छे ॥ ११२ ॥

मूलः-सुहुमा सव्वलोगम्मि लोगदेसे य बायरा।
इत्तो कालविभागं तु तेसिं वुच्छं चउव्विहं ॥ ११२ ॥

गाथा ११२ भावार्थः-हवे तेउकाय क्षेत्रथी कहे छे, सूक्ष्म तेउकायना जीव सर्व लोकमांहि व्यापी रया छे अने बादर तेउकाय ते लोकना एक देशनेविषे रया छे, गुरु कहेता हवा हे शिष्य? ए क्षेत्रथी विचार कया पछी हवे ते अग्नीना कालनो विभाग चार प्रकारे हुं कहीश ??? ॥ ११२ ॥

अर्थः-हवे कालथी कहेछे। सं० छतां प० आश्री अ० अनादि कालनाछे अग्नी कायना जीव। अ० अने सदाय अग्नी हवे पण लेहडो आवे नहि ॥ वि० य० वली ठि० भवस्थिति कायस्थिति आउपानी स्थिति प० आश्री- जोता सा० आदिसहित छे ॥ स० आउवुं पुर्ण थाय तेवारे ॥ अंतसहित वि० य० वली पण छे ॥ ११३ ॥

मूलः-संतइं पप्प णाईया अपज्जवसिया वि य।

तेहना पण बे भेद अपर्याप्ता ने पर्याप्ता ॥ १०९ ॥

अर्थः-वा० बादर तेउकायना जीव जे० जे उ० वली प० पर्याप्ता । अणे० घणे प्रकारे ते० ते वि० कह्या भगवंते इ० बलता जाजल्यमान अंगारा मु० अग्नी सहितनाल्हापोटडा राख सहित अ० लोह तपाव्युं होय तेमांहिछे जे अग्नी छे ते अग्नी अ० मूलथकी सलगी होय ते झाल जा० मूलथकी बुझति झाल त० तेमज य० वली ॥११०॥

मूलः-वायरा जे उ पज्जत्ता णेगहा ते वियाहिया ।
इङ्गले मुम्मुरे अगणी अचिजाला तहेव य ॥ ११० ॥

गाथा ११० भावार्थः-जे बादर तेउकाय पर्याप्ता ते घणे प्रकारे कहेल छे, बलता जाजल्यमान अंगारा, राख सहित अग्नीना खोटडा, लोहाने तपाव्युं होय ते मांही अग्नि होय ते, मूलथी सळगी होय ते झाळ, तेमज मूलथकी बुझती झाळ ॥ ११० ॥

अर्थः-उ० उल्कापातनी अग्नी । वि० विजलीनी अग्नी य० वली घो० जाणवी अणे० घणे प्रकारे ए० ए आ० आदि । ए० एकज वि० प्रकारे अ० बीजो प्रकार नथी । सु० सूक्ष्म ते अग्नीकायनुं । त० तिहां वि० कह्या तिर्थंकरे जीव सूक्ष्म तेउकायना ॥ १११ ॥

मूलः-उक्को विज्जू य बोधव्वा णेगहा एवमायओ ।
णेगविहमणाणत्ता सुहुमा तत्थ वियाहिया ॥ १११ ॥

गाथा १११ भावार्थः-उल्कापातनी अग्नी, विजळीनी अग्नी, इत्यादिक घणा प्रकारनी बादरअग्नी

तेहना पण बे भेद अपर्याप्ता ने पर्याप्ता ॥ १०९ ॥

अर्थः-बा० बादर तेउकायना जीव जे० जे उ० घणी प० पर्याप्ता। भवे० घणे प्रकारे ते० ते छि० कह्या भगवंते इ० एकना जानन्यमान अंगारा मु० अग्नी सहितनानाखोटडा राख सहित भ० होय अथवा होय तेवारिजे जे अग्नी ते ते अग्नी अ० मूलगरी सरखी होय ते जाव जा० मूलगरी पुरति जाव त० तेमज ग० घणी ॥११०॥

मूलः-बायरा जे उ पज्जत्ता णेगहा ते वियाहिया ।
इङ्गले मुम्मुरे अगणी अचिजाला तहेव य ॥ ११० ॥

गाथा ११० भावार्थः-जे बादर तेउकाय पर्याप्ता ते घणे प्रकारे कहेल छे, एकना जाजल्यमान अं० गारा, राख सहित अग्नीना खोटडा, खोडाले तथाथ होय ते मांही अग्नि होय ते, मुर्मुरी सरखी होय ते जाळ, तेमज मुर्मुरी पुरती जाळ ॥ ११० ॥

अर्थः-उ० उल्कापातनी अग्नी । वि० विजलीनी अग्नी ग० घणी घो० जाजरी भवे० घणे प्रकारे ए० ए भा० भादि । ए० एकज वि० प्रकारे भ० बीजो प्रकार नथी । सु० सूक्ष्म ते अग्नीकायनुं । त० तिर्छा वि० कह्या तिर्थंकरे जीव सूक्ष्म तेउकायना ॥ १११ ॥

मूलः-उक्को विज्जू य बोधव्वा णेगहा एवमायओ ।
एगविहमणाणत्ता सुहुमा तत्थ वियाहिया ॥ १११ ॥

गाथा १११ भावार्थः-उल्कापातनी अग्नी, विजलीनी अग्नी, इत्यादिक घणा प्रकारनी बादरअग्नी

वारे अंतसहित पण छे, ए प्रथम भेद कह्यो ॥ ११३ ॥

अर्थः-नि० त्रण अ० अहोरात्रिनी कही । उ० उत्कृष्टि वि० कही भगवंते । आ० आउषानी स्थिति ते० तेउकायनी अ० अंतर मुहुर्त ज० जघन्य स्थिति जाणवी ॥ ११४ ॥

मूलः-तिण्णेव अहोरत्ता उक्कोसेण वियाहिया ।
आउट्ठिई तेऊणं अन्तोमुहुत्तं जहन्निया ॥ ११४ ॥

गाथा ११४ भावार्थः-तेउकायना जीवनी स्थिति जघन्य अंतरमुहुर्तनी अने उत्कृष्टि त्रण अहो (दिवस) रात्रीनी ए बीजो भेद कह्यो ॥ ११४ ॥

अर्थः-अ० असंख्याता काल उ० उत्कृष्टि स्थिति जाणवी ॥ अ० अंतर मुहुर्त ज० जघन्य स्थिति जाणवी । का० कायस्थिति ते० तेउकायना जीवनी ॥ तं० ते अग्नी का०काय तु०थकी अ० अणमुकतो थको ॥११५॥

मूलः-असंखकालमुक्कोसं अन्तोमुहुत्तं जहन्नगं ।
कायट्ठिई तेऊणं तं कायं तु अमुञ्चओ ॥ ११५ ॥

गाथा ११५ भावार्थः-तेउकायना जीवनी कायस्थिति जघन्य अंतरमुहुर्त ने उत्कृष्टी असंख्याता काळनी, तेउकायना जीव तेउकायनी काया न मुकनो एटला काळसुधी निरंतर रहे, ए त्रीजो भेद कह्यो॥११५॥

अर्थः-अ० असंखकालनी उ० उत्कृष्टी स्थितिकही । अ० अंतर मुहुर्त ज० जघन्य स्थिति ॥ वि०